भोट-भारतीय ग्रन्थमाला - ४९

आर्यत्रिस्कन्धसूत्रं टीकात्रयसंवलितम्

༄༅། །འཕགས་པ་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་དང་
དེའི་རྒྱ་འགྲེལ་གསུམ་བཞུགས་སོ།།

पुनरुद्धारक, अनुवादक एवं सम्पादक
लोसंग दोर्जे (रबलिङ)

केन्द्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा संस्थान, सारनाथ, वाराणसी

बुद्धाब्द : २५४५ खीस्ताब्द : २००१

भोट-भारतीय ग्रन्थमाला - ४९

आर्यत्रिस्कन्धसूत्रं टीकात्रयसंवलितम्

༄༅། །འཕགས་པ་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་དང་
དེའི་རྒྱ་འགྲེལ་གསུམ་བཞུགས་སོ།།

भोट विद्या संस्थानम्

पुनरुद्धारक, अनुवादक एवं सम्पादक
लोसंग दोर्जे (रबलिङ)

केन्द्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा संस्थान, सारनाथ, वाराणसी

बुद्धाब्द : २५४५ खीस्ताब्द : २००१

आर्यत्रिस्कन्धसूत्रं टीकात्रयसंवलितम्

འཕགས་པ་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་དང་དེའི་རྒྱ་འགྲེལ་གསུམ།

भोट-भारतीय ग्रन्थमाला - ४९

आर्यत्रिस्कन्धसूत्रं टीकात्रयसंवलितम्

༄། །འཕགས་པ་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་དང་
དེའི་རྒྱ་འགྲེལ་གསུམ་བཞུགས་སོ།།

पुनरुद्धारक, अनुवादक एवं सम्पादक
लोसंग दोर्जे (रबलिङ)

केन्द्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा संस्थान, सारनाथ, वाराणसी

बुद्धाब्द : २५४५ | ख्रीस्ताब्द : २००१

प्रधान सम्पादक : प्रो० गेशे नवङ समतेन

प्रकाशन प्रभारी : श्री समतेन छोस्फेल

प्रथम संस्करण : ५५० प्रतियाँ, २००१

मूल्य : सजिल्द : ३४०·००
अजिल्द : २६०·००

प्रकाशक :
केन्द्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा संस्थान,
सारनाथ, वाराणसी-२२१००७

मुद्रक : सुरभि प्रिन्टर्स, मलदहिया, वाराणसी ।

BIBLIOTHECA INDO-TIBETICA SERIES - XLIX

Āryatriskandhasūtram and its three Commentaries

by

Ācārya Nāgārjuna, Jitāri and Dīpaṁkaraśrījñāna

Restored,translated and critically edited by

Lobsang Dorjee (Rabling)

CENTRAL INSTITUTE OF HIGHER TIBETAN STUDIES
SARNATH, VARANASI

B.E. 2545 C.E. 2001

BIBLIOTHECA INDO-TIBETICA SERIES - XLIX

Chief Editor: *Prof. Geshe Ngawang Samten*
Publication Incharge: *Samten Chhosphel*

First Edition: 550 copies, 2001

Price: Hardback: Rs. 340.00
Paperback: Rs. 260.00

Courtesy and Permission of photos and illustrations:

- Colour photo of 35 Confession Buddhas painting (according to Nagarjuna) by Kelsang Wangchen, and line illustrations drawn by Andy Weber from pages 366 to 369 are adapted from "The Bodhisattva Vow" with permission from Tharpa Publications, London.
- Line illustrations from pages 370 to 377 are adapted from "Everlasting Rain of Nectar" with permission from Wisdom Publications, Boston.

Publisher:
Central Institute of Higher Tibetan Studies,
Sarnath, Varanasi-221007, India.

Printed at Surabhi Printers, Maldiya, Varanasi

དཔར་སྐྲུན་ཚིག་བརྗོད།

༄༅། །སངས་རྒྱས་པའི་ཆོས་ཀྱི་སྐྱེས་བུ་གསུམ་གྱི་ཉམས་ལེན་ཇི་འདྲ་ཞིག་ཡིན་རུང་གང་ཟག་རང་གི་སྡིག་ལྟུང་བཤགས་སྡོམ་བྱ་རྒྱུ་ནི་ཉམས་ལེན་གྱི་ཆ་ཤས་ཞིག་ཡིན་པ་མ་ཟད་དེའི་ཚུལ་དང་མཐུན་པར་འཇིག་རྟེན་རང་འགའ་བའི་ལུགས་ལའང་རང་གི་ཉེས་བྱས་ལ་བཤགས་པ་དང་སླད་ཕྱིན་མི་བགྱི་བའི་དམ་བཅའ་བྱ་རྒྱུ་ཡང་ལུགས་མཐུན་གྱི་སྐྱེ་བོ་རྣམས་ཀྱིས་ལས་སུ་བྱ་བ་གལ་ཆེ་བ་ཞིག་ཏུ་བརྩི། འཇིག་རྟེན་གྱི་ཚུལ་འདི་ལ་ནི་ལས་ལ་ཞུགས་པའི་སྐྱེས་བུ་དེ་ཉིད་ཀྱི་བསམ་པ་ཡོངས་སུ་དག་པའི་སྒོ་ནས་བཤགས་པ་བྱས་མིན་ཇི་ལྟར་ཡང་ཉེས་པ་དག་མ་དག་ནི་སྐྱེ་བོ་ཕ་རོལ་པོའི་འདོད་བློ་ཁེངས་མིན་ལ་རག་ལུས་པ་ཞིག་ཡིན་ཡང་། ཆོས་ཀྱི་ཉམས་ལེན་ནང་དེ་ལས་ལྡོག་སྟེ་ལྟུང་བའི་ཉེས་པ་དག་མ་དག་ནི་ཉམས་ལེན་པ་རང་གི་བཤགས་སྡོམ་གྱི་རིམ་པ་རྣམས་བསམ་པ་ཐག་པ་ནས་གནད་དུ་སོང་མ་སོང་ལ་རག་ལུས། ནང་ཆོས་ཀྱི་ཉམས་ལེན་སྤྱི་དང་ལྷག་པར་དུ་ཐེག་པ་ཆེན་པོའི་མདོ་སྔགས་ཀྱི་ཉམས་ལེན་ནང་བཤགས་སྡོམ་ཐུན་དྲུག་ཏུ་བྱས་ཏེ་ཉོན་མོངས་ཀྱི་གཞན་དབང་དུ་གྱུར་ནས་ལྟུང་བ་ཇི་བྱས་བྱས་ཐལ་དུ་འགྱོད་པ་དྲག་པོའི་སྒོ་ནས་བཤགས་པ་དང་སྡོམ་སེམས་ཤུགས་དྲག་དང་ལྡན་ན་སྡིག་ལྟུང་གི་ལས་རྣམས་ས་བོན་རུལ་བ་ལྟར་ནུས་པ་མེད་པར་བྱེད་པ་རྒྱལ་བ་ཉིད་ཀྱི་མདོ་ནས་རྣམ་གྲངས་དུ་མར་གསུངས་སོ།།

ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོའམ་ལྟུང་བཤགས་ཞེས་ཡོངས་སུ་གྲགས་པའི་མདོ་འདི་ནི་སྟོབས་བཞི་དང་ཡན་ལག་བདུན་གྱི་ཉམས་ལེན་ཕྱོགས་གཅིག་ཏུ་ཚང་བའི་ལྟུང་བ་བཤགས་པའི་ཚོ་ག་སྨད་དུ་བྱུང་བ་སྔར་རྒྱ་གར་ནའང་ནཱལེནྡྲ་ལ་སོགས་པའི་གཙུག་ལག་ཁང་རྣམས་སུ་མཁས་གྲུབ་ཀུན་གྱི་ཕྱག་བཞེས་སུ་ཡོད་པའི་ཤུགས་རྐྱེན་གྱིས་བོད་དུའང་ཆོས་བརྒྱུད་རིས་སུ་མ་ཆད་པའི་མཁས་གྲུབ་རྣམས་ཀྱི་ཉམས་བཞེས་སུ་ཡོད་པ་དང་མང་ཚོགས་ནང་དར་ཁྱབ་ཤུགས་ཆེ་ཡོད་པ་ཞིག་ཡིན། མདོ་འདིའི་རྒྱ་དཔེ་དཔེ་རྒྱུན་ཁག་གཅིག་ད་ལྟ་ཡང་མཇལ་རྒྱུ་ཡོད་ཅིང་། སློབ་དཔོན་ཀླུ་སྒྲུབ་དང་། ཛེཏཱརི། ཇོ་བོ་རྗེ་དཔལ་ལྡན་ཨ་ཏི་ཤ་བཅས་གསུམ་གྱི་རྒྱ་འགྲེལ་གསུམ་དུ་གྲགས་པ་བསྟན་འགྱུར་འཁྲོད་དུ་ཡོད་ཀྱང་དང་པོ་གཉིས་ཀྱི་ཐད་སློབ་དཔོན་འདི་

གཉིས་ལ་ཁ་གཡར་བ་ཙམ་དུ་མ་ཟད་རྒྱ་འགྲེལ་ཡིན་མིན་ལའང་བོད་ཀྱི་མཁས་པ་དུ་མས་དཔྱད་པ་མཛད་ཡོད། འདི་ནི་གངས་ཅན་གྱི་མཁས་གྲུབ་རྣམས་ཀྱིས་ལྷ་གྲུབ་སྙོམ་སྒྲུབ་ཚོ་ག་སོགས་ཇི་འདྲ་ཞིག་ཡིན་རུང་རྒྱ་གཞུང་དུ་གྲགས་ཚད་དང་སློབ་དཔོན་ཆེན་པོ་རྣམས་ཀྱི་མཚན་སྦྱར་བ་ཙམ་གྱིས་དེ་དང་དེར་ཞལ་གྱི་མི་བཞེས་པར་ལུང་རིགས་དྲི་མ་མེད་པའི་སྲང་དུ་འཇལ་ཏེ་གཏན་འབེབས་མཛད་པས་བོད་ཀྱི་སངས་རྒྱས་ཀྱི་བསྟན་པ་འདི་ཁུངས་ལྡན་རྣམ་པར་དག་པའི་རྒྱུད་པ་ཟམ་མ་ཆད་པ་ལས་བྱུང་བའི་མཚན་མ་མངོན་པར་དོད་པ་ཞིག་རེད།

འདི་ག་གཙུག་ལག་སློབ་གཉེར་ཁང་གི་ཉམས་ཞིབ་པ་ཚེ་དང་ལྡན་པ་བློ་བཟང་རྡོ་རྗེས་ཉམས་ཞིབ་ལས་གཞིའི་ཁོངས་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོའི་འགྱུར་བཀའ་འགྱུར་དཀོན་བརྩེགས་ནང་འཕགས་པ་ཉེ་བར་འཁོར་གྱིས་ཞུས་པའི་མདོའི་ནང་གསལ་བ་ཞིག་དང་བསྟན་འགྱུར་བསླབ་བཏུས་ནང་གསལ་བའི་འགྱུར་ལ་ཞུ་དག་སོང་བ་གཉིས་པོའི་དཔར་མ་ཁག་མི་འདྲ་བ་རྣམས་དང་རྒྱ་དཔེ་ད་ལྟ་བཞུགས་པ་བཅས་ལ་མཚུངས་བསྡུར་བྱས། དེ་བཞིན་འདིའི་འགྲེལ་པ་བསྟན་འགྱུར་ཁོངས་སུ་བཞུགས་པ་གསུམ་ལེགས་སྦྱར་སྐད་དུ་བསྒྱུར་གསོ། མདོ་འགྲེལ་དེ་དག་ཧིན་སྐད་དུ་ཕབ་བསྒྱུར་དང་སྦྲགས། གླེང་བརྗོད་རྒྱས་པ་ཞིག་དང་གཞུང་འདི་དང་འབྲེལ་བའི་ལྷན་ཐབས་ཁག་གིས་བརྒྱན་པ་ད་རེས་དཔར་བསྐྲུན་ཐུབ་པ་ལ་རྗེས་སུ་ཡི་རངས་དང་། ལས་དོན་འདིར་སློབ་སྟོན་དང་དངོས་སུ་མཐུན་འགྱུར་གནང་མཁན་མཁས་དབང་སློབ་དཔོན་རྣམ་ཤངྐར་ཏྲིཔཱཋཱི་མཆོག་གིས་གཙོས་མཁས་པ་རྣམས་ལའང་ཐུགས་རྗེ་ཆེ་ཞུ་རྒྱུ་ཡིན།

དེ་བཞིན་དཔར་བསྐྲུན་སྡེ་ཚན་གྱིས་མཆོད་འབྲེལ་ཡོད་ཁུངས་སོ་སོ་ནས་མཐུན་འགྱུར་ཅི་ནུས་བགྱིས་པར་ལེགས་སོ་བྱ་རྒྱུ་བཅས། རྒྱུན་མཁོའི་ཆོས་ཚན་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་དང་དེ་འབྲེལ་གཞུང་ཚན་དང་ཉམས་ཞིབ་རྒྱུ་ཆ་ཁག་བཅས་དཔར་དུ་སྐྲུན་པ་འདིས་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོའི་སློབ་གཉེར་ཉམས་བཞེས་གནང་མཁན་རྣམས་ལ་ཕུགས་ཕན་གསོ་བའི་རེ་བ་དང་། སངས་རྒྱས་ཀྱི་བསྟན་པ་དྲི་མ་མེད་པ་དར་ཞིང་རྒྱས་ལ་ཡུན་རིང་དུ་གནས་པའི་སྨོན་ལམ་བཅས། ཝཱ་ཎ་གཙུག་ལག་སློབ་གཉེར་ཁང་གི་ངེས་སྟོན་པ་དགེ་བཤེས་ངག་དབང་བསམ་གཏན་གྱིས་ཕྱི་ལོ་༢༠༠༡ ཟླ་༡༢ ཚེས་༡༨ དགེ་བར་སྦྱར་བའོ།།

प्रकाशकीय

बौद्ध धर्म में तीन प्रकार के पुरुषों के अनुष्ठानों में पापदेशना एक महत्त्वपूर्ण अंश है। तदनुकूल साधारण जगत् में भी शिष्ट-व्यक्तियों के द्वारा अपने द्वारा किये गये प्रतिकूल कार्यों के लिए प्रायश्चित्त करना और आगे न करने की प्रतिज्ञा करना महत्त्वपूर्ण कार्य होता है।

इस सामाजिक अर्थात् लौकिक नय में सम्बद्ध व्यक्ति विशुद्ध चित्त से प्रायश्चित्त करे या न करे, लेकिन उसका निर्दोष होना दूसरे व्यक्ति की सन्तुष्टि पर निर्भर रहता है, परन्तु आध्यात्मिक साधना में उससे विपरीत है। व्यक्ति कुकर्म के दोष से मुक्त होने के लिए पूर्णतया अपनी विशुद्ध चित्तप्रक्रिया पर ही निर्भर रहता है। बौद्ध धर्म की साधना विशेष कर महायान परम्परा में साधक क्लेश के वशीभूत होकर जब पापकर्म कर जाता है, उससे छहों यामों में तीव्र प्रायश्चित्त से पापदेशना करने पर वह कर्म सड़े हुए बीज की भाँति सामर्थ्यविहीन हो जाता है- ऐसा तथागत ने अनेक सूत्रों में कहा है।

त्रिस्कन्धसूत्र अथवा आपत्ति-देशना नामक यह प्रसिद्ध सूत्र चार-बल एवं सप्तांग पूजा-विधि से सम्पन्न एक देशना-विधि है। इसका अभ्यास प्राचीन काल में नालन्दा आदि प्रसिद्ध महाविहारों में प्रचलित था, जिसका प्रभाव कालान्तर में तिब्बत में भी पड़ा। फलस्वरूप, वहाँ के समस्त सम्प्रदायों के विद्वानों एवं साधकों ने भी इसका अभ्यास किया और धीरे-धीरे सामान्य लोगों में भी इसके अभ्यास का बहुत अधिक प्रचलन हुआ, जो आज तक अक्षुण्ण रूप से विद्यमान है।

प्रस्तुत सूत्र के मूल का एकमात्र संस्कृत पाठ शिक्षासमुच्चय में उद्धृत प्राप्त होता है। इसकी तीन भारतीय टीकाएं प्राप्त होती हैं, जो आचार्य नागार्जुन, आचार्य जितारि एवं आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान कृत हैं। ये टीकाएं संस्कृत में अनुपलब्ध हैं, किन्तु तिब्बती तन्ग्युर संग्रह में इनके भोट अनुवाद प्राप्त हैं। उक्त प्रथम दो टीकाओं की समीक्षा करते हुए दोनों ग्रन्थों के लेखकों के बारे में अनेक भोट विद्वानों ने विवेचन किया है। भोट विद्वानों ने दर्शन, भावना, साधना-विधि आदि जो भी हो, आर्यदेश के नाम से और प्रसिद्ध आचार्यों के नाम से जुड़े रहने मात्र के आधार पर स्वीकार नहीं किये हैं, अपितु विशुद्ध आगम और युक्ति द्वारा परीक्षण करके उनकी प्रामाणिकता का निश्चय किया है। यह तिब्बत में संरक्षित बौद्ध परम्परा अविच्छिन्न और विशुद्ध भारतीय परम्परा होने का एक लक्षण माना जाता है।

संस्थान में शोधविभाग के पुनरुद्धार अनुभाग में कार्यरत शोध सहायक लोसङ् दोर्जे ने शोध योजना के अन्तर्गत आर्य-त्रिस्कन्धसूत्र एवं इसकी तीन टीकाओं का संशोधन, संस्कृत पुनरुद्धार एवं हिन्दी अनुवाद कार्य सम्पन्न किया। आपने प्राप्त

मूल सूत्र के दो भोट अनुवादों की परस्पर तुलना और सम्पादन तथा मूल संस्कृत का सम्पादन किया और तीनों टीकाओं के अनेक भोट संस्करणों में से प्रमुख पाँच संस्करणों के साथ पाठ-भेद निर्धारित कर तिब्बती पाठ का सम्पादन और अनुवाद किया। साथ ही, तिब्बती एवं हिन्दी भाषा में एक विस्तृत समीक्षात्मक भूमिका तथा ग्रन्थ के अन्त में तीन विद्वानों की मान्यताओं के अनुसार पैंतीस बुद्धों के चित्रों एवं उनके काय-वर्ण-आयुध आदि की सारणी सहित एक विस्तृत परिशिष्ट भी प्रस्तुत किया है।

इस ग्रन्थ का प्रकाशन करते हुए मुझे हर्ष हो रहा है, जिसके लिए मैं आयुष्मान् लोसङ् दोर्जे को उसके अथक प्रयास के लिए साधुवाद देता हूँ। इस कार्य में साक्षात् सहयोग देने वाले तथा मार्गदर्शक प्रोफेसर रामशंकर त्रिपाठी सहित अन्य विद्वानों को भी धन्यवाद देता हूँ। प्रकाशन अनुभाग सहित अन्य सम्बद्ध सहयोगकर्ताओं को भी साधुवाद देता हूँ। आशा करता हूँ कि अत्यन्त व्यापक रूप से प्रचलित इस सूत्र की टीकाओं सहित प्रकाशन से जिज्ञासुओं तथा शोधकर्ताओं को सहायता मिलेगी। विमल बुद्धशासन के विकास एवं चिरस्थायित्व की प्रार्थना सहित।

दिनांक ९.१२.२००१

डवङ् समतेन
निदेशक

དཀར་ཆག

ཨང་། ཤོག་གྲངས།

ཁ་སྐོང་ལྷན་ཐབས་ཀྱི་ཚན་བཅུ

विषयानुक्रमणी

●

བསྡུས་ཡིག་ངོ་སྤྲོད། संक्षिप्त संकेत-सूची

དཀའ་ཤར།	དཀའ་ལྡན་ཤར་རྩེ་གྲྭ་ཚང་།
འགྲེལ་མཛད།	འགྲེལ་པ་མཛད་པ་པོ།
ཅོ།	ཅོ་ནེ་དཔར་མ།
ཉེར་འཁོར་གྱི་མདོ།	འཕགས་པ་ཉེ་བར་འཁོར་གྱིས་ཞུས་པའི་མདོ།
སྣར།	སྣར་ཐང་དཔར་མ།
སྡེ།	སྡེ་དགེ་དཔར་མ།
སྡེ་བཀའ།	སྡེ་དགེ་བཀའ་འགྱུར།
སྡེ་བསྟན།	སྡེ་དགེ་བསྟན་འགྱུར།
པེ།	པེ་ཅིང་དཔར་མ།
བོད་ཤོག	བོད་ཀྱི་དཔེ་རིང་དང་དཔེ་ཐུང་ཤོག་གྲངས།
དབྱིན་ཤོག	དབྱིན་ཇིའི་ཤོག་གྲངས།
འབྲས་བློ་གླིང་།	འབྲས་སྤུངས་བློ་གསལ་གླིང་གྲྭ་ཚང་།
ཤོག་ཨང་།	ཤོག་བུའི་ཨང་གྲངས།
གསེར།	གསེར་བྲིས་དཔར་མ།
བསླབ་བཏུས།	བསླབ་པ་ཀུན་ལས་བཏུས་པ།

संक्षिप्त चिह्न	**विवरण**
पृ०	पृष्ठ
देगे० सं०	देगे संस्करण
द्र०	द्रष्टव्य
अ० को० भा०	अभिधर्मकोशभाष्य
बौ० भा० सं०	बौद्ध भारती संस्करण
मू० मा० कारिका	मूलमाध्यमिककारिका
तु०	तुलनीय
अभि० को०	अभिधर्मकोश
ति० सं० सं०	तिब्बती संस्थान, संस्करण
शुभा......कार्य-निर्देशसूत्रम्	शुभाशुभकार्यकारणभावनिर्देशसूत्रम्
शुभा...कर्म...सूत्रम्	शुभाशुभकर्मविपाकनिर्देशसूत्रम्
मि० संस्करण, मि० सं०	मिथिला संस्करण
Toh.	Tohoku Imperial University Catalogue

སྔོན་གླེང་།

༄༅། །འོ་སྐོལ་གྱི་སྟོན་པ་སྟོབས་བཅུ་མངའ་བ་སྨོན་ལམ་དང་སྙིང་རྗེའི་མཐུ་ཤུལ་དུ་བྱུང་བ། ཕྱོགས་དང་རིས་སུ་མ་ཆད་པའི་ནམ་མཁའི་མཐས་གཏུགས་པའི་སྐྱེ་འགྲོ་ཡོངས་ཀྱི་མ་འདྲིས་པའི་མཛའ་བཤེས་ཆེན་པོ། སྟོན་པ་བླ་ན་མེད་པ་ཡང་དག་པར་རྫོགས་པའི་སངས་རྒྱས་ཤཱཀྱའི་རྒྱལ་པོ་དེ་ཉིད་ཀྱིས་ཁམས་གསུམ་གྱི་སེམས་ཅན་གྱི་རྒྱུད་ཀྱི་དུག་གསུམ་གཙོ་བོར་གྱུར་པའི་ཉོན་མོངས་ཇི་སྙེད་པ་དེ་སྙེད་ཀྱི་གཉེན་པོ་ལ་རྒྱས་པར་ཕྱེ་ན་ཆོས་ཀྱི་ཕུང་པོ་སྡེ་བརྒྱད་ཁྲི་བཞི་སྟོང་གསུངས་པ་ཡིན་ལ། དེའི་ཡང་རྟོག་དོན་བྱས་ན། དགེ་ལས་ལ་བརྩོན་ཞིང་སྡིག་ལས་ལས་ལྡོག་ནས་རིམ་པར་ས་ལམ་ལ་ཞུགས་ཏེ་ཐར་པ་དང་ཐམས་ཅད་མཁྱེན་པའི་གོ་འཕང་ཐོབ་པར་བྱས་ཏེ་གདུལ་བྱ་འཁོར་བ་ནས་དྲང་རྒྱུ་ཡིན་ཀྱང་། དེང་གི་སྐྱེ་བོ་ཕལ་ཆེ་བ་དགེ་བར་བརྩོན་པ་ཉུང་བ་དང་མི་དགེ་བའི་སྤྱོད་པར་ཞུགས་པ་མང་། དཀར་པོ་དགེ་བའི་ལས་ལ་ཞུགས་པ་རྣམས་ཕ་བོང་གྱེན་དུ་འགྲིལ་བ་ལྟར་དཀའ་ཚེགས་ཆེ་ཞིང་གྲངས་ཉུང་བ་དང་། ནག་པོ་སྡིག་པའི་ལས་ལ་ཞུགས་པ་རྣམས་ནི་ཆུ་ཀླུང་ཐུར་དུ་འབབ་པ་ལྟར་སྟོབས་ཆེ་ཞིང་ངང་གིས་བྱུང་ལ་གྲངས་མང་བ། ལྷག་པར་དགེ་བར་རློམ་པ་ཉུང་ངུར་མཆིས་པ་རྣམས་ཀྱང་དོན་དུ་ན་ཆ༔ ཤུང་སྒོངས་གསུམ་གྱིས་ལྷད་པ་ཤིན་ཏུ་མང་བས་ངང་གིས་ངན་འགྲོར་ལྟུང་བའི་རྒྱུ་གསོག་པའོ། །

མདོར་ན་རང་རེའི་སྒོ་གསུམ་གྱི་བྱ་བ་གང་ལ་སྤྱོད་ཀྱང་རྒྱལ་བའི་བཀའ་དང་བསྟུར་ཆེ་མི་དགེ་བའི་ཕུང་པོ་འབབ་ཞིག་གི་ཕྱོགས་སུ་སོང་བ་ཤས་ཆེ་བས། བློ་དང་བརྩོན་པའི་ནུས་ཤུགས་ཅི་ཡོད་ཀྱིས་དུས་རྒྱུན་དུ་བཤགས་སྡོམ་ལ་འབད་པ་གལ་ཆེ། དེ་ལྟ་བུའི་སྒོ་ནས་བཤགས་སྡོམ་བྱེད་པ་ལའང་ཕྱོགས་རེ་བ་ཙམ་གྱིས་མི་ཆོག་པར། གཉེན་པོ་སྟོབས་བཞི་ཚང་བའི་སྒོ་ནས་མི་དགེ་བའི་ལས་སྤྱི་དང་ཁྱད་པར་དུ། སོ་ཐར། བྱང་སེམས། གསང་སྔགས་ཀྱི་ཉེས་ལྟུང་གང་བྱུང་བ་རྣམས་འགྱོད་ཤུགས་དྲག་པོའི་སྒོ་ནས་བཤགས་སྡོམ་བྱེད་དགོས། དེ་ལྟ་བུའི་ཚུལ་ལ་འབད་ཚེ་སྔར་བྱུང་སྡིག་ལྟུང་ཇི་ཙམ་ཡོད་པ་རྣམས་ཀྱང་ཟླ་བ་སྤྲིན་བྲལ་བཞིན་འདག་པར་འགྱུར་ཏེ།

ཇི་སྐད་དུ། སློབ་དཔོན་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱིས་མཛད་པའི་བཤེས་སྤྲིང་ལས།[1]

སྡིག་ཆེན་བག་མེད་བྱེད་པར་འགྱུར་ན་ཡང་། །
ཕྱིས་ནས་བག་དང་ལྡན་པར་བྱས་འགྱུར་ན། །
ཟླ་བ་སྤྲིན་བྲལ་ལྟ་བུར་རྣམ་མཛེས་ཏེ། །
དགའ་བོ་སོར་ཕྲེང་མཐོང་ལྡན་བདེ་བྱེད་བཞིན། །

ཞེས་གསུངས་པ་ལྟར། ཟླ་བ་སྤྲིན་གྱིས་བསྒྲིབས་པ་ལས་ཕྱིས་སྤྲིན་དང་བྲལ་ནས་ནམ་མཁའ་སྔོ་སངས་ཀྱི་དཀྱིལ་ན་ཟླ་འོད་ཀྱིས་མཛེས་པ་བཞིན་དུ། སྐྱེས་བུའི་ཉེས་རྒྱུད་ལ་སྔར་སྡིག་ལྟུང་གི་སྒྲིབ་པ་ཡང་ཕྱིས་སྟོབས་བཞིས་བཤགས་པས་དག་སྟེ། དཔེར་ན། ཙུང་དགའ་བོ་བུད་མེད་ལ་ལྷག་པར་ཆགས་པ་དང་། སོར་ཕྲེང་གིས་མི་དགུ་བརྒྱ་གོ་དགུའི་སྲོག་བཅད་པ་དང་། རྒྱལ་བུ་མཐོང་ལྡན་གྱིས་ཕ་བསད་པ་དང་། ཁྱེའུ་བདེ་བྱེད་ཀྱིས་མ་བསད་ནའང་ལམ་གོང་མ་སྒྲུབ་པའི་སྣོད་རུང་དུ་གྱུར་པ་མ་ཟད་ཐར་པའི་གོ་འཕང་རྙེད་ཐུབ་པ་ནི་འགྱོད་ཤུགས་དྲག་པོ་ལས་བྱུང་། དེ་ལྟ་བུའི་འགྱོད་པ་དྲག་པོ་སོགས་ཀྱི་གཉེན་པོ་སྟོབས་བཞི་དང་ཕུང་པོ་གསུམ་གྱི་ཆོས་མཐའ་དག་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་འདི་ཉིད་ལ་ཡོངས་སུ་ཚང་བ་ཡིན་ནོ། །

གཞན་ཡང་དེ་ལྟ་བུའི་ཉེས་ལྟུང་སྡིག་སྒྲིབ་ཅི་མཆིས་པ་རྣམས་ཀྱང་རང་ཉིད་ཁོ་ནས་སྦྱོང་ཐབས་བྱེད་དགོས་ཀྱི། གཞན་གྱིས་མཆོག་དང་དམ་པ་སོགས་སྦྱིན་པ་ལས་གྲོལ་མི་ཐུབ་པ་ནི་བདག་ཅག་གི་སྟོན་པ་ཉིད་ཀྱིས་གསུངས་ཏེ། ཚོམས་ཀྱི་འགྲེལ་པ་ལས།[2]

ཐུབ་རྣམས་ཆུ་ཡིས་སྡིག་པ་འཁྲུ་བར་མི་མཛད་ཅིང་། །
འགྲོ་བའི་སྡུག་བསྔལ་ཕྱག་གིས་ཀྱང་ནི་སེལ་མི་མཛད། །
བདག་གིས་གཞན་ལ་རྟོག་པ་སྤོས་པ་མ་ཡིན་ཏེ། །
ཆོས་ཉིད་ཞི་བ་གསུང་ཞིང་རབ་ཏུ་སྒྲུབ་པ་ཡིན། །

---

༡ Toh-4182 སྡེ། བསྟན། སྤྲིངས་ཡིག ངེ་ ༤༡ ན ༥

༢ Toh-4100 སྡེ། བསྟན། མངོན་པ། ཏུ་ ༥༢ བ ༨

ཞེས་གསུངས་པ་ལྟར་འགྲོ་བ་རྣམས་སྡིག་པ་མི་དགེ་བའི་ལས།　དེ་ལས་བྱུང་བའི་འབྲས་བུ་རྣམ་སྨིན་སྡུག་བསྔལ་སེལ་བར་བྱེད་པའི་ཐབས་ཐུབ་པ་བཅོམ་ལྡན་འདས་ཇི་ལྟར་གཟིགས་པ་ལྟར་ཇི་སྙེད་ཅིག་དང་རྣམ་དཀར་དགེ་བའི་ཕྱོགས་ཀྱི་ལམ་ལེགས་པར་གསུངས་པའི་སྙིང་པོ། ཧེན་འབྱུང་གི་དེ་ཁོ་ན་ཉིད་དང་བྱམས་དང་སྙིང་རྗེའི་རྩ་བ་ཅན་གྱི་བྱང་ཆུབ་ཀྱི་སེམས་བཅས་གདུལ་བྱས་ལེགས་པར་ཉམས་སུ་བླངས་ན།　སྡིག་སྒྲིབ་མཐའ་དག་བྱང་སྟེ་ཐར་པ་དང་ཐམས་ཅད་མཁྱེན་པའི་གོ་འཕང་མཆོག་ལ་རེག་པར་འགྱུར་གྱི། དེ་ལས་ལྡོག་སྟེ་ཕྱི་རོལ་པའི་བླ་མས་སློབ་མ་འདྲེན་པ་བཞིན་དུ་འབད་པ་མེད་པར་སྒྲོ་བར་བྱེད་པ་ནི་མ་ཡིན་ཏེ། ཇི་སྐད་དུ། སྟོན་པ་ཉིད་ཀྱིས།

ངས་ཀྱི་ཁྱོད་ལ་ཐར་པའི་ལམ་སྟོན་གྱི། །
ཐར་པ་རང་ལ་རག་ལས་ཤེས་པར་གྱིས། ། ཞེས་དང་།

ཚེད་དུ་བརྗོད་པའི་ཚོམས་ལས་ཀྱང་།[1]

སྲིད་པའི་ཟུག་རྡུ་གཅོད་མཛད་པའི། །
ལམ་ནི་ཁྱོད་ལ་ངས་བསྟན་བྱ། །
ཁྱོད་ཉིད་ཀྱིས་ནི་བསྒྲུབ་བྱ་སྟེ། །
དེ་བཞིན་གཤེགས་པས་སྟོན་མཛད་ཡིན། །

ཞེས་གསུངས་པས་སོ།　།མདོར་བསྡུ་ན་གདུལ་བྱ་རང་ཉིད་ཀྱིས་བརྩོན་པས་དངོས་སུ་སྤྲང་བ་ལ་ཞུགས་ཏེ་ལམ་རིམ་པ་སློབ་དགོས་པ་བསྟན་ཏོ། །

དེ་ལྟར་ན་ཐོག་མར་རང་ཉིད་ཀྱིས་སྡིག་སྒྲིབ་སྤོང་བ་ལ་འབད་དགོས་པས་སྤོང་བའི་ཐབས་ཐུབ་པ་བཅོམ་ལྡན་འདས་ཀྱིས་སྣ་ཚོགས་ཤིག་གསུངས་ཤིང་།　དེའི་ནང་ནས་རབ་དང་ཕུལ་དུ་བྱུང་བ་ཞིག་ནི་འཕགས་པ་ཉེ་བར་འཁོར་གྱིས་ཞུས་པའི་མདོ་ལས་ཕྱུང་བའི་འཕགས་པ་ཕུང་པོ་གསུམ་པ་ཞེས་བྱ་བ་འདི་ཡིན་ནོ། །

[1] Toh-326 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། ས། ༢༧༩ བ

མདོ་འདི་ནི་ཆོས་ཀྱིས་དུས་འདའ་བའི་ཉམས་ལེན་པ་རྣམས་ལ་མ་ཟད། དེ་ཙམ་གྱི་དུས་ཀྱིས་ཁོམ་པ་མེད་པའི་སྐྱེ་འགྲོ་རྣམས་ལ་ཡང་ཤིན་ཏུ་ཕན་ཐོགས་ཆེ་ཞིང་མཁོ་གནད་ཆེ་བ་ཡིན་ཏེ། མདོ་དེ་ཉིད་རྒྱས་བསྡུས་འཚམས་ཞིང་ལག་ཏུ་བླང་བདེ་བ། རང་ཉིད་ལ་སངས་རྒྱས་སོ་ལྔ་པོ་རྣམས་སྒོམ་སླ་ཞིང་བློ་ལ་འཆར་བདེ་བ་དང་། ངག་ནས་འདོན་སླ་ཞིང་ཡིད་ལ་འཛུགས་བདེ་བ། གཞན་ལ་ཡང་དོན་འཆད་བདེ་བ་སོགས་ཁྱད་ཆོས་དུ་མས་ཕྱུག་ཅིང་། སྔོན་གྱི་འཕགས་བོད་ཀྱི་སྐྱེས་ཆེན་དམ་པ་རྣམས་ཀྱིས་ཀྱང་དོན་དེ་ལ་དགོངས་ནས་གཙོ་ཆེན་པོར་མཛད་དེ། དེ་ལ་འགྲེལ་པ་དང་། སྒྲུབ་ཐབས་དང་། ཆོ་ག་སོགས་མང་དུ་མཛད་ཡོད་པ་མ་ཟད་དེ་ཉིད་ཐུགས་དམ་གྱི་མཐིལ་དུ་མཛད་པ་བཅས་ལས་ཤེས་ནུས་པས་སོ།།

གཞུང་འདིའི་ཐད་ལས་དོན་ཇི་བྱས།

དེ་ལྟར་ན་གཞུང་ཁྱད་པར་དུ་འཕགས་པ་འདི་ལྟ་བུ་ཞིག་སྐྱེ་བོ་ཀུན་གྱི་མིག་ལམ་དུ་གྱུར་པ་བྱུང་ཚེ་ཕན་ཐོགས་ཧ་ཅང་ཆེ་བར་བསམ་སྟེ། ལོ་ཤས་སྔོན་ངོས་ནས་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་ཉིད་དཔར་མ་ཁག་ལྔ་ཙམ་དང་ཞིབ་བསྡུར་ཐོག་དག་ཞུས་བྱས་ཤིང་། བོད་འགྱུར་དེ་དག་དང་ལེགས་སྦྱར་དུ་བཞུགས་པའི་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་གཉིས་ལའང་ཞིབ་བསྡུར་གྱིས་དག་ཞུས་བྱས། དེ་བཞིན་དུ་རྒྱ་འགྲེལ་གསུམ་གྱི་བོད་འགྱུར་གྱི་དཔར་མ་ཁག་བཞི་དང་མཚུངས་བསྡུར་བྱས་ཏེ་མདོ་དང་འགྲེལ་པ་དེ་དག་ལེགས་སྦྱར་དུ་བསྐྱར་གསོ་དང་ཧིན་སྐད་དུ་ཕབ་བསྒྱུར་ཞུས།

གོང་གསལ་མདོ་དང་ལེགས་སྦྱར་དང་དེའི་འགྲེལ་པ་དུ་མ་བོད་སྐད་དུ་བཞུགས་པར་ཞིབ་བསྡུར་བྱས་ཏེ་དཔྱད་པ་ཕྲན་བུ་བྱས་པའི་གླེང་བརྗོད་མི་ཉུང་བ་ཞིག་ཀྱང་འབྲི་ཁུལ་བྱས་ཡོད། དེའི་ཚུལ་མདོ་ཙམ་ཞུས་ན། ཐོག་མར་མདོ་ཉིད་ཇི་ལྟར་འགྲོས་པའི་ཚུལ་དང་། བདེ་གཤེགས་སོ་ལྔའི་སྐུ་མདོག་ཕྱག་མཚན་དང་། ཕྱག་རྒྱའི་རྣམ་པ་མི་འདྲ་བ་རྣམས་དང་། མདོ་འདི་ཉིད་ལ་འདོན་སྲོལ་ཇི་ཡོད་དང་། མདོ་དང་རྒྱ་འགྲེལ་ཁག་གི་བརྗོད་བྱ་རྣམས་ལ་དེང་དུས་ཀྱི་ལམ་སྲོལ་དང་མཐུན་པར་རང་ཉིད་ཀྱིས་དཔྱད་ཞིབ་གང་ཐུབ་ཞུས། མདོ་དང་རྒྱ་འགྲེལ་གསུམ་པོའི་

བསྡུས་དོན་དང་།   གཞུང་བྱེད་མཁན་པོ་རྣམས་དང་སྒྱུར་བྱེད་ལོ་ཙཱ་བ་རྣམས་ཀྱི་རྣམ་ཐར་ཐུང་ངུ་རེ་ཡང་བཀོད་ཡོད།

མཇུག་ཏུ་ཁ་སྐོང་ལྷན་ཐབས་རྣམ་གྲངས་བཅུ་ཙམ་བཀོད་ཡོད།   དཔེར་ན་སློབ་དཔོན་ཛ་དབྱངས་ཀྱིས་མཛད་པའི་འགྲོད་བཤགས་ཀྱི་གཞུང་ཆུང་ངུ་སྤྱི་བཤགས་ཀྱི་མ་ཕྱི་བོད་དཔེ་ཉིད་ལ་གཞི་བཅོལ་ཏེ་ལེགས་སྦྱར་དུ་བསྒྱུར་གསོ་དང་ཧིན་སྐད་དུ་ཕབ་འགྱུར་བྱས་ཏེ་ཁ་སྐོང་དང་པོའི་ཚུལ་དུ་བཞག་པ་ལྟ་བུ་སྟེ། དེ་མཚུངས་ཁ་སྐོང་མདོ་དང་། རྒྱ་འགྲེལ་དང་། གླེང་བརྗོད་རྣམས་སུ་གསལ་བའི་ཐ་སྙད་ཤན་སྦྱར། ལུང་འདྲེན་ཁག་གི་གཞུང་ཚན་ངོ་སྤྲོད། སངས་རྒྱས་སོ་ལྔའི་སྐུ་བརྙན་འབྲི་ཚུལ་མི་འདྲ་བའི་བཞེད་པ་རྣམས་གཟིགས་བདེར་རེའུ་མིག་དང་དྲྭ་མིག་གི་ཚུལ་དུ་བཀོད་ཡོད།

ཐུགས་རྗེ་ལེགས་སོ།

ཐོག་མར་འདི་གའི་མཐོ་སློབ་ཁང་གི་ངེས་སྟོན་པ་ཟླ་ར་བ་སྐྱབས་རྗེ་ཟམ་གདོང་རིན་པོ་ཆེ་མཆོག་ལ་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་འདི་དང་།   དེའི་རྒྱ་འགྲེལ་གསུམ་པོའི་སྐོར་དགོངས་སྐོར་ཞུས་པས་དགྱེས་མཉེས་ཆེན་པོས་ཐུགས་ཞིབ་གནང་སྟེ།   སློབ་གྲྭ་ནས་དཔར་བསྐྲུན་ཆོག་པའི་བཀའ་ཁྲོལ་ཡང་གནང་བ་མ་ཟད།   དེ་དག་གི་ཐོག་ལ་གལ་ཆེའི་ལམ་སྟོན་རྒྱ་ཆེན་པོ་གནང་བ་བཅས་ལའང་ལན་བརྒྱར་བཀྲིན་རྗེས་དྲན་ཞུ་རྒྱུ་དང་འབྲེལ་ཐུགས་རྗེ་ཤིན་ཏུ་ཆེ་ཆེ་ཞུ་རྒྱུ།

སླད་མར་འདི་གའི་མཐོ་སློབ་ཁང་གི་ད་ལྟའི་ངེས་སྟོན་ནམ་རང་སྡེ་བསྒྱུར་ཞིབ་སྡེ་ཚན་གྱི་འགན་འཛིན་ཟླ་ར་བ་དགེ་བཤེས་ངག་དབང་བསམ་གཏན་ལགས་ནས་གཞུང་དོན་གཞི་སྤྱི་དང་ལྷག་པར་དུ་བོད་སྐད་དུ་བཞུགས་པའི་གླེང་བརྗོད་རྣམས་གཟིགས་ཞིབ་ནན་ཏན་གནང་བ་མ་ཟད་གལ་ཆེའི་སློབ་སྟོན་བསྩལ་གནང་བར་ངོས་ནས་ལན་གྲངས་དུ་མར་ཐུགས་ཆེ་ཞུ་རྒྱུ་ཡིན།

གཞན་ཡང་རྒྱ་གར་གྱི་སློབ་དཔོན་ཀཱ་མེ་ཤྭར་ནཱ་ཐ་མི་ཤྲ་མཆོག་གིས་ཇོ་བོ་རྗེས་མཛད་པའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པ་ལེགས་སྦྱར་གྱི་སྐད་དུ་བསྒྱུར་གསོ་དང་ཧིན་སྐད་ཕབ་བསྒྱུར་བཅས་ལ་གཟིགས་ཞིབ་དང་སྦྲགས་ཞུས་དག་གནང་ཞིང་།   སློབ་དཔོན་ཟླ་ར་བ་སེམས་དཔའ་རྡོ་རྗེ་ལགས་

ནས་ཀྱང་སློབ་དཔོན་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱིས་མཛད་པའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པའི་ལུང་ཁྲིད་དང་། ཧིན་སྐད་ཕབ་འགྱུར་ལ་ཞུས་དག་ཕྲན་བུ་ཙམ་གནང་བར་སྙིང་ཐག་པ་ནས་ཐུགས་རྗེ་ཆེ་ཞུ་རྒྱུ་ཡིན།

སླད་མར་ནས་རྒྱ་གར་གི་སློབ་དཔོན་རཏྣཤཱནྟར་ཏྲིཔཱཋི་མཆོག་གིས་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་དང་རྒྱ་འགྲེལ་གསུམ་པོ་རྣམས་ལེགས་སྦྱར་གྱི་སྐད་དུ་བསྒྱུར་གསོ་དང་ཧིན་སྐད་ཐོག་ཕབ་བསྒྱུར་ཟིན་པ་བཅས་ལ་དག་ཞུས་དང་། མ་ཟིན་པ་རྣམས་ལ་བསྒྱུར་གསོ་མཛད་རྒྱུའི་མཉམ་རོགས་གནང་བ་མ་ཟད། ཧིན་སྐད་གླེང་བརྗོད་དང་ཁ་སྐོང་ལྷན་ཐབས་ཁག་ལའང་དག་ཞུས་གནང་བ་བཅས་ལ་ཕན་གྲོགས་ཅི་ཆེ་བྱུང་བར་བཀྲིན་རྗེས་དྲན་གྱི་ཚུལ་དུ་ཐུགས་རྗེ་ཤིན་ཏུ་ཆེ་ཞུ་རྒྱུ་ཡིན།

འདི་གའི་མཐོ་སློབ་ཁོངས་བོད་ཀྱི་རྒྱལ་རབས་སློབ་དཔོན་ཚུལ་ཁྲིམས་ཕུན་ཚོགས་ལགས་ནས་བོད་དཔེའི་གླེང་བརྗོད་ཀྱི་ཐོག་ཞུས་དག་མཐིལ་ཕྱིན་གཏང་རྒྱུ་དང་འབྲེལ་ཡོད་གལ་ཆེའི་དགོངས་འཆར་གནང་བ་བཅས་ལ་ངོས་ནས་ཐུགས་རྗེ་བླ་མེད་དུ་ཆེ་ཞུ་རྒྱུ་ཡིན།

དེ་མཚུངས་འདི་གའི་འགྱུར་གྱི་སྡེ་ཚན་ཁོངས་ཀྱི་ཞུ་སྒྲིག་པའི་ལས་རོགས་གྲོགས་མིང་སྐུ་ཞབས་པདྨ་བསྟན་འཛིན་ལགས་ནས་ཧིན་བསྒྱུར་གླེང་བརྗོད་ཀྱི་གཙོས་དེ་འབྲེལ་རྣམས་ལ་བསྐྱར་ཞིབ་ཞུས་དག་ཧུར་ཐག་གནང་སོང་བར་ལན་གྲངས་དུ་མར་ཐུགས་རྗེ་ཤིན་ཏུ་ཆེ་ཞུ་རྒྱུ་ཡིན།

གཞན་ཡང་འདི་གའི་དཔར་བསྐྲུན་སྡེ་ཚན་གྱི་འགན་འཛིན་སྐུ་ཞབས་བསམ་གཏན་ཆོས་འཕེལ་ལགས་ནས་དཔེ་སྐྲུན་ལ་ཉེར་མཁོའི་མཐུན་རྐྱེན་རྣམས་འཕྲུལ་མ་ཉིད་དུ་མཐུན་འགྱུར་གནང་བར་ཐུགས་རྗེ་ཤིན་ཏུ་ཆེ་ཞུ་རྒྱུ་ཡིན།

གཞན་ཡང་སྤྱི་ནོར་༧གོང་ས་སྐྱབས་མགོན་རིན་པོ་ཆེ་མཆོག་གི་བོད་དྲུང་སྐུ་ཞབས་བློ་བཟང་སྦྱིན་པ་མཆོག་ལ་༧གོང་ས་སྐྱབས་མགོན་༧རྒྱལ་དབང་ཐམས་ཅད་མཁྱེན་ཅིང་གཟིགས་པ་ཆེན་པོ་མཆོག་ལ་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོའི་ལུང་དང་གསན་རྒྱུན་ཇི་ཐོབ་ཀྱི་ལྟར་ཐོ་ཞིག་སྐྱབས་འཇུག་ཞུས་པ་ལྟར་བསྩལ་གནང་བྱུང་སྙིང་ཐག་པ་ནས་ཐུགས་རྗེ་ཤིན་ཏུ་ཆེ་ཞུ་རྒྱུ་ཡིན།

ཧིན་སྐད་དང་ལེགས་སྦྱར་གྱི་པར་རྩ་དང་བོད་ཡིག་གི་པར་རྩ་རྣམས་ཀམ་པྱུ་ཊར་ནང་

འདེབས་འཛུག་པ་སྐུ་ཞབས་མེརིལཱལ་སིནྡ་དང་ཤཱེབྲཀཱུཤ་སིནྡ་སྐུ་མཆེད་རྣམ་གཉིས་ཀྱི་གཙོས་པའི་གྲོགས་མིང་སྟོབས་རྒྱལ། པདྨ་ཆོས་ལྡན། བཀྲིས་ཚེ་རིང་། ཨོ་རྒྱན་ཆོས་གྲགས་བཅས་ནས་ལྷག་བསམ་ཆེན་པོས་འདེབས་འཛུག་གནང་བར་ཐུགས་རྗེ་ཤིན་ཏུ་ནས་ཆེ་ཞུ་རྒྱུ་ཡིན།

དེ་མིན་འདི་གའི་མཐོ་སློབ་ཁང་གི་དཔེ་མཛོད་ལས་བྱེད་པ་གྲོགས་མིང་པདྨ་རྒྱལ་པོ་དང་བསོད་ནམས་ཚེ་དབང་ལགས་གཉིས་ཀྱིས་གཙོས་གྲོགས་མིང་ཚེ་བརྟན་དོན་གྲུབ་དང་། ཚེ་རིང་ཆོས་འཕེལ། བློ་བཟང་དགེ་འདུན་ལགས་དང་། མོཧསྣུ་སུསྣཱཛ་བཅས་ནས་ཀྱང་དགོས་མཁོའི་ཕྱག་དཔེ་རིགས་འཚོལ་ཞིབ་དང་། ཕྱག་དཔེའི་འདྲ་བཤུས་དགོས་རིགས་རྣམས་ཀྱང་དེ་མ་ཐག་ཏུ་མཁོ་སྒྲུབ་གནང་སོང་བར་ཐུགས་རྗེ་ཆེ་ཞུ་རྒྱུ།

མདོར་ན་གཞུང་འདི་ལ་དངོས་ཤུགས་གཉིས་ཀར་ཕན་གྲོགས་གནང་མཁན་ཚང་མ་དང་། ལྷག་པར་ལུས་སེམས་གཉིས་ཀའི་སྒོ་ནས་རྒྱབ་གཉེར་གནང་མཁན་ཚང་མའི་གནས་སྐབས་རང་རང་གི་བཞེད་དོན་རྣམས་ཇི་ལྟར་བ་བཞིན་དུ་འགྲུབ་ཏེ། མཐར་ཐུག་རྣམ་མཁྱེན་རྒྱལ་བའི་གོ་འཕང་མཆོག་ལ་མྱུར་དུ་རེག་པའི་སྨོན་འདུན་དང་བཅས་ཕྱི་ལོ་༢༠༠༡ ཟླ་ ༡༡ ཚེས་ ༣༠ ཉིན་བཟང་པོར་ཉམས་ཞིབ་པ་བློ་བཟང་དོ་རྗེ་རབ་གླིང་མིང་ཅན་གྱིས་སྤྲར་བ་དགེའོ།། །།

प्राक्कथन

भगवान् तथागत बुद्ध महाकारुणिक, दश बलों से युक्त, प्रणिधान एवं करुणा बल से सम्पन्न, पक्षपातरहित, आकाश पर्यन्त व्याप्त समस्त सत्त्वों के कल्याणकर्ता, अनुत्तर शास्ता एवं सम्यक्सम्बुद्ध हैं। ऐसे भगवान् शाक्यमुनि ने तीनों धातुओं में स्थित सत्त्वों की सन्तति में विद्यमान त्रिविष रूपी क्लेशों की संख्या के अनुपात में चौरासी हजार प्रतिपक्ष धर्म-स्कन्धों की देशना की। इन सभी उपदेशों का प्रयोजन पुण्यों के संचय के लिए प्रयत्न एवं समस्त पापों का क्षय करते हुए अन्ततः पाँच मार्गों एवं दश भूमियों में क्रमशः प्रतिष्ठित होते हुए मोक्ष (निर्वाण) एवं सर्वज्ञ-पद प्राप्त करके समस्त दुःखी प्राणियों को संसार से मुक्त करना है।

सम्प्रति अधिकांश लोग पुण्यसंचय के प्रति कम रुचि तथा अकुशल पापकर्म के प्रति अधिक रुचि रखते हुए दिखलाई पड़ते हैं। उनमें भी पुण्यों के प्रति रुचि रखने वाले लोग स्थूल एवं भारी पत्थरों को पर्वत की ओर ऊपर ढकेलने की भाँति क्षीण कुशल बल वाले एवं अत्यल्प होते हैं। पाप कर्मों में संलग्न लोग नीचे की ओर बहने वाली जल की धारा की भाँति हैं, जिनका बल अत्यन्त तीक्ष्ण होता है एवं उनकी संख्या भी अधिक होती है। पुण्यों के प्रति रुचि लेने वाले, जो थोड़े-बहुत हैं, वे भी राग, द्वेष एवं मोह से अधिक लिप्त होते हैं, अतः उनका स्वभावतः दुर्गति की ओर पतन का हेतु संचय करता है।

संक्षेप में जब हम लोग अपने तीनों द्वारों (काय, वाक् और मन) से निष्पन्न कार्यों की तुलना बुद्धवचनों के साथ करते हैं तो हमारे कार्यों की प्रवृत्ति अकुशल-पक्ष की ओर जाते हुए अधिक दिखलाई पड़ती है। अतः यथायोग्य बुद्धि एवं क्षमता के द्वारा सदैव पापकर्मों की प्रतिदेशना करना एवं कुशलों के सम्पादन के लिए प्रयासरत रहना अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इस प्रकार सामान्य प्रतिदेशना एवं संयम का आंशिक पालन करना भी पर्याप्त नहीं होता है। इसके लिए अकुशल कर्मों के प्रतिपक्ष रूपी चार बलों के द्वारा प्रतिदेशना करनी होती है। विशेष रूप से प्रातिमोक्ष, बोधिचित्त एवं मन्त्रयान की कोई भी आपत्ति या दोष लग जाने पर अत्यन्त पश्चाताप के साथ प्रतिदेशना करना परम आवश्यक है। इस प्रकार प्रयत्नरत रहने पर पूर्व में संचित सभी पाप एवं आपत्तियों से मेघरहित

चन्द्रमा की भाँति स्वभावत: विशुद्धि हो जाती है। आचार्य नागार्जुन प्रणीत सुहल्लेख में भी उक्त है, यथा—

पूर्वप्रमत्तः कोऽपि मेघान्निर्गतेन्दुरिव ततोऽप्रमादी ।
स हि नन्दाङ्गुलिमालोदयनाजातशत्रुसदृशः सुशोभेत ।। १४।।[1]

जिस प्रकार बादलों से निकलकर आकाश के मध्य में चन्द्रमा पूर्ण रूप से सुशोभित होता है, उसी प्रकार व्यक्ति की सन्तति में निगूढ पूर्वकृत पाप आपत्तियाँ चार बलों के द्वारा प्रतिदेशना करने से विशुद्ध हो जाती हैं। जैसे आर्य नन्द की स्त्री (सुन्दरी) के प्रति अत्यन्त आसक्ति, अंगुलिमाल द्वारा ९९९ व्यक्तियों की प्राणहिंसा, राजकुमार अजातशत्रु द्वारा अपने धार्मिक पिता बिम्बिसार का बध और उदयन द्वारा अपनी माता का प्राणघात आदि कृत्य यद्यपि किये गये, किन्तु इन सभी ने भगवान् तथागत के समक्ष अत्यन्त कौकृत्य के साथ क्षमा याचना की और भविष्य में इस प्रकार के पापकर्म न करने की प्रतिज्ञा की। इसके फलस्वरूप इसी जन्म में वे उत्तम मार्ग के पात्र बन गये और मोक्ष के भी भागी हो सके। इन सभी लोगों को यह स्थिति अत्यन्त पश्चात्ताप करने के पश्चात् ही प्राप्त हो सकी। इस प्रकार के चार प्रतिपक्ष बलों एवं त्रिस्कन्ध के तीनों धर्मों (शरणगमन, पापप्रतिदेशना एवं परिणामना) से यह त्रिस्कन्धसूत्र सम्पन्न (अन्वित) है।

इस प्रकार के घोर पापकर्मों की स्वयं ही प्रतिदेशना करने में प्रयत्नशील होना चाहिए, न कि यहाँ बौद्धधर्म में इतर (बौद्धेतर) धर्मों की भाँति ऋद्धिबल और वरदान के प्रभाव से मोक्ष प्राप्त कर लेने का विधान है। स्वयं तथागत ने कहा है—

न क्षालयन्ति मुनयो जलेन पापं
नैवापकर्षन्ति करेण जगद्-दुःखम् ।
नैव च सङ्क्रमते ह्यन्येषु स्वाधिगमः
सद्धर्मतादेशनया विमोचयन्ति[2] **।।**

अकुशल पापकर्मों के फल के रूप में दु:ख प्राप्त होता है, उसके निवारण के उपाय का स्वयं भगवान् तथागत ने अधिगम करके प्रज्ञापक्ष के रूप में

---

१. सुहृ० १४ कारिका (पुनरुद्धार, अप्रकाशित) विद्यावारिधि शोध-प्रबन्ध, डॉ० पेमा तेनजिन।
२. द्र०-उदानवर्गटीका प्रज्ञावर्म-कृता, तोहुकु-४१००, देगे संस्करण (अभिधर्म वर्ग) 'तु' पुट, पृ० ७२ ख। संस्कृत-छाया।

प्रतीत्यसमुत्पाद तत्त्व एवं चर्यापक्ष के रूप में मैत्री एवं करुणा से युक्त बोधिचित्त का विनेयजनों को उपदेश किया है। यदि इसका सम्यग् रूप से पालन किया जाए तो समस्त पापकर्म एवं आवरणों का क्षय होता है और अन्ततः मोक्ष एवं सर्वज्ञ पद प्राप्त होता है। इसके विपरीत इसका सम्यग् रूप से पालन न कर इतर धर्मों के अनुसार समस्त कुशल-अकुशल कर्मों का फल ईश्वर पर छोड़ देना तथा गुरु के द्वारा शिष्य को ऋद्धि एवं वरप्रदान आदि द्वारा मुक्ति प्राप्त करा देना कदापि सम्भव नहीं है, बल्कि स्वयं के प्रयास से ही निर्वाण प्राप्त किया जा सकता है। जैसे तथागत ने कहा है—"मैंने तुम्हें मोक्ष का मार्ग दिखाया है, मोक्ष के लिए प्रयत्न करना तुम पर निर्भर है[३]"।

उदानवर्ग में भी तथागत ने कहा है—"मैंने तुम्हें संसार के दु:खों को नाश करने वाले मार्ग का उपदेश दिया है, उसका अभ्यास करने वाले तुम स्वयं हो, तथागत तो मात्र उपदेश देने वाले हैं[४]"।

अत: वास्तव में विनेय जनों को स्वयं पापकर्मों के परिशोधन हेतु प्रयास करना चाहिए एवं बुद्ध के द्वारा उपदिष्ट मार्गों का अनुपालन करना चाहिए। पापकर्मों के परित्याग हेतु इन उपायों को स्वयं तथागत ने अनेक सूत्रों में स्पष्ट रूप से कहा है। इन सभी सूत्रों में से एक सर्वोत्तम सूत्र आर्य-उपालिपरिपृच्छासूत्र के अन्तर्गत त्रिस्कन्धसूत्र को माना गया है।

यह सूत्र न केवल प्रतिदिन धर्मचर्या का अनुपालन करने वालों के लिए उपयोगी है, अपितु उतनी धर्मचर्या न करने वालों के लिए भी लाभप्रद, उपयोगी एवं महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि यह सूत्र न अत्यन्त विस्तृत है और न अत्यन्त लघु है। अत: सरलतापूर्वक इसका अभ्यास किया जा सकता है। इसके द्वारा पैंतीस बुद्धों की भावना करने एवं उन्हें बुद्धि में प्रतिष्ठित करने में अत्यन्त सरलता होती है। पाठ करने में सुकर एवं चित्त में प्रतिष्ठित (कण्ठस्थ) करने में भी सरलता होती है। दूसरों के प्रति भाव व्यक्त करने में भी सरल है। इस प्रकार अनेक गुणों से यह सूत्र सम्पन्न है।

---

३. तु०- तुम्हेहि किच्चं आतप्पं अक्खातारो तथागता ।
पटिपन्ना पमोक्खन्ति झायिनो मारबन्धना ।। —धम्मपद २० : ४ ।

४. द्र०- देशितो वो मया धर्मस्तष्णाशल्यस्य कर्तनः ।
युष्माभिरेव कर्त्तव्यमाख्यातारस्तथागताः ।।
—हेवज्रतन्त्रमुक्तावली, उद्धृत, पृ० ..... ।

भारत तथा तिब्बत के अनेक पूर्ववर्ती प्रामाणिक विद्वानों ने भी इन सभी गुणों के अभिप्राय को जानते हुए इसे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण मानकर इस सूत्र पर टीकाएं, साधनोपाय एवं अनेक विधियों की रचना ही नहीं की, अपितु इस सूत्र को प्रमुख रूप से अपने हृदय में प्रतिष्ठित करके अनुपालन किया है।

ग्रन्थ का सम्पादन—सघन संस्कृत प्रशिक्षण के दौरान मेरी यह अभिलाषा रही है कि इस प्रकार के अतिविशिष्ट किसी एक ग्रन्थ को यदि प्रकाश में लाया जा सके तो समस्त बौद्धविद्या के क्षेत्र एवं समाज के हित में अत्यन्त उपयोगी एवं लाभदायक होगा। ऐसा सोचकर कुछ वर्ष बाद मैंने प्रस्तुत आर्यत्रिस्कन्धसूत्र का लगभग पाँच प्रकार के भोट-पाठों के साथ मिलान करके संशोधन किया एवं टिप्पणी में पाठभेदों का उल्लेख किया। तत्पश्चात् इन सभी भोट पाठों एवं उपलब्ध संस्कृत मूलपाठों का भी परस्पर मिलान करके संशोधन किया। भोटभाषा में उपलब्ध भारतीय पण्डितों द्वारा रचित तीन टीकाओं का भी भोट भाषा के चार प्रमुख पाठों से मिलान करके पाठभेदों के साथ संशोधन किया। आर्यत्रिस्कन्धसूत्र की तीनों टीकाओं का संस्कृत में पुनरुद्धार किया एवं हिन्दी में उनका अनुवाद भी किया। इसके साथ ही कुछ वर्ष पूर्व मैंने इस आर्यत्रिस्कन्धसूत्र ग्रन्थ पर कार्य करने का निर्णय लिया तथा उसे पुनरुद्धार योजना में सम्मिलित किया। तत्कालीन निदेशक श्रद्धेय एस० रिनपोछे जी ने भी सहज स्वीकृति प्रदान कर मुझे कार्य को गति देने हेतु प्रोत्साहित किया।

पूर्वोक्त त्रिस्कन्धसूत्र तथा उसकी सभी भारतीय टीकाओं एवं अनेक भोट टीकाओं को आधार बनाकर मैंने एक समीक्षात्मक भूमिका लिखी है। भूमिका के प्रारम्भ में इस त्रिस्कन्धसूत्र का प्रादुर्भाव, पैंतीस तथागतों के कायवर्ण, आयुध एवं मुद्राओं के प्रभेद, सूत्रपाठ के विभिन्न मत, सूत्र एवं टीकाओं के अभिधान के विषय में वर्तमानकालिक विचारधारा आदि विषयों पर गम्भीरता से विचार किया गया है। उपर्युक्त सभी विषयों के प्रसंग में अन्य विद्वानों की मिथ्या अवधारणाओं का खण्डन करते हुए स्वमत उपस्थापित करने का प्रयास किया गया है तथा उत्पन्न शंकाओं और विवादों का समाधान प्रस्तुत करने का भी भरसक प्रयास किया गया है। साथ ही, सूत्र तथा तीन टीकाओं के संक्षिप्त अभिधेय का प्रतिपादन किया गया है। तीनों टीकाओं के लेखक तथा अनुवादक लोचावाओं की जीवनी भी क्रमशः प्रस्तुत की गई है। अन्त में दस प्रकार के परिशिष्ट उपनिबद्ध किये गये हैं, जिसमें सर्वप्रथम आचार्य अश्वघोष की कृति माना जाने वाला 'सामान्य

परिदेशना' नामक एक लघु ग्रन्थ परिशिष्ट के रूप में दिया गया है। यह ग्रन्थ आर्यत्रिस्कन्धसूत्र के ही समान है तथा संस्कृत में अनुपलब्ध है। भोटपाठ को आधार बनाकर इसका संस्कृत में पुनरुद्धार किया गया है और साथ में हिन्दी अनुवाद भी दिया गया है। इसी प्रकार शेष परिशिष्टों में सूत्र तथा भारतीय टीकाओं में आगत शब्दों की सूची, टीकाओं एवं भूमिका में उद्धृत सूत्र तथा शास्त्रों की ग्रन्थसूची, आगमसूची और पैंतीस तथागतों के विभिन्न प्रकार के चित्रों के बारे में मत-मतान्तरों के साथ बोधगम्य तालिका प्रस्तुत की गई है।

कृतज्ञता प्रकाशन

सर्वप्रथम मैं इस संस्थान के पूर्व निदेशक परम श्रद्धेय प्रो० एस० रिनपोछे के प्रति हृदय से आभार व्यक्त करना चाहता हूँ, जिन्होंने इस सूत्र तथा इसकी टीकाओं के प्रकाशन सन्दर्भ में प्रस्ताव रखने पर न केवल सहर्ष स्वीकृति प्रदान की, अपितु अनेक बहुमूल्य सुझावों के साथ अपेक्षित निर्देशन द्वारा इस कठिन कार्य को सम्पादित करने में हरसम्भव सुविधाएं भी प्रदान कीं।

हमारे पुनरुद्धार-अनुभाग के पूर्व सम्पादक एवं वर्तमान में संस्थान के निदेशक प्रो० गेशे ङ्वङ् समतेन जी ने न केवल इस ग्रन्थ की भोट भूमिका का सम्पूर्ण रूप से अवलोकन किया, अपितु कई जटिल स्थानों पर संसोधन एवं सम्पादन कर अनेक महत्त्वपूर्ण सुझावों से इसे समृद्ध किया और हर आवश्यक सुविधाएं भी प्रदान कर कृतार्थ किया। अतः मैं उनके प्रति हृदय से आभार व्यक्त करता हूँ।

संस्थान-स्थित संस्कृत विभाग के पूर्व-अध्यक्ष प्रो० कामेश्वरनाथ मिश्र के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करता हूँ, जिन्होंने आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान कृत आर्यत्रिस्कन्धसूत्र टीका के संस्कृत-पुनरुद्धार एवं हिन्दी अनुवाद के संशोधन में प्रारम्भिक सहयोग प्रदान किया।

संस्थान के भूतपूर्व प्रोफेसर सेम्पा दोर्जे ने मुझे न केवल आचार्य नागार्जुन प्रणीत इस आर्यत्रिस्कन्धसूत्र टीका का परम्परागत प्रवचन दिया, अपितु दुर्गम, गूढ एवं जटिल स्थलों के अर्थ का स्पष्टीकरण भी किया तथा पाठभेद आदि के निर्धारण में भी अपने बहुमूल्य सुझाव प्रदान किये। अतः मैं उनके प्रति हृदय से आभार प्रकाशित करता हूँ।

तदनन्तर परम विशिष्ट भारतीय बौद्ध विद्वान् प्रो० रामशंकर त्रिपाठी के प्रति मैं हृदय से बहुशः कृतज्ञता एवं आभार व्यक्त करता हूँ, जिन्होंने न केवल त्रिस्कन्धसूत्र मूल तथा तीनों भारतीय टीकाओं के संस्कृत-पुनरुद्धार एवं उनके हिन्दी अनुवाद में सहयोग प्रदान किया, अपितु पूर्व-संशोधित कार्य का पुनरवलोकन तथा भूमिका, परिशिष्ट आदि के निर्माण में हिन्दी एवं संस्कृत भाषा के साथ-साथ समस्त विषयों के संशोधन में भी बहुमूल्य योगदान प्रदान किया। मैं उनके इस उपकार के लिए उनका सर्वदा ऋणी रहूँगा।

संस्थान-स्थित अनुवाद-अनुभाग के वरिष्ठ सहायक सम्पादक, कल्याणमित्र डॉ० पेमा तेनजिन के प्रति मैं अपना आभार प्रकट करना नहीं भूल सकता, जिन्होंने समय-समय पर महत्त्वपूर्ण सुझाव देकर न केवल उपकार किया है, अपितु हिन्दी-भूमिका एवं सम्बद्ध समस्त विषयों की प्रस्तुति में भी सहयोग प्रदान किया।

संस्थान के तिब्बती इतिहास के प्राध्यापक भिक्षु छुलठिम फुनछोग को भोटभाषीय भूमिका के संशोधन में उनके सुझावों एवं सहयोग के लिए धन्यवाद देता हूँ।

हमारे अनुवाद अनुभाग के सम्पादक भिक्षु एल० एन० शास्त्री एवं वरिष्ठ सहायक सम्पादक भिक्षु ग्यलछन् नमडोल और श्री पेनपा दोर्जे ने भी इस ग्रन्थ के सम्बन्ध में अनेक महत्त्वपूर्ण सुझाव प्रदान किये। इसके लिए मैं उन्हें हृदय से धन्यवाद देता हूँ।

प्रकाशन विभाग के प्रभारी श्री समतेन छोफेल को भी धन्यवाद देता चाहता हूँ, आपने प्रकाशन की समस्त आवश्यक वस्तुओं को अतिशीघ्र प्रदान करने में सहयोग प्रदान किया।

हिन्दी तथा भोट लिपि को कम्प्यूटर में कम्पोज करने में श्री एम० एल० सिंह, श्री एस० पी० सिंह, श्री तोपग्यल, श्री पद्मा छोदेन, डॉ० टाशी छेरिंग और श्री उग्येन छोडग् आदि ने निरन्तर सहयोग प्रदान किया, इसके लिए मैं इन सभी को आदरपूर्वक साधुवाद प्रदान करता हूँ।

शान्तरक्षित ग्रन्थालय में कार्यरत श्री पेमा ग्यल्पो, सोनम छेवङ्, श्री छ़ेतेन दोन्डुब, श्री छेरिङ् छोफेल, लोसंग गेन्दुन एवं मुहम्मद मुमताज आदि के प्रति

विशेष धन्यवाद देना चाहता हूँ कि आप लोगों ने सम्बन्धित ग्रन्थों को ढूंढना एवं सूचना प्रदान करना तथा आवश्यक पृष्ठों को यथाशीघ्र जिरॉक्स एवं स्कैनिंग आदि की सुविधा प्रदान करके हरसम्भव सहयोग प्रदान किया।

इन सबके अतिरिक्त मंगलाचरण एवं टीका में आए कुछ बड़े श्लोकों को संस्कृत में छन्दबद्ध करने में संस्कृत विभाग के वरिष्ठ प्राध्यापक डॉ० धर्मदत्त चतुर्वेदी के सामयिक सहयोग के लिए भी उन्हें धन्यवाद देना चाहता हूँ।

इस ग्रन्थ के प्रकाशन में प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से व्यक्तिगत सहयोग करने वाले समस्त कल्याणमित्र तथा विशेष रूप से अनुमोदना के रूप में सहयोग प्रदान करने वाले सभी के लिए मैं त्रिरत्न से प्रार्थना करता हूँ कि आपकी मनोकामनाएं अतिशीघ्र पूर्ण हों और आप यथाशीघ्र सर्वज्ञ पद प्राप्त करें।

वैशाख पूर्णिमा
दिनांक : ७-५-२००१

लोसङ् दोर्जे (रबलिङ्)
शोध-सहायक

Preface

The Great *Tathāgata Śākyamuni,* the unsurpassed teacher, the peerless lord, the savior of all sentient beings-taught eighty four thousand doctrines for the benefit of all the sentient beings. These doctrines are antidotes to be used against the eighty four thousand different kinds of afflictions comprised by threefold classification of poisons: viz., desire-attachment, hatred-anger and closed mindedness-ignorance. These three poisons give rise to all of the various negative actions and these in turn give rise to all suffering.

No sentient being want suffering, and all wish for happiness. In order to abandon suffering and in order to live in peace and harmony, the teachings of Buddha must be put in practice. First, to achieve happiness and avoid suffering it is necessary to purify the causes of suffering, the negative dispositions created in the past and present. But this purification is not sufficient to prevent negative action completely: it is also necessary to purify all those actions performed in both past and the present. This practice of preventing negative action should be done at every moment. It requires a constant examination of our body, speech and mind to determine of each physical, vocal and mental action, whether it is virtuous or not. Failure to purify these negative actions can lead to a lasting imprint in our mental continuum and can result in rebirth in lower realms leading to even greater suffering and unhappiness.

Therefore, if one is to hope for favourable rebirth and eventual liberation from cyclic existence, one must work to develop the highest morality through engaging in virtuous actions, and through cultivating the *Mahāyana* practice of the six perfections viz., generosity, morality, patience, joyous effort, concentration and wisdom. By means of these practice a normal person can transform him or herself into a *Bodhisattva* and by following the *Bodhisattva* path attain buddhahood.

The Buddha's teachings can be summarized in this way: Always strive to engage in virtuous actions and abandon negative actions. Of course we find that most people are engrossed in negative actions and have little interest in virtuous deeds. Those few who accumulate merit and perform virtuous actions must apply themselves strenuously and constantly, as though they are pushing a boulder up a steep hill. Those who engage in negative actions, on the other hand, find it easy, as though they are carried along by a swift and

powerful current. Even those few who are totally devoted to the Dharma and dedicated to the performance of virtuous actions are also affected by the poison of the three afflictions. So despite their efforts, they often fall into rebirth in lower realms. Indeed, when most of us compare our daily activities with the teaching of Buddha most of them contradict his words. Hence, we should reform ourselves: We should (1) cultivate enthusiasm for virtuous action; and (2) purify negative actions as much as we can.

The *Ārya Triskandha Sūtra* prescribes these two ends. By reciting this short prayer with deep repentance and devotion one can accumulate a great deal of merit and purify one's negative actions. The purification of negative actions can only be accomplished by one's own effort. It is not possibility to purify one's negative actions as some traditions suggest, e.g. by having one's teacher purify them, or by taking a dip in the Ganges. This possibility is denied by the Buddha, as he says:[1]

> Buddhas neither wash the sins of sentient beings
> away with water
> Nor remove suffering with their hands,
> Nor transfer their realization to others,
> One is only freed through the teaching of
> the true nature of all things.

Here the Buddha clearly indicates that obtaining enlightenment is totally dependent upon oneself and that the purification of negative actions must be accomplished by oneself.

Buddha again said in *Sūtra*:

> I have shown you the path of liberation.
> It depends upon you to achieve liberation.

Again he said in the *Udānavarga Sūtra*:[2]

> Cutting the sufferings of Cyclic existence,
> I have shown you the (path).
> You have to realize it.
> The Tathāgata is only the preceptor.

In this connection the Buddha has taught various methods for the purification of negative actions. One of the best of these

---

1 *Udānavarga Tika* Toh-4100 Dege Edition Adhidharma Section "Tu" 72 b F
2 *Udānavarga Tika* Toh-326 Dege Edition Sutra Section "Ta" 219 b F

methods is taught in a part of *Ārya Upalipariprìccha sūtra* entitled *Ārya Triskandha Sūtra* and is called "Tungshag" (the confession from downfalls.)

The *Ārya Triskandha Sūtra* contains the complete purification method-three accumulations and four antidotes. Though, as I discuss in the introduction, there are many views about what the three accumulations are, the most widely held is that they comprise the accumulation of confessions of non-virtues, the accumulation of rejoicing and the accumulation of dedication. The four antidotes are:

1. The power of reliance;
2. The power of repudiating misdeeds;
3. The power of repentance
4. The power of not repeating the misdeeds.

If we mindfully and faithfully practice the recommendations of the *Ārya Triskandha Sūtra* it has the power to purify even our subtle negative actions, such as the five heinous crimes and the five secondary heinous non-virtues.

This confession *sūtra* is extremely very helpful not only for daily dharma practitioners but also helpful for those who can't spend much time on practice. It is short and easy to understand. It is easy to practice and to meditate on the thirty five confessional Buddhas. It is also easy to recite and to memorize. It is easy to explain the meaning of each word to others. There are many commentaries on the sutra and many methods of practice. Many great scholars have based their practice on the confession of downfalls to the thirty-five Buddhas confession downfall and have thereby achieved realization.

Work done on this book

When I was a student in the Rigorous Training Course at the Central Institute of Higher Tibetan Studies, I was considering working on a text teaching the purification of negative actions. I choose *Ārya Triskandha Sūtra* (Three heaps sutra, whose title refers to the confession of negative actions) and its Indian commentaries with the thought that this text could benefit interested readers.

Later when I joined the Research Department at the Institute I took this sutra and commentaries for my project. First of all, I compared *Ārya Triskandha Sūtra* with five different editions and its three commentaries with four different critical editions. Thereafter I restored the text into Sanskrit and translated it into Hindi. Due to availability of three different English translations of main sutra and

Ācārya Nāgarjuna's commentary, I did not think a new English translation necessary.

The three different English translations of Sutra are published by Library of Tibetan Works and Archives, Dharamsala, India, 1980, Wisdom Publications, USA, 1996 and Tharpa Publications, UK, 1995. *Ācārya Nāgarjuna's* commentary was translated by Brian C. Bereford and Sanggye Yeshe's commentary by Joan Nicell.

In the introduction I try to address some important questions concerning the three Indian commentaries and the many Tibetan commentaries. In the beginning, I have given the reasons for teaching this sutra, the different colours of 35 confessional Buddhas, their hand positions and their respective worlds, emblems etc.

I also discuss the three different methods of reciting this sutra for the purification of one's negative actions. I than present a brief summary of the sutra and each of its three commentaries. A short biography of the three commentators and the translators are also included with the text.

The present volume contains ten appendices are attached. The first *Ācārya Ashvagosh's* annotated general confession (Cheshag). This text is similar to *Ārya Triskandha Sūtra*. It only exists in Tibetan. I have restored it in Sanskrit and translated the Tibetan version into Hindi. In the other appendices I address various sources materials and references relevant both to the commentaries and to the introduction. I also included tables presenting three different views of the colours, hand position, worlds and emblems etc. of the thirty-five confessional Buddhas.

Acknowledgments

I express my profound gratitude to the former Director of the Institute, Prof. Samdong Rinpoche. When I approached him about restoring, editing and translating the *Ārya Triskandha Sūtra* and its commentaries as one of my projects, he not only approved the project, but also gave many valuable suggestions. He also provided every facility necessary for the production of this book. I always respect his kind guidances and advice above that of all others.

My special thanks also go to the Prof. Geshe Ngawang Samten, formerly our Unit head and now Director of the Institute. He not only made various valuable suggestions for the preparation of the text, but also guided me in various ways in the accomplishment of this project.

My profound gratitude and thanks go to Prof. Kameshvarnath Mishra, a great scholar of both Indian literature and Buddhist studies. He has not only guided me in the beginning when I was studying in the Rigorous Training Course, but he also helped me to complete the restoration of *Ācārya Dipamkaraśrījñāna's Ārya Triskandha Sūtra* commentary.

Emeritus Professor Sempa Dorjee, one of the great Tibetan scholars of Buddhism, has assisted me in explaining the difficult passages and comparing critical editions of Tibetan version of the *Ācārya Nāgarjuna's Ārya Triskandha Sūtra* commentary. I convey my heartfelt thanks to him.

Prof. Ramshankar Tripathi, an internationally renowned Buddhist scholar of both *Mahayana* and *Theravada* schools has not only assisted me the entire restoration and translation of all three commentaries, but also helped me editing the entire Hindi version including the introduction and appendices. I gratefully thank him for his kind help and valuable suggestions. I will never forget his kind guidance and assistance.

My special thanks go to the Ven. Tsultrim Phuntsok, Senior Lecturer in Tibetan History, who not only helped me in editing the Tibetan introduction but also showered me with valuable suggestions regarding this text.

I convey my warm and immense thanks to my friend Dr. Pema Tenzin, Assistant Editor, in the Translation Unit, who assisted me with the Hindi translation of both the introduction and appendices and for his suitable suggestions.

My special thanks also go to the Ven. Losang Norbu Shastri, Head of Translation unit, the Ven. Gyaltsen Namdol, and Dr. Penpa Dorjee, Assistant Editor of the Restoration unit each of whom offered various valuable suggestions.

I am also thankful to the Private Secretary of His Holiness the Dalai Lama, Mr. Lobsang Jinpa who accepted my humble request and sent me the detail of the oral transmission lineages and traditions of the *Ārya Triskandha Sūtra* received by His Holiness the XIVth Dalai Lama from the great teachers of the past.

My warm thanks to Dr. Dharmadatta Chaturvedi, lecturer in Sanskrit Language for helping me with the construction of long metric formulations in the main text and with the beginning of the Hindi introduction.

I thank Wisdom Publications and Tharpa Publications who gave me permission to adopt 35 Buddhas images from their books: "Everlasting Rain of Nectar" and "The Boddhisattva Vow" respectively.

I would like to thank the members of the Publication unit and especially Mr. Samten Chhosphel, In-charge of the Publication Unit who provided every facility needed for publishing this text.

I also thank Mr. M.L.Singh, Mr. S.P. Singh, Dr. Tashi Tsering, Mr. Thopgyal, Mr. Pema Choeden, Mr. Tashi Dhondup and Mr. Ugyen Chodak who assisted me in the composition of the text on the computer.

My special thanks go to all the members of the Shantarakshita Library, particularly to Mr. Pema Gyalpo, Mr. Sonam Tsewang, Mr. Tseten Dhondup, Mr. Tsering Chosphel, as well as to Mr. Lobsang Gedun, Head of the Orient Foundation and Mr. Mohammad Mumtaj for their provision of information related to this text and for their search of microfilms, scanning, and making necessary photocopies available to me on short notice.

Last but not the least, I pray to *Triratna* for the successful accomplishment of the wishes of all those who assisted me directly or indirectly in the publication of this work. May they soon be free from cyclic existence and obtain the highest state of enlightenment.

Kārtik Pūrnima Lobsang Dorjee Rabling
30.11.2001 Research Scholar

སྔོན་བརྗོད།

भूमिका

༄༅། །འཕགས་པ་ཕུང་པོ་གསུམ་པ་ལྟུང་བ་བཤགས་པའི་མདོའི་གླེང་བརྗོད་བཞུགས་སོ།།

གསེར་ཞུན་མདངས་དང་འདྲེས་པའི་ངོ་མཚར་སྐུ།
སྐུ་ལེགས་ཁྱོད་ཀྱིས་ཆོས་ཀུན་ཇི་བཞིན་མཁྱེན།
མཁྱེན་བརྩེས་ནམ་ཡང་མི་འདོར་འགྲོ་བའི་སྐྱབས།
སྐྱབས་གནས་མཐར་ཐུག་སངས་རྒྱས་རྣམས་ལ་འདུད།

མཚན་དཔེའི་སྐུ་ཡིས་གདུལ་བྱའི་རྒྱུད་སྨིན་ཞིང་།
སྙན་པའི་གསུང་གིས་འགྲོ་བའི་ཡིད་དབང་འགུགས
བརྩེ་བའི་ཐུགས་ཀྱིས་གདུལ་བྱའི་རྒྱུད་གྲོལ་བ།
ཤཱཀྱའི་གཙུག་རྒྱན་ཟས་གཙང་སྲས་པོར་འདུད།

འཁོར་ལོ་བར་པའི་མདོ་ཡི་སྙིང་པོའི་དོན།
དངོས་བསྟན་ཟབ་མོ་རྟེན་འབྱུང་སྟོང་པ་ཉིད།
དབུ་མ་རིགས་ཚོགས་དྲུག་ཏུ་བསྡུས་བསྟན་པ།
ཤིང་རྟ་ཆེན་པོ་ཀླུ་སྒྲུབ་ཞབས་ལ་འདུད།

འཇམ་དཔལ་དབྱངས་དང་འཕགས་མ་སྒྲོལ་མ་ཡི།
ཞལ་གཟིགས་གསུང་གི་གནང་བ་ལེགས་ཐོབ་ཅིང་།
མདོ་སྔགས་རིག་གནས་བཅས་ལ་ཕ་མཐར་སོན།
སློབ་དཔོན་ཆེན་པོ་ཛེ་ཏཱ་རི་ལ་འདུད།

འཕགས་པའི་ཡུལ་གྱི་བསྟན་པའི་ཁུར་ཆེན་འདེགས།
གངས་ཅན་ལྗོངས་སུའང་བསྟན་པའི་གསོས་སྨིན་མཛད།
སྐྱེས་གསུམ་ལམ་དུ་དམ་ཆོས་ཀུན་འདྲིལ་བའི།

བཀའ་གདམས་སྲོལ་འབྱེད་མར་མི་མཛད་ལ་འདུད། |

བསྟན་དང་འགྲོ་བའི་དོན་ལ་རྟག་གཟིགས་ཤིང་། |
འཛིན་མའི་ཁྲུན་འདིའི་ཞི་བདེའི་དེད་དཔོན་མཆོག |
ཟབ་དང་རྒྱ་ཆེའི་མཁྱེན་པས་བྱང་ཆུབ་པ། |
སྙིང་རྗེའི་མཚོ་ཆེན་པད་དཀར་འཛིན་ལ་འདུད། |

མི་ཤེས་དྭ་བའི་ཚོགས་རྣམས་བསལ་མཛད་ཅིང་། |
མི་རྟོགས་ཟབ་དང་རྒྱ་ཆེའི་སྒོ་རྣམས་ཕྱེ། |
མི་ཆུབ་ཚིག་དོན་དཀའ་རྣམས་ལེགས་དཀྲོལ་པ། |
མི་ཤེས་སྨོངས་འཛོམས་བཤེས་གཉེན་རྣམས་ལ་འདུད། |

ཉོན་མོངས་དུག་གསུམ་དབང་གིས་འཁོར་བར་ལྟུང་། |
ལྟུང་བའི་འཆགས་ཚུལ་མི་ཤེས་གོང་བུར་ཆགས། |
ཆགས་སོགས་ཉེས་ལྟུང་འཆགས་ཚུལ་བསྟན་པའི་མདོ། |
མདོ་མཆོག་ཕུང་གསུམ་གཞུང་དོན་ཙུང་བཤད་བྱ། |

ཞེས་མཆོད་པ་བརྗོད་པ་སྔོན་དུ་འགྲོ་བའི་སྒོ་ནས་སྐབས་དོན་གླེང་བར་བྱ་བ་ནི་གཙོ་བོ་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོའི་གླེང་གཞི་ཉིད་ཡིན་ལ། དེ་ཡང་སྤྱིར་བསྟན་པ་དང་། རྒྱས་པར་བཤད་པ་གཉིས་ཀྱི་སྒོ་ནས་ཙུང་ཟད་སྤྲོས་ཏེ་བཤད་པར་བྱའོ།།

དང་པོ་སྤྱིར་བསྟན་པ་ནི། དེ་ལ་ལས་ཉོན་གྱིས་མནར་བའི་སེམས་ཅན་འདི་ཀུན་འཁོར་བའི་སྲིད་མཚོ་འདིར་འཁྱམས་ཤིང་འཁྱམས་པར་འགྱུར་བའི་རྒྱུའི་གཙོ་བོ་ནི་ཉོན་མོངས་པ་བག་ཆགས་དང་བཅས་པ་སྟེ། དེ་ཡང་རང་ཉིད་ཀྱིས་སྡིག་པ་མི་དགེ་བའི་ཚོགས་དུ་མ་ཞིག་བསགས་ཤིང་གསོག་པ་རྣམས་ཀུང་སྦྱོང་བའི་ཐབས་ལམ

ལ་རྨོངས་པའི་དབང་གིས་སྡིག་པའི་ཕུང་པོ་ཆེན་པོར་གྱུར་ནས་རང་ཉིད་འགྲོ་བ་རིགས་དྲུག་ཏུ་ཟམ་མ་ཆད་པར་ཡང་ནས་ཡང་དུ་འཁོར་བར་འགྱུར་བས་སོ།།

ཆོས་ལུགས་གཞན་ཁག་ཏུ་བཤགས་སྡོམ་བྱེད་ཚུལ།

འོ་ན་སྡིག་པ་མི་དགེ་བ་དེ་རྣམས་བཤགས་ཐབས་ཡོད་དམ་ཞེ་ན། ངེས་པར་ཡོད་དེ། དེ་ལ་ཐོག་མར་ནང་པ་སངས་རྒྱས་པའི་བཤགས་ཐབས་བསྟན་པ་ལས་གཞན་པའི་དེང་གི་ཆར་འཛམ་བུ་གླིང་འདིར་ཆོས་ལུགས་འདྲ་མིན་སྟོང་ཕྲག་བརྒལ་བ་ཡོད་པ་ལས་གཙོ་ཆེ་བར་གྲགས་པ་ནི་ཡི་ཤུ། ཁ་ཆེ། ཕྱི་རོལ་པའམ་ཧིནྡྷུ་ལ་སོགས་པ་རྣམས་ཡིན་ལ།

དེ་དག་ལས་ཡི་ཤུའི་ཆོས་ལུགས་འཛིན་པ་རྣམས་ནི་རང་གིས་བྱས་ཤིང་བསགས་པའི་སྡིག་པ་རྣམས་བཤགས་ཤིང་སྡོམ་པར་བྱ་ཕྱིར་རེས་གཟའ་ཉི་མ་ནམ་ཡིན་ལྷ་ཁང་དུ་བསྐྱོད་དེ་སྟོན་པ་ཡི་ཤུའི་འདྲ་སྐུའི་མདུན་དེར་རང་གིས་བྱས་བསགས་ཀྱི་ཉེས་ཚོགས་རྣམས་ངག་ནས་བརྗོད་ཅིང་ཡིད་ལ་དྲན་པའི་སྒོ་ནས་མཐོལ་བཤགས་བྱེད་པ་དང་། སྨྱུང་གནས་ལ་གནས་པ་སོགས་ཀྱིས་བསགས་སྦྱང་བྱེད་དོ།

ཁ་ཆེའི་ཆོས་ལུགས་འཛིན་པ་རྣམས་ཀྱིས་ཀྱང་ཉིན་ལྔར་ལན་ལྔ་ཞལ་འདོན་བྱེད་པ་དང་། མང་ཆེ་བས་ཟླ་དྭ་ཉི་མ་མ་ཤར་བའི་སྔོན་དང་དགོང་མོ་ཉི་མ་ལ་ལ་ནུབ་ཁར་ནུབ་ཕྱོགས་སུ་ཁ་ཕྱོགས་ཏེ་ཕྱག་འཚལ་བའི་ངང་ཁ་ཏོན་བྱེད་ཅིང་བཤགས་སྡོམ་བྱེད་དོ། །ཁྱད་པར་དུ་རེས་གཟའ་པ་སངས་ནམ་ཡིན་ལ་འཆི་ལས་གྲངས་ཏེ་ལྷ་ཁང་དུ་ཞུགས་པ་དང་། ལོ་རེར་རམ་ཛྙན་ཞེས་པའི་དུས་ཆེན་སྐབས་ཟླ་བ་གཅིག་གི་རིང་སྨྱུང་གནས་ལ་གནས་པ་སོགས་ཀྱིས་ཀྱང་བསགས་སྦྱང་བྱེད་དོ།།

ཁྱབ་འཇུག་པ་དང་དབང་ཕྱུག་པ་ལ་སོགས་པའི་ཧིནྡྷུའི་ཆོས་ལུགས་པ་རྣམས་ཀྱི་སྡིག་བཤགས་བྱེད་ཚུལ་ནི་སྡིག་པ་མི་དགེ་བའི་ཚོགས་བསགས་པ་རྣམས་སྦྱོང་བར་བྱེད་སྐབས་ཡིད་ལ་ཚངས་པ་དང་ཁྱབ་འཇུག་དང་དབང་ཕྱུག་སོགས་དྲན་པའི་ངང་ངག

ནས་གཟུངས་སྔགས་སོགས་འདོན་ཅིང་ཁ་ཏོན་བྱེད་པ་མ་ཟད། རྒྱལ་པོ་རཱ་མཱཡནའི་རྟོགས་བརྗོད་དང་ཁྲབ་འཇུག་ནག་པོའི་གླུ་གཞི་ཏཱ་སོགས་སྒྲོག་བྱེད་བྱས་ནས་ཀྱང་སྡིག་བཤགས་བྱེད་ལ། མང་པོ་ཞིག་ནི་ཆུ་བོ་གངྒཱར་ཁྲུས་བྱས་པས་ཀྱང་སྡིག་སྒྲིབ་འདག་པར་འདོད་ནས་དེ་བཞིན་བྱེད་དོ།།

ནང་པའི་སྡིག་ལྟུང་བཤགས་ཚུལ་བསྟན་པའི་མདོ་ཚན་ཁག

ལས་རྒྱུ་འབྲས་དང་སྐྱེ་བ་སྔ་ཕྱི་ཁས་ལེན་པའི་སྟེང་ནས་དཀོན་མཆོག་གསུམ་སྐྱབས་གནས་ཡང་དག་ཏུ་ཁས་ལེན་པའི་ནང་པ་སངས་རྒྱས་པ་རྣམས་ཀྱིས་བཤགས་སྡོམ་བྱ་ཚུལ་ལ་རྣམ་གྲངས་དུ་མ་ཞིག་ཡོད།

དེ་ལ་ནང་པ་སངས་རྒྱས་པ་ལའང་སྡིག་ལྟུང་བཤགས་སྡོམ་བྱེད་ཚུལ་རྣམ་གྲངས་དུ་མ་ཞིག་ཡོད་ལ། དེ་ཡང་སྤྱིའི་དབང་དུ་བཏང་ན་སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་ཀྱིས་གང་གསུངས་པ་ཐམས་ཅད་གདུལ་བྱའི་ཤེས་རྒྱུད་འདུལ་ཞིང་ཐར་པའི་ས་བོན་སྐྲུན་བྱེད་ཁོ་ན་ཡིན་པས། དེ་དག་ཁ་ཏོན་དུ་བྱེད་པ་དང་། ཡིད་ལ་སེམས་པ་ཙམ་དུ་མ་ཟད་ཐ་ན་རྗེས་སུ་ཡི་རངས་བྱེད་པ་ཚུན་ཆད་ཀྱིས་ཀྱང་བསྐལ་པ་ནས་བསྐལ་པར་བསགས་པའི་ལས་ཉོན་སྡིག་སྒྲིབ་ཐམས་ཅད་བདེ་བླག་ཏུ་བྱང་ཞིང་འབྱུང་བར་འགྱུར། སུ་ཡིན་ལ་བཤགས་སྡོམ་ལ་དེ་ལས་ལྷག་པ་མི་དགོས་མོད། འོན་ཀྱང་དམིགས་བསལ་གྱི་དབང་དུ་བྱས་ན་བཅོམ་ལྡན་འདས་ཉིད་ཀྱིས་སྡིག་ལྟུང་བཤགས་ཚུལ་ཆེད་དུ་གཉེར་ཏེ་གསུངས་པ་མི་ཉུང་བ་ཞིག་ཀྱང་ཡོད་པ་འདི་རྣམ་གྲངས་ཙམ་སྨོས་ན། འཕགས་པ་གསེར་འོད་དམ་པའི་མདོ་དང་། ཆོས་བཞི་བསྟན་པའི་མདོ། འཕགས་པ་ཉེ་བར་འཁོར་གྱིས་ཞུས་པའི་མདོའམ་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ། ཤེས་རབ་ཀྱི་ཕ་རོལ་ཏུ་ཕྱིན་པའི་རྡོ་རྗེ་གཅོད་པ། ལས་ཀྱི་སྒྲིབ་པ་རྣམ་པར་དག་པའི་མདོ། ལས་ཀྱི་སྒྲིབ་པ་རྒྱུན་གཅོད་པའི་མདོ། འཕགས་པ་ཐར་པ་ཆེན་པོ་ཕྱོགས་སུ་རྒྱས་པ་འགྱོད་ཚངས་ཀྱིས་སྡིག་པ་སྦྱང་བའི་མདོ། འཕགས་པ་རྟོགས་པ་ཆེན་པོ་

ཡོངས་སུ་རྒྱས་པའི་མདོ། འཕགས་པ་ནམ་མཁའི་སྙིང་པོའི་མདོ། འཕགས་པ་སྒོ་དྲུག་པའི་གཟུངས། འཕགས་པ་ལེགས་ཉེས་ཀྱི་རྒྱུ་དང་འབྲས་བུ་བསྟན་པ་ཞེས་བྱ་བའི་མདོ། སྐལ་བྱེད་མའི་གཟུངས། ཡི་གེ་བརྒྱ་པའི་གཟུངས། དགེ་བ་དང་མི་དགེ་བའི་ལས་ཀྱི་རྣམ་པར་སྨིན་པའི་མདོ། འཕགས་པ་ཕུང་པོ་གསུམ་པ་ཞེས་བྱ་བའི་ཐེག་པ་ཆེན་པོའི་མདོ་སོགས་ཡིན་ནོ། །དེ་དག་ལས་ཚོ་ག་བསྡུས་ཚེ་ཞིང་ཤིན་ཏུ་ལེགས་པ་ཞིག་ནི། དེ་ལ་ལྟུང་བ་བཤགས་པ་ནི་འདི་ཡིན་ཏེ་ཞེས་པ་ནས·····
·····ཐལ་མོ་སྦྱར་བར་བགྱིས་ཏེ་སྐྱབས་སུ་ཉེ་བར་མཆིའོ།། ཞེས་ལྟུང་བ་བཤགས་པའི་མདོ་འདི་ཉིད་ཡིན་ལ། དེ་ཡང་སོ་ཐར། བྱང་སེམས། གསང་སྔགས་བཅས་ཀྱི་སྡོམ་པ་དམ་ཚིག་གསུམ་གའི་གསོ་སྦྱོང་དང་། བཤགས་མཆོག་ནི། ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་མདོ་ཉིད་མཆོག་ཡིན་པའི་རྒྱུ། འདུལ་བ། སྤྱོད་འཇུག སྙིང་པོའི་རྒྱན་སོགས་གཞུང་དུ་མ་ནས་རྒྱས་པར་གསུངས་པ་ལས་རྟོགས་ནུས་སོ།།

ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོའི་སྔོན་དུ་སྙིང་གཞིའི་དྲི་ལན།

འཕགས་པ་ཉེ་བར་འཁོར་གྱིས་ཞུས་པའི་མདོ་ལས།[1] ཇི་སྐད་དུ། "ཤཱ་རིའི་བུས་གསོལ་བ། བཅོམ་ལྡན་འདས་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་རྣམས་འདོད་ཆགས་ཀྱིས་མི་འཇིགས་ལགས་སམ། ཞེ་སྡང་དང་། གཏི་མུག་གིས་མི་འཇིགས་པ་ལགས་སམ། བཅོམ་ལྡན་འདས་ཀྱིས་བཀའ་སྩལ་པ། ཤཱ་རིའི་བུ་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་རྣམས་ཀྱི་ཁ་ན་མ་ཐོ་བ་ཆེན་པོ་དང་བཅས་པའི་ཉེས་པ་ནི་གཉིས་ཏེ། གཉིས་གང་ཞེ་ན། འདི་ལྟ་སྟེ། ཞེ་སྡང་དང་ལྡན་པ་དང་། གཏི་མུག་དང་ལྡན་པ་སྟེ། ཤཱ་རིའི་བུ་གཉིས་པོ་འདི་དག་ནི་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་རྣམས་ཀྱི་ཁ་ན་མ་ཐོ་བ་ཆེན་པོ་དང་བཅས་པའི་ཉེས་པ་ཡིན་ནོ། །ཤཱ་རིའི་བུ་དེ་ལ་འདོད་ཆགས་ནི་ཁ་

1 Toh-68 སྡེ། བཀའ། དཀོན་བརྩེགས། "ཙ" ༡༡༨ བ ༣

ན་མ་ཐོ་བ་དང་བཅས་པ་ཆུང་ལ་འབྲལ་བ་བུལ་བ་ཡིན་ནོ། །ཞེ་སྡང་ནི་ཁ་ན་མ་ཐོ་བ་དང་བཅས་པ་ཆེ་ལ་འབྲལ་བ་མྱུར་བ་ཡིན་ནོ། །གཏི་མུག་ནི་ཁ་ན་མ་ཐོ་བ་དང་བཅས་པ་ཆེ་ལ་འབྲལ་བ་བུལ་བ་ཡིན་ནོ། །དེ་ཅིའི་ཕྱིར་ཞེ་ན། ཤཱ་རིའི་བུ། འདོད་ཆགས་ནི་འཁོར་བའི་འཕྲི་ཤིང་ཀུན་ཏུ་འཛིན་པའི་ཕྱིར་ཉིང་མཚམས་སྦྱོར་བའི་ས་བོན་ཡིན་པ་དང་། ཞེ་སྡང་ནི་མྱུར་དུ་ཡོངས་སུ་སྤོང་བའི་ཕྱིར་ངན་སོང་དུ་འགྲོ་བའི་རྒྱུར་གྱུར་པ་ཡིན་པ་དང་། གཏི་མུག་ནི་རྣམ་པར་གྲོལ་བར་དཀའ་བའི་ཕྱིར་སེམས་ཅན་དམྱལ་བ་ཆེན་པོ་བརྒྱད་དུ་རབ་ཏུ་ལྟུང་བའི་རྒྱུར་གྱུར་པ་ཡིན་པའི་ཕྱིར་རོ། །ཤཱ་རིའི་བུ། དེ་ལ་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་ཉེས་པ་དང་པོའི་ལྟུང་བ་ནི་ཚོགས་བཅུ་ལ་སྔང་པོར་བཤགས་པར་བྱའོ། །བུད་མེད་ཀྱི་ལག་པ་ནས་འཛིན་པའི་ལག་པའི་ཉེས་པ་ལྟུང་བ་ནི་ཚོགས་ལྔ་ལ་བཤགས་པར་བྱའོ། །ཉོན་མོངས་པ་ཅན་གྱིས་སེམས་ཀྱིས་མིག་གི་བལྟས་པའི་ཉེས་པ་ནི་གང་ཟག་གཅིག་གམ་གཉིས་ཀྱི་མདུན་དུ་བཤགས་པར་བྱའོ། །བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔས་མཚམས་མེད་པ་ལྔ་དང་ལྡན་པའི་ཉེས་པ་དང་། བུད་མེད་ཀྱི་ཉེས་པ་དང་། ཁྲིའུའི་ཉེས་པ་དང་། ལག་པའི་ཉེས་པ་དང་། མཆོད་རྟེན་གྱི་ཉེས་པ་དང་། དགེ་འདུན་གྱི་ཉེས་པ་དང་། དེ་ལས་གཞན་པའི་ཉེས་པ་ལྟུང་བ་རྣམས་ནི་སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་སུམ་ཅུ་རྩ་ལྔའི་སྤྱན་སྔར་གཅིག་པུས་ཉིན་མཚན་དུ་བཤགས་པར་བྱའོ།” །ཞེས་དང་། དེ་རྗེས་ལྟུང་བ་བཤགས་ཚུལ་དངོས་གཞི་ལ། དེ་ཉིད་ལས།[1] **“དེ་ལ་བཤགས་པ་ནི་འདི་ཡིན་ཏེ། བདག་མིང་འདི་ཞེས་བགྱི་བ། སངས་རྒྱས་ལ་སྐྱབས་སུ་མཆིའོ།** །ཞེས་པ་ནས། **ཐལ་མོ་སྦྱར་བ་བགྱིས་ཏེ་སྐྱབས་སུ་ཉེ་བར་མཆིའོ།”** །ཞེས་པའི་བར་གསུངས་སོ། །

1 Toh-68 སྡེ། བཀའ། དཀོན་བརྩེགས། "ཅ" ༡༣༠ ན ༣

སྙིང་གཞིའི་དྲི་ལན་གྱི་དོན་ཅུང་ཟད་སྤྲོས་པ།

གོང་གི་སྙིང་གཞིའི་མདོའི་ལུང་གི་དོན་ཕྲན་ཙམ་སྤྲོས་ན། རྣམ་པ་གསུམ་གྱི་སྒོ་ནས་བཤད་པར་བྱ་བ་སྟེ། །དང་པོ་ལ་བྱང་སེམས་ལ་གཙོ་ཆེ་བའི་ལྗི་བ་དང་། སོ་ཐར་ལ་གཙོ་ཆེ་བའི་ལྗི་བ་དང་། བཅས་རང་ཅི་རིགས་པའི་ལྗི་བ་གསུམ་ལས།

དང་པོ་ནི་སྤྱིར་བྱང་སེམས་ཁྱིམ་པ་དང་། རབ་བྱུང་གཉིས་ཀྱི་ཞི་སྡང་དང་ལྡན་པའི་ལྟུང་བ་ལྗི་བ་ཞམ་པ་དང་། ཉེས་བྱས་ཀྱིས་བསྡུས་པ་ཀུན་དཀྲིས་ཆེན་པོ་རྣམས་ནི་གང་ཟག་བཅུ་ཚོགས་ལ་བཤགས་དགོས་པ་དང་། བྱེ་བྲག་ཏུ་བྱང་སེམས་རབ་བྱུང་གི་ཞི་སྡང་ལས་གྱུར་པ་སྲོག་གཅོད་པ་བཞི་ལྟ་བུ་ཡང་བཅུ་ཚོགས་ལ་བཤགས་དགོས།

གཉིས་པ་སོ་ཐར་ལ་གཙོ་ཆེ་བའི་ལྗི་བ་ནི། འདོད་ཆགས་ལས་གྱུར་པའི་ལྟུང་བ་བྱང་སེམས་ཀྱི་ཐེག་པར་ལྗི་བ་མ་ཡིན་ཀྱང་། སོ་ཐར་གྱི་འདུལ་བར་ལྗི་བ་ཡིན་པ་བུད་མེད་ཀྱི་ལག་པ་ནས་འཛིན་པའི་དགེ་འདུན་ལྷག་མ་ལྟ་བུ་ནི་ལྔའི་ཚོར་ལ་བཤར་དགོས་ཤིང་། ཆགས་སེམས་ཀྱིས་བུད་མེད་ལ་བལྟས་པའི་ཉེས་པ་ལྟ་བུ་ཡང་བ་རྣམས་ནི་གང་ཟག་གཅིག་གམ་གཉིས་ཀྱི་མདུན་དུ་བཤར་དགོས་པར་བསྟན་ཏོ། །

གསུམ་པ་བཅས་རང་ཅི་རིགས་པའི་ལྗི་བ་ནི། མཚམས་མེད་པ་ལྔ་ནི་རང་བཞིན་གྱིས་ལྗི་བ་མ་ཟད་བྱང་སེམས་ཀྱི་རྩ་ལྟུང་ཡིན་པས་བྱང་སེམས་ཀྱི་བསླབ་པ་ལ་ཡང་ལྗི་བ་ཡིན་ནོ། །བུད་མེད་ལས་བྱུང་བ་ཤིན་ཏུ་ལྗི་བ་མི་ཚངས་པར་སྤྱོད་པ་དང་། སྔར་ལག་པ་ནས་འཛིན་པས་རེག་པའི་ལྟུང་བྱེད་ལས་ལྗི་བ་དང་། བུད་མེད་དང་ཁྲིའུ་ལས་འབྱིན་པའི་ལྷག་མ་ལྟ་བུ་འདོད་ཆགས་དང་ལྡན་པས་སོ་ཐར་ལ་ལྗི་བ་དང་། དེ་དག་ལས་གཞན་པའི་ཉེས་པ་ལྗི་བ་ནི་ཉེ་བའི་མཚམས་མེད་པ་ལྔ་སྟེ། མཆོད་རྟེན་བཤིག་པ་དང་། དགེ་འདུན་འདུ་སྒོ་འཕྲོག་པ་རྣམས་དང་། མ་ཡང་ཡིན་ལ་དགྲ་བཅོམ་མའང་ཡིན་པ་ལ་མི་ཚངས་པར་སྤྱོད་པ་དང་། བྱང་སེམས་ངེས་

གནས་གསོད་པ་དང་། རྒྱུན་དུ་ཞུགས་པའི་འཕགས་པ་གསོད་པ་རྣམས་ནི་སོ་ཐར་དང་བྱང་སེམས་གཉིས་ཀའི་བསླབ་པ་ལ་ལྗི་བ་ཡིན་ནོ། །

གཞན་ཡང་མཆོད་པར་བྱ་བའི་རྟེན་ཡིན་པས་ན་མཆོད་རྟེན་དང་དེ་བཤིག་པ་དང་། དགེ་འདུན་གྱི་དཀོར་ཟ་བ་སོགས་རང་བཞིན་གྱི་ཁ་ན་མ་ཐོ་བའི་ཉེས་པའང་ལྗི་བ་ཡིན། །དེ་ལྟ་བུའི་ལྟུང་བ་ལྗི་བ་རྣམས་གང་ཟག་བཅུ་ཚོགས་དང་ལྔ་ཚོགས་དང་གཅིག་དང་གཉིས་ཀྱི་མདུན་དུ་བཤགས་པས་མི་འདག་པས། དེ་རྣམས་སངས་རྒྱས་སོ་ལྔ་ལ་བརྟེན་པའི་ཐབས་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་འདི་ཉིད་ཀྱིས་བྱང་བར་གསུངས་སོ། །སྤྱོད་འཇུག་ལས། [1]

ལྟུང་བའི་ལྷག་མ་དེས་ཞི་བྱ། །

ཞེས་པའི་གོ་དོན་ལ་གཉིས་ཏེ། དེ་ཡང་ཉེ་འཁོར་གྱིས་ཞུས་པའི་མདོ་འདིའི་གོ་དོན་ལྟར་ན། སྔར་གང་ཟག་ལ་བཤགས་པར་བཤད་པའི་ལྷག་མ་འདིས་སྦྱོང་བའི་དོན་དང་། བྱམས་པ་སེང་གེའི་སྒྲའི་མདོའི་གོ་དོན་ལྟར་ན་ལྟུང་བ་དང་པོ་ནི་ཚོགས་སྦྱངས། དེའི་ལྷག་མ་སྡིག་པའི་རྣམ་སྨིན་ནི་བཤགས་པས་བྱང་བའི་དོན་ནོ།།

འདོད་ཆགས་དང་ལྡན་པའི་ལྟུང་བ་སོ་ཐར་གྱི་འདུལ་བ་ལ་ལྗི་ཡང་བྱང་སེམས་ཀྱི་འདུལ་བར་མི་ལྗི་བ་མ་ཡིན་པའི་ཚུལ་ནི། དེ་ཡང་ཉེ་བར་འཁོར་གྱིས་ཞུས་པའི་མདོ་ཉིད་ལས།[2] སྟོན་པ་ལ་ཉེ་བར་འཁོར་གྱིས་ལྟུང་བའི་ལྗི་ཡང་ཞུས་པ་ན། "ཉེ་བར་འཁོར་གལ་ཏེ་ཐེག་པ་ཆེན་པོ་ལ་ཡང་དག་པར་ཞུགས་པའི་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་ལ་འདོད་ཆགས་དང་མཚུངས་པར་ལྡན་པའི་ཉེས་པ་བསྐལ་པ་གང་གཱའི་ཀླུང་གི་བྱེ་མ་སྙེད་དུ་བྱུང་བར་འགྱུར་ལ། ཞེ་སྡང་དང་མཚུངས་པར་ལྡན་པའི་ཉེས་པ་གང་ཡིན་པ་ནི་གཅིག་བྱུང་བར་གྱུར་ན་ཡང་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་ཐེག་པ་ཚད་མར

1 Toh-3871 སྡེ། བསྟན། དབུ་མ་ "ལ" ༡༥ ན

2 Toh-68 སྡེ། བཀའ། དཀོན་བརྩེགས། "ཅ" ༡༢༦ ན ༢

བྱས་ན། ཞེ་སྡང་དང་མཚུངས་པར་ལྡན་པའི་ཉེས་པ་གང་ཡིན་པ་དེ་ནི་འདོད་ཆགས་དང་མཚུངས་པར་ལྡན་པའི་ཉེས་པ་དེ་དག་བས་ཆེས་ཉེས་པ་ལྕི་བར་འགྱུར་རོ། ། དེ་ཅིའི་ཕྱིར་ཞེ་ན། ཉེ་བར་འཁོར་ཞེ་སྡང་ནི་སེམས་ཅན་ཡོངས་སུ་གཏོང་བར་འགྱུར་བ་ཡིན་ལ། འདོད་ཆགས་ནི་སེམས་ཅན་སྡུད་པར་འགྱུར་བ་ཡིན་ཏེ། ཉེ་བར་འཁོར་དེ་ལ་སེམས་ཅན་སྡུད་པར་འགྱུར་བའི་ཉོན་མོངས་པ་གང་ཡིན་པ་དེ་ལ་ནི་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་སྐྲུ་བག་དང་འཇིགས་པ་མེད་ལ། སེམས་ཅན་ཡོངས་སུ་གཏོང་བར་འགྱུར་བའི་ཉོན་མོངས་པ་གང་ཡིན་པ་དེ་ལ་ནི་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་སྐྲུ་བག་དང་འཇིགས་པ་ཡོད་པའི་ཕྱིར་རོ། །ཉེ་བར་འཁོར་ཡང་དེ་བཞིན་གཤེགས་པས་འདོད་ཆགས་ནི་འབྲལ་བ་བུལ་བ་ཁ་ན་མ་ཐོ་བ་དང་བཅས་པ་ཆུང་བ་དང་། ཞེ་སྡང་ནི་འབྲལ་བར་མྱུར་ལ་ཁ་ན་མ་ཐོ་བ་དང་བཅས་པ་ཆེ་བ་དང་། གཏི་མུག་ནི་འབྲལ་བ་བུལ་ལ་ཁ་ན་མ་ཐོ་བ་དང་བཅས་པ་ཆེ་བར་གསུངས་པ་གང་ཡིན་པ་དེ་ལ། ཉེ་བར་འཁོར་འབྲལ་བུལ་ལ་ཁ་ན་མ་ཐོ་བ་དང་བཅས་པ་ཆུང་བ་གང་ཡིན་པ་དེ་ནི་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་ཉོན་མོངས་པ་མ་ཡིན་པར་བལྟའོ། །འབྲལ་བར་མྱུར་ལ་ཁ་ན་མ་ཐོ་བ་དང་བཅས་པ་ཆེ་བ་གང་ཡིན་པ་དེ་ནི་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་ཉོན་མོངས་པ་ཡིན་པས་རྨི་ལམ་ན་ཡང་འདོད་པར་མི་བྱའོ། །ཉེ་བར་འཁོར་དེ་ལྟ་བས་ན་ཁྱོད་ཀྱིས་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་རྣམས་ཀྱི་འདོད་ཆགས་དང་མཚུངས་པར་ལྡན་པའི་ཉེས་པ་གང་ཡིན་པ་དེ་དག་ལ་ནི་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་སྐྲུ་བག་དང་ཉེས་པ་མེད་པས་དེ་དག་ཐམས་ཅད་ནི་ཉེས་པ་མ་ཡིན་པ་སྨྲོས་ཤིག །ཞེ་སྡང་དང་མཚུངས་པར་ལྡན་པའི་ཉེས་པ་གང་ཡིན་པ་དེ་དག་ལ་ནི་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་སྐྲུ་བག་དང་ཉེས་པ་ཡོད་པས་དེ་དག་ཐམས་ཅད་ནི་ཉེས་པ་ཡིན་པར་སྨྲོས་ཤིག ཉེ་བར་འཁོར་དེ་ལ་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་གང་དག་ཐབས་ལ་མི་མཁས་པ་དེ་དག་ནི་འདོད་ཆགས་དང་མཚུངས་པར་ལྡན་པའི་ཉེས་པ་དག་གིས་འཇིགས་པར་བྱེད་ལ། ཞེ་སྡང་དང་

མཚུངས་པར་ལྡན་པ་དག་གིས་ནི་འཇིགས་པར་མི་བྱེད་དོ། །བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་གང་དག་ཐབས་ལ་མཁས་པ་དེ་དག་ནི་ཞེ་སྡང་དང་མཚུངས་པར་ལྡན་པའི་ཉེས་པ་དག་གིས་འཇིགས་པར་བྱེད་ལ། འདོད་ཆགས་དང་མཚུངས་པར་ལྡན་པ་དག་གིས་ནི་འཇིགས་པར་མི་བྱེད་དོ། །ཞེས་གསུངས་ན། འོ་ན་དེའི་སྟོན་དུ་བུད་མེད་ལས་གྱུར་བའི་ཕམ་པ་སོགས་ལྟུང་བར་གསུངས་པ་མ་ཡིན་ནམ་ཞེ་ན། དེ་ནི་སོ་ཐར་འདུལ་བར་དབང་བཙན་པར་མཛད་པ་ཡིན་གྱི། བྱང་སེམས་ཐབས་ལ་མཁས་པས་ལྟུང་བའི་གཞི་སྤྱད་ཀྱང་ལྟུང་བར་མི་འགྱུར་བ་མ་ཟད་བྱང་ཆུབ་ཏུ་སྒྱུར་བའི་ཐབས་སུ་འགྱུར་བ་ཡང་ཡོད་པ་ནི་བྲམ་ཟེ་ཁྱེའུ་སྐར་མའི་སྐྱེས་རབས་ཐབས་མཁས་པའི་མདོ་དང་དེ་བཞིན་བསླབ་བཏུས་ཀྱི་ཚིག་བཤགས་ཀྱི་ལེའུར་རྒྱས་པར་གསལ་བས་དེ་ནས་མཁྱེན་དགོས།

ཐེག་པ་ཆེན་པོའི་ལུགས་ལ་ལྟུང་བ་བཅོས་སུ་རུང་བ།

ཐེག་པ་ཐུན་མོང་བ་ལྟར་ན། ཛེ་སྐད་དུ་ལུང་ལས།[1]

ལུས་ཅན་རྣམས་ཀྱི་ལས་རྣམས་ནི། །
བསྐལ་པ་བརྒྱར་ཡང་ཆུད་མི་ཟ། །
ཚོགས་ཤིང་དུས་ལ་བབས་པ་ན། །
འབྲས་བུ་ཉིད་དུ་སྨིན་པར་འགྱུར། །

ཞེས་ཉེས་ལྟུང་ཅི་མཆིས་རྣམས་ཀྱི་རྣམ་སྨིན་ངེས་པར་མྱོང་དགོས་པ་འབྱུང་བ་ལྟར་ལས་འབྲས་བུ་རྣམ་སྨིན་མི་མྱོང་བར་ཐར་བ་དཀའ་བར་འདོད་ཀྱང་། ཐེག་པ་ཆེན་པོའི་ལུགས་ལ་ནི་དེ་ལས་ལྡོག་དེ་ཉེས་ལྟུང་རྣམས་སྒྱུར་བར་འཆོས་སུ་ཡོད་པར

1 Toh-1 སྡེ། བཀའ། འདུལ་བ། "ང" ༡༡༠ ན ༦

གསལ་ཏེ། དེ་ཡང་ཉི་བར་འཁོར་གྱིས་ཞུས་པའི་མདོ་ལས།[1] “ཉེ་བར་འཁོར། ཇི་ལྟར་ན་ཐེག་པ་ཆེན་པོ་ལ་ཡང་དག་པར་ཞུགས་པའི་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་རྣམས་ཀྱི་བསླབ་པ་ནི་བཙོས་སུ་ཡོད་པ་ཡིན་ལ། ཉན་ཐོས་ཀྱི་ཐེག་པ་བ་རྣམས་ཀྱི་བསླབ་པ་བཙོས་སུ་མེད་པ་ཡིན་ཞེ་ན། ཉེ་བར་འཁོར་འདི་ལ་ཐེག་པ་ཆེན་པོ་ལ་ཡང་དག་པར་ཞུགས་པའི་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་ནི་གལ་ཏེ་སྔ་དྲོའི་དུས་ཀྱི་ཚེ་ཉེས་པ་བྱུང་ལ་གུང་ཚིགས་ཀྱི་ཚེ་ཐམས་ཅད་མཁྱེན་པ་ཉིད་ཀྱི་སེམས་དང་མ་བྲལ་བས་གནས་པར་བྱེད་ན་ཐེག་པ་ཆེན་པོ་ལ་ཡང་དག་པར་ཞུགས་པའི་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་ཚུལ་ཁྲིམས་ཀྱི་ཕུང་པོ་ཡོངས་སུ་མ་གཏུགས་པ་ཁོ་ན་ཡིན་ནོ། །གལ་ཏེ་གུང་ཚིགས་ཀྱི་དུས་ཀྱི་ཚེ་ན་ཉེས་པ་བྱུང་ལ་ཕྱི་དྲོའི་དུས་ཀྱི་ཚེ་ཐམས་ཅད་མཁྱེན་པ་ཉིད་ཀྱི་སེམས་དང་མ་བྲལ་བས་གནས་པར་བྱེད་ན་ཐེག་པ་ཆེན་པོ་ལ་ཡང་དག་པར་ཞུགས་པའི་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་ཚུལ་ཁྲིམས་ཀྱི་ཕུང་པོ་ཡོངས་སུ་མ་གཏུགས་པ་ཁོ་ན་ཡིན་ནོ།། གལ་ཏེ་ཕྱི་དྲོའི་དུས་ཀྱི་ཚེ་ན་ཉེས་པ་བྱུང་ལ་མཚན་མོའི་ཐུན་དང་པོ་ལ་ཐམས་ཅད་མཁྱེན་པ་ཉིད་ཀྱི་སེམས་དང་མ་བྲལ་བས་གནས་པར་བྱེད་ན་ཐེག་པ་ཆེན་པོ་ལ་ཡང་དག་པར་ཞུགས་པའི་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་ཚུལ་ཁྲིམས་ཀྱི་ཕུང་པོ་ཡོངས་སུ་མ་གཏུགས་པ་ཁོ་ན་ཡིན་ནོ། །གལ་ཏེ་མཚན་མོའི་ཐུན་དང་པོ་ལ་ཉེས་པ་བྱུང་ལ་མཚན་མོའི་གུང་ཐུན་ལ་ཐམས་ཅད་མཁྱེན་པ་ཉིད་ཀྱི་སེམས་དང་མ་བྲལ་བས་གནས་པར་བྱེད་ན་ཐེག་པ་ཆེན་པོ་ལ་ཡང་དག་པར་ཞུགས་པའི་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་ཚུལ་ཁྲིམས་ཀྱི་ཕུང་པོ་ཡོངས་སུ་མ་གཏུགས་པ་ཁོ་ན་ཡིན་ནོ། །གལ་ཏེ་མཚན་མོའི་གུང་ཐུན་ལ་ཉེས་པ་བྱུང་ལ་མཚན་མོའི་ཐུན་ཐ་མ་ལ་ཐམས་ཅད་མཁྱེན་པ་ཉིད་ཀྱི་སེམས་དང་མ་བྲལ་བས་གནས་པར་བྱེད་ན་ཐེག་པ་ཆེན་པོ་ལ་ཡང་དག་པར་ཞུགས་པའི་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་ཚུལ་ཁྲིམས་ཀྱི་ཕུང་པོ་ཡོངས་སུ་མ་

---

1 Toh-68 སྡེ། བཀའ། དཀོན་བརྩེགས། "ཙ" ༡༣༨ ན ༦

གདགས་པ་ཁོ་ན་ཡིན་ནོ། །ཉེ་བར་འཁོར་དེ་ལྟར་ན་ཐེག་པ་ཆེན་པོ་ལ་ཡང་དག་པར་ཞུགས་པའི་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་རྣམས་ཀྱི་བསླབ་པ་ནི་བཅོས་སུ་ཡོད་པ་ཡིན་ནོ། དེ་ལ་ནི་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་འགྱོད་པའི་ཀུན་ནས་ལྡང་བ་ཧ་ཅང་བསྐྱེད་པར་མི་བྱ་ཞིང་ཧ་ཅང་ཡིད་ལ་གཅགས་པར་ཡང་མི་བྱའོ། །ཉེ་བར་འཁོར་དེ་ལ་ཉན་ཐོས་ཀྱི་ཐེག་པ་བ་ཡང་དང་ཡང་དུ་ཉེས་པ་བྱུང་ན་ནི་ཉན་ཐོས་ཀྱི་ཐེག་པའི་ཚུལ་ཁྲིམས་ཀྱི་ཕུང་པོ་ཉམས་པ་དང་། རབ་ཏུ་ཉམས་པ་དང་། ཡོངས་སུ་གདགས་པ་ཡིན་པ་རིག་པར་བྱའོ། །དེ་ཅིའི་ཕྱིར་ཞེ་ན། ཉན་ཐོས་ཀྱི་ཐེག་པ་བས་ནི་ཉོན་མོངས་པ་ཐམས་ཅད་སྲུང་བའི་ཕྱིར་མགོ་དང་གོས་ལ་མེ་འབར་བ་ལྟ་བུར་བྱ་དགོས་པའི་ཕྱིར་རོ། དེ་ལྟར་ན་ཉན་ཐོས་ཀྱི་ཐེག་པ་བ་ལྷག་པའི་བསམ་པས་ཡོངས་སུ་མྱ་ངན་ལས་འདས་པ་འདོད་པ་རྣམས་ཀྱི་བསླབ་པ་ནི་བཅོས་སུ་མེད་པ་ཡིན་ནོ།།”
ཞེས་གསལ་བར་གསུངས་པས་སོ།།

ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོའི་ཐོག་མའི་བྱུང་བ།

དཔལ་མགོན་འཕགས་པ་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱིས་མཛད་པར་གྲགས་པའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པར་བཀོད་པ་ལྟར་ན། བཅོམ་ལྡན་འདས་འཚོ་ཞིང་བཞུགས་པའི་དུས་སུ་ལས་དང་པོ་བའི་བྱང་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་སོ་ལྔ་བསོད་སྙོམས་ལ་ཞུགས་པའི་སྐབས་སུ་ཆང་འཚོང་མ་ཞིག་གི་ཕྲུ་གུ་ལམ་ཁར་འཁྲུམས་པ་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་དེ་རྣམས་ཀྱིས་མི་ཤེས་ཏེ་ཕྲུ་གུ་རྫིས་པས་ཚེ་ལས་འདས་པར་གྱུར་པ་ན། དེ་རྣམས་ལ་ལྟུང་བ་ཕོག་པ་བཤད་པའི་དོན་དུ་འཕགས་པ་ཉེ་བར་འཁོར་གྱིས་དེ་བཞིན་གཤེད་པར་གསོལ་བ་བཏབ་པས། དེ་བཞིན་གཤེགས་པས་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་དེ་རྣམས་ཀྱི་ལྟུང་བ་འདག་པའི་དོན་དུ་འཕགས་པ་ཉེ་བར་འཁོར་གྱིས་ཞུས་ཏེ་སྟོན་པ་བཅོམ་ལྡན་འདས་ཀྱིས་ལྟུང་བ་བཤད་པའི་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་དེ་ཉིད་གསུངས་པའོ་ཞེས་གསུངས་སོ།།

ཡང་མཁས་པ་ཁ་ཅིག་གིས་རྒྱལ་པོའི་ཁབ་ཀྱི་བྲམ་ཟེ་ཁམས་པ་སྐྱེས་ཞེས་བྱ་བ་ཞིག་གིས་ཉ་པ་སོ་ལུ་པོ་ལ་ལམ་ལོག་པ་བསྟན་པས་ཕྱིས་བྲམ་ཟེ་ཁམས་པ་སྐྱེས་ཀྱིས་གཙོས་ཉ་པ་སོ་ལུ་པོ་ཚང་མ་ཉ་མགོ་བོ་སོ་ལུར་སྐྱེས་པར་གྱུར་པ་ན། དེ་རྣམས་ཀྱི་ལས་ངན་པ་དེ་བསལ་བར་བྱ་ཕྱིར་འཕགས་པ་ཉེ་བར་འཁོར་གྱིས་སྟོན་པར་གསོལ་བ་བཏབ་ནས་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་འདི་ཉིད་གསུངས་པ་ཡིན་ནོ། །ཞེས་བཤད་པ་ཡོད་ཀྱང་དེ་ནི་འཕགས་པ་དཀོན་མཆོག་བརྩེགས་པའི་གཞུང་མ་ཡིན་ནོ་ཞེས་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱི་འགྲེལ་པར་བཀག་གོ །ཡང་འགའ་ཞིག་གིས་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་ཆོ་གར་ཉ་པ་ལྔ་བརྒྱའི་དོན་དུ་ཞུས་ཏེ་ཉ་མི་ཐམས་ཅད་དག་ཞིང་ལ་བཀོད་པའོ་ཞེས་སྨན་སྟོང་མཚམས་པ་རིན་པོ་ཆེས[1]གསུངས་སོ།།

ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོའི་ངོ་སྤྲོད།

ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་འདི་ལ་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་ལྟུང་བ་བཤགས་པ་ཞེས་གྲགས། ཚིག་ཡོངས་སུ་བསྡུས་ཏེ་བརྗོད་ན། ལྟུང་བཤགས་ཞེས་ཀྱང་བརྗོད་པ་སྟེ། ལྟུང་བཤགས་ཞེས་པའི་གོ་དོན་ནི། སོ་སྐྱེ་བྱང་སེམས་རྣམས་ལ་ཉེས་ལྟུང་བྱུང་བ་རྣམས་ཇི་ལྟར་བཤགས་པའི་ཚུལ་ལ་བརྗོད་པ་སྟེ། དེ་ཡང་བསླབ་པ་ཀུན་ལས་བཏུས་པ་ལས་ཀྱང་།[2] "ཁྱད་པར་དུ་ནི་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་ལྟུང་བ་ལྕི་བ་དང་ཡང་བ་རྣམས་བཤགས་པ་ནི་འཕགས་པ་ཉེ་བར་འཁོར་གྱིས་ཞུས་པ་ལས་གསུངས་པ་གང་ཡིན་པའོ།" །ཞེས་གསུངས་སོ།།

འགའ་ཞིག་གིས་ནི་སྡིག་བཤགས་ལྟུང་བ་བཤགས་པ་ཞེས་ཀྱང་བརྗོད། འཕགས་པ་ཉེ་བར་འཁོར་གྱིས་ཞུས་པའི་མདོ་ལེགས་སྦྱར་སྐད་དུ་དེང་སང་མཐའ་རྒྱ་མེད

---

1 གླེགས་བམ། ༡ ཤོག ༥༥༦ ཞིང་པར་བསྐྲུན། ༡༩༩༥

2 Toh-3940 སྡེ། བསྟན། དབུ་མ། "ཁི" ༩༩ བ ༩ ལོ་ཀྱུ ༤

ཀྱང་། མདོ་འདིའི་ནང་བཞུགས་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་ལེ་ཚན་ཆ་ཚང་ལེགས་སྦྱར་གྱི་སྐད་དུ་བཞུགས་པའི་རྒྱལ་སྲས་ཞི་བ་ལྷས་མཛད་པའི་བསླབ་པ་ཀུན་ལས་བཏུས་པའི་ལེའུ་བརྒྱད་པ་སྡིག་པ་སྦྱང་བའི་ལེའུར་མཇལ་རྒྱུ་ཡོད།

དེ་ལ་ཕུང་པོ་གསུམ་པ་ཞེས་པའི་མཚན་འདི་ཉིད་གཞུང་གི་བརྗོད་བྱ་བསྟན་ཚུལ་ལ་བརྟེན་ནས་བཞག་པ་སྟེ། ཇི་སྐད་དུ་འཕགས་པ་ཉེ་བར་འཁོར་གྱིས་ཞུས་པའི་མདོ་ལས།[1] "བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་ཉིན་མཚན་དུ་སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་དེ་དག་གི་མཚན་འཛིན་པ་དང་། ཡོངས་སུ་བརྗོད་པ་དང་། ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་ཆོས་ཀྱི་རྣམ་གྲངས་ཀློག་པས་ལྟུང་བ་འགྱོད་པ་ལས་བྱུང་བ་དང་། ཏིང་ངེ་འཛིན་ཀྱང་ཐོབ་པ་གང་ཡིན་པ་འདི་ནི་ཉན་ཐོས་དང་སངས་རྒྱས་ཀྱི་ཐེག་པ་ཐམས་ཅད་ཀྱིས་ལྟུང་བ་འགྱོད་པའི་གནས་རྣམ་པར་དཔྱད་པ་མི་ནུས་སོ།" །ཞེས་གསུངས་པ་ནས་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་ཆོས་ཀྱི་རྣམ་གྲངས་ཞེས་པའི་མཚན་ཐོན་པས་ཡིན་ནམ་སྙམ་མོ།།

ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་རང་བཙན་པ་དེ་ལ་ཕུང་པོ་གསུམ་པ་ཞེས་པའི་མཚན་ཇི་ལྟར་ཐོགས་པ་ཡིན་ནམ་སྙམ་ན། དེ་ཉིད་ལས།[2] "དེ་ལ་འདི་ལྟ་བུའི་བསྒྲུ་བ་དང་སྤྲོས་པ་དང་བཅས་པ་ཀུན་དུ་མི་འབྱུང་བ་གང་ཡིན་པ་དེ་ནི་སྡིག་པ་བཤགས་པ་ཡོངས་སུ་དག་པ་ཡིན་ཏེ། འདི་ནི་བཤགས་པའི་ཕུང་པོའོ།།" ཞེས་དང་། ཡང་དེ་ཉིད་ལས།[3] "རིགས་ཀྱི་བུ་འདི་ནི་སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་ཀྱི་བཀའ་སྩལ་བའི་རྗེས་སུ་ཡི་རང་བའི་ཕུང་པོ་ཁ་ན་མ་ཐོ་བ་མེད་པའོ།" །ཞེས་དང་། ཡང་།[4] "རིགས་ཀྱི་བུ་འདི་ནི་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་རྣམས་ཀྱི་བསྔོ་བ་ཁ་ན་མ་ཐོ

---

1 Toh-68 སྡེ། བཀའ། དཀོན་བརྩེགས། "ཅ" ༡༣༣ བ ༥

2 Toh-284 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "ཡ" ༧༣ ན ༨

3 Toh-284 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "ཡ" ༧༥ ན ༥

4 Toh-284 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "ཡ" ༧༧ ན ༡

བ་མེད་པའོ། །འཇམ་དཔལ་གཞོན་ནུར་གྱུར་པས་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་བསྔོ་བ་འདི་བཤད་པ་ན།" །ཞེས་སོགས་གསུངས་པ་ལས་བྱུང་བ་སེམས་སོ།།

ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་རང་ཚན་པ་དེ་དང་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་གཉིས་ཀྱི་ཁྱད་པར།

ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་རང་བཙན་པ་དང་ལྟུང་བ་བཤགས་པའི་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་གཉིས་ལ་ཁྱད་པར་གང་ཡོད་ཅེ་ན། ཁྱད་པར་འགའ་ཞས་སྣང་སྟེ། དེ་ཡང་། མདོ་རང་ཚན་པ་འདི་ནི་རྒྱས་ཤིང་འདི་ནི་བསྡུས་པའོ། །ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་འདིར་རྗེས་སུ་ཡི་རང་གི་ཚུལ་གསལ་བ་ཚིག་རྐང་གཅིག་ལས་མེད་ཅིང་དེར་རྒྱས་པ་གསལ་བས་རྒྱས་བསྡུས་ཀྱི་ཁྱད་པར་དང་། ལྟུང་བ་བཤགས་པའི་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་ཞུ་བ་པོ་ནི་འཕགས་པ་ཤ་རིའི་བུ་དང་། ལྟུང་བའི་སྐོར་དོགས་གཅོད་ཞུ་བ་པོ་ནི་འཕགས་པ་ཉེ་བར་འཁོར་ཡིན་ལ།ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་རང་མཚན་པའི་མདོ་གསུང་བ་པོ་ནི་འཕགས་པ་འཇམ་དཔལ་ཡིན་ཞིང་སངས་རྒྱས་ཀྱིས་རྗེས་སུ་གནང་བ་བཅས་ཞུ་བ་པོའི་ཁྱད་པར་དང་། ལྟུང་བ་བཤགས་པའི་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་འདི་ནི་དཀོན་བརྩེགས་ཀྱི་ཁོངས་སུ་གཏོགས་ཤིང་གཞན་ནི་མདོ་སྡེའི་ཁོངས་སུ་གཏོགས་པས་སྡེ་ཚན་གྱི་ཁྱད་པར་དང་། ལྟུང་བ་བཤགས་པའི་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་འདིས་བྱང་སེམས་ལ་ལྟུང་བ་བྱུང་བ་སོར་ཆུད་པའི་ཐབས་སྟོན་པའི་གཞུང་ཞིག་ཡིན་ཞིང་། དེ་ནི་ཁྲིམས་པ་དང་རབ་བྱུང་དང་བྱང་སེམས་རྣམས་ཀྱི་ཉེས་པའི་བཤགས་ཐབས་སྟོན་པའི་མདོ་ཞིག་ཡིན་པས་གཞུང་གི་བརྗོད་བྱ་བསྟན་ཚུལ་གྱི་ཁྱད་པར་དང་། འདིར་གསལ་བའི་སངས་རྒྱས་སོ་ལྔ་པོའི་མཚན་དང་མི་ཁོམ་པའི་གནས་བརྒྱད་པོ་དང་ཐོག་མའི་སྐྱབས་འགྲོ་དང་མཇུག་གི་སེམས་བསྐྱེད་རྣམས་དེར་མི་གསལ་བ་མ་ཟད། དེར་སངས་རྒྱས་མང་པོའི་མཚན་དང་། ཐུགས་བསྐྱེད་ཚུལ་གྱི་སྐོར་དང་། བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་མཚན

མང་པོ་གསལ་བ་དང་འདིར་དེའི་སྐོར་ཚིག་གཅིག་ཀྱང་མི་གསལ་བས་བའི་ཁྱད་པར་བཅས་ལས་གཞུང་གཅིག་ལྟ་བུ་འཛིན་པར་མི་བྱའོ།།

ཕུང་པོ་གསུམ་སོ་སོའི་ངོས་འཛིན།

ཕུང་པོ་གསུམ་པ་ཞེས་པ་འདིའི་གྲངས་ངོས་འཛིན་ཚུལ་ལ་བཞེད་པ་མི་འདྲ་བ་འགའ་ཤས་སྣང་བ་ལས། ཐོག་མར་འདིའི་ངོས་འཛིན་སའི་གཞི་ནི་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་སྤྱོད་པ་ལ་འཇུག་པ་ལས།[1]

ཉིན་དང་མཚན་མོ་ལན་གསུམ་དུ། །
ཕུང་པོ་གསུམ་པ་གདོན་བྱ་ཞིང་། །
རྒྱལ་དང་བྱང་ཆུབ་སེམས་བརྟེན་པས། །
ལྷག་བའི་ལྟུང་བ་དེས་ཞི་བྱ། །

ཞེས་པ་འདི་དང་། གཞན་ཡང་འཕགས་པ་དྲག་ཤུལ་ཅན་གྱིས་ཞུས་པའི་མདོར་ཇི་སྐད་དུ།[2] "ཉིན་ལན་གསུམ་མཚན་ལན་གསུམ་དུ་གཙང་བ་དང་གོས་གཙང་མ་བགོས་ཏེ་ཕུང་པོ་གསུམ་པ་བཟླག་པར་བྱའོ།" །ཞེས་གསུངས་པ་རྣམས་ཡིན། དེ་ཡང་། སྤྱོད་འཇུག་ཏུ། ཕུང་པོ་གསུམ་པ་གདོན་བྱ་ཞིང་། །ཞེས་རྒྱ་འགྲེལ་དང་བོད་འགྲེལ་ཕལ་མོ་ཆེར་ཕུང་པོ་གསུམ་གྱི་གྲངས་དེ་བཞིན་སྡིག་པ་བཤགས་པ་དང་། རྗེས་སུ་ཡི་རང་བ་དང་། དགེ་བ་བསྔོ་བ་གསུམ་ལ་ངོས་འཛིན་མཛད་པ་དང་། ཡང་བསླབ་བཏུས་སུ།[3] ཇི་སྐད་དུ། "ཕུང་པོ་གསུམ་ནི། སྡིག་པ་བཤགས་པ་དང་། བསོད་ནམས་ཀྱི་རྗེས་སུ་ཡི་རང་བ་དང་། སངས་རྒྱས་ལ་བསྐུལ་བ་ཞེས་བྱ་བ་སྟེ།" ཞེས་སྡིག་པ་བཤགས་པ་དང་རྗེས་སུ་ཡི་རང་བ་དང་། ཆོས་འཁོར་

1 Toh-3871 སྡེ། བསྟན། དབུ་མ། "ལ" ༡༨ ན ༣

2 Toh-3940 སྡེ། བསྟན། དབུ་མ། "ལ" ༡༥༦ ན ༨ ལེའུ། ༡༦

3 Toh-3940 སྡེ། བསྟན། དབུ་མ། "ཁི" ༦༧ བ ༧ ལེའུ། ༤

སྐོར་བར་བསྐུལ་བ་གསུམ་ལ་ངོས་འཛིན་ཅིང་། ཇོ་བོ་རྗེས་མཛད་པའི་ལྟུང་བ་བཤགས་པའི་འགྲེལ་པར།[1] "དེ་དག་གི་ནི་མདོ་སྡེ་གཞན་ནས་ཕུང་པོ་གསུམ་ཞེས་གང་བསྟན་པ་དེ་ཡང་བསྡུས་ཏེ་སྡིག་པ་བཤགས་པ་ནི་བཤད་པའི་ཕུང་པོའོ། །དགེ་བའི་རྩ་བ་བསྔོ་བ་ནི་བསྔོ་བའི་ཕུང་པོའོ། །བྱང་ཆུབ་ཆེན་པོ་ཐོབ་པའི་ཐབས་ཀྱིས་སྡིག་པ་ནི་བཤགས་པས་སོ། །རྗེས་སུ་ཡི་རང་བ་ནི་བསྔོ་བའི་ཡན་ལག་སྟེ། རྗེས་སུ་ཡི་རང་བའི་དགེ་བ་བསྔོ་བས་སོ། །གསོལ་བ་འདེབས་པ་ནི་གསོལ་བ་འདེབས་པའི་ཕུང་པོའོ།" །ཞེས་གསུངས་པ་ལྟར། བཤགས་པ་དང་། བསྔོ་བ་དང་། མྱ་ངན་མི་འདའ་བར་གསོལ་བ་འདེབས་པ་གསུམ་ལ་ངོས་འཛིན་མཛད་འདུག་པ་དང་། སློབ་དཔོན་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱིས་མཛད་པའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པ་ལས་ནི་སྡིག་པ་བཤགས་པ་དང་། རྗེས་སུ་ཡི་རང་བ་དང་། གསོལ་བ་འདེབས་པ་གསུམ་ལ་ཕུང་པོ་གསུམ་དུ་ངོས་འཛིན་མཛད་ཡོད་པ་ནི། ཇི་སྐད་དུ། "བྱང་ཆུབ་ཀྱི་ལྟུང་བ་བཤགས་པའི་འགྲེལ་པ་ལས།[2] "དེ་ལ་སྡིག་པ་བཤགས་པའི་ཕུང་པོ་དང་། དག་པ་དང་མ་དག་པའི་དགེ་བའི་རྗེས་སུ་ཡི་རང་བ་ནི་དེ་དག་ཡུལ་དུ་བྱས་ན་དགའ་བའི་ཕུང་པོ་དང་། སངས་རྒྱས་ཐམས་ཅད་ལ་མྱ་ངན་ལས་མི་འདའ་བ་དང་། ཆོས་ཀྱི་འཁོར་ལོ་བསྐོར་བར་བསྐུལ་བ་ནི་གསོལ་བ་འདེབས་པའི་ཕུང་པོ་སྟེ། དེ་གསུམ་གྱིས་བསོད་ནམས་ཀྱི་ཕུང་པོ་དཔག་ཏུ་མེད་པ་སོགས་པའོ།" །ཞེས་གསུངས་པ་མ་ཟད་གཞུང་དེ་རང་གི་དབུར། འདི་ལ་ཕུང་པོ་གསུམ་པ་ཞེས་ཀྱང་གསུངས་ཏེ། ཕྱག་འཚལ་བའམ་བཤགས་པ་ལ་སོགས་པ་བསོད་ནམས་ཀྱི་ཕུང་པོ་དཔག་ཏུ་མེད་པ་ལ་སོགས་པ་སྟེ་ཞེས་གསུངས་པའི་སྐབས་ཕྱག་འཚལ་བ་དང་བཤགས་པ་དང་བསྔོ་བ་བཅས་ལ་ཕུང་པོ་གསུམ་བཞིད་པ་ལྟ་བུ་སྣང་ཞིང་། སློབ་དཔོན་བི་རོ་ཙན་

---

1 Toh-4007 ཛྷི། བསྟན། མདོ་འགྲེལ། "ཇི" ༡༥༨ ན ༦

2 Toh-4005 ཛྷི། བསྟན། མདོ་འགྲེལ། "ཇི" ༡༨༧ ན ༣

རཀླཱིདས་བསླབ་བྱ་མི་ཏོག་གི་སྙེ་མ་ལས།[1]

སྡིག་པ་བཤགས་དང་སངས་རྒྱས་ལ། །
གསོལ་འདེབས་བསོད་ནམས་རྣམས་ལ་ནི། །
རྗེས་ཡི་རང་རྣམས་བསོད་ནམས་ཀྱི། །
ཕུང་པོ་ཡིན་ཕྱིར་ཕུང་པོ་གསུམ། །

ཞེས་གསུངས་སོ།།

འོན་ཀྱང་རྗེ་བཙུན་དཱ་རཱ་ནཱ་ཐས་མཛད་པའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པ་ལས་ཇི་སྐད་དུ།[2] "འགའ་ཞིག་བཤགས་པ་ཡི་རང་བསྔོ་བའི་ཕུང་པོ་གསུམ་དུ་འཆད་ལ། འདི་ཉིད་ཀྱི་འགྲེལ་པ་གཅིག་ན། བཤགས་པ་དང་། དགེ་བ་དང་། གསོལ་འདེབས་ཀྱི་ཕུང་པོ་ཞེས་འཆད་དོ། །འོན་ཀྱང་ཕྱག་འཚལ་བ་དང་། བཤགས་པ་དང་། ཡོངས་སུ་བསྔོ་བའི་ཕུང་པོ་གསུམ་ལ་ངོས་འཛིན་པ་ཉིད་གཞུང་གི་ཚིག་དོན་དམ་བུར་འབྱེད་པའི་དབང་དུ་བྱས་ན་ལེགས་པ་མཐོང་སྟེ། དེ་ལྟར་ན་རི་དབང་གི་རྒྱལ་པོ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ་ཡན་ཆད་ཕྱག་འཚལ་བའི་ཕུང་པོ་དང་། དགོངས་གསོལ་ནས་སླན་ཆད་ཀྱང་སྡོམ་པར་བགྱི་ལགས་སོ་ཡན་ཆད་སྡིག་པ་བཤགས་པའི་ཕུང་པོ་དང་། སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་དེ་དག་ཐམས་ཅད་བདག་ལ་དགོངས་སུ་གསོལ་ཞེས་པ་མན་ཆད་ཡོངས་སུ་བསྔོ་བའི་ཕུང་པོ་ཡིན་ནོ། །འདི་ལ་དགོངས་གསོལ་གཉིས་ཀྱང་དོན་ཚན་ཕྱི་མ་སོ་སོའི་འགོ་རྩོམ་བྱེད་དུ་གསལ་བ་དང་། གཞུང་ཚིག་སྡེ་ཚན་གསུམ་པོ་མང་ཉུང་ཆེས་མི་སྙོམས་པ་མེད་པ་སོགས་ཀྱི་ལུགས་འདི་ལེགས་པར་མཐོང་སྟེ། ཐོག་མའི་སྐབས་འགྲོ་ནི་ཡོན་ཏན་དྲན་པའི་ཕྱིར་ཕྱུང་བ་ཡིན་པས། ཕྱག་འཚལ་གྱི་སྡེ་ཚན་ཡིན་ལ། བཤགས་པ་འོག་མ་མན་ཆད་

1 Toh-3943 སྡེ། བསྟན། དབུ་མ། "ཁི" ༣༧༥ བ ༡

2 གསུང་འབུམ་པོད། "པ" ཤོག ༣༣༨

གྱིས་སྒོ་ནས་བསྟན་པའོ།" །ཞེས་གསུངས་པའི་དོན་ལ་གོ་རྒྱ་ཆེ་ཞིང་དོན་ལ་འཆམ་པ་སྣང་ངོ་། །རྗེ་བོ་རྗེས་མཛད་པར་གྲགས་པའི་སངས་རྒྱས་མཆན་འབུམ་གྱི་གཞུང་གི་མཇུག་ཏུའང་།[1] "དཀོན་མཆོག་གསུམ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ཞིང་སྡིག་པ་བཤགས་པ་དང་། སྨོན་ལམ་འདེབས་པའི་མདོ་རྗེ་བོ་རྗེས་མཛད་པའི་མཆན་འབུམ་རྫོགས་སོ།" ཞེས་གསུངས་པ་ན་གོང་དུ་རྗེ་བཙུན་ཏཱརཱནཱཐའི་ཕུང་པོ་གསུམ་གྱི་ངོས་འཛིན་ཚུལ་དང་མཚུངས་པ་སྣང་ངོ་། །གཞན་ཡང་། སྨན་སྡོང་མཚམས་པ་རིན་པོ་ཆེས་མཛད་པའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པར་ཡང་དེ་བཞིན་དུ་སྣང་སྟེ། དེ་ཉིད་ལས།[2] "དེའང་ཕྱག་འཚལ་བ་དང་། བཤགས་པ་དགེ་བ་བྱང་ཆེན་དུ་བསྔོ་བ་སྟེ་བསགས་བྱང་སྦྱིལ་གསུམ་ཡོངས་རྫོགས་ཚང་བའི་ཕྱིར་སངས་རྒྱས་ཐོབ་པའི་རྒྱུ་གྲུང་པོ་ཡིན་པས་ན་ཕན་ཡོན་བསོད་ནམས་ཀྱི་ཕུང་པོ་ཚད་མེད་པའི་ཕྱིར་ཕུང་པོ་གསུམ་པ་ཞེས་པའི་མཚན་གྲགས་ལ། " ཞེས་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མཚན་གྲངས་ལ་ཞེས་པ་འདི་གོང་གི་རྗེ་བཙུན་ཏཱརཱནཱཐའི་དགོངས་ཚུལ་དང་གཅིག་ཏུ་སྣང་ངོ་།།

དེ་ལྟར་ཕུང་པོ་གསུམ་གྱི་གྲངས་ལ་དཔྱད་པ་ན་སྤྱིར་ཕུང་པོ་གསུམ་གྱི་གྲངས་ལ་བཤགས་པ་དང་རྗེས་སུ་ཡི་རང་བ་དང་བསྔོ་བ་གསུམ་འཇོག་ན་ལེགས་པ་མངོན་ཡང་སྐབས་དོན་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་གཞུང་དོན་དང་བརྗོད་བྱ་བསྟན་ཚུལ་ཁོ་ན་དང་སྦྱར་ན་རྗེ་བཙུན་ཏཱརཱནཱཐའི་དགོངས་བཞིན་ལྟར་ཕྱག་འཚལ་བ་དང་། བཤགས་པ་དང་། བསྔོ་བ་གསུམ་ལའང་བརྗོད་ན་མི་འཐད་པ་མི་སྣང་ངོ་། །

---

1 གཟུངས་བསྡུས། "ཨེ" བོད་ཤོག་ཨང་། ༥༩ དཔྱིན་ཨང་། ༡༣༧ ཇ་བོད་ཀྱི་ཤེས་རིག་པར་ཁང་།
2 གླེགས་བམ། ༡ ཤོག ༥༥༧ ཐིར་ནས་པར་བདབ་པ། ༡༩༧༥

ཕུང་པོ་གསུམ་དང་། སྟོབས་བཞི་དང་། ཡན་ལག་བདུན་རྣམས་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོར་བསྡུ་ཚུལ།

ལྟུང་བ་བཤགས་པའི་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་འདི་ལ་གཞུང་དོན་བསྡུས་ཚུལ་ཁག་མི་འདྲ་བ་གསུམ་ཡོད། དེ་དག་ནི་ཕུང་པོ་གསུམ་དང་། སྟོབས་བཞི་དང་། ཡན་ལག་བདུན་གྱི་སྒོ་ནས་བསྡུས་པ་རྣམས་སོ། །ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱིས་མཛད་པའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པ་ལས།[1] "བསྡུས་པའི་དོན་ནི་ཕུང་པོ་གསུམ་མམ། བདུན་དག་པའམ། ཡང་ན་སྟོབས་བཞི་པོ་ན་ཡིན་ནོ།" །ཞེས་གསུངས་སོ། །དང་པོ་ཕུང་པོ་གསུམ་གྱི་སྒོ་ནས་བསྡུས་ན། ཐོག་མའི་སྐྱབས་འགྲོ་ནས་རི་དབང་གི་རྒྱལ་པོ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ་ཞེས་པའི་ཡན་ཆད་བར་ཕྱག་འཚལ་བའི་ཕུང་པོར་བསྡུས་ཤིང་། བདག་ལ་དགོངས་སུ་གསོལ་ནས་སླན་ཆད་ཀྱང་སྡོམ་པར་བགྱི་ལགས་སོ་ཞེས་པའི་བར་སྡིག་པ་བཤགས་པའི་ཕུང་པོ་དང་། སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་དེ་དག ཐམས་ཅད་བདག་ལ་དགོངས་སུ་གསོལ་ནས་ཡོངས་སུ་བསྔོ་བར་བགྱིའོ་ཞེས་པའི་བར་བསྔོ་བའི་ཕུང་པོར་བསྡུས་སོ། །

ཡང་ན་ཐོག་མའི་སྐྱབས་འགྲོ་ནས་སླན་ཆད་ཀྱང་སྡོམ་པར་བགྱིས་ལགས་སོ་ཞེས་པའི་བར་སྡིག་པ་བཤགས་པའི་ཕུང་པོ་དང་། བསོད་ནམས་ཐམས་ཅད་ལ་ནི་རྗེས་སུ་ཡི་རང་ངོ་ཞེས་པས་རྗེས་སུ་ཡི་རང་བའི་ཕུང་པོ་དང་། སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་ནས་ཡོངས་སུ་བསྔོ་བར་བགྱིའོ་ཞེས་པའི་བར་བསྔོ་བའི་ཕུང་པོར་བསྡུས་སོ། །དེ་ལྟར་རྗེས་སུ་ཡི་རང་གི་ཕུང་པོ་ནི་ཚིག་ཟིན་ལ་ཚིག་རྐང་གཅིག་ལས་མེད་པས་ཧ་ཅང་བསྟན་དོན་བསྡུས་པས་གཞུང་དོན་བསྟན་ཚུལ་ཆེས་བསྡུས་པས བློར་དེ་ཙམ་བདེ་བར་མི་སྣང་ངོ་། །ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་རང་ཚན་པ་དང་སྦྲར་

1 Toh-4005 སྡེ། བསྟན། མདོ་འགྲེལ། "ཛི" ༡༧༨ བ ༥

ན་འཚམས་ཤིང་། དེར་ཕུང་པོ་དེ་གསུམ་གའི་གཞུང་ཚད་མང་ཉུང་མཉམ་པས་བསྟན་དོན་འདི་དེར་བཞག་ན་ཆེས་འཚམས་པ་སྣང་ངོ་།།

གཉིས་པ་སྟོབས་བཞིའི་སྒོ་ནས་བསྡུས་ཚུལ་ནི། སངས་རྒྱས་ལ་སྐྱབས་སུ་འཆིའོ་ནས་དགེ་འདུན་ལ་སྐྱབས་སུ་འཆིའོ་ཞེས་པའི་བར་རྟེན་གྱི་སྟོབས་ཀྱིས་བསྡུས་སོ།། དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཤཱཀྱ་ཐུབ་པ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ་ཞེས་པ་ནས་རི་དབང་གི་རྒྱལ་པོ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ་ཞེས་པའི་བར་གཉེན་པོ་ཀུན་དུ་སྤྱོད་པའི་སྟོབས་ཀྱིས་བསྡུས་སོ།། དེ་དག་ལ་སོགས་པ་བདག་ལ་ནས་འཆགས་སོ། །མི་འཆབ་བོ། །ཞེས་པའི་བར་གྱིས་རྣམ་པར་སུན་འབྱིན་པའི་ཀུན་དུ་སྤྱོད་པའི་སྟོབས་ཀྱིས་བསྡུས་སོ། །སླན་ཆད་ཀྱང་གཅོད་ཅིང་སྡོམ་པར་བགྱིད་ལགས་སོ་ཞེས་པའི་བར་ཉེས་པ་ལས་སླར་ལྡོག་པའི་སྟོབས་ཀྱིས་བསྡུས་སོ།།

གསུམ་པ་ཡན་ལག་བདུན་གྱི་སྒོ་ནས་བསྡུས་ཚུལ་ནི། ཐོག་མའི་སྐྱབས་འགྲོ་དང་། རི་དབང་གི་རྒྱལ་པོ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ་ཞེས་པ་ཡན་ཆད་ཕྱག་འཚལ་བའི་ཡན་ལག་དང་། དེ་དག་ལ་སོགས་པ་ནས་སྡོམ་པར་བགྱི་ལགས་སོ་ཞེས་པའི་ཡན་ཆད་དང་། སྡིག་པ་ཐམས་ཅད་ནི་སོ་སོར་བཤགས་སོ་ཞེས་པ་རྣམས་ཀྱིས་སྡིག་པ་བཤགས་པའི་ཡན་ལག་དང་། སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་དེ་དག་ཐམས་ཅད་བདག་ལ་དགོངས་སུ་གསོལ་ནས་བདག་གིས་ཀྱང་ཡོངས་སུ་བསྔོ་བར་བགྱིའོ་ཡན་ཆད་དང་། བདག་གི་བླ་ན་མེད་པའི་ཡེ་ཤེས་ཀྱི་མཆོག་དམ་པ་ཐོབ་པར་གྱུར་ཅིག་བཅས་པ་རྣམས་ཀྱིས་བསྔོ་བའི་ཡན་ལག བསོད་ནམས་ཐམས་ཅད་ལ་ནི་རྗེས་སུ་ཡི་རང་ངོ་ཞེས་པས་རྗེས་སུ་ཡི་རང་གི་ཡན་ལག་དང་། སངས་རྒྱས་ཐམས་ཅད་ལ་ནི་བསྐུལ་ཞིང་གསོལ་བ་འདེབས་སོ་ཞེས་པས་ཆོས་འཁོར་བསྐོར་བར་བསྐུལ་བའི་ཡན་ལག་དང་། མྱ་ངན་ལས་མི་འདའ་བར་གསོལ་བ་འདེབས་པའི་ཡན་ལག་གཉིས་གཅིག་ཏུ་བསྟན་ཏོ། །དེ་ལྟར་ཡན་ལག་བདུན་དངོས་སུ་ཚིག་ཟིན་ལ་བསྟན

པས་དངོས་བསྟན་གྱི་ཡན་ལག་དྲུག་གོ །མཆོད་པ་ནི་ཤུགས་ཀྱིས་བསྟན་ཏེ་སྐྱབས་འགྲོ་མཆོད་པ་དོན་གྱིས་འཕངས་པས་དེ་བགྲང་བར་འདོད་པའང་ཡོད་དོ། །དེ་ལྟར་ཡན་ལག་བདུན་ག་བསྟན་ཡང་གོ་རིམ་མ་ངེས་པ་སྣང་ངོ་། །ཛེ་བཙུན་ཏཱརཱནཱཐའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པར་ཡང་།[1] "གཞུང་འདི་ཕུང་པོ་གསུམ་དང་སྟོབས་བཞི་དང་བླ་ན་མེད་པའི་མཆོད་པ་རྣམ་པ་བདུན་པོ་དག་གིས་བསྡུས་པ་ཡིན་ནོ།" །ཚུལ་དེ་བཞིན་དུ་གསལ་ལོ། །མཆོད་པའི་ཡན་ལག་དངོས་སུ་ཚིག་ཟིན་ལ་མི་གསལ་སྐོར་ཛེ་བཙུན་ཏཱརཱནཱཐའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པར།[2] "ཐོག་མཐའི་སྐྱབས་འགྲོ་དང་བསྔོ་བའི་ཁོངས་ཀྱི་སེམས་བསྐྱེད་ཀྱང་བསྟན་ནས་ཕྱག་འཚལ་བཤགས་པ་ཡི་རང་གསོལ་འདེབས་སྐྱབས་འགྲོ་སེམས་བསྐྱེད་བསྔོ་བ་སྟེ། ཡན་ལག་བདུན་གྱི་བགྲང་ཚུལ་འདི་བཞིན་དུ་བྱས་ན་རུང་ཙམ་མོ། །འོན་ཀྱང་ཚིག་དོན་དང་འབྲེལ་བའི་དོན་བསྡུ་ལ་སྦྱོར་ན་ཡན་ལག་བདུན་དུ་བགྲང་བ་མི་ལེགས་ཏེ། སེམས་བསྐྱེད་བསྔོ་བ་ལས་གཞན་དུ་མ་དམིགས་པ་དང་། གོ་རིམ་ཡང་འཆོལ་བར་གནས་པས་སོ། །བསྔོ་བའི་ཁོངས་ཀྱི་སེམས་བསྐྱེད་སོགས་རྟེན་དང་དཀར་པོ་ས་བོན་གྱི་སྟོབས་ལ་མཚུངས་སོ་སྙམ་ན་མ་ཡིན་ཏེ་ཆ་ཚང་བར་བྱ་བའི་ཕྱིར་འཕྲོས་དོན་དུ་དེ་ལྟར་བཤད་ཀྱི། རྟེན་སྐྱབས་འགྲོ་དང་དཀར་པོ་ས་བོན་ཡི་རང་སོགས་ཀྱང་ཐུབ་ཀྱི་གཞུང་ཡོད་པའི་ཕྱིར་རོ། །ཕྱིར་མདོ་ལུགས་ཀྱི་ཡན་ལག་བདུན་པ་ཕལ་ཆེར་ལ་མཆོད་པ་ཡོད་ཅིང་གསོལ་འདེབས་གཉིས་སོ་སོར་བགྲང་བ་དང་། སྐྱབས་འགྲོ་སེམས་བསྐྱེད་མི་བགྲང་བ་མང་དུ་སྣང་བས། འདིར་ཡན་ལག་བདུན་པ་ཚང་བ་རྩི་བ་ངེས་པ་དགོས་པ་མིན་ལ། ཁ་ཅིག་སྐྱབས་འགྲོས་མཆོད་པ་དོན་གྱིས་འཕངས་པས་དེ་བགྲང་བར་འདོད་པ་ནི་དངོས་བསྟན་བོར་ནས་ཤུགས་བསྟན་འཆོལ་བར

1 པོད། པ ཤོག ༣༣༨

2 པོད། པ ཤོག ༣༣༨

འཕངས་པའི་རྒྱུ་ཉིད་དོ། ” །ཞེས་གསུངས་སོ། །སློབ་སྤོང་མཚམས་པ་རིན་པོ་ཆེས།[1] “འདི་དག་ནི་ཕྱིག་བཞགས། ཡི་རང་། བསྐུལ་བ། གསོལ་འདེབས། བསྔོ་བ། སྐྱབས་འགྲོ་སྟེ་ཡན་ལག་དྲུག་པའམ་བདུན་གྱི་ཐ་སྙད་བྱེད་ན་བླ་མེད་བྱང་ཆུབ་ཏུ་བསྔོ་བ་ནི་སེམས་བསྐྱེད་ཀྱི་རྒྱུའི་གཙོ་བོ་གཅིག་ཡིན་པས། དེ་སེམས་བསྐྱེད་དང་བསྔོ་བ་གཉིས་སུ་དབྱེ་ནས་བདུན་བྱའོ། །ཕྱིར་ནི་ཡན་ལག་བཅུ་པ། བརྒྱད་པ། བདུན་པ། དྲུག་པ། ལྔ་པ་སོགས་གང་ཡང་བྱུང་བས་བདུན་པ་ཁོ་ནར་མ་ངེས་སོ། ” ། ཞེས་གསུངས་པ་ལྟར་ཡན་ལག་དྲུག་ཏུ་བསྡུས་ནའང་མི་འགྲིག་པ་མི་སེམས་སོ།།

ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོས་བརྗོད་བྱ་གང་བསྟན་ཚུལ།

གངས་ཅན་ལྗོངས་སུ་ཡོངས་སུ་གྲགས་པའི་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་ལྟུང་བ་བཤགས་པའམ་ཕྱིར་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་ཞེས་གྲགས་པའི་གཞུང་འདི་ཉིད་ཀྱི་བརྗོད་བྱ་གང་བསྟན་ཞེ་ན། བྱང་སེམས་སོ་སྐྱེ་རྣམས་ལ་ལྟུང་བ་ཐོག་པ་ན་དེ་ཇི་ལྟར་ཕྱིར་བཅོས་ཚུལ་ཆེད་བསྟན་པ་ཡིན་ལ། དེ་ཡང་ཇི་ལྟ་བུའི་སྒོ་ནས་གསོར་ཆུད་ཅེ་ན། ཐོག་མར་མདོ་འདི་ཉིད་མ་འདོན་པའི་སྔོན་དུ་འགྲོ་བའི་ཚུལ་ཇི་ལྟ་བུ་དགོས་ཤེ་ན། འཕགས་པ་དྲག་ཤུལ་ཅན་གྱིས་ཞུས་པའི་མདོ་ལས། “ཉིན་ལན་གསུམ་མཚན་ལན་གསུམ་དུ་ཁྲུས་བྱས་ཏེ་གོས་གཙང་མ་བགོས་ནས་ཕུང་པོ་གསུམ་པ་གདོན་པར་བྱའོ།” །ཞེས་གསུངས་པ་ལྟར་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་འདི་ཉིད་མ་འདོན་པའི་སྔོན་དུ་ཁྲུས་ལ་སོགས་པ་བྱས་ཏེ་གོས་གཙང་མ་བགོས་ནས་ཉིན་ལ་ལན་གསུམ་དང་མཚན་ལ་ལན་གསུམ་སྟེ་ཐུན་དྲུག་ལ་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་འདོན་དགོས་པ་གསུངས་པའོ། །

1 གླེགས་བམ། ༡ དཔྱིན་ཤོག ༥༢༣ བིར་ནས་པར་བསྐྲུན། ༡༩༨༥

སྡིག་བཤགས་འདིའི་དབུ་ནི་དེ་ལ་བཤགས་པ་ནི། འདི་ཡིན་ཏེ་ཞེས་པ་ནས་འགོ་བཙམས་ཏེ་ཐལ་མོ་སྦྱར་བར་བགྱི་སྟེ་སྐྱབས་སུ་ཉེ་བར་མཆིའོ། །ཞེས་པའི་བར་གྱིས་བསྟན་ཏོ།།

ཐོག་མར་བདག་མིང་འདི་ཞེས་བགྱི་བ་ཞེས་གསལ་བས་དེར་བཤགས་པ་པོ་རང་ཉིད་ཀྱི་མཚན་སྨོས་དགོས། དེ་ནས་སངས་རྒྱས་ལ་སྐྱབས་སུ་མཆིའོ། །ཞེས་སོགས་མཆོག་གསུམ་ལ་སྐྱབས་འགྲོ་བསྟན་པས་སྟོབས་བཞིའི་དང་པོ་རྟེན་གྱི་སྟོབས་བསྟན་ཏོ། །དེ་རྗེས་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་ཐུན་མོང་མ་ཡིན་པའི་ལྷ་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཤཱཀྱ་ཐུབ་པ་ནས་རི་དབང་གི་རྒྱལ་པོ་བར་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་སོ་ལྔའི་མཚན་རིམ་བཞིན་གསལ། དེ་དག་ལས་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དང་པོ་དང་། ཉེར་བཞི་དང་ཉེར་ལྔ་གཉིས་དང་། སོ་ལྔ་བཅས་བཞི་ལ་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཞེས་པའི་མཚན་བསྟོད་སྦྱར་ཡོད་ཅིང་ལྷག་མ་སོ་གཅིག་པོ་ལ་མཚན་བསྟོད་སྦྱར་མེད། འདི་སྐོར་རྒྱས་པ་འོག་ཏུ་ཞུ་རྒྱུ་ཡིན། མདོར་ན་དེ་ཡན་གྱི་ཕྱག་འཚལ་བའི་ཕུང་པོ་དང་སྟོབས་བཞི་ལས་གཉེན་པོ་ཀུན་ཏུ་སྤྱོད་པའི་སྟོབས་བསྟན་ཏོ།།

དེ་དག་ལ་སོགས་པ་ཞེས་སོགས་ཀྱིས་འཇིག་རྟེན་གྱི་ཁམས་ཐམས་ཅད་ན་འཚོ་ཞིང་བཞུགས་པའི་སངས་རྒྱས་ཐམས་ཅད་བདག་ལ་དགོངས་སུ་གསོལ་ཞེས་སོགས་ཡིད་ཀྱིས་དགོངས་ནས། སྐྱེ་བ་ཐོག་མ་མེད་པ་ནས་བསགས་པའི་སྡིག་པའི་ལས་རང་གིས་བྱས་པ་དང་གཞན་ལ་བྱེད་དུ་བཅུག་པ་དང་། གཞན་གྱིས་སྡིག་པའི་ལས་བྱས་པ་ལ་རྗེས་སུ་ཡི་རང་བ་བྱས་པ་ཅན་དང་། གཞན་ཡང་མཆོད་པ་དང་དགེ་འདུན་གྱི་ཆེད་དུ་ཕུལ་བའི་ཡོན་དང་རྫས་རྣམས་བདག་གིར་བྱས་པ་རྣམས་དང་། མཚམས་མེད་པ་ལྔ་དང་མི་དགེ་བ་བཅུ་སྤྱོད་པའི་ཉེས་པའི་སྡིག་པའི་འབྲས་བུས་མི་ཁོམ་པའི་གནས་བརྒྱད་དུ་ལྟུང་བའི་རྒྱུ་རྣམས་ཇི་ལྟ་བ་བཞིན་དུ་སངས་རྒྱས་རྣམས་ཀྱིས་མཁྱེན་པས་དེར་མཐོལ་བཤགས་བྱས་པ་བསྟན་པས་ཕུང་པོ་གསུམ་ལས་སྡིག

པ་བཤགས་པའི་ཕུང་པོ་དང་། སྟོབས་བཞི་ལས་རྣམ་པར་སུན་འབྱིན་པའི་སྟོབས་བསྟན་ཏོ། །

དེའི་འོག་ཏུ་སླན་ཆད་ཀྱང་གཅོད་ཅིང་སྡོམ་པར་བགྱི་ལགས་སོ། །ཞེས་པའི་ཚིག་རྐང་པ་གཅིག་གིས་གོང་ཞུས་མི་དགེ་བའི་ལས་དེ་རྣམས་སླན་ཆད་མི་བྱ་བའི་དམ་བཅའ་བསྟན་པས་སྟོབས་བཞི་ལས་ཉེས་པ་ལས་སླར་ལྡོག་པའི་སྟོབས་བསྟན་ཏོ།།

དེའི་འོག་ཏུ་བསྔོ་བའི་ཕུང་པོ་བསྟན་པ་ཡིན་པས་དེ་ནི་བསྔོ་བའི་སྒོ་ནས་དགེ་བ་རྣམས་གོང་སྤེལ་གཏོང་བ་བསྟན་པ་ཡིན་ཏེ། སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་བདག་ལ་དགོངས་སུ་གསོལ་ཞེས་སོགས་ཀྱིས་བསྟན། དེ་ཡང་སྦྱིན་པ་ཐ་ན་ཞེས་པས་ཕར་ཕྱིན་དང་པོ་སྦྱིན་པ་དང་། ཚུལ་ཁྲིམས་ཞེས་སོགས་ཕར་ཕྱིན་གཉིས་པ་ཚུལ་ཁྲིམས་དང་། ཚངས་པར་སྤྱོད་པ་ཞེས་སོགས་ཚངས་པའི་གནས་བྱམས་སོགས་ཚད་མེད་བཞི་ལ་སློབ་པའི་ཕར་ཕྱིན་གསུམ་པ་བཟོད་པ་དང་། སེམས་ཅན་ཞེས་སོགས་ཕར་ཕྱིན་བཞི་པ་གཞན་དོན་ལ་སྤྲོ་བའི་བརྩོན་འགྲུས་དང་། བྱང་ཆུབ་མཆོག་ཏུ་ཞེས་སོགས་རྫོགས་བྱང་དུ་སེམས་རྩེ་གཅིག་པའི་ཕར་ཕྱིན་ལྔ་པ་བསམ་གཏན་དང་། བླ་ན་མེད་པའི་ཞེས་སོགས་ཡེ་ཤེས་ཆོས་ཀྱི་སྐུའི་རྒྱུ་མཐུན་པའི་ཤེས་རབ་ཀྱི་ཕར་ཕྱིན་ཏེ་ཕྱིན་དྲུག་ཆ་ཚང་གི་སྒོ་ནས་བསྔོ་སྨོན་བྱེད་ཚུལ་བསྟན་ཏོ།། དེའི་འོག་ཏུ་བྱང་ཆུབ་མཆོག་ཏུ་སེམས་བསྐྱེད་དང་དགེ་རྩ་རྣམས་རྫོགས་བྱང་དུ་བསྔོ་སྨོན་བྱ་ཚུལ་ཇི་ལྟར་བསྟན་ཞེ་ན། འདས་པ་དང་མ་འོངས་པ་དང་ད་ལྟར་འཚོ་ཞིང་བཞུགས་པའི་སངས་རྒྱས་རྣམས་ཀྱིས་བསྔོ་བ་ལྟར་བགྱིའོ་ཞེས་པས་ཕུང་པོ་གསུམ་ལས་བསྔོ་བའི་ཕུང་པོ་བསྟན་ཏོ། །འདི་ནས་གཞུང་དངོས་གཞི་རྫོགས་ཟིན་ལ། འདིའི་འོག་ཏུ་གཞུང་ཡོངས་རྫོགས་ཀྱི་སྡོམ་བསྟན་པ་ནི། སྡིག་པ་ཐམས་ཅད་ནི་སོ་སོར་བཤགས་སོ། །ཞེས་སོགས་ཀྱིས་སྡིག་པ་བཤགས་པ་དང་། རྗེས་སུ་ཡི་རང་བ་དང་། གསོལ་བ་འདེབས་པ་དངོས་དང་། བསྐུལ་བ་ཤུགས་ཀྱིས་དང་བསྔོ་བ་

རྣམས་བསྟན། དེར་ཡན་ལག་བདུན་ལས་ལྔ་རྣམས་ཕྱོགས་གཅིག་ཏུ་བསྟན་ཏོ།།

དེ་ནས་མི་མཆོག་རྒྱལ་བ་ཞེས་སོགས་ཀྱིས་སྔར་ཡང་མཆོག་གསུམ་ལ་སྐྱབས་འགྲོ་སེམས་བསྐྱེད་བྱེད་ཚུལ་བསྟན་ཞིང་། དེར་སངས་རྒྱས་ལ་སྐྱབས་སུ་འགྲོ་བ་དངོས་སུ་བསྟན་ནས་ཆོས་དང་དགེ་འདུན་ལ་སྐྱབས་སུ་འགྲོ་ཚུལ་ཤུགས་ཀྱིས་བསྟན་ཏོ། །འདིས་ཡན་ལག་བདུན་ལས་དང་པོ་ཕྱག་འཚལ་བའི་ཡན་ལག་ཀྱང་བསྟན་ཏོ། །

དེ་ལྟར་གཞུང་ཡོངས་རྫོགས་ཀྱི་བསྟན་དོན་ཡོངས་སུ་བསྡུ་ན། ཐོག་མར་སྐྱབས་གསུམ་ལ་སྐྱབས་འགྲོ་བྱེད་ཚུལ་སྤྱིར་བསྟན། བྱེ་བྲག་ཏུ་ཐུན་མིན་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་ལྷ་སངས་རྒྱས་སོ་ལྔར་ཕྱག་འཚལ་ཚུལ་བསྟན་ཏོ། །དེ་ནས་རང་གི་ངོས་ནས་སྐྱེ་བ་ཐོག་མེད་ནས་བསགས་པའི་ཉེས་པ་ལྕི་ཡང་བགྱིས་པ་རྣམས་སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་ཀྱི་སྤྱན་སྔར་མཐོལ་བཤགས་བྱེད་ཚུལ་དང་། སླད་དེ་ལྟ་བུའི་ཉེས་པ་མི་བྱ་བའི་སྡོམ་པ་བླངས་ཚུལ་བསྟན། དེ་ནས་ཕྱིན་དྲུག་གི་སྒོ་ནས་དགེ་རྩ་རྣམས་རྫོགས་བྱང་དང་། འདས་མ་འོངས་སངས་རྒྱས་རྣམས་ལ་བསྔོ་བ་བྱེད་ཚུལ་བསྟན་ཏོ། །

དེ་ནས་གཞུང་ཡོངས་རྫོགས་ཀྱི་དོན་བསྡུས་པའི་སྡོམ་སྡིག་པ་བཤགས་པ་དང་། རྗེས་སུ་ཡི་རང་བ་དང་། གསོལ་བ་འདེབས་པ་དང་། བསྔོ་བ་དང་། དུས་གསུམ་གྱི་སངས་རྒྱས་རྣམས་ལ་སྐྱབས་སུ་འགྲོ་བ་རྣམས་བསྟན་ནས་གཞུང་རྫོགས་པར་བྱས་སོ། །

དེ་ནས་འཕགས་པ་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་རྫོགས་སོ་ཞེས་པའི་ནི་རང་རེ་བོད་པའི་ཞལ་འདོན་ཕྱག་དཔེ་ཕལ་མོ་ཆེའི་གཤམ་དུ་གསལ་ཡང་མདོ་ངོ་མར་དེ་ལྟར་མི་གསལ། སྡིག་བཤགས་འདི་ཕྱིས་སུ་བོད་ལ་གྲགས་ཆེ་བས་གཞུང་གི་བསྟན་དོན་ལ་དགོངས་ཏེ་ཕྱིས་སུ་བོད་པའི་མཁས་པ་ཁག་གིས་གསར་བསྣན་བྱས་པ་ཡིན་ནམ

སྐམ། མདོ་འདི་ཉེ་བར་འཁོར་གྱིས་ཞུས་པའི་མདོ་ལས་དུམ་བུ་ཉེ་བར་ཕྱུང་བ་ཞིག་ཡིན་ནོ། །དཀར་ཆག་ཁ་ཅིག་ཏུ་ཉེ་བར་འཁོར་གྱིས་ཞུས་པའི་མདོ་འདིའི་མཚན་ལ་ལྟུང་བ་བཤགས་པའི་མདོ་ཞེས་གསལ་བས་དཔྱད་པར་བྱ་བའི་གཞིར་འགྱུར།

ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོའི་བརྒྱུད་ལུགས།

མདོ་དང་བསྟན་བཅོས་རྣམས་ཁུངས་བཙན་པ་དང་ཚད་མར་གྱུར་པ་བསྒྲུབ་པར་བྱ་ཕྱིར་སྟོན་པ་སངས་རྒྱས་ནས་རང་གི་རྩ་བའི་བླ་མའི་བར་གྱི་གསན་རྒྱུན། ལུང་རྒྱུན། བཤད་རྒྱུན། འཁྲིད་རྒྱུན་སོགས་དུ་མ་ཞིག་དམ་པ་གོང་མ་རྣམས་ཀྱིས་བརྗོད་བྱང་དུ་བཀོད་ཡོད་པ་གང་དག་ལས་སྐབས་དོན་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོའི་གསན་རྒྱུན་གྱི་སྐོར་ལའང་དུ་མ་ཞིག་བཞུགས་པ་ལས། འདིར་རྒྱལ་བསྟན་ཡོངས་ཀྱི་བདག་པོ་ཞལ་འཚོ་ཞིང་བཞུགས་པའི་༸གོང་ས་སྐྱབས་མགོན་བསྟན་འཛིན་རྒྱ་མཚོ་མཆོག་གི་མདོ་འདིའི་གསན་རྒྱུན་ཇི་ལྟར་ཡིན་པའི་ཚུལ་བརྗོད་ན། དེ་ཡང་མགོན་པོ་གང་གིས་སྲིད་སྐྱོང་སྟག་བྲག་རྡོ་རྗེ་འཆང་ངག་དབང་གསུང་རབ་མཐུ་སྟོབས་བསྟན་པའི་རྒྱལ་མཚན་ལས་གསན་ཞིང་། དེ་ཉིད་ཀྱིས་ནི་ལྷོ་སྤྲུལ་ངག་དབང་མཁྱེན་རབ་བསྟན་པའི་དབང་ཕྱུག་ལས་གསན། དེ་ལྟ་བུའི་བརྒྱུད་པ་འདི་ཉིད་ཐུག་ས་ནི་༸རྒྱལ་མཆོག་བདུན་པ་སྐལ་བཟང་རྒྱ་མཚོ་མཆོག་གི་ཡིན་པས། དེ་ཉིད་ཀྱིས་མཛད་པའི་གསན་ཡིག་ལྟར་ན་མདོ་འདིའི་བརྒྱུད་ལུགས་མི་འདྲ་བ་འགའ་ཞིག་གསལ་བ་ལས། ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་བརྒྱུད་ལུགས་གཅིག་ནི། ཇི་སྐད་དུ།[1] "ཐུབ་དབང་། ཀུན་དགའ་བོ། ཀྲྀཥྞའི་གོས་ཅན། ཤ་ནའི་གོས་ཅན། ཉི་མ་གུང་པ། ཐམས་ཅད་མཁྱེན་པའི་བཤེས་གཉེན། ནཱ་གརྫུ་ན། འཕགས་པ་ལྷ། ཤྲཱི་མཉྫུ་ཀཱིརྟི། ཤཱནྟི་པ། རྡོ་རྗེ་གདན་པ་གསུམ་པ། ཁ་ཆེ་པཎ་ཆེན། དཔལ་ཆོས་བཟང་། དཔལ་པདྨ་

1 དེབ་གྲངས། ༡༡ གསན་ཡིག ཀ ཤོག ༣༡༧

ཅན། གཞོན་ནུ་ཡེ་ཤེས། ཤེས་རབ་སེངྒེ། བག་སྟོན་པ། མགོན་པོ་འབུ་སོགས་ཡིན་ནོ།།

ཡང་ན་ཁ་ཆེ་པཎ་ཆེན་ནས་ལྷོ་པ་ཀུན་མཁྱེན། ཀོ་ནག་པ། ཟས་གཙང་པ། གྲགས་སེང་པ། བསོད་རིན་པ། མཁན་གཞན་ཡེ། འབྱུང་ལྡན་འོད། བྱང་ཆུབ་སེང་གེ ཞང་ཀུན་འོད། བག་སྟོན་མན་འདྲ།

ཡང་ན་སངས་རྒྱས། བྱམས་པ། ཐོགས་མེད་སྐུ་མཆེད། སངས་རྒྱས་བསྐྱངས། ཡེ་ཤེས་ཞབས། མར་མེ་མཛད། དྲི་མེད་ཤྲས་པ། རཏྣཱཀར། ཆོས་འབྱུང་ཞི་བ། དེ་ལ་ཛྙཱནཤྲཱི་དང་པུཎྱཤྲཱི་གཉིས་ཀྱིས་གསན། གཉིས་ཀ་ལ་སུམཏི། སྨྲྀཏི། རོང་ཟོམ་ཆོས་བཟང་། ཏིང་འཛིན་བཟང་པོ། ཉང་རལ་པ། ལྷོ་པ་ཀུན་མཁྱེན། སྤང་ཁང་པ། གྲགས་སེང་། སྟག་སྟོན་པ། བློ་ཆེན་པ། བག་སྟོན་མན་འདྲ།

ཡང་ན་སངས་རྒྱས། འཇམ་དབྱངས། ཀླུ་སྒྲུབ། ཨཱརྻ་དེ་ཝ། འཇམ་དཔལ་གྲགས་པ། རིན་འབྱུང་ཞི་བ། སིའུ་རི་པ། ཨ་བྷ་ཡ། དགེ་འབྱུང་སྦས་པ། རྡོ་རྗེ་གདན་པ་གསུམ་པ། པུཎྱཤྲཱི། སྟེང་ལོ། སོ་ཀུན་མཁྱེན། སོ་འཛམ་གླིང་རྒྱན། ལྷོ་པ་ཀུན་མཁྱེན། ཀོ་ནག་པ། གྲགས་སེང་། ཞང་ཀུན་འབུམ། བག་ཁྲུར་པ། བག་སྟོན་པ་མན་འདྲ།

ཡང་ན་སངས་རྒྱས། འཇམ་དཔལ། ཡེ་ཤེས་ཞབས། མར་མེ་མཛད། སྨན་ཞབས། རྒྱལ་བས་བྱིན། རཏྣཤྲཱི། ཤཱནྟིཔཱ། ཀམལཤཱི། པུཎྱཤྲཱི། ཛཡཤྲཱི། ཤྲཱིཛཡརཀྵིཏ། ཐར་ལོ། བག་ཁྲུར། བག་སྟོན་མན་འདྲ།”

“མགོན་པོ་འབུམ། སྐུ་སྟོན་པ། མཁན་ཆེན་ཤེར་རྡོར་བ། ཆོས་སྐྱོ་བ་ཆོས་ཤེ། སློབ་དཔོན་བསོད་ནམས་སེང་གེ ཚལ་གྲགས་དན་པ། རིན་ཆེན་གྲགས་པ། བཀའ་འགྱུར་བ་ཤཱཀྱ་རྒྱལ་མཚན། རྡོ་རྗེ་གདན་པ་ཀུན་དགའ་རྣམ་

རྒྱལ། ཆེན་པོ་བློ་གྲོས་རྒྱལ་མཚན། འབུམ་རམས་པ་རིན་ཆེན་ཆོས་དབང་། རབ་འབྱམས་ཚུལ་ཁྲིམས་དབང་ཕྱུག རྗེ་ཆོས་རྒྱལ་དོན་གྲུབ། སྤྲུལ་སྐུ་དཀོན་མཆོག་འབངས། སེམས་དཔའ་གྲགས་པ་དོན་གྲུབ། བླ་མ་ཚོགས་གཉིས་དཔལ་གྲུབ། རྣ་ཚ་སྤྲུལ་སྐུ་འཇིགས་རྟེན་དབང་ཕྱུག རྗེ་བློ་གྲོས་མཆོག་གི་རྡོ་རྗེ། མགོན་པོ་བསོད་ནམས་མཆོག་ལྡན། ཡོངས་འཛིན་བློ་བཟང་འཕྲིན་ལས། བཀའ་ཆེན་ངག་དབང་རབ་བརྟན། བཀའ་འགྱུར་བ་དགེ་སློང་ངག་དབང་རྒྱལ་པོ། ཁྱབ་བདག་བཀའ་འགྱུར་བ་ཆེན་པོ་ཕུན་ཚོགས་བྱམས་པ། ཁྲི་ཆེན་ངག་དབང་མཆོག་ལྡན། རྒྱལ་མཆོག་སྐལ་བཟང་རྒྱ་མཚོ།" ཞེས་དང་། དེ་མན་ཆད་ཀྱང་དེ་ཉིད་ལས།[1] "བྲག་རི་རྒྱ་མཚོ་མཐའ་ཡས། སྤྱངས་ལུང་ངག་དབང་ཆོས་འཛིན། ཡོངས་འཛིན་ཡེ་ཤེས་རྒྱ་མཚོ། རྒྱུད་ཆེན་ཡེ་ཤེས་གོང་འཕེལ། རྗེ་འཇམ་དབྱངས་འཕྲིན་ལས། ལྷ་སྤྲུལ་ངག་དབང་མཁྱེན་རབ་བསྟན་པའི་དབང་ཕྱུག སྲིད་སྐྱོང་སྟག་བྲག་རྡོ་རྗེ་འཆང་ངག་དབང་གསུང་རབ་མཐུ་སྟོབས་བསྟན་པའི་རྒྱལ་མཚན།"[2] ཞེས་གསལ་ཞིང་དེ་ནས། ༸གོང་ས་སྐུ་ཕྲེང་བཅུ་བཞི་པ་བསྟན་འཛིན་རྒྱ་མཚོ་མཆོག་ལ་བརྒྱུད་པ་ཡིན་ནོ།།

ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་ལེགས་སྦྱར་མ་དཔེ་དང་བོད་འགྱུར་ལ་དཔྱད་པ།

འཕགས་པ་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་བྱང་ཆུབ་སེམས་པའི་ལྟུང་བ་བཤགས་པའི་མདོ་འདི་ལ་ཡོངས་གྲགས་འགྱུར་གྱི་ཆ་ནས་ནི་འགྱུར་སྔ་ཕྱི་གཉིས་ཙམ་བྱུང་ཞིང་། སྔ་འགྱུར་དེ་ཡང་འཕགས་པ་ཉེ་བར་འཁོར་གྱིས་ཞུས་པའི་མདོ་ཞེས་པ་འདི་ཡིན་ལ། བསྟན་པ་སྔ་དར་གྱི་དུས་སུ་ལོ་ཙྪ་བ་ཆེན་པོ་ཡེ་ཤེས་སྡེས་བསྒྱུར། ཕྱི་མ་ནི་བསྟན་

1 དེབ་གྲངས། ༡༡ གསན་ཡིག ཀ ཤོག ༣༡༧

2 གསན་ཡིག པོད། ཛ ཤོག ༡༩༦

པ་ཕྱི་དར་གྱི་ལོ་ཙྪ་བ་ཆེན་པོ་བློ་ལྡན་ཤེས་རབ་ཀྱིས་བསྒྱུར་བའི་བསླབ་པ་ཀུན་ལས་བཏུས་པ་ཡི་ཤེས་སྦྱོར་བསྒྱུར་པ་ལ་དག་ཞུས་མཛད་པ་དེ་ཡིན། དེར་ནི་སྡིག་པ་བཤགས་པའི་ལེའུར་ཉེ་བར་འཁོར་གྱིས་ཞུས་པའི་མདོའི་ནང་བཞུགས་ཕུང་པོ་གསུམ་པ་ལྟུང་བ་བཤགས་པ་རྒྱལ་སྲས་ཆེན་པོ་ཞི་བ་ལྷས་ལུང་དྲངས་པར་མཛད་ཅིང་། འགྱུར་དེ་གཉིས་བསྡུར་སྐབས་ཚིག་སྒྲ་འགའ་ཤས་མི་མཐུན་པ་ཙམ་ལས་འགྱུར་ཕལ་ཆེ་བ་གཅིག་ལྟ་བུར་སྣང་། འོན་ཀྱང་ད་ལྟ་རང་རེ་བོད་མི་རྣམས་ཁ་ཧོན་འདོན་བཞིན་པའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་མདོ་འདི་ནི་བསླབ་བཏུས་དང་ཉེ་བར་འཁོར་གྱིས་ཞུས་པའི་མདོ་གཉིས་ཀྱི་འགྱུར་ལ་བརྟེན་པ་ཡིན་པ་ལ། དུས་ཕྱི་བོད་ཀྱི་མཁས་པ་གང་ཞིག་གིས་ཕྲན་བུ་བསྒྱུར་བཅོས་དང་གསར་སྣོན་བྱས་པ་འདྲ་བ་ཞིག་སྟེ་མདོ་འདི་ཉིད་བསླབ་བཏུས་ནང་བཞུགས་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་རྒྱ་དཔེ་དང་བསྡུར་སྐབས་ཕན་ཚུལ་མི་མཐུན་པ་དུ་མ་ཞིག་སྣང་བ་རྣམས་ཀྱང་། མདོ་འགྱུར་དེ་ཉིད་དུ་བསམས་ནས་འདོན་རྒྱུང་བྱས་པ་དེ་དག་ཞིབ་ཕྲ་ཕན་ཚུན་མཚུངས་བསྡུར་བྱས་ནས་མི་མཐུན་པ་རྣམས་རེ་རེ་བཞིན་བརྗོད་ན།

དེ་ཡང་ཐོག་མར་ཁ་ཧོན་གྱི་ཕྱག་དཔེར**ན་མོ་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་ལྟུང་བ་བཤགས་པ་**ཞེས་བྱུང་བ་དེ་ཉིད། ཉེ་བར་འཁོར་གྱིས་ཞུས་པའི་མདོ་དང་བསླབ་བཏུས་གཉིས་ཀའི་ནང་མ་བྱུང་ཞིང་། དེའི་ནང་ནས་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་ལྟུང་བ་བཤགས་པ་ཞེས་པ་དེ་ཉིད་ལེགས་སྦྱར་མ་དཔེ་དེའི་ནང་དུའང་མི་གསལ་ཞིང་། ཉེ་བར་འཁོར་གྱིས་ཞུས་པའི་མདོའི་ནང་དུ་ནི། **དེ་ལ་བཤགས་པ་འདི་ཡིན་ཏེ་** ཞེས་དང་། བསླབ་བཏུས་སུ། **དེ་ལ་ལྟུང་བ་བཤགས་པ་ནི་འདི་ལྟ་སྟེ་**ཞེས་གསལ། །དེ་མཚུངས་ཁ་ཧོན་གྱི་ཕྱག་དཔེར་**དུས་རྟག་ཏུ་བླ་མ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །**ཞེས་གསལ་བའང་དེ་གསུམ་གའི་ནང་མི་གསལ་ཞིང་། **སྟོན་པ་བཅོམ་ལྡན་འདས་**ཞེས་པའི་མཚན་བསྙོད་དེ་ཡང་དེ་གསུམ་གའི་ནང་དུ་མཇལ་རྒྱུ་མེད།

གཞན་ཡང་དགེ་ལྡན་པ་རྣམས་ཀྱི་ཁ་ཏོན་གླེགས་བམ་རྣམས་སུ་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་
སོ་ལྔ་ཚང་མའི་མཚན་གྱི་དབུར་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཞེས་པའི་མཚན་སྦྱར་སྲོལ་
ཡོད་ཀྱང་། གོང་ཞུས་རྒྱ་དཔེ་དང་བོད་འགྱུར་གཉིས་དང་བོད་ཀྱི་ཆོས་བརྒྱུད་ཆེན་
པོ་ས་དཀར་རྙིང་གསུམ་གྱི་ཁ་ཏོན་གླེགས་བམ་རྣམས་སུ་དེ་ལྟར་མཇལ་རྒྱུ་མེད་ཅིང་།
ལྷག་པར་བཀའ་རྙིང་ས་གསུམ་གྱི་དམ་པ་རྣམས་ཀྱིས་ནི་མདོ་ཇི་ལྟ་བ་བཞིན་འདོན་
པ་ཁོ་ན་བྱེད་སྐབས་ཆེ་བར་དགོངས་པར་སེམས་སོ།།

དེ་ལ་ལེགས་སྦྱར་གྱི་མ་དཔེ་དང་དེའི་འགྲེལ་པ་ཁག་བོད་འགྱུར་བྱེད་སྐབས་ལ
ཅུང་ཟད་བསམ་དགོས་པ་ཞིག་སྣང་སྟེ། ཐོག་མར་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དྲུག་པ་
དཔལ་དགྱེས་ཞེས་པའི་མཚན་དེ་ལེགས་སྦྱར་མ་དཔེར་**ཤྲཱི་ནནྡ་**སྟེ་དཔའ་དགྱེས་ཞེས
པའི་ཚིག་ཏུ་བསྒྱུར་དགོས་པ་ཡོད་ཀྱང་། བོད་དཔེ་ཁག་དང་ཀླུ་སྒྲུབ་དང་ཛི་ཏཱ་རི
གཉིས་ཀའི་འགྲེལ་པར་ཡང་དཔལ་དགྱེས་ཞེས་བསྒྱུར་ཡོད། ཡང་དེ་བཞིན་གཤེགས་
པ་བདུན་པ་**རིན་ཆེན་མེ་**ཞེས་པའི་མཚན་དེ་ལེགས་སྦྱར་མ་དཔེར་**རཏྣཱགྣི**་གསལ་
བ་དེ་ཉིད་དོན་ལ་**རིན་ཆེན་དཔལ་**ཞེས་ཡིན་ཡང་བོད་དཔེ་ཁག་དང་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱི
འགྲེལ་པ་རྣམས་སུ་**རིན་ཆེན་མེ་**རང་བསྒྱུར་བ་དང་། ཡང་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་
བཅུ་གཉིས་པ་ལ་**དཔལ་སྦྱིན་**ཞེས་བོད་ཀྱི་ཁ་ཏོན་གླེགས་བམ་ཕལ་མོ་ཆེར་གསལ་
ཡང་། ལེགས་སྦྱར་མ་དཔེར་**ཤྲཱིརདཏྟ**ཞེས་གསལ་བས་དོན་ལ་དཔའ་བྱིན་རང་
ཡིན་ནོ། འདི་དང་མཚུངས་པར་ཉེ་འཁོར་མདོ་དང་། བསླབ་བཏུས། གཞན་
ཡང་བོད་འགྱུར་དཔར་མ་ཁ་ཅིག་ལ་དཔའ་བྱིན་ཉིད་སྒྱུར་ཡོད་པ་མ་ཟད་འགྲེལ་པ་
ཁག་ཏུའང་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ**དཔའ་སྦྱིན་**ཉིད་རང་ལ་ཚིག་འགྲེལ་བཏབ་པ
མཇལ་རྒྱུ་ཡོད།

ད་ནི་དཀྲུས་ལ་འཇུག་པར་བྱ་སྟེ། **དེ་དག་ལ་སོགས་པ་ཕྱོགས་བཅུའི་**
འཇིག་རྟེན་ཞེས་ཉེ་འཁོར་མདོར་གསལ་ཡང་ལེགས་སྦྱར་མ་དཔེ་དང་བསླབ

བཏུས་ཀྱི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་བོད་འགྱུར་དུ། **དེ་དག་ལ་སོགས་པ་འཇིག་རྟེན་གྱི་ཁམས་ཐམས་ཅད་**ཞེས་དང་། ཀླུ་སྒྲུབ་དང་ཇི་ཏཱ་རིའི་འགྲེལ་པར་ཕྱོགས་བཞིའི་ཞེས་གསལ་ཞིང་། འོན་ཀྱང་དེའི་ཚིག་འགྲེལ་བྱས་སྐབས་ཤར་ལ་སོགས་པའི་ཕྱོགས་བཅུའི་ངོ་སྤྲོད་བྱས་པ་ཡང་སྣང་། ཡང་ **ཕྱོགས་བཞིའི་དགེ་འདུན་གྱི་དཀོར་**ཞེས་པའི་ཐད་དུ་ཉེ་འཁོར་མདོ་དང་བསླབ་བཏུས་བོད་འགྱུར་དུ་དེ་ག་རང་གསལ་ཡང་། ཇི་ཏཱ་རིའི་འགྲེལ་པ་དང་བོད་དཔེ་ཁ་དོན་གླེགས་བམ་ཁག་**ཕྱོགས་བཅུའི་དགེ་འདུན་གྱི་དཀོར་**ཞེས་པ་སྣང་ཞིང་། ལེགས་སྦྱར་མ་དཔེ་ཉིད་ནང་དུ་ནི་ཕྱོགས་བཞི་དང་བཅུ་ཡི་གསལ་ཁ་མི་སྣང་ངོ་།།

དེ་ནས་**ཡི་དྭགས་ཀྱི་ཡུལ་དུ་མཆི་བའམ་** ཞེས་ཉེ་བར་འཁོར་གྱིས་ཞུས་པའི་མདོར་གསལ་ཡང་བསླབ་བཏུས་ཀྱི་བོད་འགྱུར་དུ་ནི་**གཤིན་རྗེའི་ཡུལ་དུ་མཆི་བའམ་**ཞེས་གསལ་ཞིང་། ལེགས་སྦྱར་མ་དཔེར་ཡང་ **ཡམལཽཀཡཾ་** ཞེས་ཕྱི་མ་ལྟར་གསལ། འོན་ཀྱང་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱི་འགྲེལ་པར་ཡི་དྭགས་ཀྱི་ཡུལ་ཞེས་པར་ཚིག་འགྲེལ་མཛད་འདུག་ཅིང་། ཡང་ཇོ་བོ་རྗེའི་འགྲེལ་པར་དེའི་ཐད་དུ་མི་ཁོམ་པ་བརྒྱད་ཀྱི་གྲངས་འདྲེན་གནང་བའི་ནང་ཡི་དྭགས་ཞེས་པའི་ཚིག་བྱུང་ངོ་། །ཉེ་འཁོར་གྱིས་ཞུས་པའི་མདོར་**ཡུལ་མཐའ་འཁོབ་ཏུ་སྐྱེ་བའམ།** **ཀླ་ཀློར་སྐྱེ་བའམ་**ཞེས་པའི་ཐད་བསླབ་བཏུས་ཀྱི་བོད་འགྱུར་དུ**ཡུལ་མཐའ་འཁོབ་ཀྱི་ཀླ་ཀློ་རྣམས་སུ་སྐྱེ་བར་འགྱུར་བའམ་**ཞེས་གསལ་ཞིང་། ལེགས་སྦྱར་དུའང་ **པྲཏྱནྟཛནཔདེཥུ།** **མླེཙྪེཥུ།** ཞེས་བྱུང་བ་དང་། ཉེ་འཁོར་མདོར་**མཐོལ་ལོ་འཆགས་སོ་**ཞེས་པ་ལ་བསླབ་བཏུས་ཀྱི་བོད་འགྱུར་དུ**སོ་སོར་བཤགས་སོ།། མཐོལ་ལོ་**ཞེས་གསལ་བས། ལེགས་སྦྱར་མ་དཔེ་དང་བསྟུར་ན་ **པྲཏིདེཤཡཱམི་** ཞེས་པའི་ཚིག་དོན་ཇི་ལྟ་བ་བཞིན་འགྱུར་འདུག་པ་དེ་ཉིད་བསྒྱུར་ལེགས་པ་སྣང་། དེར་**མི་འཆབ་བོ།** **།མི་སྦེད་དོ།** །ཞེས་པ་གཉིས་ཀྱི་ཚིག་དོན་གཅིག་ཡིན་

ཡང་། ཚིག་དེ་གཉིས་ཀྱི་སྐོར་ལ་བོད་འགྱུར་གྱི་དཔར་མ་འགའ་ཞིག་དང་། ལྷ་ས་བཀའ་འགྱུར་གྱི་དཔར་མ་དང་ལ་དྭཱ་ཏོག་གི་བཀའ་འགྱུར་ལག་བྲིས་ཁག་གཉིས་དང་། ཁ་དོན་གླེགས་བམ་ཁག་ཏུ**མི་སྲིད་དོ་**ཞེས་པའི་ཚིག་འདི་མི་སྣང་། འོན་ཀྱང་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱི་འགྲེལ་པར་ཉེས་པ་དེ་ཁས་ལེན་པས་ཞེ་ལ་མི་འཆབ་པའོ། །མི་སྲིད་པ་ནི་དངོས་སུ་སྟེ། ཞེས་ཞེ་ལ་ཞེས་པས་ཡིད་ནས་ཀྱང་སྲིད་ཐབས་མི་བྱེད་པ་ལ་མི་འཆབ་པོ་དང་། ཅིག་ཤོས་མི་སྲིད་པ་ནི་དངོས་སུ་ནས་ཀྱང་སྲིད་ཐབས་ལ་མི་བརྩོན་པ་སྟེ་མི་བྱེད་པས་ན་མི་སྲིད་པ་ཞེས་པའི་དོན་དུ་འཆད་པར་སྣང་། འོན་ཀྱང་ལེགས་སྦྱར་མ་དཔེའི་ནང་དུ་ནི**པྲཏིཙཚདཡཱམི།** ཞེས་གསལ་བ་སྟེ**མི་འཆབ་པོ་དང་མི་སྲིད་དོ་**ཞེས་པའི་ཚིག་གཉིས་ཀའི་སྐད་དོད་དེ་གཉིས་ཡིན་པར་སྣང་ངོ་། །**གཅིག་ཏུ་བསྡུས་ཤིང་བསྡམས་ཏེ་བསྒོམས་ནས་**ཞེས་པའི་སྐབས་ཀྱི་བསྒོམས་ནས་ཞེས་པར་ལེགས་སྦྱར་གྱི་མ་དཔེར་**ཨབྷིསཾཀྵིཔྱ**སྟེ་**མངོན་པར་བསྡུས་ནས་**ཞེས་གསལ། དེ་བཞིན་བསླབ་བཏུས་ཀྱི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྱུར་དུ་མངོན་པར་ཞེས་པ་དེ་གསལ་ཀྱང་ཉེ་འཁོར་བོད་འགྱུར་ནང་དེ་ཉིད་མི་གསལ། ལེགས་སྦྱར་མ་དཔེ་ལ་**ཨནུཏྟརཱཡཱཾ** **སམྱཀྶཾབོ་དྷཽ།** **ཨུཏྟརོཏྟརཱ** **པརིཎཱམཡཱ**སྟེ་**ཨནུཏྟརཱཡཱཾ་**ནི་བླ་ན་མེད་པ། **སམྱཀྶཾབོདྷཽ་**ནི་ཡང་དག་པར་རྫོགས་པའི་བྱང་ཆུབ། **ཨུཏྟརོཏྟརཱཡཱ་**ནི་གོང་མའི་ཡང་གོང་མཐའམ་བླ་མའི་ཡང་བླ་མ། **པརིཎཱམཡཱ་**ནི་ཡོངས་སུ་བསྔོ་བར་བགྱིའོ་ཞེས་པའི་ཚིག་འགྱུར་ཡིན། རང་རེའི་ཁ་དོན་གླེགས་བམ་ཁག་ཏུ་ནི། **བླ་ན་མ་མཆིས་པ་དང་། གོང་ན་མ་མཆིས་པ་ཞེས་དང་།** **བླ་མའི་ཡང་བླ་མར་གོང་མའི་ཡང་གོང་མ།** ཞེས་ཚིག་ལྷུག་འགྱུར་དང་། གཞན་ཡང་ཡོངས་སུ་བསྔོ་བས་ཞེས་པའང་། ཡོངས་སུ་བསྔོ་བར་བགྱིའོ་ཞེས་པ་ཉིད་ལས་སྐད་དོད་སོ་སོར་སྣང་རྒྱུ་མེད། ལཱ་སྦྱར་མ་དཔེར**ཡོངས་སུ་བསྔོ་བར་བགྱིའོ་**ཞེས་པ་འདྲ་བ་ཞིག་འདུག་གོ །དེ་

བཞིན་དུ་**སྐྱེ་བ་ཐོག་དང་ཐ་མ་མ་མཆིས་པ་** ཞེས་པའི་ཐད་བསླབ་བཏུས་ཀྱི་ལུང་བཤགས་ཀྱི་འགྱུར་ལ། **སྐྱེ་བ་གཞན་དང་ཐོག་མ་མ་མཆིས་པ་**ཞེས་གསལ་བ་དེ་ཉིད་ལེགས་སྦྱར་གྱི་སྐད་དོད་དང་མཐུན་ཤས་ཆེ་བ་སྣང་ངོ་། །སྡིག་པ་ཐམས་ཅད་སོ་སོར་བཤགས་སོ། །ཞེས་པ་བསླབ་བཏུས་ཀྱི་ལེགས་སྦྱར་གྱི་ལུང་བཤགས་སུ་མི་གསལ་ཡང་། ཉེ་བར་འཁོར་གྱིས་ཞུས་པའི་མདོ་དང་བསླབ་བཏུས་ཀྱི་བོད་འགྱུར་གཉིས་ཀའི་ནང་གསལ་སྟབས་ལེགས་སྦྱར་གྱི་མ་དཔེ་ངོ་མའི་ནང་ལག་བཤུས་བྱེད་སྐབས་ཆད་པའམ་པར་བཏབ་སྐབས་ལུས་པ་ཅི་ཡིན་མི་ཤེས། ཡང་ལེགས་སྦྱར་མ་དཔེར་**པྲཏིདེཤནཱ** ཞེས་པའི་པྲཏི་ནི་སོ་སོར་དང་། **དེཤནཱ** ནི་བཤགས་པ་ཡིན་པས་ཉེ་བར་འཁོར་གྱིས་ཞུས་པའི་མདོར་ **སྡིག་པ་ཐམས་ཅད་འཆགས་སོ་** ཞེས་གསལ་བ་དང་། བསླབ་བཏུས་སུ་སྡིག་པ་ཐམས་ཅད་སོ་སོར་བཤགས་སོ་ཞེས་གསལ་བ་གཉིས་ལེགས་སྦྱར་དང་མཚུངས་བསྒྱུར་བྱེད་སྐབས་བསླབ་བཏུས་ཀྱི་འགྱུར་དེ་ཉིད་ཕྲན་བུ་ལེགས་པ་ལྟ་བུ་མངོན།།

སངས་རྒྱས་ཐམས་ཅད་ལ་གསོལ་བ་འདེབས་སོ། །ཞེས་ཉེ་བར་འཁོར་གྱིས་ཞུས་པའི་མདོ་དང་བསླབ་བཏུས་ཀྱི་བོད་འགྱུར་གཉིས་ཀར་འབྱུང་ཡང་ཁ་ཏོན་ཕྱག་དཔེ་ཁག་དང་བོད་འགྱུར་པར་མ་ཁ་ཅིག་ནང་སངས་རྒྱས་ཐམས་ཅད་ལ་བསྐུལ་ཞིང་གསོལ་བ་འདེབས་སོ། །ཞེས་གསལ་བས་ལེགས་སྦྱར་མ་དཔེ་དང་མི་མཐུན་པ་མ་ཟད་བོད་འགྱུར་རྣམས་སུའང་མི་སྣང་ངོ་།

ཡང་**བདག་གི་ཡེ་ཤེས་བླ་ན་མེད་པའི་མཆོག་ཏུ་གྱུར་ཅིག་** ཅེས་པ་འདི་ལ་འགྱུར་སྔ་ཕྱི་གཉིས་སྣང་རྒྱུ་འདུག་པ་ལས་གོང་ཞུས་ནི་ཉེ་བར་འཁོར་གྱིས་ཞུས་པའི་མདོའི་འགྱུར་ཡིན་ཞིང་། བསླབ་བཏུས་ཀྱི་བོད་འགྱུར་དུ། **བདག་བླ་ན་མེད་པའི་ཡེ་ཤེས་སུ་གྱུར་ཅིག** ཅེས་གསལ་བ་དེ་ཉིད་ལེགས་སྦྱར་མ་དཔེར་**བྷཝཏུ།** **མེ།** **ཛྙཱནམནུཏྟརམ་** ཞེས་པས་བདག་ལ་བླ་ན་མེད་པའི་ཡེ་ཤེས་

ཐོབ་པར་གྱུར་ཅིག་གམ་སྐྱེས་པར་གྱུར་ཅིག་ལྟ་བུ་ཡིན་པས། དེ་ཉིད་སྐབས་ཀྱི་**བྷཝ་ཏུ**་ཞེས་པ་གྱུར་ཅིག་དང་། **མེ།** ཞེས་པ་བདག་དང་། **ཛྙཱ་ནམ**་ཞེས་པ་ཡེ་ཤེས་སུ་དང་། **ཨནུཏྟ་རམ**་ཞེས་པ་བླ་ན་མེད་པའི་ཚིག་དོན་ཡིན་ཡང་འགྱུར་སྔ་ཕྱིའི་དོན་ལ་ཁྱད་པར་ཆེ་བ་ཞིག་སྣང་སྟེ་སྔ་མས་བདག་གི་ཡེ་ཤེས་དེ་བླ་ན་མེད་པའི་མཆོག་ཏུ་འགྱུར་བ་བསྔོ་བ་དང་། ཕྱི་མས་བདག་བླ་ན་མེད་པའི་ཡེ་ཤེས་སུ་གྱུར་བ་ལ་བསྔོ་བས་ལེགས་སྦྱར་གྱི་སྐད་ལྟར་ན་འགྱུར་སྔ་ཕྱི་གཉིས་ལས་ཕྱི་མ་བསླབ་བཏུས་ཀྱི་འགྱུར་ཙུང་ཟད་ལེགས་པ་སྣང་ངོ་།།

འོན་ཀྱང་གོང་དང་མི་འདྲ་བ་ཁ་དོན་གླེགས་བམ་ཁག་ཏུ། **བདག་བླ་ན་མེད་པའི་ཡེ་ཤེས་ཀྱི་མཆོག་དམ་པ་ཐོབ་པར་གྱུར་ཅིག** ཅེས་མཆོག་དམ་པའི་ཚིག་དེ་བསླབ་བཏུས་དང་ཉེར་འཁོར་མདོ་གཉིས་ཀའི་ནང་མི་གསལ། ལྷ་སྦྱིན་གྱི་འགྲེལ་པར་ཡང་ཚིག་འགྲེལ་སྣང་རྒྱུ་མེད་ཀྱང་ཇི་ཏཱ་རིའི་འགྲེལ་པར་དེ་ཉིད་བཀོད་པ་སྣང་ངོ་།།

དེས་ན་རྣམ་དཔྱོད་ཀྱི་རྒྱལ་མཆོག་ཏུ་གྱུར་པ་རྣམས་ཀྱིས་སླད་མར་ལྟུང་བཤགས་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་འདི་ཁ་དོན་བྱེད་སྐབས་གོང་གསལ་དེ་དག་ལས་རང་གང་ལ་མོས་པ་ཆེ་ཞིང་། བློ་ལ་གསལ་བདེ་བ་དང་། བྱིན་རླབས་ཆེ་བ་དེ་ཉིད་ཁ་དོན་དུ་བྱེད་ན་ལེགས་པ་སྣང་ངོ་། །

ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་འདི་ལ་འདོན་སྒྲོལ་མི་འདྲ་བ་ཇི་ཡོད།

བོད་གངས་ཅན་གྱི་ཡུལ་དུ་ས་ཕྱོགས་པ་ཉེ་བར་འཁོར་གྱིས་ཞུས་པའི་མདོའི་དུམ་བུ་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་ལྟུང་བ་བཤགས་པ་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་ཞེས་གྲགས་པ་འདི་ལ་བོད་ཀྱི་བླ་མ་མཁས་པ་དག་གིས་འདོན་སྒྲོལ་མི་འདྲ་བ་འགའ་ཞིག་འབྱུང་བ་སྟེ། དེ་ཡང་། ཐོག་མའི་སྐྱབས་འགྲོ་ནས་མཇུག་རྫོགས་ཀྱི་བར་ཚར་རེ་བརྗོད་དེ་འདོན་སྒྲོལ་ཞིག་དང་། འགའ་ཞིག་གིས་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཤཱཀྱ་ཐུབ་

པ་ནས་རི་དབང་གི་རྒྱལ་པོའི་བར་ཚར་རེ་བརྗོས་ཏེ་མཚན་རྣམས་འབའ་ཞིག་ལྷབ་སྒྲོར་དུ་འདོན་སྲོལ་ཞིག་དང་། ཡང་འགས། ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་ལྷ་སོ་ལྔའི་མཚན་རེ་རེ་ནས་ཚར་ཉེར་ལྔ་རེ་གྲངས་གསོག་དེ་འདོན་སྲོལ་བཅས་ཡོད་པ་དེ་དག་ལས་འདོན་སྲོལ་ཕྱི་མ་གཉིས་ཀྱི་ཚུལ་འདི་ཅུང་ཟད་བཟང་བ་ཡིན་པ་བྲིས། དམིགས་པ་གསལ་བདེ་བ་དང་། སོ་སོའི་ཕན་ཡོན་འཆར་བདེ་བ་སོགས་དགོས་པ་ཁྱད་པར་བ་ཡོད་པ་སོགས་ཀྱིས་ལམ་རིམ་རྣམ་གྲོལ་ལག་བཅངས་སུ་སྐྱབས་རྗེ་ཕྲི་བྱང་རིན་པོ་ཆེས་གསུངས་ཤིང་།[1] །དེ་དག་ལ་སོགས་པ་མན་ཆད་ཚར་གཅིག་སྟོན་ནས་མཇུག་བསྡུ་དགོས་པ་ཡང་འདི་གཉིས་ཀ་ལ་འདྲ་བར་གསུངས་སོ། །

དེ་ལྟ་བུའི་སྒོ་ནས་འདོན་པ་དེ་ལའང་སངས་རྒྱས་སོ་ལྔ་པོ་ཚང་མའི་མཚན་གྱི་གོང་དུ་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་སྦྱར་ནས་འདོན་པ་ཞིག་དང་། མ་སྦྱར་ནས་འདོན་པ་ཁག་གཉིས་སྣེ། ཐུ་མ་ནི་རྗེ་བདག་ཉིད་ཆེན་པོ་ཙོང་ཁ་པ་ནས་ཡིན་ལ། ཕྱི་མ་ནི་མདོ་ཇི་ལྟ་བ་བཞིན་དགོས་པར་འདོད་པ་དེ་ཡིན་ནོ། །དེ་ཡང་ཐུ་མ་དེའི་བྱུང་བ་ནི་རྗེ་རིན་པོ་ཆེ་འོལ་ཁ་ཆོས་ལུང་དུ་ཡན་ལག་བདུན་པའི་སྒོ་ནས་བསགས་སྦྱོང་མཛད་སྐབས་མདོ་འདི་ཇི་ལྟ་བ་བཞིན་གདོན་པར་མཛད་པ་ན་དེའི་ཚེ་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་སོ་ལྔ་པོ་ཐམས་ཅད་དངོས་སུ་ཞལ་གཟིགས་བྱུང་ཡང་ཕལ་ཆེ་བ་དབུ་མེད་པ་མཇལ་བ་མཚན་ཀྱང་སྟོན་པའི་ཉེས་པར་དགོངས་ནས་སླར་ཡང་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་སོ་ལྔ་པོ་རེ་རེའི་མཚན་གྱི་ཐོག་མར་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཞེས་པའི་ཚེ་བསྟོད་རེ་སྦྱར་ནས་ཕྱག་ཕུལ་བ་ན། དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཀླུ་དབང་གི་རྒྱལ་པོ་ཐོག་མར་ཞལ་གཟིགས། དེ་ནས་རིམ་བཞིན་སངས་རྒྱས་ལྷག་མ་རྣམས་ཀྱི་སྐུ་མདོག་ཕྱག་མཚན་དང་བཅས་པ་རེ་རེ་བཞིན་ཞལ་གཟིགས་པ་རྟོགས་ལྡན་འཇམ་དཔལ་རྒྱ་མཚོས་གསུངས་ཞེས་ལྷོ

---

1 ལམ་རིམ་རྣམ་གྲོལ་ལག་བཅངས། ཤོག ༡༧༥ མོན་རྩ་དགའ་ཤར་ནས་པར་བསྐྲུན། ༡༩༩༨

ཐྲག་གྲུབ་ཆེན་གྱིས་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པར་གསུངས་སོ།[1] །འདི་ནས་བཟུང་འདོན་སྲོལ་འདི་དར་བར་གསལ་ལོ། །རྗེའི་རྣམ་ཐར་ཆེན་མོ་ལས་ཀྱང་།[2] "དེའི་ཚེ་ལྟུང་བཤགས་དང་བརྒྱ་ཕྱག་སྦྲེལ་བ་མཛད་རེས་བཞིན་སངས་རྒྱས་སུམ་ཅུ་སོ་ལྔའི་སྐུའི་སྣང་བ་དངོས་སུ་ནར་མར་བྱུང་།" ཞེས་དང་ཡང་། [3] "དུས་དེར་སངས་རྒྱས་སུམ་བཅུ་སོ་ལྔའི་སྐུ་འབྲི་བར་བརྩམས་པའི་ཚེ། ལྷ་བཟོ་བོ་རྣམས་ཀྱིས་སྐུ་མདོག་ཕྱག་རྒྱ་སོགས་ཇི་ལྟར་འབྲི་བར་མ་ཤེས་ནས་རྗེ་ཉིད་ལ་ཞུས་པར། གསོལ་བདབ་མཛད་པས་ཇི་ལྟར་འབྲི་བའི་གོ་རིམ་དང་མཐུན་པར་རྒྱལ་བ་སུམ་ཅུ་སོ་ལྔའི་སྐུ་རིམ་གྱིས་གཟིགས་སྣང་བྱུང་བ་བཞིན་སྐུ་མདོག་ཕྱག་རྒྱ་སོགས་འདི་དང་འདི་ལྟ་བུར་བྲིས་ཤིག་ཅེས་ཞལ་ཏ་གནང་ནས་འབྲིར་བཅུག་པར་མཛད་ལ། འདི་དང་སྔར་འོལ་ཁ་ཆོས་ལུང་དུ་སངས་རྒྱས་སོ་ལྔའི་ཞལ་གཟིགས་པ་དང་"ཞེས་སོགས་གསུངས་པ་མ་ཟད། གཞན་ཡང་རྗེའི་གསང་བའི་རྣམ་ཐར་ལས།[4]

ཡན་ལག་བདུན་པའི་ཚོ་ག་མཛད་པའི་ཚེ། །
སངས་རྒྱས་སུམ་ཅུ་སོ་ལྔ་མངོན་སུམ་དུ། །
རང་རང་སྐུ་ཡི་དབྱིབས་དང་ཕྱག་མཚན་སོགས། །
ཇི་བཞིན་རྒྱུན་དུ་གཟིགས་པ་ཆོས་ཀྱི་རྗེ། །
དཔལ་ལྡན་བླ་མའི་ཞབས་ལ་གསོལ་བ་འདེབས། །

ཞེས་འཇམ་དབྱངས་ཆོས་རྗེ་བཀྲིས་དཔལ་ལྡན་གྱིས་གསུངས་ཤིང་། དུས་དེ་ནས་

1 ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་སྒྲུབ་ཐབས་ཡིན་ལྡབས་ཀྱི་ཆར་འབེབས། པོད། པ། དཔེ་ཤོག ༧༦༩
2 རྒྱལ་དབང་ཆོས་རྗེས་མཛད་པའི་རྗེའི་རྣམ་ཐར་ཆེན་མོ། ཤོག ༣༠༦ ལྷ་ཆ་དགེ་ལྡན་གྱི་ལས་ཁང་ནས་དཔར་བསྐྲུན། ༣༠༠༠
3 རྒྱལ་དབང་ཆོས་རྗེས་མཛད་པའི་རྗེའི་རྣམ་ཐར་ཆེན་མོ། ཤོག ༣༡༦ ལྷ་ཆ་དགེ་ལྡན་གྱི་ལས་ཁང་ནས་དཔར་བསྐྲུན། ༣༠༠༠
4 ཞལ་འདོན་ཕྱོགས་བསྒྲིགས། ཤོག ༡༩༣ ལྷ་ཆ་དགེ་ལྡན་གྱི་ལས་ཁང་ནས་དཔར་བསྐྲུན། ༡༩༩༩

བཟུང་འདོན་སྲོལ་འདི་ལྟ་བུ་དར་བར་གསལ་ལོ།།

ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འདོན་སྲོལ་གཞན་པ་དེ་ནི་རྗེའི་གོང་གི་བོད་ཀྱི་བླ་མ་མཁས་པ་རྣམས་ཀྱིས་བཞེད་སྲོལ་དེ་ཡིན། དེ་ལྟར་དགོས་པའི་རྒྱུ་མཚན་ནི། སྟོན་པའི་གསུང་ལ་རང་སྣང་གང་འདོད་ཀྱིས་ལྷད་བཙུག་མི་རུང་བར་འདོད་པས་ཡིན་པ་དང་། དེའི་ཁུངས་ནི། སློབ་དཔོན་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱིས་མཛད་པའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པ་ལས།[1] "ཀུན་ལ་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་མེད་ལ་བཞི་སྨོས་པ་ནི་དོན་གྱིས་ཤེས་པར་བྱས་ལ་ཀློས་དམིགས་པ་སྟེ། བསྟན་ན་ནི་བཀའ་ལས་འདའ་བར་འགྱུར་ལ། ཚིག་བསྡུས་ནས་བསྟན་པའི་ཕྱིར་རོ།" །ཞེས་གསུངས་པ་དེ་ཡིན། དེ་དག་གིས་དེ་ལ་ཚད་མར་བྱས་ཏེ་རྗེའི་ཕྱག་སྲོལ་འདི་བཀའ་ལྷད་ཅན་ལྟ་བུར་བཞེད་པ་སྣང་ཞིང་། ཀརྨ་པ་མི་བསྐྱོད་རྡོ་རྗེ་ཞབས་ཀྱིས་ནི།[2] "མཚན་རྐྱང་སྒྲོག་པས་བརྙས་ཐབས་སུ་མི་འགྲོ་སྟེ། མཚན་ཐོགས་བརླ་བ་རྣམས་ཀྱང་མཚན་རྐྱང་ཡིན།" ཞེས་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་སྦྱར་མི་དགོས་པ་འདི་གསུངས་སོ། །རྗེ་བཙུན་ཏཱ་རཱ་ནཱ་ཐས་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པ་ལས་ནི།[3] "དེ་དག་ལས་ཐོག་མཐའ་གཉིས་ལ་ཚེ་བ་རྒྱས་པར་སྦྱར་བ་ཐམས་ཅད་ལ་གོ་ཞིང་ཉེར་བཞི་པ་དང་ཉེར་ལྔ་པ་གཉིས་ལ་ཚེ་བརྗོད་བསྡུས་པ་མཛད་པ་ཡང་སྟོད་སྨད་རྣམས་སུ་གོ་བ་དང་། གཞན་རྣམས་ཚེ་བའི་ཚིག་མེད་པར་མཚན་རྐྱང་བརྗོད་པ་བསྡུས་པ་སྟེ། གཞན་ལའང་གོ་བར་བྱ་བ་ཡིན་

1 Toh-4005 སྡེ། བསྟན། མདོ་འགྲེལ། "ཇི" ༡༧༩ ན ༣

2 སྙན་སྒྲོན་མཚམས་པ་རིན་པོ་ཆེ། ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པ་དོན་འགྲེལ་གྱི་བདུད་རྩིའི་ཆུ་རྒྱུན་ལས། དེ་ནས་དོགས་དཔྱོད་ཕྲན་ཚིག་ནི། རྗེ་བདག་ཉིད་ཆེན་པོ་སོགས་ནས་གོང་གི་ཕྱག་འཚལ་སྐབས་ཐམས་ཅད་ལ། དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་མ་སྦྱར་ན་མཚན་རྐྱང་སྒྲོག་པས་བརྙས་ཐབས་སུ་འགྱུར་ཕྱིར་མི་རུང་བར་གསུངས་སྐབས། རྗེ་མི་བསྐྱོད་ཞབས་ཀྱིས་མཚན་རྐྱང་སྒྲོག་པས་བརྙས་ཐབས་སུ་མི་འགྲོ་སྟེ། མཚན་ཐོགས་བརླ་བ་རྣམས་ཀྱང་མཚན་རྐྱང་ཡིན་པ་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་སྦྱར་མི་དགོས་པ་གསུངས་ཞིང་། ཞེས་གསུངས་སོ།། པོད། ༡ བོད་ཤོག ༣༦ དབྱིན་ཤོག ༥༨༥

3 པོད། ཕ ཤོག ༣༨༣

མོད། བསྡུས་པར་བརྗོད་པ་ལ་ཡང་། ཐོག་མ་ལ་ནི་ཆེ་བའི་ཚིག་ངེས་པར་བརྗོད་དགོས་སོ།" །ཞེས་དང་། རྒྱས་པར་འདོན་འདོད་པ་རྣམས་ཀྱིས་ནི་ཐོག་མའི་སངས་རྒྱས་ཤཱཀྱ་ཐུབ་པ་ནས་ཐ་མ་རི་དབང་གི་རྒྱལ་པོ་བར་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཞེས་པ་ཀུན་ལ་སྦྱར། འབྲིང་པོ་ནི་སངས་རྒྱས་སོ་ལྔའི་ནང་ནས་སངས་རྒྱས་དང་པོ། ཉེར་བཞི་པ། ཉེར་ལྔ་པ། ཐ་མ་སོ་ལྔ་པ་བཅས་བཞི་ཙམ་ལ་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་སྦྱར་བ་དེ་ཡིན་ལ། བསྡུས་པ་ནི་ཆེ་བའི་ཚིག་མེད་པ་མཚན་ཀྱང་སྒྲོག་པ་དེ་ཡིན་ཡང་ཐོག་མ་ལ་ཆེ་བརྗོད་ངེས་པར་དགོས་པ་གསུངས་པ་བཅས་སོ།།

སྨན་སྡོང་མཚམས་པ་རིན་པོ་ཆེས་མཛད་པའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པ་ལས་ནི། ཇི་སྐད་དུ།[1] "རང་རང་ཆོས་ལུགས་གང་ལ་མོས་པ་དེའི་ལུགས་ལྟར་བྱས་པས་བྱིན་རླབས་ཆེ། ཀུན་མཁྱེན་གུ་རུས།

ཕྱོགས་རིས་མེད་ཀྱང་རང་ཁང་བཟུང་ན་འཚེངས། །

ཞེས་གསུངས་པ་ལྟར་བྱ་དགོས་པ་ཞེས་གསལ་བ་བཅས་སོ།།

གོང་གི་མཁས་པ་སོ་སོའི་བཞེད་པ་མི་འདྲ་བ་ཚང་མར་རྒྱུ་མཚན་ཡང་དག་རེ་བརྗོད་རྒྱུ་ཡོད་པ་གོར་མ་ཆག་ཀྱང་། འདིར་རང་ཉིད་ཀྱི་འཆར་སྣང་གང་ཡོད་ཟུར་ཙམ་ཞིག་ཞུ་བའི་དབང་དུ་བཏང་ན། དེ་ཡང་སྤྱིར་སྔགས་བཟླ་སྐབས་མཚན་ཀྱང་སྒྲོག་ཀྱང་དབུར་ཨོཾ་ཨ་ཧཱུྃ་ཡོད་པ་དེས་མཚན་བསྟོད་ལྟ་བུར་གྱུར་པས་འགོག་པ་དཀའ། བྱེ་བྲག་ཏུ་མདོ་ཕྱོགས་རྐྱང་པའི་དབང་དུ་བྱས་ཏེ། ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་ལྷ་སོ་ལྔ་པོ་དེ་དག་ཐམས་ཅད་ཀྱི་དབུར་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཞེས་པའི་ཆེ་བའི་མཚན་བསྟོད་སྦྱར་ནའང་མདོ་དང་འགལ་ཞིང་། མི་འཚམས་པ་དང་། ལྷད་བཅུག་པ་སོར་མི་འོས་པ་ཡིན་པར་མི་མངོན་པའི་ཐོག་གང་འཇུག་བྱའི་ཚིག་དེ་ཆེ་བའི་མཚན་བསྟོད་ཡིན་ཅིང་། དངོས་སུ་གཟིགས་སྣང་ལ་བྱུང་བས་འོས་པ་ཉིད་ཡིན་ཏེ། དེ་ཡང་རྗེའི་

---

1 གླེགས་བམ། ༡ བོད་ཤོག ༣༦ བ ༡ དབྱིན་ཤོག ༥༨༦

སྔོན་དུ་ཛེ་བོ་རྗེས་ཀྱང་རང་ཉིད་ཀྱིས་མཛད་པའི་སངས་རྒྱས་མཚན་འབུམ་ཞེས་པ་ཞིག་ཡོད་པ་དེའི་ནང་དུའང་འདིར་གསལ་བའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་ལྷ་སོ་ལྔ་པོ་ཚང་མ་རིམ་པ་བཞིན་དུ་གསལ་བ་མ་ཟད་དེ་དག་གི་དབུར་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཞེས་པའི་མཚན་བསྙད་ཀྱང་སྦྱར་བ་དངོས་སུ་མཐོང་རྒྱུ་ཡོད་ཅིང་། དེ་བཞིན་དུ་སངས་རྒྱས་ཀྱི་མཚན་ལྔ་སྟོང་བཞི་བརྒྱ་ལྔ་བཅུ་རྩ་གསུམ་ཞེས་པའི་མདོའི་ནང་དུའང་། སངས་རྒྱས་སོ་ལྔ་པོ་འདི་དག་གི་མཚན་ཕལ་ཆེ་བ་གསལ་བའི་ཐོག་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཞེས་པའི་མཚན་བསྙད་ཀྱང་སྦྱར་བ་མཐོང་རྒྱུ་ཡོད་པས་སོ། །ལྷག་པར་དུ་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཞེས་མཚན་བསྙད་སྦྱར་བ་ལ་སྔོན་གྱི་ཆ་ཕྲ་མོ་ཙམ་མི་ཕོགས་ཤིང་བསོད་ནམས་སྟོབས་པོ་ཆེ་གསོག་པ་སོགས་ཀྱི་དགོས་པ་ཁྱད་པར་ཅན་ཡང་ཡོད་པར་སྣང་སྟེ་ཡུལ་ཝཱ་རཱ་ཎ་སིར་སྟོན་པ་ཐོག་མར་འཁོར་ལྔ་སྡེ་དང་མཐོང་བའི་ཚེ་ལྔ་སྡེས་སངས་རྒྱས་ལ་ཚེ་དང་ལྡན་པ་ཞེས་འབོད་པ་ན། བཅོམ་ལྡན་འདས་ཉིད་ཀྱིས་དེ་ལྟ་བུའི་སྒྲ་ནས་འབོད་མི་རུང་བ་བཀག་དེ། **རྒྱ་ཆེར་རོལ་པའི་མདོ་ལས།** [1] ཇི་སྐད་དུ། "དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ལ་ལྔ་སྡེ་བཟང་པོ་དག་གིས་འདི་སྐད་ཅེས་གསོལ་ཏོ། ཚེ་དང་ལྡན་པ། གཽ་ཏ་མའི་དབང་པོ་རྣམས་ནི་རབ་ཏུ་གསལ་ལོ། །པགས་པའི་མདོག་ནི་ཡོངས་སུ་དག་གོ །ཚེ་དང་ལྡན་པ། གཽ་ཏ་མ་ཁྱོད་མིའི་ཆོས་བླ་མ་ལས་མཆོག་ཏུ་གྱུར་པ་འཕགས་པའི་ཡེ་ཤེས་མཐོང་བའི་ཁྱད་པར་ཅུང་ཟད་མངོན་སུམ་དུ་མཛད་པ་ལྟ་མངའ་འམ། དགེ་སློང་དེ་སྐད་ཅེས་གསོལ་པ་དང་། དེ་བཞིན་གཤེགས་པས་ལྔ་སྡེ་བཟང་པོ་རྣམས་ལ་འདི་སྐད་ཅེས་བཀའ་བསྩལ་ཏོ། །དགེ་སློང་དག་ཁྱེད་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ལ་ཚེ་དང་ལྡན་པ་ཞེས་མ་རྗོད་ཅིག ཁྱེད་ལ་ཡུན་རིང་པོར་གནོད་པ་དང་། མི་ཕན་པ་དང་མི་བདེ་བར་གྱུར་ཏ་རེ། དགེ་སློང་དག་ངས་ནི་བདུད་རྩི་དང་། འཆི་བ་མེད་པར་འགྲོ་བའི་ལམ་མངོན་དུ་བྱས་སོ། །

---

1 Toh-95 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "ཁ" ༡༥༦ ན ༣

དགེ་སློང་དག་ང་ནི་སངས་རྒྱས་སོ། །ཐམས་ཅད་མཁྱེན་པའོ། །ཐམས་ཅད་གཟིགས་པའོ། །ཆོས་ཐམས་ཅད་ལ་དབང་བའོ།།" ཞེས་སོགས་གསུངས་པས་སོ།།

དེ་ར་མ་ཟད་དེང་གི་ཆར་ཡང་འཛམ་བུ་གླིང་འདིར་ཉེན་ཤེས་ཀྱི་འཆིང་བས་བཅིངས་པའི་གང་ཟག་འགའ་ཞིག་ཀྱང་གོ་གནས་དང་རྟོགས་པའི་ཡོན་དན་ཕྲན་བུ་ཡོད་པ་ཆོས་ཀྱང་མཚན་ཟུར་ལ་ཆེ་བསྟོད་ཀྱི་ཚིག་འདྲ་མིན་སྣ་ཚོགས་ཤིག་ཆེད་མངགས་སྦྱར་གྱི་ཡོད་ན། སྐྱོན་ཀུན་ཟད་ཡོན་དན་ཀུན་ལྡན་གྱི་སངས་རྒྱས་རྣམས་ཀྱི་མཚན་ཟུར་ལ་ནི་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་སོགས་སྦྱར་བ་ལ་མི་འོས་པ་ཅི་ཡང་མི་སྣང་ངོ་།།

ལམ་རིམ་རྣམ་གྲོལ་ལག་བཅངས་སུ་དོན་འདི་ལ་དགོངས་ནས།[1] "ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཞེས་པ་མང་བ་མདོ་ལས་དངོས་སུ་མི་འབྱུང་ཡང་། བསྟོད་པ་མེད་པར་མཚན་རྗེན་པར་འདོན་པ་མི་རུང་བས་རྗེའི་ཕྱག་སྲོལ་ལྟར་ཚང་མའི་དབུར་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཞེས་པའི་ཚེ་བསྟོད་འདི་སྦྱར་དགོས"ཞེས་གསུངས་སོ།།

དེ་ལྟར་ཡིན་པར་གལ་ཏེ་མཚན་རྐྱང་སྒྲོག་པས་ནི་ཕྱི་རོལ་པའི་ལྷ་ཚངས་པ་དང་། ཀླུ་དབང་དང་། ཆུ་ལྷ་དང་། སྲིད་མེད་ཀྱི་བུ་ལ་སོགས་པ་རྣམས་ཀྱི་མཚན་འདོན་ཏེ་ཕྱག་བྱས་པ་ལྟ་བུར་འགྱུར་བས་དེ་བཞིན་གཤེགས་པའམ་རྒྱལ་བ་སོགས་མཚན་བསྟོད་གང་རུང་མཚན་གི་གོང་དུ་ངེས་པར་སྦྱོར་དགོས་པ་གལ་ཆེ་བར་སེམས་སོ།།

སངས་རྒྱས་སོ་ལྔའི་མཚན་དོན་འགྲེལ་ཚུལ་ཇི་ཡོད་སྐོར།

ལྟུང་བ་བཤགས་པ་འདིའི་ཐུན་མོང་མ་ཡིན་པའི་སངས་རྒྱས་སོ་ལྔ་པོ་སོ་སོའི་མཚན་དོན་བཤད་ཚུལ་ལ་མཁས་པ་སོ་སོ་བཞེད་པ་ཐ་དད་དུ་མ་ཞིག་ཡོད་པ་ལས་རྒྱ་འགྲེལ་ལ་ཆ་མཚོན་ན་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དགྲ་བཅོམ་པ་ཡང་དག་པར་རྫོགས་

---

1 སྐྱབས་རྗེ་ཁྲི་བྱང་རིན་པོ་ཆེའི་ལམ་རིམ་རྣམ་གྲོལ་ལག་བཅངས། ཤོག ༡༧༦ དགའ་ཤར་ནས་པར་སྐྲུན། ༡༩༩༧

པའི་སངས་རྒྱས་ཤཱཀྱ་ཐུབ་པ་ལྟ་བུ་ལ་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱིས་མཛད་པར་གྲགས་པའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པ་ལས།[1] "དེ་ལ་དང་པོ་མི་མཇེད་ཀྱི་བདག་པོ་དབུས་ན་བཞུགས་པའི་སངས་རྒྱས་དེའི་ཡོན་ཏན་ནི་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཞེས་གསུངས་ཏེ། སྒྲའི་སྟོབས་ལས་དེ་བཞིན་ཉིད་གསུངས་པ་དང་། རྟོགས་པ་དང་། དེ་བཞིན་ཉིད་དུ་གཤེགས་ཤིང་སླར་བྱོན་པ་སྟེ། འདིས་ནི་ཐམས་ཅད་ལས་ཁྱད་པར་དུ་འཕགས་པའོ། ། དགྲ་བཅོམ་པ་ནི་ཉོན་མོངས་པ་དང་ཤེས་བྱའི་སྒྲིབ་པའི་དགྲ་བསད་པའོ། །དེས་ནི་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་ལས་ཁྱད་པར་དུ་འཕགས་པའོ། །ཡང་དག་པར་ནི་ཕྱིན་ཅི་མ་ལོག་པ་སྟེ། དེས་ནི་འཁོར་བ་དང་ཐེག་པ་དམན་པ་ལས་སོ། །རྫོགས་པ་ནི་ཚོགས་གཉིས་དང་བདག་གཞན་གྱི་དོན་གྱི་སྐུ་གཉིས་སོ། །སངས་རྒྱས་ནི་སྤངས་པ་དང་ཡེ་ཤེས་ཀྱི་བྱེ་བྲག་གིས་གཉིས་སོ། །དེ་གཉིས་ཀྱིས་འཁོར་བ་དང་མྱ་ངན་ལས་འདས་པའི་གང་ཟག་ཐམས་ཅད་ལས་ཁྱད་པར་དུ་འཕར་པར་བསྟན་ཏོ། །དེའི་མཚན་ཉིད་ནི་ཤཱཀྱ་ཐུབ་པ་སྟེ། དེ་ནི་ཡེ་ཤེས་དང་ནུས་པ་དང་ཡོན་ཏན་ནོ། །དེ་ལ་ཡེ་ཤེས་ནི། (མཁྱེན་པ) ཤཱ་ནི་མ་ལུས་པའོ། །ཀྱ་ནི་རྟོགས་པའོ། །མུ་ནི་ནི་གཉིས་སུ་མེད་པར་བསྒོམས་པའོ། །ཤཱ་ནི་ཤཱཀྱའི་རྒྱལ་པོའི་རིགས་ཡིན་པས་དེ་དོན་ཡོད་ཅིང་དེ་ལས་སྐྱེས་པའི་གདུག་པ་ཐུབ་པ་སྟེ་ལས་སོ། །ཡོན་ཏན་ནི། ཤཱཀྱ་སྟེ་ཁྱད་པར་དུ་འཕགས་པའོ། །དེའི་སྐུ་དང་གསུང་དང་ཐུགས་བསླམས་པ་ཐུན་མོང་མ་ཡིན་པ་ནི་ཐུབ་པའོ།" །ཞེས་གསུངས་ན། དེ་དང་ཕྱོགས་མཚུངས་སློབ་དཔོན་ཛེཏཱརིའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པ་ལས།[2] "བདུད་ཀྱི་དཔུང་དང་བཅས་པ་ཐམས་ཅད་ཀྱི་ཡུལ་ཆེན་པོ་འཇོམས་པའི་ཕྱིར་བཅོམ་ལྡན་འདས་ཉིད་དོ།།

---

1 Toh-4005 སྡེ། བསྟན། མདོ་འགྲེལ། "ཇི" ༡༨༠ བ ༣ སྐྱབས་རྗེ་ཁྲི་བྱང་རིན་པོ་ཆེའི་ལམ་རིམ་རྣམ་གྲོལ་ལག་བཅངས། ཤོག ༡༧༦ དགའ་ཤར་ནས་པར་སྐྲུན། ༡༩༩༧

2 Toh-4006 སྡེ། བསྟན། མདོ་འགྲེལ "ཇི" ༡༨༨ ན ༥

དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ནི་དེ་བཞིན་ཉིད་ཕྱིན་ཅི་མ་ལོག་པར་གསུངས་པའོ། །དགྲ་བཅོམ་པ་ནི་ཐོབ་པར་བྱ་བའི་དོན་ཐམས་ཅད་བརྙེས་པ་དང་། བསོད་ནམས་ཀྱི་ཞིང་བླ་ན་མེད་པ་དང་། མཆོད་པར་འོས་པའོ། །ཆོས་རྣམས་ཇི་ལྟ་བ་བཞིན་དུ་དོན་དམ་པར་ཐུགས་སུ་ཆུད་པས་ན་ཡང་དག་པར་རྫོགས་པའི་སངས་རྒྱས་ཞེས་བྱའོ། །ཤཱཀྱ་ཐུབ་པ་ནི་ཉོན་མོངས་པ་ཐམས་ཅད་སྤངས་པའི་མཐར་ཕྱིན་པ་དང་། ཚིག་བཙན་པ་དང་། རིགས་ལྡན་སུམ་ཚོགས་པ་དང་། དབང་ཕྱུག་ལྡན་སུམ་ཚོགས་པའོ།" །ཞེས་གསུངས་ཤིང་།

སློབ་དཔོན་མར་མི་མཛད་ཀྱི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པ་ལས།[1] "དེ་ལ་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ནི་ཆོས་ཐམས་ཅད་ཀྱི་དེ་བཞིན་ཉིད་རྟོགས་པའམ་དེར་ངེས་པའོ།། དགྲ་བཅོམ་པ་ནི་ཨར་ནའི་དགྲའམ་རྐྱེབས་ཏེ། དེ་བཅོམ་ཞིང་བཅག་པ་དང་ཧད་དོ། །ཉོན་མོངས་པ་བག་ཆགས་དང་བཅས་ཤིང་ཡང་མི་སྐྱེ་བའི་ཆོས་ཅན་དུ་བྱས་པས་རྟེན་ཅིང་འབྲེལ་བར་འབྱུང་བའི་རྐྱེན་བས་བཅག་པའི་ཕྱིར་དགྲ་བཅོམ་པ་ཞེས་བྱ་སྟེ་ཨར་ཧད་དོ། །ཡང་ན་འོས་པ་སྟེ། ཁམས་གསུམ་པ་ཐམས་ཅད་ཀྱིས་མཆོད་པར་འོས་པ་ལ་སོགས་པའི་ཕྱིར་རོ། །ཡང་དག་པར་རམ་མཉམ་པ་ཀུན་དུ་མ་ལུས་པའི་ཕྱིར་སངས་རྒྱས་པས་ཡང་དག་པར་རྫོགས་པར་སངས་རྒྱས་པ་འདི་དག་གིས་སྤྱངས་པ་དང་ཡོན་ཏན་གྱི་ཆེ་བ་གཉིས་བརྗོད་དོ། །གཞན་གྱི་ཡོན་ཏན་དུ་ཡང་བལྟའོ། །ཤཱཀྱ་ཐུབ་པ་ནི་ཤཱཀྱའི་རིགས་སུ་ཐུབ་པ་བྱུང་བས་དེ་སྐད་ཅེས་བྱའོ།།" ཞེས་གསུངས་སོ།།

དེ་ལྟར་ན་སངས་རྒྱས་སོ་ལྔའི་དང་པོ་ཤཱཀྱ་ཐུབ་པའི་མཚན་དོན་གཅིག་པུ་ལའང་འགྲེལ་ཚུལ་ཚིག་གི་ཆ་ལ་མི་འདྲ་བ་འདི་ལྟ་བུ་བྱུང་བས་དོན་ལ་ཡོན་ཏན་དེ་དག་གནས་པས་མི་འགལ་བ་མེད་རུང་། དོན་དེ་ལྟར་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ལྷག་མ་

1 Toh-4007 ཛྷི། བསྟན། མདོ་འགྲེལ། "ཇི" ༡༩༨ བ ༦

རྣམས་ཀྱི་མཚན་དོན་ཡང་གཅིག་མཐུན་མི་སྣང་། བོད་འགྲེལ་རྣམས་སུའང་དེ་དང་མཚུངས་པ། དཔེར་ན་རྗེ་བཙུན་ཏཱ་རཱ་ནཱ་ཐས་མཛད་པའི་ལྷུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པ་ལས།[1] "ཆོས་ཉིད་མ་ནོར་བར་གཟིགས་པས་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ། བདུད་བཞི་བཅོམ་པའི་ཕྱིར་དགྲ་བཅོམ་པ། ཆོས་ཐམས་ཅད་མ་རིག་པའི་སྣང་བ་ལས་སངས་ཤིང་ཡེ་ཤེས་ཀྱི་སྣང་བ་རྒྱས་པའི་ཕྱིར་ཡང་དག་པར་རྫོགས་པའི་སངས་རྒྱས་སོ། །ཤཱཀྱ་ནི་ནུས་པའི་བདག་ཉིད་དེ་མཐུ་དང་སྟིང་སྟོབས་ཕུན་སུམ་ཚོགས་པ། ཐུབ་པ་ནི་དགྲ་ཐུབ་པ་སྟེ་སྒྲིབ་གཉིས་བག་ཆགས་དང་བཅས་པ་སྤངས་པའོ། །མདོའི་དཔེ་ཉིད་ལ་དེ་ཙམ་སྣང་ལ། དེ་ལྟར་ཕལ་ཆེར་འདོན་པ་ལྟར་ན བཅོམ་ལྡན་འདས་དང་དཔལ་རྒྱལ་བ་ཞེས་པའི་ཚིག་ཀྱང་སྔོན་པས། བསྐལ་པ་དྲུག་གི་ཕུན་སུམ་ཚོགས་པ་དང་ལྡན་པས་བཅོམ་ལྡན་འདས་དང་། རང་དང་གཞན་གྱི་དོན་ཕུན་སུམ་ཚོགས་པས་དཔལ་དང་། མི་མཐུན་པའི་ཕྱོགས་ཐམས་ཅད་ལས་རྒྱལ་བས་རྒྱལ་བའོ།།" ཞེས་དང་།

མཁས་གྲུབ་སངས་རྒྱས་ཡེ་ཤེས་ཀྱིས་ཀྱང་།[2] "བདུད་བཞི་བཅོམ་ཞིང་སྐུ་བཞི་ཡེ་ཤེས་ལྔ་དང་ལྡན་པ་དང་། འཁོར་བ་དང་མྱ་ངན་ལས་འདས་པས་ན་བཅོམ་ལྡན་འདས་དང་། ཆོས་ཐམས་ཅད་ཀྱི་དེ་བཞིན་ཉིད་དང་། ཆོས་ཐམས་ཅད་མངོན་སུམ་དུ་གཤེགས་པ་དེར་མཁྱེན་པས་ན་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དང་། ཉོན་མོངས་པའི་དགྲ་བཅོམ་པས་ན་དགྲ་བཅོམ་པ་དང་། ཡོན་ཏན་ཀུན་ཡང་དག་པ་སྙེ ཇི་ལྟ་བ་བཞིན་དུ་རྫོགས་པས་ན་ཡང་དག་པར་རྫོགས་པར་ཞེས་བྱ་ལ། ཉོན་མོངས་པའི་གཉིད་ལས་སངས་ཤིང་ཤེས་བྱ་ཐམས་ཅད་ལ་བློ་གྲོས་རྒྱས་པས་ན་སངས་

1 པོད། པ དབྱིན་ཤོག ༣༣༩

2 བློ་བཟང་དགོངས་རྒྱན་མུ་ཏིག་ཕྲེང་མཛེས། ༧ ཤོག ༨༣ འབྲས་བློ་གླིང་དཔེ་མཛོད་ཁང་ནས་པར་བསྐྲུན། ༡༩༩༦

རྒྱས་ཞེས་བྱ་སྟེ། ཇི་སྐད་དུ།

ཉོན་མོངས་གཉིད་ལས་སངས་ཕྱིར་དང་། །
ཤེས་བྱ་ལ་ཡང་བློ་རྒྱས་ཕྱིར། །
སངས་རྒྱས་པདྨ་ལྟར་སངས་རྒྱས། །ཞེས་སོ།།

མངོན་མཐོ་དང་ངེས་ལེགས་ཀྱི་ཕུན་སུམ་ཚོགས་པ་དང་ལྡན་པས་ན་རྒྱལ་བ་དང་། སྤང་བྱ་མི་མཐུན་པའི་ཕྱོགས་ཐམས་ཅད་ལས་བཅལ་བས་ན་རྒྱལ་བ་དང་། ཤཱཀྱའི་རིགས་སུ་འཁྲུངས་པས་ན་ཤཱཀྱ་ཞེས་བྱ་ལ། ཉོན་མོངས་པའི་དགྲ་ཐུབ་པས་ན་ཐུབ་པ་ཞེས་བྱའོ། །དེ་ལྟར་བཤད་ཐུབ་པས་ན་ཐུབ་པ་ཞེས་བྱའོ།།" ཞེས་གསུངས། དེ་ལྟར་ན་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་རེ་རེའི་མཚན་དོན་ལ་དཔྱད་དེ་ཉམས་ཞིབ་བྱ་འོས་པ་ཁོ་ནར་འདུག་བློ་གྲོས་དམན་པ་བདག་ལྟ་བུའི་སྤྱོད་ཡུལ་ལས་འདས་ཤིང་། སྐབས་འདིར་ཡང་མང་བས་འཇིགས་ཏེ་མ་བཀོད་དོ།།

སངས་རྒྱས་སོ་ལྔ་རང་རང་གི་སྐུ་མདོག་ཕྱག་མཚན།

དེ་ལ་སློབ་དཔོན་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱིས་མཛད་པར་གྲགས་པའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པར་སྐུ་མདོག་ཕྱག་མཚན་དང་ཞིང་ཁམས་ཀྱི་སྐོར་གསལ་བ་ཙམ་ལས། རྒྱ་གཞུང་གཞན་རྣམས་སུ་ནི་འདིའི་སྐོར་མི་གསལ་ཞིང་། བོད་འགྲེལ་དུ་ནི་སྐུ་མདོག་ཕྱག་མཚན་དང་ཞིང་ཁམས་སྐོར་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱི་འགྲེལ་པ་ལྟར་དང་། ཡང་རྗེ་རིན་པོ་ཆེའི་གཟིགས་སྣང་ལྟར་འགོད་ལུགས་ཁག་གཉིས་གསལ་བ་ལས། དང་པོ་ནི་སྣན་སྦྱོར་མཚམས་པ་རིན་པོ་ཆེ་དང་། དངུལ་ཆུ་དྷརྨ་བྷདྲ་དང་། འབྲི་གུང་བསྟན་འཛིན་ཆོས་ཀྱི་བློ་གྲོས་སོགས་ཀྱི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པ་དང་། འགྲེལ་པ་ལག་སོན་མ་བྱུང་བའི་རིགས་རྣམས་ཡིན་ཅིང་། དེ་རྣམས་ལས་གཞན་ཡང་ཡོད་སྲིད། གཉིས་པ་ནི་རྗེ་གུང་ཐང་བསྟན་པའི་སྒྲོན་མེ་དང་། འཇམ་མགོན་བློ་གཏེར་དབང་པོ། །ཐུའུ་བཀྭན་ཆོས་ཀྱི་ཉི་མ། ལྷ་བྲག་གྲུབ་ཆེན་ནམ་མཁའ་རྒྱལ་མཚན། ཨུ་རྒ་

ཀྱི་རྗོར་མཁན་པོ་ངག་དབང་བློ་བཟང་མཁས་གྲུབ། སེར་བྱས་ལྷོ་པ་ངག་ལྡན་རྣམས་ཀྱི་འགྲེལ་པ་ཡིན་ནོ།།

འཕགས་པ་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱི་ལུགས་ལ་སངས་རྒྱས་སོ་ལྔའི་ཕྱོགས་དང་ཞིང་ཁམས།

དེ་ཡང་རྗེའི་གཟིགས་སྣང་དུ་བྱུང་བའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པ་རྣམས་སུ་ཕྱོགས་དང་ཞིང་ཁམས་བཀོད་པ་རྣམས་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱི་གསུང་ཇི་མ་ཇི་བཞིན་བླངས་པ་ལྟ་བུ་སྣང་ཡང་། ཕྱོགས་ཀྱི་ཐད་འཕགས་པ་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱི་འགྲེལ་པར་ཕྱོགས་བཞི་དང་མཚམས་བཞི་དང་སྟེང་འོག་བསྡོམས་པས་ཕྱོགས་བཅུའི་རྣམ་གྲངས་གསལ་བ་དེ་བཞིན་འདི་དག་ཏུ་མི་གསལ་ཞིང་། འོན་ཀྱང་འཕགས་པ་མི་རྟོག་གི་ཚོགས་ཀྱི་མདོར། སངས་རྒྱས་སོ་ལྔ་པོ་དེ་དག་ལས་སངས་རྒྱས་བཅོ་ལྔ་ཙམ་གྱི་མཚན་འདོན་ཞིང་། དེ་དག་གི་ཕྱོགས་དང་ཞིང་ཁམས་དང་ཕན་ཡོན་རྣམས་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱིས་མཛད་པའི་འགྲེལ་པར་བཀོད་པ་རྣམས་དང་ཕལ་ཆེ་བ་གཅིག་མཚུངས་མི་སྣང་ངོ་།།

དེ་དག་ལས་རྗེའི་གཟིགས་སྣང་ལ་བྱུང་བ་ལ་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱི་འགྲེལ་པ་གཉིས་སུ་གསལ་བའི་སངས་རྒྱས་སོ་ལྔའི་སྐུ་མདོག་རྣམས་ཕན་ཚུན་ཞིབ་བསྡུར་བྱེད་སྐབས་སྐུ་མདོག་མཚུངས་པ་བཅུ་གཅིག་དང་ཅུང་ཟད་མཚུངས་པ་བདུན་ཙམ་འབྱུང་བ་ལས། མཚུངས་པ་བཅུ་གཅིག་ནི། (༡) དང་པོ་སངས་རྒྱས་ཤཱཀྱ་ཐུབ་པ། (༢) བཞི་པ་ཀླུ་དབང་གི་རྒྱལ་པོ། །(༣) ལྔ་པ་དཔའ་བོའི་སྡེ། (༤) བདུན་པ་རིན་ཆེན་མེ། (༥) བརྒྱད་པ་རིན་ཆེན་ཟླ་འོད། (༦) དགུ་པ་མཐོང་བ་དོན་ཡོད། (༧) བཅུ་དྲུག་པ་ཆུ་ལྷའི་ལྷ། (༨) བཅུ་དགུ་པ་གཟི་བརྗིད་མཐའ་ཡས། (༩) ཉེར་གསུམ་པ་མི་རྟོག་དཔལ། (༡༠) ཉེར་ལྔ་པ་པདྨའི་འོད་ཟེར་རྣམ་པར་རོལ་པས་མངོན་པར་མཁྱེན་པ། (༡༡) ཉེར་བདུན་པ་དྲན་པའི་དཔལ་བཅས་སོ།།

ཅུང་ཟད་མཚུངས་པ་བདུན་ནི། (༡) དྲུག་པ་དཔའ་དགྱེས། (༢) བཅུ་པ་རིན་ཆེན་ཟླ་བ། (༣) བཅུ་གཅིག་པ་དྲི་མ་མེད་པ། (༤)བཅུ་གསུམ་པ་ཚངས་པ། (༥) བཅུ་བཞི་པ་ཚངས་པས་བྱིན། (༦) བཅོ་བརྒྱད་པ་ཙནྡན་དཔལ། (༧) སོ་བཞི་པ་རིན་ཆེན་པདྨས་རྣམ་པར་གནོན་པ་བཅས་སོ། །

སློབ་དཔོན་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱི་ལུགས་ལྟར་ཕྱག་རྒྱ་དང་ཕྱག་མཚན།

སློབ་དཔོན་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱི་འགྲེལ་པར་ཕྱག་རྒྱ་ལ་ཆོས་འཆད། ས་གནོན། མ་འཇིགས་པ་བཅས་གསུམ་ཙམ་དང་། ཕྱག་མཚན་ནི། རྡོ་རྗེ། ཉི་མ། ཀླུ་ཤིང་། སྦྲུལ་སྔོན་པོ། །པདྨ། རལ་གྲི། རིན་པོ་ཆེ། མེའི་དཀྱིལ་འཁོར། ཟླ་བ། སངས་རྒྱས་ཀྱི་སྤྱན་གཉིས། མེ་ལོང་། ཤིང་དཔལ་འབྲས། དཀྱིལ་འཁོར། དཔག་བསམ་ཤིང་། ཙནྡན། འོད་དཀར་པོའི་དཀྱིལ་འཁོར། ཤིང་ཀུ་ངན་མེད། རི་རབ། མེ་ཏོག་སེར་པོ། །པདྨ་དཀར་པོ། །གཙུག་ཏོར་བཅིངས་པ། རིན་པོ་ཆེའི་ཏོག རྒྱལ་མཚན། ཁྲབ། རིན་པོ་ཆེའི་སྦྱོང་བུ་དང་། དེའི་ཐོག་ཕྱག་རྒྱ་དང་ཕྱག་མཚན་མཉམ་སྦྲེལ་ཅན་རྡོ་རྗེ་གཉིས་བསྣམས་པ་བསྟན་ན་ཕྱག་མཚན་ཉེར་ལྔ་ཙམ་གསལ་ལོ།།

ཆོས་རྗེ་ས་པཎ་གྱི་ལུགས་བཞིན་སངས་རྒྱས་སོ་ལྔའི་སྐུ་མདོག་དང་ཕྱག་རྒྱ།

ཆོས་རྗེ་ཉིད་ལྟར་ན་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་སོ་ལྔ་པོ་རྣམས་སྤྲུལ་པའི་སྐུའི་ཆ་ལུགས་འཛིན་པ་ཤ་སྟག་ཡིན་པས་དེ་རྣམས་ཁ་དོག་ལྔ་དང་ཕྱག་རྒྱ་ལྔས་བཞུགས་ཤིང་། དེ་ཡང་དང་པོ་ཆོས་འཆད་ཀྱི་རྣམ་པ་ཅན་ནི་སྐུ་མདོག་དཀར་པོ་དང་། གཉིས་པ་ས་གནོན་སྔོན་པོ། །གསུམ་པ་མཆོག་སྦྱིན་སེར་པོ། །བཞི་པ་མཉམ་གཞག་དམར་པོ། །ལྔ་པ་སྐྱབས་སྦྱིན་ལྗང་ཁུའི་རྣམ་པ་ཅན་དགོས་པ་མ་ཟད། དེ་དག་ཀྱང་ཕྱོགས་རེ་རེར་མི་བཞུགས་པ་སྤྱིལ་མར་བཞུགས་དགོས་པ་དང་། དེ་ཡང་སྐུ་མདོག་དཀར་པོ

གཅིག་གི་སར་སྔོན་པོ་སེར་པོ་དམར་པོ་ལྗང་ཁུ་བཅས་རིམ་བཞིན་བཞུགས་པ་བསྒོམས་ན་བློ་ལ་གསལ་བ་སོགས་ཀྱི་ཁྱད་ཆོས་དུ་མ་ཡོད་པ་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོའི་འདོན་ཐབས[1]སུ་གསལ་ལོ། །མདོར་ན་རྒྱལ་བ་རིགས་ལྔའི་རྣམ་པ་ཅན་དུ་དགོས་པར་གསུངས་སོ།།

རྗེ་རིན་པོ་ཆེའི་ལུགས་བཞིན་ཕྱག་རྒྱ་དང་ཕྱག་མཚན།

རྗེའི་གཟིགས་སྣང་དུ་བྱུང་བའི་ཕྱག་རྒྱར་བརྒྱད་གསལ་བ་དེ་ཡང་། ༡ ཕྱག་གཡས་ས་གནོན་གཡོན་མཉམ་བཞག ༢ ཕྱག་གཉིས་ཆོས་འཆད། ༣ ཕྱག་གཉིས་མཉམ་བཞག ༤ ཕྱག་གཡོན་ཆོས་འཆད། གཡས་སྐྱབས་སྦྱིན། ༥ ཕྱག་གཡོན་མཉམ་བཞག གཡས་མཆོད་སྦྱིན། ༦ བྱང་ཆུབ་མཆོག་གི་ཕྱག་རྒྱ། ༧ ཕྱག་གཡས་ཆོས་འཆད། གཡོན་མཉམ་བཞག ༨ ཕྱག་གཡས་མཐེབ་མཛུབ། གཡོན་ཆོས་འཆད་མཛད་པ་བཅས་སོ།།

དེ་མཚུངས་ཕྱག་མཚན་ལ། ༡ ལྷུང་བཟེད། ༢ རྒྱལ་མཚན། ༣ ཁྲབ། ༤ རལ་གྲི ༥ རི་རབ་ཙམ་གསལ་བ་བཅས་ཞིབ་ཕྲ་ཁ་སྐོང་གི་ལྷན་ཐབས་སུ་གཟིགས་པར་འཚལ།

འཕགས་པ་མི་རྟག་གི་ཚོགས་ཀྱི་མདོ་ལས་ནི་ཕྱག་རྒྱ་དང་ཕྱག་མཚན་གྱི་གསལ་ཁ་གང་ཡང་མི་སྣང་ངོ་།།

འཕགས་པ་མི་རྟག་ཚོགས་ཀྱི་མདོར་གསལ་བའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་ལྷ་འགའི་ངོས་འཛིན།

དེ་ཡང་འཕགས་པ་མི་རྟག་ཚོགས་ཀྱི་མདོ་འདི་ནི་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་མང་

1 གངས་ཅན་རིག་མཛོད། ༢༥ གླེགས་བམ། ༢ ཤོག ༥༢༥ ༡༩༩༢

པོའི་ཕྱོགས་དང་ཞིང་ཁམས། སངས་རྒྱས་ཀྱི་མཚན་དང་། མཚན་འདོན་ཕན་ཡོན་བཅས་གསལ་བའི་མདོ་ཞིག་ཡིན་པས། དེར་གསལ་བའི་ལྷ་དང་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་ལྷའི་མཚན་མཐུན་འགའ་ཞིག་ཡོད་པ་ནི། གཉིས་པ་རྡོ་རྗེ་སྙིང་པོ། གསུམ་པ་རིན་ཆེན་འོད་འཕྲོ། བཞི་པ་ཀླུ་དབང་གི་རྒྱལ་པོ། །ལྔ་པ་དཔའ་བོའི་སྡེ། བདུན་པ་རིན་ཆེན་མེ། བརྒྱད་པ་རིན་ཆེན་ཟླ་འོད། བཅུ་པ་རིན་ཆེན་ཟླ་བ། བཅིུག་པ་དྲི་མ་མེད་པ། བཅུ་གསུམ་པ་ཚངས་པ། ཉེར་གཅིག་པ་མྱ་ངན་མེད་པ། ཉེར་དགུ་པ་དབང་པོ་ཏོག་གི་རྒྱལ་མཚན། སུམ་ཅུ་པ་ཤིན་ཏུ་རྣམ་གནོན་བཅས་ཡིན་ཞིང་། མཚན་ཟུར་ཙམ་མཚུངས་པ་བདུན་ཙམ་གསལ་ཡང་འདིར་མ་བཀོད།

སངས་རྒྱས་སོ་ལྔའི་མཚན་འདོན་ཕན་ཡོན།

འཕགས་པ་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱི་འགྲེལ་པ་ལ་ནི་སངས་རྒྱས་སོ་ལྔ་པོའི་མཚན་སྒྲོག་པའི་ཕན་ཡོན་འདི་དང་འདི་ཡོད་ཀྱི་གསལ་ཁ་མེད་རུང་། རྗེའི་གཟིགས་སྣང་ལྟར་བཀོད་པའི་གཞུང་རྣམས་སུ་སངས་རྒྱས་སོ་ལྔ་པོ་ཕལ་ཆེ་བའི་ལྷན་དུ་མཚན་སྟོན་པའི་ཕན་ཡོན་རེ་གསལ། འདི་ནི་རྗེ་གུང་ཐང་པ་དཀོན་མཆོག་བསྟན་པའི་སྒྲོན་མེའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པར་རྒྱལ་ཚབ་རྗེས་ཇོ་བོ་རྗེའི་གསུངས་བཞིན་བཀོད་ཅེས་འབྱུང་ཞིང་། འདི་རྣམས་ཇོ་བོ་རྗེས་མཛད་པའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པར་མཇལ་རྒྱུ་མེད་ཀྱང་ཇོ་བོའི་གཞུང་ཞིག་ཏུ་ཡོད་པར་གསལ་བ་ལ་བརྟེན་ནས་བདག་གིས་བཤད། ཇོ་བོའི་གཞུང་ཚན་དུ་མར་འདི་རྣམས་རྙེད་ཐབས་ཀྱིས་འཚོལ་ཞིབ་བྱས་ཀྱང་ད་བར་ལག་སོན་མ་བྱུང་ཞིང་། རྒྱབ་ཆབ་ཀྱི་དེ་བཞིན་འཕགས་པ་མི་ཏོག་ཚོགས་ཀྱི་མདོར་གསལ་བའི་མཚན་གྱི་ཕན་ཡོན་རྣམས་དང་། ཕན་ཚུན་འདྲ་བསྡུར་བྱེད་སྐབས་ཕལ་ཆེ་བ་གཅིག་མཚུངས་མི་སྣང་ངོ་།།

འཕགས་པ་ཉེ་བར་འཁོར་གྱིས་ཞུས་པའི་མདོ་ལས་ནི། "བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་ནི་སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་དེ་དག་གི་མཚན་འཛིན་ཅིང་ཡོངས་སུ་

བརྗོད་པ་དང་། ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་ཆོས་ཀྱི་རྣམ་གྲངས་ཉིན་ལན་གསུམ་མཚན་ལན་གསུམ་བརྗོད་པས་ཉེས་པ་བགྱིས་པས་གནས་ལས་ཉེ་བར་འབྱུང་ཞིང་དེང་ངེ་འཛིན་ཀྱང་འཐོབ་པར་འགྱུར་རོ། ”[1] །ཞེས་འབྱུང་བ་དང་ཕུང་པོ་གསུམ་པ་ཆ་ཚང་འདོན་པའི་ཕན་ཡོན་གསལ་ལོ།།

ཡང་རྗེ་གུང་ཐང་བསྟན་པའི་སྒྲོན་མེས་མཛད་པའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པ་ལས་ནི།[2] “ཁྱད་པར་དུ་སངས་རྒྱས་སོ་ལྔའི་མཚན་རེ་རེ་བརྗོད་པ་ཙམ་གྱིས་ཀྱང་མཚམས་མེད་པ་ལྔ་དང་མི་དགེ་བ་བཅུ་ལ་སོགས་པ་བསྐལ་པ་དུ་མར་བསགས་པའི་སྡིག་ལྟུང་སྦྱོང་ཚུལ་མཉམ་མེད་རྗེ་བོ་ཆེན་པོའི་བཞེད་པ་ལྟར་རྒྱལ་ཚབ་ཀྱི་གསུང་ལས་བྱུང་བ་ལྟར་གྱི་ཕན་ཡོན་ཐུན་མོང་མ་ཡིན་པ་རྣམས་དང་། རྗེ་བདག་ཉིད་ཆེན་པོས་ཀྱང་འོལ་ཁ་ཆོས་ལུང་དུ་འདི་ཉིད་ལ་ཐུགས་དམ་གྱི་མཐིལ་དུ་མཛད་པའི་ཚུལ་སོགས་སྒོ་དུ་མ་ནས་བསམས་ཏེ་ཀུན་སློང་ལེགས་པར་བཅོས་ལ། ”

ཞེས་གསུངས་ལ།

གཞན་ཡང་སྨན་སྡོང་མཚམས་པ་རིན་པོ་ཆེས་ནི།[3] “དེས་ན་ལྟུང་བཤགས་འདི་ནི་སོ་ཐར་བྱང་སྡོམ་གསང་སྔགས་དམ་ཚིག་སོགས་གསུམ་གའི་གསོ་སྦྱོང་བཤགས་པ་མཆོག་ཡིན་པར་འདུལ་བ། སྤྱོད་འཇུག སྙིང་པོ་རྒྱན་སོགས་དུ་མ་ནས་གསུངས་བཅས་དང་། རང་བཞིན་གྱི་སྡིག་པ་བཤགས་པ་ལ་འདི་འདྲ་བ་དཀོན་ཏེ་ཆོས་རྒྱལ་ཁྲི་སྲོང་ལྡེའུ་བཙན་གྱིས་རྒྱ་གར་པཎ་གྲུབ་བརྒྱ་རྩ་གདན་དྲངས་དུས་སྡིག་བཤགས་ལ་འདི་ལྷག་པར་གསུངས་པས་རྒྱལ་པོའི་ཐུགས་དམ་མཛད། ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་ཆོ་གར། བཅོམ་ལྡན་འདས་ཀྱི་ཞལ་ནས་གསུངས་པའི་ཆོས་ཉ་པ་ལྔ

1 Toh-68 སྡེ། བཀའ། དཀོན་བརྩེགས། "ཙ" ༡༣༣ བ ༨
2 པོད། "ཛ" བོད་ཤོག ༣ བ ༦ དབྱིན་ཤོག ༣༠༡
3 གླེགས་བམ། ༡ བོད་ཤོག ༨༡ བ དབྱིན་ཤོག ༥༥༦

བརྒྱའི་དོན་དུ་ཞུས། དེས་ཉ་དང་མི་ཐམས་ཅད་དག་པའི་ཞིང་དུ་སྐྱེས་པའོ། །
སངས་རྒྱས་སུམ་ཅུ་སོ་ལྔ་འདི་དག་གི་མཚན་རེ་རེ་ཙམ་ཐོས་ཀྱང་ལས་ངན
སྡིག་སྒྲིབ་མ་ལུས་པ་དག་ནས་ཕྱིར་མི་ལྡོག་པའི་ས་ལ་སྐྱེ་བར་གསུངས་སོ།" །ཞེས
དང་། མ་ཟད་གཞན་ཡང་།[1] "དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཤཱཀྱ་ཐུབ་པ་ལ་ཕྱག་འཚལ་བས
དུག་གསུམ་སྤྱད་པའི་རྣམ་སྨིན་གྱིས་ལྟུང་བསྲེག་གི་ཁང་པ་སྒོ་མེད་ནང་ལ་བཙུད་པའི
སྡུག་བསྔལ་ལས་ཐར་བར་འགྱུར་རོ། །རྡོ་རྗེ་སྙིང་པོས་རབ་ཏུ་འཇོམས་པས་ལོག
ལྟ་བྱས་པའི་རྣམ་སྨིན་གྱིས་གླང་མགོ་ཅན་གྱི་སྙོལ་དཀའ་བའི་སྡུག་བསྔལ་ལས་ཐར
བར་འགྱུར་རོ།" །ཞེས་སོགས་ནས། "དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་རི་དབང་གི་རྒྱལ་པོ
ལ་ཕྱག་འཚལ་བས་ཉོན་མོངས་དུག་ལྔ་དང་སེར་སྣ་བྱས་པ་རྣམས་རིགས་དྲུག་སོ
སོའི་སྡུག་བསྔལ་དང་མཚམས་མེད་པ་ལྔ་དང་ལྕི་བ་བཞི། ལོག་པ་བརྒྱད་དམ་དེ
ཀུན་བྱས་པའི་རྣམ་སྨིན་གྱིས་ཚ་གྲང་རེས་མོས་བྱེད་པའི་སྡུག་བསྔལ་བཟོད་བསླག
མེད་པའི་དམྱལ་བ་ལས་ཐར་བར་འགྱུར་རོ།[2]" །ཞེས་གསུངས། "ལུང་ལས།
བཅོམ་ལྡན་འདས་ཀྱི་བཀའ་བསྐུལ་པ་མ་འོངས་པའི་དུས་ལྔ་བརྒྱའི་ཐ་མ་ལ་སེམས
ཅན་ཉོན་མོངས་པའི་སྒྲིབ་པ་འཐུག་པོ་ཅན་རྣམས་ལ་ཕན་བཏགས་པའི་ཕྱིར། འཕགས
པ་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་སྡེ། དཀོར་གྱི་ཕུང་པོ་རི་རབ་ཙམ་ཡང་བྱང་བར་འགྱུར
རོ། །སེམས་ཅན་འཆི་ཁའི་ཉ་ལམ་དུ་སྒྲོག་པ་དེ་ངན་སོང་དུ་སྐྱེ་བའི་སྒོ་གཅོད་པར
འགྱུར་རོ།" །ཞེས་གསུངས་སོ།།

ཡང་ལྷ་སོ་སོའི་ངོས་འཛིན་སྐོར་ལ་ཡོན་སྦྱོང་གི་ཚོ་ག་སྒྲིབ་པའི་མུན་གསལ
ལས།[3] "དེའི་འགྱུར་ཞལ་ཆེར་དུ་ཀུན་ནས་འོད་ཀྱི་རྒྱལ་པོ་ཞེས་པ་ཙམ་ལས་མི

1 གླིགས་བམ། ༡ བོད་ཤོག ༣༣ ན དབྱིན་ཤོག ༥༡༧

2 གླིགས་བམ། ༡ བོད་ཤོག ༣༣ ན དབྱིན་ཤོག ༥༡༨

3 པོད། "༦" བོད་ཤོག དབྱིན་ཤོག ༣༡༩

འབྱུང་ཡང་། ལྷུང་བཤགས་ཀྱི་ལྷ་སོ་ལྔའི་ནང་གི་རིན་ཆེན་མེ་ཡིན་པར་མངོན་ཏེ། རྒྱལ་ཚབ་རྗེས་ཇོ་བོའི་གསུང་རྒྱུན་ལྟར་མཚན་གྱི་ཕན་ཡོན་བཀོད་པ་ལས། རིན་ཆེན་མེས་དགེ་འདུན་གྱི་དཀོར་ལ་འབག་པའི་སྡིག་པ་འདག་གོ །ཞེས་གསུངས་པ་དང་། མདོ་འདིའི་ཕན་ཡོན་དུ་ཡོན་མང་པོ་ལ་སྤྱོད་པ་ཡང་བྱང་བར་འགྱུར་རོ།། ཡོན་བདག་དེའི་ཡོན་ཡོངས་སུ་འཕེལ་བར་འགྱུར་ཞིང་ཆོ་ག་ཐམས་ཅད་ཡོངས་སུ་རྫོགས་པར་འགྱུར་རོ། །ཞེས་གསུངས་པ་གཉིས་དོན་འདྲ་བར་སྣང་ངོ་། །དེ་ལྟར་ན་ཀུན་ནས་འོད་ཀྱི་རྒྱལ་པོ་ཞེས་པ་ཞིང་གི་སྒོ་ནས་བཏགས་པ་ཡིན་ལ་རིན་ཆེན་མེའམ། མེ་འོད་རབ་ཏུ་གསལ་བ་ཞེས་པ་མཚན་དངོས་ཡིན་ཏེ། འཕགས་པ་མེ་ཏོག་གི་ཚོགས་ཀྱི་མདོ་ལས།[1] "བྱང་ཕྱོགས་སུ་སངས་རྒྱས་ཀྱི་ཞིང་བྱེ་བ་བརྒྱ་སྟོང་གི་ཐ་མ་ན་འཇིག་རྟེན་གྱི་ཁམས་ནོར་བུ་སྣང་བ་ཅན་ཞེས་བྱ་བ་ན། དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དགྲ་བཅོམ་པ་ཡང་དག་པར་རྫོགས་པའི་སངས་རྒྱས་རིན་ཆེན་མེ་ཞེས་བྱ་བ་བཞུགས་ཏེ། ཞེས་གསུངས་པས་འོད་དང་སྣང་བ་རྣམ་གྲངས་སུ་བྱས་པ་མངོན། སྟོན་ཚུལ་དེ་འདྲ་བ་མང་ངོ་། མདོ་དེར་དོ་རྗེ་སྙིང་པོས་རབ་ཏུ་འཇོམས་པའི་མཇུག་ཐོགས་སུ་རིན་ཆེན་མེ་དང་རིན་ཆེན་ཟླ་འོད་གཉིས་གསུངས་པ་ལྟ་བུ་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་ལྷ་ཚོགས་རགས་རིམ་ཞིག་ཐོར་བ་ཐོར་བུར་གསུངས་པ་ལ། དང་པོ་ཡང་དོ་རྗེ་སྙིང་པོ་ཅན་ཞེས་པ་ཞིང་དང་། དོ་རྗེས་རབ་ཏུ་འཇོམས་པ་ཞེས་པ་མཚན་དངོས་ཡིན་པར་གསུང་འཕགས་པ་མེ་ཏོག་ཚོགས་ཀྱི་མདོར་གསུངས་སོ[2]ཀྱང་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོར་དོ་རྗེ་སྙིང་པོས་རབ་ཏུ་འཇོམས་པ་ཞེས་བསྡུས་ནས་གསུངས་པ་བཞིན་ནོ།" །ཞེས་གསལ་བར་གསུངས་སོ།།

---

1 Toh-266 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "འ" ༣༡༡ བ ༣

2 Toh-266 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "འ" ༣༡༠ བ ༣

སངས་རྒྱས་སོ་ལུ་སྒོམ་ལུགས་མི་འདྲ་བ་ཇི་ཡོད།

སངས་རྒྱས་སོ་ལུའི་སྐུ་སྒོམ་ཚུལ་ཁག་འགའ་ཞིག་སྣང་བ་ལས། སློབ་དཔོན་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱིས་མཛད་པའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པ་ལྟར་ན། ཇི་སྐད་དུ།[1] "དེ་ལ་མ་འོངས་པས་ནི། སངས་རྒྱས་འདི་དག་བདག་གི་མདུན་དུ་པདྨ་དང་སེང་གེ་དང་རིན་པོ་ཆེ་དང་ཟླ་བའི་གདན་ལ་རབ་ཏུ་བྱུང་བ་སྤྲུལ་པའི་སྐུ་མཚན་དང་དཔེ་བྱད་འོད་དང་ལྡན་པ། སྐུ་མདོག་དང་། ཞིང་དང་ཕྱོགས་དང་། མཚམས་དང་། ཆོས་གོས་ལ་སོགས་པ་དང་། ཕྱག་མཚན་དང་རྡོ་རྗེའི་སྐྱིལ་ཀྲུང་ཅན་འཁོར་མང་པོ་དང་བཅས་པ་འོག་ནས་འབྱུང་བ་བཞིན་དུ་དབུས་ནས་བརྩམས་ཏེ་ཕྱོགས་བཅུར་རིམ་པ་བཞིན་དུ་བཞུགས་པ་ལ་དམིགས་ཏེ་ལུས་མང་པོར་སྤྲུལ་ཅིང་། ངག་སྒྲ་དང་། ཡིད་ཀྱི་མོས་པས་ཞབས་ལ་ཕྱག་འཚལ་བྱའོ།" །ཞེས་གསུངས་ཤིང་། ཡང་ཇི་སྐད་དུ།[2] "ཡང་ན། བློ་དམན་པས་ནི། ཐམས་ཅད་ཞལ་གཅིག་པ། ཕྱག་གཉིས་ཆོས་འཆད་པའམ་བསོད་སྙོམས་ལ་གཤེགས་པའམ། ས་གནོན་པ་ལ་སོགས་པའི་ཕྱག་རྒྱར་བསམས་ཏེ། དཀར་པོ་ལ་སོགས་པ་གང་ལྟར་མོས་པར་ཐམས་ཅད་མཉམ་པར་བསམས་ཏེ་ཕྱག་བྱའོ།" །ཞེས་གསུངས་པས། །དེ་ལྟར་ན་སློབ་དཔོན་གྱིས་སངས་རྒྱས་སོ་ལུའི་སྒོམ་ཐབས་ལ་བློ་རྩལ་དང་ཞན་པའི་རིགས་གཉིས་ཀྱི་ཆེད་དུ་སྒོམ་ཚུལ་ཁག་གཉིས་ཡོད་པ་བསྟན་ཏོ།།

ཡང་མཁས་དབང་སྣན་སྟོང་མཚམས་པ་རིན་པོ་ཆེས་ཀྱང་། ཇི་སྐད་དུ།[3] "སྐུ་མདོག་ཕྱག་མཚན་སོ་སོར་བསྒོམ་པར་མ་ནུས་ན་ཐམས་ཅད་ཤཱཀྱ་ཐུབ་པ་འདྲ་བ་ཤ་སྟག་ཕྱག་གཉིས་ཐིག་སྒྲིབ་བསྒྲིག་པའི་རྟེན་འབྲེལ་གྱིས་རྡོ་རྗེ་མིའི་ཕྱག་རྒྱ་ཅན་ཁོ

1 Toh-4005 ཇི། བསྟན། མདོ་འགྲེལ། "ཇི" ༡༨༠ ན ༧

2 Toh-4005 ཇི། བསྟན། མདོ་འགྲེལ། "ཇི" ༡༨༠ བ ༡

3 དེབ་གཟུགས། ཤོག ༥༠༨ ཕིར་ནས་པར་བསྐྲུན།

ན་བསྒོམ་ན་ཆོག་པར་ཆགས་མེད་རིན་པོ་ཆེས་གསུངས། །དེའང་མཛུབ་མོ་གཉིས་བསྒྲིངས་ཏེ་རྩེ་སྤྲད། མཐེ་བོང་གཉིས་དེའི་ནང་དུ་གཤིབ་ཏེ་སྦྱར། གཞན་སོར་མོ་དྲུག་པོ་ནང་དུ་བསྐོལ་ནས་བསྣམས་པའོ། །བྲིས་སྐུ་འགའ་ཞིག་ནི་ཤཱཀྱ་ཐུབ་པ་སྤྱི་ལྷར་ས་གནོན་མཉམ་བཞག་བྲིས་པའང་སྣང་ངོ་། །ཤིན་ཏུ་བློ་དམན་པ་རྣམས་ཀྱི་དེ་ཙམ་ཡང་བསྒོམ་མ་ཤེས་ནས་སངས་རྒྱས་རྣམས་རང་གི་མདུན་གྱི་ནམ་མཁར་མངོན་སུམ་དུ་བཞུགས་ཡོད་སྙམ་པའམ། ཡང་ན་རང་རང་གི་ཞིང་ཁམས་ནས་རང་ཉིད་ལ་བརྩེ་བས་གཟིགས་ཤིང་ཐུགས་ཀྱིས་དགོངས་ནས་ཡོད་སྙམ་པ་མ་གཡེང་བར་བྱས་པས་འཐུས་ཏེ། ཆགས་མེད་རིན་པོ་ཆེས་མདོ་ལུགས་ལ་སྐྱབས་ཡུལ་བསྒོམ་མི་དགོས་ཏེ་སངས་རྒྱས་ཐམས་ཅད་ཉིན་མཚན་དུས་དྲུག་ཏུ་སེམས་ཅན་ལ་གཟིགས་ནས་བཞུགས་ཚུལ་རི་ཆོས་ནས་གསུངས་པ་དང་། བདེན་སྨོན་ལས་ཀྱང་།

སངས་རྒྱས་སྤྱན་གྱིས་ཉིན་མཚན་དུས་དྲུག་ཏུ། །
སེམས་ཅན་ཀུན་ལ་བརྩེ་བས་རྟག་ཏུ་གཟིགས། །
སེམས་ཅན་ཀུན་གྱི་ཡིད་ལ་གང་དྲན་པའི། །
རྣམ་རྟོག་གང་འགྱུས་རྟག་ཏུ་ཐུགས་ཀྱིས་མཁྱེན། །
སེམས་ཅན་ཀུན་གྱི་རྟག་ཏུ་གང་སླུས་ཚིག །
རྟག་ཏུ་མ་འདྲིས་སོ་སོར་སྙན་ལགས་ན། །

ཞེས་གསུངས་པས་མདུན་དུ་བསྒོམ་མ་ཤེས་ཀྱང་རང་ཉིད་སངས་རྒྱས་དྲན་པ་མ་གཡེང་ཞིང་དད་གུས་བསྐྱེད་གང་ཐུབ་བྱེད་པ་གལ་ཆེའོ།།" ཞེས་གསུངས་སོ།།

སློབ་དཔོན་ཛི་ཏཱ་རི་དང་ཇོ་བོ་རྗེའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པ་ལས་ནི་བསྒོམ་ཐབས་སྐོར་གསལ་ཁ་གང་ཡང་མི་སྣང་ངོ་།།

གཉིས་པ་རྗེ་བདག་ཉིད་ཆེན་པོ་བློ་བཟང་གྲགས་པའི་ལུགས་ལྟར་ན་སངས་རྒྱས་སོ་ལྔའི་སྒོམ་ཚུལ་ནི། སངས་རྒྱས་སོ་ལྔ་པོ་རྣམས་སྐུ་མདོག་ཀུང་ལྔའི་བདག་ཉིད་ཅན་ལ་ཕྱག་རྒྱ་རྣམ་པ་མི་འདྲ་བ་བརྒྱད་དང་། ཕྱག་མཚན་ཁག་ལྔ་ཅམ་འཛིན་པ་བསྒོམ་དགོས་ཤིང་། ཞིབ་ཕྲ་གོང་ཞུས་ལྟར། དེ་ཡང་སྐྱབས་རྗེ་ཁྲི་བྱང་རིན་པོ་ཆེས་མཛད་པའི་ལམ་རིམ་རྣམ་གྲོལ་ལག་བཅངས་སུ་ཇེ་སྐད་གསུངས་པ་ལྟ་བུ་ཡིན་ཏེ། ཇེ་སྐད་དུ།[1] "ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་ལྷ་རྣམས་ཚོགས་ཞིང་དུ་ཡོད་མོད། འདིར་ནན་ཏན་གྱི་ཚུལ་གྱིས་བླ་མའི་ཐུགས་ཀ་ནས་འོད་ཟེར་སོ་བཞི་སྤྲོས། སྟེང་འོག་ཏུ་བརྩུ་བརྩུ། གཡས་གཡོན་དུ་བདུན་བདུན་ཏེ་གླང་ཆེན་གྱིས་བཏེག་པའི་རིན་པོ་ཆེའི་ཁྲི་སུ་ཏིག་གིས་བརྒྱན་པ་སོ་བཞི་ར་བསྒོམ། གླང་ཆེན་དུད་འགྲོ་གཞན་ལས་སྟོབས་ཆེ་བའི་རྒྱུ་མཚན་གྱིས་དེས་བཞུགས་ཁྲི་འདེགས་པ་སྐབས་འདིར་སྡིག་པ་འདག་པ་ལ་སྟོབས་ཆེ་བའི་རྟེན་འབྲེལ་གྱི་གནད་ཡོད། ལྷ་སོ་ལྔའི་སྐུ་མདོག་ཕྱག་མཚན་ནི་མི་འདྲ་བ་མང་མོད། འོན་ཀུང་འཆར་བདེ་བར་བྱེད་ན་བདུན་མཚན་རེ་རེ་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ལྔའི་སྐུ་མདོག་ཕྱག་མཚན་ཅན་དུ་བྱེད་དེ། དང་པོ་མི་བསྐྱོད་པའི་རྣམ་པ་ཅན་བདུན། དེ་ནས་རིམ་བཞིན་རྣམ་སྣང་། རིན་འབྱུང་། འོད་དཔག་མེད། དོན་གྲུབ་རྣམ་ཅན་བདུན་རེ་བྱ། དང་པོ་བདུན་ལས་ཤཱཀྱ་ཐུབ་པ་ནི་བླ་མའི་ཐུགས་ཀའི་རིས་ཚོག ཀླུ་དབང་རྒྱལ་པོ་མགྲིན་པ་ཡན་དཀར་ལ་གཞན་སྔོན་པོ་ཀླུ་འདུལ་བའི་ཕྱག་རྒྱ་ཞེས་ཕྱག་གཉིས་ཁྲུ་ཚུར་སྦྲུར་བའི་དཀྱིལ་མཛུབ་གཉིས་བྱེན་དུ་སྒྲེང་བ་སྟེ་འདི་གཉིས་དམིགས་བསལ་ཡིན། དེ་དག་ཚོགས་ཞིང་ལས་མདུན་དུ་ཚུར་བྱོན་ཅམ་བྱ།' ཞེས་གསུངས་སོ།།

བཞི་པ་ས་སྐྱ་པཎྜིཏ་ཀུན་དགའ་རྒྱལ་མཚན་གྱི་དགོངས་ཚུལ་ལྟར་ན་ཕུང་པོ་

1 དེབ་གཟུགས། ཤོག ༡༧༥ དགའ་ཤར་ནས་པར་བསྐྲུན། ༡༩༩༨

གསུམ་པའི་མདོ་འདོན་ཐབས་ལས་ཇི་སྐད་དུ།[1] "རང་གི་མདུན་གྱི་ནམ་མཁའི་གནས་སུ་སངས་རྒྱས་སུམ་ཅུ་སོ་ལྔ་པདྨ་དང་ཟླ་བའི་གདན་ལ་བཞུགས་པ་དཀར་པོ་ལ་སོགས་པ་ཁ་དོག་རྣམ་པ་ཅན། སྤྲུལ་པའི་སྐུའི་ཆ་ལུགས་ཀྱིས་བཞུགས་པ། མཚན་བཟང་པོ་སུམ་ཅུ་རྩ་གཉིས་དང་། དཔེ་བྱད་བཟང་པོ་བརྒྱད་ཅུས་བརྒྱན་པ། ཕྱག་རྒྱ་ལྔས་བཞུགས་པ་སྟེ། ཆོས་འཆད། ཏིང་ངེ་འཛིན། མཆོག་སྦྱིན། ས་གནོན། སྐྱབས་སྦྱིན་གྱིས་བཞུགས་པའོ། །གང་ཟག་གི་བློ་ལ་དམིགས་པ་གསལ་བར་འདོད་ན་དཀར་པོ་བདུན་ནི་ཆོས་འཆད་ཀྱིས་བཞུགས་པ། སྔོན་པོ་བདུན་ནི་བདུད་འདུལ་གྱིས་བཞུགས་པ། སེར་པོ་བདུན་ནི་མཆོག་སྦྱིན་གྱིས། དམར་པོ་བདུན་ནི་ཏིང་ངེ་འཛིན་གྱིས། ལྗང་ཁུ་བདུན་ནི་སྐྱབས་སྦྱིན་གྱིས་བཞུགས་པའོ། །དེའང་ཕྱོགས་རེ་རེར་མི་བཞུགས་པར། དཀར་པོ་གཅིག་གི་རྩར་སྔོན་པོ་དང་། སེར་པོ་དང་། དམར་པོ་དང་། ལྗང་ཁུ་སྒྲིལ་བས་བཞུགས་པ། དཀར་པོ་ནས་བཟུང་སྟེ་རིམ་པ་བཞིན་དུ་བཞུ་ཊ་པར་བསྒོམས་ན་བློ་ལ་བདེ་བ་ཡིན་ནོ།" །ཞེས་གསུངས་སོ། །དེ་ལྟར་བདེ་གཤེགས་སོ་ལྔ་སྒོམ་ཚུལ་ཁག་མི་འདྲ་བ་བཞི་ཙམ་ཞིག་ཕྱོགས་བསྒྲིགས་ཞུས་ཤིང་། འདི་དག་ལས་གཞན་ཡང་ཡོད་སྲིད་ཀྱང་ཐུན་ལ་ད་ལྟ་རྙེད་སོན་མ་བྱུང་བས་རེ་ཞིག་བཞག་ཡོད།

ཕྱག་རྒྱ་གལ་ཆེ་བ་འགའ་ཞིག་གི་ངོས་འཛིན།

སྤྱིར་ཕྱག་རྒྱ་ལ་རིགས་དང་རྣམ་དབྱེ་མང་ཞིང་མཐའ་ཡས་ཞིག་ཡོད་པ་ལས་འདིར་ཆེས་གལ་ཆེ་བའི་ཕྱག་རྒྱ་འགའ་ཞིག་གི་ངོ་སྤྲོད་དང་མཚན་དོན་མདོ་ཙམ་ཞུ་རྒྱུ་དང་། དེ་ཡང་ཕྱག་རྒྱ་དེ་རྣམས་རྒྱལ་བ་གང་དང་གང་གི་རྣམ་པ་ཡིན་པ་དང་། དེ་དག་བདེ་གཤེགས་སོ་ལྔའི་སངས་རྒྱས་གང་དང་གང་གིས་རྣམ་པ་ཅན་ཡིན་པ

1 གངས་ཅན་རིགས་མཛོད་དེབ་གྲངས། ༣༥ གླེགས་བམ། ༣ ཤོག ༥༣༥ ༡༩༩༣

གསལ་བཤད་ཐུབ་ན་སྐྱེ་འགྲོ་དུ་མ་ཞིག་རྗེས་སུ་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་ལྷ་རྣམས་བསྒོམ
བཟླས་ལ་བརྩོན་པ་མི་ཉུང་བ་ཞིག་ལ་དེ་དག་དམིགས་པར་འཆར་བདེ་བ་སོགས
ཕན་ནུས་ཆེན་པོ་ཡོང་རེ་བྱས་ཏེ་འགོད་པ་ལ།

དང་པོ་རྒྱལ་བ་རིགས་ལྔའི་གོ་རིམ་དུས་འཁོར་འགྲེལ་ཆེན་དྲི་མེད་འོད་ལྟར་ན། ༡ རྒྱལ་བ་མི་བསྐྱོད་པ། ༢ རྒྱལ་བ་རིན་ཆེན་འབྱུང་གནས། ༣ རྒྱལ་བ་སྣང་བ་མཐའ་ཡས། ༤ རྒྱལ་བ་དོན་ཡོད་གྲུབ་པ། ༥ རྒྱལ་བ་རྣམ་པར་སྣང་མཛད་བཅས་སོ། །དེ་དག་གི་སྙིང་དུ་རྒྱལ་བ་རྡོ་རྗེ་འཆང་ཉིད་བསྟན་ན་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དྲུག་ཏུ་འགྱུར་བ་དང་། དེ་དག་གི་ཕྱག་རྒྱའི་རྣམ་པ་ཡང་། དུས་འཁོར་འགྲེལ་ཆེན་དྲི་མེད་འོད་ལས་ཇི་སྐད་དུ།[1]

༡ "ད་ནི་རྒྱལ་བའི་བདག་པོའི་ཕྱག་རྒྱ་གསུངས་ཏེ་འདིར་ལག་པ་གཉིས་ཀས་རྡོ་རྗེ་ཁུ་ཚུར་བཅིངས་ནས། ཁུ་ཚུར་གྱིས་མཐེ་བོ་བསྣམས་པ་དག་བརླ་གཡས་པ་དང་གཡོན་པའི་སྙིང་དུ་རྡོ་རྗེའི་འདུག་སྟངས་ལ་གནས་པ་ནི་རྡོ་རྗེའི་ཕྱག་རྒྱ་འགྱུར་རོ།།

༢ ད་ནི་མི་བསྐྱོད་པའི་ཕྱག་རྒྱ་གསུངས་ཏེ། ཐུར་སྐྱིལ་ཀྲུང་བྱས་ནས་སྐྱིལ་ཀྲུང་དེ་ལ་ལག་པ་གཡོན་པ་གན་རྐྱལ་དུ་འགྱུར་ཏེ་གཡས་པ་དཔུས་མོ་གཡས་པའི་ཕྱོགས་ནས་ཇི་སྲིད་ས་ལ་རེག་པའི་བར་དུ་ས་ལ་སོན་པར་གྱུར་པ་སྟེ། དེ་ལྟར་ས་ལ་རེག་པ་མི་བསྐྱོད་པའི་ཕྱག་རྒྱའོ།།

༣ སླར་ཡང་རིམ་པ་དེ་ཉིད་ཀྱིས་འོན་ཀྱང་ལག་པ་གཡས་པ་གན་རྐྱལ་ནི་ཕྱག་ན་རིན་ཆེན་ཏེ་མཆོག་སྦྱིན་གྱི་ཕྱག་རྒྱའོ།།

1 Toh- 1347 ཐོ། བསྟན། རྒྱུད་འགྲེལ། "ད" ༡༧༣ བ ༤

༤ དེ་བཞིན་དུ་སྐྱིལ་ཀྲུང་ལ་ལག་པ་གཡོན་པའི་སྟེང་དུ་ལག་པ་གཡས་པ་གན་རྐྱལ་མཉམ་པར་གནས་པ་ནི་ཕྱག་ན་པདྨ་སྟེ། སྣང་བ་མཐའ་ཡས་ཀྱི་ཏིང་ངེ་འཛིན་གྱི་ཕྱག་རྒྱའོ།།

༥ དེ་བཞིན་དུ་ལག་པ་གཡོན་པའི་མཐིལ་གན་རྐྱལ་དུ་སྐྱིལ་ཀྲུང་གི་སྟེང་དུ་སྟེ། གཞན་པ་ལག་པ་གཡས་པའི་མཐིལ་པུས་མོ་གཡས་པའི་སྟེང་དུ་འཛིན་པ་མེད་པ་རབ་ཏུ་སྦྱིན་པ་ནི་ཕྱག་ན་རལ་གྲི་ཞེས་པ་དོན་ཡོད་གྲུབ་པའི་མི་འཇིགས་པའི་ཕྱག་རྒྱའོ།།

༦ དེ་བཞིན་དུ་གཡས་པའི་ཁྲུ་ཚུར་གཡས་མིན་གྱི་ཁྲུ་ཚུར་ལ་སྟེ་མཐེབ་མོ་གཡོན་པ་གང་ཡིན་པ་དེ་སླར་ཡང་གཞན་སྟེང་དུ་ཁྲུ་ཚུར་བཅིངས་པ་ལ་མཐེབ་མོ་རབ་ཏུ་ཞུགས་པ་འདི་ནི་རྣམ་པར་སྣང་མཛད་ཀྱི་བྱང་ཆུབ་མཆོག་གི་ཕྱག་རྒྱ་སྟེ་འདི་ནི་གསལ་བར་སྤྱིང་ཁར་སོན་པའོ།།

༧ དེ་བཞིན་དུ་གཞན་པ་ཆོས་ཀྱི་འཁོར་ལོའི་ཕྱག་རྒྱ་ནི། ལག་པ་གཡོན་པ་དང་། གཡས་པའི་མཐེབ་མོ་མཐེ་བོ་སྦྲར་བ་གདུ་བུ་བཞིན་དུ་བྱུར་ཅིང་། ཀླུམ་པོ་གཡོན་པའི་སེན་མོ་འདུས་པ་ལ་གཡས་པའི་སེན་མོ་འདུས་པ་སྟོན་པའི་སྦྱོར་བས་གང་མོ་ལ་སོགས་པ་བརྐྱང་བ་མིང་མེད་དང་། མཐེབ་ཆུང་ཅུང་ཟད་སྟེང་དུའོ་ཞེས་པ་སྙིང་གའི་ཕྱོགས་སུ་ཆོས་ཀྱི་འཁོར་ལོའི་ཕྱག་རྒྱ་སྟེ། དེ་ལྟར་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ལྔག་ཏུ་ངེས་པའོ། ” །ཞེས་གསུངས་སོ།།

ཡང་། ༧གོང་ས་ལྔ་པ་ཆེན་པོ་ཐུབ་བསྟན་རྒྱ་མཚོ་དང་རྗེ་ས་པཎ་གྱི་ཕྱག་བཞེས་ལྟར་ན། རྒྱལ་བ་རིགས་ལྔའི་སྐུ་མདོག་ཕྱག་རྒྱའི་རྣམ་པ་ནི།

༡ དབུས་སུ་རྒྱལ་བ་རྣམ་པར་སྣང་མཛད་སྐུ་མདོག་དཀར་པོ་བྱང་ཆུབ་མཆོག་གི་ཕྱག་རྒྱ་ཅན།

༢ ཤར་དུ་རྒྱལ་བ་མི་བསྐྱོད་པ། སྐུ་མདོག་སྔོན་པོ། ས་གནོན་མཉམ་གཞག་གི་ཕྱག་རྒྱ་ཅན།

༣ ལྷོ་ན་རྒྱལ་བ་རིན་ཆེན་འབྱུང་གནས། སྐུ་མདོག་སེར་པོ། ས་གནོན་མཆོག་སྦྱིན་གྱི་ཕྱག་རྒྱ་ཅན།

༤ ནུབ་ན་རྒྱལ་བ་འོད་དཔག་མེད་དམ་སྣང་བ་མཐའ་ཡས། སྐུ་མདོག་དམར་པོ། ཏིང་ངེ་འཛིན་གྱི་ཕྱག་རྒྱའམ་མཉམ་གཞག་གི་ཕྱག་རྒྱ་ཅན།

༥ བྱང་དུ་རྒྱལ་བ་དོན་ཡོད་གྲུབ་པ། སྐུ་མདོག་ལྗང་གུ སྐྱབས་སྦྱིན་མཉམ་གཞག་གི་ཕྱག་རྒྱ་ཅན་དུ་གནས་པར་གསལ་ལོ།།

དེ་མིན་སྐྱབས་རྗེ་ཕ་བོང་ཁ་རིན་པོ་ཆེའི་གསུང་སྐྱབས་རྗེ་ཁྲི་བྱང་རིན་པོ་ཆེས་ཟིན་བྲིས་མཛད་པའི་ལམ་རིམ་རྣམ་གྲོལ་ལག་བཅངས་སུ་རྒྱལ་བ་རིགས་ལྔའི་སྐུ་མདོག་ཕྱག་རྒྱ་ནི། ཇི་སྐད་དུ།[1]

༡ རྒྱལ་བ་མི་བསྐྱོད་པ། སྐུ་མདོག་སྔོན་པོ།
༢ རྒྱལ་བ་རྣམ་པར་སྣང་མཛད། སྐུ་མདོག་དཀར་པོ།
༣ རྒྱལ་བ་རིན་ཆེན་འབྱུང་གནས། སྐུ་མདོག་སེར་པོ།
༤ རྒྱལ་བ་འོད་དཔག་མེད། སྐུ་མདོག་དམར་པོ།
༥ རྒྱལ་བ་དོན་ཡོད་གྲུབ། སྐུ་མདོག་ལྗང་གུ་ཞེས་གསུངས་སོ།།

དེ་ལྟར་རྒྱལ་བ་རིགས་ལྔའི་གོ་རིམ་སྒྲིག་ཚུལ་ལ་དཔྱད་ན་འགྲེལ་ཆེན་དྲི་མེད་འོད་ལས་གཞན་པ་རྣམས་ལས་ནི་རྒྱལ་བ་རིགས་ལྔའི་དང་པོ་མི་བསྐྱོད་པ་དང་རྣམ་སྣང་གཉིས་ཀྱི་གོ་རིམ་གོང་འོག་གི་ཁྱད་པར་ཙམ་མ་གཏོགས་ལྷག་མ་གསུམ་གྱི་གོ་རིམ་ལ་ཁྱད་པར་མེད་པ་ལྟ་བུ་སྣང་ངོ་།།

1 དེབ་གཟུགས། ཤོག ༡༧༥ དགའ་ཤར་ནས་དཔར་བསྐྲུན། ༡༩༩༨

ཕྱག་རྒྱའི་མཚན་དོན་ངོ་སྤྲོད།

༡ ཆོས་འཁོར་གྱི་ཕྱག་རྒྱའི་མཚན་དོན་ནི། ཕྱག་གཡས་གཡོན་གྱི་མཐེ་བོང་དང་། མཛུབ་མོ་གཉིས་ཕན་ཚུན་རྩེ་སྤྲད་པ་ནི། ལམ་ཐབས་ཤེས་གཉིས་ཟུང་དུ་འབྲེལ་བ་མཚོན། གུང་མོ་དང་། མིང་མེད། མཐེའུ་ཆུང་གསུམ་གྱེན་དུ་བསྒྲེངས་ཏེ་གནས་པ་དེས་གདུལ་བྱ་རིགས་གསུམ་གྱི་དབང་པོ་རབ་འབྲིང་ཐ་གསུམ་ལ་བལྟོས་ཏེ་རིམ་བཞིན་ལམ་ལྔ་ལ་འཁྲིད་བཞིན་པ་མཚོན། ཕྱག་གཡས་གཡོན་གཉིས་ཕན་ཚུན་ཁ་སྦྱོར་གྱི་ཚུལ་དུ་གནས་པ་ནི། གདུལ་བྱ་རིགས་ཅན་གསུམ་ལ་བླང་དོར་གྱི་གནད་ཕྱིན་ཅི་མ་ལོག་པ་སྟོན་པར་མཛད་པ་ལྟར་རང་ཉིད་ཀྱིས་ཀྱང་ཉམས་པ་མེད་པ་ཕྱག་བཞེས་སུ་མཛད་པའི་མཚོན་དོན་ཡིན།

༢ ཕྱག་གཉིས་མཉམ་གཞག་གི་ཕྱག་རྒྱའི་མཚན་དོན་ནི། ཕྱག་གཡོན་འོག་དང་། གཡས་སྟེང་དུ་བཞག་ནས་མཐེ་བོང་གཉིས་ཕན་ཚུན་རྩེ་སྤྲད་པ་ནི་མཐེ་བོང་ལ་བྱང་ཆུབ་སེམས་ཀྱི་དགེ་རྩ་གནས་པས། དེ་གཉིས་ཕན་ཚུན་དྲོད་སྐྱེ་བའི་འཕན་པ་བྱས་པས་བྱང་ཆུབ་ཀྱི་སེམས་གོང་འཕེལ་དུ་སོང་སྟེ། མཁའ་ཁྱབ་འགྲོ་བ་ཡོངས་ཀྱི་འདོད་དོན་འབད་མེད་ལྷུན་གྱིས་འགྲུབ་པ་དང་། མཉམ་བཞག་ནམ་མཁའ་ལྟ་བུ་དང་། རྗེས་ཐོབ་སྒྱུ་མ་ལྟ་བུ་དུས་ཅིག་ཅར་དུ་མཛད་པ་མཚོན།

༣ ས་གནོན་མཉམ་གཞག་གི་ཕྱག་རྒྱའི་མཚན་དོན་ནི། ཕྱག་གཡས་ས་གནོན་མཛད་པ་ནི། བདུད་དམག་བྱེ་བ་འཁོར་དང་བཅས་པ་སྟེ་བདུད་བཞི་ལས་ལྷའི་བུའི་བདུད་བཅོམ་པ་མཚོན། གཡོན་མཉམ་བཞག་གི་ཕྱག་རྒྱ་མཛད་པ་ནི། ཐུགས་ཏིང་ངེ་འཛིན་ལས་མི་གཡོ་བ་དང་། ལྷུང་བཟེད་བདུད་རྩིས་གང་བ་བསྣམས་པ་ནི། གསུང་ཚངས་པའི་དབྱངས་ཀྱིས་གདུལ་བྱ་རིགས་ཅན་གསུམ་ལ་ཆོས་ཀྱི་འཁོར་ལོ་རྒྱུན་མི་ཆད་པ་བསྐོར་བ་མཚོན། ཡང་ན། དེ་ལྟ་བུའི་བདུད་རྩི་དེས་སྐྱེ་རྒ་ན་

བ་མེད་པ་སྨན་གྱི་བདུད་རྩིས་ཕུང་པོའི་བདུད་དང་།ལས་ཉོན་གྱིས་འཆི་བ་མེད་པ་ཚེ་ཡི་བདུད་རྩིས་འཆི་བདག་གི་བདུད་དང་། ཟག་པ་མེད་པ་ཡེ་ཤེས་ཀྱི་བདུད་རྩིས་ཉོན་མོངས་པའི་བདུད་དེ། མདོར་ན། བདུད་བཞི་བཅོམ་པའམ་དེ་ལས་རྣམ་པར་རྒྱལ་བ་མཚོན་པ་ཡིན་ནོ།།

༤ མཆོག་སྦྱིན་མཉམ་བཞག་གི་ཕྱག་རྒྱའི་མཚོན་དོན་ནི། ཕྱག་གཡོན་ཐུགས་ཏིང་ངེ་འཛིན་ལས་མི་གཡོ་བ་མཉམ་པར་འཇོག་བཞིན་པའི་ངང་ཕྱག་གཡས་མཆོག་སྦྱིན་གྱིས་སྐལ་ལྡན་གྱི་གདུལ་བྱ་རྣམས་ལ་མཆོག་དང་། ཐུན་མོང་གི་དངོས་གྲུབ་ཅི་དང་ཅི་འདོད་པ་ཡིད་བཞིན་དུ་སྩོལ་བར་མཛད་པ་མཚོན་ནོ།།

༥ བྱང་ཆུབ་མཆོག་གི་ཕྱག་རྒྱའི་མཚོན་དོན་ནི། ཕྱག་གཡས་གཡོན་གྱི་གུང་མོ། མིང་མེད། མཐེའུ་ཆུང་བཅས་དྲུག་ཕན་ཚུན་བཅིངས་ཏེ་ཁྲུ་ཚུར་ལྟ་བུ་རབ་ཏུ་གནས་པ་ནི། སངས་རྒྱས་ཀྱི་གོ་འཕང་ཐོབ་པར་ཕར་ཕྱིན་དྲུག་གི་ཉམས་ལེན་ལ་བསླབ་དགོས་པ་མཚོན། མཛུབ་མོ་གཉིས་བསྒྲེངས་ཏེ་ཕན་ཚུན་རྩེ་སྦྲད་དེ་འགུག་ཅིང་གནས་པ་ནི། སངས་རྒྱས་ཀྱི་གོ་འཕང་ཐོབ་པར་ཐབས་ཀྱི་ཆ་ཕར་ཕྱིན་སྔ་མ་ལྔ་དང་། ཤེས་རབ་ཀྱི་ཆ་ཕར་ཕྱིན་ཐ་མ་ཤེས་རབ་གཉིས་ཟུང་དུ་འབྲེལ་བ་ལས་རྣམ་མཁྱེན་གྱི་གོ་འཕང་མཆོག་ལ་རེག་ཐུབ་པ་མཚོན། ཕྱག་གཡས་གཡོན་གཉིས་ཀྱི་མཐེ་བོང་གཉིས་གཤིབ་ཏེ་འགུག་ནས་ནང་དུ་རབ་ཏུ་བཞག་པ་ནི་ཐབས་ཤེས་ཟུང་དུ་འབྲེལ་བ་ལས་མཐར་འབྲས་བུ་ཆོས་གཟུགས་ཀྱི་སྐུ་གཉིས་ཐོབ་ཐུབ་པའི་མཚོན་དོན་ཡིན། བྱང་ཆུབ་མཆོག་གི་མཚོན་དོན་སྐོར་གསལ་བ་ཞིག་ད་བར་རྙེད་སོན་མ་བྱུང་ཡང་། ཕྱག་རྒྱའི་དབྱིབས་ཀྱི་རང་བཞིན་ལ་རྗེས་སུ་དཔག་པའི་བློ་ནས་མཚོན་དོན་འདི་ལྟ་བུ་ཞིག་དགོས་པ་སེམས་ཏེ་རང་གིས་ཉེ་བར་སྦྱར་བའོ།།

སློབ་དཔོན་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱིས་མཛད་པའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པའི་གཞུང་གི་བསྡུས་དོན།

བྱང་ཆུབ་ཀྱི་ལྟུང་བ་བཤགས་པའི་འགྲེལ་པ་ཞེས་བྱ་བའི་གཞུང་འདི་ཕྱི་ལོ་བརྒྱ་ཕྲག་དགུ་པའི་ནང་རྒྱ་གར་གྱི་སློབ་དཔོན་ཆེན་པོ་ཞི་བ་འཚོ་དང་། བསྟན་པ་སྔ་དར་གྱི་ལོ་ཙྪ་བ་གཉགས་དེཝ་གོ་ཥ་ལེགས་སྦྱར་ནས་བོད་སྐད་དུ་ཕབ་བསྒྱུར་མཛད། གཞུང་འདིའི་འགྱུར་ཕྱག་རྗེ་བཙུན་འཇམ་དབྱངས་དང་ཤཱཀྱ་ཐུབ་པ་གཉིས་ཀར་བྱས་ཤིང་། གཞུང་གི་མཆོད་བརྗོད་སྟོན་པ་ཤཱཀྱ་ཐུབ་པ་དང་བཅོམ་པར་དམ་བཅའི་སྐབས་ལུང་དང་མན་ངག་གཉིས་ཀའི་སྒོ་ནས་བཤད་པར་བྱའོ་ཞེས་བརྗོད་འདུག

བདག་ཅག་གི་སྟོན་པ་ཤཱཀྱ་ཐུབ་པས་གསུངས་པའི་ཆོས་ཕུང་བརྒྱད་ཁྲི་བཞི་སྟོང་གི་ཆོས་ཕུང་ཐམས་ཅད་ཡོངས་སུ་བསྡུ་ན་སྡེ་སྣོད་གསུམ་དུ་བསྡུས་པ་དང་། ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་འདི་སྡེ་སྣོད་གསུམ་ལས་འདུལ་བའི་སྡེ་སྣོད་ཀྱི་ཁོངས་སུ་གཏོགས་པ་དང་། ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་འདི་གསུངས་དགོས་དོན་གྱི་ལོ་རྒྱུས་བཅས་རིམ་པ་བཞིན་དུ་གསལ། དེའི་འོག་ཏུ་གཞུང་འདིའི་དགོས་སོགས་ཆོས་བཞི་དང་གཞུང་ཡོངས་རྫོགས་ཕུང་པོ་གསུམ་དང་། ཡན་ལག་བདུན་དང་། སྟོབས་བཞིར་བསྡུ་ཚུལ་ཡོད་པ་ཡང་བསྟན། མཚམས་མེད་པ་ལ་སོགས་པའི་ལྟུང་བ་ཚབས་ཆེན་པོ་བྱུང་ན་དེ་ཇི་ལྟར་བཤགས་པའི་ཐབས་དང་ཐུན་ཇི་ཙམ་དུ་ཕྱེ་ནས་བཤགས་ཚུལ་ཡང་གསལ།

ཡང་འགའ་ཞིག་གིས་མདོ་འདིའི་དཔྱར། འདི་སྐད་བདག་གིས་ཐོས་པ་དུས་གཅིག་ན་ཞེས་སོགས་ཀྱི་གླེང་གཞི་དང་། མཇུག་ཏུ་བཅོམ་ལྡན་འདས་ཀྱིས་གསུངས་པ་ལ་མངོན་པར་བསྟོད་དོ། །ཞེས་སོགས་ཀྱི་གསལ་ཁ་མེད་པས་མདོ་ཡིན་མིན་ལ་ཐེ་ཚོམ་དུ་འགྱུར་པ་རྣམས་ཀྱི་ལོག་རྟོག་སེལ་ཕྱིར་མདོ་འདི་འཕགས་པ་དཀོན་མཆོག་བརྩེགས་པའི་ཆ་ཤས་སུ་གཏོགས་པས་དེ་ལྟར་མི་དགོས་པའི་

གསལ་བཤད་ཀྱང་གནང་། དེའི་རྗེས་སུ་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་མདོ་འདིའི་ཞུ་བ་པོ་འཕགས་པ་ཉེ་བར་འཁོར་དང་མདོ་འདི་ལ་ཕུང་པོ་གསུམ་པ་ཞེས་བརྗོད་དོན་འགྲེལ་བརྗོད་མཛད།

ལྟུང་བ་བཤགས་པའི་ཚུལ་ལ་དོན་དམ་གྱི་སྒོ་ནས་བཤགས་ཚུལ་ཞིག་དང་། ཀུན་རྫོབ་ཀྱི་སྒོ་ནས་བཤགས་ཚུལ་བཅས་གཉིས་ཡོད་པ་ལས། དོན་དམ་གྱི་སྒོ་ནས་བཤགས་ཚུལ་འདི་མ་སྐྱེས་དགྲའི་འགྱོད་པ་སེལ་བའི་མདོའི་དགོངས་དོན་ལྟར་ཆོས་ཐམས་ཅད་རང་བཞིན་མེད་པ་ཡིད་ལ་བྱེད་པའི་སྒོ་ནས་བཤགས་པ་དང་། ཀུན་རྫོབ་ཀྱི་བཤགས་ཚུལ་ནི། སྟོབས་བཞིས་འགྱོད་པ་དང་བཅས་པའི་སྒོ་ནས་བཤགས་དགོས་པ་བཅས་གསལ།

སྐབས་དོན་གཞུང་འདིའི་བརྗོད་བྱ་ཡོངས་རྫོགས་སྟོབས་བཞིའི་སྒོ་ནས་བཤགས་ཚུལ་གྱི་ནང་དུ་བསྡུས་འདུག དང་པོ་རྟེན་གྱི་སྟོབས་ནི། **བདག་མིང་**ཞེས་སོགས་ནས་**དགེ་འདུན་ལ་སྐྱབས་སུ་མཆིས་བ**འོ། །ཞེས་པའི་བར་གྱིས་བསྟན།

གཉིས་པ་རྣམ་པར་སུན་འབྱིན་པའི་སྟོབས་ནི། **དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དགྲ་བཅོམ་པ་ཡང་དག་པ་**ཞེས་པ་ནས། **སོ་སོར་འཆགས་སོ།** **།མི་འཆབ་བོ།** །ཞེས་པས་བསྟན།

གསུམ་པ་ཉེས་པ་ལས་ཀུན་ཏུ་ལྡོག་པའི་སྟོབས་ནི། **སླད་ཆད་ཀྱང་གཅོད་ཅིང་སྡོམ་པ་བགྱི་ལགས་སོ་**ཞེས་པས་བསྡུས་པ་དང་།

བཞི་པ་གཉེན་པོ་ཀུན་ཏུ་སྤྱོད་པའི་སྟོབས་ནི། **སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་དེ་དག་ཐམས་ཅད་བདག་ལ་དགོངས་སུ་གསོལ་**ཞེས་པ་ནས། **བྱང་ཆུབ་ཏུ་ཡོངས་སུ་བསྔོ་བར་བགྱིའོ་** ཞེས་པའི་བར་གྱིས་བསྡུ་ཚུལ་བསྟན་ནོ།། ཐོག་མར་རྟེན་གྱི་སྟོབས་བསྟན་པའི་སྐབས་སུ་མཆོག་གསུམ་ལ་སྐྱབས་འགྲོ་བྱེད་སྐབས་ལུས་ངག་ཡིད་གསུམ་གྱི་སྒོ་ནས་བྱེད་དགོས་པ་དང་སྐྱབས་གསུམ་སོ་སོའི་ངོ་

པོ་བསྟན།

སྟོབས་གཉིས་པ་རྣམ་པར་སྨིན་འབྱིན་པའི་སྟོབས་བསྟན་པའི་སྐབས་སུ་སངས་རྒྱས་སོ་ལྔ་པོ་ཚང་མའི་མཚན་དོན་དང་སྦྲགས་ཏེ་ཕྱོགས་དང་། ཞིང་དང་། སྐུ་མདོག ཕྱག་མཚན། འཁོར་དང་། ཕྱག་རྒྱ་རྣམས་རེ་རེ་བཞིན་ཞིབ་པར་བསྟན། དེ་རྗེས་སངས་རྒྱས་སོ་ལྔ་པོ་དེ་དག་གི་སྤྱན་སྔར་སྡིག་པ་བཤགས་ཚུལ་བསྟན་པའི་སྐབས་ངག་གི་བརྗོད་པ་ཇི་དགོས་དང་། ཕྱོགས་བཅུའི་སངས་རྒྱས་ཐམས་ཅད་ཇི་ལྟར་དམིགས་པའི་ཚུལ་ཡང་བསྟན། དེ་ནས་བཤགས་པ་རང་གི་ངོ་བོ་བསྟན་པ་ན། སྐྱེ་བ་ཐོག་མ་མེད་པ་ནས་བསགས་པའི་རང་གི་སྡིག་པའི་ལས་བྱས་པ་ལ་འགྱོད་སེམས་བྱེད་ཚུལ་དང་། སྡིག་པ་དེ་དག་བྱུང་བའི་རྒྱུ་ནམ་གཞི་འདོད་ཆགས་ལ་སོགས་པ་ཉོན་མོངས་དུག་གསུམ་དང་། སྡིག་པ་མི་དགེ་བ་བཅུ་པོ་དེ་དག་བྱས་པ་ལས་འབྲས་བུ་ངན་སོང་ངན་འགྲོ་གསུམ་དུ་ལྟུང་སྟེ་རྣམ་སྨིན་འབྲས་བུ་སྡུག་བསྔལ་ལྡི་ཡང་རིམ་པར་བྱུང་བ་སོགས་ཀྱང་བསྟན། གཞན་ཡང་རང་གིས་སྡིག་པ་དངོས་སུ་བྱས་པ་དང་། གཞན་ལ་བྱེད་དུ་བཅུག་པ་དང་། གཞན་གྱིས་བྱེད་པར་ཡི་རང་བ་རྣམས་ཀྱི་རྣམ་པར་སྨིན་པ་ཡང་མཚུངས་པར་བསྟན། སྤྱིར་སྡིག་པ་ལ། བྱས་ལ་མ་བསགས་པ། མ་བྱས་ཀྱང་བསགས་པ། བྱས་ལ་བསགས་པ་སོགས་གསུམ་ཡོད་པ་ཡང་བསྟན། སྡིག་པ་ཤིན་ཏུ་ལྡི་བ་ནི་རང་གི་ཕ་མ་ལ་སོགས་པ་བསད་པ་མཚམས་མེད་པ་ལྔ་ཡིན་པ་དང་། དེའི་འབྲས་བུ་བར་དོ་མེད་པར་ཐད་ཀར་དམྱལ་བར་འགྲོ་བས་རྣམ་སྨིན་ལྡི་བའི་ཚུལ་བསྟན། དེས་ན་རང་གིས་སྡིག་པ་ཅི་བྱས་པ་ངེས་པར་བཤགས་པ་ལ་འབད་དགོས་པ་དང་། བཤགས་ཚུལ་ཡང་འགྱོད་སེམས་དྲག་པོས་བཤགས་དགོས་པ་ལས། འགྱོད་སེམས་མེད་པར་མི་འདག་པར་གསུངས། ཡང་ལས་མི་དགེ་བའི་རྣམ་པར་སྨིན་པ་མི་ཁོམ་པ་བརྒྱད་སོ་སོར་བསྟན། དེ་རྗེས་སྡིག་པ་དེ་དག་བཤགས་བྱའི་ཡུལ་སངས་རྒྱས་ཁོ་ན་ཡིན་

པ་དང་། བཤགས་པའི་ཚུལ་ཡང་། མཐོལ་བ་ལ་སོགས་པ་ནས་མི་སྦེད་དོ་ཞེས་པའི་བར་གྱིས་བསྟན་པ་གསུངས།

དེའི་མཚམས་སུ་ཉེས་པ་ལས་ལྡོག་པའི་སྟོབས་བསྟན། སྟོབས་གསུམ་པོ་དེའི་སྐོར་བསྟན་རྗེས་གཉེན་པོ་ཀུན་དུ་སྤྱོད་པའི་སྟོབས་བསྟན་པ་ནི་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོའི་གོ་རིམ་དང་བསྟུན་ཏེ་བསྟན་པའོ། །འཕགས་པ་ཆོས་བཞི་པའི་མདོའི་དབང་དུ་བྱས་ན་རྣམ་པར་སུན་འབྱིན་པ་ཀུན་དུ་སྤྱོད་པ་དང་པོ་དང་དེ་ནས་གཉེན་པོ་ཀུན་དུ་སྤྱོད་པ་དང་། ཉེས་པ་ལས་སླར་ལོག་པའི་སྟོབས་དང་དེའི་འོག་ཏུ་རྟེན་གྱི་སྟོབས་ཐ་མར་བསྟན་ཏེ་ཇི་སྐད་དུ་འཕགས་པ་ཆོས་བཞི་པའི་མདོ་ལས།[1] ཇི་སྐད་དུ། "བྱམས་པ་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་ཆེན་པོ་ཆོས་བཞི་དང་ལྡན་ན་སྡིག་པ་བྱས་ཤིང་བསགས་པ་ཟིལ་གྱིས་གནོན་པར་འགྱུར་རོ། །བཞི་གང་ཞེ་ན། འདི་ལྟ་སྟེ། རྣམ་པར་སུན་འབྱིན་པ་ཀུན་དུ་སྤྱོད་པའི་སྟོབས། གཉེན་པོ་ཀུན་དུ་སྤྱོད་པ་དང་། སོར་ཆུད་པར་བྱེད་པའི་སྟོབས་དང་། རྟེན་གྱི་སྟོབས་སོ།།" ཞེས་གསུངས་སོ།།

རང་གི་དགེ་བ་བསྔོ་ཚུལ་བསྟན་པའི་སྐབས་སུ་ཕྱིན་དྲུག་གི་སྒོ་ནས་བསྔོ་ཚུལ་བསྟན་པ་ལས། སྦྱིན་པ་ལ་སོར་པ་ཕར་ཕྱིན་ཐ་མ་ལྔ་ནི་བླ་ན་ཡོད་པའི་བསྔོ་བ་དང་། ཕྱི་མ་སྟེ་དྲུག་པ་ཤེས་རབ་ཀྱི་ཕ་རོལ་ཏུ་ཕྱིན་པ་ནི་བླ་ན་མེད་པའི་བསྔོ་བ་བསྟན།

བསྔོ་བར་བྱ་བའི་ཡུལ་ནི། ཕྱིན་དྲུག་དེ་དག་ཀུང་གཅིག་ཏུ་བསྡོམས་ཏེ་རང་བཞིན་མེད་པའི་ཚུལ་གྱིས་བསྔོ་བ་གསུངས། བླ་ན་མེད་པ་དང་། གོང་ན་མེད་པ་སྟེ་སངས་རྒྱས་སོ། །ཇི་ལྟར་བསྔོ་བའི་ཚུལ་ལའང་། འཁོར་གསུམ་ཡོངས་སུ་དག་པ་སྟེ་མི་དམིགས་པའི་སྒོ་ནས་བསྔོ་བ་དང་། ཕུང་པོ་གསུམ་དང་མཐུན་པའི་བསྔོ་ཚུལ་གཉིས་བསྟན་པ་ལས་བསྔོ་བ་ཕྱི་མ་དེ་སྡིག་པ་བཤགས་པ་དང་། རྗེས་སུ་ཡི་རང་བ་དང་། གསོལ་བ་འདེབས་པ་སྟེ་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་སྒོ་ནས་བསྔོ་ཚུལ་

1 Toh-249 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "ཟ" ༥༩ བ ༡

ཡིན་པ་བསྟན། དེའི་སྒོ་ནས་བསྔོས་ན་བསོད་ནམས་ཀྱི་ཚོགས་དཔག་ཏུ་མེད་པ་གསོག་པ་དང་ཉེས་ལྟུང་རྣམས་བྱང་བར་འགྱུར། དེ་ནས་སྨོན་ཚུལ་བསྟན་པ་ནི། མི་མཆོག་རྒྱལ་བ་གང་དག་ལྟར་བཞུགས་པ་དང་། །ཞེས་སོགས་ཤློ་ཀ་གཅིག་པོ་འདིས་བསྟན་རྗེས་བསླབ་བྱ་དང་བསྔོ་བ། བཅས་ཕྱག་འཚལ་བ་བཅས་ཤློ་ཀ་ལྔ་བཤད་རྗེས་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་འདིའི་འགྲེལ་པ་རྫོགས་པར་མཛད་དོ།།

སློབ་དཔོན་ཛེ་ཏཱ་རིས་མཛད་པའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པའི་གཞུང་གི་བསྡུས་དོན།

བྱང་ཆུབ་ཀྱི་ལྟུང་བ་བཤགས་པའི་འགྲེལ་པ་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་བསླབ་པའི་རིམ་པ་ཞེས་བྱ་བ་འདི་ནི་ཕྱི་ལོ་བརྒྱ་ཕྲག་བཅུ་པའི་ནང་བྱོན་པའི་སློབ་དཔོན་ཛེ་ཏཱ་རིས་མཛད་ནས་ཕྱི་ལོ་བརྒྱ་ཕྲག་བཅུ་གཉིས་པའི་ནང་བོད་ཀྱི་ཚག་ལོ་ཙཱ་བས་ལེགས་སྒྱུར་ནས་བོད་སྐད་དུ་ཕབ་བསྒྱུར་མཛད་ཅེས་གསལ།

གཞུང་འདིའི་འགྱུར་ཕྱག་ནི་ཡོངས་གྲགས་དང་མི་མཐུན་པ་འཕར་པའི་ཚིར་ལ་བྱས་འདུག་པས་སྡེ་སྣོད་གསུམ་ལས་གང་གི་ཁོངས་སུ་འཇོག་དགོས་མིན་གྱི་གསལ་ཁའང་བྱེད་དཀའ་བ་འགྱུར་ཞིང་། མཆོད་བརྗོད་ནི་ཀུན་མཁྱེན་སྤྱི་དང་། གཞུང་གི་དགོངས་པ་ཡོངས་རྫོགས་བསྡུས་དོན་དང་ཡན་ལག་གི་དོན་གཉིས་སུ་བསྡུས་ཤིང་། བསྡུས་དོན་ནང་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་གང་དག་སེམས་ཅན་ཐམས་ཅད་ཀྱི་དོན་དུ་བྱང་ཆུབ་ཏུ་སེམས་བསྐྱེད་ནས་ངེས་ལེགས་རྣམ་མཁྱེན་གྱི་གོ་འཕང་ཐོབ་པར་བརྩོན་བཞིན་པའི་སྐབས་ཉེས་ལྟུང་སོགས་ཕོག་ན་དེ་ལས་གྲོལ་ཐབས་ཀྱི་ཆེད་སྟོན་པ་བཅོམ་ལྡན་འདས་ཀྱིས་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་འདི་གསུངས་ཞེས་བསྟན།

སྤྱིར་ཉེས་པ་ལ་ཕམ་པ་དང་ཉེས་བྱས་གཉིས་དང་། ཕམ་པ་ལ་ཐུན་མོང་དང་ཐུན་མོང་མ་ཡིན་པ་གཉིས་དང་། ཕམ་པ་ལས་ལྡོག་ཆེད་སྡོམ་པ་གསུམ་ལེན་དགོས་པ་དང་ཉེས་པ་ལས་ལྡོག་ཆེད་གང་ཟག་གསུམ་དང་། གཅིག་དང་སངས

རྒྱས་སོ་ལྔ་སོགས་ལ་བསྟེན་ཏེ་བཤགས་དགོས་པ་བསྟན་པའི་སྒོ་ནས་བསྡུས་དོན་རྟོགས་པར་བྱས་འདུག

ཡན་ལག་གི་དོན་བསྟན་པའི་སྐབས་སྐབས་གསུམ་གྱི་ངོ་སྤྲོད་དང་། སྨྲ་བཤད་དང་། དབྱེ་བ་སོགས་བསྟན་རྗེས་སངས་རྒྱས་སོ་ལྔ་པོ་ཚང་མའི་མཚན་དོན་ཞིབ་པར་བསྟན། འདིར་བསྟན་པའི་སངས་རྒྱས་སོ་ལྔའི་མཚན་དོན་དང་འཕགས་པ་ཀླུ་སྒྲུབ་ཞབས་ཀྱིས་སངས་རྒྱས་སོ་ལྔའི་མཚན་དོན་བསྟན་ཚུལ་ལ་ཁྱད་པར་ཆེའོ།།

དེའི་འོག་སྡིག་པ་བཤགས་པ་བསྟན་པ་ནི། སྡིག་པ་བཤགས་པའི་ཡུལ་ལ་གོང་དུ་བསྟན་པའི་སངས་རྒྱས་སོ་ལྔ་པོ་དེ་དག་དང་། ཕྱོགས་བཅུ་ན་འཚོ་ཞིང་བཞུགས་པའི་སངས་རྒྱས་དེ་དག་གི་སྤྱན་སྔར་རང་གིས་འཁོར་བ་ཐོག་མ་མེད་པ་ནས་བསགས་པའི་སྡིག་པ་རང་གིས་བྱས་པའམ་གཞན་ལ་བྱེད་དུ་བཅུག་པའམ། གཞན་གྱིས་བྱས་པ་ལ་རྗེས་སུ་ཡི་རང་བ་གང་བྱས་པ་ཐམས་ཅད་སྙིང་ཐག་པ་ནས་འགྱོད་དེ་ལུས་ངག་ཡིད་གསུམ་གྱི་སྒོ་ནས་བཤགས་དགོས་པ་བསྟན། ཉེས་པའི་ཚོགས་གཞན་རང་གིས་མི་ཤེས་པའི་དབང་གིས་མཆོད་རྟེན་བཤིག་པ་དང་། དགེ་འདུན་གྱི་དཀོར་ཕྲོགས་པ་དང་། མི་དགེ་བ་བཅུའི་ལས་སྤྱོད་པ་དང་། མཚམས་མེད་པ་ལྔ་བྱས་པ་རྣམས་ཀྱི་བཤགས་ཚུལ་ཡང་བསྟན། དེ་ནས་མཆོད་རྟེན་བཤིག་པ་དང་། དགེ་འདུན་གྱི་དཀོར་ཕྲོགས་པ་དང་། མཚམས་མེད་པ་ལྔ་དང་མི་དགེ་བ་བཅུ་སྤྱོད་པའི་འབྲས་བུ་རྣམ་སྨིན་ངན་འགྲོ་གསུམ་གང་དང་གང་དུ་ལྟུང་ཚུལ་དང་། བདེ་འགྲོ་མི་ལུས་ཀྱི་རྟེན་ཐོབ་ནའང་འབྲས་བུ་གང་གང་སྨིན་ཚུལ་སོགས་ཀྱང་དེའི་འོག་དུ་བསྟན།

དེའི་འོག་རང་གི་ངོས་ནས་ཚེ་འདི་དང་ཚེ་རབས་སྔ་མ་རྣམས་སུ་དགེ་བའི་ལས་བྱས་པ་རྣམས་ཇི་ལྟར་བསྔོ་ཚུལ་བསྟན་ཅིང་། དེ་ཡང་སྦྱིན་པ་བཏང་བ་དང་ཚུལ་ཁྲིམས་བསྲུངས་པ་དང་། ཚངས་སྤྱོད་ལ་གནས་པ་སོགས་ཀྱི་དགེ་བའི་ལས

ལས་འབྲས་བུ་གང་དང་གང་རྙེད་ཚུལ་ལ་འཕགས་པ་རབ་ཏུ་ཞི་བ་རྣམ་པར་ངེས་པའི་ཆོས་འཕྲུལ་གྱི་ཏིང་ངེ་འཛིན་གྱི་མདོ་དང་། འོད་ཟེར་ཀུན་འབྱེད་ཀྱི་མདོ་སོགས་ཀྱི་ལུང་འདྲེན་བྱས་པ་གསལ།

དེ་ནས་སོ་ཐར་གྱི་སྡོམ་པ་བླངས་རྗེས་སྨོན་འཇུག་གི་སེམས་གཉིས་བསྐྱེད་དགོས་ཚུལ་དང་། སེམས་དེ་གཉིས་བསྐྱེད་ཐུབ་ན་འབྲས་བུ་བསོད་ནམས་ཀྱི་ཕུང་པོ་དཔག་ཏུ་མེད་པ་དུས་གཅིག་ཏུ་གསོག་ཐུབ་པའི་རྒྱབ་གཉེར་སྡོང་པོ་བཀོད་པའི་མདོ་དང་། དཀོན་མཆོག་སྤྲིན་མེའི་མདོ་དང་། འཕགས་པ་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་རྒྱས་པ་དང་། སློབ་དཔོན་ཙནྡྲ་གོ་མའི་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་སྡོམ་པ་ཉི་ཤུ་པ་དང་། འོད་ཟེར་ཀུན་བཀྱི་མདོ་སོགས་མདོ་ལུང་མང་པོ་དྲངས་སོ། །དེ་རྗེས་དགེ་རྩ་བྱང་ཆུབ་ཏུ་ཇི་ལྟར་བསྔོ་ཚུལ་སོགས་བསྟན།

མཇུག་བྱང་དུ་བལ་པོའི་པཎྜིཏ་སུ་ཡིན་གྱི་གསལ་ཁ་མེད་ཀྱང་འཇམ་མགོན་ཀོང་སྤྲུལ་ཞབས་ཀྱིས་མཛད་པའི་ཤེས་བྱ་ཀུན་ཁྱབ་མཛོད་དུ་ཆོས་རྗེ་དཔལ་གྱིས་བལ་པོའི་བླ་མ་པཎ་ཆེན་ཉི་མའི་སྣང་བ་བསྙེན་ཞེས་འཁོད་ཀྱང་བཀའ་བསྟན་གྱི་དཀར་ཆག་ཁག་གི་ཆོས་མཚན་གྱི་མཇུག་བྱང་དུ་བལ་པོའི་སློབ་དཔོན་ཉི་མའི་དབང་པའི་འོད་ཟེར་རམ་ཉི་མའི་དབང་པོའི་ལྷ་ཞེས་གསལ་བས་དཔྱད་གཞིའི་གནས་སུ་འགྱུར།

ཇོ་བོའི་ལྗུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པའི་གཞུང་གི་བསྡུས་དོན།

ལས་ཀྱི་སྒྲིབ་པ་རྣམ་པར་སྦྱོང་བའི་ཆོ་ག་བཤད་པ་ཞེས་བྱ་བའི་གཞུང་འདི་བོད་ཀྱི་ལོ་ཙྪ་བ་ཆེན་པོ་ནག་ཚོ་ཚུལ་ཁྲིམས་རྒྱལ་བས་ལེགས་སྒྱུར་ནས་བོད་སྐད་དུ་ཕབ་སྒྱུར་བྱས། གཞུང་འདི་སྡེ་དགེ་དཔར་མའི་ནང་མདོ་འགྲེལ་ཁོངས་སུ་མཇལ་རྒྱུ་ཡོད། གཞུང་གི་འགྱུར་ཕྱག་སངས་རྒྱས་དང་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་ལ་བྱས་འདུག་པས་སྡེ་སྣོད་གསུམ་ལས་མདོ་སྡེའི་སྡེ་སྣོད་ཀྱི་ཁོངས་སུ་གཏོགས་པ་མཚོན། མཆོད་བརྗོད་ནི་ཐུབ་པའི་གསུང་དང་ཐུགས་ལ་ཕྱེད་དོ།།

བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་དཔའ་བོ་གང་དག་གིས་ལས་ཉོན་གྱིས་བཅིངས་པའི་སེམས་ཅན་རྣམས་སྡུག་བསྔལ་གྱི་རྒྱ་མཚོ་ནས་འདོན་ཕྱིར་གཞོལ་བའི་སྐབས་གལ་དེ་རྒྱུན་འགགས་ཕམ་པ་སོགས་བྱུང་ན་དེ་ཕྱིར་བཅོས་པའི་ཐབས་ལ་བསྟུ་ན་ཕམ་པ་ཆེ་བ་ཕོག་ན་སྡོམ་པ་སླར་བླང་དགོས་པ་དང་། ཟག་པ་འབྲིང་དང་། ཆུང་ངུ་དང་ལྷག་མ་རྣམས་གང་ཟག་གསུམ་དང་གཅིག་དང་རང་གི་སེམས་ཀྱིས་བསྡམ་པར་བྱ་དགོས་པ་གསལ། ཐོག་མ་མེད་པ་ནས་བསགས་པའི་སྒྲིབ་པ་སྟུག་པོ་རྣམས་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་འདི་ཉིན་མཚན་དུས་དྲུག་ཏུ་འདོན་ནས་བཤགས་པར་འབད་དགོས་པ་བསྟན། དེའི་རྗེས་སྐྱབས་སུ་འགྲོ་བའི་ཡུལ་དཀོན་མཆོག་གསུམ་གྱི་ངོ་སྤྲོད་དང་། དེ་གསུམ་ཁོ་ན་ལ་སྐྱབས་སུ་བཟུང་ན་ཐར་པ་དང་ཐམས་ཅད་མཁྱེན་པ་ཐོབ་ཐུབ་པ་དང་། དེ་གསུམ་ལས་གཞན་པའི་ཕྱི་རོལ་པའི་ལྷ་སོགས་ལ་བསྟེན་ན་འཁོར་བ་ལས་གྲོལ་ཐབས་མེད་པ་བསྟན།

དེ་ནས་བདེ་གཤེགས་སོ་ལྔར་ཕྱག་འཚལ་བའི་སྐབས་སངས་རྒྱས་སོ་ལྔ་པོ་འདི་དག་གིས་ཐོག་མར་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་སྤྱོད་པ་ལ་སློབ་པའི་ཆེ་མ་འོངས་པ་ན་བདག་ཅག་བླ་ན་མེད་པའི་རྫོགས་པའི་བྱང་ཆུབ་ཏུ་མངོན་པར་རྫོགས་པ་སངས་རྒྱས་པ་ན། གང་ཞིག་བདག་ཅག་གི་མཚན་འཛིན་ཅིང་ཕྱག་འཚལ་བའི་སེམས་ཅན་དེ་དག་གིས་ཀྱང་ལས་ཀྱི་སྒྲིབ་པ་ཟད་པར་གྱུར་ཅིག་ཅེས་སྨོན་ལམ་བཏབ་པ་བསྟན། དེ་ནས་སངས་རྒྱས་སོ་ལྔ་པོ་ལས་སངས་རྒྱས་ཤཱཀྱ་ཐུབ་པ་དང་། རྡོ་རྗེ་སྙིང་པོ་གཉིས་ཀྱི་མཚན་དོན་གཉིས་ཙམ་བཤད་ནས་གཞན་ལའང་དེ་ལྟ་བུའི་མཚན་དོན་བཤད་དུ་ཡོད་ཀྱང་སངས་རྒྱས་ལ་ཡོན་ཏན་མཐའ་ཡས་པ་ཐམས་ཅད་ཀྱི་མཚན་དོན་བརྗོད་བྱ་ལས་འདས་སོ་ཞེས་སངས་རྒྱས་ལྷག་མ་རྣམས་ཀྱི་མཚན་དོན་མི་བཤད་དོ།།

གསོལ་བ་འདེབས་པའི་ཁོངས་སུ་ཇི་སྙེད་ཅེས་སོགས་ཀྱི་དོན་འགྲེལ་བཤད་རྗེས་

སྐྱེ་བ་འདི་དང་ཐོག་མ་མེད་པའི་སྔོན་དུ་སྡིག་པའི་ལས་བགྱིས་པ་ལ་འགྱོད་སེམས་
བྱེད་ཚུལ་དང་། སྣོད་ཕྱིན་སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་ཀྱི་སྤྱན་སྔར་བཤགས་པ་
བྱེད་ཚུལ་སོགས་བསྟན་ནས་གཉེན་པོ་སྟོབས་བཞིའི་སྒོ་ནས་སྡིག་པ་བྱང་བར་བྱེད་
ཚུལ་བསྟན།

དེ་ལྟར་ལས་ཀྱི་སྒྲིབ་པ་རྣམས་བཤགས་ཚུལ་བསྟན་པའི་རྗེས་སུ་རང་གིས་བྱས་
པའི་དགེ་བའི་རྩ་བ་རྣམས་ཚུལ་དང་མཐུན་པའི་སྒོ་ནས་བསྔོ་བ་བྱེད་ཚུལ་དང་།
དེའི་རྗེས་སུ་སྦྱིན་པ་ལས་བྱུང་བ། ཚུལ་ཁྲིམས་ལས་བྱུང་བ། སྒོམ་པ་ལས་
འབྱུང་བའི་དགེ་བའི་རང་བཞིན་རྣམ་པ་གསུམ་པོ་དེ་ལས་སྦྱིན་པ་ལས་ནི་སྦྱིན་པ་ཐ
ན་ཞེས་པའི་མདོ་གཅིག་སྦྱར་ནས་སྦྱིན་པ་ལ་དབྱེ་བ་བཞི་དང་། གཏང་བྱའི་སྦྱིན་པ་
ལ་རང་གི་བུ་ཕྲུག་དང་། ཕྱིའི་དངོས་པོ་གང་གང་ཡོད་པ་རྣམས་ཀྱི་གསལ་ཁ་བསྟན་
འདུག

ཚུལ་ཁྲིམས་ལས་བྱུང་བའི་དགེ་བ་ནི། བདག་གིས་ཚུལ་ཁྲིམས་སྲུང་བ་ཞེས་
པའི་མདོའི་ཚིག་སྦྱར་ནས་སྡོམ་པ་ལ་དགེ་བསྙེན་ཕ་མ་གཉིས་སོགས་ཁྱིམ་པའི་སྡོམ
པ་གསུམ་དང་། རབ་བྱུང་གི་སྡོམ་པ་ལྔའི་ངོ་སྤྲོད་བསྟན། དེ་ནས་བྱང་ཆུབ
སེམས་ཀྱི་སྡོམ་པ་བསྟན་པའི་སྐབས་སྒོམ་པ་ལས་བྱུང་བའི་དགེ་བ་བསྟན་པའི་སྐབས།
བདག་བླ་ན་མེད་པའི་ཡེ་ཤེས་ཀྱི་དགེ་བའི་རྩ་བ་ཞེས་པའི་མདོ་ཚིག་སྦྱར་ནས་ཆོས
ཐམས་ཅད་རང་བཞིན་གྱིས་མ་གྲུབ་པ་སྟོང་པ་ཉིད་དང་སྒྱུ་མ་ལྟ་བུའི་སྟོང་པ་བསྒོམ་
དགོས་པ་སོགས་བསྟན།

དེའི་འོག་ཏུ་གཞུང་གི་དགོངས་པ་ཡོངས་རྫོགས་ཕུང་པོ་གསུམ་དུ་བསྡུ་ཚུལ
བསྟན་པ་ལས་ཕུང་པོ་གསུམ་གྱི་ངོ་སྤྲོད་བྱེད་པའི་སྐབས། སྡིག་པ་བཤགས་པའི་
ཕུང་པོ་དང་། དགེ་བ་བསྔོ་བའི་ཕུང་པོ་དང་གསོལ་བ་འདེབས་པའི་ཕུང་པོ་བཅས
གསུམ་ལ་ངོས་འཛིན་བྱས་འདུག ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་འདི་ཞི་ཐག་པ་ནས་

ཉིན་ལན་གསུམ་དང་མཚན་ལན་གསུམ་དུ་རྒྱུན་མི་འཆད་པར་ཁ་སྐོན་བྱས་ན་རང་གིས་བྱས་ཤིང་བསགས་པའི་ལས་ཀྱི་སྒྲིབ་པ་རྣམས་ངང་གིས་ཞི་ནས་འདོད་པའི་འབྲས་བུ་མངོན་དུ་འགྱུར་བ་ཡང་བསྟན། དེས་ན་འདི་ཆད་མེད་འདོན་པ་ལ་བརྩོན་དགོས་པ་དང་གཞན་དག་སྒྲིབ་པ་ཟད་པར་འདོད་པའང་འདི་ལ་བརྩོན་དགོས་པ་གདམས་འདུག དེ་ལྟར་ཟད་པར་འགྱུར་བ་བཅོམ་ལྡན་འདས་ཉིད་ཀྱི་གསུང་འཁྲུལ་མེད་ཡིན་པས་ཐེ་ཚོམ་མེད་པར་ཞུགས་དགོས་པའང་བསྟན།

དེ་ནས་གཞུང་གི་དགོངས་འགྲེལ་ལ་ནོངས་པར་བཟོད་གསོལ་དང་གཞུང་འདི་བརྩམས་པའི་དགེ་བའི་འབྲས་བུ་རྣམས་བྱང་ཆུབ་ཏུ་བསྔོས་ཏེ་གཞུང་རྫོགས་པར་མཛད་དོ།།

ལྷུང་བཤགས་ཀྱི་རྒྱ་འགྲེལ་གསུམ་པོ་རྒྱ་འགྲེལ་ཡིན་མིན་ལ་ཅུང་ཟད་དཔྱད་པ།

འཕགས་པ་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོའམ་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་ལྟུང་བ་བཤད་པའི་མདོ་འདི་ལ་རྒྱ་འགྲེལ་ཁག་གསུམ་བོད་ཀྱི་བསྟན་འགྱུར་མ་ལག་ཀྱི་ཁྲོད་དུ་མཇལ་རྒྱུ་ཡོད་པ་དེ་དག་ནི། འཕགས་པ་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱི་མཚན་ཐོག་ཏུ་བཞུགས་པ་གཅིག་དང་། གཞན་སློབ་དཔོན་ཛི་ཏཱ་རི་དང་ཇོ་བོ་རྗེས་མཛད་པ་བཅས་ཡིན། དེ་དག་ལས་ཇོ་བོ་རྗེས་མཛད་པའི་ལྟུང་བཤད་ཀྱི་འགྲེལ་པ་དེ་ནི་རྒྱ་འགྲེལ་ཡིན་མིན་ལ་བོད་ཀྱི་མཁས་པ་རྣམས་ཀྱི་བཞེད་པ་མི་མཐུན་པ་མེད་པ་མ་ཟད། བཀའ་གདམས་ཕ་ཆོས་དང་ལམ་སྒྲོན་གྱི་རང་འགྲེལ་དུ་གྲགས་པར་ཡང་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པ་དེའི་མཚན་གསལ་བར་བྱུང་བ་དེས་ཀྱང་ཐེ་ཚོམ་ལས་རིང་དུ་བྱས་སོ། །འོན་ཀྱང་སློབ་དཔོན་ཀླུ་སྒྲུབ་དང་ཛི་ཏཱ་རི་གཉིས་ཀྱི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པ་ལ་བོད་ཀྱི་མཁས་པ་དུ་མའི་བཞེད་པ་མི་འདྲ་བ་མང་བས་འདིར་དོགས་གཞི་གཙོ་བོ་འགའ་ཞིག་དགོད་པ་ལ།

༡ ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་མདོ་ཉིད་ནང་མེད་པའི་ཚིག་འགའ་ཞིག་གི་ཚིག་འགྲེལ་བྱུང་བ།
༢ ཀླུ་སྒྲུབ་དང་ཛེ་ཏཱ་རི་གཉིས་ཀྱི་གསུང་གཞན་དང་མི་མཐུན་པ་དུ་མ་བྱུང་བ།
༣ སངས་རྒྱས་སོ་ལྔའི་སྐུ་མདོག་ཕྱག་མཚན་དང་། ཕྱོགས་དང་ཞིང་ཁམས་རྣམས་མདོ་དང་བསྟན་བཅོས་གཞན་གྱི་བཞེད་པ་དང་མི་མཐུན་པ་བྱུང་བ།
༤ ཚིག་འགྲེལ་འགའ་ཞིག་ལ་བོད་ཚིག་གིས་ཤན་ཞུགས་པ།
༥ བོད་ཀྱི་མཁས་པ་ཁག་གིས་དེ་གཉིས་རྒྱ་འགྲེལ་ཉིད་ཡིན་མིན་ལ་ཟུར་ཟ་བྱེད་ཚུལ་བཅས་སོ།།

དང་པོ། ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་མདོ་ཉིད་ནང་མེད་པའི་ཚིག་འགའ་ཞིག་གི་ཚིག་འགྲེལ་བྱུང་བ།

དེ་ལ་འཕགས་པ་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་ལྟུང་བ་བཤགས་པ་ཞེས་པ་འདི་ནི་རྒྱ་བའི་དཀོན་བརྩེགས་ཀྱི་ཆོས་ཚན་ཞི་དགུ་པ་འཕགས་པ་ཉེ་བར་འཁོར་གྱིས་ཞུས་པའི་མདོ་ལས་ཕྱུང་བ་ཞིག་ཡིན་པ་མ་ཟད། སློབ་དཔོན་ཞི་བ་ལྷས་བསླབ་བཏུས་ཀྱི་སྡིག་བཤགས་ཀྱི་ལེའུར་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་གཞུང་དེ་ཉིད་ཟུར་བཏོན་བྱས་པའང་མཐོང་རྒྱུ་ཡོད་པ་ཞིག་རེད། དེ་ལ་ཕྱིས་རྒྱ་བོད་ཀྱི་མཁས་པ་དུ་མས་འགྲེལ་པ་མི་འདྲ་བ་ཞིག་མཛད་པ་རྣམས་སུ་དང་། ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་མདོ་དང་བསླབ་བཏུས་སུ་བཞུགས་པའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་མདོ་གཉིས་ཀྱི་འགྱུར་ལ་ཁྱད་པར་ཅུང་ཟད་བྱུང་ཡོད་པ་མ་ཟད། བོད་མི་རྣམས་ཀྱིས་རྒྱུན་དུ་སྡིག་བཤགས་ཀྱི་ཆེད་དུ་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་མདོ་འདི་འདོན་སྲོལ་ཡོད་པ་དེ་ལ་ཡང་ཕྱིས་བོད་ཀྱི་མཁས་པ་ཁ་ཅིག་གིས་གཞུང་འདིའི་དབུ་དང་ཞབས་སུ་གསར་བསྣན་ཕྲན་བུ་བྱས་ཏེ་རྒྱུན་དུ་ཁ་ཏོན་བྱ་རྒྱུའི་ཆོས་ཚན་དུ་བཅུག་པ་འདི་ཡང་ཡོངས་གྲགས་ཤིག་རེད། དེ་ལྟར་ན་གོང་གསལ་འགྲེལ་པ་དེ་གཉིས་ནི་སློབ་དཔོན་ཀླུ་སྒྲུབ་དང་ཛེ་ཏཱ་རི་གཉིས་ཀྱི་མཚན་ཐོག་ཁ་གཡར་བྱས་ཏེ

མདོ་ཉིད་ལ་བོད་ཀྱི་མཁས་པ་ཁ་ཅིག་གིས་གསར་བསྣན་མི་ཉུང་བ་ཞིག་བྱས་པ་ལྟ་བུ་སྣང་སྟེ། དེ་ཡང་ཛེ་ཏཱ་རིའི་འགྲེལ་པར་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དང་པོ་ཤཱཀྱ་ཐུབ་པའི་མཚན་གྱི་དབུར་ **བཅོམ་ལྡན་འདས་**ཞེས་པའི་བསྟོད་ཚིག་བསྣན་པ་དེ་བཞིན་ལེགས་སྦྱར་དང་། དེ་མིན་ཉེར་འཁོར་མདོ་དང་བསླབ་བཏུས་ཀྱི་བོད་འགྱུར་གཉིས་ཀར་མི་གསལ་ཞིང་། བོད་ཀྱི་ཞལ་འདོན་ནང་གསལ་བ་དང་། ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་ལྷ་དྲུག་པ་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དཔལ་དགྱེས་ལ་ལེགས་སྦྱར་དུ (वीरान्दी) **ཝཱིརནྡཱི་**སྟེ་དཔའ་དགྱེས་ཞེས་དགོས་ཀྱང་། འགྲེལ་པ་གཉིས་སུ་ནི་དེའི་ཚིག་འགྲེལ་མི་མཛད་ཅིང་། དེ་མིན་ཉེར་འཁོར་མདོ་དང་བསླབ་བཏུས་གཉིས་ཀྱི་བོད་འགྱུར་ནང་དཔལ་དགྱེས་ཞེས་གསལ་བ་དེ་དང་མཐུན། དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་བདུན་པ་རིན་ཆེན་མེ་ལ་ལེགས་སྦྱར་མ་དཔེར་**རཏྣཱགྣི་**སྟེ་རིན་ཆེན་དཔལ་ཞེས་དགོས་ཀྱང་འགྲེལ་པ་དེ་གཉིས་དང་བོད་འགྲེལ་མ་ལག་ནང་རིན་ཆེན་མེ་ལ་ཚིག་འགྲེལ་བྱས་པ་གཅིག་མཐུན་སྣང་། ཚུལ་དེ་བཞིན་དུ་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་བཅུ་གཉིས་པ་དཔལ་བྱིན་ཡང་ལེགས་སྦྱར་མ་དཔེར་ (वीरदत्त) སྟེ་**དཔའ་བྱིན་**ཞེས་དགོས་པ་ཁ་ཅིག་ཏུ་དཔའ་བྱིན་དང་ཁ་ཅིག་ཏུ་དཔལ་བྱིན་ཉིད་ལ་འགྲེལ་པ་བྱས་པ་སྣང་།

གཞན་ཡང་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱི་འགྲེལ་པར་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཤཱཀྱ་ཐུབ་པའི་མཚན་དོན་འགྲེལ་བ་ན་ཤཱ་དང་ཀྱ་གཉིས་ཚིག་ཁ་འཕྲལ་ཏེ་ཤཱ་ལ་མ་ལུས་པ་དང་ཀྱ་ལ་རྟོགས་པ་དང་། མུ་ནི་ལ་གཉིས་སུ་མེད་པར་སྨོམ་པར་འཆད་ཀྱང་། ལེགས་སྦྱར་གྱི་དབང་དུ་བྱས་ན་ཤཱཀྱ་ཞེས་པ་འོས་པ་དང་རུང་བ་དང་ཤིན་ཏུ་ཕོད་པའི་དོན་དང་། དེ་ཡང་ཚིག་གཅིག་ཡིན་པ་ཡོངས་གྲགས་ཡིན་ལ། གཞན་ཡང་ཤཱཀྱ་ཞེས་པ་རིགས་ཀྱི་མིང་ཞིག་ཡིན་པ་ལས་ཚིག་ཁ་འཕྲལ་ཏེ་བཤད་ཚུལ་ཞིག་མ་མཐོང་བ་ནི་ཡོངས་སུ་གྲགས་པ་ཞིག་གོ །དེས་ན་ཤཱ་དང་ཀྱ་གཉིས་སོ་སོར་ཕྱེ་སྟེ་ཚིག་འགྲེལ་བྱས་པ་རྒྱ་གཞུང་འདི་ཁོ་ན་ལས་གཞན་དུ་མི་སྣང་ངོ་།།

འཕགས་པ་ཉེར་འཁོར་གྱི་མདོར། **དེ་དག་ལ་སོགས་པ་ཕྱོགས་བཅུའི་འཇིག་རྟེན་གྱི་ཁམས་** ཞེས་གསལ་ཡང་། ལེགས་སྦྱར་མ་དཔེ་དང་བསྟན་བཏུས་ཀྱི་ལྟར་བཤགས་ཀྱི་བོད་འགྱུར་དུ་ཕྱོགས་བཅུ་ཞེས་པའི་ཚིག་སྣང་རྒྱུ་མེད་པ་མ་ཟད། ཀླུ་སྒྲུབ་དང་ཛི་ཏཱ་རིའི་འགྲེལ་པར་ཕྱོགས་བཅུའི་ཞེས་པའི་ཐད་ལ་ཕྱོགས་བཞི་ཞེས་པའི་ཚིག་དོན་གསལ། ཡང་**ཕྱོགས་བཞིའི་དགེ་འདུན་གྱི་དཀོར་**ཞེས་པའི་ཐད་ལ་ཉེར་འཁོར་མདོ་དང་བསྟན་བཏུས་ཀྱི་བོད་འགྱུར་དུ་ཕྱོགས་བཞིའི་དགེ་འདུན་གྱི་དཀོར་ཞེས་པ་གསལ་ཡང་། བོད་ཀྱི་ཁ་དོན་ཕྱག་དཔེ་རྣམས་དང་། ཛི་ཏཱ་རིའི་འགྲེལ་པར་ཕྱོགས་བཅུའི་དགེ་འདུན་གྱི་སྐོར་ཞེས་བྱུང་ཡང་། བསྟན་བཏུས་ཀྱི་ལྟར་བཤགས་ཀྱི་ལེགས་སྦྱར་མ་དཔེར་ཕྱོགས་བཞི་དང་བཅུའི་ཚིག་གཉིས་ཀ་མཇལ་རྒྱུ་མེད།

ཡང་**མི་འཆབ་བོ། །མི་སྦེད་དོ།** ཞེས་པའི་ཚིག་གཉིས་པོ་དེ་ཡང་དོན་གཅིག་ཡིན་པ་ལ། བོད་འགྱུར་གྱི་དཔར་མ་འགའ་ཞིག་ནང་། **མི་འཆབ་བོ་མི་སྦེད་དོ།** ཞེས་སོ་སོར་བཀོད་ཡོད་ཀྱང་། ཉེར་འཁོར་དང་བསྟན་བཏུས་ཀྱི་བོད་འགྱུར་དང་ལེགས་སྦྱར་མ་དཔེར**མི་འཆབ་བོ་**ཙམ་ལས་མི་གསལ། འོན་ཀྱང་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱི་འགྲེལ་པ་ལ་ནི་ཉེར་འཁོར་གྱི་མདོ་དང་བསྟན་བཏུས་ཀྱི་བོད་འགྱུར་གཉིས་ཀར་མ་བཞུགས་པའི་མི་སྦེད་དོ་ཞེས་པ་ལའང་ཚིག་འགྲེལ་མཛད་འདུག་གོ།

ཡང་**གཅིག་ཏུ་བསྡུས་ཤིང་བརླམས་ཏེ་བསྒོམས་ནས་** ཞེས་པའི་ཐད་དུ་ལེགས་སྦྱར་མ་དཔེ་དང་བསྟན་བཏུས་ཀྱི་བོད་འགྱུར་ལྟར་**མངོན་པར་བསྡུས་ནས་**ཞེས་པ་དགོས་ཀྱང་ཉེར་འཁོར་གྱི་མདོ་བོད་འགྱུར་དུ་དེ་ལྟར་མཇལ་རྒྱུ་མེད། དེ་བཞིན་དུ་**བླ་མའི་ཡང་བླ་མ་དང་།** **གོང་མའི་ཡང་གོང་མ་**གཉིས་ཀྱང་ཚིག་དོན་གཅིག་ཡིན་པ་ལ། ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱི་འགྲེལ་པ་དང་ཛི་ཏཱ་རིའི་འགྲེལ་པ་གཉིས་སུ་བླ་མའི་ཡང་བླ་མ་དང་གོང་མའི་ཡང་གོང་མ་གཉིས་སོ་སོར་འགྲེལ་བ་དེ་ཡང་ཉེར

འཁོར་གྱི་མདོ་དང་བསླབ་བཏུས་ཀྱི་བོད་འགྱུར་གཉིས་དང་། གཞན་ཡང་བོད་དཔེ་ཁ་ཅིག་དང་ལེགས་སྦྱར་ནང་དུ་མེད་ཅིང་། ཇོ་བཙུན་ཏཱ་རཱ་ནཱ་ཐས་ཀྱང་ཇི་སྐད་དུ།[1] "དེ་ལས་བླ་མར་གྱུར་པ་ནི་བླ་ན་མེད་པའི་བྱང་ཆུབ་བོ། །གོང་མའི་ཡང་གོང་མ་ཞེས་འདོན་པ་ལྟར་ན་དེ་གཉིས་རྣམ་གྲངས་ཀྱི་སྒོ་ནས་སྨོས་པ་ཙམ་ཡིན་གྱི་དོན་ལོགས་པ་མེད་ལ། དེ་ལྟ་བས་ན་མདོ་ཉིད་དང་དཔེ་མང་པོ་ལས། གང་རུང་གཅིག་གཅིག་ཁོ་ན་སྨོས་པ་ལེགས་པ་མངོན་ནོ།" །ཞེས་གསུངས་པ་མ་ཟད། ལེགས་སྦྱར་མ་དཔེར་ **ཨུཏྟ་རོ་ཏྟ་ར་ཡཱ་** ཞེས་ལན་གཅིག་ལས་མ་བྱུང་། བོད་པའི་ཁ་ཏོན་ཕྱག་དཔེ་ཁག་ཅིག་གི་ནང་ **བླ་མའི་ཡང་བླ་མ་དང་གོང་མའི་ཡང་གོང་མ་** གཉིས་ཚིག་སོ་སོ་ནས་གསལ་བ་དེའང་དཔྱད་པར་བྱ་བའི་གཞིའམ་སྙམ་མོ། །དེ་བཞིན་དུ་བོད་འགྱུར་སོགས་སུ **ཡོངས་སུ་བསྔོ་བས་ཡོངས་སུ་བསྔོ་བར་བགྱིའོ་** ཞེས་འགྱུར་གཉིས་གསལ་ཡང་། ལེགས་སྦྱར་དུ **ཡོངས་སུ་བསྔོ་བར་བགྱིའོ་** ཞེས་ལན་གཅིག་ལས་མ་བྱུང་ཡང་། ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱི་འགྲེལ་པར་ཡོངས་སུ་བསྔོ་བ་དང་ཡོངས་སུ་བསྔོ་བར་བགྱི་བ་ལ་ཚིག་འགྲེལ་སོ་སོར་བྱས་པ་སྣང་ངོ་། །

ཡང་ཉེར་འཁོར་གྱི་མདོ་དང་བསླབ་བཏུས་ཀྱི་བོད་འགྱུར་གཉིས་དང་ལེགས་སྦྱར་མ་དཔེ་རྣམས་སུ **སངས་རྒྱས་ཐམས་ཅད་ལ་གསོལ་བ་འདེབས་སོ།** །ཞེས་པའི་ཚིག་འདི་གསལ་ཡང་། ཁ་ཏོན་གླེགས་བམ་ཁག་ཏུ **སངས་རྒྱས་ཐམས་ཅད་ལ་བསྐུལ་ཞིང་གསོལ་བ་འདེབས་སོ་** ཞེས་འདིར་བསྐུལ་བ་ཞེས་པ་ཚིག་འཕར་མ་ཞིག་ཡོད་པ་ཉིད་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱི་འགྲེལ་པར་ཡང་ཚིག་འགྲེལ་སོ་སོར་གསལ་ཞིང་། ཚིག་འདི་རང་ཇི་ཏཱ་རིའི་འགྲེལ་པར་ཡང་གསལ་ལོ།།

ཡང་ **བདག་གིས་བླ་ན་མེད་པའི་ཡེ་ཤེས་ཀྱི་མཆོག་ཐོབ་པར་གྱུར་ཅིག་** ཅེས་པའི་ཐད་ལ་ཇི་ཏཱ་རིའི་འགྲེལ་པར་བོད་ཀྱི་ཁ་ཏོན་གྱི་གླེགས་བམ་ཁག་ཏུ་ཡོད་པ

---

1 ལུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པ། པོད། ཇ དབྱིན་ཤོག ༣༥༣

ལྟར་བདག་གིས་བླ་ན་མེད་པའི་ཡེ་ཤེས་ཀྱི་མཆོག་དམ་པ་ཐོབ་པར་གྱུར་ཅིག་ཅེས་པའི་ཚིག་འདི་གསལ་བ་བཅས་གོང་འཁོད་རྒྱ་མཚན་དེ་དག་ལས་ཀླུ་སྒྲུབ་དང་ཇོ་ཏཱ་རིའི་འགྲེལ་པར་གྲགས་པ་གོང་གསལ་དེ་གཉིས་སློབ་དཔོན་དེ་གཉིས་ཀྱིས་མཛད་མིན་ལ་དོགས་གཞི་ཆེན་པོ་བྱུང་བར་སྣང་ངོ་།།

གཉིས་པ། སློབ་དཔོན་ཀླུ་སྒྲུབ་དང་ཇོ་ཏཱ་རི་གཉིས་ཀྱི་གསུང་གཞན་དང་མི་མཐུན་པ་བྱུང་བ།

འཕགས་པ་མི་རྟོག་ཚོགས་ཀྱི་མདོ་དང་། སློབ་དཔོན་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱི་གསུང་གཞན་རྣམས་སུ་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཀླུ་དབང་གི་རྒྱལ་པོའི་ཞིང་ཁམས་སྣང་རྩེ་ཅན་དུ་བཤད་ཀྱང་། ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པ་འདིར་ཀླུའི་ཁྱབ་པའི་ཞིང་ཞེས་གསུངས་ཤིང་། ཕྱོགས་ཀྱང་སློབ་དཔོན་གྱི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པར་ཤར་ལྷོ་གསལ་ཞིང་། འཕགས་པ་མི་རྟོག་ཚོགས་ཀྱི་མདོར་ནུབ་ཅེས་གསལ་བས་ཕན་ཚུན་མི་མཐུན་པ་དང་། ཡང་འཕགས་པ་མི་རྟོག་ཚོགས་ཀྱི་མདོ་ལས་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་རིན་ཆེན་མེའི་ཕྱོགས་ནི་བྱང་དང་། ཞིང་ཁམས་ནི་ནོར་བུ་སྣང་བ་ཅན་གསལ་ཡང་། ཅིག་ཤོས་འགྲེལ་པ་འདིར་ཕྱོགས་ནི་ནུབ་དང་། ཞིང་ཁམས་ནི་སྣང་བ་དང་ལྡན་པ་ཞེས་གསུངས་པ་མི་མཐུན་པ་བྱུང་། དེ་མིན་འདིར་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་རྡོ་རྗེ་སྙིང་པོས་རབ་ཏུ་འཇོམས་པ་ཞེས་ཞིང་དང་མཚན་གཉིས་གཅིག་ཏུ་བསྡོམས་ཏེ་གསུངས་པ་ལ་བརྟགས་ན། དངོས་གནས་ལ་རྡོ་རྗེ་སྙིང་པོ་ཅན་ནི་སངས་རྒྱས་དེའི་ཞིང་དང་། རྡོ་རྗེས་རབ་ཏུ་འཇོམས་པ་ནི་དེའི་མཚན་དངོས་ཡིན་པ་བཅས། རྗེ་གུང་ཐང་གིས་གསལ་བར་གསུངས་པ་དེ་ལྟར་ན།[1] སློབ་དཔོན་ཉིད་ཀྱིས་མཛད་པ་ཞིག་ཡིན་ཆེ་འཕགས་པ་མི་རྟོག་གི་ཚོགས་བཀོད་པའི་མདོར་ཞིང་དང་མཚན་དངོས་གཉིས་ཀྱི་

1 ཡོན་སྦྱོང་གི་ཚོག ཕོད། ཇ དཔར་ཤོག ༣༡༧

ཁྱད་པར་མ་ཕྱེ་བའི་འཕྲུལ་པ་དེ་ལྟ་བུ་ག་ལ་སྲིད་སྙམ་མོ།།

གསུམ་པ། སངས་རྒྱས་སོ་ལྔའི་སྐུ་མདོག་ཕྱག་མཚན་དང་། ཕྱོགས་དང་ཞིང་ཁམས། ཕན་ཡོན་རྣམས་མདོ་དང་བསྟན་བཅོས་ཀྱི་བཞེད་པ་དང་མི་མཐུན་པ་བྱུང་བ།

ཐོག་མར་རྡོ་རྗེ་སྙིང་པོ་ལྟ་བུར་མཚོན་ན་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱི་འགྲེལ་པར།[1] ཕྱོགས་ནི་སྙིང་དང་། ཞིང་ཁམས་ནི་ནམ་མཁའི་སྙིང་པོ་དང་། སྐུ་མདོག་ནི་སྔོན་པོ། ཕྱག་མཚན་རྡོ་རྗེ་གཉིས་བསྣམས་པ་ཞེས་དང་། མཚན་འདོན་ཕན་ཡོན་ལ་རྒྱལ་ཚབ་རྗེས་བཀོད་པ་ལྟར་ན་བསྐལ་པ་ཁྲིའི་སྡིག་པ་འདག་པར་གསལ། ཡང་འཕགས་པ་མི་རྟོག་ཚོགས་ཀྱི་བཀོད་པའི་མདོ་ལས་ནི།[2] དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་རྡོ་རྗེ་སྙིང་པོའི་ཕྱོགས་ནི་བྱང་དང་། ཞིང་ཁམས་ནི་འཛིག་རྟེན་གྱི་ཁམས་རྡོ་རྗེའི་སྙིང་པོ། ། མཚན་འདོན་ཕན་ཡོན་ནི། སངས་རྒྱས་འདིའི་མཚན་ཐོས་པས་བསྐལ་པ་བྱེ་བ་ཁྲག་ཁྲི་བརྒྱ་སྟོང་ཕྲག་བཅུ་གསུངས་སོ། དེ་བཞིན་དུ་སངས་རྒྱས་རིན་ཆེན་མེའི་ཕྱོགས་ནི་བྱང་། ཞིང་ཁམས་ནི་ནོར་བུ་སྣང་བ་ཅན། མཚན་འདོན་ཕན་ཡོན་ནི་ཕྱིར་མི་ལྡོག་པའི་གནས་ཐོབ་པར་གསུངས་ཤིང་། ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱི་འགྲེལ་པ་ལས་ནི།[3] སངས་རྒྱས་རིན་ཆེན་མེའི་ཕྱོགས་ནི་ནུབ་དང་། ཞིང་ཁམས་ནི་སྣང་བ་དང་ལྡན་པ། སྐུ་མདོག་དམར་པོ་དང་། ཕྱག་མཚན་ནོར་བུ་རིན་པོ་ཆེ་དང་མེའི་དཀྱིལ་འཁོར་བསྣམས་གསུངས་ལ། མཚན་འདོན་ཕན་ཡོན་ནི་རྒྱལ་ཚབ་རྗེའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པ་ལྟར་ན་དགེ་འདུན་གྱི་དཀོར་བསགས་པའི་སྡིག་པ་འདག

1 Toh-4005 སྡེ། བསྟན། མདོ་འགྲེལ། "ཇི" ༡༨༡ ན ༡

2 Toh-266 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "འ" ༣༡༠ བ ༣

3 Toh-4005 སྡེ། བསྟན། མདོ་འགྲེལ། "ཇི" ༡༨༡ ན ༧

པ་གསུངས་སོ།།

གཞན་ཡང་སངས་རྒྱས་སྐུ་དབང་གི་རྒྱལ་པོ་ལ་འཕགས་པ་མི་དོག་ཚོགས་ཀྱི་མདོ་ར།[1] "ཕྱོགས་ནི་ནུབ། ཞིང་ཁམས་ནི་སྤྲང་རྫི་ཅན།" ཞེས་པ་ཙམ་ལས་མཚན་འདོན་ཕན་ཡོན་གྱི་གསལ་ཁ་མི་སྣང་ཞིང་། སྐུ་སྒྲུབ་ཀྱི་འགྲེལ་པ་ལས་ནི།[2] ཕྱོགས་ནི་ཤར་ལྷོ་དང་། སྐུ་མདོག་ནི་སྔོན་པོ། །ཞིང་ཁམས་ནི་སྐུ་ཡིས་ཁྱབ་པ། ཕྱག་མཚན་ནི་སྐུ་ཤིང་དང་སྦྲུལ་སྔོན་པོ་བསྣམས་ཞེས་གསུངས་ལ། མཚན་འདོན་ཕན་ཡོན་ནི་རྒྱལ་ཚབ་རྗེའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པ་ལྟར་ན་[3]བསྐལ་པ་བརྒྱད་ཀྱི་སྡིག་པ་འདག་གོ་ཞེས་གསུངས་སོ། །དེ་ལྟར་ན་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་གཞན་རྣམས་ཀྱི་ཕྱོགས་དང་ཞིང་ཁམས་དང་ཕན་ཡོན་རྣམས་ཀྱང་ཕན་ཚུན་མི་མཐུན་པ་མང་ངོ་།།

སྐུ་སྒྲུབ་ཀྱིས་མཛད་པའི་ལྟུང་བ་བཤགས་པའི་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་འགྲེལ་པ་དེ་ཉིད་སློབ་དཔོན་དེ་ཉིད་ཀྱིས་མཛད་པ་ལ་རྗེ་གུང་ཐང་བསྟན་པའི་སྒྲོན་མེའི་གསུངས་ལས་གོང་གསལ་འགྲེལ་པ་ཁག་གི་ནང་ནས་ཁ་ཅིག་ཙམ་ལ་དོགས་གཞི་ཡོད་པའི་སྐོར་ལ་ཐེ་ཚོམ་དུ་གྱུར་ཏེ་དེ་ཉིད་ཀྱིས་མཛད་པའི་ཡོན་སྦྱོང་གི་ཚོ་ག་ལས་ཇི་སྐད་དུ།[4] "འདིའི་ཕྱག་མཚན་སྐུ་སྒྲུབ་ཀྱིས་མཛད་པར་གྲགས་པའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པ་ལས་རིན་པོ་ཆེ་དང་མེའི་དཀྱིལ་འཁོར་བསྣམས་པ་ནི་རིན་ཆེན་མེ་དེ་འབྱུང་ཡང་། ཛི་ཏཱ་རི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་ཊཱི་ཀཱ་དང་། ནག་པོ་པའི་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་སྒྲུབ་ཐབས་སོགས་སུ་དེ་དང་སྒོ་བསྟུན་པའི་ཟུར་ཙམ་ཡང་མ་བྱུང་ལ། ས་པཎ་གྱིས་སྡོམ་གསུམ་རབ་དབྱེར་བཀག་ཅིང་། རྗེ་བླ་མས་ཀྱང་དེ་ལ་ཚད་མར་མ

1 Toh-266 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "འ" ༢༩༨ ན ༨

2 Toh-4005 སྡེ། བསྟན། མདོ་འགྲེལ། "ཇི" ༡༤༡ ན ༨

3 བོད། "ཀ" བོད་ཤོག ༡ དབྱིན་ཤོག ༧༨༤

4 བོད། "ཇ" དབྱིན་ཤོག ༢༢༢

མཛད་པར་རང་གི་གཟིགས་སྣང་དང་བསྟུན་ནས་བཟང་སྐྱོང་བ་སོ་ར་ལ་གསུངས་པ་བཞིན། ལྷོ་བྲག་གྲུབ་ཆེན་གྱི་ལྟུང་བཤགས་ཚོ་གར་ཡང་བཀོད་སྣང་བས་སོ། །འགྲེལ་པ་དེ་ནི་རྒྱལ་དབང་སྐལ་བཟང་རྒྱ་མཚོས་ཀླུ་སྒྲུབ་ལ་ཁ་གཡར་བའི་བོད་གཞུང་ཞིག་ཡིན་པར་གསུངས་པ་ལྟར་འཐད་དེ། འགྲེལ་པ་དེ་ཉིད་དུ། ཤར་ལྷོ་ཀླུ་ཡིས་ཁྱབ་པའི་ཞིང་ན་ཀླུ་དབང་གི་རྒྱལ་པོ་སྔོ་སྔོན་པོ་ཀླུ་ཤིང་དང་སྤྲུལ་སྔོན་པོ་བསྐྲུམས་པའོ། །ཞེས་བཤད་པ་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱི་གསུང་གཞན་དང་མི་མཐུན་ཞིང་། ཀླུ་དབང་རྒྱལ་པོའི་ཞིང་ཡང་སྤྲང་རྩི་ཅན་དུ་མེ་ཏོག་ཚོགས་ཀྱི་བཀོད་པའི་མདོ་ལས་གསུང་པ་བཞིན་དམ་པ་གོང་མ་རྣམས་ཀྱང་དགོངས་པ་མཐུན་པས་ཤེས་ནས་སོ།།' ཞེས་གསུངས་སོ། །གཞན་ཡང་རྗེ་གུང་ཐང་དེ་ཉིད་ཀྱིས་ཡོན་སྤྱོད་གི་ཚོ་ག་ལས་ཀྱང་།[1] "མེ་ཏོག་ཚོགས་ཀྱི་མདོ་ལས། བྱང་ཕྱོགས་སུ་སངས་རྒྱས་ཀྱི་ཞིང་བྱེ་བ་བརྒྱ་སྟོང་གི་ཐ་མ་ན་འཇིག་རྟེན་གྱི་ཁམས་ནུབ་སྣང་བ་ཅན་ཞེས་བྱ་བ་ན། དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དགྲ་བཅོམ་པ་ཡང་དག་པར་རྫོགས་པའི་སངས་རྒྱས་རིན་ཆེན་མེ་ཞེས་བྱ་བ་བཞུགས་ཏེ། ཞེས་གསུངས་པས། འོད་དང་སྣང་བ་རྣམ་གྲངས་སུ་བྱས་པ་མངོན། སྟོན་ཚུལ་དེ་འདྲ་བ་མང་སྟེ། མདོ་དེར་རྡོ་རྗེ་སྙིང་པོས་རབ་ཏུ་འཇོམས་པའི་མཇུག་ཐོགས་སུ། རིན་ཆེན་མེ་དང་རིན་ཆེན་ཟླ་འོད་གཉིས་གསུངས་པ་ལྟ་བུ་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་ལྷ་ཚོགས་ར་རིམ་ཞིག་ཐོར་བ་ཐོར་བུར་གསུངས་ལ། དང་པོ་ཡང་རྡོ་རྗེ་སྙིང་པོ་ཅན་ཞེས་པ་ཞིང་དང་། རྡོ་རྗེས་རབ་ཏུ་འཇོམས་པ་ཞེས་པ་མཚན་དངོས་ཡོད་པར་གསུངས་ཀྱང་། ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོར་རྡོ་རྗེ་སྙིང་པོས་རབ་ཏུ་འཇོམས་པ་ཞེས་བསྡུས་ནས་གསུངས་པ་བཞིན་ནོ།།' ཞེས་གསུངས་སོ། །

དེ་ལ་འཕགས་པ་མེ་ཏོག་གི་ཚོགས་བཀོད་པའི་མདོ་དང་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱི་འགྲེལ་པར་གསལ་བ་རྣམས་དང་། རྗེ་རིན་པོ་ཆེ་ལ་གཟིགས་སྣང་བྱུང་བ་དང་། རྗེ་ས་པཎ་

1 པོད། "ཇ" བོད་ཤོག ༢ དབྱིན་ཤོག ༢༡༨

གྱིས་གསུངས་པ་རྣམས་ཕན་ཚུན་འདྲ་བསྡུར་བྱེད་སྐབས་སངས་རྒྱས་སོ་ལྔའི་སྐུ་མདོག་ཕྱག་མཚན་རྣམས་མཐུན་པ་དང་མི་མཐུན་པ་ཅི་རིགས་སུ་འགྱུར་བ་དོན་དམ་པར་འཐད་མི་འཐད་ཀྱི་ཐག་གཅོད་བྱ་ཐབས་བྲལ། དེ་ཡང་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱི་འགྲེལ་པར་བཀོད་པའི་སྐུ་མདོག་དང་ཕྱག་མཚན་འགའ་ཞིག་ནི་གསང་སྔགས་ཀྱི་ལུགས་སུ་བྱས་ཏེ་བཀོད་པའི་དབང་དུ་བྱས་ན་ལས་གཞན་ཡོངས་གྲགས་སུ་དེ་ལྟར་གྲགས་ཆུང་བར་སེམས།

སངས་རྒྱས་སོ་ལྔའི་སྐུ་མདོག་ཕྱག་མཚན་རྣམས་ནི་རྗེ་ཉིད་ལ་རང་སྟོབས་ཀྱིས་སྒོང་བ་ཐོན་པ་དང་། དངོས་སུ་ཞལ་གཟིགས་པ་རྣམས་ཕྱིས་རྗེའི་སློབ་མ་བཟང་སྐྱོང་ལ་རྗེ་བདག་ཉིད་ཆེན་པོས་རང་ཉིད་ལ་གཟིགས་སྣང་བྱུང་བ་བཞིན་བཀའ་ཕབ་པ་ལྟར་དེས་ཡི་གེར་བཀོད་པ་ལས་ཕྱིས་སྤྲོལ་དེ་བྱུང་བ་ཡིན་པ་རྗེའི་རྣམ་ཐར་ཆེན་པོ་རྣམས་སུ་གསལ།

རྗེ་ས་པཎ་ཞབས་གང་ཉིད་ལ་དངོས་སུ་གཟིགས་སྣང་བྱུང་བའི་ལོ་རྒྱུས་སུ་གྲགས་པ་མེད་ཀྱང་འཕགས་པའི་ཡུལ་དུ་ཨཛཎྚ་དང་ཨེ་ལོ་ར་ལ་སོགས་པ་སྟོན་དུས་ཀྱི་བྲག་ཕུག་ཆེན་པོ་རྣམས་སུ་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དུ་མའི་སྐུ་བརྙན་འབྲི་བཀོད་བྱས་པ་རྣམས་དང་། རྒྱལ་བ་རིགས་ལྔའི་རྣམ་པ་ཅན་གྱི་སྐུ་མདོག་ཕྱག་རྒྱ་བཀོད་སྤྲོལ་ཡོད་པ་བཅས་ལ་གཞིར་མཛད། གོང་གསལ་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱི་འགྲེལ་པ་དང་རྗེ་བདག་ཉིད་ཆེན་པོའི་གཟིགས་སྣང་བྱུང་བ་རྣམས་དང་མི་མཐུན་ཞིང་། སངས་རྒྱས་སོ་ལྔའི་སྐུ་མདོག་ཕྱག་རྒྱ་རྣམས་རྒྱལ་བ་རིགས་ལྔའི་རྣམ་པ་ལྟ་བུ་བཀོད་དགོས་པ་དང་། དེ་དག་ཀྱང་མཆོག་གི་སྤྲུལ་སྐུའི་རྣམ་པ་ཅན་ཤ་སྐག་ཡིན་པས་ཕྱག་མཚན་འདྲ་མིན་བསྒམས་པ་མི་འོས་པའི་སྐོར་བཅས་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོའི་འདོན་ཐབས་སུ་ས་པཎ་གྱིས་གསལ་བར་གསུངས་སོ།།

བཞི་པ། ཆོས་འབྲེལ་འགའ་ཞིག་ལ་བོད་སྐད་ཀྱིས་ཤན་ཞུགས་པ།

དེ་ཡང་ཛེ་ཏཱ་རིའི་འགྲེལ་པ་དེ་ཉིད་ལས། ཐོག་མར་སངས་རྒྱས་ཆོས་དང་དགེ་འདུན་ལ་སྐྱབས་སུ་མཆིས་པའོ་ཞེས་མཆོག་གསུམ་ལ་སྐྱབས་འགྲོ་བྱེད་ཚུལ་སྒོར་བསྟན་པ་ན། **སངས་རྒྱས་ལ་སྐྱབས་སུ་མཆིས་པའོ།** །ཞེས་པའི་ཐད་དུ "ལ་ནི་ཡུལ་གྱི་ལ་སྟེ། གནས་གཞིའི་བདུན་པའོ།"[1] །ཞེས་པས་རྣམ་དབྱེ་བདུན་པ་ཐོབ་པ་བཤད་ཀྱང་ལེགས་སྦྱར་ལྟར་ན་རྣམ་དབྱེ་གཉིས་པ་རང་ཐོབ་ཅིང་། མདོ་ཉིད་དུ། བུདྡྷཾཤརཎཾགཙྪཱམི་ཞེས་པ་ལ་བུདྡྷཾ་ནི་རྣམ་དབྱེ་གཉིས་པའི་གཅིག་ཚིག་ཡིན་པས་འགྲེལ་མཛད་པ་ལེགས་སྦྱར་དུ་སྐད་དོད་གང་གསལ་བ་མ་ཤེས་པ་སྣང་བས་དཔྱད་གཞིའི་གནས་སུ་འགྱུར།

ཡང་། དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཚངས་པས་བྱིན་ཞེས་པའི་ཐད་དུ། ཛེ་ཏཱ་རིའི་འགྲེལ་པ་དེ་ཉིད་ལས།[2] "དེ་ལྟ་བུ་དེ་གཞན་ལ་བྱིན་ཞེས་དང་པོ་སྦྱར་བའམ་དེ་ལྟ་བུས་བྱིན་ཞེས་གསུམ་པ་སྦྱར་བས་ཚངས་པས་བྱིན་ནོ།།" ཞེས་གསལ་བས། འདིར་རྣམ་དབྱེ་དང་པོ་དང་གསུམ་པའི་ཁྱད་པར་ཕྱེ་བ་ཙམ་ལས་མཚན་དོན་གསལ་ཁ་མི་སྣང་ཞིང་། ཚུལ་དེ་ལྟ་བུའི་འཇུག་ཚུལ་རྡོ་རྗེ་སྙིང་པོས་རབ་ཏུ་འཇོམས་པ་དང་། དཔས་བྱིན་དང་། དཔའ་བོས་སྦྱི། པདྨའི་འོད་ཟེར་རྣམ་པར་རོལ་པས་མངོན་པར་མཁྱེན་པ་ལ་སོགས་པའི་སངས་རྒྱས་གཞན་འགའ་ཞིག་གི་མཚན་ཟུར་ལ་རྣམ་དབྱེ་གསུམ་པ་བྱེད་སྒྲ་བཏབ་པ་མི་ཉུང་བ་ཞིག་འདུག་ཀྱང་གཅིག་མཚུངས་ལྟ་བུ་མི་སྣང་བས་དཔྱད་གཞིའི་གནས་སོ།།

ཡང་དོགས་གཞི་ཆེ་བ་ཞིག་ལ། ཛེ་ཏཱ་རིའི་འགྲེལ་པ་འདི་ན་མི་དགེ་བ་བཅུའི་

1 Toh-4006 སྡེ། བསྟན། མདོ་འགྲེལ། "ཇི" ༡༨༨ ན ༣

2 Toh-4006 སྡེ། བསྟན། མདོ་འགྲེལ། "ཇི" ༡༨༨ བ ༧

ལས་ཀྱི་རྣམ་གཞག་ལ་ལས་ཀྱི་རྣམ་སྨིན་འཇོག་མི་འཇོག་གི་ཐད་དུ། "བྱས་ལ་མ་བསགས་པ་དང་། མ་བྱས་ཀྱང་བསགས་པ་དང་། བྱས་ལ་བསགས་པ་"ཞེས་ལས་མ་བྱས་ཀྱང་བསགས་ན་རྣམ་སྨིན་འོང་བའི་རྣམ་བཞག་བསྟན་པ་འདི་ནི་ནང་པའི་གཞུང་སྤྱིའི་བཤད་ཚུལ་དང་མི་མཐུན་པ་བྱུང་བས་དཔྱད་གཞིའི་གནས་སུ་གྱུར། དེ་ར་མ་ཟད་ཀླུ་སྒྲུབ་དང་ཛེ་ཏཱ་རིའི་འགྲེལ་པ་དེ་གཉིས་ནང་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་རྣམས་ཀྱི་མཚན་དོན་འཆད་པ་ན་དབང་པོ་ཞེས་པའི་མཚམས་སུ་དད་པ་ལ་སོགས་པའི་དབང་པོ་ལྔ་དང་། ཚངས་པ་ལ་གཟུགས་ཁམས་ཀྱི་བསམ་གཏན་དང་པོ་ལྷ་དང་། ནོར་དཔལ་ལྷ་བུ་ལ་འཕགས་ནོར་བདུན་དང་འདྲ་མཚུངས་སྟོན་པའི་མཚན་དོན་ཙམ་བཤད་པ་ལས་གཞན་མ་བསྟན་སྐབས་ཛེ་བཙུན་ཏཱ་རཱ་ནཱ་ཐ་ལ་སོགས་པའི་བོད་ཀྱི་མཁས་དབང་རྣམས་ཀྱི་རྒྱ་འགྲེལ་འདི་གཉིས་ནི་ནུས་པ་ཆུང་ཞིང་བོད་ཚིག་མང་བའི་སྐྱོན་བརྗོད་བྱས་པ་ལྟར་རྒྱ་གཞུང་ཚད་ལྡན་གྱི་གཞུང་ཞིག་ཏུ་ངོས་འཛིན་བྱེད་དཀའ་བ་སྣང་བའོ།།

ལྔ་པ། བོད་ཀྱི་མཁས་པ་ཁག་གིས་དེ་གཉིས་རྒྱ་འགྲེལ་ཉིད་ཡིན་མིན་ལ་ཟུར་ཟ་བྱེད་ཚུལ།

གངས་ཅན་བོད་ཀྱི་མཁས་པའི་རྩེ་མོར་གྱུར་པ་བུ་སྟོན་ཞབས་ཀྱིས། སློབ་དཔོན་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱིས་མཛད་པའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པའི་མཚན་གྱི་ཐད་དུ་འགྱུར་མི་གཅིག་པའི་དཔེར་ཀླུ་བོས་ཀྱིས་མཛད་ཟེར་[1]" ཞེས་མཚན་ཆུང་ཞིག་བཀོད་པ་གསལ་ཞིང་། དེ་ལྟར་འདི་ལ་འགྱུར་གཉིས་ཡོད་པ་བུ་སྟོན་ཞབས་ཀྱིས་བཞེད་ཀྱང་རྒྱ་གཞུང་ཡིན་མིན་གྱི་ཐད་ལ་གསལ་ཁ་གང་ཡང་མ་མཛད་དོ།།

1 བུ་སྟོན་ཆོས་འབྱུང་། ཤོག ༣༣༦ ཀྲུང་གོའི་བོད་ཀྱི་ཤེས་རིག་དཔེ་སྐྲུན་ཁང་། ༡༩༩༡

རྗེ་བཙུན་ཏཱརཱནཱཐ་ཡིས་ནི་ཇི་སྐད་དུ། [1] "ཆོས་ཀྱི་རྣམ་གྲངས་འདི་ལ་ད་ལྟ་བོད་ན་བཞུགས་པའི་བསྟན་བཅོས་འགྱུར་རོ་འཚལ་གྱི་ནང་ན། འགྲེལ་པ་གཉིས་ཞིག་སྣང་སྟེ། ཛེཏཱ་རིས་མཛད་ནས་ཆག་ལོ་ཙཱ་བས་བསྒྱུར་ཞེར་བ་གཅིག་དང་། ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱིས་མཛད་ཅིང་པཎྜིཏ་ཞི་བ་འཚོ་དང་ལོ་ཙཱ་བ་ཀྟེ་དེ་ཡ་ལྷའི་དབྱངས་ཀྱིས་བསྒྱུར་ཞེར་བ་གཉིས་སྣང་བ་སློབ་དཔོན་དེ་དང་དེས་མཛད་པ་ནི་མིན་པར་སྣང་ལ། ཡོངས་རྒྱ་གར་གྱིས་འགྲེལ་པ་ཡིན་པ་ཡང་ཐེ་ཚོམ་གྱི་གཞིར་སྣང་ངོ་། །དོན་གྱི་ཆ་ནས་ལེགས་པར་བཤད་པ་ནི་ཡོད་ལ་ནོར་པ་ཡང་ཅི་རིགས་པར་ནི་སྣང་ངོ་། །ཆོས་རྗེ་པཎྜིཏའི་གསུང་གིས།

ལྟུང་བཤགས་སངས་རྒྱས་ཕྱག་མཚན་ལ། །
ཕུབ་དང་རལ་གྲི་སོགས་འཛིན་པའི། །
སྒྲུབ་ཐབས་སངས་རྒྱས་ཀྱིས་མ་གསུངས། །

ཅེས་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱིས་མཛད་ཞེར་བ་དེ་ན། རལ་གྲི་དང་གོ་ཆ་འཛིན་པའི་སྒྲུབ་ཐབས་བྱས་པ་དེ་ལ་དགོངས་པར་སྣང་ཞིང་། འོན་ཀྱང་ཅུང་ཟད་དཔྱད་དུ་ཡོད་དེ། གསང་སྔགས་ནང་པར་བཀོལ་བ་ཡིན་ན། སངས་རྒྱས་རབ་ཏུ་བྱུང་བ་ཆགས་བྲལ་གྱི་རྣམ་པ་མཚོན་ཆ་འཛིན་པའི་སྒྲུབ་ཐབས་བྱུང་སྲིད་ཀྱང་། གྲུབ་ཐོབ་ཀྱི་མན་ངག་ཅན་ཡིན་ན། མཐའ་གཅིག་ཏུ་བསལ་བ་ཡང་མ་ཡིན་ཏེ། གཞན་ཡང་ཆ་བྱད་འགལ་འདུ་འཛིན་པའི་སྒྲུབ་ཐབས་ཚད་ལྡན་མང་དུ་སྣང་བའི་ཕྱིར་རོ། །མདོ་ལུགས་སུ་བཀལ་བ་ལྟ་བུ་ཡིན་ན་ནི་དེ་ལྟར་མི་འཐད་པ་ཅེས་ཀྱང་ཡིན་ནོ།" །ཞེས་ཀླུ་སྒྲུབ་དང་ཛེཏཱ་རིའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པར་གྲགས་པ་འདི་གཉིས་སློབ་དཔོན་དེ་གཉིས་ཀྱིས་མི་མཛད་པ་མ་ཟད། རྒྱ་འགྲེལ་ཡིན་པ་ལ་ཡང་ཐེ་ཚོམ་གྱི་གནས་སུ་གྱུར་པ་གསུངས་སོ།།

1 རྗེ་བཙུན་ཏཱརཱནཱཐའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པ། པོད། ཇ དཔེ་ཤོག ༣༥༨

མཁས་མཆོག་དངུལ་ཆུ་དྷརྨ་བྷདྲས་ཀྱང་། [1] "སྐུ་མདོག་ཕྱག་མཚན་དང་སོ་སོའི་ཞིང་ཁམས་ཀྱི་མཚན་རྣམས་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱིས་མཛད་ཟེར་བའི་རྒྱ་འགྲེལ་ལས་བྲངས་ཏེ་རྒྱལ་མཆོག་སྐལ་བཟང་རྒྱ་མཚོས་དྲི་ལན་དུ་སྤྲུལ་བ་ལྟར་" ཞེས་གསུངས་པས་ཀླུ་སྒྲུབ་ཉིད་ཀྱིས་མཛད་པ་ཡིན་པ་ལ་ཐེ་ཚོམ་མཛད་དོ། །རྗེ་ས་པཎ་གྱིས་སྡོམ་གསུམ་རབ་དབྱེ་དང་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་འདོན་ཐབས་ལས་ཀྱང་།[2] བོད་ཀྱིས་བྱས་པའི་ཕྱབ་དང་རལ་གྲི་ལ་སོགས་པ་མཚོན་ཆ་མང་པོར་བཟུང་བ་སྣང་སྟེ། དེ་ནི་སྤྲུལ་སྐུ་རབ་ཏུ་བྱུང་བ་ལ་ཤིན་ཏུ་མི་འཐད་པ་ཡིན་ནོ། །དེའང་ཁྱད་པར་འཕགས་པའི་བསྟོད་པ་ལས་འབྱུང་བ།

ཁྱོད་ནི་མཚོན་ཆ་གདང་མེད་པར། །
བྱམས་པའི་མཚོན་གང་ལགས་པས་རྒྱས། །ཞེས་གསུངས་པ་ཡིན་ནོ། །

ཞེས་ལུང་འདྲེན་མཛད་དེ་རྒྱ་གར་གྱི་མཁས་པས་མཛད་པ་མ་ཡིན་པ་ཤུགས་ཀྱིས་བསྟན་པ་ཤིན་ཏུ་གསལ་ལོ། །

རྗེ་གུང་ཐང་པས་ཀྱང་།[3] "འགྲེལ་པ་དེ་ནི་རྒྱལ་བ་སྐལ་བཟང་རྒྱ་མཚོས་ཀླུ་སྒྲུབ་ལ་ཁ་གཡར་བའི་བོད་གཞུང་ཞིག་ཡིན་པ་གསུངས་པ་ལྟར་འཐད་དེ" ཞེས་དང་། གཞན་ཡང་།[4] "འདིའི་ཕྱག་མཚན་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱིས་མཛད་པར་གྲགས་པའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པ་ལས།" ཞེས་སོགས་གསུངས་པས་དོན་ལ་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱིས་མི་མཛད་པའི་ཕྱོགས་སུ་རྒྱ་མཚན་དུ་མ་སྣང་ངོ་། །

---

1 བདེ་བར་གཤེགས་པ་སུམ་ཅུ་སོ་ལྔ་ལ་བསྟོད་པའི་རབ་ཏུ་བྱེད་པ་གནྡྷའི་ཆུ་རྒྱུན། པོད། ག དཔྱིན་ཤོག ༡༡༣

2 ས་པཎ་ཀུན་དགའ་རྒྱལ་མཚན་གྱི་གསུང་འབུམ། གངས་ཅན་རིགས་མཛོད། ༣༥ གླེགས་བམ་གསུམ་པ། ཤོག ༥༣༥ བོད་ལྗོངས་བོད་ཡིག་དཔེ་རྙིང་དཔེ་སྐྲུན་ཁང་། ༡༩༩༣

3 ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པ། པོད། ཛ དཔྱིན་ཤོག ༣༣༣

4 ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པ། པོད། ཛ དཔྱིན་ཤོག ༣༣༡

དེ་བཞིན་སྨན་སྡོང་མཚམས་པ་རིན་པོ་ཆེས་ལྷུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པར་ཇི་སྐད་དུ།[1] “དེ་ལྟར་སྐུ་མདོག་ཕྱག་མཚན་རྣམས་ག་རུ་རིན་པོ་ཆེའི་གསུང་ཚད་མ་ཡོ་རྒྱན་ལས་འཕྲོ་གླིང་པའི་གཏེར་བྱོན་ལྟར་ཡིན་ཅིང་། ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱི་འགྲེལ་པ་ལས། ཚངས་པ་ཕྱག་གཉིས་པདྨ་ཉི་མ་དང་། ཚངས་པས་བྱིན་ཕྱག་གཉིས་ཉི་མ་ཟླ་བ་དང་། གཟི་བརྗིད་མཐའ་ཡས་དམར་པོ་ཉི་མ་རེ་རེ་བསྣམས་པ། འོད་དཔལ་ཕྱག་གཉིས་འོད་དཀྱིལ་བསྣམས་གསུངས་པ་ལས་གཞན་སྐུ་མདོག་ཕྱག་མཚན་ཐམས་ཅད་འདི་གཉིས་མཚུངས་པ་ཡིན་ནོ།’ །ཞེས་གསུངས་པ་པ་དང་མཐུན་ཆེ་བས་ཀྱང་བོད་རྩོམ་ཡིན་པའི་ཕྱོགས་སུ་ཉེ་ཞིང་། དེ་ཉིད་ཀྱིས་མཛད་པའི་ལྷུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པ་ཡོད་ཚོད་འདུག་ཀྱང་ད་ལྟ་ལག་སོན་མེད་པས་མཐའ་གཅིག་ཏུ་གང་ཡིན་བརྗོད་ནུས་བྲལ།

དཔྱད་པར་བྱ་བའི་གཞི་གཞན་ཞིག་ལ། ཇོ་ས་པཎ་གྱི་གསུང་མགོ་གསལ་དེ་ལའང་བསམ་དགོས་པ་ཞིག་ཡོད་དེ། སྨན་སྡོང་མཚམས་པ་རིན་པོ་ཆེས།[2] “འཇམ་དབྱངས་ས་པཎ་གྱིས། གཡུལ་ལས་རྣམ་རྒྱལ་གྱི་གོ་མཆོན་བསྣམས་པ་མི་ཟད་གསུངས་པའང་མཁས་པའི་བགྱི་བ་གསུམ་སྐྱེལ་ཕྱིར་དགོངས་པ་ཅན་གྱི་གསུང་ཡིན་པར་སྣང་ངོ་།’ །ཞེས་ཀྱང་གསུངས་ཤིང་།

ཇོ་བདག་ཉིད་ཆེན་པོ་ལ་སངས་རྒྱས་སོ་ལྔ་ཐམས་ཅད་དངོས་སུ་གཟིགས་སྣང་བྱུང་བའི་གྲས་སུའང་སངས་རྒྱས་འགའ་ཞིག་གི་ཕྱག་མཚན་དུ་ཕུབ་དང་རལ་གྲི། རྒྱལ་མཚན་རི་དབང་འཛིན་པ་བཅས་གསལ་བ་དང་། གདུལ་བྱ་འགའ་ཞིག་ལ་ཕུབ་དང་རལ་གྲི་ལས་གཞན་ཕྱག་མཚན་དུ་མ་འཛིན་པ་བསྟན་པ་དང་། འགའ་ཞིག་ལ་རེ་ཟུང་དང་། འགའ་རེར་ཕྱག་རྒྱ་རིགས་ལྔ་ལས་གཞན་མི་བསྟན་པ་གདུལ་

---

1 གླེགས་བམ། ༢ ལྷུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པ་བདུད་རྩིའི་ཆུ་རྒྱུན། དཔེ་ཤོག ༥༠༣

2 གླེགས་བམ། ༢ ལྷུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པ་བདུད་རྩིའི་ཆུ་རྒྱུན། དཔེ་ཤོག ༥༤༦

བྱའི་བློ་དང་འཚམ་པར་གང་ལ་གང་འདུལ་བསྟན་པ་སུས་ཀྱང་འགོག་མ་ནུས་པ་ཞིག་སྟེ། དེ་ཡང་**འགྲེལ་ཆེན་དྲི་མེད་འོད**་དུའང་རྒྱལ་བ་རིགས་ལྔས་ཀྱང་ཕྱག་མཚན་བཞེས་པ་གསལ་ཞིང་། དེར་རྒྱལ་བ་དོན་ཡོད་གྲུབ་པའི་ཕྱག་རྒྱའི་དབུས་སུ་རལ་གྲི་བཞེས་པ་སྣང་སྟེ། འགྲེལ་ཆེན་དྲི་མེད་འོད་ལས།[1] "དེ་བཞིན་དུ་ལག་པ་གཡོན་པའི་མཐིལ་གན་རྒྱལ་དུ་སྐྱིལ་ཀྲུང་གི་སྟེང་དུ་སྟེ། གཞན་པ་ལག་པ་གཡས་པའི་མཐིལ་ཕྱུས་མོ་གཡས་པའི་སྟེང་དུ་འཇིགས་པ་མེད་པ་རབ་ཏུ་སྦྱིན་པ་ནི་ཕྱག་ན་རལ་གྲི་ཞེས་པ་དོན་ཡོད་གྲུབ་པའི་མི་འཇིགས་པའི་ཕྱག་རྒྱའོ།" །ཞེས་ཕྱག་ན་རལ་གྲི་འཛིན་པ་གསལ་བར་གསུངས་ཤིང་། །དེ་བཞིན་དུ་རྒྱལ་བ་རིན་ཆེན་འབྱུང་གནས་ཀྱི་ཕྱག་ན་རིན་ཆེན་དང་། རྒྱལ་བ་སྣང་བ་མཐའ་ཡས་ཀྱི་ཕྱག་ན་པདྨ་འཛིན་པ་ཡོད་པ་བཅས་ཀྱང་གསལ་བས་སོ།།

གཞན་ཡང་འབྲི་གུང་པ་བསྟན་འཛིན་ཆོས་ཀྱི་རྒྱལ་མཚན་གྱི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པ་ལས་སྨིན་རྣམ་སྒྲོང་ལས་ཇི་སྐད་དུ།[2] "འོ་སྐོལ་གྱི་སྟོན་པ་ཐུགས་རྗེ་ཅན་འདི་ཉིད་ཀྱིས་འཕགས་པ་དཀོན་མཆོག་བརྩེགས་པའི་འདུས་པ་ཉེར་བཞི་པ་ཉེར་འཁོར་གྱིས་ཞུས་པའི་མདོར་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་ལྟུང་བ་བཤགས་པའི་ཐབས་མཆོག་ཏུ་གྱུར་པ་ཕུང་པོ་གསུམ་པ་ཞེས་ཁྱད་པར་ཅན་གསུང་པ་འདི་ཉིད་ཐེག་པ་མཐའ་དག་གིས་ཤིན་ཏུ་གཅེས་ཆེར་མཛད་གཤིས་འཕགས་པ་ཀླུ་སྒྲུབ་སོགས་འཕགས་བོད་ཀྱི་མཁས་གྲུབ་དུ་མས་འགྲེལ་ཊཱི་ཀ་རྒྱས་བསྡུས་དུ་མ་ཞིག་མཛད་འདུག་པ་དང་། འཕགས་པའི་ཡུལ་དུའང་མདོ་ལུགས་ཀྱི་མཆོད་ཆོག་དང་། སྔགས་ལུགས་ཀྱི་སྒྲུབ་ཐབས་སློབ་དཔོན་ནག་པོའི་ཞབས་ཀྱིས་མཛད་པ་སོགས་ཅི་རིགས་ཡོད་འདུག་པར་བརྟེན། གངས་རིའི་ཁྲོད་འདིར་དགེ་བའི་བཤེས་གཉེན་ཁ་ཅིག་གིས་བྱིན་རླབས་བཞིའི་སྐོར་

1 Toh-1347 ཐི། བསྟན། རྒྱུད་འགྲེལ། "ད" ༢༧༣ བ ༩

2 བྱང་ཆུབ་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་ཚོ་ག་ཤིན་ཏུ་བསྡུས་པ་ལས་སྨིན་རྣམ་སྒྲོང་། ཤོག ༢

སྣན་སླའི་མདོ་ཚོག་ལ་པར་བཀབ་ཀྱི་ཚོ་ག་མཛད་པ་དང་། འགའ་ཞིག་གིས་རྒྱ་གར་པཎ་ཆེན་ཤཱ་རིའི་པུཏྲ་ནས་བརྒྱུད་པའི་རྗེས་གནང་གི་ཚོ་ག་ལ་བརྟེན་ནས་བྱ་རྒྱུད་ལུགས་ཀྱི་སྒྲུབ་ཐབས་དང་། ཁ་ཅིག་གིས་སློབ་དཔོན་ཆེན་པོ་པདྨ་འབྱུང་གནས་ཀྱིས་མཛད་པའི་རྟ་ཕག་ཡིད་བཞིན་ནོར་བུའི་ཕྱི་སྒྲུབ་ལ་བརྟེན་པའི་བདེ་གཤེགས་སོ་ལྔའི་སྒྲུབ་ཐབས་དང་ལྷོ་སྣོ་སོགས་སྣ་ཚོགས་ཤིག་མཛད་གནང་བ་མཐའ་དག་ཀྱང་ཁུངས་དང་འབྲེལ་ཞིང་བྱིན་རླབས་རྨད་དུ་བྱུང་བ་ཁོ་ནར་ངེས་པས་རང་གི་ཉམས་ལེན་གྱིས་ལྷུར་ན་འདོད་པའི་དོན་འགྲུབ་ངེས་འབབ་ཞིག་ཡིན་ལོ། ཞེས་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་འདི་ཉིད་མདོ་སྔགས་གཉིས་ཀའི་ལུགས་སུ་འགྲེལ་ཚུལ་ཡོད་པ་གསུངས་སོ།།

སྡིག་ལྟུང་བཤགས་ཚུལ་ཚོ་ག་དང་བཅས་པའི་སྔོ་ནས་སྒྲུབ་ཐབས།

ལྟུང་བཤགས་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོའི་སྒོ་ནས་ཉེས་ལྟུང་རྣམས་བཤགས་སྡོམ་བྱ་སྐབས་ཚོ་གའི་རིམ་པ་རྒྱས་བསྡུས་མི་འདྲ་བ་དུ་མ་ཞིག་སྣང་རྒྱུ་ཡོད་པ་དག་ལས་རྒྱས་བསྡུས་འཚམས་ཤིང་ཙུང་ཟད་ག་བདེ་བའི་སྒོ་ནས་བརྗོད་པ་ལ། དཔལ་གསལ་བ་ཐམས་ཅད་ཀྱི་སྤྱིའི་ཚོ་གའི་སྙིང་པོའི་རྒྱན་ལས།[1]

མཚན་མོ་མི་ཉལ་རྣལ་འབྱོར་གྱིས། །
མཁའ་ལ་རྒྱལ་བའི་ཚོགས་དམིགས་ཏེ། །
ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་སྡེ་དག །
གལ་ཏེ་ཚོ་ག་བཞིན་སྤྱད་ན། །
ཁ་ན་མ་ཐོ་སྡོམ་པོ་ཡང་། །
ཟླ་བ་གསུམ་གྱི་རྣམ་དག་པར། །
ཐུབ་པས་གསུངས་པ་ཤེས་བྱ་སྟེ། །

1 Toh-2490 སྡེ། བསྟན། རྒྱུད་འགྲེལ། "ཟི" ༣༣༨ ན ༦

དང་བ་ཡིས་ནི་ཀུན་ཏུ་སྤྱོད། །

ཅེས་གསུངས་པའི་རྗེས་སུ་འབྲངས་ནས་བཤགས་པ་པོས་ཕྱོགས་བཅུ་ན་བཞུགས་པའི་རྒྱལ་བའི་ཚོགས་རྣམས་དམིགས་པའི་ཡུལ་དུ་བཞག་ནས་ཕུང་པོ་གསུམ་པ་ལྟུང་བ་བཤགས་པའི་མདོ་འདི་ཚོ་གའི་རིམ་པ་བཞིན་དུ་ཁ་ཏོན་དུ་བྱས་ན་ཁ་ན་མ་ཐོ་སྦོམ་པོ་ལྔ་ཡང་ཇི་སྲིད་ཅིག་སྤྱོད་ཀྱང་ཟླ་བ་གསུམ་གྱི་ནང་ཚུན་དག་པར་འགྱུར་བ་ཐུབ་པས་གསུངས་པ་བཞིན་ཤེས་པར་བྱས་ནས་ལུས་ངག་ཡིད་གསུམ་དང་བའི་དད་པས་ཚོ་གའི་སྒོ་ནས་སྤྱད་དགོས་པ་གསུངས་སོ། །དེ་ཡང་ བླ་མ་བརྒྱུད་པའི་རིམ་པ་དང་དེ་ལས་བྱུང་བའི་གདམས་པའོ། །དེ་ནས་དེ་ལྟ་བུའི་ཚོ་གའི་སྒོ་ནས་སྤྱད་པར་ཚོ་ག་དེ་ཉིད་རབ་བྱུང་ན་བླ་མ་བརྒྱུད་པའི་རིམ་པ་ལས་བྱུང་བའི་སྒོ་ནས་བྱེད་ཐུབ་ན་རབ་བོ། །

གདམས་པའི་ཚོ་ག་དངོས་གཞི།

གཉིས་པ་གདམས་པའི་ཚོ་ག་དངོས་གཞི་བཤད་པ་ལ་བཞི་སྟེ། སྔོན་འགྲོ་སྐྱབས་སེམས་དང་ཡན་ལག་བདུན་གྱི་སྒོ་ནས་ཚོགས་བསགས་པ། གཉིས་པ་དངོས་གཞི་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་ཉིད་བཟླག་ནས་སྒྲིབ་པ་སྦྱོང་བ། གསུམ་པ་ཕྱིག་ལྟུང་འདག་པའི་མཚན་མ་ཇི་ལྟར་བྱུང་བ། བཞི་པ་མཇུག་ཏུ་བྱ་བའི་རིམ་པ་བཅས་སོ། །

སྐྱབས་འགྲོ་སེམས་བསྐྱེད་བྱེད་ཚུལ་དང་། ཡན་ལག་བདུན་གྱི་སྒོ་ནས་ཚོགས་བསགས་ཚུལ།

དང་པོ་ནི། བཤགས་པ་པོས་ཐོག་མར་བདེ་བར་གཤེགས་པ་རྣམས་ཀྱི་སྣང་བརྙན་བྲིས་འབུར་གང་རུང་གི་དྲུང་དུ་ཆུ་གཉིས་ཉེར་སྤྱོད་བཀྲམ། ལྷའི་གྲངས་ལྟར་སོ་ལྔའམ་སོ་བདུན་གང་ལྕོགས་དང་རྒྱས་པར་སྒྲོན་བཀྲིས་རྟགས་རྫས། རྒྱལ་སྲིད་སྣ་བདུན། འཕན་གདུགས། ཟླ་བྲེ། ཆོས་གོས་ལྷུང་བཟེད། འཁར་

བསིལ། བསིལ་གཡབ། ཇ་ཡབ་སོགས་དང་མཆོད་པའི་མཚལ། ཁྲུས་གསོལ་ཆས། རོལ་ཆ་རྣམས་ཀྱང་འཁྱེར་ན་ཕུན་སུམ་ཚོགས་པའི་ཡན་ལག་ཏུ་བཤམས་ཏེ་རོལ་མོ་དང་བཅས་པའི་སྣ་ནས་བྱ་དགོས། དེ་ནས་སྒྲུབ་པ་པོས་ཁྲུས་བྱས། གོས་གསར་པ་གྱོན་ཤ་ཆང་སྒོག་བཙོང་སོགས་སྤངས། ཚོ་ག་འདི་ཚངས་སྤྱོད་པས་གཙོ་བོར་འདོན་དགོས། དེ་ནས་སྒྲུབ་པ་པོའི་དམིགས་པའི་ཡུལ་ལ་མདུན་གྱི་ནམ་མཁར་སྟོན་པ་ཐུབ་པའི་དབང་པོ་ལ་འཁོར་རྩ་བརྒྱུད་ཀྱི་བླ་མ་དང་སངས་རྒྱས་བྱང་སེམས་དཔག་ཏུ་མེད་པས་སྐོར་ནས་བཞུགས་པར་བསམ་ཞིང་། དེ་ནས་སྐྱབས་འགྲོ་དང་ཚད་མེད་བཞི་ལན་གསུམ་གསུམ་འདོན་པའི་རྗེས་སུ་མ་སེམས་ཅན་ཐམས་ཅད་ཀྱི་དོན་དུ་མྱུར་བར་མྱུར་བར་ཡང་དག་པར་རྫོགས་པའི་སངས་རྒྱས་ཀྱི་གོ་འཕང་རིན་པོ་ཆེ་ཐོབ་པར་བྱ། དེའི་ཆེད་དུ་བདེ་བར་གཤེགས་པ་སུམ་ཅུ་རྩ་ལྔར་མཆོད་ཅིང་བསྐུལ་ནས་ལྟུང་བ་བཤགས་པའི་ཆོ་ག་ལ་འཇུག་པར་བྱའོ། །དེ་ལྟ་བུའི་ཁྱད་པར་ཅན་གྱི་སེམས་བསྐྱེད་ལན་གསུམ་འདོན་ནས། ས་གཞི། ཁང་བཟང་དང་། གདན་ཁྲི་བཅས་ལ་མཆོད་པས་བྱིན་གྱིས་བརླབ་པར་བྱ། དེ་ནས་ཨོཾ་ནམོ་བྷགཝཏེ། བཛྲསཱར་པྲམརྡནི། ཏཐཱགཏཱཡ་ཨརྷཏེ། སམྱཀྶཾབུདྡྷཱཡ། ཏདྱཐཱ། ཨོཾཝཛྲེཝཛྲེ། མཧཱཝཛྲེ། མཧཱཏེཛཝཛྲེ། མཧཱཝིདྱཱཝཛྲེ། མཧཱབོདྷིཙིཏྟཝཛྲེ། མཧཱབོདྷིམཎྜོཔསཾཀྲམཎ་ཝཛྲེ་སརྦཀརྨ། ཨཱཝརཎ་བིཤོདྷན་བཛྲེསྭཱཧཱ། བཅས་མཆོད་པའི་སྤྲིན་གྱི་གཟུངས་འདི་ཉིད་ལན་གསུམ་མམ་བདུན་རོལ་མོ་དང་བཅས་པས་འདོན་ན་ཕན་ཡོན་ལྷག་པར་ཆེ་བ་མདོ་ལས་གསུངས་སོ། །དེ་ནས་སྤྱན་འདྲེན་པ་ནི། སྤོས་དྲི་ཞིམ་པོ་བསྲེགས་པའི་དུད་པ་འཐུལ། བླ་གོས་ཕྲག་པ་གཅིག་ཏུ་གཟར་ཞིང་། པུས་མོ་གཡས་པའི་ལྷ་ང་སར་བཙུགས། ཐལ་མོ་མེ་ཏོག་གིས་བཀང་བ་སྙིང་གར་སྦྲར། ཕྱོགས་བཅུའི་ཞིང་ཁམས་སུ་བཞུགས་པའི་བདེ་བར་གཤེགས་པ་སུམ་ཅུ་རྩ་ལྔ་པོ་རྗེས་སུ་དྲན་པ་དང་བཅས་གུས་པ་ཆེན་པོས་ཚིག་འདི

སྐད་དུ། ཕྱོགས་བཅུ་ན་བཞུགས་པའི་བཅོམ་ལྡན་འདས་ཐུགས་རྗེ་ཆེན་པོ་དང་ལྡན་པ་རྣམས་བདག་ལ་དགོངས་སུ་གསོལ། བཅོམ་ལྡན་འདས་ཐུགས་རྗེ་ཆེན་པོ་དང་ལྡན་པ་སུམ་ཅུ་རྩ་ལྔ་པོ་ཁྱེད་རྣམས་སྔོན་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་སྤྱོད་པ་སྤྱོད་པའི་ཚེ། སྙིགས་མ་ལྔ་བདོའི་འགྲོ་བ་རྣམས་ཀྱི་ལས་ཀྱི་སྒྲིབ་པ་སྦྱོང་བར་ཐུགས་དམ་ཇི་ལྟར་བཞེས་པ་བཞིན་དུ་དེང་བདག་ཅག་མགོན་མེད་ཀྱི་འགྲོ་བ་སྐྱབ་པའི་སླད་དུ། མགོན་སྐྱབས་དང་དཔུང་གཉེན་དུ་སྤྱན་འདྲེན་ཅིང་མཆིས་ན་ཐུགས་རྗེའི་སྤྱན་གྱིས་གཟིགས་ནས་བདག་ཅག་གི་ཉེས་ལྟུང་སྦྱོང་ཞིང་བསོད་ནམས་ཀྱི་ཞིང་དུ་འགྱུར་པར་ཅིག་གནང་། དེ་ནས་མགན྄་བཟང་མོའི་རྟོགས་བརྗོད་ལས་[1]འབྱུང་བ་ལྟར་ན།

ཚུལ་ཁྲིམས་རྣམ་དག་ཤེས་རབ་ཤིན་ཏུ་དག །
དད་ལྡན་སྙིང་པོ་ཉན་ཐོས་ཆེ་རྣམས་ཀྱིས། །
མགོན་མེད་གྱུར་པ་བདག་ལ་རྗེས་བཟུང་བའི། །
དོན་མཛད་ཐུགས་རྗེས་གཤེགས་པར་མཛད་དུ་གསོལ། །

ཞེས་དང་། མ་ལུས་སེམས་ཅན་ཀུན་གྱི་མགོན་གྱུར་ཅིང་། །ཞེས་པ་ནས། ཡོངས་དག་འཁོར་དང་བཅས་ཏེ་གཤེགས་སུ་གསོལ། །ཞེས་པའི་བར་དུ་བརྗོད་པར་བྱའོ། །ཡང་ན་དཀོན་བརྩེགས་ཀྱི་གསང་བ་བསམ་གྱིས་མི་ཁྱབ་པའི་མདོ་ལས།[2]

ཐུབ་པ་ཆེན་པོ་དུས་འདི་ལགས། །
སྐྱེས་བུ་གཙོ་བོ་གཤེགས་སུ་གསོལ། །
སྐྱེས་བུ་དམ་པ་གཤེགས་སུ་གསོལ། །
སྐྱེས་བུ་ཅང་མཁྱེན་གཤེགས་སུ་གསོལ། །

ཞེས་སོགས་ཀྱི་སྒོ་ནས་གསོལ་བ་བཏབ་པས། རང་བཞིན་གྱིས་བཅོམ་ལྡན་འདས་

1 Toh-346 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "ཨཾ" ༣༤༣ ན ༨
2 Toh-47 སྡེ། བཀའ། དཀོན་བརྩེགས། "ཀ" ༡༧༣ ན ༥

ཤཱཀྱ་ཐུབ་པ་སྐུ་གསེར་བཙོ་མ་ལྟ་བུའི་ཕྱག་གཡས་ས་གནོན། གཡོན་མཉམ་གཞག་གི་སྙིང་དུ་བདུད་རྩི་གང་བའི་ལྷུང་བཟེད་བསྣམས་པ་བྱོན་པ་དང་། རིམ་བཞིན་བདེ་གཤེགས་སོ་བཞི་པོ་གཞན་ཐམས་ཅད་ཀྱང་རང་སོ་སོའི་ཞིང་ཁམས་ནས་རང་རང་གི་ཕྱག་རྒྱ་ཕྱག་མཚན་དང་བཅས་པ་རྫུ་འཕྲུལ་གྱིས་བྱོན་པར་བསམ། དེ་ལྟར་སྤྱན་དྲངས་ཤིང་མདུན་གྱི་ནམ་མཁར་བཞུགས་པའི་དམིགས་པས་གསལ་བཏབ་པའི་རྗེས་ཡན་ལག་བདུན་གྱི་སྒོ་ནས་ཚོགས་བསགས་དགོས།

དང་པོ་ཕྱག་འཚལ་བའི་ཡན་ལག་ནི། དངོས་སུ་ལུས་ཀྱི་ཕྱག་འཚལ་བཞིན་པའི་ངང་ཐོག་མར།

སངས་རྒྱས་ཐམས་ཅད་འདུས་པའི་སྐུ། །
རྡོ་རྗེ་འཛིན་པའི་ངོ་བོ་ཉིད། །
དཀོན་མཆོག་གསུམ་གྱི་རྩ་བ་སྟེ། །
བླ་མ་རྣམས་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །

ཞེས་སོགས་ནས། མགོན་པོ་ཐུགས་རྗེ་ཆེ་ལྡན་པ། །ཞེས་པའི་བར་ཤློ་ཀ་གསུམ་སྔོན་ནས་ཕྱོགས་བཅུ་ན་བཞུགས་པའི་སངས་རྒྱས་རྣམས་དང་། ཆོས་གཟུགས་ཀྱི་སྐུས་འདུས་པའི་བདེ་གཤེགས་རིགས་ལྔ་དང་། བསྐལ་བཟང་སངས་རྒྱས་སྟོང་རྩ་གཉིས་ལ་སྤྱིར་བསྟོད་པའི་སྒོ་ནས་ཕྱག་འཚལ་བའི་རྗེས་སུ་སྐབས་དོན་བདེ་གཤེགས་སོ་ལྔ་པོ་རྣམས་ཀྱི་མཚན་རེ་རེ་ལ་བསྟོད་པ་སྦྱར་བ་སློབ་དཔོན་སྨྲྀཏིཛྙཱནས་མཛད་པའི་བདེ་བར་གཤེགས་པ་སུམ་ཅུ་རྩ་ལྔའི་བསྟོད་པ་མཚན་རིན་པོ་ཆེས་སྤྲས་པ་སྔོན་དགོས། ཡང་ན། ཡིད་ལ་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དེ་རྣམས་ཀྱི་མཚན་ཐོས་པ་དང་བཟུང་བ་ཙམ་གྱིས་བསྐལ་པར་བསགས་པའི་སྡིག་པ་དང་མཚམས་མེད་བྱས་པའི་ལས་ཀྱང་སྦྱོང་བ་སོགས་ཀྱི་ཡོན་ཏན་རྣམས་དྲན་བཞིན་པས་ཕྱག་འཚལ་ལ། ངག་གིས་གོང་གི་བསྟོད་པ་འདིའམ་འབྲི་གུང་བསྟན་འཛིན་ཆོས་ཀྱི་བློ་གྲོས་ཀྱིས་མཛད

པའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པའི་ཕྱག་འཚལ་སྐབས་གསལ་བའི་བདེ་གཤེགས་སོ་ལྔའི་བསྟོད་པ་ཚིགས་སུ་བཅད་པའི་ངོར་བཞུགས་པ་སྐུ་མདོག་ཕྱག་མཚན་ཞིང་ཁམས་ཕན་ཡོན་དང་བཅས་པ་གསལ་བ་འདི་ཉིད་འདོན་དགོས།

ཡན་ལག་གཉིས་པ་མཆོད་པ་ནི། མཆོད་པ་འབུལ་བའི་སྐབས་སུའང་གོང་ཞུས་མཆོད་སྤྲིན་གྱི་གཟུངས་ཚར་གཅིག་སླར་ཡང་སྟོན་པའི་རྗེས་སུ་བཟང་སྤྱོད་ལས།[1]

མེ་ཏོག་དམ་པ་ཕྲེང་བ་དམ་པ་དང་། །ཞེས་སོགས་ནས། རྒྱལ་བ་དེ་དག་ལ་ནི་མཆོད་པར་བགྱི། །ཞེས་པའི་བར་སྟོན་ནས་ཞབས་བསིལ། མེ་ཏོག འདུག་སྤོས། སྣང་གསལ། དྲི་ཆབ། ཞལ་ཟས། རོལ་མོ་བར་བྱ་དགོས་སོ།།

གསུམ་པ་བཤགས་པའི་ཡན་ལག་ལ། རྒྱལ་སྲས་ཆེན་པོ་ཞི་བ་ལྷའི་སྤྱོད་འཇུག་གི་སྡིག་བཤགས་ཀྱི་ལེའུ་དང་། འཕགས་པ་གསེར་འོད་དམ་པར་གསལ་བའི་སྡིག་བཤགས་ཀྱི་ལེའུ་དང་། སྤྱི་བཤགས་སོགས་འདོན་ན་འཐུས་མོད། ཡང་ན། མདོར་བསྡུས་པའི་ཚུལ་དུ་བཤགས་པ་སོགས་ཡན་ལག་ལྷག་མ་ལུ་བཟང་སྤྱོད་ཀྱི་སྨོན་ལམ་དུ་གསལ་བ།

འདོད་ཆགས་ཞེ་སྡང་གཏི་མུག་དབང་གིས་ནི། ཞེས་པ་ནས། ཐམས་ཅད་བདག་གི་བྱང་ཆུབ་ཕྱིར་བསྔོའོ།[2] །ཞེས་པའི་བར་དུ་བརྗོད་པར་བྱའོ།།

ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་ཉིད་བཀླགས་ནས་སྡིག་སྒྲིབ་སྦྱོང་བ།

གཉིས་པ་དངོས་གཞི་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་ཉིད་བཀླག་ནས་སྒྲིབ་པ་སྦྱོང་བ་ནི། རྒྱལ་བ་འཁོར་དང་བཅས་པ་གསལ་བར་དམིགས་ཏེ་རང་གིས་འཁོར་བ་ཐོག་མ

1 Toh-44 སྡེ། བཀའ། ཕལ་ཆེན། "ཨ" ༣༥༦ བ ༢
2 Toh-44 སྡེ། བཀའ། ཕལ་ཆེན། "ཨ" ༣༥༦ ན ༥

མེད་པ་ནས་ད་ལྟའི་བར་དུ་བསགས་པའི་སྡིག་ལྟུང་རྣམས་ལ་འགྱོད་པ་དྲག་པོ་བསྐྱེད་ཅིང་ཕྱིན་ཆད་སྡོག་ལ་བབས་ཀྱང་མི་བགྱིད་དོ་སྙམ་པའི་སྡོམ་སེམས་དང་བཅས་འདུན་པ་ཤུགས་དྲག་པོས་ལུས་ཀྱི་ཕྱག་འཚལ་བ་དང་བཅས། ངག་ནས་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་ཉིད་བདག་གི་མིང་འདི་ཞེས་བགྱི་བ་ནས་བཟུང་............ཐལ་མོ་སྦྱར་བ་བགྱིས་ཏེ་སྐྱབས་སུ་ཉེ་བར་མཆིའོ། །ཞེས་པའི་བར། ལན་བདུན་ནམ་ཉེར་གཅིག་གམ་བརྒྱ་རྩ་བརྒྱད་སོགས་གང་ནུས་འདོན་པར་བྱའོ། །

སྡིག་ལྟུང་འདགས་པ་ལ་སྟོབས་བཞི་ཚང་བ་མེད་དུ་མི་རུང་བས་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་ཉིད་ལ་སྟོབས་བཞི་ཡོངས་སུ་ཚང་བ་ཡིན་ཏེ། ཐོག་མར་དཀོན་མཆོག་གསུམ་ལ་སྐྱབས་སུ་འགྲོ་བ་ནི་རྟེན་གྱི་སྟོབས་དང་། སངས་རྒྱས་སོ་ལྔ་ཡིད་ལ་བྱེད་ཅིང་མཚན་ནས་བརྗོད་དེ་ཕྱག་འཚལ་བ་ནི་གཉེན་པོ་ཀུན་ཏུ་སྤྱོད་པའི་སྟོབས་དང་། དེ་དག་ལ་སོགས་ཏེ་ཕྱོགས་བཅུའི་འཇིག་རྟེན་གྱི་ཁམས་ཐམས་ཅད་ན་ཞེས་པ་ནས། འཆགས་སོ། །མི་འཆབ་བོ། །ཞེས་པའི་བར་གྱི་རྣམ་པར་སུན་འབྱིན་པ་ཀུན་ཏུ་སྤྱོད་པའི་སྟོབས་དང་། སླན་ཆད་ཀྱང་གཅོད་ཅིང་སྡོམ་པར་བགྱིད་ལགས་སོ། །ཞེས་པས་ཉེས་པ་ལས་སླར་ལྡོག་པའི་སྟོབས་བསྟན་ཏོ། །སྟོབས་བཞི་པོ་དེ་ཁ་ཙམ་མ་ཡིན་པར་ཞི་ཐག་པ་ནས་ཚང་བར་བྱེད་དགོས་པ་གལ་ཆེའོ། །གཞན་ཡང་། སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་དེ་དག་ཐམས་ཅད་བདག་ལ་དགོངས་སུ་གསོལ་ཞེས་པ་ནས། དེ་བཞིན་དུ་བདག་གིས་ཀྱང་ཡོངས་སུ་བསྔོ་བར་བགྱིའོ། །ཞེས་པའི་བར་གྱིས་ཕྱིན་དྲུག་གིས་བསྡུས་པའི་དགེ་རྩ་ཐམས་ཅད་བླ་མེད་བྱང་ཆུབ་ཀྱི་རྒྱུར་བསྔོ་བ་དང་དེ་ནས་སྡིག་པ་ཐམས་ཅད་ནི་སོ་སོར་བཤགས་སོ། །ཞེས་པ་ནས། ཡེ་ཤེས་ཀྱི་མཆོག་དམ་པ་ཐོབ་པར་གྱུར་ཅིག་གི་བར་གྱིས། གོང་དུ་བཤད་པའི་སྟོབས་བཞི་དང་བསྔོ་བ་ཐམས་ཅད། བཤགས་པ་དང་། ཡི་རང་བ་དང་། བསྔོ་བའི་ཕུང་པོ་གསུམ་ཕུང་པོ་གསུམ་དུ་བསྡུ་ཚུལ་ཡང་བསྟན་ཏོ། །མི་མཆོག་རྒྱལ་བ་ཞེས་

སོར་ཀྱིས་དེ་རྣམས་བརྟན་པར་བྱ་བའི་ཆེད་དུ་སླར་ཡང་སྐྱབས་སུ་འགྲོ་བ་བསྟན་དོ།།

དེ་ལྟར་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་ཉིད་ལན་གྲངས་བདུན་ནམ་ཉེར་གཅིག་ཡང་ན་བརྒྱ་རྩ་སོགས་བགྲངས་ཟིན་པའི་རྗེས་སུ་གཟུངས་བཟླ་བར་བྱ་སྟེ། ཏདྱཐཱ། ཨོཾ་མུནེམུནེམཧཱམུནེཡེ་སྭཱཧཱ། ཞེས་ཐུབ་པའི་དབང་པོའི་གཟུངས་དང་། ཨོཾ་ཀུརྂགིནིསྭཱཧཱ། དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་སྤྱིའི་སྙིང་པོའི་གཟུངས་དང་། ཨོཾ་བཛྲསཏྭ་སལཡ། མནུཔཱལཡ། བཛྲསཏྭཏྭེནོཔཏིཥྛ། དྲྀཌྷོམེབྷཝ། སུཏོཥྱོམེབྷཝ། སུཔོཥྱོམེབྷཝ། ཨནུརཀྟོམེབྷཝ། སརྦསིདྡྷི་མྨེཔྲཡཙྪ། སརྦཀརྨསུཙམེ། ཙིཏྟཾཤྲེཡཿཀུརུཧཱུྃ། ཧཧཧཧཧོཿ བྷགཝཱན། སརྦཏཐཱགཏ། བཛྲམཱམེམུཉྩ། བཛྲཱིབྷཝ། མཧཱསམཡསཏྭཨཱཿ ཞེས་དེ་བཞིན་གཤེགས་པའི་ཡི་གེ་བརྒྱ་པའི་གཟུངས་འདི་རྣམས་བཟླ་བར་བྱའོ། །དེའི་ཚེ་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་འཁོར་དང་བཅས་པའི་སྐུ་ལས་འོད་ཟེར་གྱི་ཚོགས་དཔག་ཏུ་མེད་པ་བྱུང་ནས་རང་གི་ལུས་ལ་ཐིམ་པས་སྡིག་སྒྲིབ་ཉེས་ལྟུང་ཐམས་ཅད་བྱང་ཞིང་དག་པར་བསམ་པར་བྱའོ། །

བསླབ་བཏུས་སུ་གསལ་བའི་གཉེན་པོ་ཀུན་ཏུ་སྤྱོད་པའི་སྟོབས་ཀྱི་སྒོ་ནས་སྡིག་ལྟུང་འདག་ཐབས་དྲུག

སྟོབས་གསུམ་པ་གཉེན་པོ་ཀུན་ཏུ་སྤྱོད་པའི་སྟོབས་ལའང་རྒྱལ་སྲས་ཆེན་པོ་ཞི་བ་ལྷའི་བསླབ་བཏུས་སུ་ནང་གསེས་སྡིག་ལྟུང་འདག་ཐབས་ཀྱི་དབྱེ་བ་དྲུག་བསྟན་པ་རྣམས་ནི། ༡ མདོ་སྡེ་ཟབ་མོ་ལ་བརྟེན་པ་དང་། ༢ སྟོང་པ་ཉིད་ལ་མོས་པ་དང་། ༣ བཟླས་པ་ལ་བརྟེན་པ་དང་། ༤ སྐུ་གཟུགས་ལ་བརྟེན་པ་དང་། ༥ མཆོད་པ་ལ་བརྟེན་པ་དང་། ༦ མཚན་ལ་བརྟེན་པ་བཅས་སོ།།

མདོ་སྡེ་ཟབ་མོ་ལ་བརྟེན་པས་སྡིག་པ་འདག་ཐབས།

དང་པོ་མདོ་སྡེ་ཟབ་མོ་ལ་བརྟེན་པ་ནི། ཤེར་ཕྱིན་དང་། བཟང་སྤྱོད་ལ་སོར་

པའི་མདོ་སྡེ་ཟབ་མོའི་ཚིག་ལེན་པ་དང་། འཛིན་པ་དང་། འཆང་བ་དང་། ཀློག་པ་དང་། ཡི་གེ་འབྲི་བ་སོགས་བྱེད་པ་ལའོ། །ཇི་སྐད་དུ་བསླབ་བཏུས་ལས།[1] "དེ་ལ་མདོ་སྡེ་ཟབ་མོ་ལ་བརྟེན་པས་ཀྱང་སྡིག་པ་ཟད་པར་འགྱུར་རོ། །རྡོ་རྗེ་གཅོད་པ་ལས་ཇི་སྐད་དུ།[2] རབ་འབྱོར་རིགས་ཀྱི་བུའམ་རིགས་ཀྱི་བུ་མོ་གང་དག་འདི་ལྟ་བུའི་མདོ་སྡེའི་ཚིག་འདི་དག་ལེན་པ་དང་། འཛིན་པ་དང་། ཀློག་པ་དང་། ཀུན་ཆུབ་པར་བྱེད་པ་དེ་དག་ནི་མནར་བར་འགྱུར་ཤིན་ཏུ་མནར་བར་འགྱུར་རོ། །དེ་ཅིའི་ཕྱིར་ཞེ་ན། རབ་འབྱོར་འདི་ལྟར་སེམས་ཅན་དེ་དག་གི་ཚེ་རབས་སྔ་མའི་མི་དགེ་བའི་ལས་ངན་སོང་དུ་སྐྱེ་བར་འགྱུར་བ་དང་མཐུན་པ་བྱས་པ་གང་དག་ཡིན་པའི་ཚེ་རབས་སྔ་མའི་མི་དགེ་བའི་ལས་དེ་དག་ཚེ་འདི་ལ་མནར་བས་འབྱང་བར་འགྱུར་ཏེ། སངས་རྒྱས་ཀྱི་བྱང་ཆུབ་ཀྱང་ཐོབ་པར་འགྱུར་རོ་"ཞེས་གསུངས་སོ། །

སྟོང་པ་ཉིད་ལ་མོས་པས་སྡིག་པ་འདག་ཐབས།

སྟོང་པ་ཉིད་ལ་མོས་པས་ཀྱང་སྡིག་པ་འདག་པར་འགྱུར་བ་ནི། ཆོས་ཐམས་ཅད་རང་ངོས་ནས་གྲུབ་པ་རྡུལ་ཙམ་ཡང་མེད་པ་དང་། རྟོག་པས་ཕར་བཏགས་ཙམ་ལ་ཡིད་ཆེས་པས་སྡིག་སྒྲིབ་འབྱང་བ་ལ་བརྗོད། བསླབ་བཏུས་ལས།[3] "སྟོང་པ་ཉིད་ལ་མོས་པས་ཀྱང་སྡིག་པ་དག་པར་གྱུར་ཏེ། དེ་བཞིན་གཤེགས་པའི་མཛོད་ཀྱི་མདོ་ལས་གསུངས་པ་ལས། འོད་སྲུངས་གང་གིས་ཕ་ཡང་ཡིན་ལ། རང་སངས་རྒྱས་ཀྱང་ཡིན་པ་དེ་སྲོག་གཅད་ན་དེའི་སྲོག་གཅོད་པའི་ནང་ན་མ་རུངས་པའོ། །འདི་ལྟ་སྟེ། དཀོན་མཆོག་གསུམ་གྱི་དཀོར་རྐུ་བ་འདི་ནི་མ་བྱིན་པར་ལེན་པའི་ནང་

---

1 Toh-3940 སྡེ། བཀའ། དབུ་མ། "ཁི" ༤༦ ན ༥

2 Toh-16 སྡེ། བཀའ། ཤེར་ཕྱིན། "ཀ" ༡༣༧ བ ༨

3 Toh-3940 སྡེ། བསྟན། དབུ་མ། "ཁི" ༤༦ ན ༧

ནང་ན་མ་རུངས་པའོ། །འདི་ལྟ་སྟེ་མ་ཡང་ཡིན་ལ་དགྲ་བཅོམ་མ་ཡང་ཡིན་པ་དེ་ལ་ལོག་པར་སྤྱོད་པ་འདི་ནི་འདོད་པ་ལ་ལོག་པར་སྤྱོད་པ་རྣམས་ཀྱི་ནང་ན་མ་རུངས་པའོ། །འདི་ལྟ་སྟེ། དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ལ་སྐུར་བ་འདེབས་པ་འདི་ནི་རྫུན་དུ་སྨྲ་བའི་ནང་ན་མ་རུངས་པའོ། །འདི་ལྟ་སྟེ། འཕགས་པའི་དགེ་འདུན་ལ་མི་སྙན་པར་བརྗོད་པ་འདི་ནི་ཕྲ་མའི་ནང་ན་མ་རུངས་པའོ། །འདི་ལྟ་སྟེ། འཕགས་པ་རྣམས་ལ་གནོད་པ་འདི་ནི་ཚིག་རྩུབ་པོའི་ནང་ན་མ་རུངས་པའོ། །འདི་ལྟ་སྟེ། ཆོས་འདོད་པ་རྣམས་རྣམ་པར་གཡེང་བར་བྱེད་པ་འདི་ནི་ཚིག་ཀྱལ་བའི་ནང་ན་མ་རུངས་པའོ། །འདི་ལྟ་སྟེ། མཚམས་མེད་པ་བྱེད་པར་སེམས་པ་འདི་ནི་གནོད་སེམས་ཀྱི་ནང་ན་མ་རུངས་པའོ། །འདི་ལྟ་སྟེ། ཡང་དག་པར་སོང་པ་རྣམས་ཀྱི་སྙིང་པོ་འཕྲོག་པའི་སེམས་འདི་ནི་བརྣབ་སེམས་ཀྱི་ནང་ན་མ་རུངས་པའོ། །འདི་ལྟ་སྟེ། ལྟ་བས་གཟིངས་པ་འདི་ནི་ལོག་པར་ལྟ་བའི་ནང་ན་མ་རུངས་པ་སྟེ། འོད་སྲུངས་འདི་ནི་མི་དགེ་བ་བཅུའི་ལས་ཀྱི་ལས་འདི་ནི་ཁ་ན་མ་ཐོ་བ་ཆེན་པོ་དང་བཅས་པའོ། །འོད་སྲུངས་གལ་ཏེ་སེམས་ཅན་ཁ་ཅིག་མི་དགེ་བ་བཅུའི་ལས་ཀྱི་ལམ་ཁ་ན་མ་ཐོ་བ་ཆེན་པོ་དང་བཅས་པ་འདི་དག་དང་ལྡན་པར་གྱུར་ལ། དེ་ཡང་དེ་བཞིན་གཤེགས་པས་རྒྱུ་དང་རྐྱེན་དང་ལྡན་པའི་ཆོས་སྟོན་པ་ལ་འཇུག་སྟེ་འདི་ལ་བདག་གམ་སེམས་ཅན་ནམ། སྲོག་གམ། གང་ཟག་གམ། གང་བྱེད་པའམ། གང་མྱོང་བ་ནི་གང་ཡང་མེད་དོ་སྙམ་ནས། ཆོས་ཐམས་ཅད་ནི་བྱས་པ་མེད་པ་དང་། མངོན་པར་འདུས་བྱས་པ་མེད་པ་དང་། སྒྱུ་མ་ལྟ་བུའི་ཆོས་ཉིད་དང་ཀུན་ནས་ཉོན་མོངས་པ་མེད་པའི་ཆོས་ཉིད་དང་། རང་བཞིན་གྱིས་འོད་གསལ་བའི་ཆོས་ཉིད་ལ་འཇུག་ཅིང་། ཆོས་ཐམས་ཅད་གདོད་མ་ནས་དག་པར་ཡིད་ཆེས་ཏེ་མོས་ན། སེམས་ཅན་དེ་དག་ངན་སོང་དུ་འགྲོ་བར་ང་མའི་སྨྲའོ་” ཞེས་གསུངས་སོ།།

བབླས་པ་ལ་བརྟེན་པས་སྡིག་པ་འདག་པ།

བབླས་པ་ལ་བརྟེན་པས་སྡིག་པ་དག་པ་ནི། ཡི་གེ་བརྒྱ་པ་ལ་སོགས་པའི་གཟུངས་ཁྱད་པར་ཅན་རྣམས་ཚིག་བཞིན་དུ་བབླས་པའོ། །བསླབ་བཏུས་ལས།[1] "དམ་ཚིག་གསུམ་གྱི་རྒྱལ་པོ་ལས་ཀྱང་།[2] "སྡིག་པའི་གཉེན་པོ་ཀུན་ཏུ་སྤྱོད་པར་གསུངས་ཏེ། མིག་བཙུམ་ལ་སངས་རྒྱས་དང་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་ལ་དམིགས་པའི་སེམས་ཀྱིས་ཡི་གེ་བརྒྱ་པ་ལན་སྟོང་ཕྲག་བརྒྱད་བབླས་བརྗོད་བྱས་ན་མིག་འཛུམ་བཞིན་དུ་སངས་རྒྱས་དང་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་མཐོང་བར་འགྱུར། སྡིག་པ་དང་བྲལ་བར་འགྱུར་རོ། །ཡང་ན་མཆོད་རྟེན་ལ་སྐོར་བ་བྱེད་ཅིང་སྟོང་ཕྲག་བརྒྱད་པ་བབླ་བར་བྱའོ། །སྐུ་གཟུགས་དང་དམ་པའི་ཆོས་ཀྱི་གླེགས་བམ་གང་ཡང་རུང་བ་ཞིག་མདུན་དུ་བཞག་ནས་ཀྱང་བསྐོར་ཞིང་ལན་སྟོང་བབླ་བར་བྱ་སྟེ་ཚོ་ག་ནི་འདི་ཉིད་དོ་"ཞེས་གསུངས་སོ།།

སྐུ་གཟུགས་ལ་བརྟེན་པས་སྡིག་པ་འདག་ཐབས།

བཞི་པ་སྐུ་གཟུགས་ལ་བརྟེན་པས་ཀྱང་སྡིག་པ་འདག་པ་ནི། སངས་རྒྱས་ལ་དང་བ་སྐྱེད་ནས་ཚ་ཚ་ལ་སོགས་པའི་མཆོད་རྟེན་དང་སྐུ་གཟུགས་ཅི་གྲུབ་པ་གསར་དུ་བཞེངས་ཤིང་རྙིང་པ་ཞིག་གསོ་བྱས་པ་སོགས་སོ། །བསླབ་བཏུས་ལས།[3] དེ་བཞིན་གཤེགས་པའི་གཟུངས་ཀྱི་ལེའུ་ལས། "གང་ཡང་མི་དགེ་བ་བཅུའི་ལས་ཀྱི་ལམ་དང་ལྡན་པར་གྱུར་ལ། དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ལ་དད་པ་སྐྱེད་ནས་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དེའི་སྐུ་གཟུགས་བྱེད་ན་དེའི་སྡིག་པ་ཡང་མི་མངོན་པར་འགྱུར། བྱེ་བྲག་ཏུ

---

1 Toh-3940 སྡེ། བསྟན། དབུ་མ། "ཁི" ༦༧

2 Toh-502 སྡེ། བཀའ། རྒྱུད། "ད" ༡༨༧ བ ༥

3 Toh-3940 སྡེ། བསྟན། དབུ་མ། "ཁི" ༦༧ ན ༤

ནི་བྱང་ཆུབ་ཀྱི་སེམས་དང་ལྡན་པ་དང་། བྱེ་བྲག་ཏུ་ནི་ཁྲིམ་གྱི་གནས་ནས་འབྱུང་ཚུལ་ཁྲིམས་དང་ལྡན་པའི་སྡིག་པ་བྱང་བར་འགྱུར་རོ།" །ཞེས་གསུངས་སོ།།

མཆོད་པ་ལ་བརྟེན་པས་སྡིག་པ་འདག་ཐབས།

ལྔ་པ་མཆོད་པ་ལ་བརྟེན་པས་སྡིག་པ་དག་པར་འགྱུར་བ་ནི། སངས་རྒྱས་ཀྱི་སྐུ་གསུང་ཐུགས་གནས་པའི་མཆོད་པའི་རྟེན་ལ་མཆོད་པ་སྣ་ཚོགས་འབུལ་བ་ལའོ།། བསླབ་བཏུས་ལས་ཀྱང་།[1] "མེ་ཏོག་བརྩེགས་པའི་གཟུངས་[2]ལས་ཀྱང་གསུངས་ཏེ། སེང་གེ་རྣམ་པར་རྩེ་བ་གང་གིས་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དགྲ་བཅོམ་པ་ཡང་དག་པར་རྫོགས་པའི་སངས་རྒྱས་ལ་ལོ་གཅིག་གམ་ལོ་བརྒྱའམ་ལོ་སྟོང་ཡང་རུང་སྟེ། བདེ་བའི་ཡོ་བྱད་ཐམས་ཅད་ཀྱིས་བསྙེན་བཀུར་བྱས་པ་དང་བྱང་ཆུབ་ཀྱི་སེམས་ཀྱིས་ཡང་དག་པར་ཟིན་པ་གང་གིས་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ལ་མཆོད་པའི་ཕྱིར། དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཡོངས་སུ་མྱ་ངན་ལས་འདས་པའི་མཆོད་རྟེན་ལ་མེ་ཏོག་འགའ་འབུལ་ལམ་ཆུ་སྙིམ་པ་གང་ཙམ་འཐོར་རམ། དབྱུག་པའི་ཐིག་ལེ་འདྲིའམ། མེ་ཏོག་གི་ཉལ་ཉིལ་འཕྱུག་གམ་ཕྱུག་པ་འབུལ་ལམ། མེ་ཏོག་འབུལ་ལམ། བདུག་སྤོས་འབུལ་ལམ། མར་མེ་འབུལ་ཏེ་ཕྱུལ་ནས་དགའ་བའི་སེམས་ཀྱིས་གོམ་པའི་གར་སྐབས་འགའ་བོར་ཏེ། སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་དེ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ་ཞེས་སྨྲ་བ་དེ་དག་ནི། སེང་གེ་རྣམ་པར་རྩེ་བ་བསྐལ་པར་རམ་བསྐལ་པ་བརྒྱའམ་བསྐལ་བ་སྟོང་དུའམ། བསྐལ་བ་བརྒྱ་ཕྲག་སྟོང་དུ་ཡང་ངན་འགྲོ་ལོག་པར་ལྟུང་བར་འགྱུར་བ་དེའི་གནས་མེད་དོ་"ཞེས་གསུངས་སོ། །གཞན་ཡང་སྨན་གྱི་བླ་བཻཌཱུརྻའི་འོད་ཀྱི་རྒྱལ་པོའི་མདོ་ལས་ཀྱང་ཚུལ་དེ་བཞིན་དུ་མང་དུ་གསུངས་སོ། །

---

1 Toh-3940 སྡེ། བསྟན། དབུ་མ། "ཁི" ༦༧ བ ༡

2 Toh-516 སྡེ། བཀའ། རྒྱུད། "ན" ༣༣ བ ༡

མཚན་ལ་བརྟེན་པས་སྡིག་པ་འདག་པ།

ལྔག་པ་མཚན་ལ་བརྟེན་པས་ཀྱང་སྡིག་པ་འདག་པ་ནི། སངས་རྒྱས་བྱང་སེམས་ཆེན་པོ་རྣམས་ཀྱི་མཚན་ཐོས་ཤིང་བཟུང་བ་ལས་སྡིག་པ་འདག་པར་འགྱུར་ཏེ། ཇི་སྐད་དུ་བསླབ་བཏུས་ལས།[1] "སྨན་གྱི་བླ་བཻཌཱུརྱའི་འོད་ཀྱི་རྒྱལ་པོའི་མདོ་ལས། བཅོམ་ལྡན་འདས་ཀྱིས་བཀའ་སྩལ་པ། ཀུན་དགའ་བོ་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དེའི་མཚན་སུའི་རྣ་ལམ་དུ་གྲགས་པར་འགྱུར་བ་དེ། ངན་འགྲོ་ངན་སོང་དུ་འགྲོ་བར་འགྱུར་བ་ནི་གནས་མེད་དེ་གོ་སྐབས་མ་ཡིན་ནོ། །ཞེས་གསུངས་སོ།།

སྡིག་ལྟུང་འདག་པའི་རྟགས་དང་མཚན་མ་ཇི་ལྟར་བྱུང་ཚུལ།

གསུམ་པ་སྡིག་ལྟུང་འདག་པའི་མཚན་མ་ཇི་ལྟར་བྱུང་བ་ནི། བསླབ་བཏུས་ལས།[2] "སྐུལ་བྱེད་མའི་གཟུངས་ལས་ཀྱང་། ཇི་སྲིད་དུ་སྡིག་པ་བྱང་བའི་མཚན་མ་མཐོང་བ་དེ་སྲིད་དུ་བཟླས་བརྗོད་བྱ་སྟེ། རྨི་ལམ་ན་ཟས་ངན་པ་སྐྱུག་པ་དང་། ཞོ་དང་འོ་མ་ལ་སོགས་པ་འཐུངས་པ་དང་། སྐྱུགས་པ་དང་། ཉི་མ་དང་ཟླ་བ་མཐོང་བ་དང་། ནམ་མཁའ་ལ་འགྲོ་བ་དང་། མེ་འབར་བ་དང་མ་ཧེ་དང་མི་ནག་པོ་ཐུབ་པ་དང་། དགེ་སློང་དང་དགེ་སློང་མའི་དགེ་འདུན་མཐོང་བ་དང་། འོ་མ་འབྱུང་བའི་ཤིང་དང་གླང་པོ་དང་ཁྱུ་མཆོག་དང་། རི་དང་སེང་གེའི་ཁྲི་དང་ཁང་བཟངས་ཀྱི་སྟེང་དུ་འཛེག་པ་དང་། ཆོས་ཉན་པ་རྨིས་ན་སྡིག་པ་དང་བྲལ་བར་འགྱུར་ཏེ། སྡིག་པ་བྱང་བར་ཤེས་པར་བྱའོ་ཞེས་གསུངས་སོ། །ཚུལ་དེ་བཞིན་དུ་སློབ་དཔོན་ཀཱིུཪྟིའི་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་སྒྲུབ་ཐབས་"[3]ལས་ཀྱང་གསུངས་སོ།།

---

1 Toh-3940 སྡེ། བསྟན། དབུ་མ། "ཁི" ༦༥ ན ༧

2 Toh-3940 སྡེ། བསྟན། དབུ་མ། "ཁི" ༦༧ ན ༨

3 Toh-4008 སྡེ། བསྟན། མདོ་འགྲེལ། "ཇི" ༡༦༦ ན ༧

གཞན་ཡང་རྨི་ལམ་དུ་སངས་རྒྱས་སོ་ལྔ་མཇལ་བ་དང་། ཆུ་བོ་ཆེན་པོ་རྒལ་བ་དང་། ཆུ་ལ་ཟམ་པ་བཙུགས་པ་དང་། ཟམ་པ་ལས་འགྲོ་བ་དང་། ཁྲུས་བྱེད་པ་དང་། གོས་མེད་པ་ལ་ཆར་བབས་པ་དང་། རིན་པོ་ཆེའི་རྒྱན་བཏགས་པ་དང་། ཞིང་ཁམས་རྣམ་དག་ཏུ་ཕྱིན་ནས་སངས་རྒྱས་དང་མཇལ་བ་དང་། གོས་གསར་པ་གྱོན་པ་དང་། མཆོད་ཁང་ཞིགས་པར་ཕྱིན་ནས་དཀོན་མཆོག་ལ་ཕྱག་མཆོད་བྱས་པ་དང་། བླ་མས་བྱིན་བརླབས་མཛད་པ་དང་། མེ་ཏོག་དཀར་སེར་སྔོན་པོ་འཐུ་བ་དང་། གཞན་གྱིས་རང་ཉིད་ལ་བཀུར་སྟི་བྱེད་པ་དང་། གངས་ཀྱི་སྟེང་དུ་ཕྱིན་པ་དང་། ཆོས་མང་པོ་ཉན་པས་གོ་བ་དང་། ཆོས་འཆད་པ་དང་། གསུང་རབ་ཀྱི་པུསྟི་མང་པོ་མཇལ་ནས་མོས་གུས་བྱེད་པ་དང་། གླེགས་བམ་རྐྱེན་པ་དང་། གཞན་གྱིས་བྱིན་པ་དང་། ཛ་རྡུང་བ་དང་། དུང་བུས་པ་དང་། རི་ཆེན་པོའི་སྟེང་ན་སྐད་ཆེན་སྟོན་པ་དང་། མི་ལོང་ལྟས་པས་ཆོས་ཐམས་ཅད་ཀྱང་དེ་ལྟར་རྟོགས་པ་རྨིས་པ་ལ་སོགས་ཀྱང་སྡིག་ལྟུང་དག་པའི་རྟགས་སོ།།

གཞན་ཡང་རྨི་ལམ་དུ་ལུས་དང་སྣ་ལས་ཁྲག་མང་པོ་བྱུང་སྟེ་བབས་པ་དང་། དོམ་དང་སྤྲིགས་པ་དང་སྦྲུལ་ལྡོང་ལུས་ལས་ཐོན་སོང་བ་དང་། མི་ནག་པོ་བསད་པ་རྨིས་ན་ནད་གདོན་ཐོན་པའི་རྟགས་ཡིན། རང་གི་ཁའམ་སྣ་ནས་ཁྲག་མང་པོ་བབས་ཏེ་འཁྱིལ་བ་དང་། དུད་འགྲོ་མང་པོ་རིའི་རྩེ་ལ་དེད་པ་དང་། སེམས་ཅན་མང་པོ་འཇིགས་པ་དང་ཆུ་ལས་བསྒྲལ་བ་དང་། གྲུ་དང་ཟམ་པའང་བཙུགས་པ་རྨིས་ན་གཞན་ཕན་འབྱུང་བའི་རྟགས་ཡིན་ཞེས་སོགས་གྲུབ་ཆེན་ནམ་མཁའ་རྒྱལ་མཚན་གྱིས་མཛད་པའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པར[1]གསུངས་སོ།།

---

1 པོད། "པ" དབྱིན་ཤོག ༧༨༩ ལྷ་ས་བོད་ཀྱི་དཔེ་མཛོད་ཁང་གི་ཕྱག་དཔེ་ཨང་༩༠༧༩

མཇུག་ཏུ་ཇི་ལྟར་བྱ་བའི་རིམ་པ།

བཞི་པ་མཇུག་ཏུ་ཇི་ལྟར་བྱ་བའི་རིམ་པ་འང་དྲུག་སྟེ། གཟུངས་བཟླ་བ། གཏང་རག་ཏུ་མཆོད་པ། དགེ་བ་བསྔོ་བ། ཆོ་ག་བསྐང་བ། གཤེགས་སུ་གསོལ་བ། ཤིས་པ་བརྗོད་པ་བཅས་སོ། །དེ་རྣམས་ཀྱི་སྐོར་ཞིབ་ཕྲ་གཟིགས་པར་འདོད་ན་གྲུབ་ཆེན་ནམ་མཁའ་རྒྱལ་མཚན་གྱི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པ་དང་། འབྲི་གུང་བསྟན་འཛིན་ཆོས་ཀྱི་བློ་གྲོས་ཀྱིས་མཛད་པའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པ་སོགས་གཟིགས་པ་ལས་རྟོགས་ནུས་སོ། །གོང་བཀོད་ཀྱི་སྒྲུབ་ཐབས་དང་ཆོ་ག་དེ་ཉིད་ཀྱང་ངོས་ནས་གཙོ་བོ་གོང་སློས་ཀྱི་གཞུང་དེ་དག་དང་ཐུའུ་ཀྭན་བློ་བཟང་ཆོས་ཀྱི་ཉི་མས་མཛད་པའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པ་དེ་དག་ལ་ཁུངས་བཙོལ་ཏེ་བཀོད་པའོ།།

ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོའི་རྒྱ་བོད་ཀྱི་འགྲེལ་པའི་ངོ་སྤྲོད།

ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་དང་དེ་ལ་རྒྱ་འགྲེལ་ཇི་ཡོད་ཀྱི་མཚན་བྱང་།

༡ འཕགས་པ་ཉེ་བར་འཁོར་གྱིས་ཞུས་པའི་མདོ། (ཕུང་པོ་གསུམ་པ་ལྟུང་བ་བཤགས་པའི་མདོ།) Toh-68 སྡེ། བཀའ། དཀོན་བརྩེགས། "ཅ" ༡༢༠ ན ༣ ནས ༡༢༡ བ ༡

༢ སློབ་དཔོན་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱིས་མཛད་པའི་བྱང་ཆུབ་ཀྱི་ལྟུང་བ་བཤགས་པའི་འགྲེལ་པ། Toh-4005 སྡེ། བསྟན། མདོ་འགྲེལ། "ཇི" ༡༧༨ ན ༥

༣ སློབ་དཔོན་ཛེཏཱརིས་མཛད་པའི་བྱང་ཆུབ་ཀྱི་ལྟུང་བ་བཤགས་པའི་འགྲེལ་པ་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་བསླབ་པའི་རིམ་པ། Toh-4006 སྡེ། བསྟན། མདོ་འགྲེལ། "ཇི" ༡༨༧ བ ༤

༤ སློབ་དཔོན་དཱིཔཾཀརཤྲཱིཛྙཱན་གྱིས་མཛད་པའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པ་ལས་ཀྱི་སྒྲིབ་པ་རྣམ་པར་སྦྱོང་བའི་ཆོ་ག་བཤད་པ། Toh-4007 སྡེ། བསྟན། མདོ་འགྲེལ། "ཇི" ༡༩༤ ན ༣

ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་དང་ཆ་འདྲ་བའི་མཚན་བྱང་།

༥ སློབ་དཔོན་ནག་པོ་པས་མཛད་པའི་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་སྒྲུབ་ཐབས།
Toh-4008 སྡེ། བསྟན། མདོ་འགྲེལ། "ཇི" ༡༠༨ བ ༦

༦ སློབ་དཔོན་དེཝཤཱཀྟིས་མཛད་པའི་ལྟུང་བ་བཤགས་པའི་ཆོ་ག།
Toh-3973 སྡེ། བསྟན། དབུ་མ། "གི" ༣༥༨ ན ༡

༧ སློབ་དཔོན་མར་མེ་མཛད་ཡེ་ཤེས་ཀྱིས་མཛད་པའི་ལྟུང་བ་བཤགས་པའི་ཆོ་ག
Toh-3974 སྡེ། བསྟན། དབུ་མ། "གི" ༣༥༥ ན ༣

༨ སློབ་དཔོན་སྨྲྀཏིཛྙཱནས་མཛད་པའི་བདེ་བར་གཤེགས་པ་སུམ་ཅུ་རྩ་ལྔའི་བསྟོད་པ་མཚན་རིན་པོ་ཆེས་སྤྲས་པ། Toh-1142 སྡེ། བསྟན། བསྟོད་ཚོགས "ཀ" ༡༠༣ བ ༣

ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་ལ་བོད་འགྲེལ་ཇི་ཡོད་ཀྱི་མཚན་ཐོ།

༡ ས་སྐྱ་བློ་གཏེར་དབང་པོས་མཛད་པའི་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་ལྟུང་བ་བཤགས་པའི་ཆོ་ག་མདོར་བསྡུས་པ་ཁྲིད་བརླབས་ཀྱི་གནད་བཟང་པོ།

༢ ལྷོ་བྲག་གྲུབ་ཆེན་ནམ་མཁའ་རྒྱལ་མཚན་གྱིས་མཛད་པའི་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་སྒྲུབ་ཐབས་ཁྲིད་རླབས་ཀྱི་ཆར་འབེབས།

༣ ཇོ་བཙུན་ཏཱ་རཱ་ནཱ་ཐས་མཛད་པའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པ།

༤ རྒྱལ་ཚབ་དར་མ་རིན་ཆེན་གྱིས་མཛད་པའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་ཊཱི་ཀཱ་མདོར་བསྡུས་པ། ཡང་ན། སངས་རྒྱས་སུམ་ཅུ་སོ་ལྔའི་མཚན་གྱི་ཕན་ཡོན། "ཀ"

༥ པཎ་ཆེན་བློ་བཟང་དཔལ་ལྡན་བསྟན་པའི་ཉི་མས་མཛད་པའི་བྱང་ཆུབ་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་དོན་འགྲེལ་སྡིག་མུན་སེལ་བྱེད། "ཁ"

༦ ཨཀྱ་བློ་བཟང་འཇམ་དབྱངས་རྒྱ་མཚོས་མཛད་པའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་ཚོ་ག

༧ ཁྱར་དགེ་བློ་གྲོས་རྒྱ་མཚོས་མཛད་པའི་ལྟུང་བ་བཤགས་པའི་འགྲེལ་པ།

༨ ཙོ་ནེ་གྲགས་པ་བཤད་སྒྲུབ་ཀྱིས་མཛད་པའི་ལྟུང་བ་བཤགས་པའི་ཚོ་ག་འགྲེལ་པ་དང་བཅས་པ།

༩ ལྕང་ལུང་པཎྜིཏ་ངག་དབང་བློ་བཟང་བསྟན་པའི་རྒྱལ་མཚན་གྱིས་མཛད་པའི་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་ཀློག་ཐབས་མི་ཏོག་བཅུད་ལེན། སངས་རྒྱས་སོ་ལྔའི་སྒྲུབ་ཐབས། སངས་རྒྱས་སོ་ལྔའི་མཚན་གྱི་ཕན་ཡོན། སངས་རྒྱས་སོ་ལྔའི་སྒྲུབ་ཐབས་ཀྱི་ཚོ་ག་ལྟུང་བའི་མུན་སེལ།

༡༠ གཙོས་གསེར་ཁྲི་བློ་བཟང་རྒྱལ་མཚན་སེང་གེས་མཛད་པའི་སངས་རྒྱས་སུམ་ཅུ་སོ་ལྔ་ལ་བརྟེན་ནས་སྡིག་ལྟུང་བཤགས་པའི་ཚོ་ག་ཉིན་བྱེད་སྣང་བ།

༡༡ ཆོས་མཛད་བླ་མ་བསྟན་པ་རབ་རྒྱས་སྒྲོན་མས་མཛད་པའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་ཚོ་ག

༡༢ ཞབས་དྲུང་ཆོས་རྗེ་ངག་དབང་ཚེ་རིང་གིས་མཛད་པའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་སྒོ་ནས་འཆི་སླུ་བྱ་ཚུལ།

༡༣ སངས་རྒྱས་ཡེ་ཤེས་ཞབས་ཀྱིས་མཛད་པའི་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་ལྟུང་བ་བཤགས་པའི་འགྲེལ་པ་མཐོང་བ་དོན་ལྡན། འགྲེལ་པ་འདི་རང་ཚེ་མཆོག་ཡོངས་འཛིན་ཡེ་ཤེས་རྒྱལ་མཚན་གྱི་གསུང་འབུམ་དུའང་གསལ།

༡༤ ངག་དབང་ཡེ་ཤེས་ཐུབ་བསྟན་རབ་འབྱམས་ཀྱིས་མཛད་པའི་བདེ་གཤེགས་སོ་ལྔའི་ལྷ་ལ་བསྟོད་པ་སྡིག་ལྟུང་དྲི་འཕྲུད་བདུད་རྩིའི་རྒྱུན་བཟང་། གསུང་འབུམ། "ཁ"

༡༥ བློ་བཟང་དཔལ་ལྡན་ནམ་བློ་བཟང་ཚུལ་ཁྲིམས་དཔལ་བཟང་པོས་མཛད་པའི་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་འགྲེལ་སྡིག་མུན་སེལ་བའི་ཟླ་ཟེར།

༢༦ ས་པཎ་ཀུན་དགའ་རྒྱལ་མཚན་གྱིས་མཛད་པའི་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་འདོན་ཐབས།

༢༧ བློ་བཟང་རྟ་མགྲིན་ནམ་སོག་པོ་རྟ་དབྱངས་འཛམ་དབྱངས་དགྱེས་པའི་བཤེས་གཉེན་གྱིས་མཛད་པའི་བྱང་ཆུབ་ལྟུང་བཤགས་འདོན་ཐབས་འཁྱེར་བདེ་གནད་ཚང་རྒྱན་འཛུགས་སྒྲོན་མེ།

༢༨ ཐུའུ་བཀྭན་བློ་བཟང་ཆོས་ཀྱི་ཉི་མས་མཛད་པའི་བཅོམ་ལྡན་བདེ་བར་གཤེགས་པ་སུམ་ཅུ་སོ་ལྔ་ལ་བརྟེན་ནས་ལྟུང་བ་བཤགས་པའི་ཆོ་ག་གཞན་ཕན་ཉི་མའི་འོད་ཟེར། གསུང་འབུམ། "ང"

༢༩ དངུལ་ཆུ་དྷརྨ་བྷདྲས་མཛད་པའི་བདེ་བར་གཤེགས་པ་སུམ་ཅུ་རྩ་ལྔ་ལ་བསྟོད་པའི་རབ་ཏུ་བྱེད་པ་གཎྜའི་ཆུ་རྒྱུན། གསུང་འབུམ། "ག"

༣༠ དབྱངས་ཅན་གྲུབ་པའི་རྡོ་རྗེས་མཛད་པའི་ལྟུང་བཤགས་དང་སྤྱི་བཤགས་གཉིས་ཀྱི་ཟིན་བྲིས།

༣༡ སྨན་སྡོང་མཚམས་པ་རིན་པོ་ཆེ་ཀརྨ་ངེས་དོན་འཕྲིན་ལས་ཀྱིས་མཛད་པའི་བྱང་ཆུབ་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་དོན་གྱི་འགྲེལ་ཟིན་བདུད་རྩིའི་ཆུ་རྒྱུན།

༣༢ བྲག་དཀར་བློ་བཟང་དཔལ་ལྡན་གྱིས་མཛད་པའི་བྱང་ཆུབ་ལྟུང་བཤགས་ཉམས་སུ་ལེན་ཚུལ་སྡིག་ལྟུང་མུན་སེལ། "ཀ"

༣༣ རྗེ་གུང་ཐང་པ་བསྟན་པའི་སྒྲོན་མེས་མཛད་པའི་སངས་རྒྱས་སུམ་ཅུ་སོ་ལྔའི་སྒྲུབ་ཐབས་ཀྱི་ཆོ་ག་ལྟུང་བའི་མུན་སེལ་དང་ཡོན་སྦྱོང་གི་ཆོ་ག་སྒྲིབ་པའི་མུན་སེལ། གསུང་འབུམ། "ཛ"

༣༤ ཨུར་ག་ཀྱི་རྡོར་མཁན་པོ་ངག་དབང་བློ་བཟང་མཁས་གྲུབ་ཀྱིས་མཛད་པའི་བདེ་བཤེགས་སོ་ལྔའི་སྐུ་མདོག་ཕྱག་མཚན་དང་མཚན་གྱི་ཕན་ཡོན་གསལ་

བའི་གསོལ་འདེབས།

༣༥ བསྟན་པ་རྒྱལ་མཚན་ནམ་ཤཱསྟནྡྷྭཛ་གྱིས་མཛད་པའི་བདེ་གཤེགས་སོ་ལུ་ལ་
འདོད་དོན་གསོལ་འདེབས་བྱ་རྩལ་གྱི་དགོངས་འགྲེལ་ཐར་འདོད་འདུག་ངོགས།

༣༦ སོག་པོ་དགེ་བཤེས་སྣང་མཛད་རྡོ་རྗེས་མཛད་པའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པ་
མདོར་བསྡུས། ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་ཚིག ལྟུང་བཤགས་ཚིག་མདོར་བསྡུས།

༣༧ གྲོ་ཡོན་འཇམ་དབྱངས་འཕྲིན་ལས་ཀྱིས་མཛད་པའི་སངས་རྒྱས་སོ་ལུའི་སྒྲུབ་
ཐབས། "ཇ"

༣༨ སྨི་པ་འཇམ་དབྱངས་ཐུབ་བསྟན་ཉི་མས་མཛད་པའི་བདེ་གཤེགས་སོ་ལུའི་
མཚན་གྱི་ཕན་ཡོན་དང་སྐུ་མདོག

༣༩ མཁན་པོ་ངག་དབང་ཐུབ་བསྟན་རྒྱ་མཚོས་མཛད་པའི་ལྟུང་བཤགས་ཕྱག་མཆོད།

༤༠ ཨ་རོལ་བློ་བཟང་ལུང་རིགས་ཀྱིས་མཛད་པའི་ཕུང་པོ་གསུམ་པ་ལ་བརྟེན་ནས་
སྡིག་ལྟུང་སྦྱོང་རྩལ་གྱི་ཚིག་ཉིས་ལྟུང་དག་བྱེད་བདུད་རྩིའི་ཆུ་རྒྱུན་དང་། ལྟུང་
བཤགས་ཁ་འདོན་བྱེད་པའི་མཇུག་ཏུ་སྦྱར་རྒྱུའི་སྨོན་ཚིག "ཁ"

༤༡ ཀོང་པོ་ཡེ་ཤེས་བརྩོན་འགྲུས་ཀྱིས་མཛད་པའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་ཊཱི་ཀཱ།

༤༢ ཀོང་སྤྲུལ་ཡོན་ཏན་རྒྱ་མཚོས་མཛད་པའི་འཕགས་པ་ནམ་མཁའི་སྙིང་པོའི་
བཟླས་ལུང་སྒྲུབ་ཐབས་ལྟུང་བ་བཤགས་པའི་ཚིག་དང་བཅས་འཕགས་པའི་
ལམ་གྱི་ཤིང་རྟ། "ཆ་དང་ཇ"

༤༣ སེར་བྱས་ལྷ་པ་ངག་ལྡན་གྱིས་མཛད་པའི་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་ཚིག་བདུད་
རྩིའི་ཉིང་ཁུ།

༤༤ རྗེ་ཙོང་ཁ་པ་བློ་བཟང་གྲགས་པའམ་སློབ་མ་བཟང་སྐྱོང་གིས་མཛད་པའི་
སངས་རྒྱས་སོ་ལུའི་སྐུ་མདོག་ཕྱག་མཚན་བསྟན་པ་གནས་བརྟན་བཟང་སྐྱོང་

པས་བཀོད་པ་དང་ལྷ་སྐུའི་ཕྱག་ཚད་གཟུགས་བརྙན་ལེགས་པར་ལྟ་བའི་མི་ལོང་

༣༥ འབྲི་གུང་པ་ཤཱཀྱའི་དགེ་སློང་བསྟན་འཛིན་ཆོས་ཀྱི་བློ་གྲོས་ཀྱིས་མཛད་པའི་བྱང་ཆུབ་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་ཚིག་ཤིན་ཏུ་བསྡུས་པ་ལས་སྒྲིབ་རྣམ་སྦྱོང་།

༣༦ མཁས་གྲུབ་རག་ཨསྱའམ་ཀརྨ་ཆགས་མེད་ཀྱིས་མཛད་པའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པ།

༣༧ ཡེ་ཤེས་སྤྲིའམ་བོདྷི་སཏྭ་མཛད་པའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པ།

༣༨ བསྟན་པ་རྒྱལ་མཚན་གྱིས་མཛད་པའི་སངས་རྒྱས་སུམ་ཅུ་སོ་ལྔ་ལ་བརྟེན་ནས་སྟོང་མཆོད་འབུལ་བའི་ཚིག་སྡིག་ལྟུང་མུན་སེལ།

༣༩ པཎ་ཆེན་བློ་བཟང་ཆོས་ཀྱི་རྒྱན་གྱིས་མཛད་པའི་སྡིག་མུན་སེལ་བྱེད་ཟླ་བའི་འོད་ཟེར་དང་། སྟོབས་བཞིའི་བཤགས་བསྒོམས་བྱ་ཚུལ།

༤༠ རྡོ་གྲུབ་ཆེན་གསུམ་པ་འཇིགས་མེད་བསྟན་པའི་ཉི་མ་དཔལ་བཟང་པོས་མཛད་པའི་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་སྡེ་རྣམ་པར་བསྡུ་བ། ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་ཚིག

༤༡ ཨོ་རྒྱན་ལས་འཕྲོ་གླིང་པའམ་རིག་འཛིན་འཇའ་མཚོན་སྙིང་པོས་མཛད་པའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པ།

༤༢ ཡོངས་འཛིན་འཕྲིན་ལས་ཀུན་ཁྱབ་ཀྱིས་མཛད་པའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་མཆོད་ཚོག་ཚིག་ཁང་སུམ་ཅུ་རྩ་དགུ་པ།

༤༣ སློབ་དཔོན་པདྨ་འབྱུང་གནས་སམ་ཨོ་རྒྱན་ལས་འཕྲོ་གླིང་པའམ་རིན་ཆེན་འཇའ་མཚོན་སྙིང་པོས་མཛད་པའི་བདེ་གཤེགས་སོ་ལྔའི་སྒྲུབ་ཐབས།

འགྲེལ་མཛད་ཁག་གི་རྣམ་ཐར།

གོང་གསལ་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོའི་རྒྱ་འགྲེལ་ཁག་གསུམ་པོ་དེ་དག་ལས། བྱང་ཆུབ་ཀྱི་ལྟུང་བ་བཤགས་པའི་འགྲེལ་པ་འདི་ཉིད་ཡོངས་གྲགས་སུ་སློབ་དཔོན་ཀླུ

སྒྲུབ་ཀྱིས་མཛད་པར་འདོད་ཀྱང་། མཁས་མཆོག་བུ་སྟོན་ཞབས་ཀྱིས་མཛད་པའི་ཆོས་འབྱུང་གི་མཚན་ཆུང་ནང་། ཇི་སྐད་དུ།[1] "འགྱུར་མི་གཅིག་པའི་དཔེར་སློབ་དཔོན་ཀླུ་བོས་ཀྱིས་མཛད།" ཅེས་གསུངས་པ་ལ་གཅིགས་སུ་བྱས་ཏེ་སློབ་དཔོན་གཉིས་ཀའི་རྣམ་ཐར་ཐུང་ངུ་འགོད་པ་ལ།

འགྱུར་མི་གཅིག་པའི་དཔེར་ཀླུ་བོས་ཀྱི་མཚན་བཞུར་པ་དེ་ཉིད་རྙེད་སོན་བྱུང་ཆེ་ཕྱིར་ན་མཚུངས་བསྡུར་ལ་ཕན་ཐོགས་ཆེ་བ་མ་ཟད། ཡང་སློས་ལེགས་སྦྱར་དུ་བསྒྱུར་བསྒྱུར་ལའང་ཕན་ཐོཊ་ཆེ་བ་གདོན་མི་ཟའོ་སྙམ་སྟེ། དེ་ཉིད་ད་བར་རྙེད་སོན་མ་བྱུང་ཡང་། སླད་མར་རྙེད་ཐབས་ཆེད་འབད་བརྩོན་མུ་མཐུད་ཞུ་བཞིན་ཡོད།

སློབ་དཔོན་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱི་རྣམ་ཐར།

སློབ་དཔོན་ཀླུ་སྒྲུབ་ནི་ནང་པའི་ལྟ་གྲུབ་ཀྱི་སྟན་གྲགས་ཅན་གྱི་མཁས་པ་ཞིག་ཡིན་པ་མ་ཟད། ཐེག་པ་ཆེན་པོའི་ཤིང་རྟའི་སྲོལ་འབྱེད་ཅིག་ཀྱང་ཡིན་ནོ། །དེ་ཡང་མདོ་སྔགས་གཉིས་ཀྱི་བསྟན་བཅོས་དུ་མ་དང་། སྨན་སྦྱོར་སོཊ་རིག་པའི་གནས་དུ་མ་ལ་སྦྱངས་པ་མཐིལ་ཕྱིན་པའི་མཁས་པ་ཆེན་པོ་ཞིག་ཀྱང་ཡིན། དེས་ན་ཁོང་གི་རྣམ་ཐར་བོད་དཔེ་ཅམ་དུ་མ་ཟད་ཧིན་སྐད་དང་། དབྱིན་ཇི། རི་པིན། རྒྱ་ནག ཕྲེཉྩ། ཇརྨན་སོགས་སྐད་རིགས་དུ་མར་རྒྱས་པར་གསལ་བར་བྱས་ཡོད་པ་ཞིག་གོ།

བོད་དཔེར་སློབ་དཔོན་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱི་རྣམ་ཐར་ནི། ལམ་རིམ་བླ་བརྒྱུད་དང་ཇོ་བཙུན་ཏཱ་རཱ་ནཱ་ཐའི་རྒྱ་གར་ཆོས་འབྱུང་དང་ཆོས་འབྱུང་མཁས་པའི་དགའ་སྟོན་སོགས་ཆོས་འབྱུང་མང་པོའི་ནང་མཇལ་རྒྱུ་ཡོད། དེ་རྣམས་ཀྱང་མདོ་སྔགས་ཀྱི་གཞུང་དུ་མ་ཁུངས་སུ་བཞིས་ཏེ་བཀོད་པའི་ཚད་ལྡན་གྱི་གཞུང་ཤ་སྟག་ཡིན་པ་གོར་མ་ཆག

དེ་དག་ལས་ཡུ་རོ་དབུས་བོད་ཀྱི་ཆེས་མཐོའི་གཙུག་ལག་ཁང་གི་མཁས་དབང་

1 བུ་སྟོན་ཆོས་འབྱུང་། ཤོག ༢༢༦ ཀྲུང་གོ་བོད་ཀྱི་ཤེས་རིག་དཔེ་སྐྲུན་ཁང་།

དགེ་བཤེས་ངག་དབང་བསམ་གཏན་ལགས་ཀྱིས་མཛད་པའི་སློབ་དཔོན་འཇིགས་མེད་སྦས་པས་མཛད་པའི་དབུ་མ་རིན་ཆེན་ཕྲེང་བའི་འགྲེལ་པ་ཞུས་དག་མཛད་སྐབས་དེའི་གླེང་བརྗོད་ཞིག་ཀྱང་མཛད་ཡོད་པ་དེར་གསལ་བའི་སློབ་དཔོན་གྱི་རྣམ་ཐར་དེ་བཞིན་ཚད་ལྡན་གྱི་གཞུང་དུ་མ་དང་རྒྱ་བོད་གཉིས་ཀྱི་ཆོས་འབྱུང་དུ་མར་ཞིབ་གདུགས་བྱས་པ་མ་ཟད། དབྱིན་སྐད་སོགས་སྐད་རིགས་གཞན་དུ་གསལ་བའི་སློབ་དཔོན་གྱི་རྣམ་ཐར་མང་པོར་ཞིབ་གདུགས་བྱས་དེ་ཉམས་ཞིབ་མཐིལ་ཕྱིན་གནང་སྟེ་དཔར་དུ་བཀོད་པ་འདི་ཉིད་རང་རེ་ཉམས་ཞིབ་པ་རྣམས་ལ་ཤིན་ཏུ་ནས་མཁོ་གནད་ཆེ་བ་སྣང་སྟེ། དེར་སློབ་དཔོན་གྱི་བྱོན་ལོ་དང་། སྐུ་ཚེ་ཧྲིལ་པོ་ཇི་བཞུགས། སྟོན་པས་ལུང་བསྟན་མཛད་ཚུལ། སློབ་དཔོན་གྱི་གསན་བསམ་མཛད་ཚུལ། མདོ་སྔགས་གཉིས་ཀའི་གཞུང་ལུགས་ཙམ་མ་ཡིན་པ་ཐུན་མོང་གི་རིག་གནས་ཇི་ཙམ་ལ་མཁས་པར་གྱུར་པ་སོགས་ཀྱི་གསལ་བཤད་དང་། བསྟན་པ་སྐྱོང་ཚུལ་སོགས་ཀྱི་སྐོར་བོད་དཔེ་པདྨ་བཀའ་ཐང་དང་། གྲུབ་ཆེན་བརྒྱད་ཅུའི་རྣམ་ཐར་དང་། རྒྱ་ནག་གི་སྐད་དུ་གསལ་བའི་སློབ་དཔོན་གྱི་རྣམ་ཐར་རྣམས་དང་། ཁྱད་པར་དུ་ཤར་ནུབ་ཀྱི་མཁས་པ་ཁག་གིས་སློབ་དཔོན་གྱི་མཚན་ཅན་གཉིས་གསུམ་བྱུང་བ་སྨྲ་བ་རྣམས་ཀྱི་ལོག་རྟོག་མ་ལུས་པ་བསལ་ཞིང་། སློབ་དཔོན་གྱིས་མཛད་པའི་མདོ་སྔགས་ཀྱི་བསྟན་བཅོས་རྣམས་ཀྱི་གྲངས་དང་རྒྱ་བོད་གཉིས་ཀྱི་སྐད་དུ་ཕབ་སྒྱུར་བྱུང་མ་བྱུང་ཇི་ཡོད་ཀྱི་གཞུང་རྣམས་ཀྱི་གསལ་ཁའང་ཇི་སྙེད་ཅིག་མཛད་པ་མ་ཟད། སློབ་དཔོན་དེ་ཉིད་ཀྱིས་མཛད་པའི་གཞུང་བརྒྱ་ལྷག་ཡོད་པ་རྣམས་ཀྱི་མཚན་བྱང་ཡང་དབུ་མ་རིན་ཆེན་ཕྲེང་བའི་རྒྱ་འགྲེལ་གྱི་ཁ་སྐོང་ལྡན་ཐབས་སུ་བཀོད་འདུག་པས། དེ་སྟོན་སློབ་དཔོན་གྱི་རྣམ་ཐར་ཇི་སྙེད་ཅིག་བྱུང་བ་རྣམས་ལས་ཆེས་ཁྱད་པར་དུ་འཕགས་པ་ཞིག་སྣང་བས་དེ་ངེས་པར་གཟིགས་པར་ཞུ།

ཡང་དེང་དུས་ཀྱི་མཁས་པ་འགའ་ཞིག་གིས་སློབ་དཔོན་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱི་མཚན་ཅན

གསུམ་བྱུང་བར་འདོད་པ་དང་། ཙ་ཤེལ་དང་རིམ་ལྔ་དང་སྨན་གཞུང་སྦྱོར་བ་བརྒྱ་པ་མཛད་མཁན་རྣམས་སློབ་དཔོན་སོ་སོ་བར་བྱས་ཏེ་འདོད་པ་དང་། འགའ་ཞིག་གིས་མདོ་སྔགས་ཀྱི་སློབ་དཔོན་ཀླུ་སྒྲུབ་མཚན་ཅན་སྔ་ཕྱི་གཉིས་བྱོན་པ་བཞེད། འོན་ཀྱང་དོན་ལ་སྟོན་པ་བཀྲིན་ཅན་གྱིས་ལུང་གིས་ཟིན་པའི་སློབ་དཔོན་ཀླུ་སྒྲུབ་ནི་གཅིག་ཉིད་ཡིན་ཞིང་། དེ་ཉིད་མདོ་སྔགས་བསྟན་བཅོས་དུ་མ་གཙོར་བྱས་པའི་སྨན་དང་སྨྲ་རྩལ་སོགས་རིག་པའི་གནས་དུ་མ་ལ་གསན་བསམ་ཕ་རོལ་ཏུ་ཕྱིན་པའི་མཁས་པ་ཙམ་ཡིན་པ་མ་ཟད། དེ་ཉིད་ལོ་ངོ་དྲུག་བརྒྱ་ཙམ་འཚོ་ཞིང་གཞིས་ཏེ་བསྟན་འགྲོའི་དོན་རྒྱ་ཆེན་པོ་མཛད་པ་ཞིག་ཡིན་པར་ངེས་ཏེ། དེ་ལྟ་བུ་ནང་སེམས་ལ་དབང་བསྒྱུར་ཐུབ་པའི་གྲུབ་ཆེན་ཞིག་གི་ཚེ་དང་མཁྱེན་ཡོན་ཇི་ཡོད་རང་ཅག་ལྟ་བུ་སྐྱེས་བུ་ཕལ་པ་ཞིག་གིས་རང་སྣང་གང་དྲན་གྱི་ཐག་གཅོད་དང་། དེ་ཙམ་འཚོ་བཞུགས་བྱུང་མ་བྱུང་གི་ཐེ་ཚོམ་བྱེད་པ་བཅས་ནི་ཅིས་ཀྱང་འོས་པ་མི་སེམས་ཏེ། འཛམ་གླིང་འདིའི་ནང་རིག་པའི་གནས་དུ་མ་ལ་མཁས་པའི་མཁས་པ་དུ་མ་འཚོ་བཞུགས་ཡོད། དེ་དག་ཀྱང་སྐུ་ཚེ་བརྒྱ་ལ་ཉེ་བ་བཞུགས་པ་སྣང་རྒྱུ་ཡོད་པ་མ་ཟད། སྐྱེས་བུ་དཀྱུས་མའི་ཁྲོད་ནའང་ལོ་གྲངས་བརྒྱ་ལས་ལྷག་སྡོད་མཁན་དུ་མ་དངོས་སུ་མཐོང་རྒྱུ་ཡོད་འདུག་པས། སློབ་དཔོན་ཀླུ་སྒྲུབ་ལྟ་བུ་མཁས་གྲུབ་ཆེན་པོ་དེ་འདྲ་བ་ཞིག་ད་ནས་ལོ་ཉིས་སྟོང་ཙམ་གྱི་སྔོན་དུ་ཚེ་ལོ་དྲུག་བརྒྱ་ཙམ་འཚོ་བཞུགས་གནང་བ་ཡིན་ནའང་། དངོས་ཡོད་དང་མི་འཚམས་པ་ཅི་ཞིག་ཡོད། དེས་ན་ནང་གི་ཉམས་རྟོགས་ནུས་ཁྱད་ཇི་འདྲ་ཞིག་ཡོད་པ་ལ་ཞིབ་པར་བློ་ཁ་ཕྱོགས་དགོས་པ་གལ་ཆེ་བར་སེམས་སོ།།

སློབ་དཔོན་ཀླུ་བོས་ཀྱི་རྣམ་ཐར།

ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པ་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱིས་མཛད་པ་དེ་ལས་འགྱུར་མི་གཅིག་པའི་དཔེར་སློབ་དཔོན་ཀླུ་བོས་ཀྱིས་མཛད་ཅེས་གསུངས་པ་ལ་གཅིགས་སུ་བྱས་ཏེ་སློབ་དཔོན་འདིའི་རྣམ་ཐར་ཡང་འགོད་དགོས་པ་སྣང་སྟེ། དེ་ཡང་སློབ་དཔོན་ཀླུ་བོས་ནི་

སློབ་དཔོན་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱི་ཐུགས་སྤྲས་བཞིའི་ནང་ཚན་སློབ་མའི་ཞལ་མཐོང་བ་དེ་ཉིད་ཡིན་ལ། ཕྱི་ནང་གི་གྲུབ་མཐའ་ཐམས་ཅད་ལ་མཁས་ཤིང་། ཡི་དམ་ལྷའི་ཞལ་གཟིགས་ཤིང་ཚེའི་དངོས་གྲུབ་བརྙེས་པ་ཞིག་ཡིན་པ་དང་། ཁོང་གཙོ་བོ་གསང་སྔགས་ཀྱི་ཕྱོགས་ལ་ཉམས་བཞེས་གནང་མཁན་ཞིག་ཡིན་པ་ལ། དུས་ད་ལྟའང་རྒྱ་གར་ལྷོ་ཕྱོགས་དཔལ་གྱི་རི་ར་འཇའ་ལུས་སུ་འཚོ་བཞུགས་ཡོད་པར་གྲགས། དེས་གསང་འདུས་དཀྱིལ་ཆོག་དང་རིམ་ལྔའི་འགྲེལ་པ་ལ་སོགས་པ་གསང་སྔགས་ཀྱི་སྐོར་གཞུང་འགའ་ཞིག་མཛད་ཡོད། སློབ་དཔོན་འདི་སློབ་དཔོན་ཀླུ་སྒྲུབ་ལ་སློབ་མ་སྔ་ཕྱི་བར་གསུམ་ལས་སྔ་མའི་གྲལ་དུ་གདོགས་ཤིང་། སངས་རྒྱས་མྱ་ངན་ལས་འདས་ནས་ལོ་དྲུག་བརྒྱ་ཙམ་གྱི་རྗེས་སུ་བྱོན་པ་མཛོན་ཞིང་། མཚན་གྱི་རྣམ་གྲངས་ལ་ནཱགཱ་རྫཱི་ཏ་སྐྱེ་ཀླུའི་བྱང་ཆུབ་དང་། ནཱགབོདྷ་སྐྱེ་ཀླུའི་བློ་དང་ཀླུའི་བོས་སོགས་ཡིན་ནམ་སྙམ་མོ།།

སློབ་དཔོན་ཀླུ་བོས་ཀྱིས་མཛད་པའི་གཞུང་ཚན་ཁག་གི་མཚན་བྱང་།

སྡེ་དཔར་ཆོས་ཚན་ཨང་།

༡ འདུས་པའི་སྒྲུབ་པའི་ཐབས་རྣམ་པར་བཞག་པའི་རིམ་པ། ༡༨༠༩
༢ ལས་ཀྱི་མཐའ་རྣམ་པར་འབྱེད་པ། ༡༨༡༡
༣ རིམ་པ་ཁོངས་སུ་བསྡུ་བའི་མན་ངག་ཅེས་བྱ་བའི་རབ་ཏུ་བྱེད་པ། ༡༨༡༣
༤ དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཐམས་ཅད་ལ་བསྟོད་པ། ༤༥༣༦

སློབ་དཔོན་ཀླུའི་བྱང་ཆུབ་ཀྱི་མཚན་དུ་བཞུགས་པའི་གཞུང་གི་མཚན་བྱང་།

སྡེ་དཔར་ཆོས་ཚན་ཨང་།

༡ དཔལ་གསང་བ་འདུས་པའི་དཀྱིལ་འཁོར་གྱི་ཆོ་ག་ཉི་ཤུ་པ། ༡༨༡༠
༢ རིམ་པ་ལྔའི་དོན་གསལ་བར་བྱེད་པ། ༡༨༣༣

སློབ་དཔོན་ཛེ་ཏཱ་རིའི་རྣམ་ཐར།

ལྟུང་བཤགས་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོའི་རྒྱ་འགྲེལ་གཉིས་པ་འདི་སློབ་དཔོན་ཛེ་ཏཱ་རིས་མཛད་པ་ཡིན་པས་སློབ་དཔོན་ཛེ་ཏཱ་རིའི་རྣམ་ཐར་འདིར་དགོད་པར་བྱའོ།། སློབ་དཔོན་ཛེ་ཏཱ་རི་ཞབས་ནི། རྒྱ་གར་འཕགས་པའི་ཡུལ་གྱི་རྒྱལ་པོ་པཱལ་ཆེན་པོ་རྣམས་བྱོན་པའི་སྐུ་དུས་རྒྱལ་པོ་པཱན་པཱལ་སྐབས་རྒྱ་གར་ཤར་ཕྱོགས་སུ་ཝ་རེནྡྲ་རྒྱལ་ཕྲན་སནཱཏནཱ་ཞུ་བའི་གནས་སུ་རྒྱལ་པོ་གཅིག་ལ་བཙུན་མོ་ཧ་ཅང་མཛེས་སྡུག་ལྡན་པ་ཞིག་ཡོད་པར་རྒྱལ་པོས་ཧ་ཅང་གི་བརྩེ་གདུང་ཆེན་པོ་བྱེད་ཀྱི་ཡོད། ནམ་ཞིག་ན་གནས་དེར་བྲམ་ཟེའི་རིགས་ཀྱི་སློབ་དཔོན་སྙིང་པོའི་ཞབས་ཞུ་བ་ཞིག་བྱོན་པ་ལས་རྒྱལ་པོས་བྲམ་ཟེ་དེ་ལས་གསང་འདུས་ཀྱི་དབང་བསྐུར་བ་ཞུས་པའི་ཡོན་དུ་མཛེས་སྡུག་ལྡན་པའི་བཙུན་མོ་དེ་དང་། ཧ་གླང་གསེར་དངུལ་སོགས་ཡོན་མང་པོ་ཕུལ། དུས་ནམ་ཞིག་ན་སློབ་དཔོན་སྙིང་པོའི་ཞབས་དང་བཙུན་མོ་གཉིས་ལ་སྲས་མཚན་དང་ལྡན་པ་ཞིག་བལྟམས། ཁྱེའུ་དེ་ལོ་བདུན་སོན་པ་ན་བྲམ་ཟེའི་སློབ་གྲྭར་

བཟུངས་པས། སློབ་ཕྲུག་གཞན་རྣམས་ཀྱིས་ཁྱེད་ཀྱི་ཕ་ནི་ནང་པའི་སྔགས་པ་ཡིན
ཞིང་། རིགས་ངན་གྱི་བུའོ་ཞེས་དཔྱ་སྨོད་དང་རྡུང་བརྡེགས་སོགས་བྱས་ཏེ་ཡང
ཡང་གཅེས་པས་བཟོད་པར་མ་གྱུར་ནས་ཉིན་ཞིག་ཕ་ལ་ཞིབ་པར་སྨྲས། ཕས་དེ་
དག་གི་བརྗོད་པ་ངན་པ་ཟེལ་གྱིས་གནོན་ཕྱིར་བུ་ལ་འཇམ་དཔལ་གྱི་དབང་བསྐུར
རྗེས་སུ་གནང་བ་བསྩལ་ཏེ་བསྒྲུབ་ཏུ་བཅུག་པས་ལོ་གཅིག་གི་ནང་དུ་གྲུབ་རྟགས་ཀྱི
གསལ་སྣང་མཆོད་ཅིང་། ཧིང་ངི་འཛིན་གྱི་འོད་ཟེར་དམར་སེར་གྲུབ་ཁང་གི་
ཕྱོགས་ཀུན་ཏུ་ཁྱབ་པས། མ་ཁ་ཟས་སྐྱེལ་དུ་འོང་བ་བུའི་གྲུབ་ཁང་དུ་མེ་ཤོར་བ
སེམས་ཏེ་སྐད་ཅོར་བརྒྱབས་པས་ཧིང་ངི་འཛིན་བསད། འོད་ཀྱང་ཡལ། ཡབ་ན་
རེ། དེ་ལྟ་བུའི་གསལ་སྣང་དུ་རྒྱུན་མཐུད་བདུན་གཅིག་བར་བཞག་ཐུབ་ན་འཕགས
པ་འཇམ་དཔལ་དངོས་ལྟ་བུ་བྱུང་ཞིང་། ཅུང་ཟད་བར་ཆད་དུ་སོང་ནའང་བློ་གྲོས
ཐོགས་པ་མེད་པ་ཞིག་འོང་གསུངས་། དེ་ནས་ཐུན་མོང་པའི་རིག་གནས་འགའ་རེ་
མ་བསླབས་པར་ཤེས། རིག་གནས་འགའ་ཞིག་ནི་ཀློག་ཙམ་གྱིས་ཤེས། ཤིན་ཏུ་
དཀའ་བ་རྣམས་ཆར་རེ་ཟུང་བལྟས་པས་ཁོང་དུ་ཆུད་ནས་མཁས་པའི་དབང་ཕྱུག
ཆེན་པོར་གྱུར། ཇི་སྲིད་འཚོ་ཡི་བར་དུ་རྟེན་དགེ་བསྙེན་ཡིན་ཞིང་། ཡབ་ལ་གསང་
བདེ་ཀྱི་གསུམ་གྱི་མཁྱེན་པ་ཇི་ཙམ་མངའ་བ་རྣམས་རྩལ་བཞིན་དུ་གསན། བླ་མ་
གཞན་མང་པོ་བསྟེན་ནས་དབུ་ཚད་སོགས་གཞུང་དུ་མ་གསན། ཁྱད་པར་དུ་ཆོས་
མང་པོ་ཞིག་ནི་འཕགས་པ་འཇམ་དཔལ་དངོས་ལས་གསན། ད་ལྟའི་བོད་ཀྱི་
བསྟན་འགྱུར་དཀར་ཆག་མ་ལཪ་ཀྱི་འཁྲིད་དུ་སློབ་དཔོན་ཉིད་ཀྱིས་མཛད་པའི་ཚད
གཞུང་ཆུང་ངུ་གསུམ་ཙམ་མཐའ་རྒྱུ་ཡོད། རྒྱལ་པོ་མ་ཧྣི་པཱལའི་དུས་སུ་རྒྱལ་པོའི་
པ་ཏྲ་མ་ཐོབ། ཡུལ་སྔ་ཚོགས་སུ་ཕེབས་ཏེ་ལྷ་ཁང་དང་མཆོད་ཁང་དུ་མར་ཕྱུག
མཆོད་རྒྱ་ཆེར་མཛད། མཁས་པ་མང་པོའི་ལྷན་དུ་རིག་པ་ཡང་འགྲན། ལན་ཅིག
ལྷ་ཁང་གཅིག་ཏུ་ཞུགས་པ་ན་སྒོ་དྲུང་ན་འཕཪ་པ་མི་གཡོ་བའི་སྐུ་ཤིན་ཏུ་ཁྲོས་པ་ཞིག

མཛལ་བ་ན་དེ་ལ་མ་དད་པ་ཞིག་བྱུང་། མནལ་ལམ་ན་ཐུབ་པའི་དབང་པོའི་ཐུགས་ཀ་ནས་འཕགས་པ་མི་གཡོ་བ་མང་པོ་ཞིག་འཕེལ་ནས་གདུག་པ་ཅན་རྣམས་ཚར་གཅོད་པ་རྨིས་པས། ཐུབ་པ་ཐབས་ལ་མཁས་པ་ལ་མ་དད་པ་བྱས་སོ་སྙམ་ནས་འགྱོད་པ་བསྐྱེད་དེ་བཤགས་པ་མཛད་པས་རྗེ་བཙུན་སྒྲོལ་མ་དངོས་སུ་ཞལ་གཟིགས་ནས། ཐེག་པ་ཆེན་པོའི་བསྟན་བཅོས་མང་དུ་རྩམས་ཤིག་ཐིག་པ་རྣམས་བྱང་བར་འགྱུར་རོ་ཞེས་ལུང་བསྟན། ཕྱིས་རྒྱལ་པོ་མཧཱ་པཱལའི་སྐུ་དུས་ཨཱུཏྟཔུ་རིའི་གནས་གཞི་བཟང་པོ་ཕུལ། ཝཱི་ཀྲམ་ཤཱི་ལར་པཎྜིཏའི་གོ་གནས་ཕུལ། ཆོས་མང་དུ་གསུངས་པས་སྙན་པའི་གྲགས་པ་ཀུན་ལ་ཁྱབ། ཇོ་བོ་རྗེ་དཔལ་ལྡན་ཨ་ཏི་ཤས་སྐུ་གཞོན་ནུའི་དུས་ན་ཁོང་ལས་ཐུན་མོང་དང་ཐུན་མོང་མ་ཡིན་པའི་རིག་གནས་འགའ་རེ་གསན་པར་ཡང་གྲགས། ཕྱིས་སློབ་དཔོན་གྱིས་བསླབ་བཏུས། སྤྱོད་འཇུག་དང་ནམ་མཁའི་སྙིང་པོའི་མདོ་སྡེ་སོགས་ལ་བཏུས་འགྲེལ་རེ་མཛད། གཞན་ཡང་མདོ་སྔགས་ཀྱི་བསྟན་བཅོས་ཐོར་བུ་བརྒྱ་རྩ་ཙམ་མཛད་ཅེས་རྗེ་བཙུན་ཏཱ་རཱ་ནཱ་ཐའི་རྒྱ་གར་ཆོས་འབྱུང་དུ་གསལ་ཡང་། ད་ལྟ་བོད་འགྱུར་བསྟན་འགྱུར་དཀར་ཆག་རྣམས་ཀྱི་ཁྲོད་དུ་ཁོང་གིས་མཛད་པའི་གཞུང་ཉེར་གཅིག་ཙམ་མཇལ་རྒྱུ་ཡོད། བུ་སྟོན་གྱི་དཀར་ཆག་ཏུ་འདིར་ཉེར་གཅིག་ནང་མ་ཚུད་པ་འགའ་རེ་ཡང་མཇལ་རྒྱུ་ཡོད།

གཞུང་ཚན་ཉེར་གཅིག་པོ་རྣམས་ནི།

རྗེ་བོ་རྗེ་མར་མེ་མཛད་ཡེ་ཤེས་ཀྱི་རྣམ་ཐར།

ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་འགྲེལ་པ་གསུམ་པ་ལས་ཀྱི་སྒྲིབ་པ་རྣམ་པར་སྦྱོང་བའི་ཆོ་ག་བཤད་པ་ཞེས་བྱ་བ་འདི་ནི་དཔལ་མར་མེ་མཛད་ཡེ་ཤེས་ཀྱིས་མཛད། ཇོ་བོ་རྗེའི་སྐུ་གསུང་ཐུགས་ཀྱི་ཚེ་བའི་ཡོན་ཏན་གྱི་གདམ་དེ་སྟོན་ཇོ་བོ་རྗེའི་གཞུང་ཆེན་ཁག་ལ་བརྡམས་བསྒྲིགས་ནང་ཞུས་ཟིན་ཡང་། འདིར་སླར་ཡང་བསྡུ་བའི་ཚུལ་དུ་ཙུང་

ཟད་ཅིག་ཞུ་བ་ལ་སྒྲོ།

ཇོ་བོ་རྗེ་ནི་རྒྱ་གར་ཤར་ཕྱོགས་བངྒལ་མངའ་སྡེའི་ཁོངས་ཀྱི་གྲོང་ཁྱེར་ཕྲི་ཀུམ་པུ་རེར་ཡབ་རྒྱལ་པོ་དགེ་བའི་དཔལ་དང་ཡུམ་དཔལ་མོ་གཉིས་ཀྱི་སྲས་བར་པ་ཟླ་བའི་སྙིང་པོའི་ཚུལ་དུ་སྤྱི་ལོ་ ༩༨༢ ལོར་སྐུ་བལྟམས། དགུང་པོ་བཅུའི་བར་དུ་ཡི་གེ་དང་། བཟོ་དང་། སྨན་དཔྱད་དང་། ལུགས་ཀྱི་བསྟན་བཅོས་རྣམས་ལ་ལེགས་པར་བྱང་ཆུབ་པར་མཛད། དགུང་ལོ་བཅུ་གཅིག་ནས་ཉེར་གཅིག་ཚུན་སྒྲ་དང་། ཚད་མ། སྒྱུ་རྩལ། ཟློས་གར། སྙན་ངག མངོན་བརྗོད། སྐར་རྩིས་སོགས་ལ་གསན་བསམ་མཛད། སློབ་དཔོན་བྲམ་ཟེ་ཛེ་ཏཱ་རི་དང་། བྱང་ཆུབ་བཟང་པོ། རིག་པའི་ཁུ་བྱུག ཨཝ་དྷཱུ་ཏི་པ། རྣལ་འབྱོར་རཱ་ཧུལ་གུཔྟ་སོགས་ལས་ཐེག་པ་ཆེན་པོའི་བསྟན་བཅོས་དབུ་མའི་ཆོས་མང་པོ་གསན། ཁྱད་པར་དུ་སློབ་དཔོན་རཱ་ཧུལ་གུཔྟ་ལས་དགྱེས་པའི་རྡོ་རྗེའི་དབང་ཞུས་ནས་གསང་མཚན་ཡེ་ཤེས་གསང་བའི་རྡོ་རྗེ་ཞེས་གསོལ། རྒྱུད་མན་ངག་ཀུང་ཅི་རིག་པ་གསན། དེ་ནས་ལོ་དྲུག་རིང་རིག་པའི་རྟུལ་ཞུགས་ཀྱི་སྤྱོད་པ་མཛད་ཅིང་རྒྱུད་སྡེ་བཞི་ལ་སྦྱང་པ་མཐར་ཕྱིན་པ་མཛད། ཡི་དམ་གྱི་ལྷ་ཡང་མང་པོ་ཞལ་གཟིགས། ཏིང་ངེ་འཛིན་གྱི་རྟོགས་པ་དཔག་ཏུ་མེད་པ་རྒྱུད་ལ་འཁྲུངས། མངོན་ཤེས་མངའ་ཞིང་རྡོ་རྗེ་རྣལ་འབྱོར་མ་ཞལ་གཟིགས་ཏེ་དཀྱིལ་འཁོར་ཆེན་པོ་སྤྲུལ་ནས་དབང་བསྐུར་ཏེ་རྒྱུད་མན་ངག་མ་ལུས་པ་གནང་། དེའི་ཚེ་གསང་སྔགས་ལ་མཁས་པའི་ཐུགས་རྒྱལ་བྱུང་བས་ན་མཁའ་འགྲོ་མ་རྣམས་ཀྱིས་གསང་སྔགས་ཀྱི་གླེགས་བམ་བསམ་གྱིས་མི་ཁྱབ་པ་མང་པོ་སྤྱན་དྲངས་ཏེ་བསྟན་པས་ཐུགས་རྒྱལ་བཅག དེའི་དུས་སུ་རྣལ་འབྱོར་བའི་ཆ་ལུགས་སུ་གནས་ཏེ་ནགས་དང་དུར་ཁྲོད་སོགས་སུ་གནས་བཅས་ཏེ་བཞུགས། དེའི་སྐབས་མནལ་ལམ་དུ་ཐུབ་པས་བསྐུལ་ནས་རབ་ཏུ་བྱུང་དགོས་པ་ཐུགས་ལ་དགོངས། ཕལ་ཆེན་སྡེ་པའི་མཁན་པོ་ཤཱིལ་རཀྵིཏ་ལས་བསྙེན་པར་རྫོགས་ཏེ་

མཚན་དྷི་པཾ་ཀ་ར་ཤྲཱི་ཛྙཱ་ན་སྟེ་དཔལ་མར་མེ་མཛད་ཡེ་ཤེས་ཞེས་མཚན་གསོལ། དགུང་ལོ་ཉེར་དགུའི་སྐབས་བླ་མ་རྣམ་རིག་ལས་བྱེ་བྲག་སྨྲ་བའི་བསྟན་བཅོས་ཆེན་མོ་བྱེ་བྲག་བཤད་མཛོད་ཆེན་མོ་དང་མངོན་པ་སྡེ་བདུན་ལ་སོགས་པ་ལ་གསན་སྦྱོང་མཐར་ཕྱིན་པ་བྱས། སྡེ་པ་བཞི་ཀའི་འདུལ་བའི་བསྟན་བཅོས་ཀྱང་ཚུལ་བཞིན་དུ་མཉོས་ནས་འདུལ་ཁྲིམས་ཀྱི་ཉེས་པ་རྣམས་ལས་ཙུང་ཟད་ཀྱང་མ་ཉལ་བར་ཚུལ་བཞིན་དུ་བསྲུངས་བར་མཛད། དེ་ནས་ཇོ་བོའི་ཐུགས་དགོངས་ལ་མྱུར་དུ་འཚང་རྒྱ་དགོས་པར་བྱང་ཆུབ་ཀྱི་སེམས་ལ་བློ་སྦྱོང་དགོས་པ་སེམས་ཤིང་། དེ་ནི་དེའི་སྐབས་ས་གཞི་འདི་ན་མཚན་སྙན་ཡོངས་སུ་གྲགས་པ་སེང་ག་ལའི་གླིང་ན་བཞུགས་པ་བླ་མ་གསེར་གླིང་པ་ཆོས་ཀྱི་གྲགས་པ་ལས་གཞན་མེད་པ་གསན། སེང་ག་ལའི་གླིང་དུ་ལོ་གཅིག་དང་ཟླ་གཅིག་བར་གྲུར་ཞུགས་ནས་ཕེབས། བླ་མ་གསེར་གླིང་པ་ལས་བྱང་ཆུབ་ཀྱི་སེམས་ལ་བློ་སྦྱོང་ཚུལ་གྱི་མན་ངག་ཡོངས་སུ་རྫོགས་པ་ལོ་བཅུ་གཉིས་ཀྱི་བར་དུ་ཚུལ་བཞིན་དུ་གསན་ནས་རྒྱུད་ལ་ཉམས་རྟོགས་ཁྱད་པར་ཅན་འཁྲུངས། བླ་མ་གསེར་གླིང་པ་ད་ཅང་མཉེས་ནས་རང་ཉིད་ཀྱི་ཐུགས་དམ་གྱི་རྟེན་ཐུབ་དབང་གི་གསེར་སྐུ་ཇོ་བོའི་ཕྱག་ཏུ་ཕུལ་ནས་བསྟན་པའི་བདག་པོར་བྱིན་གྱིས་བརླབས་ཏེ་སླར་རྒྱ་གར་འཕགས་པའི་ཡུལ་དུ་དྲངས་ནས་བདེ་བར་འབྱོར།

དེ་ལྟར་ཇོ་བོའི་རྟག་ཏུ་བསྟེན་པའི་བླ་མ་ཆེན་པོ་ཤཱནྟི་པ་དང་། གསེར་གླིང་པ་དང་། བྱང་ཆུབ་བཟང་པོ་དང་། ཛྙཱ་ན་ཤྲཱི་སོགས་ལས་འཕགས་པ་ཀླུ་སྒྲུབ་ནས་བརྒྱུད་པའི་ཟབ་མོ་ལྟ་བའི་མན་ངག་གི་བརྒྱུད་པ་དང་། རྗེ་བཙུན་བྱམས་པ་ནས་བརྒྱུད་པའི་རྒྱ་ཆེན་སྤྱོད་པའི་མན་ངག་གི་བརྒྱུད་པ་དང་། རྒྱལ་སྲས་ཆེན་པོ་ཞི་བ་ལྷས་ནས་བརྒྱུད་པའི་རླབས་ཆེན་སྤྱོད་བརྒྱུད་ཀྱི་མན་ངག་གི་བརྒྱུད་པ་རྣམས་ཆ་ཚང་བ་ཐོབ། གཞན་ཡང་གྲུབ་ཆེན་ཏོམྦི་པ་ནས་བརྒྱུད་པའི་བརྟུལ་ཞུགས་ཀྱི་བྱིན་རླབས་དང་། བ་ལིམ་ཨཱཙཪྻ་ནས་བརྒྱུད་པའི་ལས་ཚོགས་ཀྱི་བྱིན་རླབས་དང་། སློབ་

དཔོན་མིང་ཆེན་ནས་བརྒྱུད་པའི་རྫུ་འཕྲུལ་གྱི་བྱིན་རླབས་དང་སློབ་དཔོན་སྟུད་ཀོ་ཊི་ནས་བརྒྱུད་པའི་ཕག་མོའི་བྱིན་རླབས་ཀྱི་བརྒྱུད་པ་རྣམས་ཀྱང་ཡོངས་སུ་རྫོགས་པ་ཐོབ་ནས་མདོ་སྔགས་གཉིས་ཀའི་སྟེང་ལ་འགྲན་ཟླ་དང་བྲལ་བའི་མཁས་པའི་མཁས་པ་ཆེན་པོར་གྱུར། དེ་ནས་རིང་པོ་མི་ཐོགས་པར་རྒྱལ་པོ་ཧྨྀ་པཱུ་ལས་ཇོ་རྗེ་གདན་ནས་ཇོ་བོ་རྗེ་ཝི་ཀྲ་མ་ཤཱི་ལ་ལ་སྤྱན་དྲངས་ཏེ་བསྟན་པའི་བདག་པོར་མངའ་གསོལ་ཏེ་སངས་རྒྱས་ཀྱི་བསྟན་པ་ཉི་མ་ལྟར་ཤིན་ཏུ་རྒྱས་པར་སྐྱོང་བཞིན་གནས་སོ།།

ཇོ་བོ་རྗེ་བོད་དུ་སྤྱན་འདྲེན་ཚུལ།

གངས་ལྗོངས་བོད་ཀྱི་ཡུལ་དུ་ཆོས་རྒྱལ་མེས་དབོན་རྣམ་གསུམ་གྱི་སྐུ་རིང་ནས་ནང་ཆོས་དར་ཞིང་རྒྱས་པར་གནས་ནས་མི་རིང་བར་ཆོས་རྒྱལ་ཁྲི་རལ་པ་ཅན་བདུད་བློན་རྣམས་ཀྱིས་བཀྲོངས་རྗེས། གཅེན་པོ་གླང་དར་མ་རྒྱལ་པོར་བཀོད། བཙན་པོའི་ཐུགས་ལ་འདོན་ཞུགས་ཏེ་ཆོས་རྒྱལ་མེས་དབོན་རྣམ་གསུམ་རིང་དར་བའི་ནང་ཆོས་ཀྱི་བསྟན་པ་དུས་ཚོད་ཐུང་ངུ་ཞིག་ཏུ་གཏོར་སྲིག་བཏང་སྟེ་བསྟན་པ་བསྣུབས། མི་རིང་བ་ན་རྒྱལ་པོ་འུ་དུམ་བཙན་རང་ཉིད་ཀྱང་ལྷ་ལུང་དཔལ་རྡོར་གྱིས་མདའ་འཕངས་ཏེ་བཀྲོངས། དེ་ནས་བོད་ཡུལ་སྤྱི་ལ་དབང་བའི་རྒྱལ་པོ་མ་བྱུང་སྟེ་བོད་སིལ་བུར་གྱུར། སངས་རྒྱས་ཀྱི་བསྟན་པ་འཛིན་པའི་རབ་བྱུང་གི་སྡེ་མེད་སྐབས་བླ་ཆེན་པོ་དགོངས་པ་རབ་གསལ་སོགས་ཀྱིས་ཐུགས་བསྐྱེད་ཆེན་པོས་བསྟན་པའི་མེ་རོ་སྨད་ནས་གསོས་ཏེ་བོད་དབུས་ཕྱོགས་སུ་རྒྱས་པར་བྱས། འོན་ཀྱང་ནང་ཆོས་ཀྱི་ལྟ་སྤྱོད་ཚུལ་བཞིན་དུ་མ་ཤེས་པའི་དབང་གིས་རང་སྣང་གང་དྲན་གྱིས་ཆོས་ལ་བསྲེས་སླད་བཙུག་སྡེ་བསྟན་པ་ལ་རྨ་བྱུང་། ལོ་ཆེན་རིན་ཆེན་བཟང་པོས་གཙོས་བྱས་པའི་མཁས་པ་དུ་མས་བསྟན་པ་རྣམ་དག་ཞིག་གནས་ཐབས་ཆེད་འབད་པ་དུ་མ་བརྩམས་ཀྱང་འབྲས་ཐོན་མ་བྱུང་བས། ལྷ་བླ་མ་ཡེ་ཤེས་ཀྱིས་རྒྱ་གར་ནས་པཎྜི་ཏ་ཆེན་པོ་དཔལ་ལྡན་ཨ་ཏི་ཤ་གདན་འདྲེན་ཆེད་ལོ་ཙཱ་བ་རྒྱ་བརྩོན་འགྲུས

སིདྷི་ལ་གཡོག་འཁོར་མང་པོའི་ལྷན་དུ་གསེར་མང་པོ་བསྐུར་ཏེ་རྒྱ་གར་འཕགས་པའི་ཡུལ་དུ་བཙྫངས་ཀྱང་། གསེར་རྣམས་བརླག་པ་དང་ཀུ་ལ་ཤོར། གཡོག་འཁོར་ཕལ་མོ་ཆེ་རྒྱ་གར་དང་བལ་ཡུལ་གཉིས་སུ་ཚད་པས་གུམ། མཐར་རྒྱ་བརྩོན་འགྲུས་སིདྷི་ཙམ་ཤྲཱིཀྲམཤཱིལ་གྱི་གཙུག་ལག་ཁང་དུ་བདེ་བར་འབྱོར་ཐུབ་ཙམ་བྱུང་ཡང་། ཇོ་བོ་རྗེ་བོད་དུ་གདན་འདྲེན་ཞུ་བའི་སྤྱོབས་པ་མ་བྱུང་། ལྷ་བླ་མ་ཡེ་ཤེས་འོད་སྐར་གསེར་འཚོལ་དུ་མཐའ་མཚམས་སུ་བྱོན་པས་གར་ལོག་གི་རྒྱལ་པོས་བཙན་བཟུང་བྱས་ཏེ་བཙོན་དུ་བཅུག ལྷ་བཙུན་བྱང་ཆུབ་འོད་ཀྱིས་ཁུ་བོ་བཙོན་ནས་བླུ་རུ་སོང་ཡང་བླུས་མ་ཐུབ་པར་ལྷ་བླ་མ་བཙོན་དུ་འདས། འོན་ཀྱང་ལྷ་བླ་མའི་ཞལ་ཆེམས་སུ། ང་བླུ་བའི་གསེར་རྣམས་ཕྱིར་ཁྱེར་ཏེ་རྒྱ་གར་ནས་ཅིས་ཀྱང་ཇོ་བོ་རྗེ་གདན་འདྲེན་ཆེད་འབད་དགོས་པ་ནན་ཏན་གྱིས་མངགས་པ་ལྟར། སླར་ནག་ཚོ་ལོ་ཙཱ་བ་ཚུལ་ཁྲིམས་རྒྱལ་བར་གཡོག་འཁོར་བདུན་དང་གསེར་སྲང་བདུན་བརྒྱ་བཅས་ཕྱག་ཏུ་བསྐུར་ནས་རྒྱ་གར་འཕགས་པའི་ཡུལ་དུ་བཏང་། གཙུག་ལག་ཁང་ཆེན་པོ་ཤྲཱིཀྲམ་ཤཱིལ་ལ་བདེ་བར་འབྱོར། ཐོག་མར་ལོ་ཙཱ་བ་རྒྱ་བརྩོན་འགྲུས་སེང་གེ་དང་ཞལ་མཇལ། ཁོང་གཉིས་ཕན་ཚུན་ནང་བགྲོས་ཕྲན་བུ་གནང་ནས་རེ་ཞིག་སློབ་གཉེར་བའི་ཚུལ་དུ་བཞུགས་རྒྱུའི་ཐབས་མོས་བྱུང་། སྐབས་དེ་དུས་རྒྱ་བརྩོན་འགྲུས་སེང་གེས་འོ་སྐོལ་བོད་ཀྱི་སེམས་ཅན་རྣམས་ཀྱི་གཤིས་རྒྱུད་ལ་ཇོ་བོ་རྗེ་ཁོ་ན་ཕན་ཐོགས་ཆེ་བས་དེ་ཉིད་གདན་དྲང་ཆེད་འབད་དགོས་ཞེས་གསུངས། ཕྱིར་ན་དེའི་སྐབས་ཇོ་བོ་རྗེ་ལས་གཞན་པཎ་ཆེན་ཤཱནྟི་པ། ནཱ་རོ་པ། ཊོམྦྷི་པ། མར་མེ་མཛད་བཟང་པོ། ཨཝྡྷཱུ་ཏི་པ། བྱང་ཆུབ་བཟང་པོ། རིན་ཆེན་བཟང་པོ། རིན་ཆེན་སྡེ། ལྷའི་བློ་གྲོས། ངག་དབང་གྲགས་པ། ནག་པོ་བ། ཛེ་ཏཱ་རི། རོལ་བའི་རྡོ་རྗེ། ས་འགེབས་ཞབས། ཡེ་ཤེས་གསང་བ། ཆོས་ཀྱི་བཤེས་གཉེན། ཚུལ་ཁྲིམས་དབང་པོ་ལ་སོགས་པ་བསམ་གྱིས་མི་ཁྱབ་པའི་པཎྜིཏ་ལྔ་བཅུ

ཇ་གཉིས་ཙམ་བཞུགས་ཡོད་ཀྱང་། ཐམས་ཅད་རང་ས་རང་སར་ངོ་མཚར་ཆེ་བས་འོ་སློལ་བོད་ལ་ཇོ་བོ་རྗེ་ཁོ་ན་ཕན་པ་ཆེ་ཞེས་གྱི་བརྗོད་འགྲུས་སེང་གེས་ནག་ཚོ་ལ་གསུངས་སོ། །ཉིན་ཞིག་ཇོ་བོ་རྗེ་སྐུ་ཀྲུང་བཞུགས་པ་དང་སྐབས་བསྟུན་ཏེ་ནག་ཚོ་འཁོར་བཅས་ཇོ་བོའི་གཟིམ་ཁང་དུ་འཁྲིད་དེ་བོད་དུ་ཐོག་མར་སངས་རྒྱས་ཀྱི་བསྟན་པ་དབུ་བརྙེས་སྟངས་དང་། བར་དུ་ཆོས་རྒྱལ་མེས་དབོན་རྣམ་གསུམ་གྱི་སྐུ་རིང་བསྟན་པ་དར་རྒྱས་བྱུང་ཚུལ། མཐར་གླང་དར་མས་བསྟན་པ་བསྣུབས་ཚུལ་སོགས་ཞིབ་པར་ཇོ་བོའི་སྙན་དུ་གསོལ། དེ་ནས་བླ་ཆེན་པོ་ལ་སོགས་པས་བསྟན་པ་སླར་གསོ་མཛད་ཚུལ། ད་ལྟ་བསྟན་པ་ལ་བསྙེས་སླད་སོགས་བྱུང་བས་བསྟན་པ་དག་ཐེར་བྱུང་ཆེད་ལྷ་བླ་མས་ཇོ་བོ་རྗེ་གདན་འདྲེན་ཆེད་སྐུ་སྲོག་ཇི་ལྟར་ཕོར་ཚུལ་དང་ཁུ་བོ་བྱང་ཆུབ་འོད་ཀྱང་སྐམ་པ་རྒྱ་འདོད་བཞིན་དུ་ཇོ་བོ་ཕེབས་པའི་རེ་འགུག་ངང་གནས་ཡོད་པའི་སྐོར་གྱི་གནས་ཚུལ་རྣམས་ཕྲ་ཞིང་ཞིབ་པ་ནག་ཚོ་ལོ་ཙཱ་བ་དང་རྒྱ་བརྩོན་འགྲུས་སེངྒེ་གཉིས་ཀྱིས་མིག་ནས་མཆི་མ་འཛག་བཞིན་དུ་ཞུས་ནས་མགོན་པོ་གང་ཉིད་བོད་ལ་འབྱོན་པར་གསོལ་བ་བཏབ་པས། ཇོ་བོའི་ཞལ་ནས། བོད་རྒྱལ་སྲི་དང་མེས་དབོན་རྣམ་གསུམ། བླ་ཆེན་པོ། །ལྷ་བླ་མ་ཡེ་ཤེས་འོད་ཐམས་ཅད་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་རྣམ་སྤྲུལ་ཡིན་ཆོད་འདུག་པས། བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་བཀའ་ནི་བཅག་ཏུ་མེད། རྒྱལ་པོ་དེ་ལ་ངོ་ཡང་གནོངས། ཁོང་གི་མི་ནོར་མང་པོ་ཆུད་ཟོས་ལ་སོང་། ཁྱེད་བོད་མི་ཚོར་སྙིང་ཡང་རྗེ་པ་འདུག་སྟེ། གནས་བརྟན་རཏྣཱཀར་དབང་ཆེ་བས་གཏོང་བར་དཀའ། ང་ཡང་ན་སོ་རྒས། ལྗི་མིག་མང་པོའང་འཛིན། བྱ་བ་མང་པོའི་འཕྲོ་ཡང་ལུས་པས། བོད་དུ་འགྲོ་ཐུབ་པ་དཀའ། ཡིན་ནའང་དོ་ནུབ་བརྟག་པ་ཞིག་བྱའོ་ཞེས་གསུངས། དེའི་ནུབ་མོ་ཇོ་བོས་ཡི་དམ་གྱི་ལྷ་རྗེ་བཙུན་སྒྲོལ་མ་ལ་ཇ་གཅིག་ཏུ་གསོལ་བ་བཏབ་པས། སྒྲོལ་མས། བོད་དུ་བྱོན་ན་ཕན་ནི་ཐོགས་པ་འདུག ལྷག་པར་དུ་ཨུཔཱ་སཀ་ཞིག་ལ

བརྟེན་ནས་འགྲོ་དོན་ཆེན་པོ་ཡོང་བ་འདུག ཆེ་ནི་བོད་དུ་བྱོན་ན་ཐུང་བ་འདུག ཅེས་གསུངས་པས་ཆེ་ཇི་ཙམ་ཐུང་ཞེས་ཞུས་པས། བོད་དུ་མ་བྱོན་ན་ལོ་དགུ་ཅུ་རྩ་གཉིས་དང་བྱོན་ན་བདུན་ཅུ་རྩ་གཉིས་ལས་མི་ཐུབ་ཅེས་གསུངས། དེ་ལྟར་བོད་དུ་ཕེབས་ན་ཕན་ཐོགས་ཡོང་བའི་ལུང་བསྟན་བྱུང་སྟབས། ཇོ་བོས་ངས་བོད་དུ་བསྟན་པ་དང་སེམས་ཅན་ལ་ཕན་ཐོགས་པ་བྱུང་ན་ཆེ་ལོ་གཅིག་ལས་མ་བསྡད་ནའང་ཆོག་གསུངས་ཏེ་ཕེབས་རྒྱུའི་ཐུགས་སྤོབས་ཆེན་པོ་བསྐྱེད། དེར་ལོ་ཙྪ་བ་གཉིས་ལ་ཇོ་བོས་བོད་དུ་ཆས་པར་ངེས། འོན་ཀྱང་བྱ་བ་འཕྲོ་ལུས་རྣམས་བསྡུ་བར་མ་མཐར་ལོ་གཅིག་དང་ཕྱེད་ཀ་འགོར་བ་འདུག་པས། དེའི་བར་གནས་བརྟན་རཏྣཱ་ཀར་ལ་སློབ་དཔོན་ཞུས་ཏེ་སློབ་གཉེར་མཛོད་ཅེས་གསུངས། ལོ་ཙྪ་བ་གཉིས་ནི་ལོ་མང་པོ་དེ་ཙམ་གྱི་བར་ཞལ་བཞེས་མ་བྱུང་བར་ཉིན་དེར་བོད་དུ་ཕེབས་གསུངས་པ་དགའ་ཚོར་དཔག་མེད་བསྐྱེད་དེ། ཇོ་བོ་བོད་དུ་བྱོན་ན་ལོ་ཇི་ཙམ་ལྷག་དགོས་བྱུང་ཡང་ནུས་སོ་ཞེས་ཞུས། དེ་རྗེས་ཇོ་བོ་དཔོན་གཡོག་རྣམས་རྡོ་རྗེ་གདན་དང་བལ་ཡུལ་འཕགས་པ་ཤིང་ཀུན་ལ་མཆོད་པ་མཇལ་རྒྱུ་དང་། བོད་དུ་ཁྱད་པར་དུ་འཕྲད་པའི་རྟེན་མང་པོ་ཡོད་པར་འདུག་པས་ཡུད་ཙམ་མཇལ་དུ་འགྲོ་ཆོག་པ་གནས་བརྟན་ལ་གནང་བ་ཞུས་རྗེས་གནས་བརྟན་གྱིས་ནག་ཚོ་ཁྱེད་སློབ་གཉེར་ལ་འོང་བ་བསམ་ཅན་ངའི་པཎྜི་ཏ་ཀུ་བར་འོང་འདུག་པས་པཎྜི་ཏ་ཡང་བོད་དུ་བཞུད་པར་དགྲེས། བོད་ཀྱི་མི་ནོར་མང་པོ་ཆུད་ཟོས་སུ་སོང་། ལྷ་བླ་མ་ཡེ་ཤེས་འོད་ཀྱང་ཇོ་བོ་གདན་འདྲེན་པའི་ཆེད་སྐུ་སྲོག་ཤོར། ཁྱེད་བོད་པ་རྣམས་སྙིང་རྗེ་བར་ཡང་འདུག་པས་བོད་དུ་ལོ་གསུམ་བཞུགས་ནས་དེ་ཏིང་ཚུར་གདན་འདྲེན་དགོས་པ་ནག་ཚོ་ལ་མནའ་བསྐྱག་དུ་བཅུག

དེ་རྗེས་ཇོ་བོ་དཔོན་གཡོག་དང་བཅས་པ་ལུགས་ཕོ་འབྲུག ༡༠༤༠ ལ་རྒྱ་གར་ནས་ཐོན། ལུགས་མོ་སྦྲུལ་ལ་བལ་ཡུལ་དུ་འབྱོར། བལ་ཡུལ་དུ་ལོ་གཅིག

བཞུགས་རིང་བལ་ཡུལ་གྱི་རྒྱལ་པོ་གྲགས་པ་མཐའ་ཡས་སོགས་དད་ལྡན་རྣམས་ཀྱི་གུས་པ་ཆེན་པོས་རྟེན་བཀུར་ཞུས། ཇོ་བོས་དད་ལྡན་དེ་རྣམས་ལ་རང་བློ་དང་འཚམས་པའི་ཆོས་མང་དུ་གསུངས། ཐང་ཕྱི་ཧ་རེ་གཙུག་ལག་ཁང་ཡང་དེའི་སྐབས་བཞེངས། དེའི་སྐབས་ཇོ་བོ་ཐུགས་ཧ་ཅང་མཉེས་པོ་བྱུང་། ལོ་ཙྪ་བ་ཆེན་པོ་རྒྱ་བརྩོན་འགྲུས་སེང་གེར་མུ་སྟེགས་པ་ཞིག་གིས་ངན་སྔགས་བཏབ་སྟེ་བཀྲོངས་པས་ཇོ་བོ་ཧ་ཅང་ཐུགས་ཕམ་ནས་ངའི་ལྕེ་ཆད་བཟུང་གསུངས་པས། བོད་དུ་བཞུད་པ་ལ་མི་སྤྲོ་གསུངས་པས། ནག་ཚོས། དེ་སྐད་མི་གསུང་བ་ཞུ། བོད་ན་ལོ་ཙྪ་བ་རིན་ཆེན་བཟང་པོ་དང་། ལོ་ཆུང་ལེགས་པའི་ཤེས་རབ། རྨ་དགེ་བའི་བློ་གྲོས་སོགས་མང་པོ་ཡོད། ཁོ་བོ་ཡང་ལོ་ཙྪ་ཙུང་ཟད་ཤེས་པས་ཐུགས་ངལ་མ་མཛད་ཞུས། ཇོ་བོས་རྒྱ་བརྩོན་འགྲུས་སེངྒེ་དེ་དག་དང་མི་འདྲ་བའོ་ཞེས་གསུངས་སོ།།

རབ་བྱུང་དང་པོའི་ཆུ་རྟ་ཕྱི་ལོ་ ༡༠༤༢ ལོར་ཇོ་བོ་དཔོན་སློབ་རྣམས་མངའ་རི་གུ་གེར་འབྱོར། བྱང་ཆུབ་འོད་ཀྱིས་གདུགས་དང་རྒྱལ་མཚན། པ་དན། རོལ་མོ་སྣ་ཚོགས་ཀྱིས་བསུ་བ་དང་བཅས་ཏེ་གདན་དྲངས། མང་ཡུལ་དང་མཐོ་ལྡིང་གཙུག་ལག་ཁང་སོགས་སུ་ཞབས་ཀྱིས་བཅག སྐབས་དེ་དུས་བྱང་ཆུབ་འོད་ལ་ཚ་མོ་བཙུན་མ་ཞིག་ཡོད་པ་དེ་ཇོ་བོའི་སར་བཅར་ཏེ། ངའི་མིང་པོ་གསེར་དང་འདྲ་བ་ཞིག་ཡོད་པས། ཁོང་བླ་མ་ཁྱེད་ཀྱི་དོན་དུ་སྐུ་ལུས་བཏང་བས་ང་མྱ་ངན་གྱིས་བཟོད་ཐུབ་མེད་པ་མནན་ནས་ཡོད། འོན་ཀྱང་ད་རེས་བླ་མ་ཁྱེད་བོད་དུ་ཞབས་བཅག་ཐུབ་པ་ངའི་མིང་པོའི་སྐུ་ལུས་བཏང་བ་གོ་ཆོད་ཅིང་ང་ཡང་ད་རིང་ནས་མྱ་ངན་ལས་གྲོལ་ལོ། །ཇོ་བོ་ཁྱེད་བོད་དུ་སྐུ་ཚེ་རིང་དུ་བཞུགས་ནས་བསྟན་པ་དང་འགྲོ་བའི་དོན་རྒྱ་ཆེན་པོ་གནང་རོགས་ཞེས་སྐྱབས་འཇུག་ཞུས། དེའི་སྐབས་བྱང་ཆུབ་འོད་ཀྱིས་ཇོ་བོ་ལ་མངའ་རིས་ཕྱོགས་སུ་བྱོན་པའི་པཎྜི་ཏ་སོ་སོའི་ཡོན་ཏན་རྣམས་བརྗོད། དེ་དུས་དགུང་ལོ་གྱ་ལྔའམ་དགུ་བཅུར་ཕེབས་པའི་ལོ་ཆེན་རིན་

ཆེན་བཟང་པོའི་ཐུགས་དགོངས་ལ་ཇོ་བོ་རྗེ་མཁྱེན་ཡོན་ཆེན་པོ་ཡོད་པ་ཐོས་ཀྱང་ཁོ་བོ་ལས་ཆེ་བ་དཀའ་མོད། འོན་ཀྱང་ལྷ་བླ་མས་སྤྱན་དྲངས་པས་ཞབས་ཏོག་གཅིག་བྱ་དགོས་དགོངས་ཏེ་རང་གི་གནས་མཐོ་ལྡིང་གི་གཙུག་ལག་ཁང་དུ་སྤྱན་དྲངས། དེ་ན་རྒྱུད་སྡེ་གོང་འོག་སོ་སོའི་ལྷ་རྣམས་ཀྱི་འདྲ་རིས་གོ་རིམ་བཞིན་རྟེན་ལྡེབ་ལ་བྲིས་ཡོད་པ་དེ་རྣམས་ལ་ཇོ་བོས་བསྟོད་པ་ཚིགས་སུ་བཅད་པ་རེ་མཛད་དེ་སྟན་ལ་བཞུགས་པ་ན། ལོ་ཆེན་གྱིས་བསྟོད་པ་འདི་རྣམས་སུས་མཛད་ཅེས་དྲིས་པས་དེ་ཁོ་བོ་རང་གིས་འཕྲལ་དུ་བགྱིས་པ་ལགས་གསུངས་པས། ལོ་ཙཱ་བ་འཇིགས་ཞུམ་སྐྱེ་སོང་། ཇོ་བོས་ལོ་ཙཱ་བ་ལ་ཁྱེད་ཀྱིས་ཅི་དང་ཅི་མཁྱེན་ཞེས་གསུངས་པ་ན། ཁོང་རང་གིས་མཁྱེན་པ་རགས་རིམ་ཅིག་ཞུས་པས། ཇོ་བོའི་ཞལ་ནས་ཨེ་ཁྱེད་ལྟ་བུ་བོད་ན་བཞུགས་བཞིན་ཡོད་པར་ང་འོང་བར་དགོས་པ་མི་འདུག་ཅེས་གསུངས་ནས་ཐུགས་ཀར་ཐལ་མོ་སྦྱར། ཡང་ལོ་ཙཱ་བར་ཇོ་བོས། རྒྱུད་སྡེ་བཞི་པོ་དེ་རྣམས་ཀྱི་དོན་སྟན་ཐོག་གཅིག་ཏུ་དྲིལ་ཏེ་གང་ཟག་གཅིག་གིས་ཉམས་སུ་ལེན་ན་ཇི་ལྟར་བགྱི་གསུངས་པ་ལ། ལོ་ཙཱ་བས། རྒྱུད་སྡེ་སོ་སོ་ནས་བཤད་པ་ལྟར་བྱེད་ལགས་མོད་ཞུས་པས། ལོ་ཙཱ་བ་རུལ། ཁོ་བོ་བོད་དུ་འོང་བ་ལ་དགོས་པ་བྱུང་འདུག་ཅེས་དེབ་སྟོན་ནང་གསལ། ཇོ་བོས་དེ་རྣམས་གཅིག་ཏུ་བསྡོམས་ནས་ཉམས་སུ་ལེན་དགོས་པ་ཡིན་གསུངས་ནས། གསང་སྔགས་འཕྲུལ་གྱི་མེ་ལོང་བྱ་བའི་བཤད་པ་མཛད་དེ། ལོ་ཙཱ་བ་ཡང་ཤིན་ཏུ་ཐུགས་མཉེས་པར་གྱུར། དེ་ནས་འདི་ནི་མཁས་པ་ཆེན་པོ་བས་ཀྱང་མཁས་པ་ཆེན་པོའི་རྣམ་དུ་དགོངས་ནས། བརྒྱད་སྟོང་པ་དང་། ཉི་ཁྲི་སྣང་བ་དང་། བརྒྱད་སྟོང་འགྲེལ་ཆེན་ལ་སོགས་པ་སྔར་བསྒྱུར་བ་རྣམས་ལ་ཞུ་དག་མཛད།

དེའི་སྐབས་ལྷ་བླ་མ་བྱང་ཆུབ་འོད་ཀྱིས་ཇོ་བོ་ལ། བོད་དུ་བསྟན་པ་སྔ་དར་དང་ཕྱི་དར་ལས་འཁྲོས་ཏེ་གླང་དར་མས་བསྟན་པ་བསྣུབས་ཚུལ། ད་ལྟ་གསེར

འཚོལ་དུ་ཡོང་མཁན་རྣམས་ཀྱིས་ཆོས་ལོག་སྤེལ་ཚུལ། མདོ་སྔགས་ཆ་གྲུང་ལྟར་སོང་ཚུལ་རྣམས་ཇོ་བོའི་སྙན་དུ་གསོལ་ནས། དེ་ནི་རྒྱལ་བའི་གསུང་རབ་ཐམས་ཅད་ཧྲིལ་གྱིས་ཉམས་ལེན་དུ་དྲིལ་བའི་གདམས་ངག་ཅིག་གསུང་གནང་ཡོད་པ་དང་། ངེད་ཀྱི་བོད་མི་ལ་ཆོས་ཟབ་ཟབ་མོ་དང་ཡ་མཚན་ཅན་མིན་པར་ལས་རྒྱུ་འབྲས་ལས་བརྩམས་པའི་ཆོས་ཞིག་སྩོལ་གནང་ཡོང་བ་དང་། གཞན་ཡང་ཚངས་སྤྱོད་ལ་དབང་གོང་མ་གཉིས་དངོས་དབང་དུ་བསྐུར་རུང་དང་མི་རུང་སོགས་དྲི་བ་ཁག་བཅུ་ཞུས་པས། ཇོ་བོ་ཐུགས་ཤིན་ཏུ་མཉེས་ནས་ཆོས་ཟབ་མོ་བྱ་བ་ལས་རྒྱུ་འབྲས་ཁོ་ན་ཡིན། དེ་ལ་གཟབ་དགོས་གསུངས་། ཆོས་མིན་དེ་དག་གི་གཉེན་པོར་གྱུར་པའི་བསྟན་བཅོས་ཤིག་མཛད་པར་ཞུས་པས་བྱང་ཆུབ་ལམ་གྱི་སྒྲོན་མ་ཞེས་བྱ་བའི་སྨད་དུ་བྱུང་བའི་བསྟན་བཅོས་དེ་ཤིང་བྱ་ཕྱི་ལོ་ ༡༠༨༨ ལོར་ལྷུགས་རྩོམ་གནང་བས། དེ་སྔོན་བོད་དུ་ཆོས་ལོག་སྣ་ཚོགས་བྱུང་བ་རྣམས་རང་ཤུགས་ཀྱིས་ཡལ་ལོ།། བྱང་ཆུབ་ལམ་གྱི་སྒྲོན་མ་འདིའི་ནང་བརྗོད་བྱ་གཙོ་བོ། །སྐྱེས་བུ་གསུམ་གྱི་ལམ་གྱི་རིམ་པའི་སྒོར་གྱིས་གཙོས་པའི་མདོ་རྒྱུད་གཉིས་ཀའི་དོན་ཆ་ཚང་བ་ཕྱིན་ཅི་མ་ལོག་པ་སྟོན་པའི་ཆེས་ཁྱད་པར་དུ་འཕགས་པའི་གཞུང་ཞིག་ཡིན་ཞིང་། གཞུང་དེ་ཉིད་ལ་གཞི་མཛད་དེ་ཇེ་རིན་པོ་ཆེས་ལམ་རིམ་ཆེན་མོ་དང་སྔགས་རིམ་ཆེན་པོ་གཉིས་མཛད། ཇེ་ས་པཎ་གྱིས་ཐུབ་པ་དགོངས་སེལ་དང་། དྭགས་པོ་རིན་པོ་ཆེས་ཐར་རྒྱན་དང་ཛ་དཔལ་སྤྲུལ་གྱིས་ཀུན་བཟང་བླ་མའི་ཞལ་ལུང་སོགས་ཀྱང་ལམ་སྒྲོན་གྱི་དགོངས་འགྲེལ་གྱི་ཚུལ་དུ་བརྗོད་ཀྱང་མ་ཆོག་པ་ཞེ་ཡོད་སྙམ་དུ་སེམས་སོ།།

དེ་ལྟར་མངའ་རིས་སུ་ལོ་གསུམ་བར་ཆོས་ཀྱི་འཁོར་ལོ་མང་དུ་བསྐོར་ནས་སྐོད་ལྡན་གྱི་གང་ཟག་ཁྱད་པར་དུ་འཕགས་པ་དུ་མ་ཞིག་ལེགས་པའི་ལམ་ལ་བཀོད་པར་མཛད་དེ། རྒྱ་གར་དུ་ཕྱིར་ལོག་མཛད་པར་ཉེ་བའི་སྐབས་དེར་བལ་ཡུལ་གྱི་

མཐའ་མཚམས་སུ་དེའི་སྐབས་དམག་འཁྲུག་ལངས་ནས་ཕེབས་མ་ཐུབ་པར་སྤུ་རང་རྒྱལ་ཞིང་བྱེ་བར་གནས་སྐབས་འགྱངས་ནས་བཞུགས།

དེ་དུས་འབྲོམ་སྟོན་པ་མཆོག་ཁམས་ཀྱི་བླ་མ་སེ་བཙུན་གྱི་དྲུང་དུ་སློབ་གཉེར་མཛད་བཞིན་པའི་སྐབས་ཡིན་ལ། ཇོ་བོ་བོད་དུ་བྱོན་ཡོད་པ་ཐོས་མ་ཐག་བླ་མ་ལས་གནང་བ་ཞུས་ཏེ་ཇོ་བོ་མཇལ་དུ་པུ་ཧྲང་དུ་ཕེབས། ཇོ་བོ་ཇེ་སྲང་བར་ཞིག་ཏུ་མཇལ་མ་ཐག་བརྐྱང་ཕྱག་ཕུལ། ཇོ་བོས་འབྲོམ་གྱི་དབུ་ཐོག་ཏུ་ཕྱག་བཞག་ནས་ལེགས་སྦྱར་གྱི་སྐད་ནས་ཤིས་བརྗོད་མང་དུ་མཛད། གཞིམ་ཁང་དུ་འཁྲིད་དེ་འབྲོམ་ལ་གསང་འདུས་འཇམ་དཔལ་རྡོ་རྗེའི་དབང་གནང་སྐུ་སྲས་ཀྱི་ཐུ་བོར་གྱུར། འབྲོམ་གྱིས་ཐབས་མཁས་དུ་མས་བོད་ཀྱི་དབུས་ལྷ་ས་དང་བསམ་ཡས་ལ་སོགས་པར་སྐུ་གསུང་ཐུགས་རྟེན་མང་བ་དང་། དགེ་འདུན་སྡོང་ཕྲག་མང་པོ་ཡོད་པ་བརྗོད་པས། ཇོ་བོའི་ཞལ་ནས། ཚངས་པར་སྤྱོད་པ་གྲངས་མང་པོ་དེ་ཙམ་རྒྱ་གར་ན་འང་མེད། དགྲ་བཅོམ་པ་ཡང་མང་པོ་ཡོད་སྲིད་པས་ཇོ་བོས་དབུས་གཙང་དུ་ཕེབས་རྒྱུའི་འདུན་པ་བྱུང་བ་ན། ནག་ཚོ་ལོ་ཙཱ་བས་གནས་བརྟན་རཏྣ་ཀར་གྱི་དྲུང་དུ་ལོ་གསུམ་ནས་ཕྱིར་ལོག་ཕེབས་རྒྱུའི་མནའ་བསྙག་བཞག་པ་འདི་དྲན་ནས་ཇོ་བོའི་ན་བཟའ་ནས་འཇུས་ཏེ། འདི་སྐོར་སེམས་ཚབ་ཆེན་པོའི་ངང་གླེང་བ་རྩོམ་པ་ན། ཇོ་བོའི་ཞལ་ནས། བསྒྲུབ་མི་ནུས་པ་ལ་ལྷུང་བ་མེད་གསུངས་པས། ནག་ཚོ་ཐུགས་ཅུང་ཟད་བདེ་བར་སོང་སྐབས་དེ་དུས་ཇོ་བོའི་དཔོན་གཡོག་རྣམས་ཀྱིས་བྱང་ཆུབ་ལམ་སྒྲོན་གྱི་རྒྱ་དཔེ་ཞིག་དང་། ལམ་དུ་མ་ཐར་བའི་འཕྲིན་ཡིག་ཅིག་བྲིས་ནས་བང་ཆེན་གཉིས་རྒྱ་གར་དུ་བཏང་། དེ་རྒྱ་གར་དུ་འབྱོར་ནས་པཎྜི་ཏ་རྣམས་ཀྱིས་གཟིགས་པ་ན། ཇོ་བོ་རྒྱ་གར་དུ་བཞུགས་པ་ལས་བོད་དུ་བཞུགས་པ་དོན་ཆེ། རྒྱ་གར་དུ་བཞུགས་ཡོད་ན་བསྟན་བཅོས་འདི་ལྟ་བུ་མི་རྩོམ། བོད་ཤེས་རབ་ཆུང་བས་འདི་ལྟ་བུ་གོ་བདེ་ལ་རྒྱ་ཆེ་བའི་བསྟན་བཅོས་མཛད་འདུག་གསུངས་ནས་གནས་

བརྟན་རཏྣཱཀར་དང་པཎྜིཏ་རྣམས་ཐུགས་མཐུན་ནས་བསྟན་བཅོས་འདི་ལ་རང་འགྲེལ་ཞིག་ལྷུགས་རྩོམ་མཛད་ནས་བསྒྱུར་གནང་ཡོད་པ་དང་། ཇོ་བོ་བོད་དུ་རང་འདོད་ཇི་སྲིད་ཀྱི་བར་བཞུགས་ཆོག་ཅེས་འཕྲིན་འགྱུར་བས་འབྲོམ་སྟོན་པ་ཤིན་ཏུ་དགྱེས། ནག་ཚོས་ང་ལ་གནས་བརྟན་གྱིས་ཁུར་པོ་རི་ཙམ་ཞིག་བསྐྱུར་བ་དེ་ད་རེས་ནས་བབ་བསང་སོང་གསུངས།

དགེ་བཤེས་སྟོན་པས་སྐྱ་བ་ཤཱཀྱ་དབང་ཕྱུག་སོགས་ལ་བཀའ་གྲོས་མཛད་པ་ལྟར། དབུས་གཙང་དུ་འཕྲིན་ཡིག་ཅིག་བསྐུར་ཏེ། ངེད་ཀྱིས་ཇོ་བོ་བོད་དབུས་སུ་གདན་འདྲོང་བཞིན་ཡོད་པས། སྐྱ་བ་ཤཱཀྱ་དབང་ཕྱུག་གིས་བོད་ཀྱི་མི་ཆེན་རྣམས་བསུ་བར་ཕེབས་དགོས་པའི་དྲིལ་བསྒྲགས་སྒྲོགས་ཤིག་གསུངས། སྐྱ་བས་དོ་དམ་ཆེར་བགྱིས་ཏེ་ཀུན་ལ་འཕྲིན་ཡིག་བསྒྲགས་པས། ཁུ་སྟོན་བརྩོན་འགྲུས་གཡུང་དྲུང་གིས་ངའི་མིང་མི་འདུག་གསུངས་པར། སོགས་ཁོངས་སུ་གཏོགས་ཡོད་ཞུས་པས། སོགས་ཁོངས་སུ་འཛོག་འོས་པའི་མི་དེ་ང་མ་ཡིན་གསུངས་ནས་སྔོན་དུ་ཕེབས་པ་ན། གཞན་རྣམས་ལའང་སྐྱུལ་ལྷུག་ཆེན་པོ་ཐེབས། བོད་སྟོན་རྣམས་ཀྱིས་ཇོ་བོ་དབུས་སུ་སྤྱན་དྲངས། ཐང་པོ་ཆེར་ར་བརྩིགས་ཁང་པར་བཞུགས་ཞབས་ཏོག་ཤིན་ཏུ་དམན་པས། ཟླ་བ་གཉིས་ཙམ་ནས་འབྲོམ་སྟོན་པ་ཕེབས་ནས་དཔོན་སློབ་རྣམས་གྲོས་སྟབས་སུ་ཉང་གྲུ་ཁར་ཕེབས་པ་ན་ཁུ་སྟོན་གྱིས་རྗེས་བསྙེགས་སུ་སླེབས་ནས་བཟོད་པ་གསོལ་བས་དབུ་ཞྭ་བྱིན་རླབས་ཀྱི་རྟེན་དུ་འཕངས། དེ་ནས་འོན་གྱི་ལྷ་ཁང་གེ་ཧུར་ཟླ་བ་གཅིག་བཞུགས། ཉིད་ཀྱི་སྐུ་འདྲ་ཞིག་ཀྱང་གཙུག་ལག་ཁང་དེར་འབྲི་གནང་མཛད། འབྲོམ་གྱིས་བང་སྟོན་ལ་ཕྱུག་བྲིས་བཙངས་པས། བང་སྟོན་གྱི་རྟ་པ་ཉིས་བརྒྱ་ཙམ་གྱི་བསུ་བར་བསམ་ཡས་སུ་འགྱུར་ནས་གདན་དྲངས། སྤྱིའི་རྒྱ་ཕེབས་སུ་ཟླ་ཕྱེད་ཙམ་བཞུགས། དེ་ནས་བསམ་ཡས་སུ་ཕེབས། པེ་ཀར་གླིང་དུ་བཞུགས་སྐབས་རྒྱ་དཔེ་མང་པོར་གཟིགས་ཞིབ་གནང་། དེར་ཇོ་བོ་དང་ལོ་ཙྪ་བ་

རིན་བཟང་གཉིས་ཀྱིས་ཤེར་ཕྱིན་རྟོགས་དཀའི་སྣང་བ་དང་ནག་ཚོའི་ལྷན་དུ་དབྱིག་གཉེན་གྱི་ཐེག་བསྡུས་འགྲེལ་པ་སོགས་འགྱུར་མང་པོ་མཛད། ཇོ་བོས་སྤུར་བོད་དུ་བསྟན་པ་དར་བ་ལྟ་བུ་རྒྱ་གར་དུའང་མ་བྱུང་བ་འདྲ་གསུངས། རྒྱུད་དཔེ་དེ་དག་སློབ་དཔོན་པདྨས་ཀླུའི་ཡུལ་ནས་གདན་དྲངས་པ་ཡིན་པ་འདྲ་གསུངས་ནས་ཡིད་བརྟན་འཕྲོག དེ་ནས་སྙེ་ཐང་དུ་བརྫོལ། དེར་མངོན་པར་རྟོགས་པའི་རྒྱན་གྱི་བཤད་པ་རྒྱས་བསྡུས་གཉིས་གསུངས་པས་སློབ་མ་རྣམས་ཐུགས་ཆེམ་པར་གྱུར་ནས་ཕྱུག་དར་སྟོན་པས་ཟིན་བྲིས་མཛད་པ་ལ་ཕར་ཕྱིན་ཁམས་ལུགས་མར་གྲགས། འབྲོམ་ལ་སྐྱེས་བུ་གསུམ་གྱི་ཁྲིད་ཀྱི་གདམས་པ་རྣམས་ཀྱང་སྙེ་ཐང་ཉིད་དུ་གནང་། དེ་རྗེས་རྔོག་ལེགས་པའི་ཤེས་རབ་ཀྱིས་ལྷ་སར་སྤྱན་དྲངས། ཇོ་བོ་ཤཱཀྱ་མུནི་དང་བཅུ་གཅིག་ཞལ་གཉིས་ལ་ངོ་མཚར་དུ་གཟིགས་ནས་ལྷ་བཟོ་བོ་མཁས་པ་ཞིག་ལ་འདྲ་སྐུ་བཞེངས་སུ་བཅུག རྔོག་གིས་ལོ་པཎ་གཉིས་ལ་གསོལ་བ་བཏབ་པ་བཞིན། སློབ་དཔོན་ལེགས་ལྡན་འབྱེད་ཀྱི་རྟོག་གེ་འབར་བ་བསྒྱུར། དབུ་མའི་མན་ངག་ཆེ་ཆུང་གཉིས་ཀྱང་དེ་དུས་མཛད། སྣར་ཡང་སྙེ་ཐང་དུ་བཞུད། དེའི་དབྱར་རྔོག་བྱང་ཆུབ་འབྱུང་གནས་ཀྱི་བྲག་ཡེར་པར་སྤྱན་དྲངས། ཞུས་ལན་ནོར་བུའི་ཕྲེང་བའི་དགོངས་འགྲེལ་བཀའ་གདམས་ཕ་ཆོས་བུ་ཆོས་ཀྱང་དེ་དུས་གསུངས། ཐེག་པ་ཆེན་པོ་རྒྱུད་བླ་མའི་འགྲེལ་པ་སློབ་དཔོན་ཐོགས་མེད་ཞབས་ཀྱིས་མཛད་པ་དེ་ལོ་པཎ་གཉིས་ཀྱིས་བསྒྱུར། དེ་ནས་ཀ་བ་ཤཱཀྱ་དབང་ཕྱུག་གིས་འཕན་ཡུལ་དུ་སྤྱན་དྲངས། འཕན་པོ་དགའ་ལྡན་ཆོས་འཁོར་གྱི་བསྟན་སྲུང་ཆོས་སྐྱོང་ཞེས་པ་དེས་ཇོ་བོ་ལ་བར་ཆད་བྱེད་དུ་འོང་བས། ཇོ་བོས་རྟ་མགྲིན་ཤྭ་ན་བཞི་བསྐོར་མཛད་དེ་དམ་ལ་བཏགས། བསྟན་པ་སྲུང་བའི་དམ་བཅས། དེ་ལྟར་ན་སྙེ་ཐང་། ལྷ་ས། ཡེར་པ། ལན་པ་རྣམས་ཇོ་བོས་ཆོས་གསུངས་པའི་བསྟི་གནས་གཙོ་བོ་ཁག་ཡིན། སྣར་བང་སྟོན་གྱིས་སྙེ་ཐང་དུ་སྤྱན་དྲངས། སྐུའི་སྟོབས་ཀྱང་ཅུང་ཟད་ཉམས། ཇོ་

བོས་ན་རོ་པའི་སློབ་མ་ཁ་ཆེ་ཛྙཱནཱཀར་ལས་གསང་འདུས་འཕགས་སྐོར་ཞིག་ཞུ་བར་འདོད་གསུངས་པ་དེ་བལ་ཡུལ་དུ་འབྱོར་ཡོད་པ་ལོ་ཙཱ་བ་ལ་འཕྲིན་ཞིག་སྐེ་ཐང་དུ་བྱུང་བས། ནག་ཚོ་ཇོ་བོའི་སྐུ་ཉམས་ལ་བལྟས་པ་འབྲལ་མ་ཕོད་ཀྱང་། པཎྜིཏ་ཛྙཱནཱཀར་དང་མཇལ་བར་དཀའ་སྐམ་པའི་དགོངས་པས་སེམས་གདུངས་ནས་མྱ་ངན་གྱིས་སྐུ་ལུས་ཞིག་པར་འགྱུར་བ་ན་ཇོ་བོ་ཉིད་ཀྱི་ཞལ་ནས། ཐེག་པ་ཆེན་པོའི་དགེ་བའི་བཤེས་གཉེན་དང་མཇལ་དཀའ་བས་ལོ་ཙཱ་བ་བཞུད་ཅིག་ཅེས་གསུངས་པས། ནག་ཚོས་ཇོ་བོ་ལ་དགའ་ལྡན་ན་ཇོ་བོའི་ཞབས་དྲུང་དུ་སྐྱེ་བ་དང་། ཁོ་བོའི་ཡུལ་དུ་ཇོ་བོའི་སྐུ་ཅིག་བཞེངས་ཡོད་པས་དེར་རབ་གནས་ཆེད་འབྱོན་པར་ཞུ་ཞེས་གསོལ་བ་ཁག་གཉིས་བཏབ་པས་ཇོ་བོས་ཞལ་གྱིས་བཞེས། བཀའ་གདམས་པ་ཕྱི་མ་རྣམས་ཀྱིས་ཇོ་བོ་མྱ་ངན་འདའ་ཁར་འབྲལ་ཕོད་པར་ལོ་ཙཱ་བ་ལ་དམ་ཚིག་མེད་ཟེར་ནས་ཁ་ཟེར་ཡང་། དགེ་བཤེས་ཤ་ར་བས། དེང་སང་གི་བདེ་སྐྱིད་དམ་དམ་འདི་ལོ་ཙཱ་བའི་དྲིན་ཡིན། ངེད་རང་གི་བཀའ་གདམས་པ་འདི་རྣམས་ཤབ་ཤུབ་ཁོ་ན་བྱེད་གསུངས་ནས་བཀའ་བཀྱོན་གནང་། ཕྱིར་ཇོ་བོ་བོད་དུ་ཕེབས་ནས་བདག་གཉེར་འབྲོམ་སྟོན་པ་ལ་མཛད་པས་ཐུགས་ཀྱང་ཁོང་ལ་གཏོད། བསམ་ཡས་སུ་བཞུགས་སྐབས་གསང་སྔགས་ཀྱི་སྤྱོད་པའི་ཐབས་མང་པོ་དང་། མཆིམས་ཕུར་དོཧཱ་ལ་སོགས་པའི་ཟབ་མོའི་གདམས་ངག་མང་པོ་ཇོ་བོས་འབྲོམ་ལ་གནང་། ཇོ་བོ་མྱ་ངན་འདའ་ཁར་འབྲོམ་ལ་ངའི་བསྟན་པ་ཁྱེད་ལ་གཏོད་ཅིང་ཡོད་པས་ཁྱེད་ཀྱིས་དེ་འཛིན་ལ། གནས་གཞི་ཆུང་ངུ་ཞིག་ཀྱང་རྟིགས་ཞེས་གསུངས་པས། འབྲོམ་གྱིས། ཕྱིར་བདག་དམན་ཞིང་བྱེ་བྲག་ཏུ་རྟེན་དགེ་བསྙེན་ཡིན་པས་བྱ་བ་ཆེན་པོ་སྒྲུབ་མི་ཐུབ་བརྗོད་པས་ཇོ་བོའི་ཞལ་ནས། བསླབ་པ་བཞིན་བྱ་བ་རྣམས་བགྱི་ལ། ངས་བྱིན་གྱིས་རློབ་པས་སེམས་ཁྲལ་མི་དགོས་ཞེས་གསུངས་སོ།།

དེ་ལྟར་ཇོ་བོ་བོད་མངའ་རིས་སུ་ལོ་གསུམ། སྙེ་ཐང་དུ་ལོ་དགུ། དབུས་གཙང་དུ་ལོ་ལྔའི་བར་བཞུགས་ནས་སྐལ་ལྡན་གྱི་གདུལ་བྱ་རྣམས་ལ་མདོ་སྔགས་ཀྱི་གཞུང་། གདམས་ངག མན་ངག་མ་ལུས་པ་གསུངས་ནས་བསྟན་པའི་སྲོལ་ནུབ་པ་རྣམས་གསོས། སྲོལ་ཙུང་ཟད་ཡོད་པ་རྣམས་འཕེལ་བར་མཛད། ལོག་རྟོག་གི་དྲི་མ་ཅན་པ་རྣམས་ཉི་འོད་ཟླ་ཟེར་ལ་ཕོག་པ་བཞིན་ཉམས་ནས་བསྟན་པ་རིན་པོ་ཆེ་དྲི་མ་དང་བྲལ་བར་མཛད་དོ། །དེ་ནས་སྐུ་ཚེ་དེའི་དངོས་ཀྱི་གདུལ་བྱ་རྣམས་རྫོགས་ནས་ཞིང་ཁམས་གཞན་དུ་འབྱོན་པར་བཞེད་དེ། དགུང་གྲངས་དོན་གསུམ་པ་ཕྱི་ལོ་ ༡༠༥༤ ཤིང་ཕོ་རྟ་ཟླ་བ་ ༨ པའི་ཚེས་ ༣༠ ལ་སྙེ་ཐང་དུ་སྐུ་ཞི་བར་གཤེགས་སོ། །སྐུ་གདུང་རྣམས་སྙེ་ཐང་ན་མོ་ཆེར་ཞུགས་པ་ཕུལ། སྙེ་ཐང་འོར་དུ་སྐུ་གདུང་བཞུགས་པའི་གཙུག་ལག་ཁང་སོགས་བཞེངས་སོ།།

ཇོ་བོས་བརྩམས་བསྒྱུར་ཞུས་གསུམ་མཛད་པའི་ཆོས་ཚན་གལ་ཆེ་འགའི་ངོ་སྤྲོད།

ཇོ་བོ་རྗེས་དངོས་སུ་ལྷུགས་རྩོམ་མཛད་པའི་གཞུང་དང་བསྒྱུར་ཞུས་ཀྱི་གཞུང་ལ་བརྒྱ་ཕྲག་ལྷག་བཞུགས་པ་ལས། བསྒྱུར་ཞུས་ཀྱི་ཕྱག་དཔེའི་གྲས་སུ་གྲགས་ཆེ་བ། ཕར་ཕྱིན་རྟོགས་དཀའི་སྣང་བ། ལོ་ཙྪ་བ་རིན་བཟང་གི་ལྷན་དུ་འགྱུར། དབུ་མ་སྙིང་པོ་དང་དེའི་འགྲེལ་པ་རྟོག་གེ་འབར་བ། ལོ་ཙྪ་བ་ཚུལ་ཁྲིམས་རྒྱལ་བའི་ལྷན་དུ་བསྒྱུར། དབུ་མ་རིན་པོ་ཆེའི་སྒྲོན་མེ་ལོ་ཙྪ་བ་རྒྱ་བརྩོན་འགྲུས་སེང་གེའི་ལྷན་དུ་བསྒྱུར། དེ་དག་ལ་སོགས་པ་མདོ་སྔགས་ཀྱི་གཞུང་ཆེས་མང་བས་ཞིབ་ཕྲ་ཇོ་བོའི་གཞུང་ཚན་ལྔའི་ལྷན་ཐབས་ཀྱི་ནང་གཟིགས་པར་ཞུ།

ཇོ་བོས་བརྩམས་ཆོས་ལ་གྲགས་ཆེ་བར། བྱང་ཆུབ་ལམ་གྱི་སྒྲོན་མ་དང་དེའི་རང་འགྲེལ། བདེན་པ་གཉིས་ལ་འཇུག་པ། དབུ་མའི་མན་ངག་ཆེ་ཆུང་གཉིས། སྤྱོད་བསྡུས་སྒྲོན་མེ། བཀའ་གདམས་ཕ་ཆོས་བུ་ཆོས་ཀྱི་རྩ་བ་ཞུས་ལན་ནོར་བུའི་ཕྲེང་བ་དང་མདོ་ཀུན་ལས་བཏུས་པ་ཆེན་པོ་སོགས་ཡིན་ནོ། །

རྒྱ་བོད་གཉིས་སུ་བྱོན་པའི་ཇོ་བོ་རྗེའི་བརྒྱུད་འཛིན་གྱི་སློབ་མའི་ངོ་སྤྲོད།

རྒྱ་བོད་གཉིས་སུ་ཇོ་བོ་རྗེའི་རྒྱུད་འཛིན་གྱི་སློབ་མ་མང་དུ་ཡོད་པ་ལས་རྒྱ་གར་ནས་ཐུན་མོང་མ་ཡིན་པའི་སློབ་མ་གཙོ་བོ་ལྔ་སྟེ། ༡ པི་ཏོ་བ། ༢ དྷརྨཱཀར་མཏིའམ་ཆོས་ཀྱི་འབྱུང་གནས་བློ་གྲོས། དབུ་མའི་སེངྒེ། ༣ ཀལྱཱཎྒུཧྱའམ་བཤེས་གཉེན་གསང་བ། ༤ ཛྙཱན་མཏིའམ་ཡེ་ཤེས་བློ་གྲོས། ༥ ཀྵུ་ཏི་གརྦྷའམ་སའི་སྙིང་པོ་རྣམས་སོ།།

བོད་དུ་བརྒྱུད་འཛིན་གྱི་སློབ་མ་གྲངས་ལས་འདས་པ་ཡོད་མོད་ཀྱང་གཙོ་བོ་ནི། མངའ་རིས་ནས། ལོ་ཙཱ་བ་རིན་ཆེན་བཟང་པོ། ནག་ཚོ་ལོ་ཙཱ་བ་ཚུལ་ཁྲིམས་རྒྱལ་བ། ལྷ་བླ་མ་བྱང་ཆུབ་འོད། གཙང་ནས། འགར་དགེ་བ། འགོས་ལོ་ཙཱ་བ་ཁུག་པ་ལྷས་བཙས། ཡོལ་ཆོས་དབང་མཆེད་གསུམ། ལྷོ་བྲག་ནས། ཆག་ཁྲི་མཆོག དགེ་བ་སྐྱོང་། རྒྱ་བརྩོན་འགྲུས་སེངྒེ། དགེ་བའི་བློ་གྲོས། ཚུལ་ཁྲིམས་འབྱུང་གནས། མདོ་སྨད་པའི་ཁྲུངས་ནས། རྣལ་འབྱོར་པ་བྱང་ཆུབ་རིན་ཆེན། དགོན་པ་བ། ཤེས་རབ་རྡོ་རྗེ། ཕྱུག་དར་སྟོན་པ། བྱམས་པའི་བློ་གྲོས། དབུས་ནས། འབྲོམ་སྟོན་རྒྱལ་བའི་འབྱུང་གནས། ཁུ་སྟོན་བརྩོན་འགྲུས་གཡུང་དྲུང་། རྔོག་ལེགས་པའི་ཤེས་རབ་རྣམས་ཐུགས་སྲས་གཙོ་བོའི་གྲས་སུ་གྲགས་ཤིང་གཞན་ཡང་མཐའ་ཡས་སོ།།

བསྒྱུར་མཛད་ལོ་ཙཱ་བའི་རྣམ་ཐར།

ལོ་ཙཱ་བ་ཀྲི་དེཝ་སྐྱོཤའི་རྣམ་ཐར།

སློབ་དཔོན་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱིས་མཛད་པའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པ་བྱང་ཆུབ་ཀྱི་ལྟུང་བ་བཤགས་པའི་འགྲེལ་པ་ཞེས་པ་འདི་རྒྱ་གར་གྱི་པཎྜིཏ་ཆེན་པོ་མཁན་ཆེན་ཞི་བ་འཚོ་དང་བོད་ཀྱི་ལོ་ཙཱ་བ་ཀྲི་དེཝསྐྱོཤས་ལེགས་སྒྱུར་ནས་བོད་སྐད་དུ་ཕབ་བསྒྱུར་

མཛད་ཅེས་བོད་ཀྱི་བསྟན་འགྱུར་དཀར་ཆག་ཕལ་མོ་ཆེར་མཇལ་རྒྱུ་ཡོད་ཀྱང་། བུ་སྟོན་ཞབས་ཀྱིས་མཛད་པའི་བཀའ་བསྟན་དཀར་ཆག་ཏུ་ཛྙན་དེ་བ་གོ༔ ཞེས་མཇལ་རྒྱུ་ཡོད། ལོ་ཙཱ་བ་འདིས་བསྒྱུར་བའི་ཆོས་ཚན་དེ་ཉིད་ལས་གཞན་པ་མཇལ་རྒྱུ་མེད། དེས་ན་དེ་ཙམ་གྱི་སྙན་གྲགས་ཆེ་བའི་ལོ་ཙཱ་བ་ཞིག་ཡིན་ཚོད་མི་འདུག ལོ་ཙཱ་བ་འདིའི་རྣམ་ཐར་ཆོས་འབྱུང་གསར་རྙིང་དུ་མར་འཚོལ་ཞིབ་བྱས་ཀྱང་ད་བར་རྙེད་སོན་མ་བྱུང་ནའང་། ཆོས་འབྱུང་མང་པོའི་ནང་ཁོང་གི་མཚན་ཙམ་གསལ་བ་ལས་རྣམ་ཐར་མ་སོན་སྐབས་ལོ་ཙཱ་བ་འདིའི་རྣམ་ཐར་འདིར་དགོད་ཐབས་བྲལ། མ་འོངས་པ་ན་ལོ་ཙཱ་བ་འདིའི་རྣམ་ཐར་ལག་སོན་བྱུང་ཆེ་དཔར་ཐེངས་རྗེས་མའི་སྐབས་དགོད་ཐུབ་རྒྱུའི་འབད་བརྩོན་ཞུ་རྒྱུ་ཡིན། འོན་ཀྱང་ལོ་ཙཱ་བ་འདིས་སློབ་དཔོན་ཆེན་པོ་ཞི་བ་འཚོའི་ལྷན་དུ་བསྒྱུར་ཞུས་ཀྱི་བྱ་བ་རླབས་ཆེན་མཛད་པས་ལོ་ཙཱ་བ་འདིའི་སྐོར་བོད་པའི་མཁས་པ་རྣམས་ཀྱི་གླེང་བ་ཙམ་ཡང་མ་མཛད་པ་ཉེ་ཡ་མཚན་པ་ཞིག་ཏུ་སྣང་ངོ་།།

ཆག་ལོ་ཙཱ་བའི་རྣམ་ཐར་སྤྱིའི་སྐོར།

སློབ་དཔོན་ཆེན་པོ་ཛེཏཱརིས་མཛད་པའི་ལྟུང་བ་བཤགས་པའི་འགྲེལ་པ་བྱང་ཆུབ་ཀྱི་ལྟུང་བ་བཤགས་པའི་འགྲེལ་པ་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་བསླབ་པའི་རིམ་པ་ཞེས་བྱ་བ་འདི་ནི་བལ་པོའི་པཎྜི་ཏ་ཞིག་དང་ཆག་ལོ་ཙཱ་བ་ཞུ་བ་ཞིག་གིས་ལེགས་སྒྱུར་ནས་བོད་སྐད་དུ་ཕབ་བསྒྱུར་མཛད་ཅེས་གཞུང་དེ་ཉིད་ཀྱི་འགྱུར་བྱང་ཕལ་མོ་ཆེར་གསལ་ཡང་། ཆག་ཅེས་ཞུ་བའི་མིང་ཅན་ལོ་ཙཱ་བ་ཆག་དགྲ་བཅོམ་པ་དང་ཆག་ཆོས་རྗེ་དཔལ་བཅས་ཁག་གཉིས་བོད་ཀྱི་བཀའ་བསྟན་དཀར་ཆག་དང་ཆོས་འབྱུང་ཁག་ཏུ་མཇལ་རྒྱུ་ཡོད། དེས་ན་ཛེཏཱརིའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པ་འདི་ཆག་ལོ་ཙཱ་བ་འདི་གཉིས་ལས་ལོ་ཙཱ་བ་སུ་ཞིག་གིས་བསྒྱུར་བའི་སྐོར་གྱི་གསལ་ཁ་ཐོབ་ཀྱི་མེད་ནའང་། ཕྱི་མ་ཆག་ཆོས་རྗེ་དཔལ་ཞབས་ཀྱིས་བསྒྱུར་བ་ཡིན་ནམ་སྙམ་སྟེ་ཆག

ཆོས་རྗེ་དཔལ་བལ་ཡུལ་དུ་ཡུན་རིང་བཞུགས་ཤིང་པཎྜིཏ་ཆེན་པོ་ཉིན་མའི་དབང་པོའི་འོད་ཟེར་ཞེས་པ་བསྟེན་པ་རང་གི་ལམ་ཡིག་ཏུ་གསལ་ཡང་མཐའ་གཅིག་ཏུ་ངེས་པ་རྙེད་ནས་ཞུ་ཐབས་བྲལ། ཆག་ལོ་དགྲ་བཅོམ་ཡང་བལ་ཡུལ་བརྒྱུད་འཕགས་པའི་ཡུལ་དུ་ཞབས་ཀྱིས་བཅགས་པ་རྣམ་ཐར་ཁག་ཏུ་གསལ་བས། དེས་ན་ལོ་ཙྪ་བ་གཉིས་ཀའི་རྣམ་ཐར་ཐུང་ངུ་རེ་དགོད་དགོས་པ་སེམས་སོ།།

ཆག་ལོ་ཙྪ་བ་དགྲ་བཅོམ་པའི་རྣམ་ཐར།

ཆག་ལོ་ཙྪ་བ་དགྲ་བཅོམ་པ་ནི། བོད་ཀྱི་རབ་བྱུང་གསུམ་པའི་ཆུ་མོ་བྱ་ལོ་སྟེ་སྤྱི་ལོ་ ༡༡༥༣ ལོར་ཆག་ཅེས་བྱ་བའི་གྲོང་དུ་མེས་བཀྲིས་དགའ་བའི་སྲས་སུ་སྐུ་བལྟམས། བློ་གྲོས་ཤིན་ཏུ་བཀྲ་བས་གཞོན་ནུའི་དུས་ནས་ཡི་གེ་འབྲི་ཀློག་ལ་ལེགས་པར་སྦྱངས་སྟེ་མཁས་པར་གྱུར། ཆག་སྟོན་ཆེན་པོ་རིན་ཆེན་ཚུལ་ཁྲིམས་ལས་རབ་ཏུ་བྱུང་། སྟེང་ལོ་ཙྪ་བ་ཚུལ་ཁྲིམས་འབྱུང་གནས་ལས་གསང་འདུས་འཕགས་ལུགས་ཀྱི་སྐོར་དང་། དུས་འཁོར། སྒྲ་རིག་པ། སྒྲ་སྦྱོར་བཅས་ལ་གསན་བསམ་ཚུལ་བཞིན་དུ་མཛད། མཁན་པོ་དར་མ་བརྩོན་འགྲུས་གཙོས་བྱས་པ་སོགས་ལས་བསྙེན་གནས་ཀྱི་སྡོམ་པ་མནོས། དེ་ནས་རིམ་བཞིན་བཤེས་གཉེན་ཆེན་པོ་ཤཱཀྱ་གྲུབ་དང་། གཙང་དཀར་བ། ཅོག་གྲུ་ལོ་ཙྪ་བ་མྱང་ནན་མེད་པའི་དཔལ། ཞང་ལོ་ཙྪ་བ་ལ་སོགས་བོད་ཀྱི་བླ་མ་བཅོ་ལྔ་ཙམ་ལ་བསྟེན་ནས་མདོ་སྔགས་རིག་གནས་དང་བཅས་པར་སྦྱངས་པ་མཐིལ་ཕྱིན་པ་མཛད། རྒྱ་གར་འཕགས་པའི་ཡུལ་དུའང་ཕེབས་ཏེ་རྒྱ་གར་གྱི་སློབ་དཔོན་ཆེན་པོ་མིཏྲའི་ཛཛྙ་ལ་སོགས་པའི་བླ་མ་མང་པོ་བསྟེན་ནས་མདོ་སྔགས་ཀྱི་ཆོས་དུ་མ་གསན། བོད་དུ་ཕེབས་ཏེ་ཡོན་བདག་རྣམས་ཀྱི་ཆུ་མིག་དང་། རྒྱལ་ལྷ་ཁང་དང་། ཐང་པོ་ཆེ་ལ་སོགས་པའི་ཆོས་གཞི་རྣམས་སུ་ཐོགས་རེ་རེ་བཞུགས། གཙོ་བོ་ལྷེའུ་རར་བཞུགས་ནས་སྔར་གྱི་གདན་ས་སྟོངས་པ་རྣམས་བསྐྱར་གསོ་མཛད། རྒྱ་གར་ནས་སློབ་དཔོན་ཆེན་པོ་དག

པའི་དཔལ་སྡེ་ཤཱནྟི་ཤྲཱི་སྲིན་ཧྲངས་ཏེ་རྒྱལ་བའི་ལམ་ལ་འཇུག་པ་སོགས་བསྒྱུར། གཞན་ཡང་རྒྱ་གར་གྱི་སློབ་དཔོན་ཤཱཀྱ་ཤྲཱི། ཐམས་ཅད་མཁྱེན་པའི་དཔལ། རཏྣ་ཤྲཱི་ལ་སོགས་པའི་ལྷན་དུའང་འགྱུར་མང་པོ་མཛད། སྐུའི་སྤྱོད་པ་ནི་ཧ་ཅང་བཟང་ཞིང་ཚུལ་ཁྲིམས་ཀྱི་དྲི་ཞུན་སུམ་ཚོགས་པས་རྒྱང་རིང་དུའང་དྲི་ཞིམ་པོས་ཁྱབ་པར་མཛད། དབུ་དང་ཞབས་ལ་སོགས་པའི་ཞབས་རྗེས་ཀྱི་གྲུབ་རྟགས་ཀྱང་བཞག དེ་ལྟར་བསྟན་འགྲོའི་དོན་རྒྱ་ཆེན་པོ་གནང་རྗེས་རབ་བྱུང་བཞི་པའི་མེ་ཕོ་བྱི་ལོ་སྤྱི་ལོ་ ༡༢༡༦ ལོར་ལྷེའུ་ར་དེ་ཉིད་དུ་སྐུ་ཞི་བར་གཤེགས། དེ་ཉིད་ཀྱིས་མཛད་པའི་ཕྱག་དཔེ་མི་ཉུང་བ་ཡོད་སྲིད་ཀྱང་ད་ལྟའི་ཆར་གཞུང་གཅིག་ཙམ་ཡང་མཇལ་རྒྱུ་མེད་ནའང་བསྒྱུར་ཞུས་མཛད་པའི་གཞུང་ལྔ་ཙམ་གྱི་མཚན་བསྟན་འགྱུར་གྱི་ཁྲོད་དུ་མཇལ་རྒྱུ་ཡོད་པ་རྣམས་ནི་གཤམ་གསལ་བཞིན།

ཆག་ལོ་ཙཱ་བ་ཆོས་རྗེ་དཔལ་གྱི་རྣམ་ཐར།

ཆག་ལོ་ཙཱ་བ་ཆོས་རྗེ་དཔལ་ནི། རབ་བྱུང་གསུམ་པའི་མེ་སྦྲུལ་སྤྱི་ལོ་ ༡༡༩༧ ལོར་ཡབ་ཆོས་ཀྱི་འབྱུང་གནས་དང་ཡུམ་ཆོས་འབུམ་གཉིས་ཀྱི་སྲས་སུ་ངོ་མཚར་དང་བཅས་པའི་སྣ་ནས་སྐུ་བལྟམས། འཁྲུངས་པའི་ཡུལ་ནི་བོད་དབུས་ཀྱི་ལྷོ་ཁ་གཉེན་ལྷེའུ་ར་ཡིན། ཆོས་རྗེ་དཔལ་ནི། ས་པཎ་ཀུན་དགའ་རྒྱལ་མཚན་དང་། འགྲོ་མགོན་ཆོས་རྒྱལ་འཕགས་པ་བཅས་ཀྱི་སྐུ་དུས་སུ་བྱོན། རྒྱ་གར་འཕགས་པའི་ཡུལ་གྱི་མགདྷའི་རྒྱལ་པོ་བུདྡྷ་སེན་དང་། ཧོར་གྱི་རྒྱལ་པོ་ཀུཔལེ་ཁཱན་དང་ཧེད

ཏུ་རིའི་རྒྱལ་པོ་རཱམ་སིཾཧ་ཡང་སྐབས་དེ་དུས་བྱུང་བའོ། །དགུང་ལོ་བདུན་ཙམ་ནས་ཡི་གེ་འབྲི་ཀློག་དང་བློ་འཛིན་སོགས་ལ་སྦྱོང་འགོ་ཚུགས། ཁྱད་པར་དུ་ལེགས་སྦྱར་གྱི་སྐད་དང་བོད་ཀྱི་བརྡ་སྤྲོད་ལ་དམིཊ་བསལ་གྱི་དོ་སྣང་དང་གསན་སྦྱོང་གནང་། ཆག་ལོ་ཙཱ་བ་དགྲ་བཅོམ་པ་ཁོང་གི་ཨ་ཁྲུ་ཡིན། དགུང་ལོ་བཅུ་གཅིག་ཙམ་ནས་ཉི་ཤུའི་བར་སྐུ་ཉིད་ཀྱི་ཨ་ཁྲུ་ཆག་ལོ་དགྲ་བཅོམ་པ་དང་བྲལ་མེད་བསྟེན་ནས་བདེ་མཆོག་གི་དབང་དང་གསང་སྔགས་སྤྱིའི་སྐོར་དང་། མཚན་ཉིད་ཀྱི་གཞུང་རྣམས་དང་གཞན་ཡང་གདམས་པ་མང་པོ་ཞུས། བྱང་ཆུབ་སེམས་བསྐྱེད་ཀྱི་དབང་ཡང་ལན་ལྔ་ཞུས། དགུང་ལོ་བཅུ་བཞི་བཅོ་ལྔའི་དུས་སུ་ལྷོཁུ་རའི་བཀྲིས་ལྷུན་པོར་སྐུ་མཚམས་བཅད་ནས་འཕགས་པ་མི་གཡོ་བའི་བསྙེན་པ་འབུམ་འཚོ་ཉི་ཤུ་རྩ་དྲུག་བསྐྱལ་བས་ཐུགས་དམ་གྱི་ལྷ་འཕགས་པ་མི་གཡོ་བ་དངོས་སུ་ཞལ་གཟིགས། སེ་ལོ་ཙཱ་བ་དང་། མྱང་སྟོད་ལོ་ཙཱ་བ། ཁྲོ་ཕུ་ལོ་ཙཱ་བ་བྱམས་པ་དཔལ་དང་། སྣར་ཐང་པ་གྲོ་སྟོན་བདུད་རྩི་གྲགས་དང་། གུང་ཐང་ལྷ་བཙུན་པ། གཙང་པ་གྱ་རེས་པ་ལ་སོགས་པའི་བོད་ཀྱི་བླ་མ་དགེ་བཤེས་ཆེན་པོ་རྣམས་བསྟེན་ནས་མདོ་སྔགས་ཀྱི་གཞུང་མང་པོར་གསན་སྦྱོང་མཛད། ཁྱད་པར་དུ་གུང་ཐང་ལྷ་བཙུན་པ་མགོན་པོ་ལས་མངོན་པ་ཀུན་བཏུས་དང་། གསང་འདུས་འཕགས་ལུགས་ཀྱི་སྐོར་རྣམས་གསན་ནས་གཙང་དུ་ལོ་བཅུ་བཞུགས་སོ། །ཆོས་རྗེ་གོང་མ་ཆག་ལོ་ཙཱ་བ་དགྲ་བཅོམ་ཞབས་ཀྱི་བལ་ཡུལ་དང་རྒྱ་གར་འཕགས་པའི་ཡུལ་དུ་ཕེབས་དགོས་པ་ཞལ་ཆེམས་གནང་བ་ལྟར་དགུང་ལོ་ཉི་ཤུ་སྐོར་ཙམ་ན་བལ་ཡུལ་དུ་ཕེབས་ཏེ་པཎྜིཏ་རཏྣརཀྵིཏ་ལས་བདེ་མཆོག་གི་ལྷ་གསུམ་པའི་དབང་ལ་སོགས་པ་གསང་སྔགས་ཀྱི་ཆོས་མང་པོའི་དབང་ཁྲིད་ཞུས། པཎྜིཏ་ཆེན་པོ་རཝིཤྲཱིདེཝ་འམ་རུ་ཙི་སྟེ་ཉི་མའི་དབང་པོའི་ལྷའམ་འོད་ཟེར་ལས་གསང་འདུས་འཕགས་སྐོར་དང་རྒྱུད་རྡོ་རྗེ་ཕྲེང་བ་ལ་སོགས་པའི་ཆོས་མང་པོ་ཞུས། མདོ་རྒྱུད་རྟོགས་པ་བསྟུས་པ་ཆར་གསུམ་གསན་ཡང་མ་འཆིམ་

པར་སྣར་ཞུས་ནས་བལ་ཡུལ་དུ་ལོ་རྗིལ་པོ་བརྒྱད་བཞུགས་པར་གྲགས། དེ་ནས་རྒྱ་གར་དུ་ཕེབས་ཏེ་རྒྱ་གར་གྱི་པཎྜིཏ་ཆེན་པོ་ཡཤོམིཏྲ་དང་། ནཱཏུལཤྲཱི་ཛྙཱན་སོགས་ཀྱི་ཞབས་ལ་གཏུགས་ཏེ་ཐེག་པ་ཆེ་ཆུང་མདོ་བསྟན་སྤྱིའི་ཆོས་དུ་མ་གསན། རྒྱ་གར་དུ་བཞུགས་རིང་གར་ལོག་གི་དམག་གི་ཉེན་འཇིགས་ཆེ་ཡང་ཏེཏཏུརི་དང་། རྡོ་རྗེ་གདན། ཡངས་པ་ཅན། ནཱལནྡཱ། རྒྱལ་པོའི་ཁབ། བྱ་རྒོད་ཕུང་པོའི་རི་ལ་སོགས་པ་མགདྷའི་ནང་པའི་གནས་ཚ་ཆེན་རྣམས་སུ་གནས་མཇལ་ལ་ཕེབས། ཚུར་ལམ་ཡང་ཏིཏཏུརི་བརྒྱུད་བལ་ཡུལ་ནས་བོད་དུ་ལོག ཆོས་རྗེ་ས་པཎ་ཞབས་ཀྱིས་ལོ་ཙཱ་བ་རིན་ཆེན་བཟང་པོའི་རྗེས་ལ་ཕྲོད་བས་མཁས་པ་མ་བྱུང་ཞེས་བསྔགས་པ་མཛད་པ་དང་། རྗེ་ས་པཎ་གྱི་ཚད་མའི་སློབ་དཔོན་དཱནཤཱིལ་ཞུ་བས་ཀུང་ཁྱེད་པཎྜིཏ་ཆེན་པོའི་ཆེན་པོར་གྱུར་ཞེས་བསྔགས་བརྗོད་མཛད་དོ།།

མདོར་ན་ཆོས་རྗེ་ཞབས་ཀྱིས་རྒྱ་བལ་གྱི་པཎ་ཆེན་བཅུ་གཉིས་དང་བོད་ཀྱི་ལོ་ཙཱ་བ་བཞི། མཁས་བཙུན་ཉེར་གཅིག་ཙམ་ལ་བསྟེན་ནས་མདོ་སྔགས་ཀྱི་ཆོས་དུ་མའི་དབང་ཁྲིད་མན་ངག་ཞུས།

རྒྱ་གར་ནས་བོད་དུ་ལོག་ཕེབས་པའི་རྗེས་ནག་ཚོའི་གུང་ཐང་ཡང་ཐོག་དགོན་གྱི་གདན་སར་ནན་གྱིས་ཞུ་བ་ཕུལ་བས་ལོ་བཞི་བཞུགས། དགུང་ལོ་དྲུག་ཅུ་རེ་གཉིས་པར་ཐང་པོ་ཆེར་ཕེབས་ཏེ་ཆོས་འཁོར་རྒྱ་ཆེན་བསྐོར། དེ་ནས་ཡར་ཀླུང་། འཇུ་ཕྱུ། བདེ་ཕུག འཁོར་རྡོ་དགོན། རི་གུད་བཅས་སུ་ཕེབས་ཏེ་ཆོས་མང་པོ་གསུངས། ས་སྐྱར་གདན་དྲངས་ཏེ་ཤར་བ་ཡེ་ཤེས་རྒྱལ་མཚན་དང་དཔོན་ཆེན་ཀུན་དགའ་བཟང་པོ་སྣ་མར་བཀུར། དེ་ནས་ལྷེའུ་ར་ཉིད་དུ་སྐུ་ཆེ་ལྷག་མ་བཞུགས་ཏེ་ཆོས་མང་དུ་གསུངས་ནས་སྟོད་རུང་གི་གདུལ་བྱ་མང་པོ་ཞིག་ལ་ཐར་པའི་ས་བོན་བསྐྲུན་པ་སོགས་བསྟན་འགྲོའི་དོན་རྒྱ་ཆེན་པོ་མཛད་དེ་དགུང་ལོ་རེ་བརྒྱད་པ་རབ་བྱུང་བཞི་པའི་ཤིང་ཕོ་བྱི་ལོ་སྤྱི་ལོ་ ༡༣༦༤ ལོར་ལྷེའུ་ར་དེ་ཉིད་དུ་དགོངས་པ

ཆོས་དབྱིངས་སུ་གཤེགས་ཚུལ་བསྟན་ཏོ། །

ཆག་ལོའི་སློབ་མ་ཤཱཀྱའི་དགེ་བསྙེན་ཆོས་དཔལ་དར་དཔྱང་གིས་མཛད་པའི་ཆག་ལོའི་རྣམ་ཐར་བླ་མའི་གསུང་དྲི་མ་མེད་པར་བསྒྲིགས་པ་ཞེས་པར་ཆག་ཆོས་རྗེ་དཔལ་གྱི་མཚན་བརྗོད་འགྲེལ་པ་དང་། བོད་དུ་སྟོན་མ་གྱུར་བའི་གཙུག་ལག་དགུའི་རྒྱུད་ཀྱི་འགྱུར། སྒྲོན་གསལ་ལེའུ་དང་པོའི་ཊཱི་ཀཱ་སོགས་མཛད་ཅེས་གསལ་ཡང་དེང་གི་ཆར་མིག་ལམ་དུ་འགྱུར་བ་གཅིག་ཀྱང་མེད། འོན་ཀྱང་ཆག་ཆོས་རྗེ་དཔལ་གྱིས་འགྱུར་ཞུས་མཛད་པའི་གཞུང་མི་ཉུང་བ་ཞིག་མཐོང་རྒྱུ་ཡོད། ཨུ་རུ་སུའི་མཁས་པ་རོ་རིག་ཞུ་བས་ཆག་ལོའི་འགྱུར་ཞེར་བའི་ཐུགས་གཞུང་སུམ་ཅུ་ཙམ་གྱི་མཚན་སྡེ་དགེའི་བསྟན་འགྱུར་དཀར་ཆག་ལས་ཟུར་བཏོན་བྱས་པ་མངོན་ཡང་ཆོས་ཚན་འགའ་ཞིག་ཆོས་རྗེ་དཔལ་དེ་ཉིད་ཀྱིས་བསྒྱུར་ཡིན་མིན་ལ་ཐེ་ཚོམ་གྱི་གཞིར་སྣང་ངོ་།

འགོས་ལོའི་དེབ་སྔོན་དུ།[1] ཆོས་རྗེ་འདིའི་རྣམ་ཐར་ཐུང་ངུ་ཞིག་བསྟན་པ་ལས། "ཆག་ཆོས་རྗེ་དཔལ་གྱིས་ཀྱང་དང་པོར་རྗོག་མྱུན་ནེའི་སློབ་མ་རྗེ་བཙུན་ཧྲག་པ། དེའི་སློབ་མ་གུང་ཐང་གི་རྗེ་བོ་ལྷ་མགོན་པོ་དཔལ་ཞེས་པ་ལ་གསང་འདུས་འགོས་ལུགས་བསླབས། དེ་ནས་བལ་པོའི་པཎྜིཏ་ཉི་མའི་དབང་པོའི་འོད་ཟེར་ལ་སོགས་པར་མཉན་ནས། རྒྱུད་འགྲེལ་དང་། མདོར་བྱས། རིམ་ལྔ་སོགས་ཀྱི་འགྱུར་ཡང་བཅོས། སྒྲོན་གསལ་གྱི་བསྡུས་པའི་དོན་དང་ཊཱི་ཀཱ་ཡང་མཛད་དེ་སྐྱེ་བོ་མང་པོ་ལ་ཕན་པར་མཛད་དོ།" །ཞེས་གསུངས་སོ།

ཆག་ལོ་ཆོས་རྗེ་དཔལ་གྱིས་བསྒྱུར་ཞུས་གཞུང་གི་མཚན་བྱང་།

༡ འཕགས་པ་མཚན་ཡང་དག་པར་བརྗོད་པའི་མདོར་བཤད་བདུད་རྩིའི་ཐིགས་པ། ༡༣༩༥

---

1 དེབ་སྔོན་དེབ་དང་པོ། ཤོག ༤༤༥ སི་ཁྲོན་མི་རིགས་དཔེ་སྐྲུན་ཁང་། ༡༩༨༤

ནག་ཚོ་ལོ་ཙཱ་བ་ཚུལ་ཁྲིམས་རྒྱལ་བའི་རྣམ་ཐར།

ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་འགྲེལ་གསུམ་པ་ལས་ཀྱི་སྒྲིབ་པ་རྣམ་པར་སྦྱོང་བའི་ཆོ་ག་བཤད་པ་ཞེས་བྱ་བའི་གཞུང་འདི་དཔལ་མར་མེ་མཛད་ཡེ་ཤེས་ཀྱིས་མཛད་ཅིང་ནག་ཚོ་ལོ་ཙཱ་བ་ཚུལ་ཁྲིམས་རྒྱལ་བས་བོད་སྐད་དུ་ཕབ་སྒྱུར་མཛད། ལོ་ཙཱ་བ་ཆེན་པོ་ ༡༠༡༡ ལོར་མངའ་རིས་ཇོང་གི་ཡུལ་གུང་ཐང་དུ་སྐུ་བལྟམས། གདུང་རྒྱུད་ནག་ཚོ་ཡིན་པས་ནག་ཚོ་ཞེས་པའི་མཚན་ཆགས། འདུལ་བའི་ཆོས་ལ་ཤིན་ཏུ་གཅེས་སྤྲས་སུ་མཛད་པས་མཁས་པ་རྣམས་ཀྱིས་འདུལ་འཛིན་པ་ཞེས་བསྔགས། དགུང་ལོ་ཆུང་ངུའི་དུས་ནས་སློབ་གཉེར་ལ་བརྩོན་འགྲུས་བྱ་བ་ལ་སྤྲོ་ཞིང་བློ་གྲོས་ཀྱང་ཤིན་ཏུ་བཀྲ། རབ་ཏུ་བྱུང་ཞིང་མཚན་ཚུལ་ཁྲིམས་རྒྱལ་བ་ཞེས་གསོལ། ལོ་ཙཱ་བ་ཆེན་པོ་རྒྱལ་བརྩོན་འགྲུས་སེང་གེ་ལས་ཆོས་མངོན་པ་མཛོད་གསན་པས་མངོན་པ་ལ་མཁས་པར་གྱུར། དགུང་ལོ་ཉེར་བདུན་སྤྱི་ལོ་ ༡༠༣༧ ལོར་ལྷ་བླ་མ་བྱང་ཆུབ་འོད་ཀྱི་བཀའ་ལྟར་རྒྱ་གར་འཕགས་པའི་ཡུལ་ནས་ཇོ་བོ་རྗེ་དཔལ་ལྡན་ཨ་ཏི་ཤ་གདན་འདྲེན་ཆེད་ཕེབས། སྤྱི་ལོ་ ༡༠༤༣ ལོར་ཇོ་བོ་རྗེ་བོད་མངའ་རིས་ཕྱོགས་སུ་གདན་འདྲེན་ཞུས། དེ་ལྟར་ཇོ་བོ་རྗེ་བྲལ་མེད་མི་ལོ་བཅུ་དགུའི་རིང་ཚུལ་བཞིན་དུ་བསྟེན། ཇོ་བོ་རྗེ་སྟོད་ཐང་ནས་མངའ་རིས་ཕྱོགས་སུ་འབྱོན་ཁར་ཇོ་བོས་བསླབ་བྱ་མང་དུ་མཛད། དམ་ཚིག་གསུམ་བཀོད་པའི་སྐུ་ཕྱག་ཏུ་བཟུང་ནས་བྱིན་རླབས་མཛད། འདུལ་བ་མདོ་རྩ་དང་། གསང་འདུས་རྒྱུ་དཔེ་དང་། འགྲོ་

ཆོས་སུ་ཐུན་མོང་མ་ཡིན་པའི་སྤྱན་རས་གཟིགས་ཀྱི་སྒྲུབ་སྐོར་སོགས་སྤྲས་ཆོས་ཉི་ཤུ་གནང་སྟེ་ལུང་བསྟན་མང་དུ་མཛད། ཇོ་བོ་རྗེ་ཉིད་ཀྱི་སྐུ་མཐེ་བོང་ཙམ་ཞིག་ཤིང་སེང་ལྡིང་ལ་བྲིས་ཏེ་ག་འུར་བཅུག་ནས་ལོ་ཙྪ་བའི་དཔུང་པར་བཏགས། ཕྱིས་ལོ་ཙྪ་བས་ཇོ་བོའི་བཀའ་བཞིན་སྒྲུབ་པ་ཉམས་ལེན་མཛད་པས། འཇམ་དཔལ་རྡོ་རྗེ། སྒྲོལ་མ། ཡི་གེ་དྲུག་པ་རྣམས་ཞལ་གཟིགས། ཉམས་རྟོགས་ཁྱད་པར་ཅན་རྒྱུད་ལ་འཁྲུངས། ལན་ཅིག་ཇོ་བོ་རྗེ་གུང་ཐང་ན་བཞུགས་པའི་ཚེ་ཇོ་བོས་ནག་ཚོ་ལ དཔལ་གསང་བ་འདུས་པའི་འཕགས་ལུགས་ཀྱི་བརྒྱུད་པ་ན་རོ་པའི་སློབ་མ་ཁ་ཆེའི སློབ་དཔོན་ཀྲྀཥྞ་ཀར་ལ་ཡོད་པ་དེ་ཞུ་བར་འདོད་གསུངས། ནག་ཚོས་བལ་ཡུལ་ན་གནས་པའི་ནང་པའི་པཎྜིཏ་ཞིག་ལ་ན་རོ་པའི་སློབ་མ་སློབ་དཔོན་ཀྲྀཥྞ་ཀར་ཞུ་བ་ཞིག་བལ་ཡུལ་ན་བྱོན་ཆེ་ང་ལ་འཕྲིན་ཐོངས་ཞེས་མངགས། ཕྱིས་སུ་སློབ་དཔོན་ཀྲྀཥྞ་ཀར་བལ་ཡུལ་དུ་འབྱོར་ཡོད་པའི་འཕྲིན་ཞིག་ལོ་ཙྪ་བ་ནག་ཚོར་སྙེ་ཐང་དུ་བྱུང་ནའང་དེའི་སྐབས་ཇོ་བོ་རྗེ་ཏ་ཙང་སྐུ་བགྲེས་པས་ནག་ཚོ་བླ་མ་དང་འབྲལ་མ་ཕོད། གསང་འདུས་འཕགས་ལུགས་ཀྱི་བརྒྱུད་པ་འདིའང་གསན་ཐུབ་པ་ཞིག་བྱུང་མ་སོང་དགོངས་སྟེ་སེམས་ཏ་ཙང་གདུང་སྟེ་མྱ་ངན་གྱིས་སྐུ་ལུས་ཞན་པར་གྱུར་བ་ལ། ཇོ་བོ་རྗེས་ནག་ཚོའི་གདུང་བ་དེ་མཁྱེན་ཏེ་ན་རོ་པའི་སློབ་མ་དེ་ལས་གསང་འདུས་འཕགས་ལུགས་ཞུ་བར་བཞུད་ཅིག་ཅེས་ནན་གྱིས་བསྐུལ་བ་དང་། ཁྱད་པར་དུ་ཐེག་པ་ཆེན་པོའི་དགེ་བའི་བཤེས་གཉེན་དང་ཕྲད་པར་དཀའ་བའི་རྒྱུ་མཚན་མང་དུ་གསུངས། མཐར་ནག་ཚོ་བཞུད་པ་ལ་ཐག་བཅད་དེ་ཇོ་བོར་སྐྱབས་འཇུག་གཉིས་ཀྱང་ཞུས། དང་པོར་གལ་ཏེ་ང་ཚུར་ལོག་སྐབས་ཇོ་བོ་དང་མི་མཇལ་བ་བྱུང་ཚེ་ངའང་དགའ་ལྡན་དུ་ཇོ་བོའི་ཞབས་དྲུང་སྐྱེ་བའི་སྨོན་ལམ་དང་། གཉིས་པར་རང་གི་ཕ་ཡུལ་དུ་ཇོ་བོའི་སྐུ་གཅིག་བྲིས་ཡོད་པ་དེར་རབ་གནས་མཛད་རྒྱུའི་སྐྱབས་འཇུག་ཞུས་པ་བཞིན་ཇོ་བོས་ཞལ་བཞེས་བཟང་པོ་ཐོབ་རྗེས་ནག་ཚོ་བལ་ཡུལ་དུ་གསང

འདུས་འཕགས་ལུགས་ཞུས་པར་བསྐྱོད། ལོ་རྒྱུས་འདི་ལ་ཕྱིས་ཀྱི་བཀའ་གདམས་པ་རྣམས་ཀྱིས་ཇོ་བོ་རྗེ་མྱ་ངན་ལས་འདའ་ཁར་འབྲལ་ཕོད་པ་ལོ་ཙྪ་བ་ལ་དམ་ཚིག་མེད་ཟེར་ནས་ཁ་བཏང་བ་བྱུང་ནའང་། དེ་ལ་དགེ་བཤེས་ཤ་ར་བས། དེང་སང་གི་བདེ་སྐྱིད་དམ་དུམ་འདི་ནག་ཚོའི་དྲིན་ཡིན་གསུངས་ཏེ་ཁ་ཟེར་བའི་བཀའ་གདམས་པ་རྣམས་ལ་བཀའ་བཀྱོན་གནང་།

ལོ་ཙྪ་བས་ཇོ་བོ་ལས་གཞན་པའི་རྒྱ་གར་གྱི་པཎ་ཆེན་རྟན་ཨཱ་ཀ་ར། ཤཉིཥྡ། ནག་པོ་དམ་ཚིག་རྡོ་རྗེ་སོགས་མང་དུ་བསྟེན་ནས་རྒྱ་གཞུང་གི་བཀའ་བསྟན་བརྒྱ་དང་ལྔ་བཅུ་ལྷག་བོད་སྐད་དུ་ཕབ་སྒྱུར་དང་དག་ཞུས་མཛད། ཕྱི་ལོ་ ༡༠༥༥ ལོར་སྐུ་ཞི་བར་གཤེགས། ཁོང་གིས་མཛད་པའི་གསུམ་རྩོམ་མང་དུ་མཆིས་སྲིད་ཀྱང་། ད་ལྟའི་འཆར་མིག་གི་ལམ་དུ་གྱུར་པ་ཇོ་བོ་རྗེའི་བསྟོད་པ་བརྒྱད་ཅུ་པ་ལས་གཞན་མཇལ་རྒྱུ་མེད།

བརྒྱུད་འཛིན་གྱི་སློབ་མ་མང་དུ་བྱུང་བ་རྣམས་ལས། དབུས་སུ་གྲགས་ཆེ་ཞིང་ཕྱུལ་དུ་བྱུང་བ་རོང་པ་ཕྱག་སོར་བ་ཡིན་ཞིང་། འདི་ཉིད་ནི་མངོན་པར་ཤེས་པ་མངའ་ཞིང་རང་གི་སྐྱེ་བ་བཅུ་གསུམ་གྱི་ཚུལ་རྣམས་དྲན་ཞིང་ཡོད་པའི་སྐྱེས་ཆེན་ཞིག་ཡིན། ཐོག་མར་ཇོ་བོའི་གདམས་ངག་ཁོ་ན་རྩད་གཅོད་བཞིན་ཡོད་པ་ལ་ཕྱིས་ཇོ་བོའི་དངོས་སློབ་ཞང་བཙུན་ཡེར་བ་སོགས་བླ་མ་བཅུ་ཙམ་བསྟེན་ནས་ཇོ་བོའི་སྒྲུབ་པའི་གདམས་ངག་དང་། རྣམ་ཐར་རྣམས་ལ་རྩད་གཅོད་བྱེད་འགོ་ཚུགས། ཕྱིས་ཇོ་བོའི་དངོས་སློབ་ཙམ་མ་ཡིན་པ། ཇོ་བོ་དང་བྲལ་མེད་ལོ་བཅུ་དགུ་ཙམ་བསྟེན་པའི་ནག་ཚོ་ལོ་ཙྪ་བ་ཚུལ་ཁྲིམས་རྒྱལ་བ་མང་ཡུལ་དུ་བཞུགས་པའི་དྲུང་དུ་བྱོན། ཐོག་མར་ཇོ་བོའི་གསང་སྔགས་ཀྱི་གདམས་ངག་མང་པོ་ཞུས། ཕྱིས་ཕ་རོལ་ཏུ་ཕྱིན་པའི་སྒྲུབ་པའི་གདམས་པ་དང་ཇོ་བོའི་སྐུ་གསུང་ཐུགས་གསུམ་གྱི་ཆེ་བའི་ཡོན་ཏན་རྣམས་གསན། དེའི་ནང་ནས་བོད་དུ་སྤྱན་འདྲེན་ཚུལ་རྣམས་ཞུས་

པས་ཤིན་ཏུ་མཉེས་ནས་ཇོ་བོའི་ལོ་རྒྱུས་ཆེན་མོ་ལམ་ཡིག་དེའི་དུས་སུ་གསུངས། སྒྲུབ་པའི་གདམས་ངག་མ་ལུས་པ་གནང་རྗེས་ཕྱིས་སྒྲུབ་པ་མཛད་པས་ཐུགས་རྗེ་ཆེན་པོ་དངོས་སུ་ཞལ་མཇལ། རྗེས་སུ་འཛིན་པའི་སློབ་མ་མང་དུ་བྱུང་བ་ལས་ཡོངས་སུ་གྲགས་པའི་སློབ་མར་རོང་པའི་བུ་བཞི་ཞེས་བྱ་བ་བྱུང་། དེ་རྣམས་ནི། བྱ་བ་འདུལ་བ་འཛིན་པ། རོག་མཆིམས་ཤུ་བ། སྣར་སྲར་བ། དགེ་བཤེས་ཞུ་ལན་པ་དང་བཞིའོ། །ཀྱེ་ར་སྟོན་བརྗིད་ཀྱང་སློབ་མ་ཡིན་ཡང་། དགེ་བསྙེན་ཙམ་ཡང་མ་ཡིན་སྐབས་རོང་པའི་བུ་བཞིའི་གྲངས་ཀྱི་ཁོངས་སུ་མ་རྩིས་སོ།

ནག་ཚོ་ལོ་ཙྪ་བ་ཚུལ་ཁྲིམས་རྒྱལ་བས་བསྒྱུར་ཞུས་མཛད་པའི་གཞུང་གལ་ཆེ་འགའ་ཞིག་གི་མཚན་བྱང་།

ཁ་སྐོང་ལྷན་ཐབས་དང་པོ་སྤྱི་བཤགས་ཀྱི་སྙིང་བརྗོད།

སྤྱི་བཤགས་ཀྱི་གཞུང་སྤྱིའི་སྐོར།

སྤྱི་བཤགས་ནི་སྡིག་བཤགས་ཀྱི་གཞུང་བསྡུས་ལ་ཤིན་ཏུ་གལ་ཆེ་བའི་བསྟན་བཅོས་ཞིག་ཡིན། ཡོངས་གྲགས་ལ་གཞུང་འདི་སློབ་དཔོན་དཔའ་བོས་ཐུར་མ་སྤྱིགས་པའི་བསྟན་པ་ལ་ཞུགས་པའི་དུས་སུ་དཀོན་མཆོག་གསུམ་ལ་སྐྱབས་བ་བདབ་པའི་གཉེན་པོར་བཤགས་ཆོས་འདི་བརྩམས་ཞེས་བཤད་ཀྱང་། ཇོ་བོ་རྗེས་མཛད་པའི་ལྟུང་བ་བཤགས་པའི་ཆོ་ག་ཞེས་པའི་གཞུང་ཞིག་ཡོད་ཅིང་། དེ་དང་སློབ་དཔོན་ཧ་དབྱངས་ཀྱིས་མཛད་ཅེས་པའི་གཞུང་གཉིས་ཀྱི་བརྗོད་བྱ་མཚུངས་པ་ཅམ་གྱིས་མ་ཟད། ཕན་ཚུན་ཚིག་སྒྲོར་འདྲ་མཚུངས་དུ་མ་སྣང་རྒྱུ་འདུག་པས་ཀླུ་སྒྲུབ་ལ་ཁ་འཕངས་པའི་གཞུང་ཞིག་མིན་ནམ་སྙམ་མོ། །ལར་རྒྱ་གར་མཁས་པའི་གཞུང་ཆེ་ཆུང་རྣམས་སུ་དེའི་སྐོར་འགྲེལ་བརྗོད་ཟུར་ཙམ་ཡང་མེད་པ་མ་ཟད་འདི་ལ་རྒྱ་འགྲེལ་གཅིག་ཀྱང་མཐའ་རྒྱུ་མེད། བོད་འགྲེལ་འགའ་ཞིག་ཡོད་པ་ཐོས་ཀྱང་ད་ལྟ་ལག་སོན་དངོས་སུ་བྱུང་བ་དངུལ་ཆུ་ཡབ་སྲས་གཉིས་ལས་དངུལ་ཆུ་རྣམ་སྣང་གཞུང་འགྲེལ་མཛད་ཅིང་། དེ་ལ་སྲས་དབྱངས་ཅན་གྲུབ་པའི་རྡོ་རྗེས་ཞུས་དག་ཕྲན་བུ་བྱས་པ་ཞིག་དངུལ་ཆུའི་རྣམ་སྣང་འི་གསུང་འབུམ་ཅ་པར་མཐའ་རྒྱུ་ཡོད། གཞན་ཡང་ཆོས་མཛད་བླ་མ་བསྟན་པ་རབ་རྒྱས་སྒྲོལ་མས་མཛད་པའི་སྤྱི་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པ་ཞིག་ཡོད་པ་དཀར་ཆག་ཁག་ཏུ་མཚན་མཐའ་རྒྱུ་འདུག་ནའང་། ད་ལྟ་དངོས་སུ་ལག་སོན་མ་བྱུང་བར་ལྟག

གཞུང་དངོས་གཞིའི་གཞུང་དོན།

ཐོག་མར་སྒྲི་བཤགས་ཞེས་བྱ་བ་ནི། སོ་ཐར་བྱང་སེམས་གསང་སྔགས་ཀྱི་སྡོམ་པ་གསུམ་གའི་བཅས་རང་གི་ཁ་ན་མ་ཐོ་བའི་ཉེས་ལྟུང་སྤྱིར་བཤགས་པ་བསྟན་པའི་གཞུང་ཞིག་ཡིན་པས་ན་སྒྲི་བཤགས་ཞེས་བརྗོད་དོ།

གཞུང་གི་འགོར་ཨུ་ཏྟ་ལགས་ཞེས་པའི་ཚིག་ནི་སློ་སྔགས་བརྟེན་པའི་ཚིག་ཡིན་ཞིང་། དེས་སྔར་བག་མེད་ཀྱིས་སྤྱད་པའི་ཉེས་ལྟུང་ལ་ཤུགས་དྲག་གིས་འགྱོད་སེམས་དྲག་པོ་བསྐྱེད་དེ་མྱ་ངན་གྱི་མི་བཟོད་དེ་སློ་སྔགས་ཨུཏྟ་ཞེས་སྒྲོར་བ་ཡིན་པ་བཤད།

ཐོག་མར་བཤགས་པ་བྱེད་པ་པོའི་རྐྱེན་གྱི་ཉེས་ལྟུང་བཤགས་བྱའི་ཡུལ་བླ་མ་རྡོ་རྗེ་འཛིན་པ་དང་ཕྱོགས་བཅུའི་སངས་རྒྱས་དང་བྱང་སེམས་རྣམས་དང་དགེ་འདུན་འདུས་པ་རྒྱ་མཚོའི་ཚོགས་རྣམས་ལ་དགོངས་གསོལ་ཞུ་ཡུལ་རྣམས་བསྟན། དེ་ནས་ཉེས་པ་ཁས་བླང་བ་པོའི་རང་གི་མཚན་སྨོས་དགོས་པ་བདག་མིང་འདི་ཞེས་བགྱི་བ་བསྟན། གཞུང་དངོས་གཞིའི་བརྗོད་བྱ་ཡོངས་རྫོགས་བཤགས་བྱའི་སྡིག་པའི་ངོས་འཛིན་དང་བཤགས་པ་དངོས་གཉིས་བསྟན་པས། སྤྱི་མ་ལའང་གཉིས་ཏེ། ཉེས་ལྟུང་བསྡོ་བགྲང་རྒྱས་པ་དང་། དོན་བསྡུས་ཏེ་བརྗོད་པ་གཉིས། དང་པོ་ལ་སྒོ་དྲུག་གི་སྒོ་ནས་ངོས་འཛིན་པ་ལ། དུས། རྒྱུ། ལམ། ལས། ཡུལ། སྦྱོར་བ་བཅས་བསྡོམས་པས་དྲུག་གོ །

དང་པོ་དུས་ནི། ཉེས་པ་བརྩམས་པའི་འགོ་ཐོག་མ་འཁོར་བ་ཐོག་མ་མེད་པ་ནས། ད་ལྟ་ལ་ཐུག་གི་བར་དུ་ཞེས་པས་བསྟན།

གཉིས་པ་རྒྱུ་ནི། ཉོན་མོངས་པ་འདོད་ཆགས་དང་ཞེ་སྡང་དང་། གཏི་མུག་ཞེས་སོགས་དུག་གསུམ་གང་རུང་གིས་ཀུན་ནས་བླངས་ཏེ་བསགས་པ་ལ་བརྗོད།

གསུམ་པ་ལམ་ནི། ལུས་ངག་ཡིད་གསུམ་གང་རུང་གིས་བསགས་པ་ཞེས་པས་བསྟན།

བཞི་པ་ལས་ནི། **སྡིག་པ་མི་དགེ་བ་བཅུ་བགྱིས་པ་དང་ཞེས་པ་ནས། གསང་སྔགས་ཀྱི་དམ་ཚིག་དང་འགལ་བ་དང་** ཞེས་པའི་བར་གྱིས་ལུས་ངག་ཡིད་གསུམ་གྱི་སྒོ་ནས་བརྩམས་པའི་མི་དགེ་བ་བཅུའི་ལས་དང་། ཕ་མ་སོགས་བསད་པའི་མཚམས་མེད་པ་ལྔ་བྱས་པའི་ལས་དང་། བྱང་སེམས་ཉེ་གནས་དང་། རྒྱུན་དུ་ཞུགས་པ་དང་མ་དགྲ་བཅོམ་སུན་འབྱིན་པ་དང་། མཆོད་རྟེན་བཤིག་པ་དང་། དགེ་འདུན་གྱི་འདུ་སྒོ་འཕྲོགས་པའི་ཉེ་བ་ལྔའི་ལས་དང་། སོ་ཐར་རིགས་བརྒྱད་ཀྱི་སྡོམ་པ་གང་རུང་དང་འགལ་བ་དང་། བྱང་སེམས་ཀྱི་བསླབ་བྱ་རྩ་ལྟུང་བཅོ་བརྒྱད་དང་། ཉེས་བྱས་ཞི་དྲུག་སོགས་དང་འགལ་བ་དང་། གཞན་ཡང་རྩ་ལྟུང་བཅུ་བཞི་དང་། སྡོམ་པོ་བརྒྱད་སོགས་གསང་སྔགས་ཀྱི་དམ་ཚིག་དང་འགལ་བ་རྣམས་ཀྱི་ལས་བརྩམས་པ་རྣམས་བསྟན་ཏོ། །

ལྔ་པ་ཡུལ་ནི། **ཕ་དང་མ་ལ་མ་གུས་པ་དང་ཞེས་པ་ནས་སེམས་ཅན་ལ་གནོད་པའི་ལས་བགྱིས་པ་དང་** ཞེས་པའི་བར་གྱིས་ཕྱག་བྱ་བའི་ཡུལ་ཚེ་འདིའི་ཕ་མ་གཉིས་དང་འདུལ་བའི་སློབ་དཔོན། གསང་སྔགས་ཀྱི་དབང་འབོགས་པའི་རྡོ་རྗེ་སློབ་དཔོན་དང་། གཞན་ཡང་ཤེས་ཡོན་སློབ་འཁྲིད་གནང་མཁན་གྱི་སློབ་དཔོན་རྣམས་དང་། སྡོམ་པ་མཉམ་དུ་བླངས་པའི་གྲོགས་ཚངས་པར་མཚུངས་པ་སྤྱོད་པ་རྣམས་ལ་མ་གུས་པ་རྣམས་བཤགས་པར་བྱ་བའི་ཡུལ་ཡིན་ནོ། །གཞན་ཡང་དཀོན་མཆོག་གསུམ་ལ་གནོད་པའི་ལས་བརྩམས་པ་དང་། ལས་རྒྱུ་འབྲས་ཀྱི་རྣམ་གཞག་ལ་ཡིད་མ་ཆེས་ཏེ་དམ་ཆོས་སྤངས་པ་དང་། འཕགས་པའི་དགེ་འདུན་གཅིག་ཡན་ཆད་དང་སོ་སྐྱེའི་དགེ་འདུན་བཞི་ཡན་ལ་བསྐུར་བ་བཏབ་པ་དང་། སེམས་ཅན་གང་ཡང་རུང་བའི་ལུས་སྲོག་ལོངས་སྤྱོད་གནས་མལ་སོགས་ལ་གནོད

པའི་ལས་བགྱིས་པ་དང་། སོགས་སྨྲས་གོང་དུ་སྨོས་ཟིན་པའི་མི་དགེ་བ་བཅུ་པོ་རྣམས་ཀྱང་བཤགས་བྱའི་ཡུལ་དུ་བསྟན་ཏོ། །

དྲུག་པ་སྦྱོར་བ་ནི། སྡིག་པ་མི་དགེ་བའི་ཚོགས་བདག་གིས་བགྱིས་པ་དང་ཞེས་སོགས་རང་གི་ལུས་ངག་གཉིས་ཀྱིས་དངོས་སུ་བགྱིས་པ་དང་། ཁྱད་པར་དུ་ངག་གིས་གཞན་ལ་སྡིག་པའི་ལས་བྱེད་དུ་བཅུག་པ་དང་། ཡིད་ཀྱིས་གཞན་གྱིས་སྡིག་པའི་ལས་བྱས་པར་དགའ་སྒོམ་བྱས་པ་རྣམས་ཀྱང་བཤགས་པར་བྱ་བ་ཡིན་ནོ།།

གཉིས་པ་གཞུང་གི་ཉེས་ལྟུང་གི་དོན་བསྡུས་ཏེ་བསྟན་པ་ནི། **མདོར་ན་**ཞེས་པ་ནས་**ཅི་མཆིས་པ་ཐམས་ཅད་**ཅེས་པའི་བར་བསྟན། མངོན་མཐོ་དང་ངེས་ལེགས་ཀྱི་ཐོབ་བྱེད་ཀྱི་གེགས་ཀྱི་གཙོ་བོ་བཅས་རང་གི་ཁ་ན་མ་ཐོ་བའི་ཉེས་ལྟུང་རྣམས་ཡིན་པས། དེ་བཤགས་པའི་ཡུལ་མཆོག་བླ་མ་རྡོ་རྗེ་འཛིན་པ་ཆེན་པོ་རྣམས་ཀྱི་སྤྱན་སྔར་མཐོལ་བ་སྟེ་ཉེས་པ་སྒྲོག་པ་དང་བཤགས་པ་ནི་ཉེས་པ་ཁས་ལེན་པ་གཉིས་ཡིན་ལ། ཉེས་པ་འདི་འདྲ་སྔར་འཆབ་ཅིང་སྦེད་པ་ལ་འགྱོད་སེམས་དྲག་པོ་བསྐྱེད་དེ་མཐོལ་ཞིང་བཤགས་པ་དང་། ཕྱིན་ཆད་ཉེས་ལྟུང་འདི་འདྲ་ཡུལ་དུས་གནས་སྐབས་དབང་འཆི་བ་སྲོག་ལ་བབས་ཀྱང་མི་བྱེད་སྙམ་དུ་ཡིད་ལ་དམ་བཅའ་བརྟན་པོ་དང་བཅས་ཏེ་སྡོམ་སེམས་བླངས་པ་བསྟན་ཏོ། །འདི་ལྟ་བུའི་ཉེས་ལྟུང་རྣམས་མཐོལ་བཤགས་གྱུར་ན་བདག་མཐོ་རིས་དང་ཐར་པའི་བདེ་བ་ལ་རེག་པར་གྱུར་ཅིང་། མ་མཐོལ་མ་བཤགས་ན་ནི་མི་འགྱུར་བས་ངེས་པར་མཐོལ་བཤགས་བྱས་ཏེ་སྡོམ་སེམས་བསྐྱེད་པ་ལ་ཤིན་ཏུ་འབད་དགོས་པ་བསྟན་ཏོ།།

དེ་ལྟར་བྱང་ཆུབ་ཀྱི་ལྟུང་བ་བཤགས་པ་དང་སྤྱི་བཤགས་གཉིས་ཀྱི་གཞུང་སྤྱིའི་གླིང་བརྗོད་སྐོར་རེ་ཞིག་རྫོགས་སོ།། །།

བསྔོ་བ་དང་སྨོན་ལམ།

འཕགས་པའི་ཡུལ་དུ་མཁས་པའི་སར་གནས་པ། |
སྒྲ་སྐད་ཚོགས་བཞིན་བསྒྱུར་བ་ལས་འདས་ཀྱང་། |
ནང་པའི་གཙུག་ལག་རིག་པའི་གནས་ཀུན་ལ། |
ཁ་མཐར་སོན་པ་མཛུབ་མོའི་གྲངས་ཙམ་ཉིད། |

ནང་པའི་གསུང་རབ་དུ་མར་བློ་རྒྱས་པའི། |
མཁས་པའི་མཁས་མཆོག་དགའ་བྱེད་བདེ་བྱེད་ཀྱི། |
ཞབས་ལ་ཡུན་རིང་བསྟེན་ཏེ་འབད་པ་ཡིས། |
གླིང་བརྗོད་འགོད་པའི་སྐལ་བཟང་བདག་ལ་ཐོབ། |

སྔོན་གྱི་ལོ་པཎ་རྣམས་དང་མཁས་གྲུབ་ཀྱི། |
ཚད་ལྡན་གསུང་རབ་དུ་མའི་ལུགས་ཇི་བཞིན། |
གཞན་ཕན་རེ་བས་ཅུང་ཟད་གང་བཀོད་པར། |
ནོངས་ཤིང་འཁྲུལ་པའི་ཆ་ལ་བཟོད་པར་རིགས། |

བདག་དང་མཐའ་ཡས་སེམས་ཅན་ཐམས་ཅད་ཀྱི། |
ཐོག་མེད་ནས་བསགས་སྡིག་སྒྲིབ་ཅི་མཆིས་རྣམས། |
བདེ་གཤེགས་སོ་ལྔའི་མཐུ་དང་འཕྲིན་ལས་ཀྱིས། |
ཡོངས་སུ་བྱང་ཏེ་སྐུ་གཉིས་མངོན་འགྱུར་ཤོག |

བྱམས་བརྩེའི་སེམས་དང་ལྷག་བསམ་གྱིས་བསླན་པའི། |
བྱང་ཆུབ་ལྟུང་བཤགས་གླིང་བརྗོད་འདི་བཀོད་པའི། |
བསོད་ནམས་ཚོགས་ཀྱིས་འགྲོ་དྲུག་སེམས་ཅན་ཀུན། |
བདེ་གཤེགས་སོ་ལྔའི་གོ་འཕང་མཆོག་ཉིད་ཤོག |

འདི་ནས་ཤི་འཕོས་གྱུར་མ་ཐག །
སུམ་ཅུ་རྩ་གསུམ་སྐྱེ་འགྱུར་ཏེ། །
རྗེ་བཙུན་བྱམས་པ་མགོན་ཉིད་ལས། །
ཆོས་རྒྱུན་ཆར་བཞིན་སྐལ་སྙེད་ཤོག །

ཅེས་ལྷ་གཙུག་ལག་སློབ་གཉེར་ཁང་གི་ཉམས་ཞིབ་སྡེ་ཚན་ཁོངས་ཀྱི་ཉམས་ཞིབ་པ་བློ་བཟང་རྡོ་རྗེ་རབ་གླིང་གིས་མདོ་བསྡུན་དུ་མ་དང་གསུང་འབུམ་ཁག་དུ་མར་གཞི་ཁུངས་བྱས་ཏེ་བསྡུན་པ་སྤྱི་དང་དོན་གཉེར་ཅན་དུ་མར་ཕན་པའི་སླད་དུ་ཕྱི་༢༠༠༡ ཟླ་༧ ཚེས་༢༨ བོད་རྒྱལ་ལོ་༢༡༢༨ ཟླ་བ་༦ ཚེས་༨ ཉིན་བཟང་པོར་འབྲི་ཁྱལ་དགེ་བའོ།།

འཇམ་དབྱངས་ཆོས་རྗེ་བཀྲིས་དཔལ་ལྡན་གྱིས།

ཡན་ལག་བདུན་པའི་ཆོ་ག་མཛད་པའི་ཚེ། །
སངས་རྒྱས་སུམ་ཅུ་སོ་ལྔ་མདུན་སུམ་དུ། །
རང་རང་སྐུ་ཡི་དབྱིབས་དང་ཕྱག་མཚན་སོགས། །
ཇི་བཞིན་རྒྱུན་དུ་གཟིགས་པ་ཆོས་ཀྱི་རྗེ། །
དཔལ་ལྡན་བླ་མའི་ཞབས་ལ་གསོལ་བ་འདེབས། །

རྗེའི་གསང་བའི་རྣམ་ཐར།

भूमिका

मङ्गलस्तुतिः

स्वर्णाभाद्भुतदेहिनः सुगुणिनो युक्ताः शरीरैर्वरै-
धर्मान् बिम्बवदेव चाथ निखिलान् येऽज्ञासिषुर्दर्पणे ।
ये ज्ञानेन युताश्च वै करुणया लोकस्य संरक्षका
बुद्धांस्तान् प्रणमाम्यहं सुपरमश्रेष्ठांश्च लोकेश्वरान् ।। १ ।।

सिञ्चन्तं वपुषा विनेयनिकरं सल्लक्षणव्यञ्जनैः
सत्त्वानां वचनैर्मनांसि मधुरैराकर्षयन्तं तथा ।
जानानं करुणैर्जनांश्च निखिलांश्चित्तैर्विनेयानपि
शाक्येन्द्रं प्रणमाम्यहं सुमनसा शौद्धोदनिं तं सुतम् ।। २ ।।

प्रतीत्यजं योऽकथयद् द्वितीयधर्मस्य चक्रेऽथ च सूत्रसारम् ।
यां शून्यतां मध्यमकेति षट्सु नागार्जुनस्याङ्घ्रिमहं नमामि ।। ३ ।।

सूत्रतन्त्रमहाविद्याविज्ञं मञ्जुश्रियोऽथ च ।
तारायाः कृपया नौमि जितारिं लब्धवाङ्मयम् ।। ४ ।।

उवोढ यः शासनमार्यदेशे
प्रावर्धयत् तद्धिमभोटदेशे ।
सद्धर्ममूचे त्रिजनेषु 'कादम्'
श्रीज्ञानदीपङ्करमानमामि ।। ५ ।।

सततजगद्धितशासनयोर्द्रष्ट्रे सुखशान्तिनायकाय ।
गूढोदारविचाराय श्वेतपद्मधराय नमः ।। ६ ।।

अज्ञाननाशिगूढोदारधर्माननोद्घाटकेभ्यश्च
दुर्गमशब्दार्थबोधक-कृपालुगुरुभ्योऽस्तु नमः ।। ७ ।।

पातो जातस्त्रिविधगरलक्लेशहेतोर्भवेऽस्मिन्-
अज्ञानात् पिण्डमयमभवच्चापदो देशनायाः।
पिण्डापद्वारणकृदिति यच्चास्ति निर्देशसूत्रं
तत् त्रिस्कन्धं परमसुभगं चार्थयुक्तं ब्रवीमि।।८।।

मङ्गलस्तुति हिन्दी भावार्थ

पिघले हुए स्वर्ण की आभा से मिश्रित आश्चर्यजनक काय वाले श्रेष्ठ काय से युक्त जिसने समस्त धर्मों को दर्पण (में प्रतिबिम्ब) की भाँति यथावत् अवगत कर लिया है तथा जो ज्ञान एवं करुणा से संयुक्त और जगत् के त्राता हैं। ऐसे परम श्रेष्ठ त्राता बुद्धों को प्रणाम (करता हूँ)।। १।।

लक्षण एवं व्यञ्जनों (से युक्त) काय से विनेयजनों की संतति को सिञ्चित करने वाले, मधुर वचनों से सत्त्वों के मन को मोहित करने वाले तथा करुणा चित्त से विनेयजनों की सन्तति को जानने वाले शुद्धोदन के पुत्र उस शाक्य इन्द्र को प्रणाम (करता हूँ)।। २।।

द्वितीय धर्मचक्र (प्रवर्तन) के सूत्रों के सारार्थ, साक्षात् देशना के विषय गम्भीर प्रतीत्यसमुत्पाद एवं शून्यता को जिसने षड् माध्यमिक वर्ग में संक्षिप्त रूप से वर्णित किया है, ऐसे महारथी आचार्य नागार्जुन के चरणों में प्रणाम।। ३।।

सूत्र, तन्त्र सहित महाविद्याओं में पारंगत एवं मञ्जुश्री व तारादेवी के साक्षात्कार से साक्षात् वचनों को प्राप्त करने वाले आचार्य जितारि को प्रणाम।। ४।।

आर्यदेश में शासन का भार ग्रहण करने वाले, हिमवत् भोट देश में शासन का पुनरुत्थान करने वाले तथा सद्धर्म को तीन पुरुषों में संगृहीत कर देशना करने वाले कादम्पा के प्रवर्तक आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान को प्रणाम।। ५।।

शासन एवं जगत् के सतत हित द्रष्टा, इस धरातल के परम शान्ति एवं सुख के उत्तम नाविक तथा गम्भीर व उदार ज्ञान से सम्पन्न करुणा के महासागर श्वेतपद्मधर को प्रणाम।। ६।।

> अज्ञान रूपी जाल राशि का निराकरण करने वाले, अनवगम्य गम्भीर एवं उदार धर्म के द्वार को खोलने वाले, अनवबोध शब्द तथा अर्थ का बोध कराने वाले, महान कृपालु गुरुजनों को प्रणाम।। ७।।
>
> तीन प्रकार के विष रूपी क्लेशों के वश से संसार में पतन हुआ। आपत्तिदेशना विधि न जानने के कारण पिण्ड पिण्डरूप हुआ। पिण्डस्वरूपी आपत्ति की प्रतिदेशना करने वाले निर्देश सूत्र, उस श्रेष्ठ त्रिस्कन्धसूत्र के अर्थ को कहने जा रहा हूँ।। ८।।

निदान

त्रिस्कन्ध सूत्र के निदान का प्रतिपादन करने में विशेषत: दो बातें ज्ञातव्य हैं, यथा—(१) सामान्य और (२) विशेष।

(१) सामान्य—कर्म और क्लेशों से सन्तप्त सभी विनेयजन इस भवसागर में डूबते-उतराते रहते हैं, जिसका मुख्य कारण (हेतु) त्रिविष (राग, द्वेष और मोह) हैं। इन त्रिविषों के कारण वे (सामान्य जन) अनेक प्रकार के अकुशलों (पापों) का संचय करते हैं। उन (पापों) के विशोधन का उपाय न जानने के कारण वे (पाप) वृद्धिंगत होते रहते हैं। फलत: वे इस षड्गतियों वाले संसारचक्र में निरन्तर भ्रमण करते रहते हैं।

इतर धर्मों में पापविशोधन का संक्षिप्त परिचय

क्या इन सभी अकुशल पापों के विशोधन का उपाय है? निश्चित रूप से है। सर्वप्रथम इसके विशोधन के बारे में बौद्धमत को उपस्थित करने से पूर्व अन्य धर्मों में प्रदर्शित विशोधन के उपायों की चर्चा करना चाहता हूँ। सम्प्रति इस संसार में लगभग दो हजार से अधिक धार्मिक सम्प्रदाय हैं। किन्तु इन सभी मतों को यहाँ प्रस्तुत करना असम्भव है। अत: प्रमुख रूप से कुछ बड़े धर्मों के विचार प्रस्तुत किये जा रहे हैं। जिनमें प्रमुख रूप से ईसाई, मुस्लिम एवं हिन्दू धर्म हैं। पूर्वोक्त इन सभी धर्मों में पुनर्जन्म मानने वाले और न मानने वाले इस तरह दो प्रकार के विभाग हैं। इनमें से तत्काल पुनर्जन्म न मानने वाले ईसाई धर्मानुयायी और इस्लाम धर्मानुयायी हैं। ये लोग अपने द्वारा कृत, अनुमोदित या संचित पापकर्मों का प्रत्येक रविवार के दिन प्रभु यीशु की प्रतिमा के समक्ष उच्चारण करते हुए तथा मन में उनका स्मरण करते हुए प्रतिदेशना करते हैं। जिसकी वजह से उनकी पाप से विशुद्धि हो जाती है—ऐसा वे मानते हैं।

इस्लाम मत के अनुसार एक दिन में कम से कम पाँच बार नमाज अदा करना चाहिए। वह लोग सूर्यास्त तथा सूर्य उदय के पूर्व और दिन में तीन बार नमाज अदा करते हैं। हर शुक्रवार के दिन मस्जिद में उपस्थित होकर समस्त हिंसा आदि पापकार्यों का त्याग करने के लिए वे पूर्ववर्ती छह दिनों में किये गये पापकर्मों की देशना करते हैं और नमाज अदा करते हैं।

पुनर्जन्म और कर्म-कर्मफल में विश्वास करने वाले हिन्दू धर्म के अनुसार पूर्वकृत संचित पापकर्मों की देशना करते समय मुख से मन्त्रोच्चार करते हैं और चित्त में तीन प्रधान देवों (ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश) का स्मरण करते हैं। पूजा करते समय वे प्राय: गीता, रामायण, महाभारत और पुराण आदि का पाठ करते हैं तथा पापशुद्धि की प्रार्थना करते हैं। इससे उनके अनुसार प्रायश्चित या पापविशोधन हो जाता है—ऐसा वे मानते हैं। बहुत से लोगों की यह मान्यता है कि गङ्गा आदि पवित्र नदियों में स्नान करने, तीर्थयात्रा करने तथा व्रत, उपवास आदि का अनुष्ठान करने से पापों की विशुद्धि हो जाती है।

बौद्ध धर्म में पापविशोधन के लिए उपदिष्ट बुद्धवचन

पुनर्जन्म, कर्म-कर्मफल एवं त्रिरत्न (बुद्ध, धर्म एवं संघ) को उत्तम शरण मानने वाले बौद्ध मतानुयायियों के पापविशोधन के लिए अनेक द्वार हैं। वैसे सामान्यतया तथागत शाक्यमुनि द्वारा उपदिष्ट धर्म के द्वारा विनेयजनों के चित्त को मृदु एवं कर्मण्य बनाया जाता है तथा उसमें मोक्ष के बीज को स्थापित किया जाता है। उनके द्वारा उपदिष्ट सूत्रों का पाठ करना, चित्त में उनका स्मरण करना एवं अनुमोदन करना आदि से कल्पों से संचित कर्म और क्लेशों के आवरण का प्रहाण होता है तथा इस जन्म में संचित किये गये समस्त अकुशल कर्म स्वत: विशुद्ध हो जाते हैं। परन्तु स्वयं तथागत ने विशेषतया संचित अकुशल पापकर्मों के विशोधन के लिए कुछ विशेष सूत्रों की देशना की है। जिसमें **आर्य-सद्धर्मसुवर्णप्रभाससूत्र, आर्यचतुर्धर्मनिर्देशसूत्र, आर्य-उपालिपरिपृच्छा** के अन्तर्गत **त्रिस्कन्धसूत्र, आर्यप्रज्ञापारमितावज्रच्छेदिकासूत्र, आर्यकर्मावरणविशोधनसूत्र, आर्यकुशलाकुशलकर्मविपाकनिर्देशसूत्र, आर्यमहायानविस्तृतत्रिस्कन्धसूत्र, आर्य-कर्मावरणप्रतिप्रश्रब्धिसूत्र, आर्यमहाकर्मावरणसूत्र, आर्यमहामोक्षनिर्देशकौकृत्य-पापविशोधनसूत्र, आर्यगगनगर्भसूत्र, आर्यषण्मुखीधारणी, आर्यअधिगम-महत्त्वसूत्र** एवं **शुभशुभकार्यकारणाभावनिर्देशसूत्र** प्रमुख हैं। इन सभी सूत्रों में से पापविशोधन और आवरणविशोधन के लिए सर्वश्रेष्ठ लघु एवं संक्षिप्त विधि का

प्रतिपादन करने वाला सूत्र आर्यउपालिपरिपृच्छा के अन्तर्गत आने वाला **त्रिस्कन्धसूत्र** ही है। यह प्रतिदेशना, प्रातिमोक्ष, बोधिसत्त्व तथा तान्त्रिक संवर और समय आदि तीनों की समस्त प्रतिदेशनाओं में परिशोधन करने में उत्तम है—ऐसा विनयसूत्र, बोधिसत्त्वचर्यावतार और सार-अलङ्कार आदि में कहा गया है। यह त्रिस्कन्धसूत्र उपालिपरिपृच्छासूत्र के अन्तर्गत "**तत्रेयं (आपत्ति-)देशना**" से प्रारम्भ करके "**उपैमि सर्वान् शरणं कृताञ्जलिः**" पर्यन्त उपदिष्ट है।

(२) विशेष।

आर्यत्रिस्कन्धसूत्र का पूर्वनिदान

आर्यउपालिपरिपृच्छासूत्र[१] में कहा गया है—"शारिपुत्र ने (भगवान् से) निवेदन किया। क्या बोधिसत्त्व लोग राग से भयभीत नहीं होते हैं, या द्वेष अथवा मोह से भयभीत नहीं होते हैं? भगवान् तथागत ने कहा—**बोधिसत्त्वानां शारिपुत्र द्वे महासावद्ये आपत्ती। कतमे द्वे? द्वेषसहगता मोहसहगता चेति। तत्र शारिपुत्र प्रथमा आपत्तिर्दशवर्गे ऋजुकेन देशयितव्या। हस्तापत्तिः पञ्चवर्गे गुर्वी देशयितव्या। स्त्रिया हस्तग्रहणं चक्षुर्दर्शनम् दुष्टचित्तापत्तिरेकपुद्गलस्य द्वयोर्वा शारिपुत्र तां गुर्वीं दर्शयेत्। पञ्चानन्तर्यसमन्वागतापत्तिर्बोधिसत्त्वेन स्त्र्यापत्तिर्दारिकापत्तिर्हस्तापत्तिः स्तूपापत्तिः संघापत्तिः। तथा अन्याश्चापत्तयो बोधिसत्त्वेन पञ्चत्रिंशतां बुद्धानां भगवतामन्तिके रात्रिंदिवं एकाकिना गुर्व्यो देशयितव्याः।**

अर्थात् हे शारिपुत्र, बोधिसत्त्वों को दो प्रकार के महान् अवद्यों से दोष होता है। कौन दो दोष हैं? प्रथम द्वेष से युक्त होने से और दूसरा मोह से युक्त होने से दोष होता है। हे शारिपुत्र, ये दोनों बोधिसत्त्वों के लिए महासावद्य हैं। शारिपुत्र, राग के द्वारा अवद्य तो लघु है, परन्तु उससे मुक्त होने में विलम्ब होता है। द्वेष का अवद्य बड़ा है, परन्तु उससे मुक्त होने में शीघ्रता होती है और मोह सावद्य भी बड़ा है, परन्तु उससे भी मुक्त होने में विलम्ब होता है। ये सब इसलिए हैं, क्योंकि हे शारिपुत्र, राग तो लता की भाँति संसार में प्रतिसन्धि का बीज है। द्वेष का शीघ्र प्रहाण किया जा सकता है, परन्तु वह दुर्गति में पतन का हेतु है। मोह से विमुक्त होना कठिन है, क्योंकि वह महानरक में पतन का हेतु है। शारिपुत्र, बोधिसत्त्व के प्रथम घोर राग-आपत्ति दोष की प्रतिदेशना दस व्यक्तियों के समूह (गण) के समक्ष सत्यनिष्ठा के साथ करनी चाहिए। स्त्री के हस्तस्पर्श से

---

१. द्र०-शिक्षासमुच्चय में उद्धृत, पृ० ९४ मिथिला संस्करण, १९६० ।

होनेवाली घोर आपत्ति की प्रतिदेशना पाँच व्यक्तियों के गण के समक्ष करना चाहिए। क्लिष्ट चित्त से युक्त होकर चक्षु द्वारा (स्त्री को) देखने से उत्पन्न दोष की प्रतिदेशना एक व्यक्ति अथवा दो के समक्ष करना चाहिए। बोधिसत्त्व के द्वारा किये गये पञ्च आनन्तर्य कर्म से उत्पन्न आपत्ति की देशना तथा स्त्रीजनित आपत्ति, बालिका से उत्पन्न आपत्ति, हस्त-आपत्ति, स्तूप-आपत्ति, संघ-आपत्ति तथा अन्य घोर आपत्तियों की प्रतिदेशना ३५ बुद्धों के समक्ष अकेले दिन और रात करनी चाहिए।'' तत्पश्चात् त्रिस्कन्ध-सूत्र का मूल पाठ प्रारम्भ होता है, जो ''**तत्रेयं देशना-अहमेवंनामा**'' से लेकर ''**उपैमि सर्वान् शरणं कृताञ्जलिः**'' तक समाप्त होता है।

आर्यत्रिस्कन्धसूत्र का पूर्वनिदान का भावार्थ

त्रिस्कन्धसूत्र के पूर्वनिदान का कुछ अर्थ स्पष्ट करना चाहता हूँ। १. बोधिसत्त्वों में प्रमुख घोर आपत्ति। २. प्रतिमोक्ष में प्रमुख घोर आपत्ति। ३. प्रज्ञप्ति सावद्य अथवा प्रकृतिसावद्य में यथायोग घोर आपत्ति।

१. गृहस्थ बोधिसत्त्व तथा प्रव्रजित बोधिसत्त्व की द्वेष से युक्त घोर आपत्ति, जिसमें पाराजयिक एवं द्वेषकृत पर्युत्थान से युक्त दोष संगृहीत है। उस दोष की दस पुद्गलगण के समक्ष प्रतिदेशना करनी चाहिए तथा उसी प्रकार विशेषकर प्रव्रजित बोधिसत्त्व के द्वारा भी द्वेष से उत्पन्न प्राणातिपात आदि चार आपत्तियों की दस पुद्गलों के गण के समक्ष देशना करनी चाहिए।

२. राग के द्वारा होनेवाली आपत्ति, को बोधिसत्त्वयान में घोर आपत्ति नहीं माना जाता है, किन्तु प्रातिमोक्ष विनय में घोर आपत्ति मानी जाती है। इसमें स्त्रीहस्तस्पर्श से होनेवाली संघादिशेष आपत्ति की पाँच पुद्गलों के गण के समक्ष देशना करनी चाहिए। राग से युक्त क्लिष्ट चित्त से स्त्री को देखने से होनेवाली लघु आपत्ति की भी एक पुद्गल अथवा दो के समक्ष प्रतिदेशना करना कहा गया है।

३. पाँच आनन्तर्य कर्म जो प्रकृतिसावद्य हैं, वे न केवल घोर दोष हैं, अपितु बोधिसत्त्वों की मूल आपत्ति हैं। इस कारण यह बोधिसत्त्व शिक्षा में भी घोर आपत्ति कही गई है। स्त्री से उत्पन्न घोर आपत्ति काममिथ्याचार है, जो हस्तग्रहण से उत्पन्न घोर आपत्ति से भी अधिक है। स्त्री एवं बालिका से जनित

अशेष आपत्तियाँ राग से युक्त होने से प्रतिमोक्षविनय में घोर आपत्तियाँ हैं। लघु पञ्च आनन्तर्य सभाग कर्म प्रातिमोक्ष विनय एवं बोधिसत्त्व शिक्षा दोनों में घोर आपत्ति है, वे इस प्रकार हैं—स्तूप का विनाश, संघ के द्रव्य का अपहरण, माता अर्हती को काममिथ्याचार द्वारा दूषित करना, नियत बोधिसत्त्व होनेवाले पुद्गल का प्राणातिपात करना तथा स्रोत आपन्न का प्राणातिपात करना। **अभिधर्मकोश**[१] में कहा गया है, यथा—

> **दूषणं मातुरर्हन्त्या नियतिस्थस्य मारणम् ।**
> **बोधिसत्त्वस्य शैक्षस्य संघायद्वारहारिका ।।**
> **आनन्तर्यसभागानि पञ्चमं स्तूपभेदनम् ।**

और भी, पूजाद्रव्य एवं संघद्रव्य का अपहरण आदि करना प्रकृतिसावद्य नामक घोर आपत्ति है। इस प्रकार की घोर आपत्तियों का आचरण हो जाने पर दस, पाँच, दो और एक पुद्गलगण के समक्ष प्रतिदेशना करने से पूर्णतया विशोधन नहीं होता है, अपितु ३५ बुद्धों के आश्रय को उपाय बनाकर त्रिस्कन्धसूत्र का पाठ करने से उन आपत्तियों से विशोधन होगा। जैसे **बोधिचर्यावतार**[२] में भी कहा गया है—"**शेषापत्तिशमस्तेन......**" अर्थात् अवशिष्ट आपत्तियों का उस (विधि) से शमन होता है। यहाँ अवशिष्ट के तात्पर्य द्विविध है, यथा—(१) आर्य उपालिपरिपृच्छासूत्र के अनुसार प्रज्ञप्तिसावद्य आपत्तियों के लिए पूर्वोक्त पुद्गलों के समक्ष प्रतिदेशना करने से तथा शेष आपत्तियाँ इस त्रिस्कन्धसूत्र का पाठ करने से विशुद्ध होती हैं—ऐसा कहा गया है। (२) आर्यमैत्रेयसिंहनादसूत्र के अनुसार प्रकृतिसावद्य आपत्तियों का विधि-विधान के द्वारा विशोधन करना चाहिए तथा शेष पापविपाकों की प्रतिदेशना करने से विशोधन होता है—ऐसा कहा गया है।

राग से युक्त आपत्तियाँ प्रातिमोक्षविनय में घोर आपत्तियाँ होती हैं, परन्तु बोधिसत्त्वयानविनय में उन्हें उतना घोर नहीं माना जाता है, जैसे **आर्यउपालि-परिपृच्छासूत्र**[३] में उपालि के द्वारा भगवान् से आपत्तियों के घोर एवं लघु के सन्दर्भ में प्रश्न पूछे जाने पर भगवान् ने कहा—यदि किसी महायान में सम्यक् रूप से प्रविष्ट बोधिसत्त्व को गङ्गानदी की बालू की भाँति राग से युक्त असंख्य आपत्तियाँ

---

१. अभि० को० ४:१०६-१०७ ।
२. बोधिचर्यावतार-५ : १८ कारिका ।
३. देगे संस्करण सं० ६८, सूत्र, रत्नकूट वर्ग, 'च' पुद्, पृ० २६ क २ ।

लग जाएं और किसी (बोधिसत्त्व) में द्वेष से युक्त एक मात्र आपत्ति लग जाए। फिर भी बोधिसत्त्वयान की प्रधानता होने के कारण इन दोनों प्रकार की आपत्तियों में से द्वेष से युक्त आपत्ति ही अत्यन्त घोर होती है, क्योंकि द्वेष आपत्ति सत्त्वों का परित्याग करती है और राग से युक्त आपत्ति सत्त्वों का संग्रह करती है। केवल इतना ही नहीं, राग से युक्त अवद्य यद्यपि अवद्यों में लघु है, फिर भी उससे मुक्त होना कठिन है। द्वेष से युक्त आपत्ति महान् अवद्य है, किन्तु उससे मुक्त होना सरल है। मोह से युक्त आपत्ति भी महावद्य है और उससे मुक्त होना भी कठिन है। कौशल्यरहित बोधिसत्त्व को राग-आपत्ति लग जाने का भय रहता है। उसे द्वेष-आपत्ति का भय नहीं रहता। इसके विपरीत उपायकुशल बोधिसत्त्व विचार करता है कि राग-आपत्ति भयस्थान नहीं है, द्वेष-आपत्ति भय का स्थान है। अतः हे उपालि, राग से युक्त समस्त आपत्तियाँ आपत्ति नहीं हैं। जैसे—

विशेषतस्तुबोधिसत्त्वापत्तीनां गुर्वीणां लघ्वीनां देशना आर्योपालिपरिपृच्छायामुक्ता[१]—का पुनर्गुर्वी मूलापत्तिः? सामान्यतस्तु तत्रोक्तम्। सचेदुपाले महायानसंप्रस्थितो बोधिसत्त्वो महासत्त्वो गङ्गनदीवालिकोपमा रागप्रतिसंयुक्ता आपत्तीरापद्येत, यां चैकतो द्वेषसंयुक्तामापत्तिमापद्येत बोधिसत्त्वयानं प्रमाणीकृत्य। इयं ताभ्यो गुरुतरा आपत्तिर्येयं द्वेषसंयुक्ता। तत्कस्य हेतोः? योऽयं द्वेष उपाले सत्त्वपरित्यागाय संवर्तते। रागः सत्त्वसंग्रहाय संवर्तते, तत्र उपाले यः क्लेशः सत्त्वसंग्रहाय संवर्तते, न तत्र बोधिसत्त्वस्य छलं न भयम्। पेयालं। तस्मात्तर्हि त्वामुपाले याः काश्चन रागप्रतिसंयुक्ता आपत्तयः, सर्वास्ता अनापत्तय इति वदामि। कोऽत्राभिप्रायः? सत्त्वसंग्राहकस्यैव पूर्वमेव विशेषितत्वात्। अध्याशयकृपावतो ह्ययमुपदेशः। यस्मादनन्तरमाह—तत्र उपाले येऽनुपायकुशला बोधिसत्त्वास्ते रागप्रतिसंयुक्ताभ्य आपत्तिभ्यो बिभ्यति। ये पुनरुपायकुशला बोधिसत्त्वास्ते द्वेषसंप्रयुक्ताभ्य आपत्तिभ्यो बिभ्यति न रागप्रतिसंयुक्ताभ्य इति।।

यदि ऐसा है तो पूर्व में स्त्री की वजह से लग जाने वाली आपत्तियों और पाराजयिक आदि आपत्तियों को घोर आपत्ति क्यों कहा गया है? उत्तर—प्रातिमोक्ष विनय की प्रधानता से ऐसा कहा गया है। उपायकुशल बोधिसत्त्वों के द्वारा आपत्तिवस्तु का आचरण करने पर भी आपत्ति नहीं लगती है, अपितु वह शीघ्र बोधि प्राप्त करने का उपाय बन जाता है, जैसे—**उपायकौशल्यसूत्र**[२] में कहा है—

---

१. द्र०-शिक्षासमुच्चय में उद्धृत, पृ० ९२, मिथिला संस्करण, १९६० ।
२. द्र०-शिक्षासमुच्चय में उद्धृत, पृ० ९२, मिथिला संस्करण, १९६० ।

तद्यथा कुलपुत्र मन्त्रविद्याधरः पुरुषो राज्ञा पञ्चपाशकेन बन्धनेन बद्धः स्यात्। स यदा काङ्क्षेत प्रक्रमणाय, तदैकमन्त्रविद्याबलेन सर्वबन्धनानि छित्त्वा प्रक्रमेत्। एवमेव कुलपुत्र उपायकुशलो बोधिसत्त्वः पञ्चभिः कामगुणै रतिं विन्दति, तैश्चाकीर्णो विहरति। यदा च पुनराकाङ्क्षते, तदा प्रज्ञाबलाधीनेन एकेन च सर्वज्ञताचित्तेन सर्वकामगुणान् प्रभुज्य च्युतो ब्रह्मलोक उपपद्यत इति।

इसके बारे में विस्तार से उपायकौशल्यसूत्र में उक्त ज्योतिर्मणिकावदान का अवलोकन करें[१] तथा संक्षिप्त रूप से शिक्षासमुच्चय में पापदेशना परिच्छेद का अवलोकन करें।

महायान में आपत्तियों से विशुद्धि के उपाय

श्रावक और प्रत्येकबुद्ध यान में भिक्षु, भिक्षुणी, परिव्राजक एवं उपासक को जब गम्भीर आपत्तियाँ लग जाती हैं तो वे शीलच्युत एवं शीलभ्रष्ट माने जाते हैं और भविष्य में उनका फल भोगे बिना वे बच नहीं पाते हैं। भगवान् ने भी कहा है कि अनेकों कल्प बीत जाने पर भी किये हुए शुभ अथवा अशुभ कर्मों का फल अवश्य भोगना पड़ता है, यथा—

न प्रणश्यन्ति कर्माणि कल्पकोटिशतैरपि ।
सामग्रीं प्राप्य कालं च फलन्ति खलु देहिनाम्[२] ।।

---

१. उपायकौशल्यसूत्रे ज्योतिर्माणवकं द्वाचत्वारिंशद्वर्षसहस्रब्रह्मचारिणमधिकृत्य सप्तमे पदे स्थितस्य कारुण्यमुत्पद्येत। किं चाप्यहमिदं व्रतं खण्डयित्वा निरयपरायणः स्याम्, तथाप्युत्सहेऽहं नैरयिकं दुःखं प्रतिवेदयितुम्। अथ चेयं स्त्री सुखिता भवतु। मा कालं करोतु। इति हि कुलपुत्र ज्योतिर्माणवकः पश्चान्मुखो निवर्त्य तां स्त्रियं दक्षिणेन पाणिना गृहीत्वैवमाह—उत्तिष्ठ भगिनि यथाकामकरणीयस्ते भवामीति । सोऽहं कुलपुत्र महाकारुण्यचित्तोत्पादेनेत्वरेण कामोपसंहितेन दशकल्पसहस्राणि पश्चान्मुखमकार्षम्। पश्य कुलपुत्र यदन्येषां निरयसंवर्तनीयं कर्म, तदुपायकुशलस्य बोधिसत्त्वस्य ब्रह्मलोकोपपत्तिसंवर्तनीयमिति ।।

पुनरत्रैवाह—यदि बोधिसत्त्व एकस्य सत्त्वस्य कुशलमूलं संजनयेत्तथारूपां चापत्तिमापद्येत यथारूपया आपत्त्या आपन्नया कल्पशतसहस्रं निरये पच्येत, उत्सोढव्यमेव भगवन् बोधिसत्त्वेनापत्तिमापत्तुं तच्च नैरयिकं दुःखम्। न त्वेन तस्यैकस्य सत्त्वस्य कुशलं परत्यिक्तुमिति।।

पुनरत्रैवाह—इह कुलपुत्र उपायकुशलो बोधिसत्त्वो यदा कदाचित्कस्मिंश्चित्पापमित्रवशेनापत्तिमापद्येत, स इतः प्रतिसंशिक्षते—न मयैभिः स्कन्धैः परिनिर्वापयितव्यम्। मया पुनरेवं संनाहः संनद्धव्यः—अपरान्तकोटिः संसरितव्या सत्त्वानां परिपाचनहेतोरिति। न मया चित्तदाहः करणीयः। यथा यथा संसरिष्यामि तथा तथा सत्त्वान् परिपाचयिष्यामि। अपि त्वेतां चापत्तिं यथाधर्मं प्रतिकरिष्यामि। आयत्यां संवरमापत्स्ये। सचेत्कुलपुत्र प्रव्रजितो बोधिसत्त्वः परिकल्पमादाय सर्वाश्चतस्रो मूलापत्तीरतिक्रमेत्, अनेन चोपायकौशल्येन विनोदयेत्, अनापत्तिं बोधिसत्त्वस्य वदामीति।

द्र०-शिक्षासमुच्चय, अष्टमपरिच्छेद, पृ० ९३, दरभंगा संस्करण १९६० ।

२. मध्यमकशास्त्रे परीक्षा १७, पृ० १३८, बौद्ध भारती, १९८९ ।

अतः इस सूत्र को आधार पर सत्त्व को अपने किये हुए कर्म का फल अवश्य भोगना होता है—ऐसा उन लोगों का निश्चित मत है।

किन्तु महायान में अकुशल कर्म का फल देने से पूर्व नष्ट किया जा सकता है, जैसे तथागत ने स्वयं **उपालिपरिपृच्छासूत्र**[१] में कहा है—

इह उपाले महायानं संप्रस्थितो बोधिसत्त्वः सचेत्पूर्वाह्णकालसमये आपत्तिमापद्यते, मध्याह्नकालसमये सर्वज्ञताचित्तेनाविरहितो विहरेत्, अपर्यन्त एव बोधिसत्त्वस्य शीलस्कन्धः। सचेन्मध्याह्नकालसमये आपत्तिमापद्यते, सायाह्नकालसमये सर्वज्ञताचित्तेनाविरहितो भवेत्, अपर्यन्त एव बोधिसत्त्वस्य शीलस्कन्धः। एवं यामे यामे विधिरुक्तः। एवं ह्युपाले सपरिहारा शिक्षा महायानसंप्रस्थितानां बोधिसत्त्वानाम्। तत्र बोधिसत्त्वेन नातिकौकृत्यपर्युत्थानमुत्पाद्यम्, नातिविप्रतिसारिणा भवितव्यम्। सचेत्पुनः श्रावकयानीयः पुद्गलः पुनः पुनरापत्तिमापद्येत, नष्टः श्रावकस्य पुद्गलस्य शीलस्कन्धो वेदितव्यः।। इति।।

अर्थात् हे उपालि, महायान में प्रविष्ट बोधिसत्त्व यदि पूर्वाह्ण काल में आपत्ति से युक्त होता है और मध्याह्न काल में वह सर्वज्ञताचित्त से अविरहित रहते हुए विहार करता है तो उसका शीलस्कन्ध खण्डित नहीं होता। इसी प्रकार यदि वह मध्याह्न काल में आपत्ति से युक्त होता है और सायंकाल सर्वज्ञताचित्त से युक्त होकर विहार करता है तो उसका शीलस्कन्ध अखण्डित ही रहता है। इसी प्रकार याम (प्रहर) याम में पापों से विशुद्ध हो जाता है। इस तरह हे उपालि, महायान में प्रविष्ट बोधिसत्त्वों की शिक्षा पापों के परिहार के साथ उपदिष्ट है। इसलिए बोधिसत्त्व को अत्यधिक कौकृत्य (पश्चात्ताप) का उत्पाद नहीं करना चाहिए तथा अधिक पश्चात्ताप करनेवाला नहीं होना चाहिए तथा अधिक पश्चात्ताप करनेवाला नहीं होना चाहिए। किन्तु यदि श्रावकयान में प्रविष्ट पुद्गल बार-बार आपत्तियों से युक्त होता है तो उस श्रावक पुद्गल का शीलस्कन्ध नष्ट हो गया है—ऐसा जानना चाहिए[२]।

आर्यत्रिस्कन्धसूत्र का प्रारम्भ

आचार्य नागार्जुन विरचित **त्रिस्कन्धसूत्र टीका**[३] में इस सूत्र का प्रारम्भिक इतिहास इस प्रकार उल्लिखित है। यथा—एक बार जब भगवान् बुद्ध

---

१. द्र०-शिक्षासमुच्चय में उद्धृत, पृ० ९९, मिथिला संस्करण, १९६० ।
२. द्र०-उपालिपरिपृच्छासूत्र, शिक्षासमुच्चय में उद्धृत, पृ० ९९, मिथिला संस्करण १९६० ।
३. देगे संस्करण सं० ४००५, शास्त्र, सूत्र टीका वर्ग, 'जि' पुट, पृ० १७८ ख २ ।

विद्यमान थे, उस समय उनके शिष्यों में 'कौतुक' आदि ३५ आदिकर्मिक बोधिसत्त्वों ने पिण्डपात के लिए राजगृह की ओर प्रस्थान किया। एक मद्यविक्रेता का पुत्र मार्ग में घूम रहा था। वह बालक इन बोधिसत्त्वों की बिना जानकारी के उनके पैरों तले दब कर मर गया। इस कारण इस आपत्ति की प्रतिदेशना के लिए आर्य उपालि ने भगवान् बुद्ध से निवेदन किया। तब भगवान् बुद्ध ने इस त्रिस्कन्धसूत्र की देशना की—ऐसा कहा गया है।

कुछ **अन्य विद्वान्** कहते हैं कि राजगृह के पुरोज (धातुजात) नामक एक ब्राह्मण ने ३५ मछुवारों को मिथ्यामार्ग की देशना की। इस कारण दूसरे जन्म में ब्राह्मण सहित वे समस्त मछुवारे पैंतीस सिर वाले मछली के रूप में उत्पन्न हुए। उनकी आपत्ति के विशोधन के लिए भगवान् बुद्ध ने इस त्रिस्कन्धसूत्र की देशना दी। ऐसा कहा जाता है, किन्तु आचार्य नागार्जुन ने अपनी त्रिस्कन्धसूत्र टीका में इसे **आर्यरत्नकूटसूत्र** का वचन नहीं माना है।

अन्य विद्वानों का कहना है कि पाँच सौ मछुवारों की मुक्ति के लिए भगवान् बुद्ध ने इस त्रिस्कन्धसूत्र की देशना दी है। इसके फलस्वरूप बाद में समस्त मछलियों सहित वे समस्त मछुवारे तुषित लोक में उत्पन्न हुए।

मैंने **आर्य-उपालिपरिपृच्छासूत्र** का आदि से अन्त तक अवलोकन किया है, परन्तु इस त्रिस्कन्धसूत्र का पूर्वोक्त इतिहास मुझे कहीं उपलब्ध नहीं हुआ। सम्भवतः भगवान् बुद्ध ने बाद में उपालिपरिपृच्छासूत्र से त्रिस्कन्धसूत्र का यह अंश निकाल कर इसकी देशना की होगी। उस समय सम्भवतः इसका निदान अवश्य कहा गया होगा।

मैंने अन्य आर्य महायान त्रिस्कन्धसूत्र, जो इस त्रिस्कन्धसूत्र से बहुत अधिक विस्तृत और भिन्न हैं, उसका अध्ययन किया, किन्तु उसमें भी यह इतिहास उपलब्ध नहीं हुआ। **उपालिपरिपृच्छासूत्र** में भगवान् बुद्ध ने अनेक बोधिसत्त्वों को बोधि प्राप्त होने के पश्चात् सत्त्वों के कल्याण के लिए क्या-क्या कार्य करना चाहिए—ऐसा पूछा। ऐसा पूछने पर सभी बोधिसत्त्वों ने अपने-अपने विचार प्रकट किये। अन्त में शारिपुत्र ने बोधिसत्त्वों के आपत्ति से च्युत होने का कारण पूछा, यथा—क्या वे राग से च्युत होते हैं, द्वेष से या मोह से च्युत होते हैं। तब भगवान् ने कहा—शारिपुत्र, बोधिसत्त्वों के सावद्य आपत्तिदोष दो प्रकार के हैं, यथा—द्वेषयुक्त एवं मोहयुक्त। शारिपुत्र ये दोनों बोधिसत्त्वों के महा-आपत्ति-दोष

हैं। शारिपुत्र, राग दोष लघु है, किन्तु उससे मुक्ति में विलम्ब होता है। द्वेष अवद्य (आपत्ति) महादोष है, किन्तु उससे पुद्‌गल शीघ्र मुक्त होता है। मोह अवद्य (आपत्ति) भी महादोष है और उससे भी मुक्त होने में विलम्ब होता है, क्योंकि शारिपुत्र, राग तो संसार रूपी लता में जकड़े हुए व्यक्ति की प्रतिसन्धि का बीज है। द्वेष का शीघ्र त्याग किया जा सकता है, परन्तु वह दुर्गति में पतन का हेतुभूत है। मोह से विमुक्त होना आसान नहीं है, क्योंकि यह आठ महानरकों में पतन का हेतु है। अतः शारिपुत्र, बोधिसत्त्व को प्रथम (राग) आपत्ति की दश व्यक्तियों के समक्ष प्रतिदेशना करनी चाहिए। हस्त के स्पर्श से जनित गुरु आपत्ति की प्रतिदेशना पाँच व्यक्तियों के समक्ष करनी चाहिए तथा क्लिष्ट चित्त से स्त्री को हस्त से छूने या चक्षु द्वारा दर्शन से उत्पन्न लघु आपत्ति की एक या दो व्यक्तियों के समक्ष देशना करनी चाहिए।

बोधिसत्त्व के द्वारा किए गए पञ्च आनन्तर्य कर्म की आपत्ति तथा स्त्री-आपत्ति, बालिका-आपत्ति, हस्त-आपत्ति, स्तूप आपत्ति एवं संघ-आपत्ति तथा अन्य घोर आपत्तियों की देशना पैंतीस बुद्धों के समक्ष अकेले रात-दिन करना चाहिए। तत्पश्चात् त्रिस्कन्धसूत्र का मूल प्रारम्भ होता है, जो "**तत्रेयं देशना**....से लेकर "**उपैमि सर्वान् शरणं कृताञ्जलिः**" तक समाप्त होता है।

इसके आगे भगवान् तथागत ने शारिपुत्र से कहा—इस प्रकार पैंतीस बुद्धों आदि के समक्ष पापदेशना करने से समस्त पापों से परिशुद्धि करना चाहिए। इस प्रकार पापविशुद्धि करनेवालों को भगवान् तथागत बुद्ध का दर्शन होगा, जो सत्त्वों की मुक्ति में सहायक होगा।

अन्त में कहा गया है—"हे बोधिसत्त्वों, इन बुद्धों का नाम ग्रहण करने और जप करने से तथा त्रिस्कन्धधर्मपर्याय का रात-दिन में तीन बार पाठ करने से समस्त आपत्तियों से मुक्त होकर आप लोगों को समाधि प्राप्त होगी।"

अतः इस सूत्र का पर्यवलोचन करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि इस सूत्र की देशना करने से पूर्व कोई अतिरिक्त कारण या पृष्ठभूमि नहीं है। यह सूत्र मात्र बोधिसत्त्वों की आपत्ति से परिशुद्धि के लिए शारिपुत्र द्वारा पूछे गए प्रश्न के उत्तर के रूप में उपदिष्ट है।

आर्यत्रिस्कन्धसूत्र का परिचय

यह सूत्र पूर्व में कथित की भाँति उपालिपरिपृच्छासूत्र के अन्तर्गत है। इस सूत्र को भोट देशवासी बौद्धों में अनेक नामों से जाना जाता है, यथा—

बोधिसत्त्वापत्तिदेशना, इस शब्द को संक्षिप्त करने पर '**आपत्ति-देशना**' भी कहा जाता है। इसका तात्पर्य आदिकर्मिक बोधिसत्त्वों को आपत्ति लग जाने पर उसकी प्रतिदेशना किस प्रकार की जाती है—इसे दर्शाने के लिए इसका प्रतिपादन किया गया है। **शिक्षासमुच्चय** में कहा गया है—

"विशेष रूप से बोधिसत्त्वों की गुरु और लघु आपत्तियों की देशना होने से आपत्तिदेशना कहा गया है—ऐसा **उपालिपरिपृच्छा** में कहा गया है"[१]।

कुछ विद्वान् इसे **पापदेशनासूत्र** कहते हैं, क्योंकि इसका पाठ करने से समस्त पापों का परिक्षालन हो जाता है—ऐसा वे मानते हैं।

अन्य अनेक विद्वान् इसे **त्रिस्कन्धसूत्र** कहते हैं, क्योंकि इस सूत्र में तीनों स्कन्धों का उल्लेख है, जो इस प्रकार हैं—शरणगमन स्कन्ध, पापदेशना स्कन्ध एवं परिणामना स्कन्ध।

कुछ लोग इसे कौकृत्य देशनासूत्र कहते हैं और कुछ **चतुर्बलकौकृत्य-देशनासूत्र** भी कहते हैं तथा पैंतीस बुद्धों के समक्ष पापदेशनासूत्र भी कहते हैं।

चाहे जो भी हो अधिकतर विद्वान् इस सूत्र से त्रिस्कन्धसूत्र के रूप में परिचित हैं। इसका संस्कृत मूल उपलब्ध है। यह शिक्षासमुच्चय के आठवें परिच्छेद पापदेशना में उपलब्ध है। परन्तु यह जिस उपालिपरिपृच्छासूत्र का अंश है, वह उपालिपरिपृच्छासूत्र संस्कृत में मूल रूप से अनुपलब्ध है।

इसे त्रिस्कन्धसूत्र कहने का कारण इसका अभिधेय है। क्योंकि इसमें तीनों स्कन्धों को परोक्ष रूप में दिखाया गया है। जैसे कि **उपालिसूत्र** में कहा गया है—"जो बोधिसत्त्व रात-दिन उन पैंतीस तथागतों के नाम का धारण एवं पाठ करते हैं और इस त्रिस्कन्धधर्मपर्यायसूत्र का पाठ करते हैं, वे आपत्तिकौकृत्य पाप से विशोधित होते हैं और समाधि का लाभ करते हैं। ऐसा पापविशोधन और समाधि का लाभ सभी श्रावक और प्रत्येकबुद्धों के लिए असम्भव[२] है।"

---

१. विशेषतः बोधिसत्त्वापत्तीनां गुर्वीणां लघ्वीनां देशना आर्योपालिपरिपृच्छायामुक्ता।
द्र०-उपालिपरिपृच्छासूत्र, शिक्षासमुच्चय में उद्धृत, पृ० ९२, दरभंगा संस्करण, १९६० ।

२. न शक्यं सर्वश्रावकप्रत्येकबुद्धनिकायैरापत्तिकौकृत्यस्थानं विशोधयितुम्, यद् बोधिसत्त्वस्तेषां बुद्धानां भगवतां नामधेयधारणपरिकीर्तनेन रात्रिन्दिवं त्रिस्कन्धधर्मपर्यायप्रवर्तनेनापत्ति-कौकृत्यान्निःसरति समाधिं च प्रतिलभते।
द्र०-उपालिपरिपृच्छासूत्र, शिक्षासमुच्चय में उद्धृत, अष्टमपरिच्छेद, पापशोधन, पृ० ९५ (दरभंगा-संस्करण १९६०)।

एक अन्य त्रिस्कन्धसूत्र स्वतन्त्र रूप से भोट कंग्युर सूची में उपलब्ध होता है, जिसका पूरा नाम '**आर्यमहायानत्रिस्कन्धसूत्र**'[१] है, जो उपर्युक्त सूत्र से विस्तृत है। उसमें भी तीनों स्कन्ध उल्लिखित हैं, लेकिन अधिकतर अभिधेय उपर्युक्त सूत्र से भिन्न हैं। इस विस्तृत सूत्र में पापदेशना, अनुमोदना तथा परिणामना तीनों स्कन्ध अलग-अलग प्रतिपादित हैं, यथा उसमें कहा गया है—

"ये सभी पापदेशनाएं हैं, इसलिए इसे पापदेशना स्कन्ध कहा गया है"।

"कुलपुत्र, ये तो भगवान् बुद्ध के द्वारा उपदिष्ट अवद्यरहित अनुमोदना है"।

"कुलपुत्र, यह भी बोधिसत्त्वों की अवद्यरहित परिणामना है, इस प्रकार आर्य मञ्जुश्री कुमारभूत के द्वारा त्रिस्कन्ध की परिणामना का उपदेश दिया गया है"। यह विस्तृत त्रिस्कन्धसूत्र भी संस्कृत में अनुपलब्ध है।

स्वतन्त्र त्रिस्कन्धसूत्र तथा आपत्तिदेशना आर्यत्रिस्कन्धसूत्र में अन्तर

स्वतन्त्र आर्य महायान त्रिस्कन्धसूत्र तथा आर्य उपालिपरिपृच्छासूत्र के अन्तर्गत गृहीत आपत्तिदेशना त्रिस्कन्धसूत्र के बीच क्या अन्तर है? ऐसी जिज्ञासा होने पर इन दोनों में अनेक अन्तर (भेद) परिलक्षित होते हैं। १. विस्तृत एवं संक्षिप्त भेद। स्वतन्त्र त्रिस्कन्धसूत्र विस्तृत है और उपालिपरिपृच्छासूत्र में गृहीत त्रिस्कन्धसूत्र संक्षिप्त है। २. आपत्तिदेशना त्रिस्कन्धसूत्र के प्रश्नकर्त्ता शारिपुत्र हैं तथा शंका उत्थापन करने वाले आर्य उपालि हैं। विस्तृत त्रिस्कन्धसूत्र के विषय के प्रवर्तक आर्य मञ्जुश्री कुमारभूत हैं, जिसका भगवान् बुद्ध ने अनुमोदन किया है। ३. संक्षिप्त त्रिस्कन्धसूत्र रत्नकूटसूत्र के अन्तर्गत संगृहीत है, जबकि विस्तृत त्रिस्कन्धसूत्र सूत्रवर्ग के अन्तर्गत है।

ग्रन्थ के अभिधेय में भी कुछ भेद हैं, जैसे—आपत्तिदेशना त्रिस्कन्धसूत्र मूलरूप से बोधिसत्त्वों को आपत्ति लग जाने पर उसकी प्रतिदेशना करने के लिए कहा गया है और विस्तृत त्रिस्कन्धसूत्र गृहस्थ और परिव्राजक दोनों के दोषों की प्रतिदेशना के लिए उपदिष्ट है। संक्षिप्त त्रिस्कन्धसूत्र में उपदिष्ट पैंतीस बुद्ध, आठ अक्षण, प्रारम्भ में शरणगमन और अन्त में चित्तोत्पाद के लिए परिणामना आदि

---

१. देगे संस्करण सं० २८४, सूत्र, सूत्र टीका वर्ग, 'य' पुट्, पृ० ७३ क ४, ७५ क ५, ७७ क १ ।

विषय विस्तृत त्रिस्कन्धसूत्र में प्रतिपादित नहीं हैं। विस्तृत त्रिस्कन्धसूत्र में उपदिष्ट अनेक बुद्धों के चित्तोत्पाद का विवरण और अनेक बोधिसत्त्वों के नामों का उल्लेख संक्षिप्त त्रिस्कन्धसूत्र में उल्लिखित नहीं है। इस संक्षिप्त **त्रिस्कन्धसूत्र** में अनुमोदना के सन्दर्भ में मात्र एक ही पंक्ति उपदिष्ट है, यथा—"**सर्वं पुण्यमनुमोदयामि**"। किन्तु विस्तृत त्रिस्कन्धसूत्र में अनुमोदना के सन्दर्भ में विस्तार से कहा गया है। इस प्रकार का भेद होने पर भी दोनों सूत्रों में त्रिस्कन्ध समान रूप से प्रतिपादित हैं।

आर्यत्रिस्कन्ध का परिचय

तीनों स्कन्धों के परिचय के विषय में विद्वानों के विभिन्न विचार हैं। इन स्कन्धों की संख्या का परिचय '**बोधिचर्यावतार**[१]' में भी कराया गया है, यथा—

रात्रिन्दिवं च त्रिस्कन्धं त्रिष्कालं च प्रवर्तयेत् ।
शेषापत्तिशमस्तेन बोधिचित्तजिनाश्रयात् ।।

आर्य **उग्रदत्तपरिपृच्छासूत्र**[२] में भी कहा गया है कि स्नान करने के अनन्तर स्वच्छ वस्त्र धारण करके दिन में तीन बार और रात्रि में तीन बार त्रिस्कन्धसूत्र का पाठ करना चाहिए।

बोधिचर्यावतार के पूर्वोद्धृत श्लोक की व्याख्या करते हुए **आचार्य प्रज्ञाकरमति**[३] ने कहा है कि पापदेशना, पुण्यानुमोदना और परिणामना का एकत्र समूह 'त्रिस्कन्ध' है, यथा—"**त्रिस्कन्धः त्रयाणां स्कन्धानां पापदेशनापुण्यानुमोदनाबोधिपरिणामनानां समाहारः**"।

इसी प्रकार बोधिचर्यावतार की समस्त भारतीय टीकाओं तथा भोट विद्वानों की टीकाओं में उपर्युक्त तीनों स्कन्धों की ही गणना की गई है। परन्तु आचार्य शान्तिदेव ने स्वकृत **शिक्षासमुच्चय** में उपर्युक्त त्रिस्कन्ध की गणना भिन्न प्रकार से भी की है, जैसे—पापदेशना, पुण्यानुमोदना और अध्येषणा—यथा[४]—

---

१. द्र०-बोधिचर्यावतार, ५:९८ ।
२. आर्योग्रदत्तपरिपृच्छायां हि त्री रात्रेः त्रिर्दिवसस्य च शुचेः शुचिवस्त्रप्रावृतस्य च त्रिस्कन्धकप्रवर्तनमुक्तम्। द्र०-शिक्षासमुच्चय, पृ० १५२, दरभंगा-संस्करण १९६० ।
३. द्र०-बोधिचर्यावतार, ५:९८ की व्याख्या, पृ० १११ ।
४. द्र०-शिक्षासमुच्चय में उद्धृत, पृ० १५२, मिथिला संस्करण, १९६० ।

"**तत्र त्रयः स्कन्धाः पापदेशना-पुण्यानुमोदना-बुद्धाध्येषणाख्याः पुण्यराशित्वात्**। अर्थात् पापदेशना, पुण्यानुमोदना और बुद्धाध्येषणा नामक तीन स्कन्ध हैं, क्योंकि ये पुण्यराशि स्वरूप हैं।

आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान ने **त्रिस्कन्धसूत्र की टीका**[१] में उपर्युक्त से कुछ भिन्न कहा है—"इन (सब) के द्वारा दूसरे सूत्रों में निर्दिष्ट '**त्रिस्कन्ध**' का भी संग्रह होता है। (उनमें) पापदेशना तो '**देशना-स्कन्ध**' है। कुशलमूलों की परिणामना करना 'परिणामना-स्कन्ध' है। पापदेशना महाबोधि प्राप्ति का उपायभूत है। अनुमोदना तो परिणामना का अङ्गभूत है, क्योंकि अनुमोदना के द्वारा परिणामना निष्पन्न होती है। याचना ही '**याचना-स्कन्ध**' है।" अर्थात् इनके अनुसार पापदेशना, परिणामना और याचना—ये तीन स्कन्ध हैं।

आचार्य नागार्जुन ने भी **त्रिस्कन्धसूत्र की टीका**[२] में त्रिस्कन्ध के बारे में उपर्युक्त से भिन्न कहा है—"यहाँ पापदेशना-स्कन्ध और शुद्ध एवं अशुद्ध कुशल कर्मों की अनुमोदना को विषय के रूप में प्रस्तुत करने पर यह आनन्द-स्कन्ध (या अनुमोदना-स्कन्ध) होता है; सभी बुद्धों का महापरिनिर्वाण न होने की (प्रार्थना करना) और धर्मचक्रप्रवर्तन करने के लिए अध्येषणा करना 'याचना-स्कन्ध' है। इन तीनों के द्वारा अपरिमित पुण्यस्कन्ध संचित किया जाता है"। अर्थात् 'पापदेशना-स्कन्ध, आनन्द-स्कन्ध एवं याचना-स्कन्ध' ये तीन स्कन्ध हैं। परन्तु इस त्रिस्कन्धसूत्र की इसी टीका के प्रारम्भ में तीन स्कन्धों की गणना आचार्य ने कुछ भिन्न प्रकार से भी की है, यथा—"नमस्कार और प्रतिदेशना आदि अपरिमित पुण्यस्कन्ध आदि का (निर्देश करनेवाला) यह लघु त्रिस्कन्ध है"। अर्थात् नमस्कार-स्कन्ध, पापदेशना-स्कन्ध एवं पुण्यस्कन्ध (परिणामना-स्कन्ध)—ये तीन स्कन्ध हैं।

इन सब पर विचार करने पर प्रतीत होता है कि लघु त्रिस्कन्ध का तात्पर्य आपत्तिदेशना त्रिस्कन्धसूत्र में निर्दिष्ट पापदेशना, नमस्कार और परिणामना स्कन्ध हैं तथा विस्तृत त्रिस्कन्धसूत्र में पापदेशना, पुण्यानुमोदना एवं परिणामना—ये तीन स्कन्ध निर्दिष्ट हैं।

---

१. देगे संस्करण सं० ४००७, शास्त्र, सूत्र टीका वर्ग, 'जि' पुद्, पृ० १९८ क ६ ।
२. देगे संस्करण सं० ४००५, शास्त्र, सूत्र टीका वर्ग, 'जि' पुद्, पृ० १८७ क ३ ।

भोट देश के महाविद्वान् **लामा तारानाथ** ने अपनी **त्रिस्कन्धसूत्र की टीका**[१] में कहा है—"कुछ विद्वान् पापदेशना, अनुमोदना और परिणामना को तीन स्कन्ध मानते हैं तथा किसी एक टीका में कहा गया है कि पापदेशना, पुण्यानुमोदना और याचना ये तीन स्कन्ध हैं। लेकिन नमस्कार, पापदेशना एवं परिणामना को भी त्रिस्कन्ध मान लिया जाए तो ग्रन्थ के शब्द एवं अर्थ दोनों का विश्लेषण करने से उपयुक्त प्रतीत होता है। अतः प्रारम्भ के शरणगमन से लेकर 'तथागत अर्हत् सम्यक्संबुद्ध रत्नपद्मसुप्रतिष्ठित शैलेन्द्रराज को नमस्कार' तक नमस्कार-स्कन्ध है"।

"**एवं प्रमुखा यावन्तः**" से लेकर "**आयत्यां संवरमापद्ये**" तक पापदेशना-स्कन्ध है तथा "**समन्वाहरन्तु मां ते बुद्धाः**" से अन्तिम पर्यन्त परिणामना-स्कन्ध है। यहाँ '**एवं प्रमुखा यावन्तः**" और "**समन्वाहरन्तु मां ते बुद्धाः**" इन दोनों को अलग वर्ग में रखे जाने का कारण इन दोनों से अलग-अलग विषय प्रारंभ होते हैं। इसके अतिरिक्त सम्पूर्ण ग्रन्थ को तीन वर्ग में संगृहीत करने से सभी वर्गों में ग्रन्थ का समान अंश उपलब्ध होता है। अतः उपर्युक्त नमस्कार, पापदेशना और परिणामना इन तीन स्कन्धों को मानने वाला मत ही उचित प्रतीत होता है। प्रारम्भ का शरणगमन गुणस्मरण के लिए निर्धारित किया गया है। अतः यह नमस्कार वर्ग में संगृहीत है। पापदेशना आदि के अनन्तर अन्य पर्याय दिखलाए गये हैं।

लामा तारानाथ के उपर्युक्त विचार अत्यन्त महत्त्वपूर्ण एवं विचारणीय हैं और उचित प्रतीत होते हैं। लामा तारानाथ के विचारों के समर्थन में आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान विरचित '**एक लक्ष बुद्ध नाम**[२]' नामक ग्रन्थ को माना जाता है। इस ग्रन्थ के अन्त में इन्हीं विचारों को प्रस्तुत किया गया है, यथा—"त्रिशरण को नमस्कार, पापदेशना और प्रणिधान अर्थात् परिणामना करते हुए आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान कृत ग्रन्थ समाप्त"। इस प्रकार लामा तारानाथ के मत का ही समर्थन होता है।

अन्य एक वरिष्ठ विद्वान् '**मेद् दोङ् छम्पा रिनपोछे**' ने अपनी **त्रिस्कन्धसूत्र की टीका**[३] में कहा है—इस प्रकार नमस्कार, पापदेशना तथा समस्त कुशलों की

---

१. वचन संग्रह, 'प' पुद्, पृ० २३४ ।
२. मन्त्र संग्रह, 'ए' पुद्, पृ० १३७, धर्मशाला शेरिक प्रकाशन ।
३. वचन संग्रह, भाग-१, पृ० ५५७, धर्मशाला के निकट वीर से प्रकाशित, १९७५ ।

महाबोधि के लिए परिणामना करने से पुण्यसम्भार का संचय, पापों का परिशोधन और कुशलमूलों की अक्षय वृद्धि सम्पन्न होगी तथा ये बुद्धत्व प्राप्ति के लिए मूल हेतु होते हैं। इनसे अपरिमित पुण्यस्कन्ध एवं अनुशंसा प्राप्त होती है''।

अतः उपर्युक्त इस विचार से लामा तारानाथ के मत का समर्थन होता है। सामान्य भोट बौद्ध जन भी तीन स्कन्धों के बारे में लामा तारानाथ के उपर्युक्त मत का ही अनुसरण करते हैं। इस प्रकार तीन स्कन्धों की गणना करने से ऐसा प्रतीत होता है कि सामान्य तौर पर तीन स्कन्धों की गणना बोधिचर्यावतार और उसकी पञ्जिका में उल्लिखित मत के अनुसार है। इस प्रकार पापदेशना, अनुमोदना एवं परिणामना—इन तीन स्कन्धों को मानना उचित लगता है। किन्तु विशेष तौर पर आपत्तिदेशना त्रिस्कन्धसूत्र के अभिधेयार्थ को देखते हुए लामा तारानाथ के अनुसार उल्लिखित तीन स्कन्ध ही उचित लगते हैं।

आपत्तिदेशना त्रिस्कन्धसूत्र का त्रिस्कन्ध, चतुर्बल एवं सप्त अङ्गों में संग्रह

आपत्तिदेशना त्रिस्कन्धसूत्र नामक इस ग्रन्थ का अर्थ तीन विषयों में संगृहीत होता है, यथा—त्रिस्कन्ध, चतुर्बल एवं नमस्कार आदि सप्त अंग।

आचार्य नागार्जुन ने कहा है—''संक्षिप्त अर्थ तो, त्रिस्कन्ध या सप्त अङ्ग की शुद्धि करना अथवा चार बल हैं''। अब इस पर क्रमशः प्रकाश डाला जा रहा है।

१. त्रिस्कन्ध में संग्रह

१. नमस्कार-स्कन्ध—''अहमेवंनामा बुद्धं शरणं गच्छामि'' से लेकर **''नमो रत्नपद्मसुप्रतिष्ठितशैलेन्द्रराजाय तथागतायार्हते सम्यक्संबुद्धाय''** तक नमस्कार-स्कन्ध है।

२. पापदेशना—''एवंप्रमुखा यावन्तः दशदिक्षु'' से लेकर **''आयत्यां संवरमापद्ये''** तक पापदेशना-स्कन्ध है।

३. परिणामना-स्कन्ध—''समन्वाहरन्तु मां ते बुद्धाः'' से लेकर **''तथा अहमपि परिणामयामि''** तक परिणामना-स्कन्ध है।

अन्य विचार

१. **पापदेशना**—प्रारम्भ के शरणगमन से लेकर "**आयत्यां संवरमापद्ये**" तक पापदेशना-स्कन्ध है।

२. **अनुमोदना**—"**सर्वं पापमनुमोदयामि**" यह अनुमोदना-स्कन्ध" है।

३. **परिणामना**—"**समन्वाहरन्तु मां ते बुद्धाः**" से लेकर "**तथा अहमपि परिणामयामि**" तक परिणामना-स्कन्ध" है।

इस प्रकार अनुमोदना-स्कन्ध के लिए ग्रन्थ में शब्दशः मात्र एक ही पंक्ति गृहीत है। अतः अत्यन्त संक्षिप्त होने से तीन स्कन्धों का यह विभाजन उचित प्रतीत नहीं होता है। लेकिन इसे बृहत् त्रिस्कन्ध के साथ जोड़ा जाए तो उचित है, क्योंकि इसमें तीनों स्कन्धों का अंश समान रूप से है, जो उचित प्रतीत होता है।

२. चतुर्बल में संग्रह

१. **आश्रयबल**—"**बुद्धं शरणं गच्छामि**" से लेकर "**संघं शरणं गच्छामि**" तक आश्रयबल में संग्रह दिखलाया गया है।

२. **प्रतिपक्षसमुदाचारबल**—"**नमः (भगवते) शाक्यमुनये तथागतायार्हते सम्यक्संबुद्धाय**" से लेकर "**नमो रत्नपद्मसुप्रतिष्ठितशैलेन्द्रराजाय तथागतायार्हते सम्यक्संबुद्धाय**" तक प्रतिपक्षसमुदाचारबल में संग्रह दिखलाया गया है।

३. **विदूषणासमुदाचारबल**—"**एवंप्रमुखा यावन्तः**" से लेकर "**न प्रतिच्छादयामि**" तक विदूषणासमुदाचारबल में संग्रह दिखलाया गया है।

४. **प्रत्यापत्तिबल**—"**आयत्यां संवरमापद्ये**" के द्वारा प्रत्यापत्तिबल दिखलाया गया है।

कुछ विद्वानों का कहना है कि प्रारम्भ के शरणगमन से लेकर "**नमो रत्नपद्मसुप्रतिष्ठितशैलेन्द्रराजाय तथागतायार्हते सम्यक्संबुद्धाय**" तक '**आश्रयबल**' है। इत्यादि पृथक्-पृथक् मत विद्वानों ने प्रकट किये हैं।

सप्त अङ्गों में संग्रह

(१) **वन्दना**—प्रारम्भिक शरणगमन से लेकर "**नमोरत्नपद्मसुप्रतिष्ठितशैलेन्द्रराजाय तथागतायार्हते सम्यक्संबुद्धाय**" तक वन्दना अङ्ग में संग्रह होता है।

(२) पापदेशना—"**एवं प्रमुखा यावन्तः**" से लेकर "**आयत्यां संवरमापद्ये**" तथा "**सर्वं पापं प्रतिदेशयामि**" तक पापदेशना अङ्ग में संग्रह दिखलाया गया है।

(३) परिणामना—"**समन्वाहरन्तु मां ते बुद्धाः**" से लेकर "**तथा अहमपि परिणामयामि**" तक तथा "**भवतु मे ज्ञानमनुत्तरम्**" तक परिणामना अङ्ग में संग्रह दिखलाया गया है।

(४) अनुमोदना—"**सर्वं पुण्यमनुमोदयामि**" इसके द्वारा अनुमोदना अङ्ग दिखलाया गया है।

(५-६) अध्येषणा एवं याचना—"**सर्वान् बुद्धानध्येषयामि**" इसके द्वारा धर्मचक्रप्रवर्तन के लिए अध्येषणा करना तथा परोक्ष रूप में महानिर्वाण प्राप्त न करने के लिए याचना करना—ये दो अङ्ग एक साथ दिखलाए गये हैं।

(७) पूजना—पूजना अङ्ग परोक्षतः दिखलाया गया है, क्योंकि शरणगमन करने से अर्थतः पूजन हो जाता है।

इस प्रकार सातों अङ्गों में संग्रह यद्यपि दिखलाया गया है,, परन्तु ये मूल सूत्र के क्रम को आधार मानकर नहीं दिखलाये गये हैं। सातों अङ्गों का सामान्य क्रम इससे भिन्न है। जैसे **भद्रचर्याप्रणिधानसूत्र**[१] में कहा गया है—

वन्दनपूजनदेशनताय
मोदनाध्येषणयाचनताय ।
यच्च शुभं मयि संचितु किञ्चिद्
बोधयि नामयमी अहु सर्वम् ॥

वन्दना, पूजना, पापदेशना, अनुमोदना, अध्येषणा, याचना एवं बोधि के लिए परिणामना—ये सात अङ्ग हैं। भद्रचर्याप्रणिधानसूत्र के अनुसार इनका यही सामान्यतया प्रचलित क्रम है।

लामा तारानाथ ने अपनी **त्रिस्कन्धसूत्र-टीका**[२] में इन अङ्गों के संग्रह के सम्बन्ध में इस प्रकार कहा है—"प्रारम्भ के शरणगमन और परिणामना के

---

१. गण्डव्यूहसूत्र, समन्तभद्रचर्याप्रणिधान, पृ० ४३०, दरभंगासंस्करण-१९६० ।
२. वचन संग्रह, 'प' पुट्, पृ० २३४ ।

अन्तर्गत चित्तोत्पाद को भी जोड़कर वन्दना, पापदेशना, अनुमोदना, याचना, शरणगमन, चित्तोत्पाद और परिणामना—इन अङ्गों की गणना इस प्रकार की जाए तो उचित लगता है। फिर भी शब्दार्थों से सम्बद्ध संक्षिप्त अर्थमात्र का योग करने पर सात अङ्गों की गणना उचित नहीं लगती, क्योंकि चित्तोत्पाद परिणामना के अतिरिक्त उपलब्ध नहीं होता और क्रम भी भङ्ग हो जाता है। यदि ऐसा विचार करें कि परिणामना के अन्तर्गत चित्तोत्पाद आदि आश्रय और कुशलबीज दोनों का बल समान है तो यह उचित नहीं है। सम्पूर्ण अङ्गों की परिपूर्ति को प्रस्फुटित करने के लिए ऐसा कहा गया है, क्योंकि आश्रय शरणगमन है और कुशलबीज अनुमोदना आदि हैं। इसके विषय में स्वतन्त्र रूप से प्रतिपादन करने वाले अन्य ग्रन्थ हैं।

सामान्य तौर पर अधिकांश सूत्रपक्ष के सप्त अङ्गों में पूजना (अङ्ग की गणना) की जाती है और दोनों अध्येषणा तथा याचना भी अलग-अलग गिने जाते हैं। अधिकांश लोग शरणगमन और चित्तोत्पाद की गणना नहीं करते हुए दिखलाई देते हैं। यहाँ सप्ताङ्गों के गणना की पूर्णतया निश्चितरूप से कोई आवश्यकता नहीं है। किसी विद्वान् द्वारा शरणगमन के द्वारा पूजना अङ्ग की परोक्ष रूप से गणना करने का जो विचार है, वह साक्षात् (प्रस्तुत) का त्याग कर परोक्ष को स्वीकार करने से क्रमभङ्ग का कारण बन जाता है।"

अतः लामा तारानाथ के विचार से यह स्पष्ट हो जाता है कि जो त्रिस्कन्धसूत्र में साक्षात् विद्यमान जिन सप्त अङ्गों का अवलोकन होता है, उसी की गणना होनी चाहिए, न कि उसके अतिरिक्त परोक्ष की। तारानाथ पूर्वोक्त समन्तभद्रचर्याप्रणिधानसूत्र में प्रतिपादित सप्त अङ्गों की गणना को यहाँ नहीं मानते हैं। उनके विचार के अनुसार सप्ताङ्ग इस प्रकार हैं—नमस्कार, पापदेशना, अनुमोदना, अध्येषणा, शरणगमन, चित्तोत्पाद एवं परिणामना। यह सूत्र में स्पष्टतया दिखाई देता है। सामान्यतया सप्त अङ्ग की गणना के बारे में सूत्र तथा शास्त्र में अनेक मत-मतान्तर दिखाई देते हैं। यथा—**बोधिमार्गप्रदीपपंजिका**[१] में कहा गया है—

"कुछ लोग काय, वाक् एवं चित्त का नमस्कारपूजा, श्रद्धापूजा, स्तुतिपूजा, सोत्तरपूजा, अनुत्तरपूजा, काय-अर्पणपूजा और त्रिस्कन्धपूजा—ये सात

---

१. देगे संस्करण, सं० ३९४८, माध्यमिक वर्ग, पुट 'खी' २४३ ख ३ ।

अङ्ग मानते हैं। कुछ लोग **भद्रचर्याप्रणिधान**[१] में उल्लिखित पुष्प, माला, वाद्य, विलेपन, छत्र, दीप एवं धूपपूजा—ये सात अङ्ग मानते हैं, यथा—

पुष्पवरेभि च माल्यवरेभिर्वाद्यविलेपनछत्रवरेभिः ।
दीपवरेभि च धूपवरेभिः पूजनतेषु जिनान करोमि ।।

भोट विद्वान् **मेद् दोङ् छम्पा रिनपोछे**[२] का कहना है कि "पापदेशना, अनुमोदना, अध्येषणा, याचना, परिणामना और शरणगमन—ये छह अङ्ग हैं। यदि सप्त अङ्गों की पूर्णता आवश्यक हो तो अनुत्तरबोधि में परिणामना करनेवाला चित्तोत्पाद एक प्रधान हेतु है, अतः चित्तोत्पाद और परिणामना दोनों की अलग-अलग गिनती करने से सात अङ्ग परिपूर्ण हो जाते हैं। वैसे तो दस अङ्ग, अष्ट अङ्ग, सप्त अङ्ग, षड् अङ्ग और पञ्च अङ्ग आदि भी हो सकते हैं। अतः सप्त अङ्ग ही होना अनिवार्य नहीं है।" इस प्रकार षड् अङ्गों में भी संग्रह करने पर कोई दोष नहीं है—ऐसा मैं (लेखक) समझता हूँ।

आर्यत्रिस्कन्धसूत्र का अभिधेय : आपत्तिपापदेशना

भोट देश में अत्यन्त प्रसिद्ध इस त्रिस्कन्धसूत्र, को बोधिसत्त्व-आपत्तिदेशनासूत्र भी कहा जाता है। बोधिसत्त्वों को आपत्ति लग जाने पर उससे परिशुद्धि के लिए भगवान् ने इसका उपदेश किया है। किस प्रकार विशुद्धि होती है? ऐसी जिज्ञासा होने पर सर्वप्रथम इस सूत्र का पाठ करने से पहले पूर्व किये जाने वाले कृत्यों को जानना आवश्यक है। यह **आर्य उग्रदत्तपरिपृच्छासूत्र**[३] में इस प्रकार वर्णित है, यथा—

"त्री रात्रेः त्रिर्दिवसस्य च शुचेः शुचिवस्त्रप्रावृतस्य च त्रिस्कन्धक-प्रवर्तनमुक्तम्"।

त्रिस्कन्धसूत्र-पाठ के पूर्व स्नान द्वारा पवित्र होकर और स्वच्छ वस्त्र धारण करके रात्रि में तीन बार और दिन में तीन बार अर्थात् छह बार इस सूत्र का पाठ करना चाहिए।

---

१. द्र०-समन्तभद्रचर्याप्रणिधान-५ का० ।
२. ग्रन्थ संख्या भाग-१, पृ० ५४३ ।
३. द्र०-शिक्षासमुच्चय में उद्धृत, पृ० १५२, मिथिला संस्करण, १९६० ।

इस त्रिस्कन्धसूत्र का प्रारम्भ "**तत्रेयं (आपत्ति-)देशना**" से होता है। यहाँ से लेकर "**उपैमि सर्वान् शरणं कृताञ्जलिः**" पर्यन्त समाप्त होता है। प्रारम्भ में "**अहमेवंनामा**" का निर्देश किया गया है। यहाँ पापप्रतिदेशना करने वाले को स्वयं के नाम का उच्चारण करना है। तत्पश्चात् '**बुद्धं शरणं गच्छामि**' इत्यादि के द्वारा त्रिशरणगमन दिखाया गया है। यहाँ तक चार बलों में से प्रथम आश्रयबल प्रदर्शित किया गया है। तदनन्तर **आपत्तिदेशनात्रिस्कन्धसूत्र** में ३५ असाधारण बुद्धों के नाम क्रमशः तथागत शाक्यमुनि से लेकर शैलेन्द्रराज तक उपदिष्ट हैं। इन पैंतीस बुद्धों में से १, २४, २५ और ३५ अर्थात् चार बुद्धों के नाम के पूर्व आदरसूचक '**तथागत**' शब्द का उपयोग किया गया है, किन्तु ३१ बुद्धों के नाम के पूर्व आदरसूचक '**तथागत**' शब्द उल्लिखित नहीं है। इसके सन्दर्भ में पश्चात् विस्तारपूर्वक निरूपण किया जाएगा। इन सभी ३५ बुद्धों के नाम का पाठ करने और मनस्कार करने से अतीत एवं अनागत में कृत और करिष्यमाण (किये जाने वाले) असंख्य कल्पों के पापों का विनाश होगा—ऐसा सूत्र में कहा गया है। वैसे इन सभी ३५ बुद्धों के नाम की पृथक्-पृथक् अनुशंसा विद्यमान है, जिसका मैंने परिशिष्ट में उल्लेख किया है।

अतः इन ३५ बुद्धों के नाम-पाठ की अनुशंसा मन में स्थापित कर प्रति-देशना के लिए प्रयास करना चाहिए। प्रतिदेशना करते समय ऐसी कल्पना करनी चाहिए कि स्वयं के सम्मुख आकाश में अनेक रत्नों से अलंकृत पद्म एवं चन्द्रमा के आसन पर मध्य में तथागत शाक्यमुनि तथा शेष ३४ बुद्ध उनके ऊपर, नीचे और चारों दिशाओं में विद्यमान हैं। इन तथागतों के गुणों का स्मरण करते हुए आदरपूर्वक काय के द्वारा प्रणाम, वाक् के द्वारा नामोच्चारण तथा चित्त के द्वारा नमस्कार करना चाहिए। अतः ये ३५ तथागत नमस्कार के विषय हैं। इनमें से पहले तथागत शाक्यमुनि हैं। तत्पश्चात् वज्रगर्भप्रमर्दिन् इत्यादि ३४ तथागत हैं। यहाँ तक त्रिस्कन्धों में से नमस्कारस्कन्ध और चार बलों में से प्रतिपक्षसमुदाचार बल तथा सात अंगों में से नमस्कार प्रत्यक्ष रूप से तथा पूजा परोक्ष रूप से प्रतिपादित है। प्रत्येक बुद्धों के नाम के गुणों की व्याख्या करना असम्भव है, क्योंकि उनके गुण अनन्त हैं।

पापदेशना के सन्दर्भ में '**एवं प्रमुखा यावन्तः**' से लेकर '**न प्रतिच्छादयामि**' तक पापदेशना का विषय दिखलाया गया है, जिसमें सर्वप्रथम '**एवं प्रमुखा यावन्तः**' से लेकर '**सम्यक्सम्बुद्धास्तिष्ठन्ति**' तक धर्मकाय के,

'**ध्रियन्ते यापयन्ति**' तक बुद्धों के सम्भोगकाय के तथा '**बुद्धा भगवन्तः**' से बुद्धों के निर्माणकाय के गुण प्रदर्शित किये गये हैं। 'ते मां समन्वाहरन्तु' के द्वारा इस प्रकार त्रिकायात्मक बुद्ध मेरी ओर अत्यन्त कृपा के साथ ध्यान दें और 'मैं पापदेशना करना चाहता हूँ' इसके साक्षी के लिए याचना करता हूँ। इस प्रकार याचना करने के पश्चात् दिन और रात के तीन-तीन यामों में पापदेशना के लिए प्रयत्न करना है। तत्पश्चात् मूल पापों का प्रकटीकरण और उनका परिचय दिखलाया गया है, जो '**यन्मया अस्यां जातौ**' से लेकर '**अनुमोदितं भवेत्**' तक है। '**अस्यां जातौ**' इत्यादि से अनादिकाल से संचित पापकर्म, जो स्वयं के द्वारा कृत, अन्यों को प्रेरित करके कराये गये कर्म या अन्य द्वारा कृत पापों का अनुमोदन करना तथा अन्य (पाप) कर्म, जैसे पूजा तथा संघ के लिए अर्पित सामग्री एवं दान-द्रव्यों का स्वयं के लिए उपभोग करना, पञ्च आनन्तर्य कर्म, दश अकुशल कर्म आदि बताये गये हैं। ये पापकर्म फल के रूप में अष्ट अक्षण में पतन के हेतु हो जाते हैं। इस पतन के मूल हेतु के साक्षीभूत आप सभी बुद्ध ठीक-ठीक जानते हैं। अतः मैं आप समस्त बुद्धों के समक्ष उनकी प्रतिदेशना करता हूँ, छिपाता नहीं हूँ, आप स्वीकार करें—इत्यादि द्वारा त्रिस्कन्ध के अन्तर्गत पापदेशना स्कन्ध तथा चतुर्बल के अन्तर्गत विदूषणाबल दिखाया गया है।

तत्पश्चात् '**आयत्यां संवरमापद्ये**' के द्वारा एक पंक्ति में 'हमने जो पाप पूर्व में किया है, उन्हें कदापि भविष्य में नहीं करूँगा'—इस प्रकार संवरग्रहण करने की प्रतिज्ञा प्रदर्शित की गई है। इस पंक्ति से प्रत्यापत्ति-बल दिखाया गया है।

'**समन्वाहरन्तु मां**' से लेकर '**तथा अहमपि परिणामयामि**' तक परिमामना दिखलाई गई है। इसके द्वारा कुशल कर्मों की वृद्धि करना दिखलाया गया है। सर्वप्रथम षट् पारमिताओं के आधार पर परिणामना करना दिखलाया गया है, यथा—'**दानं दत्तं भवेदन्तशः**' इत्यादि के द्वारा प्रथम दानपारमिता, '**शीलं वा रक्षितं भवेत्**' के द्वारा द्वितीय शीलपारमिता, '**ब्रह्मचर्यवासकुशलमूलं**' के द्वारा मैत्री आदि चार ब्रह्मविहार की शिक्षा के माध्यम से तृतीय क्षान्तिपारमिता दिखलाई गई है। '**सत्त्वपरिपाककुशलमूलम्**' के द्वारा परार्थ करने में कुशल चतुर्थ वीर्यपारमिता दिखलाई गई है। '**यच्च मे बोधिचित्तकुशलम्**' के द्वारा सम्यक्सम्बोधि की प्राप्ति के लिए एकाग्रचित्त करने वाली पञ्चम ध्यानपारमिता दिखलाई गई है। '**यच्च मे अनुत्तरज्ञानकुशलमूलम्**' के द्वारा ज्ञानकाय की समान हेतु प्रज्ञापारमिता की प्राप्ति की परिणामना दिखलाई गई है।

तत्पश्चात् उत्तम बोधिचित्त का उत्पाद एवं कुशलमूलों की सम्यक्सम्बोधि के लिए परिणामना एवं प्रणिधान दिखलाए गये हैं। अतीत, अनागत एवं प्रत्युत्पन्न बुद्धों के प्रति परिणामना करना उल्लिखित है। यहाँ परिणामनास्कन्ध समाप्त हो जाता है और यहीं पर मूलग्रन्थ समाप्त हो जाता है।

तत्पश्चात् चार पंक्तियों के द्वारा पुनः समस्त सूत्र का संक्षिप्त अभिधेय भी दिखलाया गया है, जो '**सर्वं पापं प्रतिदेशयामि**' द्वारा अभिव्यक्त है। जिसमें पापदेशना, अनुमोदना, अध्येषणा और परिणामना अन्तर्निहित हैं। यहाँ तक सात अंगों में से एक साथ चार अंग दिखलाए गये हैं।

"**ये चाप्यतीताः**" इत्यादि एक श्लोक के द्वारा पुनः त्रिशरणगमन तथा चित्तोत्पाद दिखलाये गये हैं। इस श्लोक में तीनों कालों के बुद्धों के शरणगमन को साक्षात् प्रदर्शित किया गया है और धर्म तथा संघ का शरणगमन परोक्ष रूप में दर्शाया गया है। यहाँ पुनः सात अंगों में से नमस्कार अंग, तीन स्कन्धों में से नमस्कारस्कन्ध दिखलाया गया है।

इस प्रकार यदि इस त्रिस्कन्धसूत्र का पुनः संक्षिप्त रूप से प्रतिपादन किया जाए तो सर्वप्रथम त्रिशरणगमन, तदनन्तर ३५ बुद्धों के प्रति नमस्कार, पुनः स्वयं के द्वारा अनादिकाल से संचित गुरु एवं लघु आपत्तियों की बुद्धों के समक्ष प्रतिदेशना करना तथा उसके बाद इन आपत्तियों को भविष्य में न करने की प्रतिज्ञा के रूप में संवर ग्रहण करना बताया गया है। एतदनन्तर सम्यक्सम्बोधि की प्राप्ति हेतु षट्पारमिताओं द्वारा संचित कुशलमूलों की त्रैकालिक बुद्धों के समक्ष परिणामना करना दिखलाकर पुनः त्रिशरणगमन दिखलाया गया है।

अन्त में '**आर्यत्रिस्कन्धसूत्र समाप्त**'—ऐसा भोटदेश के अधिकांश पूजा-ग्रन्थों में प्राप्त होता है, परन्तु मूलसूत्र में ऐसा उल्लेख नहीं है। अतः यह सूत्र बाद में भोट देश में अत्यन्त प्रसिद्ध होने के कारण ऐसा प्रतीत होता है कि किसी भोट विद्वान् ने सम्भवतः इस अंश को ग्रन्थ के अन्त में जोड़ दिया है, जो सम्भवतः सूत्र के मूल अभिधेय को ध्यान में रखकर सम्पादित किया गया है। वस्तुतः यह सूत्र आर्यउपालिपरिपृच्छासूत्र के अन्तर्गत उपलब्ध होता है, परन्तु किसी एक सूची में '**उपालिपरिपृच्छासूत्र**' इस नाम के स्थान पर '**आपत्तिदेशनासूत्र**'—ऐसा उल्लेख भी उपलब्ध होता है। अतः यह विचारणीय प्रतीत होता है। मेरे अपने विचार में पूजा-पुस्तक के अन्त में इस सूत्र का नाम जोड़ते समय 'आर्य-उपालि-

परिपृच्छासूत्र के अन्तर्गत आपत्तिदेशना-त्रिस्कन्धसूत्र समाप्त'—ऐसा उल्लिखित होना चाहिए। इससे महायान त्रिस्कन्धसूत्र और यह लघु आपत्तिदेशना-त्रिस्कन्धसूत्र इन दोनों का अन्तर स्पष्ट रूप से परिलक्षित हो सकता है और दोनों सूत्रों के एक होने का भ्रम भी दूर हो सकता है।

आर्यत्रिस्कन्धसूत्र की श्रुति एवं आगम परम्परा का क्रम

सूत्रों एवं शास्त्रों के स्रोत की पवित्रता एवं प्रामाणिकता सिद्ध करने के लिए भगवान् तथागत से लेकर अपने पूज्य गुरुजनों पर्यन्त उनके वचनों के प्रामाणिक हस्तान्तरण को सिद्ध करना अत्यन्त आवश्यक है। अनेक परम्पराएं प्राप्त होती हैं, जिसमें श्रुति, आगम, पदच्छेद एवं व्याख्या-परम्परा आदि प्रसिद्ध हैं, ये सभी पूर्ववर्ती परम श्रद्धेय गुरुवचनों में सुरक्षित एवं संगृहीत हैं। इन परम्पराओं में से सम्प्रति प्राप्त त्रिस्कन्धसूत्र की श्रुतिपरम्परा के भी अनेक स्रोत प्राप्त होते हैं।

यहाँ पर परम पावन चौदहवें दलाई लामा को इस त्रिस्कन्धसूत्र की परम्परा की प्राप्ति का उल्लेख किया जा रहा है। परम पावन को यह परम्परा अपने श्रद्धेय गुरु ताडक रिनपोछे मे प्राप्त हुई। श्री ताडक रिनपोछे को अपने गुरु ल्होटुल ङ्वङ् खेनरब् तेनपई वङ्छुक् से प्राप्त हुई। इस प्रकार उनकी यह श्रुतिपरम्परा अन्ततः भगवान् तथागत के वचनों तक स्पर्श करती है। इसका विस्तृत उल्लेख सातवें दलाई लामा कलसङ् ग्याछो के 'वचन श्रुतिपरम्परा' नामक ग्रन्थ में स्पष्टतया उल्लिखित है। इस त्रिस्कन्धसूत्र की श्रुतिप्राप्त परम्परा के बारे में भगवान् तथागत से लेकर तिब्बत के प्रसिद्ध विद्वान् बगतोन् तक की परम्परा में चार प्रकार के विभिन्न मत उपलब्ध होते हैं।

इनमें से परम पावन चौदहवें दलाई लामा को प्राप्त परम्परा इस प्रकार है[१]—

तथागत भगवान् बुद्ध ने आनन्द को उपदेश दिया। तदनन्तर आनन्द से कृष्णवासिन्, उनसे शाणकवासिन्, उनसे मध्याह्निक, उनसे सर्वज्ञमित्र, ततः नागार्जुन, उनसे आर्यदेव, उनसे श्री मञ्जुकीर्ति, ततः शान्तिपाद, ततः तृतीय वज्रासन, ततः काश्मारी पण्डित शाक्यश्री, उनसे चेल छोसङ्, उनसे चलपद्मवान्, ततः कुमारज्ञान, फिर प्रज्ञासिंह, उनसे बग तोनपा, फिर गोनपोबुम, उनसे कुडोपा, ततः महोपाध्याय शेरब् दोर्जे, ततः छौगौवा छोशे, ततः आचार्य सोनम सेङ्गे, ततः

१. वचन परम्परा संग्रह, पुस्तक संख्या, ११, पुट 'क', पृ० ३१७।

छलडक् देनपा, ततः रिनछेन डकपा, ततः काग्युर्वा शाक्य ग्यलछेन, फिर दोर्जे देनपा कुनगा नमग्यल, ततः छेनपो लोडोस् ग्यलछेन, ततः बुमरम्पा रिनछेन छोस्वङ्, ततः रबजम छुलिठम वङ्छुक्, ततः जे छोग्यल दोनडुब, ततः चेङा वा कोनछोग् वङ्, ततः सेम्पा डाकपा दोनडुब, ततः लामा छोग् ञि पल्डुब, ततः धाछा टुल्कु जिगतेन वङ्छुब, ततः जे लोडोस् छोस् क्यि दोर्जे, ततः गोनपो सोनम छोगदेन, ततः योङ् जिन लोसङ् ठिनले, ततः काछेन ङ्वङ् रबतेन, ततः काग्युर्वा गेलोङ् ङ्वङ् ग्यलपो, ततः ख्यबदग काग्युर्वा छेनपो फुनछोग जम्पा, ततः ठ्रिछेन ङ्वङ् छोगदेन, ततः सातवें दलाई लामा केलसंग ग्याछो, ततः डगरी ग्याछो थायेस्, ततः पङ्लुङ् ङ्वङ् छोजिन, ततः योङ्जिन येशे ग्याछो, ततः ठ्रुद्छेन येशे गोङ् फेल, ततः जे जमयङ् ठिनले, ततः ल्होटुल ङ्वङ् खेनरब् तेनपई वङ्छुग् सिक्योङ् तगडक तेनपई ग्यलछेन, इनसे परम पावन चौदहवें दलाई लामा तेनजिन ग्याछो ने यह परम्परा प्राप्त की। तथागत से लेकर भोट आचार्य बगतोन तक प्राप्त श्रुतिपरम्परा क्रम में कुछ भिन्न मत भी दिखलाई पड़ते हैं, उन्हें मैंने भोट भाषा में रचित भूमिका में विस्तार से उल्लिखित किया हैं। जिज्ञासु पाठक वहीं अवलोकन करें।

आर्यत्रिस्कन्धसूत्र का संस्कृत पाठ एवं भोट अनुवादों की अन्तःसमीक्षा

आर्यत्रिस्कन्ध आपत्तिदेशनासूत्र के पूर्व एवं अपर दो भोट-अनुवाद प्राप्त होते हैं। पूर्व **आर्य उपालिपरिपृच्छासूत्र** के अन्तर्गत पठित त्रिस्कन्धसूत्र है। इसी उपालिपरिपृच्छासूत्र का अनुवाद तिब्बत के वरिष्ठ अनुवादक येशे दे ने किया है। अपर त्रिस्कन्धसूत्र आचार्य शान्तिदेव के **शिक्षासमुच्चय** के अन्तर्गत उद्धृत है। इस शिक्षासमुच्चय का भी तिब्बत के वरिष्ठ लोचावा (अनुवादक) येशे दे ने अनुवाद किया है। परन्तु बाद में इसी ग्रन्थ का तिब्बत के वरिष्ठ लोचावा लोदेन् शेरब् ने पुनः संशोधन किया। इस कारण त्रिस्कन्धसूत्र का अपर अनुवाद पूर्वानुवाद से कुछ भिन्न हो गया।

यद्यपि **उपालिपरिपृच्छासूत्र** के अन्तर्गत पठित त्रिस्कन्धसूत्र तथा शिक्षासमुच्चय के अन्तर्गत पठित त्रिस्कन्धसूत्र के संस्कृत मूल में सम्भवतः अधिक पाठभेद की सम्भावना नहीं हो सकती है। परन्तु इन दोनों के भोटानुवाद में कुछ स्थलों पर भिन्न अनुवाद प्राप्त होते हैं।

एक और विशेष बात यह है कि किसी भोट विद्वान् ने पूर्ववर्ती इन दोनों भोटानुवादों को अपने समक्ष रखकर पुनः इन दोनों पाठों से कुछ उपयुक्त वचनों

को एकत्र कर एक नये पाठ का निर्माण कर दिया—ऐसी सम्भावना व्यक्त की जाती है। इस नये संस्करण में कुछ आदरसूचक नये शब्द जोड़ दिये गए हैं। यह नित्य पूजा-पाठ के लिए बनाया गया है—ऐसा प्रतीत होता है। अतः सामान्य तौर पर त्रिस्कन्धसूत्र के भिन्न-भिन्न प्रकार के तीन पाठ उपलब्ध होते हैं। इन तीनों का शिक्षासमुच्चय में उद्धृत संस्कृत मूल से मिलान करने पर परस्पर भिन्न अनेक प्रकार के अनुवाद हो जाते हैं। पूजा-पाठ के लिए जिस त्रिस्कन्धसूत्र का निर्माण किया गया है, उसे अधिकांश बौद्ध तिब्बतियों द्वारा यथावत् मूल संस्कृत त्रिस्कन्धसूत्र का अनुवाद समझकर पूजा-पाठ में उपयोग किया जाता है। वस्तुतः यह पाठ संस्कृत मूल से कुछ भिन्न है।

यहाँ मैं इन तीनों तिब्बती पाठों की परस्पर भिन्नता एवं संस्कृत मूल से उनकी साम्यता की तुलना करना चाहता हूँ।

सर्वप्रथम ग्रन्थ के प्रारम्भ में तिब्बती पूजापुस्तक के अनुसार '**नमः**' शब्द है, जो संस्कृत मूल तथा दोनों उपालिसूत्र और शिक्षासमुच्चय के भोटानुवाद में उपलब्ध नहीं है। तत्पश्चात् उसी पूजा पुस्तक में '**बोधिसत्त्व आपत्तिदेशना**' शब्द है, जो उपर्युक्त तीनों पाठों में उपलब्ध नहीं होता है। उपालिसूत्र के अनुसार उसके स्थान पर '**तत्रेयं देशना**' अर्थात् 'यह देशना इस प्रकार है'—ऐसा उपलब्ध होता है, परन्तु शिक्षासमुच्चय के भोटानुवाद में इससे भिन्न '**तत्रेयमापत्तिदेशना**' यह पाठ उपलब्ध होता है। अर्थात् 'यह आपत्तिदेशना इस प्रकार है'। तदुपरान्त पूजापुस्तक में ''सर्वदा गुरुजनों को मेरा नमस्कार'' शब्द है, जो पूर्वोक्त दोनों भोटानुवाद तथा संस्कृत मूल पाठ में उपलब्ध नहीं होता है।

तत्पश्चात् '**नमः भगवते शास्त्रे.....**' अर्थात् भगवान् शास्ता तथागत शाक्यमुनि को नमस्कार। ऐसा पूजापुस्तक में उपलब्ध होता है, परन्तु पूर्वोक्त दोनों भोटानुवाद एवं संस्कृत मूल में ऐसा उपलब्ध नहीं होता है। उसके बाद शेष ३४ बुद्धों को नमस्कार किया गया है। परन्तु अधिकांश तिब्बती के गेलुगपा सम्प्रदाय की पूजा की पुस्तकों में सभी ३५ बुद्धों के नाम के प्रारम्भ में आदरसूचक शब्द 'तथागत' प्रयुक्त किया गया है, जो इस सम्प्रदाय के संस्थापक 'जे चोंखापा' ने अनुभव किया और जोड़ना उचित समझा। किन्तु पूर्वोक्त संस्कृत मूल तथा उपालिसूत्र और शिक्षासमुच्चय के भोटानुवादों में ऐसा उपलब्ध नहीं होता और न ही तिब्बत के अन्य ञिङ्मा, करग्युद् एवं साक्या सम्प्रदायों की

पुस्तकों में भी उपलब्ध होता है। इन तीनों सम्प्रदायों के अनुयायी यथासूत्र पाठ करना ही अधिक समुचित समझते हैं। मूल संस्कृत पाठ में इन ३५ तथागतों में से चार तथागतों के नाम के प्रारम्भ में आदरसूचक शब्द 'तथागत' प्रयुक्त किया गया है, शेष में नहीं।

संस्कृत मूल में ३५ तथागतों में से छठवें तथागत "**वीरनन्दी**" के नाम से प्राप्त है, परन्तु उपालिसूत्र एवं शिक्षासमुच्चय दोनों के भोटानुवाद में उसके स्थान पर '**श्री आनन्दी**' ऐसा उपलब्ध होता है, न कि '**वीरनन्दी**'। आचार्य नागार्जुन एवं आचार्य जितारि दोनों की त्रिस्कन्धसूत्र टीकाओं में भी तथागत 'श्री आनन्दी' पर टीका की गई है, न कि '**वीरनन्दी**' पर। सातवें तथागत 'रत्नश्री' संस्कृत मूल पाठ में है, परन्तु दोनों उपालिसूत्र और शिक्षासमुच्चय के अनुवादों में उसके स्थान पर तथागत '**रत्नाग्नि**' का नाम प्राप्त होता है, न कि '**रत्नश्री**'। यही समस्त पूजापुस्तकों में भी उपलब्ध होता है। समस्त त्रिस्कन्धसूत्र की भोट टीकाओं एवं आचार्य नागार्जुन तथा आचार्य जितारि की त्रिस्कन्धसूत्र टीकाओं में भी 'रत्नाग्नि' शब्द की ही व्याख्या की गई है। अतः इस पर गम्भीरतापूर्वक विचार करना आवश्यक है, क्योंकि यहाँ अनुवाद में बहुत बड़ा अन्तर दिखलाई पड़ता है तथा न केवल मूल संस्कृत में अपितु टीकाओं में भी '**रत्नश्री**' के नाम तक का न आना आश्चर्यजनक है। संस्कृत मूल में १२वें तथागत का नाम 'वीरदत्त' प्राप्त है, किन्तु भोट पूजा पुस्तकों एवं उपालिसूत्र के कुछ भोट अनूदित पाठों में तथा शिक्षासमुच्चय के भोट अनुवाद के पाठों में तथागत 'श्रीदत्त' का नाम उपलब्ध होता है। परन्तु आचार्य नागार्जुन तथा आचार्य जितारि की त्रिस्कन्धसूत्र टीकाओं में संस्कृत मूलपाठ के अनुसार तथागत 'वीरदत्त' शब्द पर ही टीका उपलब्ध होती है।

'**एवंप्रमुखा यावन्तः सर्वलोकधातुषु**' यह पाठ संस्कृतमूल में उपलब्ध होता है, परन्तु उपालिसूत्र के भोटानुवाद में '**एवं यावन्तः दशदिक्षु सर्वलोक-धातुषु**' ऐसा पाठ उपलब्ध होता है। शिक्षासमुच्चय के संस्कृत मूलपाठ एवं भोटानुवाद दोनों में दश दिशाओं का कहीं उल्लेख नहीं है। समस्त तिब्बती अनुवादों में कहीं पर भी '**एवं प्रमुखाः**' में से प्रमुख का अनुवाद प्राप्त नहीं होता है। आचार्य नागार्जुन एवं आचार्य जितारि की त्रिस्कन्धसूत्र टीकाओं में '**दशदिक्षु**' शब्द के स्थान पर '**चतुर्दिक्षु**' शब्द का उल्लेख मिलता है और इसी शब्द पर

टीका की गई है। लेकिन टीकाओं के अन्तर्गत पूर्व दिशा इत्यादि दश दिशाओं का परिचय दिया गया है।

'सांघिकं वा द्रव्यमपहृतं स्यात्' ऐसा पाठ संस्कृत मूल में उपलब्ध होता है। परन्तु उपालिसूत्र एवं शिक्षासमुच्चय के भोटानुवाद में **'चातुःसांघिकं वा द्रव्यमपहृतं स्याद्'**—ऐसा पाठ उपलब्ध होता है। इनमें चारों दिशाओं के संघ का उल्लेख किया गया है, किन्तु पूजापुस्तकों एवं आचार्य जितारि की त्रिस्कन्ध-सूत्रटीका में दश दिशाओं के संघ का उल्लेख मिलता है।

पुनः संस्कृत मूल में **'यमविषयं वा गच्छेयं'** ऐसा पाठ प्राप्त है। यही पाठ उपालिसूत्र एवं शिक्षासमुच्चय के भोटानुवाद में भी है, किन्तु पूजापुस्तकों एवं आचार्य नागार्जुन की त्रिस्कन्धसूत्रटीका में इस वाक्य के स्थान पर **'प्रेतविषयं वा गच्छेयं'** का उल्लेख है तथा आचार्य ने इसी पाठ की टीका की है। आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान ने भी इस वाक्य की टीका में आठ अक्षणों की गणना करके उसमें एक प्रेतविषय को भी गिना है।

पुनः **'प्रत्यन्तजनपदेषु म्लेच्छेषु वा'** ऐसा पाठ मूल संस्कृत में प्राप्त है। उपालिसूत्र के भोटानुवाद में यही उल्लेख है, किन्तु शिक्षासमुच्चय के भोटानुवाद में **'प्रत्यन्तजनपदेषु म्लेच्छेषु'** इतना ही पाठ है। इसमें 'वा' (अथवा) शब्द प्रयुक्त नहीं किया गया है।

वैसे भी अष्ट अक्षणों की गणना में भिन्न-भिन्न मत प्राप्त होते हैं, जैसे इस सूत्र में भी 'प्रत्यन्त जनपद म्लेच्छ में उत्पन्न' इस प्रकार यदि इसे एक अक्षण माना जाए तो अपर (आगे के पाठ) में **'बुद्धोत्पादं वा विरागयेयं'** अर्थात् बुद्धोत्पाद के प्रति अश्रद्धा को आठ अक्षणों की पूर्ति के लिए गिनना पड़ेगा। यदि **'प्रत्यन्तजनपद'** एवं **'म्लेच्छ'** में उत्पन्न इन दोनों को अलग-अलग गिना जाता है तो 'बुद्धोत्पाद के प्रति अश्रद्धा' को अक्षण मानने की आश्यकता नहीं है, अन्यथा नौ अक्षण हो जाएंगे। सामान्य तौर पर जब आठ अक्षणों की गणना की जाती है, तो एक मत इस प्रकार भी है, यथा—

नरकप्रेततिर्यञ्चो म्लेच्छा दीर्घायुषोऽमराः ।
मिथ्यादृग्-बुद्धकान्तारौ मूकताष्टविहाक्षणाः[१] ।।

---

१. बोधिचर्यावतारपञ्जिका, पृ० ८ में उद्धृत ।

अर्थात् नरक, प्रेत, तिर्यक्योनि, म्लेच्छ, दीर्घायु देव, मिथ्यादृष्टि, बुद्ध के प्रति अश्रद्धा एवं मूकता—ये आठ अक्षण हैं। लेकिन सुहल्लेख में उल्लिखित है कि मिथ्यादृष्टि, तिर्यक् में उत्पत्ति, प्रेत, नरक एवं बुद्धरहित स्थान में उत्पत्ति, म्लेच्छ के रूप में उत्पत्ति, बुद्धिहीन मूढ के रूप में उत्पत्ति, दीर्घायुष्य देव में उत्पत्ति—ये आठ अक्षण हैं[१]।

आचार्य नागार्जुन विरचित धर्मसंग्रह में कहा गया है—नरक में उत्पत्ति, तिर्यग्योनि में उत्पत्ति, यमलोक में उत्पत्ति, प्रत्यन्त जनपद में उत्पत्ति, दीर्घायुष्क देवयोनि में उत्पत्ति, इन्द्रियविकलता, मिथ्यादृष्टि एवं चित्तोत्पाद के प्रति अश्रद्धा—ये आठ अक्षण हैं।

आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान ने त्रिस्कन्धसूत्र टीका[२] में कहा है—

नरकप्रेततिर्यञ्चो म्लेच्छासंज्ञिकनिर्जराः ।
मिथ्यादृग्बुद्धनिःश्रद्धौ मूकताष्टक्षणाः स्थिताः ।।

अर्थात् नरक, प्रेत और तिर्यग्योनि में उत्पाद, म्लेच्छ और आसंज्ञिक देव के रूप में उत्पाद, मिथ्यादृष्टि से युक्त होना, ऐसे देश में उत्पाद जहाँ '**बुद्ध**' शब्द का श्रवण भी सम्भव न हो तथा मूकता—ये आठ अक्षण हैं।

पुनः संस्कृत मूल पाठ में '**चक्षुर्भूतानां**' यह शब्द उपलब्ध नहीं है। सम्भवतः मूल संस्कृत का हस्तलेख (पाण्डुलिपि) करते समय छूट गया हो अथवा मुद्रण करते समय छूट गया हो। परन्तु समस्त भोट अनुवादों में यह शब्द उपलब्ध होता है। अतः मैंने भोट अनुवाद को आधार बनाकर पुनरुद्धार करते समय इस शब्द को संस्कृत पाठ में जोड़ दिया है।

'**न प्रतिच्छादयामि**' यह पाठ मूल संस्कृत में उपलब्ध है। किन्तु दोनों भोट अनुवादों के किन्हीं संस्करणों में इस एक ही शब्द के 'कुछ भी छिपाता नहीं हूँ, कुछ भी नहीं छिपाऊँगा' इस प्रकार ये दो अर्थ किये गये हैं। ऐसा ही अर्थ

---

१. सु० ले०, श्लोक सं० - ६३-६४,
मिथ्यादृक् प्रत्यन्ते नरकप्रेततिर्यक्षूत्पद्यमानः ।
म्लेच्छो जडश्च सत्त्वो यो ह्युत्पन्नो बुद्धविरहिते ।। ६३ ।।
दीर्घायुषि देवकुले जनिलब्धश्चाँष्टाक्षणा इमे दोषाः । ६४।
२. देगे संस्करण, सं० ४००७, शास्त्र, सूत्र टीका वर्ग, 'जि' पुट्, पृ० १९५ ख ७ ।

समस्त भोट पूजा-पुस्तकों में भी उपलब्ध है। लेकिन आश्चर्य की बात यह है कि आचार्य नागार्जुन की त्रिस्कन्धसूत्र टीका में उपर्युक्त शब्द का वर्तमान और भविष्य क्रिया के रूप में दो बार प्रयोग किया है। इन दोनों शब्दों पर आचार्य ने अलग-अलग टीका की है। जैसे आचार्य नागार्जुन की त्रिस्कन्धसूत्रटीका के भोटानुवाद में कहा है—'दोष को स्वीकार करने से मन में भी कुछ नहीं छिपाने को '**न प्रतिच्छादयामि**' अर्थात् कुछ भी नहीं छिपाता हूँ तथा साक्षात् (यथार्थ) रूप में भी '**न प्रतिच्छादयामि**' अर्थात् कुछ भी नहीं छिपाऊँगा—ऐसा एक शब्द का द्विविध अर्थ करना मूल संस्कृत पाठ में सन्देह पैदा करता है। अतः मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि इस (नागार्जुन कृत) टीका को करते समय उस व्यक्ति के सम्मुख संस्कृत मूल पाठ न होकर भोट पूजापुस्तक अथवा सम्भवतः द्विविध अर्थ वाला संस्करण रहा होगा। उसे सामने रखकर शायद रचना की गई होगी। अतः ऐसी रचना के रचयिता वास्तव में आचार्य नागार्जुन जैसे मूल प्रवर्तक विद्वान् कदापि नहीं हो सकते। वह निश्चित ही कोई भोट विद्वान् रहा होगा। जिसने ग्रन्थ की लोकप्रियता एवं प्रसिद्धि के लिए इसे नागार्जुन की रचना बताया। शायद उस विद्वान् को भोट पूजापुस्तक अथवा अन्य संस्करण उपलब्ध था, जिसमें उपर्युक्त दो अर्थ किये गये थे।

पुनः मूल संस्कृत पाठ में "**तुलयित्वा अभिसंक्षिप्य**" यह वचन उपलब्ध है, परन्तु उपालिसूत्र के भोट अनुवाद एवं भोट पूजा-पुस्तकों में '**अभिसंक्षिप्य**' के स्थान पर मात्र '**संक्षिप्य**' यह पाठ उपलब्ध होता है, लेकिन शिक्षासमुच्चय के भोट अनुवाद में '**अभिसंक्षिप्य**' का पूरा अनुवाद प्राप्त होता है।

'**अनुत्तरायां**' यह वचन संस्कृत मूल पाठ में उपलब्ध है, किन्तु उपालिसूत्र के भोट अनुवाद एवं भोट पूजा-पुस्तकों में '**अनुत्तरायां**' एवं '**उत्तरोत्तरायां**' इस प्रकार दो अनुवाद प्राप्त होते हैं। वास्तव में '**अनुत्तरायां**' का दो बार अनुवाद किया गया है—ऐसा लगता है, किन्तु शिक्षासमुच्चय के भोट अनुवाद में संस्कृत मूलपाठ के अनुसार यथावत् अनुवाद किया गया है।

'**परिणामनया**' शब्द के भी भोट पूजा-पुस्तकों में दो अनुवाद प्राप्त होते हैं, जैसे—'जिसकी परिणामना करने से' तथा 'परिणामना की जाती है'।

"**एतर्हि दशसु दिक्षु प्रत्युत्पन्ना बुद्धा भगवन्तः**" यह वचन संस्कृत मूल पाठ में उपलब्ध है, परन्तु समस्त भोट अनुवादों में 'दशसु दिक्षु' का अनुवाद नहीं किया गया है।

"**सर्वं पापं प्रतिदेशयामि**" यह वाक्य शिक्षासमुच्चय के अन्तर्गत उद्धृत त्रिस्कन्धसूत्र के संस्कृत पाठ में उल्लिखित नहीं है। सम्भवतः हस्तलिपि में ही छूट गया हो अथवा शिक्षासमुच्चय की हस्तलिपि से मुद्रण करते समय प्रमादवश छूट गया हो। वास्तव में इस वाक्य का होना अत्यन्त आवश्यक है, क्योंकि समस्त भोट अनुवाद एवं टीकाओं में इसका उल्लेख ही नहीं, अपितु इस वचन पर टीका भी की गई है।

"**सर्वान् बुद्धानध्येषयामि**" अर्थात् मैं सभी बुद्धों से अध्येषणा करता हूँ। यह संस्कृत मूल पाठ में तथा उपालिसूत्र एवं शिक्षासमुच्चय दोनों के भोट अनुवाद में उपलब्ध है। परन्तु अधिकांश भोट पूजा-पुस्तकों एवं भोट टीकाओं में "**सर्वान् बुद्धान् अध्येषयामि याचयामि**" ऐसा पाठ मिलता है, जो संस्कृत मूल पाठ से भिन्न है तथा जिसका अर्थ है—"सभी बुद्धों से याचना करते हुए अध्येषणा करता हूँ।" आचार्य नागार्जुन एवं आचार्य जितारि की त्रिस्कन्धसूत्रटीका में भी याचना एवं अध्येषणा दोनों का उल्लेख प्राप्त होता है, किन्तु आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान की त्रिस्कन्धसूत्रटीका में ऐसा कोई उल्लेख प्राप्त नहीं होता है। अधिकांश भोट टीकाओं में इन दोनों शब्द का उल्लेख ही नहीं, अपितु इस एक वाक्य को सप्ताङ्ग पूजा में से दो अङ्गों को एक साथ दिखाने के प्रमाण के रूप में प्रस्तुत किया गया है। जैसा पूर्व में कहा गया है कि त्रिस्कन्धसूत्रटीका में सप्ताङ्ग पूजा का संग्रह किया गया है, जिसमें एक साथ दो अङ्गों की गणना की गई है। वास्तव में संस्कृत मूल के अनुसार ऐसा उल्लेख सही नहीं लगता है। कुछ भोट विद्वानों ने यहाँ तक कहा है कि यहाँ अध्येषणा को प्रत्यक्ष रूप में प्रस्तुत कर परोक्ष रूप में याचना को कहा गया है।

पुनः संस्कृत मूल पाठ में "**भवतु मे ज्ञानमनुत्तरम्**" ऐसा वचन उपलब्ध है। इसके उपालिसूत्र और शिक्षासमुच्चय के भोट अनुवाद कुछ भिन्न प्रतीत होते हैं। उपालिसूत्र के भोट अनुवाद में 'मेरा ज्ञान श्रेष्ठ अनुत्तर प्राप्त हो' तथा शिक्षासमुच्चय के भोट अनुवाद के अनुसार 'मैं अनुत्तर ज्ञान को प्राप्त होऊँ'। वास्तव में संस्कृत मूल पाठ के अनुसार 'मुझे अनुत्तर ज्ञान प्राप्त हो' ऐसा होना चाहिए था, किन्तु भोट पूजा-पुस्तकों के अनुवाद में 'मुझे (इस परिणामना से) परम श्रेष्ठ अनुत्तर ज्ञान प्राप्त हो'—ऐसा उल्लेख है। इस प्रकार पूर्व भोट अनुवाद के अनुसार मेरे ज्ञान की अनुत्तरबोधि प्राप्ति के लिए परिणामना करता हूँ तथा पश्चात् शिक्षासमुच्चय के भोट अनुवाद के अनुसार मैं स्वयं अनुत्तर ज्ञान की प्राप्ति के लिए परिणामना करता हूँ—ऐसा उल्लिखित है।

अन्त में "**ये चाभ्यतीतास्तथपि च**" इत्यादि एक गाथा के समाप्त हो जाने के पश्चात् शिक्षासमुच्चय में '**ये बोधिसत्त्वाः करुणाबलैरुपेताः**" इत्यादि एक और गाथा जोड़ी गई है, जो मूल उपालिसूत्र में उल्लिखित नहीं है। भोट पूजा-पुस्तकों में भी पूर्वोक्त '**ये चाभ्यतीतास्तथपि च**" इत्यादि एक गाथा समाप्त हो जाने के पश्चात् 'इदं त्रिस्कन्धसूत्रं समाप्तम्'—ऐसा उल्लेख स्पष्ट रूप से किया गया है।

मेरे मन में ऐसा विचार आता है कि जो कोई व्यक्ति जब इस त्रिस्कन्धसूत्र का पाठ करता है, तो उसे पूर्वोक्त संस्कृत मूल पाठ, उपालिसूत्र अथवा शिक्षासमुच्चय का भोट अनुवाद अथवा पूजा-पुस्तकों में से जिसके प्रति अधिक श्रद्धा हो अथवा चित्त में सरलतापूर्वक स्थापित कर सकता हो, उसी का पाठ करना चाहिए। उसी से अधिक पुण्य संचित किया जा सकता है और पाप-विशुद्धि भी की जा सकती है।

आर्यत्रिस्कन्धसूत्र की पाठसंचय विधि के विभिन्न मत

भोट देश में उपालिपरिपृच्छासूत्र के अन्तर्गत गृहीत त्रिस्कन्धसूत्र का पाठ करते समय उसके सन्दर्भ में भिन्न-भिन्न मत हैं। भोटदेश के कुछ विद्वानों का विचार है कि इस सूत्र के पाठ का संकलन करते समय प्रारम्भ के शरणगमन से लेकर सूत्र के अन्त तक पाठ करके संचय किया जाता है। कुछ विद्वान् '**तथागत शाक्यमुनि**' से लेकर अन्तिम तथागत '**शैलेन्द्रराज**' पर्यन्त पाठ करके इन ३५ बुद्धों का ही नाम बारम्बार पाठ करके संचय करते हैं। कुछ अन्य विद्वानों का कहना है कि जैसे तथागत शाक्यमुनि के ही नाम का २५ बार पाठ करके तत्पश्चात् शेष वज्रगर्भप्रमर्दिन् आदि ३४ बुद्धों के नाम का भी २५-२५ बार उच्चारण करके संचय करना चाहिए। इस प्रकार पूर्वोक्त तीन मतों में से अन्तिम दो मत अच्छे माने जाते हैं, क्योंकि इस प्रकार संचय करने से इन बुद्धों के नाम का स्मरण करते समय आलम्बन में चित्त को सरलता से सम्यक् रूप से स्थापित किया जा सकता है तथा प्रत्येक की अनुशंसा का चित्त में अवलोकन किया जा सकता है। यही इसका विशिष्ट प्रयोजन है। ऐसा परम पावन १४वें दलाई लामा के गुरु स्वर्गीय क्यब् जे ठिछंग रिनपोछे ने अपने '**लमरिम नमडोल लग् चङ्**[१]'

---

१. द्र०-पृ० १७५, मोनघोट स्थित गदेन शरचे प्रकाशन, १९८४ ।

नामक ग्रन्थ में कहा है। इस प्रकार बाद वाले दोनों मतों की पाठविधि के पश्चात् 'एवंप्रमुखा यावन्तः' से सूत्र के अन्त तक एक बार पाठ करके समाप्त करना चाहिए।

इस प्रकार ३५ बुद्धों के नाम का संचय करने में भी '**तथागत**' शब्द को पूर्व में जोड़ने और न जोड़ने में मतभेद है। इन सभी ३५ बुद्धों के नाम के पहले '**तथागत**' शब्द को जोड़ करके सूत्र का पाठ करना चाहिए—ऐसा कुछ विद्वानों का विचार है तथा कुछ अन्य विद्वानों का कहना है कि समस्त ३५ बुद्धों के नाम के प्रारम्भ में 'तथागत' शब्द न जोड़कर सूत्र में जैसा पठित है, उसी की भाँति पाठ करना चाहिए।

इन दोनों मतों में से प्रथम विचार के प्रारम्भक **आचार्य चोंखापा (सुमतिकीर्ति)** हैं। चोंखापा से पूर्ववर्ती या गेलुक सम्प्रदाय से अतिरिक्त विद्वानों का विचार है कि समस्त ३५ बुद्धों के नाम के प्रारम्भ में 'तथागत' शब्द जोड़ना आवश्यक नहीं है। चोंखापा के अनुयायियों का कहना है कि जब आचार्य **चोंखापा** 'होल्खा' नामक पर्वत पर सप्त अङ्गों के द्वारा पुण्यों का संचय और पापों का क्षय कर रहे थे, उस समय '**आपत्तिदेशना-त्रिस्कन्धसूत्र**' का सूत्र में उपलब्ध पाठ की भाँति पाठ करके वन्दना एवं साष्टांग प्रणाम कर रहे थे। तब उन्हें आपत्तिदेशना-त्रिस्कन्धसूत्र में विद्यमान समस्त ३५ बुद्धों का यद्यपि साक्षात् दर्शन हुआ, किन्तु अधिकांश बुद्धों के शिरोभाग का दर्शन नहीं हुआ। उस समय आचार्य चोंखापा को यह विचार आया कि प्रशंसावाची '**तथागत**' शब्द न जोड़ने के कारण या सीधे नाम का उच्चारण करने के कारण यह दोष हुआ है। उन्होंने समस्त बुद्धों के नाम के प्रारम्भ में '**तथागत**' शब्द जोड़कर पुनः पाठ किया, तब उस समय तथागत नागेन्द्रराज का सर्वप्रथम दर्शन हुआ और तत्पश्चात् क्रमशः समस्त ३४ बुद्धों का पूर्ण रूप से उनके काय, वर्ण और आयुधों के साथ साक्षात्कार हुआ—ऐसा चोंखापा जी के परम शिष्य 'सिद्ध जम्पल ग्याछो' (मञ्जुश्री-सागर) के वचन को महा सिद्ध ल्होडग नमखा ग्यल्छन् ने **आपत्तिदेशना-त्रिस्कन्धसूत्र की टीका**[१] में उद्धृत किया है। यहीं से समस्त ३५ बुद्धों के नाम से पूर्व 'तथागत' शब्द जोड़ने की परम्परा प्रारम्भ हुई। अतः बाद में गेलुक सम्प्रदाय के अनुयायी लोग इसी पाठ का अनुसरण करते हैं।

---

१. तिब्बती ग्रन्थालय, धर्मशाला, ग्रन्थ सं० ४०६४, 'प' पुट्, पृ० ७६९ ।

गेलुक सम्प्रदाय के एक वरिष्ठ विद्वान् भिक्षु '**टशी पल्दन**' ने चोंखापा जी के **गुह्यवृत्तान्त**[१] में कहा है—"सप्त अङ्गों के पाठ की विधि का अनुसरण करते हुए ३५ बुद्धों का प्रत्यक्ष रूप से उनके काय, आकार एवं आयुध आदि के साथ यथावत् दर्शन करने वाले और निरन्तर दर्शन करने वाले धर्मराज (चोंखापा) जैसे परम गुरु के चरणों में, मैं शिरसा प्रणाम करता हूँ।

अन्य पाठ करने वालों का मानना है कि सूत्र का यथावत् (जैसा सूत्र है, वैसा) पाठ करना चाहिए। '**तथागत**' के वचनों में अपने शब्द युक्त करके पाठ भ्रष्ट करना उचित नहीं है, क्योंकि आचार्य नागार्जुन ने **त्रिस्कन्ध सूत्र टीका** में कहा है—"(अत:) अर्थत: (सबके साथ 'तथागत' का विद्यमान होना), जानना चाहिए। (और) मन से आलम्बन करना चाहिए। (शब्दश:) 'तथागत' शब्द जोड़ दें तो वचन-विरोध हो जाएगा। इसलिए पदों को संक्षिप्त कर देशना की गई है।" (नागार्जुन के) इस वचन को प्रमाण मानने से आचार्य चोंखापा जी का मत सूत्र-विरुद्ध माना जाता है। फिर भी, नागार्जुन के इस विचार की अन्य प्रकार से भी टीका की जा सकती है। जैसे **नागार्जुन**[२] ने कहा है—सभी ३५ बुद्धों के नाम के प्रारम्भ में यद्यपि '**तथागत**' शब्द नहीं है, केवल चार बुद्धों के नाम से पूर्व '**तथागत**' शब्द हैं, फिर भी उसे "अर्थत: जान लेना चाहिए और मन से आलम्बन करना चाहिए"। यहाँ 'अर्थत: जानना चाहिए और मन से आलम्बन करना चाहिए' इससे यह संकेत मिलता है कि प्रकारान्तर से '**तथागत**' शब्द जोड़ना ही उनका तात्पर्य है। मन से आलम्बन का अर्थ है कि मन में '**तथागत**' शब्द सहित बुद्धों का नाम लेना है। अन्त में पदों को संक्षिप्त करके दी गई देशना से यह तात्पर्य निकलता है कि यहाँ पर समास किया हुआ है। इसे आधार बनाकर चोंखापा जी का विचार सूत्रविरोधी है—ऐसा कुछ विद्वानों का विचार अनुपयुक्त है।

श्री कर्मा-पा मिक्योद् दोर्जे[३] ने कहा है "नाममात्र का उच्चारण करने में कोई दोष नहीं है, क्योंकि जब मन्त्रों का जप किया जाता है, तब उस समय नाममात्र का उच्चारण किया जाता है"। अत: उनका विचार है कि आदरसूचक शब्द जो '**तथागत**' है, उसका योग करना कोई आवश्यक नहीं है। **लामा**

---

१. गेलुगपा पूजा पुस्तक, पृ० १४२, केन्द्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा संस्थान सारनाथ, गेलुग छात्र कमेटी प्रकाशन, १९९९ ।

२. देगे संस्करण, सं० ४००५, शास्त्र, सूत्र टीका वर्ग, 'जि' पुट्, पृ० १७९ क ३ ।

३. मेदोङ् चमपा रिनपोछे वचन संग्रह, भाग-१, पृ० ५४५ ।

तारानाथ ने **त्रिस्कन्धसूत्र** की **टीका**[१] में कहा है "इन (३५ बुद्धों) में से प्रथम तथागत शाक्यमुनि एवं अन्तिम तथागत शैलेन्द्रराज में विस्तृत आदरसूचक शब्द जोड़ा गया है। इसी प्रकार सभी तथागतों में समझना चाहिए (यह विस्तृत पाठ के बारे में है)। २४वें तथागत और २५वें तथागत में अल्प आदरसूचक शब्द जोड़ा गया है। उसी प्रकार आदि एवं अन्तिम बुद्धों तक समझना चाहिए (यह मध्यम पाठ के बारे में हैं)। अन्य ३१ बुद्धों में जो आदरसूचक शब्द का प्रयोग नहीं किया गया है, (वह लघु पाठ के बारे में है)—ऐसा समझना चाहिए। लेकिन प्रारम्भ के बुद्ध शाक्यमुनि में आदरसूचक शब्द लगाना अनिवार्य है"।

अतः विस्तृत पाठ के इच्छुक लोग प्रारम्भ के तथागत शाक्यमुनि से लेकर अन्तिम तथागत शैलेन्द्र राज तक में आदरसूचक शब्द '**तथागत**' को जोड़ सकते हैं। मध्यम पाठ करने के इच्छुक लोगों को प्रारम्भ तथा अन्तिम तथागत और २४वें, २५वें तथागत में आदरसूचकर '**तथागत**' शब्द को जोड़ना चाहिए तथा लघु पाठ करने के इच्छुक लोगों को प्रारम्भ के तथागत के अतिरिक्त अवशिष्ट ३४ तथागतों में आदरसूचक '**तथागत**' शब्द न जोड़कर पाठ करना चाहिए। ऐसा उन (तारानाथ) का विचार प्रतीत होता है। लेकिन तिब्बत के वरिष्ठ विद्वान् **मेद् दोङ् छम्पा रिनपोछे** ने अपनी **त्रिस्कन्धसूत्र-टीका**[२] में कहा है, यथा—"जिस व्यक्ति की जिस सम्प्रदाय के प्रति श्रद्धा है, उसी मत के अनुसार पाठ का अधिष्ठान करने से अधिक फलदायक होता है। अन्य विद्वान् '**सर्वज्ञ गुण**' का कहना है कि बिना पक्षपात के अपने ही मत को ग्रहण करें तो प्रसन्नता प्राप्त होगी।

इस प्रकार सभी विद्वानों के मतों को वास्तविक रूप में कारण सहित प्रस्तुत किया गया है, इसलिए विचार करना अपेक्षित है। अतः मैं कुछ मतों का स्पष्टीकरण करना चाहता हूँ। मन्त्र उच्चारण करते समय मात्र नाम का ही उच्चारण नहीं किया जाता है, क्योंकि उस मन्त्र के प्रारम्भ में '**ओं**' शब्द विद्यमान होने से वह आदरसूचक हो जाता है, अतः सम्पूर्ण रूप से गलत कहना उचित नहीं है। यदि सूत्रपक्ष के अनुसार कहें तो त्रिस्कन्धसूत्र में विद्यमान समस्त ३५ बुद्धों के नामों के प्रारम्भ में आदरसूचक '**तथागत**' शब्द लगाने से सूत्रविरोध,

---

१. वचन संग्रह, 'प' पुट्, पृ० २४२ ।
२. वचन संग्रह, भाग-१, पृ० ५४६ ।

असम्बद्ध, मिश्रित एवं अनुचित प्रतीत नहीं होता है, क्योंकि जो शब्द प्रयुक्त किया जाता है, वह आदर या प्रशस्ति का शब्द होता है, वह आदर या प्रशस्ति का शब्द तो है ही, बल्कि उससे किसी (जे चोंखापा जी) को इन सभी ३५ बुद्धों का साक्षात्कार भी हुआ है। इसलिए इसे गलत कहना ठीक नहीं है। अपि च, जे चोंखापा जी के द्वारा इस परम्परा को लागू करने के पूर्व आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान ने '**शतसहस्रबुद्धनाम**' नामक एक ग्रन्थ की रचना की है, उस ग्रन्थ में इन सभी ३५ बुद्धों का नाम क्रमशः विद्यमान है। उसमें इन ३५ बुद्धों के नाम के प्रारम्भ में आदरसूचक शब्द '**तथागत**' प्रयुक्त किया गया है। अन्य '**पञ्चसहस्रचतुःशत-त्रिपञ्चाशत्कबुद्धनामसूत्र**' और '**आर्यकुसुमसञ्चयमहायानसूत्र**' में इन ३५ बुद्धों में से अधिकांश का नाम उल्लिखित है, उसमें भी आदरसूचक '**तथागत**' शब्द प्रयुक्त किया हुआ उपलब्ध होता है।

अपि च, '**तथागत**' शब्द प्रयुक्त करने से कोई दोष भी नहीं होगा, अपितु अपरिमित पुण्यसंचय एवं विशिष्ट प्रयोजन सिद्ध होगा, क्योंकि जब तथागत शाक्यमुनि पहली बार धर्मचक्र प्रवर्तन के लिए ऋषिपतन मृगदाव (वाराणसी) पहुँचे तब कौण्डिन्य आदि पाँच शिष्यों ने तथागत शाक्यमुनि के लिए 'आयुष्मान्' शब्द का प्रयोग किया। तब तथागत बुद्ध ने उनसे तथागत बुद्ध के लिए '**आयुष्मान्**' शब्द के प्रयोग का निषेध किया—ऐसा **ललितविस्तरसूत्र**[१] में कहा गया है, यथा—

"मा यूयं भिक्षवस्तथागतमायुष्मद्वादेन समुदाचरिष्ट। मा वो भूद् दीर्घरात्रमर्थाय हिताय सुखाय। अमृतं मया भिक्षवः साक्षात्कृतोऽमृतगामी च मार्गः। बुद्धोऽहमस्मि, भिक्षवः सर्वज्ञः सर्वदर्शी शीतीभूतोऽनास्रवः, वशी सर्वधर्मेषु।"

[भिक्षुओं, तुम **तथागत** के लिए 'आयुष्मान्' शब्द का व्यवहार मत करो, ऐसा करना तुम्हारे लिए बहुत दिनों तक लाभ, हित और सुख के लिए नहीं होगा। मैंने अमृत (निर्वाण) का साक्षात्कार किया है और अमृतगामी मार्ग का भी साक्षात्कार किया है। हे भिक्षुओं, मैं बुद्ध, सर्वज्ञ, सर्वदर्शी शीतीभूत और अनास्रव हो गया हूँ तथा मुझे सभी धर्मों पर वशिता प्राप्त हो गई है।]

---

१. द्र०-ललितविस्तरसूत्र, पृ० २९८, मिथिला संस्करण १९५८ ।

जो इस प्रकार है—बुद्ध के नामों से पूर्व 'तथागत' शब्द जोड़ने का एक अन्य प्रयोजन भी है। यदि पहले 'तथागत' शब्द न जोड़ा जाएगा तो कुछ नाम ऐसे हैं, जो तैर्थिक (बौद्धेतर) देवों के नाम से तुल्य है, जैसे—नारायण, ब्रह्मा, वरुण, वरुणदेव आदि। ऐसी स्थिति में तैर्थिक देवों का भ्रम हो सकता है। उस भ्रम के निवारणार्थ उस नाम से पूर्व 'तथागत' शब्द (विशेषण) जोड़ना आवश्यक है। फलतः भ्रम की गुंजाइश नहीं रहेगी।

अपि च, आजकल इस जगत् में क्लेश एवं ज्ञेय आवरणों से बद्ध जन भी छोटे पद या अल्प ज्ञान अथवा अल्प गुण का अधिगम होने पर अपने नाम के साथ आदर या प्रशस्तिसूचक शब्द महामहिम, जगद्गुरु, महात्मा, श्री श्री १०८, प्रोफेसर, डॉक्टर, गेशे या रिनपोछे आदि जोड़ते हुए दृष्टिगोचर होते हैं। अतः वस्तुतः समस्त दोषों के क्षय एवं समस्त गुणों से युक्त बुद्धों के नाम के साथ आदरसूचक शब्द या प्रशस्तिवाचक शब्द **'तथागत'** जोड़ने में मुझे कोई दोष प्रतीत नहीं होता।

'लमरिम नमडोल लगचङ्[१]**'** (सुलभ विमुक्तिमार्गक्रम) में कहा है—"**आपत्तिदेशनात्रिस्कन्धसूत्र** में अधिकांश बुद्धों के नाम के प्रारम्भ में **'तथागत'** शब्द जोड़ा हुआ उपलब्ध नहीं होता, फिर भी बिना आदरसूचक शब्द का प्रयोग किये नाममात्र का उच्चारण करना उचित नहीं है। अतः चोंखापा जी के द्वारा स्थापित परम्परा के अनुसार समस्त ३५ बुद्धों के नाम के प्रारम्भ में आदरसूचक शब्द **'तथागत'** का प्रयोग करना चाहिए"। अर्थात् आदरसूचक शब्द का प्रयोग करना उचित माना गया है।

परन्तु आचार्य नागार्जुन के द्वारा विरचित त्रिस्कन्धसूत्रटीका तथा कतिपय भोट टीकाओं में आदरसूचक तथागत शब्द को समस्त ३५ बुद्धों के नाम के साथ प्रयुक्त करने में अनौचित्य एवं स्ववचनविरोध आदि आक्षेपों को ध्यान में रखते हुए संस्कृत-मूल में प्राप्त पाठ को ही हमने यथावत् स्वीकार किया गया है।

३५ बुद्धों के नाम के अर्थ में एक समीक्षा

बोध्यापत्तिदेशनात्रिस्कन्धसूत्र में ३५ असाधारण बुद्धों के अपने-अपने पृथक् नाम हैं। इन सभी बुद्धों के नामों के पृथक्-पृथक् अर्थ हैं। इस विषय में अलग-अलग विद्वानों ने अपने-अपने विचारों के अनुसार नाम के अर्थों की टीका

---

१. पृ० १७६, गदेन शरत्चे प्रकाशन, १९९४ ।

की है। जैसे—'**नमः (भगवते) शाक्यमुनये तथागतायार्हते सम्यक्संबुद्धाय**' एक ही बुद्ध के नाम के अर्थ के विषय में ही आचार्य नागार्जुन ने **त्रिस्कन्धसूत्र टीका**[१] में कहा है, यथा—

"**तथागत का तात्पर्य** 'तथतावान्' तथतावाला है। अधिगम तथा तथता में लीन होने से, पुनः-पुनः आगमन करने से (उन्हें तथागत कहा जाता है)। इसीलिए यह सभी (आर्यपुद्गलों एवं देवों) से विशिष्ट है। '**अर्हत्**' का (तात्पर्य) क्लेश एवं ज्ञेय आवरण रूपी शत्रुओं का हनन करने वाले से है। इसके द्वारा बोधिसत्त्वों से (बुद्ध की) विशेषता दिखलाई गई है। '**सम्यक्**' का तात्पर्य अविपरीत है। इसके द्वारा संसार एवं हीनयान से (विशिष्टता दिखलाई गई) है। '**संबुद्ध**' में 'सम्' का तात्पर्य दो सम्भारों (ज्ञानसम्भार एवं पुण्यसम्भार) से तथा दो सम्पत्तियों (स्वसम्पत्ति एवं परार्थ सम्पत्ति) से सम्पन्न दो कायों से है। '**बुद्ध**' तो प्रहाण सम्पद् और ज्ञान (अधिगम) सम्पद् इन दो सम्पदाओं से सम्पन्न है। इन दोनों के द्वारा (बुद्ध को) संसार एवं निर्वाण (में स्थित) सभी पुद्गलों से विशिष्ट दिखाया गया है। इसका लक्षण '**शाक्यमुनि**' है। (अर्थतः) उनका ज्ञान, सामर्थ्य एवं गुण ही हैं। यहाँ (शाक्य के) '**शा**' का (तात्पर्य) ज्ञान से है (अर्थात्) अशेष ज्ञान। '**क्य**' का तात्पर्य अवबोध (अधिगम) से है। '**मुनि**' का (तात्पर्य) अद्वय से युक्त होना है। (अर्थतः) मुनि या सामर्थ्य का (तात्पर्य) शाक्यराजवंशीय होने से उसका अर्थ जन्मों और दोषों को जीतनेवाला होता है। (यह उसका) कारित्र है। गुण (की दृष्टि से) '**शाक्य**' का तात्पर्य अतिविशिष्ट है। काय, वाक् एवं चित्त के असाधारण संवरण के कारण ही ये '**मुनि**' हैं।"

इसी प्रकार **आचार्य जितारि** ने '**त्रिस्कन्धसूत्रटीका**[२]' में कहा है, यथा—"**नमो भगवते शाक्यमुनये तथागतायार्हते सम्यक्संबुद्धाय**' का तात्पर्य बलसहित समस्त मारों का महासंग्राम में विनाश करने वाला होने से वे '**भगवान्**' हैं। '**तथागत**' का तात्पर्य अविपर्यस्त यथावत् देशना देनेवाले से है। '**अर्हत्**' का तात्पर्य समस्त मनोरथों को प्राप्त करने वाले से है तथा अनुत्तर पुण्यक्षेत्र और पूजा के योग्य होने से है। सभी धर्मों के परमार्थ रूप के यथावत् ज्ञाता होने से '**सम्यक्संबुद्ध**' है—ऐसा कहा गया है। 'शाक्यमुनि' से तात्पर्य समस्त क्लेशों के

---

१. देगे संस्करण, सं० ४००५, शास्त्र, सूत्र टीका वर्ग, 'जि' पुद्, पृ० १८० ख ३ ।
२. देगे संस्करण, सं० ४००६, शास्त्र, सूत्र टीका वर्ग, 'जि' पुद्, पृ० १८८ क ५ ।

अशेष प्रहाण को प्राप्त, आदेयवचन, सम्पन्न कुल और सम्पन्न ऐश्वर्य वाले होने से है।''

इसी प्रकार **आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान** ने अपनी **त्रिस्कन्धसूत्रटीका**[१] में कहा है—''यहाँ सभी धर्मों की तथता का अधिगम अथवा उस (तथता) का अध्यवसाय '**तथागत**' है। '**अर**' का तात्पर्य अरि (शत्रु) या अर (पहिये के नीचे का भाग=अंश) है, उनको जो मारता या दबाता है, वह '**हत्**' है। वासनासहित क्लशों का पुनः उत्पाद न होने देने के लिए प्रहाण करनेवाला होने से अथवा प्रतीत्यसमुत्पाद (के ज्ञान) के द्वारा (क्लेशरूपी) शत्रुओं का नाश करने से '**अर्हत्**' कहलाता है। अथवा तीनों धातुओं में पूजा के योग्य होने के कारण '**अर्ह**' का अर्थ योग्य है। सभी धर्मों को सर्वथा सम्यक् रूप से और समरूप से जाननेवाला होने से '**सम्यक्संबुद्ध**' कहा जाता है। इसके द्वारा प्रहाण और गुण (अधिगम) ये दो महत्त्व कहे गये हैं। (इसी तरह) अन्य गुणों को जानना चाहिए। शाक्यकुल में उत्पन्न होने के कारण (वे) '**शाक्यमुनि**' इस प्रकार कहे गये हैं।''

इस प्रकार तीनों भारतीय आचार्यों की टीकाओं में ३५ बुद्धों में से सर्वप्रथम शाक्यमुनि के नाम का अर्थ एकसमान नहीं है। वास्तव में वे सभी गुण बुद्ध में विद्यमान हैं, इसलिए उनके द्वारा प्रतिपादित शब्दार्थ गलत भी नहीं हैं। इसी प्रकार शेष तथागतों के नाम के अर्थ में भी समानता नहीं है, फिर भी (सभी गुणों की विद्यमानता होने से) शब्दार्थ गलत नहीं हैं।

भोट-टीकाओं में भी नाम के अर्थ की समानता नहीं है, जैसे—भोटदेशीय वरिष्ठ विद्वान् '**खेडुब सङ्गे येशे**' ने अपनी **त्रिस्कन्धसूत्रटीका**[२] में '**भगवान् शाक्यमुनि तथागत अर्हत् सम्यक्सम्बुद्ध**' के सन्दर्भ में कहा है—''भगवान् तो चार मारों के विनाशक तथा चार काय एवं पाँच ज्ञानों से युक्त हैं अथवा भव (संसार) एवं परिनिर्वाण से अतीत हैं—इसलिए उन्हें '**भगवान्**' कहा गया है। सभी धर्मों की तथता और सभी धर्मों को यथावत् प्रत्यक्षतया जानने के कारण उन्हें '**तथागत**' कहा गया है। '**अर्हत्**' क्लेशरूपी अरों का विनाश करने के कारण वे '**अर्हत्**' कहे गये हैं। समस्त गुणों से सम्यक् रूप से यथावत् सम्पन्न होने से वे '**सम्यक्सम्बुद्ध**' हैं। क्लेशावरण रूपी नींद से जागृत होने से तथा समस्त ज्ञेयों में बुद्धि का विकास होने से वे '**बुद्ध**' कहलाते हैं। बुद्ध को '**जिन**' भी कहा जाता

---

१. देगे संस्करण, सं० ४००७, शास्त्र, सूत्र टीका वर्ग, 'जि' पुट, पृ० १९४ ख ६ ।
२. लोसङ्‌गोडगेन, भाग-७, पृ० ८३, लोलिङ्‌ग्रन्थालय प्रकाशन, १९९६ ।

है। अभ्युदय एवं निःश्रेयस से सम्पन्न होने के कारण उनके नाम के आगे '**श्री**' शब्द का योग किया गया है। समस्त प्रहेय विपक्षों पर विजय प्राप्त करने के कारण उन्हें '**जिन**' कहा जाता है। शाक्य कुल में जन्म लेने के कारण '**शाक्य**' तथा शत्रुरूपी क्लेशों के दमन में क्षमता होने के कारण वे '**शाक्यमुनि**' कहलाते हैं। अथवा बिना बाधा या रुकावट के निरन्तर उपदेश देने की उनमें क्षमता है, इसलिए वे '**मुनि**' कहे जाते हैं।''

इसी तरह **लामा तारानाथ** ने अपनी **त्रिस्कन्धसूत्र टीका**[१] में कहा है—तथता का अभ्रान्ततया अवलोकन करने के कारण वे '**तथागत**' हैं। चारों मारों का दमन करने के कारण वे '**अर्हत्**' हैं। समस्त धर्मों में अन्धकाररूपी अविद्या का नाश कर उन्हें (धर्मों को) प्रकाशित करने के कारण वे '**सम्यक्सम्बुद्ध**' हैं। क्षमता एवं आत्मबल से युक्त होने के कारण वे '**शाक्य**' हैं। दो (क्लेश और ज्ञेय) आवरण रूपी अर को वासना के साथ नाश करने में समर्थ होने के कारण वे '**मुनि**' कहलाते हैं।

इस प्रकार भोट टीकाओं में भी एक ही बुद्ध के नाम के अर्थ में भिन्नता दिखलाई पड़ती है। अतः ३५ बुद्धों में से प्रत्येक के नाम के अर्थ पर विचारपूर्वक शोध करना आवश्यक प्रतीत होता है। परन्तु मेरे जैसे अल्पबुद्धि एवं मन्दप्रज्ञ द्वारा शोध करके किसी निष्कर्ष को प्रस्तुत करना अत्यन्त दुःसाध्य है। दूसरी बात यह भी है कि मुझ जैसे व्यक्ति द्वारा, जिसे कोई अधिगम नहीं हुआ है, उसके द्वारा बुद्ध जैसे पद के गुणों के बारे में कुछ कहना नितान्त अशक्य है। तीसरे, भूमिका के अत्यधिक विस्तृत हो जाने के भय से इतना कहकर ही विराम किया जा रहा है।

३५ बुद्धों के कायवर्ण, आयुध तथा क्षेत्र में एक समीक्षा

भारतीय आचार्यों की त्रिस्कन्धसूत्र की टीकाओं में से **आचार्य नागार्जुनकृत त्रिस्कन्धसूत्रटीका** के अतिरिक्त किसी भी भारतीय आचार्य की टीकाओं में ३५ बुद्धों के काय के वर्ण, आयुध एवं क्षेत्र के सन्दर्भ में कोई भी विवरण उपलब्ध नहीं होता। भोट टीकाओं में ३५ बुद्धों के काय के वर्ण, आयुध एवं क्षेत्र के विषय में **आचार्य नागार्जुन** का अनुसरण करने वाले, उनके साक्षात् द्रष्टा **आचार्य चोंखापा** का अनुसरण करने वाले तथा **साक्य पण्डित कुनगा**

१. वचन संग्रह, 'प' पुट्, पृ० २३९ ।

ग्यलछन का अनुसरण करने वाले तीन भिन्न मत हैं। आचार्य नागार्जुन की त्रिस्कन्धसूत्रटीका का अनुसरण करनेवाले भोट विद्वानों में से '**मेद् दोङ् छम्पा रिनपोछे**', **डो छु धर्मभद्र** एवं **डिगोन तेनजिन** आदि हैं, जिन्होंने त्रिस्कन्धसूत्र की टीकाएं की हैं। आचार्य चोंखापा का अनुसरण करनेवाले भोट विद्वानों में **जे गोङ् थाङ् तेनपई डोलमा, जमगोन् ल्होतेर वङ्पो, थुहुकेन छोस् क्यि ञिमा, ल्होडक् नमखा ग्यलछेन, उर्गा केदोर खेनपो, नवङ् लोसंग् खेडुब्** तथा **सेरजे ल्होपा डगदेन** आदि हैं, जिनके द्वारा विरचित त्रिस्कन्धसूत्रटीकाएं उनका समर्थन करती हैं। साक्य पण्डित का अनुसरण करनेवाले साक्य लोतेर वङ्पो आदि अनेक साक्य सम्प्रदायानुयायी विद्वान् हैं, जो साक्य पण्डित के मत का अनुसरण करते हैं।

आचार्य नागार्जुन के अनुसार ३५ बुद्धों के क्षेत्र तथा दिशा

आचार्य नागार्जुन की **त्रिस्कन्धसूत्रटीका** के अनुसार १० दिशाएं हैं। यथा—चार दिशा, चार अनुदिशा, ऊर्ध्व एवं अधः दो दिशा—इस प्रकार १० दिशाएं होती हैं। आचार्य चोंखापा की **त्रिस्कन्धसूत्रटीका** में दिशा के सन्दर्भ में ऐसा कोई उल्लेख नहीं है, किन्तु **आर्यकुसुमसंचयसूत्र** में ३५ बुद्धों में से लगभग १५ बुद्धों के नाम प्राप्त होते हैं। उसमें विद्यमान अधिकांश दिशाएं तथा क्षेत्र आदि आचार्य नागार्जुन की टीका से भिन्न हैं। आचार्य चोंखापा की **त्रिस्कन्धसूत्र टीका** में यद्यपि दिशाओं का उल्लेख नहीं है, फिर भी तिब्बत के वरिष्ठ विद्वान् ल्होडक् नमखा ग्यलछेन ने आचार्य चोंखापा जी का अनुसरण करते हुए भी दिशाओं का निर्देश किया है। किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि उन्होंने आचार्य नागार्जुन द्वारा विरचित त्रिस्कन्धसूत्रटीका से दिशाओं एवं क्षेत्रों को यथावत् उद्धृत किया है।

आचार्य नागार्जुन के अनुसार ३५ बुद्धों की मुद्राएं एवं आयुध

मुद्राएं—आचार्य नागार्जुन रचित **त्रिस्कन्धसूत्रटीका** में मात्र तीन प्रकार की मुद्राएं प्राप्त होती हैं, जो इस प्रकार हैं, यथा—धर्मचक्रप्रवर्तनमुद्रा, भूमिस्पर्श-मुद्रा तथा अभयमुद्रा।

आयुध—आचार्य नागार्जुन की **त्रिस्कन्धसूत्रटीका** में मुद्राएं एवं आयुध दोनों से संयुक्त २५ प्रकार हैं, जो इस प्रकार है, यथा—१. वज्र, २. सूर्य, ३. नागलता, ४. नीलसर्प, ५. पोथी, ६. खड्ग, ७. रत्न, ८. अग्निमण्डल, ९. चन्द्र, १०. बुद्ध के दो चक्षु, ११. दर्पण, १२. श्रीफलवृक्ष, १३. मण्डल, १४. कल्पद्रुम, १५. चन्दन, १६. श्वेत प्रभामण्डल, १७. अशोकवृक्ष, १८. मेरुपर्वत, १९. पीतकुसुम,

२०. श्वेत पद्म, २१. उष्णीषबन्ध, २२. केतु, २३. ध्वज, २४. कवच तथा २५. रत्नवृक्ष।

साक्य पण्डित के अनुसार ३५ बुद्धों की मुद्रा एवं वर्ण

भोट देश के वरिष्ठ विद्वान् साक्य पण्डित कुंगा ग्यलछन् का मानना है कि ये सभी ३५ बुद्ध निर्माणकायधारी तथा पाँच वर्णों एवं पाँच मुद्राओं वाले हैं। ३५ बुद्धों में से प्रथम बुद्ध श्वेत वर्ण एवं धर्मचक्रप्रवर्तन मुद्रा वाले हैं। दूसरे बुद्ध नीलवर्ण एवं भूमिस्पर्श मुद्रा वाले हैं। तीसरे बुद्ध पीतवर्ण एवं वरद मुद्रा वाले हैं। चतुर्थ बुद्ध रक्तवर्ण तथा ध्यानमुद्रा वाले हैं। पञ्चम बुद्ध हरितवर्ण एवं अभयदानमुद्रा वाले हैं। ये सभी बुद्ध एक ही दिशा में विराजमान न होकर मिश्रित दिशाओं में विराजमान हैं। उनमें भी श्वेत वर्ण वाले बुद्ध के समक्ष क्रमशः नील, पीत, रक्त एवं हरितवर्ण के बुद्ध विराजमान हैं, इस रूप में भावना करें तो मन में स्पष्ट अवलोकन आदि की अनेक विशेषताएँ होती हैं—ऐसा साक्यपण्डित जी ने अपने '**त्रिस्कन्धसूत्रपाठोपाय**[१]' नामक ग्रन्थ में उल्लेख किया है। अतः उनका विचार है कि उन सभी ३५ बुद्धों की मुद्रा एवं वर्ण पञ्चतथागतकुल के स्वरूप की भाँति होना चाहिए। वे ३५ बुद्धों में आयुध धारण कदापि स्वीकार नहीं करते हैं। साथ ही, अनेक मुद्राएँ भी स्वीकार नहीं करते।

आर्यकुसुमसंचयसूत्र में वर्णमुद्राओं और आयुध के सन्दर्भ में कुछ भी स्पष्ट नहीं है।

जे चोङ्खापा के परम्परा के अनुसार ३५ बुद्धों के कायवर्ण, मुद्राएं एवं आयुध

आचार्य चोंखापा के द्वारा स्थापित परम्परा के अनुयायियों द्वारा विरचित **त्रिस्कन्धसूत्रटीका** में उल्लिखित ३५ बुद्धों के कायवर्णों तथा आचार्य नागार्जुन की त्रिस्कन्धसूत्रटीका में वर्णित कायवर्णों की परस्पर तुलना करने पर ३५ बुद्धों में ११ के कायवर्ण समानरूप से उपलब्ध होते हैं। ७ बुद्धों के कायवर्णों में अल्प समानता है तथा शेष १७ बुद्धों के कायवर्ण बिलकुल भिन्न हैं। समान कायवर्ण वाले ११ बुद्ध इस प्रकार हैं—१. प्रथम तथागत शाक्यमुनि, २. चतुर्थ नागेश्वरराज, ३. पञ्चम वीरसेन, ४. सप्तम रत्नाग्नि, ५. अष्टम रत्नचन्द्रप्रभ, ६. नवम

---

१. गङ्चन रिगजोद्, भाग-२५, पृ० ५२५, तिब्बत से प्रकाशित, १९९२ ।

अमोघदर्शिन्, ७. सोलहवें वरुणदेव, ८. १९वें अन्तन्तौजस्, ९. २३वें कुसुमश्री, १०. २५वें तथागत पद्मज्योतिर्विक्रीडिताभिज्ञ, ११. २७वें स्मृतिश्री।

अल्प समानता वाले ७ बुद्ध इस प्रकार हैं—१. षष्ठ वीरनन्दी, २. दशवें रत्नचन्द्र, ३. ग्यारहवें विमल, ४. तेरहवें ब्रह्मा, ५. चौदहवें ब्रह्मदत्त, ६. अठारहवें चन्दनश्री, ७. ३४वें रत्नपद्मविक्रामी।

सर्वथा भिन्न कायवर्णवाले १७ बुद्ध इस प्रकार हैं—१. द्वितीय वज्रगर्भ-प्रमर्दिन्, २. तृतीय रत्नार्चिष्, ३. ३०वें सुविक्रान्तश्री, ४. १२वें शूरदत्त, ५. १५वें वरुण, ६. १७वें भद्रश्री, ७. २०वें प्रभासश्री, ८. २१वें अशोकश्री, ९. २२वें नारायण, १०. २४वें ब्रह्मज्योतिर्विक्रीडिताभिज्ञ, ११. २६वें धनश्री, १२. २८वें सुपरिकीर्तितनामधेयश्री, १३. २९वें इन्द्रकेतुध्वजराज, १४. ३१वें विजितसंग्राम, १५. ३२वें विक्रान्तगामी १६. ३३वें समन्तावभासव्यूहश्री तथा १७. ३५वें तथागत-रत्नपद्मसुप्रतिष्ठित शैलेन्द्रराज।

आचार्य चोंखापा के द्वारा स्थापित परम्परा के अनुयायियों द्वारा विरचित त्रिस्कन्धसूत्रटीका के अनुसार मुद्राएं ८ प्रकार की हैं। यथा—१. दाहिने हाथ से भूमिस्पर्श तथा वाम हस्त समाहित, २. दोनों हाथ से धर्मचक्रप्रवर्तन, ३. दोनों हाथ समाहित, ४. वाम हाथ से धर्मचक्रप्रवर्तन तथा दक्षिण हस्त शरणदाता ५. वाम हस्त समाहित एवं दक्षिण हस्त पूजाकर्ता, ६. उत्तम बोधिमुद्रा, ७. दक्षिण हस्त से धर्मचक्रप्रवर्तन तथा वामहस्त समाहित तथा ८. दक्षिण हस्त से भूमिस्पर्श और वाम हस्त से धर्मचक्रप्रवर्तन।

चोंखापा जी के परम्परानुसार आयुध इस प्रकार हैं, यथा—१. पिण्डपात्र, २. ध्वज, ३. कवच, ४. खड्ग एवं ५. मेरु पर्वत।

आर्यकुसुमसंचयसूत्र में प्राप्त ३५ बुद्धों में से कुछ बुद्धों के नाम का विवरण

'आर्यकुसुमसंचयसूत्र' नामक सूत्र अनेक बुद्धों के नाम, क्षेत्र तथा नामपाठ की अनुशंसा करनेवाला सूत्र है। इस सूत्र में त्रिस्कन्धसूत्र में पठित बुद्धों में से कुछ बुद्धों का नाम प्राप्त होता है, जो इस प्रकार है, यथा—तथागत वज्रगर्भ, तथागत रत्नप्रभ, तथागत नागेश्वरराज, तथागत वीरसेन, तथागत रत्नाग्नि, तथागत रत्नचन्द्रप्रभ, तथागत रत्नचन्द्र, तथागत विमलश्री, तथागत ब्रह्मा, तथागत

अशोकश्री, तथागत इन्द्रकेतुध्वजराज तथा तथागत सुविक्रान्तश्री। इसके अतिरिक्त आंशिक रूप से सात और बुद्धों के नाम उपलब्ध होते हैं।

३५ बुद्धों के नाम-पाठ की अनुशंसा

आचार्य नागार्जुन के द्वारा विरचित **त्रिस्कन्धसूत्रटीका** में ३५ बुद्धों के नाम के पाठ की अनुशंसा में कुछ भी वर्णन उपलब्ध नहीं होता, परन्तु आचार्य चोंखापा जी द्वारा स्थापित परम्परा के अनुयायियों द्वारा रचित त्रिस्कन्धसूत्र-टीकाओं में ३५ बुद्धों के नाम के पाठ की अनुशंसा प्राप्त होती है। यह अनुशंसा चोंखापा जी के परम शिष्य **ग्यल्-छब् जे** द्वारा विरचित त्रिस्कन्धसूत्रटीका में उपलब्ध है। भोट देश के वरिष्ठ विद्वान् **गुङ् थङ् तेनपई डोनमे** द्वारा विरचित **त्रिस्कन्धसूत्रटीका**[१] में कहा गया है कि उपर्युक्त **ग्यल्-छब् जे** की त्रिस्कन्धसूत्र-टीका में उपलब्ध अनुशंसा आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान द्वारा रचित अनुशंसा है, किन्तु हमारा कहना है कि ३५ बुद्धों के नाम के पाठ की अनुशंसा **आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान** द्वारा विरचित त्रिस्कन्धसूत्रटीका में उपलब्ध नहीं है। यद्यपि मैंने **आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान** द्वारा रचित अनेक ग्रन्थों का अवलोकन कर इसे प्राप्त करने का प्रयास किया, किन्तु अभी तक प्राप्त नहीं हो सका। ग्यलछब् जे के द्वारा ३५ बुद्धों के नाम के पाठ की अनुशंसा का जो उल्लेख किया गया है, उसका विवरण आगे एक पृथक् परिशिष्ट में दिया गया है। इसी प्रकार **आर्यकुसुमसंचय-सूत्र** में भी अनेक बुद्धों के नाम तथा उनके पाठ की अनुशंसा उपलब्ध होती है। **आर्यकुसुमसंचयसूत्र** में त्रिस्कन्धसूत्र के ३५ बुद्धों में से लगभग १५ बुद्धों के नाम की अनुशंसा प्राप्त होती है। किन्तु जब हम आचार्य चोंखापा के परम शिष्य ग्यल्-छब्-जे के द्वारा रचित त्रिस्कन्धसूत्रटीका तथा **आर्यकुसुमसंचयसूत्र** में उपलब्ध अनुशंसाओं का तुलनात्मक अध्ययन करते हैं तो उन अनुशंसाओं में समानता नहीं पाते हैं।

आर्य उपालिपरिपृच्छासूत्र में जो अनुशंसा प्राप्त होती है, वह समस्त सूत्र के पाठ करने की अनुशंसा है। इस सूत्र में कहा गया है—**बुद्धानां भगवतां नामधेयधारणपरिवर्तनेन रात्रिंदिवं त्रिस्कन्धकधर्मपर्याय प्रवर्तनेनापत्तिकौ-कृत्यान्तिः सरति समाधिं च प्रतिलभते**[२]। अर्थात् ''इन ३५ बुद्धों का नामग्रहण

---

१. वचन संग्रह 'च' पुट्, पृ० २ ख ६ ।
२. द्र०-उपालिपरिपृच्छासूत्र, शिक्षासमुच्चय में उद्धृत, पृ० ९५, दरभंगा संस्करण, १९६० ।

करते हुए पाठ करने तथा त्रिस्कन्धसूत्र का दिन और रात में तीन-तीन बार पाठ करने से समस्त आपत्तियों का विनाश होगा और समाधि प्राप्ति होगी।"

३५ बुद्धों की भावना के विभिन्न मत

विभिन्न शास्त्रों में ३५ बुद्धों की भिन्न-भिन्न प्रकार की भावना प्राप्त होती है। **आचार्य नागार्जुन** ने अपनी **त्रिस्कन्धसूत्रटीका** में कहा है—"उनमें (क्रमशः) भविष्य में (भावना) करने वालों को उन सभी ३५ बुद्धों को अपने सम्मुख रत्न सिंह, पद्म और चन्द्र (मण्डल) के आसन पर प्रव्रजित निर्माणकाय, जिनके लक्षण एवं अनुव्यञ्जन जिनकी प्रभा से युक्त है तथा जिनके कायवर्ण, क्षेत्र, दिशा, दिशान्तर, चीवर आदि (वस्त्र), आयुध (धारण कर) वज्रपर्यंक मुद्रा में स्थित हैं, उन बुद्धों को अनेक पर्षदों के साथ आगे आने वाले बुद्धों के क्रम के अनुसार समय भावना करते समय मध्यभाग से प्रारम्भ कर क्रमशः दशों दिशाओं में विराजमान (बुद्धों) को आलम्बन करना चाहिए तथा (उनको लक्ष्य कर नमस्कार करना चाहिए)। (वह भी, कल्पना में) अनेक कायों का निर्माण कर वचन एवं चित्त की अधिमुक्ति के द्वारा उनके चरणों में नमस्कार करना चाहिए।" यह विचार आचार्य नागार्जुन ने विशेषकर तीक्ष्ण बुद्धि वालों की भावना के लिए कहा है। मन्दबुद्धि वालों के लिए आचार्य ने आगे कहा है—"अथवा मन्दबुद्धि (जो उपर्युक्त आलम्बनों की भावना नहीं कर सकते, वे) लोग सभी बुद्धों को एकमुखी, दोनों हाथ धर्मदेशना मुद्रा में विराजमान हों या पिण्डपात के लिए चारिका कर रहे हों या भूमिस्पर्श आदि मुद्रा में स्थित हों—ऐसी भावना करें और (सभी बुद्धों को) श्वेत वर्ण आदि यथारुचि समान वर्ण में भावना करके नमस्कार करना चाहिए।"

इस प्रकार ३५ बुद्धों की भावना के लिए तीक्ष्ण एवं मन्दबुद्धि वाले दोनों के लिए भिन्न-भिन्न भावना के उपाय का उल्लेख किया गया है। परन्तु आचार्य जितारि एवं दीपंकरश्रीज्ञान ने अपनी त्रिस्कन्धसूत्रटीका में इस प्रकार की भावना करने के सन्दर्भ में विचार व्यक्त नहीं किये हैं।

तिब्बत के वरिष्ठ महाविद्वान् **आचार्य चोंखापा** के अनुसार उन सभी ३५ बुद्धों की भावना करते समय समस्त ३५ बुद्धों के नाम के प्रारम्भ में आदरसूचक 'तथागत' शब्द जोड़ते हुए आठ प्रकार की मुद्राएं और पाँच प्रकार के आयुध के

साथ पाँच प्रकार के वर्ण वाले बुद्धों की भावना करनी चाहिए, जिनके विस्तृत विवरण के लिए पूर्वोक्त पृष्ठ संख्या.......का अवलोकन करें।

आचार्य चोंखापा जी की परम्परा को मानते हुए कुछ अन्य तिब्बत के वरिष्ठ विद्वान् जैसे चौदहवें दलाई लामा के गुरु **क्यब् जे ठिछङ् रिनपोछे** जी का कहना है कि सभी ३५ बुद्धों की भावना करते समय आलम्बन में इसी प्रकार आयुध, वर्ण आदि की स्थापना करना चाहिए कि सभी ३५ बुद्ध गज पर प्रतिष्ठित हीरे-मोती आदि रत्नों से अलंकृत आसन पर विराजमान हैं तथा मध्य में गुरु के रूप में शाक्यमुनि बुद्ध तथा उनकी चित्त-प्रभा से प्रादुर्भूत ऊर्ध्व एवं अध: दिशा में १०-१० बुद्ध दक्षिण एवं वाम दिशा में ७-७ बुद्ध विराजमान हैं—इस प्रकार विराजमान बुद्धों की भावना करनी है। कायवर्ण एवं मुद्रा के सन्दर्भ में अनेक परस्पर विभिन्न मत प्राप्त होते हैं, किन्तु आसानी से भावना करने एवं आलम्बन में शीघ्र प्रवेश के लिए सात-सात कुल का पाँच वर्ग बनाना चाहिए। उनका वर्ण और मुद्रा भी पाँच तथागत कुल के समान होना चाहिए। जैसे पहले सात तथागत अक्षोभ्य बुद्ध के आकार की भाँति नीलवर्ण एवं भूमिस्पर्श मुद्रा वाले हैं। द्वितीय सात तथागत वैरोचन बुद्ध के आकार की भाँति श्वेत वर्ण तथा धर्मचक्रप्रवर्तन मुद्रा से युक्त हैं। तृतीय सात तथागत रत्नसम्भव बुद्ध के आकार की भाँति पीतवर्ण तथा वरद मुद्रा वाले हैं। चतुर्थ सात तथागत अमिताभबुद्ध के आकार की भाँति रक्तवर्ण तथा ध्यानमुद्रा से युक्त हैं। पंचम सात तथागत अमोघसिद्धि बुद्ध के आकार की भाँति हरित वर्ण एवं अभयमुद्रा से युक्त हैं।

इस प्रकार पाँच वर्ण एवं ५ मुद्राओं में लीन बुद्धों की भावना करनी चाहिए। परन्तु विशेष रूप से तथागत नागेश्वरराज के आकार की भावना करते समय मुखमण्डल को श्वेतवर्ण एवं शेषकाय की नीलवर्ण के रूप में भावना करनी चाहिए। मुष्टिबद्ध दोनों हाथ के साथ मध्य की दो अंगुलियों को खड़ी कर नागवशवर्ती की मुद्रा में भावना करनी चाहिए। यह विशेष मुद्रा है। इसकी पुण्यक्षेत्र मण्डल में से कुछ उभरे हुए रूप में भावना करना है।

चौथे तिब्बत के वरिष्ठ विद्वान् महापण्डित साक्य कुंगा ग्यलछन् का मानना है कि इन पैंतीस बुद्धों की साधारण पुद्गलों द्वारा सरलतया भावना करते समय पूर्व की भाँति मात्र पाँच वर्ण एवं पाँच मुद्राओं से युक्त की भावना करनी चाहिए। परन्तु पाँचों वर्ण एवं मुद्राएं मिश्रित होना चाहिए, जैसे—प्रथम बुद्ध

श्वेतवर्ण एवं धर्मचक्रमुद्रा से युक्त, द्वितीय नीलवर्ण एवं भूमिस्पर्श मुद्रा से युक्त, तृतीय पीतवर्ण एवं वरदमुद्रा से युक्त, चतुर्थ रक्तवर्ण एवं ध्यानमुद्रा से युक्त तथा पंचम हरितवर्ण एवं अभयमुद्रा से युक्त बुद्धों की भावना करनी चाहिए। इसी क्रम को पुनः सातों वर्गों में लागू करते हुए भावना करनी है। महापण्डित का कहना है कि निर्माणकाय भगवान् बुद्ध में अनेक प्रकार की मुद्राएं एवं आयुध कदापि नहीं होते, क्योंकि ऐसा साधनोपाय बुद्ध ने नहीं कहा है।

इस प्रकार भावना के विषय में चार प्रकार के मत अब तक प्राप्त हुए हैं। इसके अतिरिक्त मत भी हो सकते हैं, किन्तु मुझे अब तक दृष्टिगत नहीं हुए हैं।

कुछ प्रमुख मुद्राओं का परिचय एवं अर्थ

सामान्यतया मुद्राओं के अनेक भेद एवं प्रभेद होते हैं, किन्तु सबको यहाँ प्रस्तुत करना सम्भव नहीं है। अतः कुछ प्रमुख मुद्राओं का परिचय एवं लक्षण का संक्षिप्त रूप में अर्थ प्रस्तुत करने का प्रयास किया जा रहा है। इन मुद्राओं का परिचय एवं प्रत्येक का लक्षणार्थ प्रस्तुत करना इसलिए भी अपेक्षित है, क्योंकि भविष्य में यदि सौभाग्य से किसी को पञ्चकुल के तथागतों अथवा ३५ तथागतों का दर्शन प्राप्त हुआ तो उनकी सरलतापूर्वक पहचान होने में सहायता प्राप्त होगी तथा भविष्य में ३५ तथागतों की भावना एवं मन्त्रोच्चारण का सुअवसर प्राप्त होने पर उन सभी देवताओं को अपने चित्त में स्थापित करने में सहायता मिलेगी।

पञ्चतथागतकुल का नाम-क्रम कालचक्र की टीका विमलप्रभा के अनुसार इस प्रकार है—

(१) **तथागत अक्षोभ्य**, (२) **तथागत रत्नसम्भव**, (३) **तथागत अमिताभ**, (४) **तथागत अमोघसिद्धि** एवं (५) **तथागत वैरोचन**। इनमें तथागत वज्रपाणि को जोड़ने पर षड् तथागतकुल हो जाते हैं। इन तथागतों की मुद्रा एवं आयुधों का परिचय **कालचक्रतन्त्र की टीका विमलप्रभा** में इस प्रकार दिया गया है, यथा—

इदानीम् अक्षोभ्यमुद्रोच्यते। पूर्वं पर्यङ्कं कृत्वा तत्र पर्यङ्के वामहस्तो भवत्युत्तानको दक्षिणो भुविगतो दक्षिणजानुदेशाद् भूस्पर्शं यावत्। एवं भूस्पर्शाऽक्षोभ्यमुद्रेति। अपि च तेनैव क्रमेण किन्तूत्तानको दक्षिणकरो

रत्नपाणेर्वरदमुद्रेति। एवं पर्यङ्के वामहस्तोर्ध्वेन सव्यहस्तः समगतोत्तानकः पद्मपाणेरमिताभस्य समाधिमुद्रेति। एवं वामं करतलमुत्तानकं पर्यङ्कमूर्ध्नि, अपरं दक्षिणं करतलं दक्षिणजानूपरि अभयप्रदम्, खड्गपाणेरमोघसिद्धेरभयमुद्रेति। एवं सव्ये मुष्ट्यावसव्यमुष्टौ या तर्जनी वामा सा पुनरपरा ऊर्ध्वमुष्टिबन्धे तर्जनी प्रविष्टा, इयं बोध्यग्रीमुद्रा वैरोचनस्य स्फुटहृदयगता। तथा चापरा धर्मचक्रमुद्रा तर्जन्यङ्गुष्ठयोगो वामे दक्षिणकरेऽपि कटक इह भवेद् वामवलयनखमेलापके दक्षिणनखमेलापके देशनायोगेन मध्यमादेः प्रसारः, अनामिकायाः कनिष्ठायाः किञ्चिदूर्ध्वमिति हृदयप्रदेशे धर्मचक्रमुद्रा। एवं षड्तथागतानां नियमः। इहोभयकरेण वज्रमुष्टिबन्धः, अङ्गुष्ठो मुष्ट्या निपीडितो सव्यावसव्योरुमूर्ध्नि वज्रासनस्थे वज्रमुद्रा भवति[१]।

अर्थात् अक्षोभ्य का पूर्व की भाँति पर्यङ्क में स्थित होकर दाहिना हाथ उत्तान है तथा दाहिना घुटने के ऊपर से भूमि का स्पर्श करते हुए रहता है। इसे भूमिस्पर्श करनेवाली **अक्षोभ्यमुद्रा** कहते हैं। रत्नसम्भवमुद्रा भी पूर्व की भाँति है अर्थात् बायाँ हाथ उत्तान है, किन्तु दाहिना हाथ भी घुटने के ऊपर उत्तान अवस्था में स्थित है। यह रत्नपाणि रत्नसम्भव की **वरदमुद्रा** कही जाती है। अमिताभ पर्यङ्क में स्थित हैं। उनके बाएं हाथ (करतल) के ऊपर दाहिना हाथ (करतल) स्थित है और दोनों करतल उत्तान हैं। यह पद्मपाणि अमिताभ की **समाधिमुद्रा** है। अमोघसिद्धि पर्यङ्क में स्थित हैं। पर्यङ्क पर बायाँ हाथ (करतल) उत्तान है तथा दाहिना करतल दक्षिण घुटने के ऊपर अभयदान मुद्रा में स्थित है। यह खड्गपाणि अमोघसिद्धि की **अभयमुद्रा** है। वैरोचन के बाएं हाथ की मुष्टि पर दाहिने हाथ की मुष्टि है और बाएं हाथ की मुष्टि की तर्जनी अंगुलि दाहिने हाथ की मुष्टि में प्रविष्ट है। यह वैरोचन के हृदय का स्पर्श करती हुई **बोध्यग्री मुद्रा** है। बाएं एवं दाहिने हाथ की तर्जनी और अङ्गुष्ठ का योग होने पर तथा बायें और दाहिने हाथ को गोल करके नखों को मिलाना चाहिए तथा मध्यमा, अनामिका और कनिष्ठा को थोड़ा ऊपर उठाते हुए हृदय प्रदेश के समीप स्थित होना चाहिए। यह वैरोचन की **धर्मचक्रमुद्रा** है। वज्रपाणि के दोनों हाथ की मुष्टि बंधी हुई होती है और अंगूठा मुष्टि के भीतर कस कर रखा हुआ होता है तथा दोनों मुष्टियाँ आपस में

---

१. द्र०-विमलप्रभा कालचक्रतन्त्रटीका, द्वितीय भाग, पृ० १३२, अभिषेकपटल, तिब्बती संस्थान प्रकाशन-१९९४ ।

मिली रहती हैं और कनिष्ठा अंगुली फैली हुई रहती है। वज्रासन में बैठे हुए वज्रपाणि की यह वज्रमुद्रा कही गई है।

पाँच तथागतों के क्रम में कुछ भिन्न मत

साक्य पण्डित कुंगा ग्यलछन् तथा पाँचवें दलाई लामा लोसंग ग्याछो के अनुसार पंच तथागतों की दिशा, कायवर्ण एवं मुद्राओं का क्रम इस प्रकार है, यथा—(१) मध्य में तथागत वैरोचन का कायवर्ण श्वेत और बोध्यग्री मुद्रा में उनकी स्थिति होती है। (२) पूर्व में तथागत अक्षोभ्य का कायवर्ण नील और भूमिस्पर्श मुद्रा में स्थिति होती है। (३) दक्षिण में तथागत रत्नसम्भव का कायवर्ण पीत तथा वरदमुद्रा में उनकी स्थिति होती है। (४) पश्चिम में तथागत अमिताभ का कायवर्ण रक्त तथा उनकी समाधिमुद्रा में स्थिति होती है। (५) उत्तर में तथागत अमोघसिद्धि का कायवर्ण हरित एवं उन्हें अभयमुद्रा में लीन माना जाता है। इनमें से तथागत वैरोचन की अन्य मुद्रा अर्थात् धर्मचक्रमुद्रा भी मानी जाती है। तथागत अमोघसिद्धि की अभयमुद्रा को ही शरणप्रद मुद्रा भी माना जाता है।

तिब्बत के वरिष्ठ विद्वान् चौदहवें दलाई लामा के गुरु ठिछङ् रिनपोछे द्वारा विरचित सुगमविमुक्तिमार्गक्रम (नमडोल लगचङ) के अनुसार पाँच तथागतों के कुल का क्रम पूर्व से कुछ भिन्न है, किन्तु कायवर्ण पूर्ववत् ही हैं।

(१) तथागत अक्षोभ्य का कायवर्ण नील, (२) तथागत वैरोचन का कायवर्ण श्वेत, (३) तथागत रत्नसम्भव का कायवर्ण पीत, (४) तथागत अमिताभ का कायवर्ण रक्त तथा (५) तथागत अमोघसिद्धि का कायवर्ण हरित है।

इस प्रकार पूर्ववर्ती भोट विद्वानों के अनुसार पञ्च तथागत कुल की क्रम-व्यवस्था की समीक्षा करते समय ऐसा प्रतीत होता है कि कालचक्रतन्त्र की टीका विमलप्रभा के अतिरिक्त अधिकांश भोट विद्वानों का अभिमत है कि पञ्च तथागत कुल के क्रम में प्रथम तथागत अक्षोभ्य तथा अन्तिम तथागत वैरोचन के क्रम में ही केवल भिन्नता है। शेष तीन तथागतों की क्रम-व्यवस्था में कोई परिवर्तन नहीं दिखाई देता।

मुद्राओं के लक्षण का परिचय

(१) धर्मचक्रमुद्रा का लक्षण—वाम तथा दक्षिण हाथ के अंगूठे तथा तर्जनी के परस्पर स्पर्श से पाँच मार्गों में प्रवेश के समय उपाय एवं प्रज्ञा दोनों के

युगनद्ध सम्बद्ध होने का संकेत किया जाता है। मध्यमा, अनामिका एवं कनिष्ठिका—इन तीनों के ऊपर उठे हुए होने से यह परिलक्षित होता है कि तीन प्रकार के विनेयजनों अर्थात् अधम, मध्यम एवं उत्तम के इन्द्रियों के अनुरूप क्रमशः उनको पाँच मार्गों में उत्थापित किया जाता है। वाम तथा दक्षिण हाथ के भीतरी भाग के परस्पर योग से यह प्रतीत होता है कि जिस प्रकार तीन विनेयजनों को अविपरीत रूप से हेयोपादेय की देशना की जाती है, उसी प्रकार स्वयं भी यथावत् उनका पालन किया जाता है। यह मुद्रा उसका प्रतीक है।

(२) समाधिमुद्रा का लक्षण—दक्षिण करतल नीचे तथा वाम करतल उसके ऊपर रखकर दोनों अंगूठे के नखाग्रों का परस्पर स्पर्श करते हैं। इससे यह परिलक्षित होता है कि अंगूठे में स्थित बोधिचित्त नाड़ियों के परस्पर मिलन से वे एक-दूसरे को ऊष्मा पैदा करने में सहयोग प्रदान करते हैं। फलतः बोधिचित्त की वृद्धि होती रहती है, जिससे समस्त आकाश में व्याप्त प्राणियों का मनोरथ अनायास पूर्ण होता है। गगनवत् समाहित अवस्था तथा मायावत् पृष्ठलब्ध अवस्था तथा एक ही क्षण में युगपत् साक्षात् करने की क्षमता प्राप्त होती है।

(३) भूमिस्पर्श तथा समाहित मुद्रा का लक्षण—वाम हस्त से भूमिस्पर्श करने से यह परिलक्षित होता है कि चार मारों में से देवपुत्र मार के जो कोटि-कोटि सैन्य परिवार हैं, उनका विनाश होता है। दक्षिण हाथ समाधि मुद्रा में स्थित होने से यह परिलक्षित होता है कि वे समाधि में चित्त अचल रहते हुए ब्रह्मस्वर वाक् से तीनों कुलों के विनेयजनों के लिए धर्मचक्र का प्रवर्तन निरन्तर करते रहते हैं। जिसके फलस्वरूप उनका भिक्षा-पात्र अमृत से पूर्ण रहता है। अथवा इस प्रकार के पात्रस्थ औषधि रूपी अमृत द्वारा जाति, जरा, रोग आदि से पीड़ित जनों को मुक्त करने के लिए वे स्कन्धमार का विनाश करते हैं या उस पर विजय प्राप्त करते हैं। कर्म एवं क्लेश के कारण मृत्यु को प्राप्त कराने वाले मृत्युमार का विनाश करके जीवनदायी अमृत प्रदान करते हैं। अनास्रव ज्ञानरूपी अमृत से क्लेशमार सहित चार मारों का विनाश करके उन पर विजय प्राप्त करते हैं।

(४) वरद और समाहित मुद्रा का लक्षण—दक्षिण हाथ वरद मुद्रा तथा वाम हस्त समाहित मुद्रा में स्थित होता है। यह इस बात का प्रतीक है कि उनका चित्त समाधि में अचल होता है, जिससे वे सौभाग्यवान् विनेयजनों को उत्तम एवं सामान्य जनों को स्वेच्छानुरूप सिद्धि प्रदान करते हैं।

(५) **बोध्यग्री मुद्रा का लक्षण**—दाहिने हाथ की मध्यमा, अनामिका एवं कनिष्ठिका अंगुलियाँ, बाएं हाथ की मध्यमा, अनामिका एवं कनिष्ठिका के ऊपर रहती हुई मुष्ठि के रूप में बंधी रहती हैं। ये षट् पारमिताओं के प्रतीक हैं। दाहिने एवं बाएं हाथ की तर्जनी अंगुलियों के परस्पर संस्पर्श से यह परिलक्षित होता है कि सर्वज्ञ प्राप्ति के लिए उपायरूपी पाँच पारमिताएं एवं प्रज्ञारूपी प्रज्ञापारमिता युगनद्ध हैं। इससे अन्ततः बुद्धत्व प्राप्त होता है। वाम तथा दक्षिण हस्त के अंगूठे समान रूप से भीतर की ओर स्थित हैं। यह इस बात का प्रतीक है कि उपाय एवं प्रज्ञा के सहयोग से अन्ततः बुद्ध के धर्मकाय एवं रूपकाय प्राप्त होते हैं। इस मुद्रा का लक्षण स्पष्ट रूप से अब तक प्राप्त नहीं हो सका। मेरा अपना विचार है कि सम्भवतः इनका लक्षण ऐसा ही होना चाहिए।

आचार्य नागार्जुन कृत त्रिस्कन्धसूत्रटीका का संक्षिप्त अभिधेय

आचार्य नागार्जुन कृत '**बोध्यापत्तिदेशनावृत्ति**' नामक इस त्रिस्कन्धसूत्र-टीका ग्रन्थ का ९वीं शताब्दी के मध्य में भारतीय आचार्य शान्तरक्षित तथा भोट देश के पूर्वशासनकाल के अनुवादक ञग् देवघोष ने संस्कृत से भोटभाषा में अनुवाद किया। इस ग्रन्थ के अनुवाद की सफलता हेतु तथागत शाक्यमुनि तथा भट्टारक आर्यमञ्जुश्री की प्रार्थना एवं पूजा की गई। ग्रन्थ के प्रारम्भ में तथागत शाक्यमुनि की मङ्गलस्तुति तथा ग्रन्थरचना की सफलता हेतु आगम तथा अववाद के द्वारा व्याख्यान करूँगा—ऐसी प्रतिज्ञा की गई है।

तत्पश्चात् महाकारुणिक तथागत शाक्यमुनि द्वारा उपदिष्ट ८४००० धर्मस्कन्धों का तीन पिटकों में संग्रह किया गया है। यह त्रिस्कन्धसूत्र त्रिपिटक में विनयपिटक के अन्तर्गत संगृहीत है। इस सूत्र के उपदेश का प्रयोजन तथा ग्रन्थारम्भ की पौराणिक कथा वहाँ क्रमशः उल्लिखित है। तत्पश्चात् इस ग्रन्थ के प्रयोजन आदि अनुसन्धिचतुष्टय का स्पष्टीकरण है। सम्पूर्ण ग्रन्थ त्रिस्कन्ध, सप्ताङ्ग तथा चार बलों में किस प्रकार संगृहीत होता है—इसका वर्णन किया गया है। पञ्च आनन्तर्य आदि महा-आपत्ति लग जाने पर किस प्रकार प्रतिदेशना करनी चाहिए, इसका उपाय तथा यामों का भेद करके प्रतिदेशना का स्वरूप दिखाया गया है।

कुछ लोगों का कहना है कि इस **त्रिस्कन्धसूत्र** के प्रारम्भ में '**एवं मया श्रुतम् एकस्मिन् समये**' इत्यादि निदान वाक्य तथा अन्त में '**भगवतो भाषितम् अभ्यनन्दन्**' इस प्रकार वचन के उल्लिखित न होने से 'यह सूत्र है या नहीं है'

ऐसा सन्देह करनेवालों की कल्पना के निवारण के लिए यह स्पष्ट किया गया है कि यह बुद्धवचन अर्थात् मूल सूत्र है और यह आर्यरत्नकूट के अन्तर्गत आर्य उपालिपरिपृच्छा नामक महायानसूत्र में विद्यमान है। इस कारण 'यह बुद्धवचन नहीं है'—ऐसा कहने वालों का सुस्पष्ट विरोध किया गया है। तत्पश्चात् त्रिस्कन्धसूत्र के मुख्य प्रश्नकर्ता आर्य उपालि का परिचय देते हुए विनयवचनों के इस संकलनकर्ता का उल्लेख किया गया है तथा इस सूत्र को 'त्रिस्कन्धसूत्र' कहने का उद्देश्य प्रकट किया गया है।

आपत्तिदेशना करते समय परमार्थतया प्रतिदेशना करना तथा संवृतितः प्रतिदेशना करना इस तरह दो प्रकारों का उल्लेख किया गया है। १. परमार्थतया प्रतिदेशना करने के लिए 'आर्य अजातशत्रुकौकृत्यविनोदन महायानसूत्र' के अभिप्रायार्थ के अनुसार सर्वधर्म निःस्वभावता का चिन्तन करते हुए प्रतिदेशना करना तथा २. संवृतितः प्रतिदेशना करने के लिए चतुर्बल के द्वारा कौकृत्यसहित प्रतिदेशना करना स्पष्टरूप से अभिहित किया गया है।

सम्प्रति इस ग्रन्थ में चारों बलों के द्वारा प्रतिदेशना का सम्पूर्ण अभिधेय संगृहीत किया गया है।

१. आश्रयबल—'अहमेवंनामा'—से लेकर 'संघं शरणं गच्छामि' तक आश्रयबल का संग्रह कहा गया है।

२. विदूषणा-समुदाचारबल—नमः (भगवते) शाक्यमुनये तथागतायार्हते सम्यक्सम्बुद्धाय' से लेकर 'आविष्करोमि, न प्रतिच्छादयामि' पर्यन्त विदूषणा-समुदाचारबल का संग्रह किया गया है।

३. प्रत्यापत्तिबल—'आयत्यां संवरमापद्ये' इसके द्वारा प्रत्यापत्तिबल का संग्रह दिखाया गया है।

४. प्रतिपक्षसमुदाचारबल—'समन्वाहरन्तु मां ते बुद्धाः' से लेकर 'सम्यक्सम्बोधौ उत्तरोत्तरया परिणामनया' तक प्रतिपक्षसमुदाचारबल निर्दिष्ट है।

सर्वप्रथम आश्रयबल के प्रतिपादन के अन्तर्गत त्रिशरणगमन करते समय काय, वाक् एवं चित्त के द्वारा त्रिशरणगमन करना कहा गया है और प्रत्येक शरणगमन का स्वरूप भी बताया गया है।

द्वितीय विदूषणासमुदाचार बल के प्रतिपादन के अन्तर्गत समस्त ३५ बुद्धों के नामार्थ की व्याख्या सहित प्रत्येक बुद्ध की दिशा, क्षेत्र, कायवर्ण, आयुध, परिवार तथा मुद्राओं का विस्तार से वर्णन किया गया है। तत्पश्चात् इन ३५ बुद्धों के समक्ष पापदेशना का उल्लेख करते समय वाक्योच्चारण की विधि एवं समस्त दस दिशाओं में स्थित बुद्धों के आलम्बनविधि को भी दिखाया गया है। तत्पश्चात् पापदेशना के मूल स्वरूप का प्रतिपादन करते समय अनादिकाल से जन्म-जन्मान्तरों में संचित पापकर्मों के प्रति मन से पश्चात्ताप करने की विधि का प्रतिपादन किया गया है। इन सभी पापों का मूल प्रत्यय (कारण) अथवा मूल वस्तु राग आदि त्रिविष रूपी क्लेश तथा दस अकुशल कर्म हैं, जिनके फल के रूप में तीन दुर्गतियों में पतन और विपाकफल के रूप में लघु, गुरु असह्य दु:खों के क्रमश: उत्पाद के रूप में प्रतिपादन किया गया है। अन्यच्च, स्वयं के द्वारा साक्षात् रूप से कृत पापकर्म, अन्यों को पाप करने के लिए प्रेरित करना तथा दूसरों के द्वारा कृत पापकर्मों का अनुमोदन करना आदि का समान विपाक होने का उल्लेख किया गया है। सामान्य तौर पर पापकर्म तीन प्रकार के कहे गये हैं, जिसमें कृत असंचित, अकृत संचित सम्भवत: दूसरों से करवाये गये और अनुमोदित तथा कृत संचित संगृहीत हैं। अत्यन्त घोर पाप तो स्वयं के माता-पिता का वध आदि पाँच आनन्तर्य कर्म हैं और इन कर्मों का फल अवीचि नरक में उत्पाद है, जिससे घोर विपाक एवं असह्य दु:खभोग होता है—ऐसा कहा गया है। अत: ऐसा कहा गया है कि स्वयं के द्वारा कृत किसी भी पापकर्म की निश्चितरूप से प्रतिदेशना करने के लिए प्रयत्न करना चाहिए। वह प्रतिदेशना भी अत्यन्त कौकृत्य सहित करना चाहिए। बिना कौकृत्य के पाप की विशुद्धि नहीं होती। अकुशल कर्मों के विपाक के रूप में आठ अक्षणों में पतन का उल्लेख किया गया है।

तत्पश्चात् इन पापों की प्रतिदेशना का विषय (आलम्बन) मात्र बुद्ध को ही कहा गया है। उसकी प्रतिदेशना पूर्व की भाँति ही प्रतिदेशना करना है, जिसमें 'छिपाता नहीं हूँ, प्रकट करता हूँ' इत्यादि कहा गया है।

इसके बाद **प्रत्यापत्तिबल** का परिचय दिया गया है। इस प्रकार तीन बलों का वर्णन करने के पश्चात् **प्रतिपक्षसमुदाचार बल** का उल्लेख किया गया है। उसकी त्रिस्कन्धसूत्र के क्रम के अनुसार व्याख्या की गई है। **आर्य चतुर्धर्मनिर्देश**-

सूत्र[१] के अनुसार तो सर्वप्रथम विदूषणासमुदाचारबल, प्रतिपक्षसमुदाचारबल, प्रत्यापत्तिबल तथा आश्रय बल का क्रमशः पूर्वापर के रूप में वर्णन किया गया है। जैसे—'**चतुर्भिर्मैत्रेय, धर्मैः समन्वागतो बोधिसत्त्वः कृतोपचितं पापमभिभवति, कतमैश्चतुर्भिः? यदुत विदूषणासमुदाचारेण, प्रतिपक्षसमुदाचारेण, प्रत्यापत्ति-बलेन, आश्रयबलेन च**'।

इस प्रकार **त्रिस्कन्धसूत्र** तथा **आर्यचतुर्धर्मनिर्देशसूत्र** में चार बलों के क्रम में कुछ अन्तर है।

तत्पश्चात् स्वयं के संचित कुशलमूलों की परिणामना करते समय षट् पारमिताओं की परिणामना की गई है। 'दान' इत्यादि प्रारम्भिक पाँच पारमिताओं की परिणामना सोत्तर परिणामना तथा अन्तिम छठवीं प्रज्ञापारमिता की परिणामना अनुत्तरपरिणामना है, इसका प्रतिपादन किया गया है।

परिणामना के विषय में समस्त पारमिताओं को एकत्र करके निः-स्वभावता के द्वारा परिणामना करना कहा गया है। बुद्ध मात्र अनुत्तर अर्थात् सर्वोत्तम है—ऐसा कहा गया है। परिणामना करने के लिए त्रिमण्डल परिशुद्ध अर्थात् अनुपलम्भ परिणामना करना तथा त्रिस्कन्ध के अनुसार परिणामना करना—दो प्रकार प्रतिपादित किये गये हैं। इन दोनों में से पश्चाद्वर्ती त्रिस्कन्धानुसारी परिणामना तो पापदेशना, अनुमोदना तथा अध्येषणा के द्वारा परिणामना करना है। इन तीनों के द्वारा परिणामना करने से अपरिमित पुण्यस्कन्ध का संचय होगा और दोष तथा आपत्तियों का परिशोधन होगा—ऐसा कहा गया है।

तत्पश्चात् प्रणिधानसहित पुनः त्रिशरणगमन का उल्लेख किया गया है, जो 'नरोत्तमा जिनाः' इत्यादि एक श्लोक की व्याख्या करने के बाद पाँच श्लोकों के द्वारा सत्त्वहित के लिए उपदेश, वचन, सर्वसत्त्व के कल्याण के लिए प्रणिधान, मनुष्य शरीर की प्राप्ति का सार्थक होना तथा इस वृत्ति के पुण्य से समस्त सत्त्वों के बुद्धत्व प्राप्ति की कामना की गई है।

अन्त में एक श्लोक के द्वारा तथागत के नाम के साथ उनके गुणों का आख्यान किया गया है।

---

१. शि० स०, अष्टम परिच्छेद, पृ० ८९, मिथिला-संस्करण-१९६० ।

तत्पश्चात् इस त्रिस्कन्धसूत्र की वृत्ति के लेखक आचार्य नागार्जुन तथा सम्पादक एवं अनुवादक के सन्दर्भ में भारतीय महापण्डित शान्तरक्षित तथा भोट लोचावा (अनुवादक) ञे देवघोष का नाम उल्लिखित है।

आचार्य जितारि-कृत त्रिस्कन्धसूत्रटीका का संक्षिप्त अभिधेय

आचार्य जितारि ने इस त्रिस्कन्धसूत्र की टीका '**बोध्यापत्तिदेशनावृत्तिः बोधिसत्त्वशिक्षाक्रमः**' नामक ग्रन्थ की रचना १०वीं शताब्दी में की है। १२वीं शताब्दी में एक नेपाली पण्डित (रवीन्द्ररुचि) रवीन्द्रदेव एवं भोटदेशीय लोचावा छग् के द्वारा संस्कृत से भोट भाषा में अनुवाद किया गया है।

ग्रन्थ के प्रारम्भ में अनुवाद की सफलता के हेतु आर्यगण को प्रणाम किया गया है, जो एक असाधारण प्रणाम है। अतः त्रिपिटक में से यह किसके अन्तर्गत है, इसका निर्णय कठिन प्रतीत होता है। वास्तव में विनयपिटक में ही इसका अन्तर्भाव होना चाहिए। यदि विनयपिटक में संगृहीत करना है तो सर्वज्ञ को नमस्कार होना चाहिए, जो पूर्व (भोटधर्म राजाओं द्वारा निर्णीत प्रस्ताव है।)

इसके बाद सामान्य बुद्धों की मंगलस्तुति की गई है और सम्पूर्ण ग्रन्थ के अभिधेय का दो वर्गों में विभाजन किया गया है, जो पिण्डार्थसंग्रह तथा अवयवार्थसंग्रह में विभक्त है।

सर्वप्रथम पिण्डार्थसंग्रह के अन्तर्गत कहा गया है कि जो बोधिसत्त्व समस्त सत्त्वों के कल्याण हेतु बोधिचित्त का उत्पाद करके निःश्रेयस सर्वज्ञपद की प्राप्ति के लिए वीर्य सम्पादन करता है, उसे दोष अथवा आपत्तियों आदि के लग जाने पर यदि वह इससे मुक्ति चाहता है तो उसके उपाय के रूप में सर्वश्रेष्ठ भगवान् तथागत ने इस त्रिस्कन्धसूत्र का उपदेश दिया है—ऐसा कहा गया है।

सामान्य तौर पर दो प्रकार के दोष होते हैं, यथा—पाराजयिक कुल के तथा दोषकृत कुल के। प्रथम पाराजयिक कुल के भी साधारण एवं असाधारण दो भेद होते हैं। पाराजयिक कुल के दोषों से निवृत्ति के लिए तीन प्रकार के संवर का ग्रहण करना चाहिए। दोषकृत कुल के दोषों से निवृत्ति के लिए तीन पुद्गल या एक पुद्गल अथवा ३५ बुद्धों को साक्षी बनाकर समस्त पापकर्मों की प्रतिदेशना करनी चाहिए। इस प्रकार प्रतिपादन करके पिण्डार्थसंग्रह का समापन किया गया है।

अवयवार्थसंग्रह के प्रतिपादन के प्रसंग में त्रिशरणगमन के स्वरूप का परिचय, शब्द-व्युत्पत्त्यर्थ एवं प्रभेद आदि कहे गये हैं।

तत्पश्चात् समस्त ३५ बुद्धों के नामों के अर्थ की विस्तारपूर्वक व्याख्या की गई है। इस ग्रन्थ में वर्णित ३५ बुद्धों के नामों के अर्थ तथा आचार्य नागार्जुन-कृत त्रिस्कन्धसूत्रटीका में वर्णित नामों के अर्थ की व्याख्या में अत्यन्त असमानताएं दिखलाई पड़ती हैं। आचार्य जितारि की इस त्रिस्कन्धसूत्रटीका में आचार्य नागार्जुन की टीका में वर्णित ३५ बुद्धों के दिशा, क्षेत्र, कायवर्ण, आयुध, मुद्राओं के सन्दर्भ में कुछ भी वर्णन नहीं किया गया है। वस्तुतः आचार्य नागार्जुन एक परम विशिष्ट प्रामाणिक बौद्ध विद्वान् हैं, इस कारण आचार्य जितारि को उस टीका से उन विषयों का ग्रहण करना चाहिए था, किन्तु उससे कोई विषय लिया नहीं गया है, अतः यह (नागार्जुन कृत) टीका स्वयं आचार्य की रचना है या नहीं? ऐसा सन्देह उत्पन्न होता है। ऐसा भी सम्भव है कि आचार्य जितारि को नागार्जुन कृत टीका उपलब्ध न हुई हो। यह भी सम्भव है कि उक्त टीका आचार्य नागार्जुन की कृति ही न हो।

तत्पश्चात् मूल पापों की प्रतिदेशना, प्रतिपादित की गई है, जिसमें पापदेशना के साक्षी के रूप में ३५ बुद्धों तथा १० दिशाओं में जीवन्त तथागतों को रखा गया है। उन सभी के समक्ष स्वयं द्वारा कृत पापकर्मों का, अन्यों को पापकर्म करने के लिए प्रेरणा देने का अथवा अन्यों द्वारा कृत पापकर्मों के अनुमोदन करने का अपने हृदय में स्मरण करते हुए अत्यन्त पश्चात्ताप करते हुए काय, वाक् एवं चित्त के द्वारा प्रतिदेशना करने का उल्लेख किया गया है। अन्य आपत्तियों में यथा—स्वयं द्वारा ज्ञात-अज्ञात स्तूप का विनाश, संघ के धन का अपहरण, दस अकुशल कर्मों का आचरण और पञ्च आन्तर्य पाप कर्मों की देशना भी प्रतिपादित की गई है। तदनन्तर पूर्वोक्त इन सभी के आचरण से उनके विपाक अथवा फल के रूप में तीन दुर्गतियों में से किसी एक में पतन होने और इस बीच में सुगति अर्थात् मनुष्य जन्म प्राप्त होने पर भी मूर्खता, दरिद्रता, अल्पायुष्कता, असाध्य रोग से पीड़ित होने एवं नुपंसकता इत्यादि का भी उल्लेख किया गया है।

तत्पश्चात् स्वयं के द्वारा इस जन्म में तथा पूर्व जन्मों में कृत कुशल कर्मों की परिणामना करने की विधि का उल्लेख किया गया है। इस प्रसंग में स्वयं द्वारा दिये गये दान, शील का पालन, ब्रह्मचर्य में स्थित रहना इत्यादि कुशल कर्मों का क्या-क्या फल प्राप्त किया जा सकता है, इसके सन्दर्भ में **आर्यप्रशान्तविनिश्चय-**

प्रातिहार्यसमाधिसूत्र तथा **आर्यरश्मिसमन्तमुक्तनिर्देशसूत्र** आदि से आगम उद्धृत करके वर्णन किया गया है।

तत्पश्चात् प्रातिमोक्ष संवर ग्रहण करने के अनन्तर प्रणिधान तथा प्रस्थान चित्त का उत्पाद कहा गया है। इन दोनों चित्तों का उत्पाद करने पर फल के रूप में अपरिमित पुण्य संचित किया जा सकेगा। इसके प्रमाण के रूप में **आर्यगण्डव्यूहसूत्र, आर्यरत्नप्रदीपसूत्र, आर्यत्रिस्कन्धमहायानसूत्र** और आचार्य चन्द्रगोमी द्वारा विरचित **बोधिसत्त्वविंशतिसंवर** तथा **आर्यरश्मिसमन्तमुक्तनिर्देश-सूत्र** आदि से अनेक आगम उद्धृत किये गये हैं। इसके बाद कुशलमूलों की महाबोधि के लिए परिणामना करना इत्यादि का प्रतिपादन किया गया है।

अन्त में ग्रन्थ के लेखक आचार्य जितारि के नाम तथा ग्रन्थ के शीर्षक का उल्लेख किया गया है। अनुवादक के रूप में नेपाल के एक पण्डित के अतिरिक्त उनके पूरे नाम का स्पष्ट उल्लेख नहीं है। सहायक भोट अनुवादक के रूप में मात्र लोचावा छग् के नाम का निर्देश किया गया है, उनका भी पूरा नाम उल्लिखित नहीं है। भोट देश के महाविद्वान् कोङ् टुल् योनतेन ग्यछो के अनुसार नेपाली पण्डित का पूरा नाम रविरक्षित है, परन्तु भोटदेशीय कंग्युर, तंग्युर सूची में नेपाली पण्डित रवीन्दरुचि अथवा रवीन्द्रदेव के नाम का उल्लेख मिलता है, न कि रविरक्षित का। भोटदेशीय लोचावा छग् के सन्दर्भ में भी यह भ्रम होता है, क्योंकि छग् लोचावा नाम के दो अनुवादक हैं, जिनमें ये अनुवादक पूर्ववर्ती हैं या पश्चाद्वर्ती, इसका सन्देह बना हुआ है। पूर्ववर्ती का पूरा नाम छग् डचोम् पा (छग् अर्हत्) तथा पश्चाद्वर्ती का नाम छग् छोस्-जे फेल् है। पूर्वोक्त टीका के अनुवादक पश्चाद्वर्ती लोचावा छग् छोस् जे फेल होंगे, क्योंकि इनके जीवन-वृत्तान्त में नेपाल यात्रा का भी उल्लेख है और नेपाली पण्डित से उपदेश-ग्रहण का भी उल्लेख मिलता है। फिर भी निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता। विद्वानों को इस पर विचार करना चाहिए। इन दोनों अनुवादकों का वृत्तान्त आगे कहा जाएगा।

आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान कृत त्रिस्कन्धसूत्रटीका का संक्षिप्त अभिधेय

आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान विरचित त्रिस्कन्धसूत्र की टीका '**कर्मावरण-विशोधनविधिभाष्य**' नामक इस ग्रन्थ का ११वीं शताब्दी में भोट देश के महानुवादक लोचावा भिक्षु छुलठिम ग्यलवा ने संस्कृत से भोट भाषा में अनुवाद किया। यह ग्रन्थ देगे सूची में सूत्रवर्गटीका के अन्तर्गत विद्यमान है।

इस ग्रन्थ के प्रारम्भ में ग्रन्थ के अनुवाद की सफलता हेतु बुद्ध और बोधिसत्त्वों को प्रणाम किया गया है। अतः तीन पिटकों में से सूत्रवर्ग के अन्तर्गत होने का संकेत वास्तविक है।

मंगलस्तुति में बुद्ध भगवान् के वाक् एवं चित्त के गुणों की उपमा सहित स्तुति की गई है।

मूल ग्रन्थ के प्रारम्भ में आचार्य दीपंकर ने कहा है कि जो वीर बोधिसत्त्व क्लेश और कर्म की वजह से बाधित सत्त्वों को इस सागर रूपी भव से उत्तारण करने (उतारने) में प्रयासरत रहते हैं, यदि किसी कारण से उन्हें आपत्ति लग जाए तो उससे निवृत्ति के अनेक उपाय हैं। संक्षेप में उन आपत्तियों में यदि पाराजयिक आपत्ति लग जाए तो उन्हें पुनः संवर का ग्रहण करना चाहिए। मध्य आस्रव अथवा लघु आश्रव से लिप्त होने पर या शेष अन्य आपत्तियों से लिप्त होने पर तीन पुद्गल अथवा एक पुद्गल के समक्ष उनकी प्रतिदेशना करनी चाहिए। इनके अतिरिक्त अपने चित्त के द्वारा संवरण करना है। अनादिकाल से जिन्होंने घोर कर्मावरणों का संचय किया है, उनको इस त्रिस्कन्धसूत्र का दिन और रात में तीन-तीन बार पाठ करके प्रतिदेशना करनी चाहिए—ऐसा कहा गया है।

तत्पश्चात् त्रिशरणगमन के विषय के रूप में त्रिरत्नों का परिचय तथा इन तीनों का ही शरण के रूप में ग्रहण करने पर मोक्ष एवं सर्वज्ञ पद प्राप्त हो सकता है। इसके अतिरिक्त इतर धर्मों के देवताओं की शरण में जाने से तो संसार से कदापि मुक्ति सम्भव नहीं है, पुनः सर्वज्ञपद की बात ही क्या है। ऐसा सुस्पष्टतया प्रतिपादित है।

इसके बाद ग्रन्थ के मूल अभिधेय का तीन वर्गों में विभाजन किया गया है, जो नमस्कार, अध्येषणा एवं पापदेशना नामक वर्ग हैं।

इनमें से पहले ३५ बुद्धों के प्रति नमस्कार करने के सन्दर्भ में कहा गया है कि ये ३५ बुद्ध प्रारम्भ में जब बोधिसत्त्व की चर्या कर रहे थे, उस समय उन्होंने ऐसा प्रणिधान किया था कि जब हम अनुत्तर सम्यक्सम्बोधि में संबुद्ध हो जाएंगे तब हमारा नाम लेकर जो नमस्कार करेंगे, उनके कर्मावरण क्षीण हो जाएं।

तत्पश्चात् ३५ बुद्धों में से मात्र प्रथम तथागत शाक्यमुनि तथा द्वितीय तथागत वज्रगर्भप्रमर्दिन् के नाम के अर्थ की व्याख्या की गई है। इनके अतिरिक्त

शेष ३३ बुद्धों के नाम के अर्थ की व्याख्या नहीं की गई है। आचार्य ने शेष बुद्धों के बारे में ऐसा कहा है कि अन्य बुद्धों के नाम के अर्थ की भी इसी प्रकार व्याख्या की जा सकती है, क्योंकि बुद्ध अपरिमित गुणों से अन्वित होते हैं। इसलिए प्रत्येक बुद्ध के नाम के अर्थ की व्याख्या नहीं की गई है और भी कहा है—वैसे तो प्रत्येकबुद्ध के गुण अन्य बुद्धों में भी होते हैं, अतः उनकी व्याख्या समान है। ऐसा लगता है कि विस्तार के भय की आशंका से उन्हें छोड़ा गया है।

द्वितीय अध्येषणा के सन्दर्भ में "**एवंप्रमुखा यावन्तः**" इत्यादि के अर्थ की व्याख्या में कहा गया है कि मेरी यह अध्येषणा भी प्रतिरूपिका (कृत्रिम) है, क्योंकि असम्प्रमोषधर्मता से युक्त होने के कारण कोई भी एक ऐसा प्राणी नहीं हैं, जो बुद्ध के द्वारा कभी भी विस्मृत किया गया हो, इस विस्मृति की कुछ सम्भावना ही नहीं है। यदि ऐसा है तो बुद्ध सभी प्राणियों को व्यापक सांसारिक दुःख से क्यों मुक्त नहीं कर देते? इसके उत्तर में कहा गया है कि सत्त्वों के अपने-अपने दोषों की वजह से ऐसा होता है। इसके प्रमाण के लिए **आर्यरत्नोल्काधारणी**[१] का उद्धरण किया गया है, जिसमें कहा गया है कि—

सूर्य यथा जात्यन्ध न पश्यी
नो स नास्ति उदेति स लोके।
चक्षुसमेत उदागमु ज्ञात्वा
सर्वप्रयुज्य स्वक-स्वकधर्मे ।।

तत्पश्चात् तृतीय पापदेशना के सन्दर्भ में कहा गया है कि इस जन्म में अथवा पूर्व जन्मों में जो पापकर्म किये गये हैं, उनके प्रति कौकृत्य करना चाहिए तथा पश्चात् भगवान् बुद्ध के समक्ष प्रतिदेशना करना चाहिए इत्यादि का प्रतिपादन किया गया है। तदनन्तर मूल पापकर्मों तथा आपत्तियों का तथागत शाक्यमुनि के द्वारा उपदिष्ट **आर्यचतुर्धर्मनिर्देशसूत्र** के अनुसार चार बलों से युक्त होकर सभी (पापों) की प्रतिदेशना के उपायों का प्रतिपादन किया गया है।

इस प्रकार कर्मावरणों की प्रतिदेशना की व्याख्या के पश्चात् स्वयं द्वारा संचित कुशलमूलों की नियमित रूप से परिणामना करने का प्रतिपादन किया गया है। तत्पश्चात् दानमय, शीलमय तथा भावनामय तीन कुशल स्वरूपों का उल्लेख किया गया है। इनमें से पहले दानमय कुशल के सन्दर्भ में दान "**दानं....अन्तशः**"

---

१. द्र०-शान्तिदेव, शिक्षासमुच्चय में उद्धृत, पृ० १८२, मिथिला संस्करण, १९६० ।

इस प्रकार वर्णन करके तथा उसका एक सूत्र के साथ संकलन करके चार प्रकार के दानों का वर्णन किया गया है। उनके अनुसार दिये जाने वाले दानों में स्वकीय पुत्र एवं किसी भी बाह्यवस्तु के दान के लिए त्याग करने का उल्लेख किया गया है।

द्वितीय शीलमय कुशल के सन्दर्भ में "**शीलं वा रक्ष्यताम्**" इत्यादि सूत्र का उद्धरण करके गृहस्थों के दो प्रकार के उपासकसंवर तथा पाँच प्रकार के प्रव्रजित संवरों का परिचय दिया गया है। तत्पश्चात् बोधिसत्त्वसंवर के सन्दर्भ में भावनामय कुशल का उल्लेख किया गया है, जिसके अन्तर्गत "**यच्च मे अनुत्तरज्ञानकुशलमूलम्**" सूत्र को युक्त करके इसकी व्याख्या के प्रसंग में समस्त धर्म निःस्वभाव, शून्य एवं माया की भाँति हैं—इस प्रकार भावना करने का प्रतिपादन किया गया है।

तत्पश्चात् इस ग्रन्थ के सम्पूर्ण अभिधेय त्रिस्कन्ध में संगृहीत हैं, इसका तथा त्रिस्कन्ध का परिचय भी दिया गया है। वे तीन स्कन्ध इस प्रकार हैं—पापदेशना स्कन्ध, कुशलमूल परिणामना स्कन्ध तथा याचनास्कन्ध। यह गणना अन्य विद्वानों के विचारों से भिन्न है।

तत्पश्चात् इस त्रिस्कन्धसूत्र का हृदय से दिन एवं रात में तीन-तीन बार निरन्तर पाठ करने पर स्वयं के द्वारा संचित कर्मावरण तथा पापकर्म स्वाभाविक रूप से विशुद्ध हो जाएंगे और सम्पूर्ण मनोरथ पूर्ण होने का फल प्राप्त होगा—इस प्रकार प्रतिपादन किया गया है। अतः इस सूत्र का निरन्तर पाठ करने हेतु प्रयत्न करने का तथा अन्य कर्मावरणों के क्षय के इच्छुक लोगों को भी इसके पाठ के प्रयत्न करने का उपदेश दिया गया है। इस प्रकार पापकर्मों के क्षय के बारे में भगवान् बुद्ध का साक्षाद् वचन है। अतः निःसन्देह इसका पाठ करने हेतु प्रयास का प्रतिपादन किया गया है।

अन्त में श्लोक के रूप में आचार्य ने कहा है कि इस टीका में त्रुटियाँ या असावधानी हुई हों तो क्षमा करें। अपि च, इस ग्रन्थ की टीका करने से जो कुशल या पुण्य संचित हुए हों, उन सबकी महाबोधि-प्राप्ति के लिए परिणामना करता हूँ—ऐसा कहा है।

अन्त में ग्रन्थ के लेखक आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान का नाम तथा ग्रन्थ का शीर्षक उल्लिखित है। इस ग्रन्थ के अनुवादक भिक्षु छुलठिम ग्यलवा का नाम

स्पष्ट रूप से उल्लिखित है, जो आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान के परम शिष्य थे और वे (अनुवादक) अपने साथ दीपकंर श्रीज्ञान को भारत देश से भोट देश में ले गये थे। इस ग्रन्थ की आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान ने टीका की है, इसमें कोई सन्देह नहीं है, क्योंकि स्वयं आचार्य ने बोधिपथप्रदीप की स्वटीका **बोधिमार्गप्रदीप पंजिका** में इस टीका का उल्लेख किया है तथा भोट देश के महान् विद्वान् उपाध्याय 'छिम थमजेद् खेनपा' (छिम सर्वज्ञ) ने इस टीका का उल्लेख किया है। लेकिन आश्चर्य की बात यह है कि आचार्य दीपंकर ने आचार्य नागार्जुन तथा आचार्य जितारि के द्वारा विरचित त्रिस्कन्धसूत्र टीकाओं का कुछ भी उल्लेख नहीं किया है। सम्भवतः आचार्य को ये दोनों टीकाएं प्राप्त नहीं हुई होंगी। किन्तु आश्चर्य की बात यह है कि आचार्य जितारि आचार्य दीपंकर के गुरु माने जाते हैं। अतः उनके सन्दर्भ में कुछ भी न कहा जाना सन्देह पैदा करता है।

तीन भारतीय टीकाओं की एक अन्तः समीक्षा

आर्यत्रिस्कन्धसूत्र अथवा बोधिसत्त्व-आपत्तिदेशना नामक ग्रन्थ पर तीन भारतीय आचार्यों की टीकाएं भोट अनुवादों में उपलब्ध होती हैं। सम्प्रति ये सभी अनूदित ग्रन्थ भोट भाषा में 'तनग्युर' सूची में सुरक्षित हैं। इन तीन टीकाओं के रचयिता क्रमशः आचार्य नागार्जुन, आचार्य जितारि तथा आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान के नाम से प्रसिद्ध हैं।

आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान रचित त्रिस्कन्धसूत्रटीका भारतीय टीका है, इसमें कोई सन्देह नहीं है। भोट विद्वानों ने भी इस टीका के सन्दर्भ में कोई भिन्न मत प्रदर्शित नहीं किया है, क्योंकि इस टीका के विषय में कादम्पा परम्परा के दो प्रमुख ग्रन्थों (१) कादम् फाछोस् (पितृधर्म) एवं (२) कादम् बुछोस् (पुत्रधर्म) में से पितृधर्म के अन्तर्गत आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान की विस्तृत जीवनी में उल्लेख मिलता है। आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान विरचित 'बोधिपथप्रदीप' की स्वोपज्ञ टीका में भी इस ग्रन्थ का नाम स्पष्ट रूप से उल्लिखित है। अतः इस ग्रन्थ के रचनाकार आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान ही है, इसमें कोई सन्देह नहीं है।

आचार्य नागार्जुन तथा आचार्य जितारि के नाम से उल्लिखित त्रिस्कन्धसूत्र टीकाएं वस्तुतः इन दोनों आचार्यों की रचनाएं हैं या नहीं, इस विषय में अधिकांश भोट विद्वानों में मतभेद है, क्योंकि इन दोनों टीकाओं में प्रमुख रूप से पाँच प्रकार के सन्देह प्रकट किये गये हैं, ज़ो इस प्रकार हैं :

(१) मूलसूत्र में अनुपलब्ध कुछ शब्दों की टीका।

(२) दोनों आचार्यों के अन्य ग्रन्थों से इन टीकाओं में परस्पर विचारभेद।

(३) ३५ तथागतों की दिशा, क्षेत्र, कायवर्ण, मुद्रा इत्यादि का अन्य सूत्र एवं शास्त्रों में वर्णित विवरण से भिन्नता।

(४) भोट भाषीय शब्दों एवं व्याकरण का प्रभाव।

(५) अनेक प्रामाणिक भोट विद्वानों द्वारा भारतीय आचार्यों की रचना होने में सन्देह।

(१) मूलसूत्र में अनुपलब्ध कुछ शब्दों की टीका

आर्य त्रिस्कन्धसूत्र नामक यह ग्रन्थ मूलरूप से आर्यरत्नकूट के अन्तर्गत ४९वें ग्रन्थ आर्य-उपालिपरिपृच्छासूत्र से निर्गत एक लघु ग्रन्थ है। ऐसा प्रतीत होता है कि इस त्रिस्कन्धसूत्र को सर्वप्रथम आचार्य शान्तिदेव ने आर्य-उपालि-परिपृच्छासूत्र से निकाल कर अपने शिक्षासमुच्चय ग्रन्थ के आठवें परिच्छेद 'पापदेशना' में उद्धृत किया है। सम्भवत: कालान्तर में भारतीय तथा भोट विद्वानों ने उसी त्रिस्कन्धसूत्र को आधार बनाकर अपने-अपने विचार के अनुसार टीका-टिप्पणियाँ लिखी होंगी।

आर्य-उपालिपरिपृच्छासूत्र तथा शिक्षासमुच्चय दोनों का भोट देश के वरिष्ठ अनुवादक 'येशे दे' ने संस्कृत से भोट भाषा में अनुवाद किया। कालान्तर में लगभग ११वीं शताब्दी में तिब्बत के महानुवादक 'लोदेन शेरब्' ने आचार्य शान्तिदेव के शिक्षासमुच्चय का पुन: संस्कृत से मिलान करके संशोधन किया। सम्भवत: इसी कारण शिक्षासमुच्चय में विद्यमान उपालिपरिपृच्छा से उद्धृत त्रिस्कन्धसूत्र का अनुवाद पूर्व के अनुवाद से कुछ भिन्न हो गया, किन्तु मूल ढाँचे में कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ। इस प्रकार त्रिस्कन्धसूत्र के भोट भाषा में दो अनुवाद प्राप्त होते हैं।

भोटवासी प्रतिदिन इस त्रिस्कन्धसूत्र का पाठ पाप की प्रतिदेशना के लिए करते हैं। अत: यह ग्रन्थ भोट देश में अत्यन्त प्रसिद्ध है। इस ग्रन्थ को 'तुङ् शग्' के नाम से जाना जाता है।

ऐसा लगता है कि—इस त्रिस्कन्धसूत्र का नियमित रूप से पाठ करने के लिए कालान्तर में किसी भोट विद्वान् ने सम्भवतः इसके प्रारम्भ में '**नमः**' इत्यादि और अन्त में '**त्रिस्कन्धसूत्र समाप्त**' ऐसा जोड़ दिया तथा शिक्षासमुच्चय और उपालिपरिपृच्छासूत्र के दोनों भोट अनुवाद को आधार बनाकर अच्छे-अच्छे शब्दों को निकाल कर तथा कुछ नए शब्द जोड़कर एक नूतन संस्करण का निर्माण कर दिया। सम्भवतः पुनः किन्हीं दो भोट विद्वानों ने कालान्तर में उसी संस्करण को आधार ग्रन्थ बनाकर दो टीकाओं की रचना की होगी और बाद में ग्रन्थ को प्रमाणित सिद्ध करने के लिए भारतीय आचार्यों नागार्जुन और जितारि का नाम उसमें जोड़ दिया होगा, क्योंकि इन दोनों टीकाओं में ऐसे बहुत से शब्दों पर टीका की गई हैं, जो दोनों उपालिपरिपृच्छासूत्र, शिक्षासमुच्चय के अनुवादों में और मूल संस्कृत में उपलब्ध नहीं होते हैं, किन्तु उपर्युक्त भोट विद्वान् कृत नवीन संस्करण में वे सभी शब्द प्राप्त होते हैं।

आचार्य जितारि की त्रिस्कन्धसूत्रटीका के प्रारम्भ में जिस प्रकार तथागत शाक्यमुनि को नमस्कार किया गया है, तदनुसार उसमें "**भगवान् तथागत शाक्यमुनि को नमस्कार**" ऐसा उल्लिखित है। इस सन्दर्भ में मेरा मानना है कि मूल संस्कृत और उसके भोट अनुवादों में अनुपलब्ध 'भगवान्' शब्द पर भी इसमें टीका की गई है, जो मात्र किसी भोट विद्वान् द्वारा पूजा-पाठ के लिए सम्पादित संस्करण में ही उपलब्ध होता है।

छठवें तथागत वीरनन्दी, जो कि इनका वास्तविक नाम है, फिर भी पूजा-पाठ संस्करण में इसके स्थान पर '**तथागत श्री आनन्दी**' पाठ उपलब्ध होता है। जबकि आचार्य नागार्जुन और जितारि के नाम से प्रसिद्ध दोनों टीकाओं में '**तथागत वीरनन्दी**' शब्द की टीका न करके '**श्री आनन्दी**' शब्द की ही टीका की गई है। किन्तु इन्हीं 'श्री आनन्दी' का नाम उपालिपरिपृच्छा एवं शिक्षासमुच्चय के भोट अनुवादों में भी उपलब्ध है। यहाँ आश्चर्य की बात यह है कि यदि यह टीका स्वयं आचार्य नागार्जुन की रचना है तो वे '**श्री**' और '**वीर**' के अर्थ में अन्तर अवश्य समझ सकते थे। इस सन्दर्भ में संस्कृत मूल तथा उसके भोट अनुवाद दोनों में सन्देह पैदा होता है।

इसी प्रकार सातवें तथागत '**रत्नाग्नि**' के सम्बन्ध में भी ऐसा देखने को मिलता है। प्राप्त मूल संस्कृत में तथागत रत्नाग्नि के स्थान पर तथागत '**रत्नश्री**' उल्लिखित प्राप्त होता है। उसके भोट-भाषा में अनूदित संस्करण एवं नागार्जुन

तथा जितारि दोनों आचार्यों की टीकाओं में भी '**तथागत रत्नाग्नि**' शब्द की ही टीका की गई है। यही शब्द समस्त भोट टीकाओं में भी उपलब्ध होता है। अतः यहाँ मूल संस्कृत पाठ में सन्देह पैदा होता है, क्योंकि अन्य सूत्रों में तथागत रत्नाग्नि नाम ही प्राप्त होता है।

इसी प्रकार संस्कृत मूल में बारहवें तथागत '**शूरदत्त**' उपलब्ध होता है, किन्तु किन्हीं अनूदित भोट संस्करणों में इसके स्थान पर '**तथागत श्रीदत्त**' यह नाम उपलब्ध होता है। उपर्युक्त दोनों भारतीय आचार्यों की टीकाओं में भी '**श्रीदत्त**' और '**शूरदत्त**' दोनों का उल्लेख मिलता है।

पुनश्च, आचार्य नागार्जुन के नाम से प्रसिद्ध टीका में प्रथम तथागत शाक्यमुनि के शाब्दिक अर्थ में भी भ्रम पैदा होता है। क्योंकि उसमें शाक्य शब्द में पदच्छेद करके '**शा**' का अर्थ अशेष, '**क्य**' का अर्थ अवबोध और 'मुनि' का अर्थ अद्वयता से युक्त किया गया है। किन्तु जहाँ तक मेरा अध्ययन और ज्ञान है, तदनुसार संस्कृत व्याकरण और शब्द व्युत्पत्ति के अनुसार ऐसा अर्थ करना सम्भव नहीं है, क्योंकि '**शाक्य**' एक अखण्ड शब्द है और यह एक वंश या कुल का द्योतक है। यदि शब्द-व्युत्पत्ति के अनुसार अर्थ किया जाए तो '**शाक्य**' शब्द का अर्थ अत्यन्त समर्थ एवं शक्तिशाली है। इसी अर्थ में वे लोग '**शाक्य**' कहलाते हैं। ऐसा आचार्य प्रज्ञावर्मा रचित **विशेषस्तव** की टीका में उपलब्ध होता है। अपि च, इसका अर्थ '**शक्**' धातु में योग्यार्थक 'यत्' प्रत्यय लगाकर यह शब्द निष्पन्न होता है, जिसका अर्थ योग्य अथवा (सामर्थ्य से) युक्त होता है। इस प्रकार '**शा**' एवं '**क्य**' को अलग-अलग करके भिन्न-भिन्न की हुई व्याख्या हमें अन्यत्र किसी ग्रन्थ में उपलब्ध नहीं हुई।

तन्त्र ग्रन्थों में प्रत्येक अक्षर का अलग-अलग अर्थ निकालकर व्याख्या उपलब्ध होती है, उसी प्रकार यहाँ पर भी यदि आचार्य नागार्जुन ने तन्त्र की पद्धति के अनुसार '**शाक्यमुनि**' का भावार्थ "समस्त (अशेष) तत्त्वों का अद्वय रूप से यथावत् अवबोध करने वाला" किया है तो अधिकांश अन्य ३४ तथागतों के नाम की व्याख्या भी उसी पद्धति से की जानी चाहिए थी, किन्तु ऐसा नहीं किया गया है। अतः इस टीका को आचार्य नागार्जुन की रचना मानने में सन्देह उत्पन्न होता है।

पुनश्च, आर्य उपालिपरिपृच्छासूत्र के अन्तर्गत पठित त्रिस्कन्धसूत्र के भोट अनुवाद में "**एवं यावन्तः दशदिक्षु सर्वलोकधातुषु**" ऐसा पाठ उपलब्ध होता है, किन्तु संस्कृत मूल पाठ तथा शिक्षासमुच्चय के भोट अनुवाद में "**एवंप्रमुखा यावन्तः सर्वलोकधातुषु**" ऐसा पाठ उपलब्ध होता है। यहाँ '**दशदिक्षु**' का उल्लेख नहीं है, किन्तु आचार्य नागार्जुन तथा आचार्य जितारि के नाम से प्रसिद्ध टीकाओं में '**दशदिक्षु**' के स्थान पर '**चतुर्दिक्षु**' का उल्लेख है और इसी (शब्द) पर टीका भी की गई है, लेकिन टीकाओं के अन्तर्गत '**पूर्व दिशा**' इत्यादि दश दिशाओं का परिचय दिया गया है।

पुनश्च, "**सांघिकं द्रव्यमपहृतं स्यात्**" ऐसा पाठ मूल संस्कृत में उपलब्ध है, किन्तु उपालिपरिपृच्छासूत्र तथा शिक्षासमुच्चय के भोट अनुवादों में "**चातुः सांघिकं वा द्रव्यमपहृतं स्यात्**" ऐसा पाठ उपलब्ध होता है। यहाँ चारों दिशाओं के संघों का उल्लेख किया गया है, किन्तु भोट पूजा-पाठ के संस्करणों एवं आचार्य जितारि की त्रिस्कन्धसूत्रटीका में दश दिशाओं के संघों का उल्लेख है, जो संस्कृत मूल के अनुरूप नहीं है।

अपि च, "**यमविषयं वा गच्छेयं**" ऐसा संस्कृत मूल में उल्लिखित है। यही उपालिसूत्र एवं शिक्षासमुच्चय के भोट अनुवादों में भी है, किन्तु भोट पूजा-पाठ एवं आचार्य नागार्जुन की टीका में पूर्वोक्त वचन के स्थान पर "**प्रेतविषयं वा गच्छेयं**" का उल्लेख मिलता है तथा इसी वचन को प्रमाण मानकर टीका की गई है, जो मूल संस्कृत के अनुरूप नहीं है।

पुनश्च "**न प्रतिच्छादयामि**" यह वाक्य किन्हीं-किन्हीं भोट संस्करणों में दो बार अनूदित उपलब्ध होता है, जैसे—"कुछ भी छिपाता नहीं हूँ और कुछ भी नहीं छिपाऊँगा" इस प्रकार एक वाक्य के दो भोट अनुवाद प्रमुख रूप से पूजा-पाठ एवं किन्हीं मूल अनुवाद के संस्करणों में प्राप्त होते हैं। आचार्य नागार्जुन की टीका में भी पूर्वोक्त दोनों अनुवादों को वर्तमान एवं भविष्य की दृष्टि से अलग-अलग व्याख्या की गई है, जैसे आचार्य की टीका में कहा गया है—"दोषों को स्वीकार करने से मन में भी कुछ नहीं छिपाने को "**न प्रतिच्छादयामि**" अर्थात् कुछ भी नहीं छिपाता हूँ तथा साक्षात् रूप से भी "**न प्रतिच्छादयामि**" अर्थात् कुछ भी नहीं छिपाऊँगा—ऐसा शब्द का द्विविध अनुवाद किया गया है, जो मूल संस्कृत पाठ में नहीं है। अतः इस व्याख्या से परोक्ष में यह सिद्ध होता है कि एक

संस्कृत मूल की दो अलग-अलग व्याख्या सम्भव नहीं है, अतः उक्त टीका के आचार्य नागार्जुन द्वारा विरचित होने में सन्देह होता है, क्योंकि ये दोनों अनुवाद भोट पूजा-संस्करण के आधार पर हैं।

इस प्रकार मूल सूत्र में परिणामना के अन्तर्गत "**उत्तरोत्तरायां**" संस्कृत मूल के स्थान पर भोट पूजा-पाठ संस्करण एवं किन्हीं अन्य भोट संस्करणों में '**उत्तरोत्तरायां गुरुगुर्व्यां**' ऐसा अनुवाद उपलब्ध होता है, जो संस्कृत मूल पाठ में उपलब्ध नहीं हैं। लेकिन आचार्य एवं जितारि की टीका दोनों में '**उत्तरोत्तरायां**' एवं '**गुरुगुर्व्यां**' दोनों को मूल मानकर दोनों की अलग-अलग टीका की गई है, जैसे—'**उत्तर**' अर्थात् लोकोत्तर तथा उससे उत्तर बोधिसत्त्व माना गया है। '**गुरु**' को बोधिसत्त्व एवं उससे श्रेष्ठ गुरु को '**भगवान् बुद्ध**' माना गया है, (क्योंकि) उससे बढ़कर गुरु कोई नहीं है। अतः वही बोधिसत्त्व महासत्त्व है। आचार्य जितारि की टीका में भी ऐसा ही उल्लेख मिलता है। इससे यह सन्देह उत्पन्न होता है कि इन दोनों टीकाकारों के समक्ष संस्कृत मूल पाठ उपलब्ध नहीं था, अपितु ऐसा लगता है कि भोट पूजा-पाठ संस्करण के आधार पर ही टीका की गई होगी।

सम्भवतः उनके समक्ष उपालिपरिपृच्छासूत्र का भोट-अनुवाद अथवा शिक्षासमुच्चय का भोट-अनुवाद भी नहीं रहा होगा—ऐसा प्रतीत होता है, क्योंकि यदि उनके समक्ष उक्त भोट-अनुवाद उपलब्ध होते तो एक ही शब्द की दो अलग-अलग टीकाएं नहीं की गई होतीं।

पुनश्च, '**परिणामनया**' शब्द के भी भोट पूजा-पाठ संस्करणों में दो अनुवाद प्राप्त होते हैं। भोट-पाठ के अनुसार 'जिसकी परिणामना करने से' तथा 'परिणामना की जाती है'—ऐसे दो अनुवाद दृष्टिगोचर होते हैं। आचार्य नागार्जुन की टीका में भी दोनों शब्दों को अलग-अलग मानकर इन दोनों शब्दों की भिन्न-भिन्न अर्थ में व्याख्या की गई है, जिससे बात की और अधिक पुष्टि होती है कि यह उनकी स्वयं की रचना नहीं हो सकती है।

पुनश्च, "**सर्वान् बुद्धान् अध्येषयामि**" अर्थात् मैं सभी बुद्धों से अध्येषणा करता हूँ। यह संस्कृत मूलपाठ तथा उपालिपरिपृच्छासूत्र एवं शिक्षासमुच्चय के भोट अनुवाद में भी उपलब्ध होता है, किन्तु अधिकांश भोट पूजा-पाठ संस्करण एवं भोट टीकाकारों में '**सर्वान् बुद्धान् अध्येषयामि, याचयामि**'—ऐसा अनुवाद उपलब्ध होता है, जो संस्कृत मूलपाठ से भिन्न है। इसका अर्थ है सभी बुद्धों से

याचना करते हुए अध्येषणा करता हूँ। यही पाठ आचार्य नागार्जुन एवं आचार्य जितारि दोनों की टीका में उपलब्ध होता है। जहाँ आचार्य नागार्जुन ने अध्येषणा एवं याचना दोनों का अलग-अलग अर्थ किया है, जो वास्तव में संस्कृत मूलपाठ के अनुरूप नहीं है। वहीं आचार्य जितारि ने उक्त पाठ को यथावत् ग्रहण कर लिया, किन्तु उस पर कोई टीका नहीं की।

पुनश्च, "**भवतु में ज्ञानमनुत्तरम्**" ऐसा संस्कृत मूलपाठ में उपलब्ध है। यही पाठ उपालिसूत्र एवं शिक्षासमुच्चय में भी उपलब्ध है, किन्तु अधिकांश भोट पूजा-पाठ संस्करणों एवं आचार्य जितारि की टीका में पूर्वोक्त से कुछ भिन्न उपलब्ध होता है, जैसे—'**भवतु मे अनुत्तरं परमुत्तमं ज्ञानं प्राप्तम्**' अर्थात् "मुझे अनुत्तर परम उत्तम ज्ञान प्राप्त हो"। यह सर्वथा मूल संस्कृत पाठ से मेल नहीं खाता। यही पाठ आचार्य जितारि की टीका के भोट अनुवाद में स्पष्ट रूप से उपलब्ध होता है, किन्तु दोनों आचार्यों (नागार्जुन एवं जितारि) ने इस शब्द की व्याख्या नहीं की है।

आचार्य नागार्जुन तथा आचार्य जितारि दोनों की टीकाओं के अन्त में भोट अनुवादक के नाम का जो उल्लेख किया गया है, वह भी सन्दिग्ध प्रतीत होता है, क्योंकि आचार्य नागार्जुन की टीका के अन्त में भोट अनुवादक 'जे देवघोष' का नाम उल्लिखित है, यह भोट देश के अत्यन्त अप्रसिद्ध अनुवादक हैं। मात्र इसी एक ग्रन्थ पर उनका नाम उल्लिखित है।

आचार्य जितारि की टीका के अन्त में भी भोट अनुवादक का नाम स्पष्टतया उल्लिखित नहीं हैं। उसमें केवल अनुवादक के कुल अथवा वंश के नाममात्र का उल्लेख है और अनुवाद में सहयोग करनेवाले का नाम भी स्पष्ट नहीं है। उसमें केवल नेपाल के किसी 'बौद्ध पण्डित' का उल्लेख है। इन दोनों अनुवादकों के जीवनवृत्तान्तों का भी उल्लेख आगे भूमिका के अन्त में किया जाएगा। अत एव वहीं द्रष्टव्य है।

(२) दोनों आचार्यों के अन्य ग्रन्थों से इन टीकाओं में परस्पर विचार-भेद

आर्यकुसुमसंचयसूत्र तथा **आचार्य नागार्जुन** की अन्य रचनाओं में त्रिस्कन्धसूत्र के चौथे तथागत नागेश्वरराज का क्षेत्र '**मधुमती**' कहा गया है और प्रस्तुत टीका में तथागत नागेश्वरराज का लोकक्षेत्र '**नागव्याप्त**' नामक बुद्धक्षेत्र कहा गया है, जो सूत्र तथा स्वयं के वचन से विरुद्ध है। वास्तव में मधुमती ही इनका लोकक्षेत्र माना जाता है। इस तथागत की दिशा भी आर्यकुसुमसंचयसूत्र में

पूर्व-दक्षिण कही गई है और आचार्य नागार्जुन की टीका में इनकी दिशा पश्चिम कही गई है, जो सूत्र से मेल नहीं खाती है।

उसी प्रकार आर्यकुसुमसंचयसूत्र में तथागत रत्नाग्नि की दिशा भी उत्तर और लोकक्षेत्र '**मण्याभासवती**' कहा गया है, किन्तु आचार्य नागार्जुन की टीका में इनकी दिशा पश्चिम एवं लोकक्षेत्र '**आभासवती**' कहा गया है, जो सर्वथा परस्पर विरुद्ध है। इसी प्रकार दूसरे तथागत **वज्रगर्भप्रमर्दिन** के सन्दर्भ में भी तिब्बत के वरिष्ठ विद्वान् 'जे गुङ् थन् तेन पई दोन मेद्' ने अपने **दानपरिशोधनविधि** नामक ग्रन्थ में कहा है कि '**वज्रगर्भ**' तो क्षेत्र का नाम है और '**वज्रप्रमर्दिन्**' स्वयं तथागत का नाम है। किन्तु त्रिस्कन्धसूत्र में नाम एवं क्षेत्र दोनों में सन्धि करके पूरे पद को तथागत का नाम कहा गया है। यही बात तथागत आर्यकुसुमसंचयसूत्र में भी कही गई है। यदि '**वज्रगर्भ**' बुद्धक्षेत्र का नाम और **वज्रप्रमर्दिन्** स्वयं तथागत का नाम होता तो अत्यन्त उदार विचारधारा वाले आचार्य नागार्जुन अवश्य ही बुद्धक्षेत्र और स्वयं बुद्ध के नाम की अलग-अलग टीका करते। सम्भवतः उस तथागत का बुद्धक्षेत्र '**गगनगर्भ**' प्रस्तुत न करके आर्यकुसुमसंचयसूत्र के अनुसार वज्रगर्भ रख सकते थे, किन्तु ऐसा नहीं किया गया है। सम्भवतः उसमें आचार्य नागार्जुन नामक व्यक्ति को कोई और आधारभूत सूत्र उपलब्ध हुआ होगा और उसी को आधार बना करके इनका क्षेत्र '**गगनगर्भ**' लिख दिया होगा। लेकिन दुर्भाग्यवश मुझे आज तक वह आधार सूत्र उपलब्ध नहीं हो सका।

(३) पैंतीस तथागतों के दिशा, क्षेत्र, कायवर्ण, मुद्रा इत्यादि का अन्य सूत्र एवं शास्त्रों में वर्णित विवरण से भिन्नता

त्रिस्कन्धसूत्र तथा **आर्यकुसुमसंचयसूत्र** में ३५ बुद्धों के कायवर्ण तथा क्षेत्रों में परस्पर तुलना की जाए तो निष्कर्ष यह निकलता है कि सर्वप्रथम तथागत वज्रगर्भप्रमर्दिन् के सन्दर्भ में **आचार्य नागार्जुन** की **त्रिस्कन्धसूत्रटीका** के अनुसार उनकी दिशा ऊर्ध्व, क्षेत्र गगनगर्भ, कायवर्ण नील, आयुध दो वज्र हैं। उनके नामपाठ की अनुशंसा ग्यल्-छब्-जे कृत टीका के अनुसार इस प्रकार है कि इस बुद्ध के नाम के पाठ से १० हजार कल्पों के पापों की विशुद्धि होती है। **आर्यकुसुमसंचयसूत्र** के अनुसार तथागत वज्रगर्भप्रमर्दिन् की दिशा उत्तर, क्षेत्र

वज्रगर्भ लोकधातु है तथा उनके नाम-पाठ की अनुशंसा में १ करोड़ १० लाख १० हजार कल्पों के पापों से विशुद्धि कही गयी है।

इसी प्रकार उसी सूत्र में तथागत रत्नाग्नि की दिशा उत्तर, क्षेत्र मणि-आभासवती, नाम-पाठ की अनुशंसा है तथा उससे अवैर्तिक स्थान (पद) प्राप्त होगा—ऐसा कहा गया है। इसके अतिरिक्त **आचार्य नागार्जुन** की **त्रिस्कन्धसूत्र-टीका** में कहा गया है—"तथागत रत्नाग्नि की दिशा पश्चिम, क्षेत्र आभासवती, कायवर्ण रक्त, आयुध मणिरत्न एवं अग्निमण्डल है। नामपाठ की अनुशंसा तो ग्यल्-छब्-जे के अनुसार संघ द्रव्य के अपहरण से संचित पापों की विशुद्धि होगी।" और भी, तथागत नागेश्वरराज के सन्दर्भ में **आर्यकुसुमसंचयसूत्र** में कहा गया है—"इनकी दिशा पश्चिम, क्षेत्र मधुमती है", लेकिन नाम-पाठ की अनुशंसा स्पष्ट नहीं है। उसी तथागत नागेश्वरराज का आचार्य नागार्जुन की टीका में इस प्रकार वर्णन है, उनकी दिशा पूर्व-दक्षिण, कायवर्ण नील, क्षेत्र नागव्याप्त तथा आयुध नागलता एवं नीलसर्प हैं। नाम-पाठ की अनुशंसा ग्यल्-छब्-जे के अनुसार आठ कल्पों के पापों की विशुद्धि है।

इस प्रकार अन्य तथागतों की दिशा, क्षेत्र, आयुध तथा अनुशंसा की भी परस्पर तुलना करने पर अनेक असमानताएं उपलब्ध होती हैं। अतः भोट देश के वरिष्ठ विद्वान् '**गुङ् थङ् तेनपई डोनमे**' ने अपनी **त्रिस्कन्धसूत्रटीका**[1] में तथागत रत्नाग्नि के सन्दर्भ में कहा है—"आचार्य नागार्जुन द्वारा रचित त्रिस्कन्धसूत्रटीका नामक ग्रन्थ में (तथागत) रत्नाग्नि का आयुध रत्न एवं अग्निमण्डल जो कहा गया है, उसका आचार्य जितारि की त्रिस्कन्धसूत्रटीका तथा आचार्य कृष्णपाद कृत त्रिस्कन्धसाधना आदि में लेशमात्र भी उल्लेख नहीं किया गया है। (भोट देश के महाविद्वान्) साक्य पण्डित द्वारा विरचित '**त्रिसंवरप्रकरण**' में आचार्य नागार्जुन द्वारा रचित त्रिस्कन्धसूत्रटीका के प्रति सन्देह व्यक्त करके इसे उनकी रचना होने का निषेध किया गया है। अतः आचार्य चोंखापा ने भी इस टीका को प्रामाणिक न मानकर अपने द्वारा किये गये ३५ बुद्धों के साक्षात् दर्शन के अनुसार अपने परम शिष्य '**सङ् क्योङ्**' आदि को पृथक्तया ३५ बुद्धों के कायवर्ण आदि का निर्देश किया है। तदनुसार भोट देश के महान् विद्वान् '**ल्होडक् डुपछेन्**' ने अपनी त्रिस्कन्धसूत्रटीका की विधि में भी उल्लेख किया है। आचार्य नागार्जुन द्वारा विरचित त्रिस्कन्धसूत्रटीका के बारे में सप्तम दलाई लामा ने कहा है कि किसी

---

१. वचन संग्रह 'च' पुट्, पृ० २२२।

भोट विद्वान् ने इस टीका की रचना कर उसे बाद में आचार्य नागार्जुन की रचना होने का नाम जोड़ दिया है, जबकि वास्तव में यह एक भोटदेशीय टीका है। वह बात मुझे भी उचित लगती है, क्योंकि नागार्जुन के ही **त्रिस्कन्धसूत्रटीका** में तथागत नागेश्वरराज के सन्दर्भ में कहा गया है—"उनकी दिशा दक्षिण-पूर्व, क्षेत्र नागों से व्याप्त, कायवर्ण नील एवं आयुध नागलता और नील सर्प है, जो आचार्य नागार्जुन के अन्य ग्रन्थों में उल्लिखित विचारों से कुछ भी मेल नहीं खाता है। वास्तव में (तथागत) नागेश्वरराज का क्षेत्र मधुमती माना जाता है और वह **आर्यकुसुमसंचयसूत्र** में उल्लिखित है तथा यह पूर्ववर्ती प्रामाणिक वरिष्ठ विद्वानों के विचारों से भी मेल खाता है।" और भी, जे गुङ् थङ् द्वारा विरचित '**दानपरिशोधनविधि**[१]' में कहा गया है—"तथागत अर्हत् सम्यक्सम्बुद्ध रत्नाग्नि का क्षेत्र उत्तर दिशा के एक अरब १ हजार बुद्ध क्षेत्रों के अन्त में स्थित पश्चिम-लोकधातु आभासवती में विद्यमान है। यहाँ प्रभास एवं आभास पर्यायवाची शब्द हैं। इस प्रकार ३५ बुद्धों के नामों में अनेक समानताएं हैं। उस (कुसुमसंचय) सूत्र में वज्रगर्भप्रमर्दिन् के पश्चात् जिस प्रकार तथागत रत्नाग्नि तथा रत्नचन्द्रप्रभ दो के नाम प्राप्त होते हैं, उसी प्रकार नागार्जुन-विरचित त्रिस्कन्धसूत्रटीका में ३५ बुद्धों के नाम इधर-उधर बिखरे हुए उपलब्ध होते हैं। सर्वप्रथम उक्त वज्रगर्भवती एक क्षेत्र का नाम है, वज्रप्रमर्दिन् स्वयं बुद्ध का नाम है और त्रिस्कन्धसूत्र में वज्रगर्भप्रमर्दिन् संक्षिप्त रूप में कहा गया है।" अत: इसके अनुसार यह स्पष्ट हो जाता है कि आचार्य नागार्जुन कृत त्रिस्कन्धसूत्रटीका का पुन: गम्भीर रूप से अध्ययन करके अनुसन्धान करना आवश्यक है। मैं इस सन्दर्भ में कुछ और विचार आगे प्रस्तुत करूँगा।

वैसे तो पैंतीस तथागतों के कायवर्ण, क्षेत्र एवं दिशा इत्यादि के सन्दर्भ में पूर्व में कहा जा चुका है, फिर भी आर्यकुसुमसंचयसूत्र के वर्णन, आचार्य नागार्जुन की टीका के विचार, भोट देश के महाविद्वान् साक्य पण्डित के मत और भोट देश के गेलुग् सम्प्रदाय के संस्थापक जे० रिनपोछे (चोंखापा) द्वारा पैंतीस तथागतों का साक्षात् दर्शन आदि इन सबमें प्रतिपादित कायवर्ण, मुद्रा एवं आयुध के बारे में परस्पर तुलना करने पर ऐसा प्रतीत होता है कि इन सभी में अनेक आंशिक विरोध हैं, वास्तव में 'यह शुद्ध है, यह गलत है'—ऐसा सिद्ध करना अत्यन्त कठिन है। किन्तु हो सकता है कि आचार्य नागार्जुन की

---

१. वचन संग्रह 'च' पुट्, पृ० २१६ ।

त्रिस्कन्धसूत्रटीका में वर्णित पैंतीस तथागतों के कायवर्ण, क्षेत्र, दिशा, मुद्रा एवं आयुध इत्यादि का आधार सम्भवतः कोई गम्भीर गुह्यतन्त्र हो, जो लोक में उतना प्रसिद्ध नहीं था। क्योंकि त्रिस्कन्धसूत्र, वैसे तो सूत्र का पक्ष है, किन्तु अनेक भोट विद्वानों ने इसे तन्त्र पक्ष में ले जाकर इसकी तन्त्र के अनुसार व्याख्या कर दी है—ऐसा अधिक दृष्टिगोचर होता है।

भारतीय आचार्य छोटे कृष्णपाद ने इस पर **त्रिस्कन्धसाधनोपाय** नामक एक ग्रन्थ की रचना की है, जो तन्त्रपक्ष के अनुसार है। इस पर भोट विद्वानों की अनेक तन्त्र-विधि भी उपलब्ध होती हैं। अतः यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता है कि यह ग्रन्थ (नागार्जुन की टीका) वस्तुतः तन्त्रानुसारी ही है। इसके सन्दर्भ में और समीक्षा किए जाने की आवश्यकता है।

आचार्य चोंखापा ने पाप एवं आवरणों की विशुद्धि के लिए सर्वप्रथम जब विभिन्न ग्रन्थों का अन्वेषण किया तो उन्होंने जाना कि त्रिस्कन्धसूत्र के द्वारा साष्टाङ्ग प्रणाम ही सर्वोत्तम उपाय है और इसी सूत्र के पाठ से साष्टाङ्ग प्रणाम करके कठोर साधना के फलस्वरूप अन्ततोगत्वा उन्हें पैंतीस तथागतों का अपने-अपने कायवर्ण, मुद्रा एवं आयुधों के साथ साक्षात्कार हुआ। कालान्तर में जब उनके शिष्यों एवं अनुयायियों ने पैंतीस तथागतों के चित्रनिर्माण के लिए जे० रिनपोछे से निवेदन किया तो जे० रिनपोछे ने साक्षात् दर्शन के अनुसार चित्रलेखन की अनुमति प्रदान की।

भोट-देश के महापण्डित साक्य कुङ्गा ग्यलछन् का मानना है कि ३५ तथागतों के वर्ण एवं मुद्राएं आर्यावर्त भारतवर्ष की परम्परा के अनुसार होनी चाहिए। उनका कहना है कि प्राचीनकाल में आर्यावर्त भारतवर्ष के बौद्धधर्म का शासन समस्त भूमण्डल में व्याप्त था, उस समय अनेक मठ एवं विहारों की स्थापना हुई और उसी काल में अजन्ता, एलोरा आदि अनेक महापाषाण गुफाओं का निर्माण हुआ। उन-उन गुफाओं में अनेक तथागतों के चित्र एवं मूर्तियों का निर्माण किया गया। किसी-किसी में अनेक बुद्धों के चित्र भी निर्मित हैं, उनमें अधिकतर पाँच तथागतों की आकारयुक्त मुद्राओं वाले चित्र ही प्राप्त होते हैं, न कि अनेक आयुध एवं मुद्राओं से युक्त तथागत। अतः ३५ तथागतों के कायवर्ण एवं मुद्राएं भी पाँच तथागतों की मुद्राओं से अतिरिक्त समीचीन नहीं माना गया है, क्योंकि ये सभी ३५ तथागत प्रव्रजित एवं निर्माणकाय हैं—ऐसा कहा गया है।

अत: वे (साक्य पण्डित) आचार्य नागार्जुन की ३५ बुद्धों की परम्परा और जे० चोंखापा की परम्परा का सर्वथा समर्थन नहीं करते हैं, क्योंकि उन परम्पराओं में अनेक मुद्राएं तथा आयुध धारण किये हुए बुद्ध प्रतिपादित हैं। ऐसा विचार मानने से वे तथागत के वचनों से विरोध की आशंका प्रकट करते हैं। उन्होंने अपने पक्ष में भारत के महान् आचार्य उद्भट सिद्धस्वामी के द्वारा विरचित 'विशेषस्तव' का प्रमाण प्रस्तुत किया है। यथा—"चक्र एवं त्रिशूल धारण न करने पर भी मैत्री-शस्त्र से उस (मार) पर विजय प्राप्त की है"—इस प्रकार बुद्ध की स्तुति की है। कालान्तर में आचार्य प्रज्ञावर्म ने इस (विशेषस्तव) ग्रन्थ की टीका में कहा है, यथा—"मार की शक्ति पर विजय प्राप्त करने के लिए भगवान् (आपके पास) विष्णु और महादेव की तरह चक्र और त्रिशूल नहीं है, फिर भी मैत्री शस्त्र के द्वारा आपने इस (मार की) शक्ति पर विजय प्राप्त की है"—इस प्रकार व्याख्या की है।

महापण्डित साक्य कुङ्गा ग्यलछन् का मानना है कि भावना के लिए यद्यपि ये ही पाँच वर्ण एवं मुद्रा उचित माने गये हैं और इसे ही अधिकांश भोट सम्प्रदायों का भी समर्थन प्राप्त है। विशेष रूप से जब कोई व्यक्ति ३५ तथागतों की भावना करना चाहे तो यही परम्परा उपयुक्त एवं चित्त में आसानी से स्थापित करने के लिए समीचीन मानी गई है। ऐसा चारों सम्प्रदायों के विद्वानों ने भी कहा है। लेकिन कायवर्ण के क्रम में कुछ भिन्नता दिखाई देती है। शेष बातें पहले कही जा चुकी हैं।

(४) भोट-भाषीय शब्दों एवं व्याकरण का प्रभाव

आचार्य जितारि की टीका के प्रारम्भ में जब त्रिरत्न का शरणगमन किया गया है, तब आचार्य ने 'बुद्ध की शरण में जाता हूँ' की व्याख्या करते समय भोट विद्वानों द्वारा व्याकरण के अनुसार अपनायी गई व्याख्या की भाँति व्याख्या की है—ऐसा प्रतीत होता है। जैसे—टीका में कहा गया है कि "यहाँ 'की' तो विषय की 'की' है जो अधिकरण में सप्तमी विभक्ति है"। इस प्रकार की व्याख्या अन्य भारतीय टीकाओं में अत्यन्त कम ही उपलब्ध है। वास्तव में संस्कृत-व्याकरण की दृष्टि से द्वितीया विभक्ति होनी चाहिए।

पुनश्च, चौदहवें तथागत ब्रह्मदत्त के सन्दर्भ में भी आचार्य जितारि की टीका में इस प्रकार उल्लिखित है, यथा—'वह अन्य द्वारा '**दत्त**' होने से '**ब्रह्मदत्त**' है। इसलिए (ब्रह्मन् और '**दत्त**' में) प्रथमा विभक्ति प्रयुक्त है या इस

प्रकार उनके द्वारा 'दत्त' होने से (तथागत) ब्रह्मदत्त है। इस तरह तृतीया विभक्ति का प्रयोग किया गया है। फलतः '**ब्रह्मदत्ताय**' ऐसा निष्पन्न हुआ'।

यहाँ प्रथमा विभक्ति एवं तृतीया विभक्ति का अन्तर करके जो व्याख्या की गई है, वह वास्तव में संस्कृत और भोट भाषा के व्याकरण की दृष्टि से अनुचित नहीं है, किन्तु ऐसी व्याख्या शूरदत्त में नहीं की गई है तथा नागार्जुन की टीका में भी इस प्रकार का उल्लेख नहीं है, जो विचारणीय है।

अपि च, आचार्य जितारि की टीका में जब दश अकुशल कर्मों की व्यवस्था की गई। उसमें कर्मों का विपाक भी प्रस्तुत किया गया है। वहाँ तीन कृतकर्म बताये गये हैं, यथा—"**कृत असंचित, अकृत संचित** तथा **कृत संचित**"। इस तरह ये तीन पापकर्म गिनाये गये हैं। इसमें पहले और तीसरे कर्म में कोई सन्देह नहीं है। ऐसी व्यवस्था मानी भी जाती है। किन्तु दूसरे अकृत संचित पापकर्म का अर्थ क्या है? इसमें सन्देह इसलिए पैदा होता है, क्योंकि जो पापकर्म किया नहीं गया है, वह संचित कैसे होता है और उसका विपाक भी कैसे होता है? यह तो इतर धर्म का विचार प्रतीत होता है। जैसे—**आचार्य चन्द्रकीर्ति** ने प्रसन्नपदा में इतर धर्मों का खण्डन करते समय कहा है, यथा—"**अकृतस्यैव कर्मणः फलोदयः स्यात्**" अर्थात् अकृत कर्म के फल का उदय (उत्पाद) होगा, ऐसा दोष दिया है। वही दोष यहाँ पर भी लागू होता है, अतः इस शब्द पर विचार करना चाहिए।

केवल इतना ही नहीं, अपितु ऐसी अनेक असन्तोषजनक व्याख्याएँ आचार्य नागार्जुन तथा आचार्य जितारि की त्रिस्कन्धसूत्र टीकाओं में दिखलाई पड़ती हैं—ऐसा भोट देश के प्रामाणिक विद्वान् लामा तारानाथ ने भी अपनी त्रिस्कन्धसूत्र टीका में स्पष्ट रूप से उल्लेख किया है।

और भी, इन दोनों आचार्यों की टीकाओं में जब तथागत के नाम का शब्दार्थ किया गया है, तब ऐसी अनेक अयुक्तियुक्त व्याख्याएं उपलब्ध होती हैं। जैसे—किसी तथागत के नाम के अन्तर्गत शब्दों को ही प्रधान बनाकर उसकी टीका की गई है, जैसे—इन्द्र शब्द के प्रयोग में वहाँ उसकी व्याख्या न कर पाँच इन्द्रियों की गणना मात्र कर दी गई है, ठीक वैसे ही जब ब्रह्म शब्द आता है, तब मात्र रूपधातु के प्रथम ध्यान भूमि में स्थित देवों को कह दिया गया है। 'धनश्री' सप्त आर्यधनों की गणनामात्र करने के अतिरिक्त कोई विशेष गुण का अलग से

प्रदर्शन नहीं किया गया है। अतः वास्तव में ये टीकाएं आचार्य नागार्जुन तथा आचार्य जितारि द्वारा विरचित हैं कि नहीं? ऐसा सन्देह उत्पन्न होता है।

(५) अनेक प्रामाणिक भोट विद्वानों द्वारा भारतीय आचार्यों की रचना होने में सन्देह

भोट देश के परम आदरणीय महापण्डित बुस्तोन रिनपोछे ने अपनी तनग्युर-कनग्युर ग्रन्थसूची में कहा है कि नागार्जुन द्वारा विरचित त्रिस्कन्धसूत्र टीका के दो भोट अनुवाद उपलब्ध होते हैं—"वही बुस्तोन ने पाद-टिप्पणी में यह भी उल्लेख किया है कि अन्यत्र इसके दूसरे अनुवादों में आचार्य नागबोधि का रचयिता के रूप में उल्लेख मिलता है। लेकिन बुस्तोन् रिनपोछे ने नागार्जुन विरचित उक्त टीका के बारे में अपना कोई अभिमत व्यक्त नहीं किया है। सम्भवतः उसे भारतीय टीका ही समझकर सन्देह ही नहीं किया होगा, जबकि वे एक सुप्रसिद्ध समीक्षक हैं।

तिब्बत के वरिष्ठ विद्वान् लामा तारानाथ ने आचार्य नागार्जुन एवं जितारि दोनों के नाम से प्रसिद्ध दोनों टीकाओं को वास्तव में इन दोनों आचार्यों की कृति होने पर सन्देह व्यक्त किया है। जैसे—लामा तारानाथ द्वारा रचित त्रिस्कन्धसूत्र टीका में कहा गया है—"इस (त्रिस्कन्धसूत्र आपत्तिदेशना) धर्मपर्याय पर सम्प्रति भोट में अनूदित तनग्युर ग्रन्थभण्डार में दो प्रकार की टीकाएं उपलब्ध होती हैं, यथा—(१) आचार्य जितारि विरचित टीका, जो छग् लोचावा द्वारा अनूदित है तथा (२) आचार्य नागार्जुन के नाम से विरचित है, जिसे भारतीय पण्डित शान्तरक्षित तथा लोचावा ञे देवघोष ने अनूदित किया है। फिर भी आचार्य का मानना है कि ये दोनों ग्रन्थ इन आचार्यों द्वारा विरचित प्रतीत नहीं होते हैं। वैसे भी इन दोनों टीकाओं के भारतीय टीका होने पर सन्देह उत्पन्न होता है। यों तो ग्रन्थ-रचना भली-भाँति की गई है, किन्तु उसमें त्रुटियाँ भी कुछ कम नहीं हैं। धर्मराज साक्य पण्डित का कहना है कि इस आपत्तिदेशना के ३५ बुद्धों में आयुध के रूप में कवच एवं खड्ग इत्यादि धारण करने आदि साधनोपाय की देशना बुद्ध ने नहीं की है। इस प्रकार साक्य पण्डित ने नागार्जुन नाम से आचार्य नागार्जुन द्वारा विरचित होने में सन्देह व्यक्त किया है। अतः ऐसा प्रतीत होता है कि साक्य पण्डित ने सम्भवतः खड्ग एवं कवच धारण करना आदि साधनोपाय के प्रति अपना विचार प्रकट किया गया है। फिर भी इनके विषय में कुछ समीक्षा की जा

सकती है। यदि यह त्रिस्कन्धसूत्र टीका आभ्यन्तर तन्त्र के अनुसार है तो प्रव्रजित बुद्ध के अस्त्र-शस्त्र धारण करनेवाले वैराग्याकार साधनोपाय सम्भवतः हो सकते हैं। यदि किसी सिद्ध पुरुष का अववाद है तो उसका सर्वथा निषेध नहीं किया जा सकता, क्योंकि अन्य ग्रन्थों में परस्पर विरोधी अनेक प्रामाणिक साधनोपाय दृष्टिगोचर होते हैं। यदि सूत्रपक्ष के मतानुसार ही व्याख्या की गई है तो इस प्रकार की (आयुध धारणा करनेवाली) परम्परा कदापि उचित नहीं है''।

इस प्रकार लामा तारानाथ ने गम्भीरतापूर्वक समीक्षा करके अपने विचार प्रस्तुत किये हैं। यहाँ लामा तारानाथ ने न केवल इन दोनों आचार्यों की कृति पर सन्देह व्यक्त किया है, अपितु इनके भारतीय टीका होने में भी सन्देह प्रकट किया है। आपने इन दोनों टीकाओं को सामान्यतया अच्छी टीका बताया, किन्तु दोनों टीकाओं में अनेक त्रुटियाँ भी बताई हैं। भोट विद्वान् साक्य पण्डित के विचारों पर टिप्पणी करते हुए लामा तारानाथ ने कुछ समीक्षा कर अपने विचार प्रकट किये हैं। तदनुसार यदि आभ्यन्तर मन्त्र के अनुसार टीका की गई है तो इस प्रकार के साधनोपाय का निषेध नहीं किया जा सकता, क्योंकि ऐसा अन्य तन्त्रग्रन्थों में देखने को मिलता है। सिद्ध पुरुष का अववाद होने पर भी अनुचित नहीं है। यदि सूत्रपक्ष के अनुसार टीका की गई है तो उस प्रकार का साधनोपाय कदापि उचित नहीं हैं। ऐसा उनका विचार प्रतीत होता है।

तिब्बत के वरिष्ठ विद्वान् **डुलछु धर्मभद्र** ने अपनी **त्रिस्कन्धसूत्र टीका** में कहा है—''कायवर्ण, आयुध एवं अपने-अपने बुद्धक्षेत्रों के नाम नागार्जुन नामक आचार्य द्वारा विरचित भारतीय टीका से उद्धृत किये गये हैं, जो मुझे सातवें दलाई लामा कलसङ् ग्याछो से प्रश्नोत्तर के रूप में प्राप्त हुए हैं।''

अतः यहाँ डुलछु ने भी नागार्जुन नामक आचार्य द्वारा कृत टीका पर जो सन्देह व्यक्त किया है, उससे परोक्ष में वह भी उक्त टीका को आचार्य नागार्जुन की टीका नहीं मानते हैं।

साक्य पण्डित कुङ्गा ग्यलछन ने भी पूर्व में उक्त अपने **त्रिसंवरप्रभेद** नामक ग्रन्थ में जो कहा है, उसी प्रकार अपने **त्रिस्कन्धसूत्रपाठोपाय** में भी उन्होंने कहा है, यथा—''भोट विद्वान् कृत त्रिस्कन्धसूत्र टीका, जिसमें कवच तथा खड्ग इत्यादि अनेक आयुध धारण करने का वर्णन है, वह प्रव्रजित निर्माणकाय के प्रति कदापि उचित नहीं है''।

यहाँ साक्य पण्डित वास्तव में यह कहना चाहते हैं कि जिस त्रिस्कन्धसूत्र टीका में पैंतीस तथागतों में कवच एवं खड्ग इत्यादि अनेक प्रकार के आयुध धारण का वर्णन किया गया है, वह कदापि आचार्य नागार्जुन की टीका नहीं हो सकती और वह किसी भोट विद्वान् द्वारा अवश्य ही नागार्जुन के नाम से रचित है—ऐसा परोक्षरूप में कहा है।

तिब्बत के वरिष्ठ विद्वान् जे गुङ् थङ् ने भी कहा है यथा—"यह टीका सातवें दलाई लामा के मतानुसार किसी भोट विद्वान् द्वारा रचित है, परन्तु उसमें आचार्य नागार्जुन का नाम लगा दिया गया है। यह भोटदेशीय टीका है—ऐसा जो उन्होंने कहा है, वह मुझे भी उचित लगता है"। अतः वास्तव में जे गुङ् थङ् भी आचार्य नागार्जुन कृत कोई त्रिस्कन्धसूत्र टीका नहीं मानते हैं। उसी प्रकार अन्य अनेक भोट विद्वान् आचार्य नागार्जुन कृत किसी त्रिस्कन्धसूत्र टीका के न होने का दावा करते हैं। लेकिन आचार्य नागार्जुन के द्वारा रचित टीका माननेवाले विद्वान् भी भोट देश में कम नहीं हैं। अनेक भोट विद्वानों ने इस ग्रन्थ से अनेक विषय उद्धृत किये हैं और वे उसे एक प्रामाणिक ग्रन्थ मानते हैं, क्योंकि उनका मानना है कि टीकाकार चाहे कोई भी हो, उससे उनका कोई लेना-देना नहीं है। दोनों आचार्य नागार्जुन एवं जितारि की टीकाएं चाहे वे भोटदेशीय हों, चाहे भारतीय हों, वास्तव में दोनों टीकाओं की व्याख्या अत्यन्त महत्त्वपूर्ण एवं लाभदायक है। इसीलिए वे अपनी-अपनी टीकाओं में बिना किसी संकोच के उक्त दोनों टीकाओं के उद्धरणों का समावेश कर लेते हैं।

अतः संक्षेप में मेरा भी यह विचार है कि त्रिस्कन्धसूत्र के दोनों टीकाकार भोट अथवा भारतीय कोई भी क्यों न हों, यह महत्त्वपूर्ण नहीं है, क्योंकि ऐसे अनेक ग्रन्थ उपलब्ध होते हैं, जिनके लेखक का नाम न होने पर भी वे प्रामाणिक माने जाते हैं तथा वे ग्रन्थ सत्त्वों के कल्याण के लिए उपयोगी एवं विद्वानों की समीक्षा के लिए स्वीकार्य होते हैं। अतः लेखक में सन्देह होने के कारण ग्रन्थ का अध्ययन न करना और उसकी उपेक्षा करना उचित नहीं है। अतः लेखक में भ्रम या सन्देह होने पर भी उनका अध्ययन अवश्य करना चाहिए। जैसे तथागत बुद्ध ने कहा है—"शब्द नहीं, अर्थ की प्रतिशरण ग्रहण करो, नेयार्थ नहीं, नीतार्थ की शरण ग्रहण करो, पुद्गल की नहीं, धर्म की शरण ग्रहण करो तथा विज्ञान नहीं, ज्ञान की शरण ग्रहण करो"[१]।

---

१. चत्वारीमानि भिक्षवः प्रतिसरणानि। कतमानि चत्वारि? धर्मः प्रतिसरणं न पुद्गलः, अर्थः प्रतिसरणं न व्यञ्जनम्, नीतार्थसूत्रं प्रतिसरणं न नेयार्थम्, ज्ञानं प्रतिसरणं न विज्ञानम्। द्र०-अभि० को० भा, (द्वितीयं कोशस्थानम्), पृ० २५७ (बौ० भा० सं०, १९८७)।

जिस प्रकार स्वयं बुद्ध ने भी यहाँ पुद्गल को माहात्म्य प्रदान नहीं किया है, उसी प्रकार लेखक को महत्त्व न देकर उसके ग्रन्थ के भावार्थ को महत्त्व देना चाहिए।

वैसे भी नागार्जुन परम्परा की त्रिस्कन्धसूत्र टीका में विद्यमान ३५ तथागतों का काग्युद सम्प्रदाय के वरिष्ठ विद्वान् जे० ठिनले कुन् ख्यब् ने साक्षात् दर्शन किया—ऐसा **डिगुङ् रिगजिन छोस् क्यि लोडोस्** ने अपनी त्रिस्कन्धसूत्र टीका में कहा है, यथा—

"जे ठिनले कुन् ख्यब् ३५ तथागतों को अपने इष्टदेव के रूप में मानते हैं और उनको ३५ तथागतों का साक्षात् दर्शन भी हुआ है। उन्होंने त्रिस्कन्धसूत्र टीका की एक संक्षिप्त ३९ श्लोकबद्ध स्तुति लिखी है। इस (आचार्य) से रिगजिन छोडक् ग्यछो ने तीन बार ३५ तथागतों का विधिवत् अभिषेक प्राप्त किया और इन रिगजिन छोडक् ग्याछो से डिगुङ् छोस् क्यि लोडोस् ने ३५ तथागतों का विधिवत् अभिषेक प्राप्त किया"।

डिगुङ् छोस् क्यि लोडोस् की टीका में आचार्य नागार्जुन की परम्परा के ३५ तथागतों के कायवर्ण एवं आयुध इत्यादि उनकी परम्परा के अनुसार ही प्रतिपादित किये गये हैं। अतः हो सकता है कि आचार्य नागार्जुन की परम्परा के ३५ तथागतों के कायवर्ण एवं आयुध का ही उनको दर्शन हुआ हो।

तिब्बत के महापण्डित साक्य कुङ्गा ग्यछन् का कथन है कि समस्त ३५ तथागत प्रव्रजित निर्माणकाय हैं, इसलिए उन ३५ बुद्धों के हाथों में कवच, खड्ग, ध्वज एवं मेरु पर्वत के धारण को न केवल अनुचित मानना चाहिए, अपितु सर्वथा गलत मानना चाहिए और उन्होंने इसकी पुष्टि के लिए भारत के महान् आचार्य उद्भट सिद्ध स्वामी के विशेषस्तव के वचन को प्रमाण के रूप में उद्धृत किया है। उस पर मैं पुनः अपने विचार प्रस्तुत करना चाहता हूँ। यदि साक्य पण्डित के अनुसार ३५ बुद्धों के आयुध के रूप में कवच एवं खड्ग इत्यादि को धारण करना सर्वथा अनुचित है तो तिब्बत के वरिष्ठ विद्वान् तथा गेलुग सम्प्रदाय के जे-चोंखापा को प्रारम्भ में पाप एवं कर्मावरण विशुद्धि के लिए साष्टाङ्ग प्रमाण करते हुए त्रिस्कन्धसूत्र का पाठ करते समय उनको ३५ बुद्धों के दर्शन का सौभाग्य तो प्राप्त हुआ, किन्तु दुर्भाग्य से उनको अधिकांश बुद्धों के मुखमण्डल का दर्शन नहीं हो सका। लेकिन बाद में जब उन्होंने समस्त तथागतों के नाम के

प्रारम्भ में आदरसूचक शब्द '**तथागत**' का प्रयोग करके भावना की तो समस्त तथागतों के मुखमण्डल, कायवर्ण, मुद्राएं एवं आयुध के साथ दर्शन हुआ। उस समय उन तथागतों में से कुछ तथागत अपने आयुध के रूप में ध्वज, खड्ग, कवच एवं मेरु पर्वत इत्यादि धारण किये हुए थे।

अतः कालान्तर में 'जे-चोंखापा' ने त्रिस्कन्धसूत्र के ३५ तथागतों के चित्र का निर्माण करते समय आचार्य नागार्जुन तथा साक्य पण्डित दोनों के विचारों का अनुसरण न करके अपने साक्षाद् दर्शन के अनुसार ही चित्रलेखन की आज्ञा प्रदान की। अतः आयुध इत्यादि धारण के सन्दर्भ में उसे अनुचित और असमीचीन कहना उचित प्रतीत नहीं होता। जैसे तथागत विनेयजनों को धर्मदेशना करते समय उनके आशय को देखते हुए देशना करते हैं, उसी प्रकार सम्भवतः किन्हीं-किन्हीं विनेयजनों को ३५ बुद्धों के दर्शन का सौभाग्य प्राप्त होते समय अनेक आयुध एवं मुद्रा के साथ दर्शन हुआ होगा। किन्हीं को कुछ मुद्राएं एवं आयुध और किन्हीं को मात्र पाँच तथागत कुल की मुद्राओं एवं कायवर्ण का दर्शन प्राप्त हुआ होगा। अतः सर्वथा अनुचित कहने में उस पर पुनः गम्भीरतया विचार करना चाहिए।

वैसे भी पाँच तथागत कुल में भी कुछ तथागतों ने आयुध धारण किये हैं—ऐसा देखने को मिलता है। जैसे उन पाँच तथागतों में से तथागत अमोघसिद्धि ने खड्ग धारण किया है। यथा—कालचक्र की टीका विमलप्रभा में कहा गया है—

"एवं वामं करतलम् उत्तानकं पर्यङ्कमूर्ध्नि, अपरं दक्षिणं करतलं दक्षिणजानूपरि अभयप्रदम्, खड्गपाणेरमोघसिद्धेरभयमुद्रेति।"

अर्थात् पर्यङ्कमुद्रा में बायां करतल मूर्धा की ओर ऊपर उठा हुआ, दाहिना हाथ अभयमुद्रा में दाहिने घुटने पर रखा हुआ, यह खड्गपाणि अमोघसिद्धि की अभयमुद्रा है। अतः तथागत अमोघसिद्धि के करतल में खड्ग धारण किया हुआ, स्पष्टतया उल्लिखित है, किन्तु जब पञ्चतथागतकुल की परम्परा का त्रिस्कन्धसूत्र में उक्त ३५ तथागतों के चित्र का निर्माण किया जाता है, उस समय इन (अमोघसिद्धि) के हाथ में खड्ग धारण किये हुए के रूप में चित्र नहीं बनाया जाता। इस वजह से उनके हाथ में आयुध न होने का दावा नहीं किया जा सकता। उसी प्रकार इसी विमलप्रभा ग्रन्थ में तथागत रत्नसम्भव के करतल (हाथ) में रत्न एवं तथागत अमिताभ के हाथ में पद्म धारण किया हुआ

है। उसके सन्दर्भ में विमलप्रभा में स्पष्टतया कहा गया है। अतः साक्य पण्डित के विचार के अनुसार ३५ तथागतों के कायवर्ण एवं मुद्राएं पञ्च तथागतकुल के अनुसार ही हैं। किन्तु उसमें आयुधों का चित्रांकन नहीं किया जाता।

आपत्तिदेशनाविधि के साथ साधना

आपत्तिदेशना-त्रिस्कन्धसूत्र के द्वारा आपत्तियों की देशना का पालन (संवर) करते समय अनेक संक्षिप्त एवं विस्तृत विधि दृष्टिगोचर होती हैं। यहाँ मैं (लेखक) पापदेशना विधि का उल्लेख न अत्यन्त विस्तार, न अत्यन्त संक्षेप रूप से प्रस्तुत करना चाहता हूँ। अर्थात् सरल एवं सुबोध पद्धति से इसके सन्दर्भ में कुछ लाभ होने की दृष्टि से प्रकाश डालना चाहता हूँ।

श्री सर्वगुह्यविधिगर्भालङ्कार[१] नामक ग्रन्थ में कहा गया है—"योगी (पापदेशक) रात्रि में न सोकर आकाश में तथागतगण का आलम्बन करते हुए त्रिस्कन्ध सूत्र के पाठ का यदि विधि-विधान के अनुसार आचरण करे तो अत्यन्त घोर अवद्य की भी (कम से कम) तीन मास में विशुद्धि हो जाएगी—ऐसा बुद्ध का वचन समझकर श्रद्धापूर्वक त्रिस्कन्धसूत्र का पाठ करते हुए आचरण करें"। अर्थात् शास्त्र के वचन अथवा अर्थ का अनुसरण करते हुए पापदेशक स्वयं दश दिशाओं में स्थित जिन तथागतगणों को आलम्बन (विषय) के रूप में स्थापित करके त्रिस्कन्धसूत्र आपत्तिदेशना के पाठ का विधि के क्रम के अनुसार आचरण करें तो अत्यन्त घोर एवं लघु अवद्य का चाहे जितना भी आचरण किया गया हो, उन सभी का तीन मास के अन्तर्गत विशोधन हो जाएगा—ऐसा महामुनि ने कहा है। इस वचन के अर्थ का चिन्तन करते हुए काय, वाक् एवं चित्त से श्रद्धापूर्वक विधि के अनुसार आचरण करने के लिए कहा गया है। हो सके तो उस विधि का गुरु-परम्परा के क्रम एवं उससे क्रमशः हस्तान्तरित अववाद अथवा उपदेश के अनुसार अनुष्ठान करना है। इस विधि क्रम के अनुसार अनुष्ठान किया जाना उत्तम माना जाता है।

मौल पापदेशना की विधि

मूल उपदेश के प्रारम्भ के लिए चार प्रमुख आधार हैं, यथा—(१) प्रारम्भ में शरणगमन-चित्तोत्पाद तथा सप्ताङ्ग पूजा के द्वारा पुण्यों का संचय, (२)

---

१. देगे संस्करण, सं० २४९०, शास्त्र, तन्त्र टीका वर्ग, 'शि', पृ० २३८ क ४।

त्रिस्कन्धसूत्र मूल का पाठ करके पाप एवं आवरणों का विशोधन, (३) विशुद्धि लक्षण की प्राप्ति तथा (४) अन्त में समापन का विधान।

१. शरणगमन-चित्तोत्पाद एवं सप्ताङ्ग पूजा के द्वारा पुण्यों का संचय

सर्वप्रथम पापदेशक (साधक) तथागत के चित्र अथवा मूर्ति के समक्ष दो प्रकार के जल, शत प्रकार के उपचार अथवा ३५ बुद्धों की संख्या के अनुसार ३५ उपचार अथवा सैंतीस उपचार। यदि ऐसा न हो सके तो यथासम्भव उपचार का संग्रह करें। यदि विस्तार से करना चाहें तो जैसे—अष्ट मंगलचिह्न, सप्त रत्नराज, छत्र, वितान, चीवर, पात्र, खक्खर, व्यजन, चामर आदि, पूजामण्डल, स्नान द्रव्य एवं वाद्य भी प्रस्तुत रहने पर पूजा की सम्पन्नता के रूप में फैलाएं। तत्पश्चात् साधक स्वयं स्नान करके नए वस्त्र धारण करें तथा इस (विधि) का पाठ प्रमुख रूप से ब्रह्मचर्यपूर्वक अनुष्ठान करें अथवा भिक्षु द्वारा विधान करना चाहिए। साधक मद्य, माँस, लहसुन एवं प्याज के सेवन का त्याग करता है। साधक को आलम्बन के विषय में इस प्रकार भावना करनी है कि अपने समक्ष आकाश में (तथागत) मुनीन्द्र मूल गुरु-परम्परा तथा अपरिमित बुद्ध-बोधिसत्त्वों पार्षदों से घिरे हुए विराजमान हैं। तदनन्तर शरणगमन एवं चार ब्रह्मविहार का पाठ तीन-तीन बार करना चाहिए। माता रूपी समस्त सत्त्वों के कल्याण हेतु अतिशीघ्र सम्यक्सम्बोधि का रत्न रूपी पद प्राप्त हो, इसके लिए ३५ तथागतों की पूजा करके, जिन तथागतों ने विशुद्ध मन से जो प्रतिज्ञा की है, उनसे याचना करते हुए आपत्तिदेशनाविधि में प्रविष्ट होना चाहिए। इस प्रकार का विशिष्ट चित्तोत्पाद का तीन बार पाठ करने के पश्चात् भूमि, सुभवन, सिंहासन और पूजाविधि के द्वारा अनुष्ठान करें। इसके लिए पूजामेघ-अनुष्ठान मन्त्र इस प्रकार है—"**नमो भगवते वज्रसारप्रमर्दिने तथागताय अर्हते सम्यक्-संबुद्धाय तद्यथा ओं वज्रे वज्रे महावज्रे महातेजोवज्रे महाविद्यावज्रे महाबोधिचित्तवज्रे महाबोधि-मण्डोपसंक्रमणवज्रे सर्वकर्मावरणविशोधनवज्रे स्वाहा**"। इस प्रकार के पूजामेघमन्त्र का तीन बार अथवा सात बार वाद्यसहित पाठ कर लेने पर अत्यन्त विशिष्ट अनुशंसा प्राप्त होती है—ऐसा सूत्रों में उल्लेख है।

आवाहन-विधि—आवाहन के लिए सर्वप्रथम मधुर सुगन्ध वाली धूप जलाएँ। एक स्कन्ध (कन्धे) पर चीवर रखकर दाहिने घुटने से भूमिस्पर्श कर सपुष्प अञ्जलि को हृदय (मन) से लगाकर अत्यन्त श्रद्धा के साथ अपने समक्ष

दश-दिशाओं में स्थित ३५ सुगतों (बुद्धों) का स्मरण करते हुए इस प्रकार उच्चारण करें, यथा—"हे महाकारुणिक, दश-दिशाओं में विराजमान भगवन्, आप लोग मेरी ओर ध्यान दें। महाकरुणा से युक्त आप ३५ भगवान् तथागतों ने पूर्वजन्मों में बोधिसत्त्वों की चर्या का आचरण करते समय जिस प्रकार प्रतिज्ञा की थी कि पाँच कषायों के काल में प्राणियों के कर्मावरण का विशोधन करेंगे, उस (प्रतिज्ञा) का अनुस्मरण करते हुए सम्प्रति हम अनाथ प्राणियों के संरक्षण हेतु नाथ, शरण तथा सहयोगी के रूप में आपका आवाहन करते हैं तथा महा-अनुकम्पा के द्वारा हमारी ओर दृष्टिपात करते हुए हम लोगों के दोष एवं आपत्तियों का विशोधन करके पुण्य क्षेत्र में पधारने हेतु कृपा करें"। तत्पश्चात् मगध प्रदेश की भद्राणी के अवदान[१] में उल्लिखित—"विशुद्ध शीलवान्, विशुद्ध प्रज्ञावान, श्रद्धासारवान्, महाश्रावक आप लोगों से मुझ अनाथ पर अनुग्रह हेतु महाकारुणा से यहाँ पधारने के लिए याचना करती हूँ।" तत्पश्चात् "समस्त (अशेष) प्राणियों के नाथ एवं समस्त मारों के नाशक, समस्त धर्मों के ज्ञाता आप लोग सब मेरा निवेदन स्वीकार करते हुए मेरे निकट आगमन करें"। — इस वचन (गाथा) का पाठ करें। अथवा रत्नकूट सूत्र के अन्तर्गत '**तथागत अचिन्त्यगुह्यनिर्देश महायानसूत्र**[२]' में जो कहा गया है—"हे महामुनि, इस काल में प्रधान पुरुष तथागत, आपके आगमन हेतु निवेदन करता हूँ और परम पुरुष के आगमन हेतु निवेदन करता हूँ। सर्वज्ञ पुरुष आपके आगमन हेतु निवेदन करता हूँ"। इसके अनुसार निवेदन करने पर ऋद्धि के द्वारा आगमन की भावना इस प्रकार करना है—स्वाभाविक रूप से भगवान् तथागत शाक्यमुनि, जिनका काय स्वर्ण की भाँति, वाम हस्त भूमिस्पर्श मुद्रा में एवं दक्षिण हस्त अमृत से भरे पात्र लिये हुए ध्यानमुद्रा में आ गये हैं तथा क्रमशः अन्य ३४ तथागत भी अपने-अपने क्षेत्र से अपनी-अपनी मुद्राएँ एवं आयुध सहित ऋद्धिबल से आ गये हैं—ऐसी भावना करें। इस प्रकार आवाहन करके उन्हें अपने समक्ष आकाश में विराजमान हैं, इस प्रकार उनका आलम्बन करने के पश्चात् सप्ताङ्ग पूजाविधि के द्वारा पुण्यों का सञ्चय करें।

(१) वन्दना अङ्ग—साक्षात् रूप से काय के द्वारा वन्दना करते समय प्रारम्भ में—"समस्त बुद्धों के संगृहीत काय, वज्रधर स्वरूप, त्रिरत्न के मूल

---

१. देगे संस्करण, सं० ३४६, सूत्र, सूत्र वर्ग, 'अं' पुद्, पृ० २९२ ख ४ ।
२. देगे संस्करण, सं० ४७, सूत्र, रत्न कूट वर्ग, 'क' पुद्, पृ० १७२ ख ५ ।

गुरुओं को नमस्कार''। इत्यादि वचनों द्वारा ''महानुकम्पी नाथ'' तक तीन श्लोकों का पाठ करके दश दिशाओं में स्थित बुद्धों, धर्मकाय एवं रूपकाय द्वारा संगृहीत पाँच सुगतकुल तथा भद्रकल्प के १००२ बुद्धों को सामान्य स्तुति द्वारा नमस्कार करना है। उसके बाद आचार्य मातृचेट द्वारा कृत ''**सुगत पञ्चत्रिंशत् रत्ननाममालास्तोत्र**'' में ३५ तथागतों के प्रत्येक नाम की जो स्तुति उल्लिखित है, उसका पाठ करना है। चित्त में उन ३५ तथागतों के नाम का श्रवण तथा धारणमात्र से कल्पों से सञ्चित पापों तथा पञ्च आनन्तर्य कर्मों का भी विशोधन होगा—इत्यादि गुणों का स्मरण करते हुए काय, वाक् एवं चित्त के द्वारा वन्दना करनी चाहिए। अथवा वाक् द्वारा पाठ करने के लिए पूर्वोक्त मातृचेट कृत ३५ बुद्धों की स्तुति उपलब्ध न होने पर तिब्बत के वरिष्ठ विद्वान् 'डिगुङ् छोस् क्यि लोडोस्' द्वारा विरचित त्रिस्कन्धसूत्रटीका की वन्दना-विधि में स्पष्टतया उल्लिखित ३५ तथागतों की श्लोकबद्ध स्तुति का पाठ करें, जो इनके काय-वर्ण, आयुध, क्षेत्र एवं अनुशंसा का वर्णन करता है।

(२) पूजा अङ्ग—इसके अन्तर्गत पूर्वोक्त पूजामेघ धारणी का एक बार पुनः पाठ कर लेने के पश्चात् **गण्डव्यूहसूत्र** के अन्तर्गत **समन्तभद्रचर्याप्रणिधान-राजसूत्र**[१] में उल्लिखित—

पुष्पवरेभि च माल्यवरेभि
वाद्यविलेपनछत्रवरेभिः ।
दीपवरेभि च धूपवरेभि
पूजन तेषु जिनान करोमि ।।

इस गाथा का पाठ करके पादप्रक्षालन करके पुष्प, धूप, दीप, सुगन्धित जल, नैवेद्य, वाद्य द्वारा पूजन करना चाहिए।

(३) पापदेशना—आचार्य शान्तिदेव द्वारा विरचित **बोधिचर्यावतार** के अन्तर्गत पापदेशना नामक तृतीय परिच्छेद, आर्यस्वर्णप्रभास के अन्तर्गत देशनापरिच्छेद और सामान्य परिदेशना नामक ग्रन्थों का पाठ करने से यह पापदेशना पूर्ण हो जाती है। यदि इनकी विधि को अत्यन्त संक्षेप में करने की इच्छा हो तो **आर्यसमन्तभद्रचर्याप्रणिधान**[२] में उल्लिखित—

---

१. द्र०-गण्डव्यूहसूत्र, समन्तभद्रचर्याप्रणिधान, ५६:५ का०, पृ० ४२९, मिथिला संस्करण, १९६० ।
२. द्र०-गण्डव्यूहसूत्र, स० भ० प्र०, ५६:८, ५ का०, पृ० ४२९, मिथिला संस्करण, १९६० ।

यच्च कृतं मयि पापु भवेय्य
रागतु द्वेषतु मोहवशेन ।
कायतु वाच मनेन तथैव
तं प्रतिदेशयमी अहु सर्वम् ।।

यहाँ से लेकर "**बोधयि नामयमी अहु सर्वम्**" पर्यन्त शेष अनुमोदना इत्यादि चार अङ्गों का पाठ करके समाप्त करें।

(२) त्रिस्कन्धसूत्र मूल-पाठ के अनन्तर पाप एवं आवरणों का विशोधन

जिन (तथागत) सपरिवार आलम्बन की स्पष्टरूप से भावना करते हुए—"मैंने अनादिकाल से अब तक जितने भी पाप एवं आपत्तियों का संचय किया है, उन सभी के प्रति अत्यन्त पश्चात्ताप उत्पन्न करता हूँ तथा भविष्य में मैं अपने प्राण देकर भी इस प्रकार के दुष्ट कार्य कदापि नहीं करूँगा"—ऐसा विचार करके मन में दृढ़ संवर पालन की इच्छा करते हुए काय से नमस्कार (वन्दना) करना, वाक् से त्रिस्कन्धसूत्र मूल का पाठ सात, इक्कीस, एक सौ आठ बार आवश्यकतानुसार करना चाहिए।

पाप एवं आपत्तियों की प्रतिदेशना के लिए चतुर्बल का सम्पूर्ण होना अनिवार्य है। अत: त्रिस्कन्धसूत्र में भी चतुर्बल परिपूर्ण हैं, यथा—प्रारम्भ में आश्रयबल तो "**बुद्धं शरणं गच्छामि**" से लेकर "**संघ शरणं गच्छामि**" तक है। द्वितीय प्रतिपक्षसमुदाचार बल "**नमः (भगवते) शाक्यमुनये तथागताय अर्हते सम्यक्सम्बुद्धाय**" से लेकर "**नमो रत्नपद्मसुप्रतिष्ठितशैलेन्द्रराजाय तथागताय अर्हते सम्यक्संबुद्धाय**" तक है। तृतीय विदूषणासमुदाचार बल "एवंप्रमुखा यावन्त:" से लेकर "**न प्रतिच्छादयामि**" तक है। चतुर्थ प्रत्यापत्तिबल "**आयत्यां संवरमापद्ये**" के द्वारा कहा गया है।

इस प्रकार चतुर्बल का पाठ वचनमात्र से सम्पन्न न करके हृदय से पूर्ण करना अत्यन्त आवश्यक एवं महत्त्वपूर्ण प्रतीत होता है।

और भी, "**ते मां समन्वाहरन्तु बुद्धा भगवन्त:**" से लेकर "**तथा अहमपि परिणामयामि**" तक के द्वारा षट् पारमिताओं द्वारा संगृहीत समस्त कुशलमूलों का अनुत्तर सम्यक्संबोधि की प्राप्ति के लिए परिणामना करना दिखाया गया है। तत्पश्चात् "**सर्वं पापं प्रतिदेशयामि**" से लेकर "**भवतु मे ज्ञानमनुत्तरम्**" पर्यन्त द्वारा पूर्वोक्त चतुर्बल तथा समस्त परिणामनाओं को देशना-स्कन्ध,

अनुमोदना-स्कन्ध और परिणामना-स्कन्ध इन तीन में संगृहीत करके प्रतिपादन किया गया है।

"**ये चाभ्यतीतास्तथापि च ये अनागताः**" इत्यादि एक गाथा द्वारा एक बार पुनः त्रिशरणगमन का स्मरण किया गया है, क्योंकि चित्तसन्तति में त्रिशरणगमन की दृढ़तापूर्वक स्थापना आवश्यक है। यहाँ '**बुद्धं शरणं गच्छामि**' के द्वारा साक्षात् रूप से बुद्धशरण को प्रतिष्ठापित करके धर्म एवं संघ की शरण को परोक्षरूप से प्रतिष्ठापित करने के लिए कहा गया है।

इस प्रकार त्रिस्कन्धसूत्र मूल का ७, २१ अथवा १०८ बार पाठ करने के पश्चात् इन मन्त्रों का उच्चारण करना चाहिए। तद्यथा—"**ओं मुने मुने महा-महामुनये स्वाहा**" (यह शाक्यमुनि का मन्त्र है)। "**नमः सर्वतथागतहृदयानुद्गते ओं कुरु गिनि स्वाहा**" यह सामान्य तथागत का सार मन्त्र है। तत्पश्चात् "**नमस्त्रैयध्विकानां तथागतानाम्, सर्वत्राप्रतिहतावाप्तिधर्मताबलीनाम्, असमसमसमन्ततोऽनन्तावाप्तिशासनि, हर हर स्मर स्मरण, विगतरागधर्मते, सर सर समबल, हस हस, त्रय त्रय, भगवन् महावरलक्षणे, ज्वल ज्वल सागरे स्वाहा**" यह तथागत-शताक्षर मन्त्र है। इसका जाप करने के पश्चात् स्वयं इस प्रकार भावना करनी चाहिए, कि उस समय परिवार सहित तथागत के कायों से अपरिमित रश्मिसमूह निकलकर स्वयं के शरीर में विलीन हो रही है। इससे स्वयं के समस्त पाप, आवरण, दोष एवं आपत्तियों का विशोधन होकर स्वयं पापों से विशुद्ध हो गया हूँ—ऐसी भावना करनी चाहिए।

विदूषणासमुदाचारबल के छह प्रभेद हैं, जिन्हें आचार्य शान्तिदेव ने शिक्षासमुच्चय में कहा है, उनका संग्रह करने पर वे इस प्रकार हैं, यथा—(१) गम्भीर सूत्रों से पापक्षय, (२) शून्यता की अधिमुक्ति से पापविशुद्धि, (३) मन्त्रजप से पापक्षय, (४) प्रतिबिम्ब (मूर्ति) के द्वारा पापक्षय, (५) पूजा के द्वारा पापक्षय तथा (६) नामश्रवण से पापक्षय।

(१) गम्भीर सूत्रों के आधार पर पापक्षय

प्रज्ञापारमितासूत्र एवं **समन्तभद्रचर्याप्रणिधान** आदि गम्भीर सूत्रों के शब्दों का उच्चारण करना, कण्ठस्थ करना, सूत्रों का स्पर्श करना, पाठ करना, लिखना

इत्यादि से पापक्षय होता है जैसे कि शिक्षासमुच्चय में कहा गया है—गम्भीर सूत्रों के आधार पर भी पापक्षय होता है, जैसे **वज्रच्छेदिका**[१] में कहा गया है—

यथा वज्रच्छेदिकायामुक्तम्—ये ते सुभूते कुलपुत्रा वा कुलदुहितरो वा इमानेवरूपान् सूत्रान्तानुद्ग्रहीष्यन्ति यावत्पर्यवाप्स्यन्ति, ते परिभूता भविष्यन्ति सुपरिभूताः। तत्कस्य हेतोः? यानि तेषां सत्त्वानां पौर्वजन्मिकानि कर्माणि कृतान्यपायसंवर्तनीयानि, तानि तया परिभूततया दृष्ट एव धर्मे क्षपयिष्यन्ति बुद्धबोधिं च प्राप्स्यन्तीति।

अर्थात् हे सुभूति, जो कुलपुत्र और कुलपुत्रियाँ इस प्रकार के सूत्रों का उद्ग्रहण करेंगे, प्राप्त करेंगे, वे परिभूत और सुपरिभूत हो जाएंगे। क्योंकि इसके द्वारा उन्होंने अपने अपाय को प्राप्त कराने वाले पूर्वजन्म के पापकर्मों का इसी जन्म में क्षय कर दिया है और वे बुद्धबोधि को भी प्राप्त करेंगे।

(२) शून्यता की अधिमुक्ति से पापविशुद्धि

परमाणुओं (की संख्या) की भाँति सभी धर्म निःस्वभाव हैं एवं सभी धर्म कल्पना द्वारा प्रज्ञप्तमात्र हैं—इस पर विश्वास करने से पाप एवं आवरणों का क्षय होता है। जैसे शिक्षासमुच्चय में कहा गया है कि शून्यता पर श्रद्धा करने से भी पाप का विशोधन होता है। **तथागतकोशसूत्र**[२] में कहा गया है—**यः काश्यप, पिता च स्यात्प्रत्येकबुद्धश्च, तं जीविताद् व्यपरोपयेदिदमग्रं प्राणातिपातानाम्। इदमग्रमदत्तादानानाम्, यदुत त्रिरत्नद्रव्यापहरणता। इदमग्रं काममिथ्याचाराणां यदुत माता स्यादर्हन्ती च। इदमग्रं मृषावादानां यदुत तथागतस्याभ्याख्यानम्। इदमग्रं पैशुन्यानां यदुतार्यसंघस्यावर्णः। इदमग्रं पारुष्याणां यदुतार्याणामवस्फण्डनम्। इदमग्रं संभिन्नप्रलापानां यदुत धर्मकामानां विक्षेपः। इदमग्रं व्यापादानां यदुतानन्तर्यपरिकर्षणम्। इदमग्रमभिध्यानां यदुत सम्यग्गतानां लाभहरणचित्तता। इदमग्रं मिथ्यादृष्टीनां यदुत गहनतादृष्टिः। इमे काश्यप, दशाकुशलाः कर्मपथा महासावद्याः। सचेत्काश्यप, एकसत्त्व एभिरेवंमहासावद्यैर्दशभिरकुशलैः कर्मपथैः समन्वागतो भवेत्, स च तथागतस्य हेतुप्रत्ययसंयुक्तां धर्मदेशनामवतरेत्—नात्र कश्चिदात्मा वा सत्त्वो वा जीवो वा**

---

१. (क) देगे संस्करण, सं० १६, सूत्र, प्रज्ञापारमिता वर्ग, 'क' पुट्, पृ० १२७ ख ४ ।
(ख) द्र०-शिक्षासमुच्चय में उद्धृत, पृ० ९५, मिथिला संस्करण, १९६० ।

२. तथागतकोशसूत्र, शिक्षासमुच्चय में उद्धृत, पृ० ९६, मिथिलासंस्करण-१९६० ।

पुद्गलो वा यः करोति प्रतिसंवेदयते, इति ह्यकृतामनभिसंस्कारां मायाधर्मतामसंक्लेशधर्मतां प्रकृतिप्रभास्वरतां सर्वधर्माणामवतरति, आदिशुद्धान् सर्वधर्मानभिश्रद्दधात्यधिमुच्यते, नाहं तस्य सत्त्वस्यापायगमनं वदामीति।

अर्थात् "हे काश्यप, जो पिता भी हैं और प्रत्येकबुद्ध भी हैं, उसका प्राणातिपात करना सबसे बड़ा (अग्र) प्राणातिपात है। इसी प्रकार त्रिरत्न के द्रव्य का अपहरण सबसे बड़ा अदत्तादान है। जो माता भी हो और अर्हती भी हो, उसके साथ काममिथ्याचार सबसे बड़ा काममिथ्याचार है। तथागत की निन्दा करना, अपवाद करना तो समस्त मृषावादों से सबसे बड़ा मृषावाद है। आर्यसंघ की चुगली करना सबसे बड़ा पैशुन्य है। आर्यों के चित्त को विदीर्ण करनेवाला कठोर वचन सबसे बड़ा परुषवचन है। धर्मकृत्य में विक्षेप पैदा करना सबसे बड़ा सभिन्नप्रलाप है। आनन्तर्य कर्म के सम्पादन की योजना करना सबसे बड़ा 'व्यापाद' है। सम्यक् मार्ग में प्रतिपन्न लोगों के द्रव्य के अपहरण का चिन्तन करना सबसे बड़ी अभिध्या है। कर्म-कर्मफल आदि की अपवादिका दृष्टि मिथ्यादृष्टियों में सबसे बड़ी मिथ्यादृष्टि है।

अपि च, काश्यप, ये दश अकुशल कर्मपथ महान् सावद्य हैं। यदि काश्यप, एक भी सत्त्व (प्राणी) इन अकुशल कर्मपथों से समन्वागत होता है, वह भी यदि तथागत की हेतु-प्रत्यय से युक्त धर्मदेशना में प्रवृत्त होकर ऐसा अवबोध करे कि यहाँ कोई आत्मा, सत्त्व, जीव, या पुद्गल, जो कर्ता एवं अनुभविता है, ऐसा लेशमात्र भी नहीं है—ऐसा विचार करके सभी धर्मों की कर्तृत्वरहितता अभिसंस्काररहितता, मायाधर्मता, असंक्लिष्ट स्वभावता एवं प्रकृतिप्रभास्वरता में प्रवृत्त होता है और सभी आदिशुद्ध हैं—ऐसा विश्वास करता है तो वे सभी सत्त्व अपायगमन करते हैं—ऐसा मैं नहीं कहता हूँ"।

(३) मन्त्रजप से पापक्षय

शताक्षरी आदि विशिष्ट मन्त्रों का यथाविधि जप करने से पापों का क्षय होता है, यथा—**त्रिसमयराजसूत्र**[१] में कहा गया है—**अक्षिणी निमील्य बुद्धबोधिसत्त्वालम्बनचित्तः शताक्षरमष्टसहस्त्रं जपेत्। निमीलिताक्ष एव बुद्धबोधिसत्त्वान्**

---

१. (क) देगे संस्करण, सं० ५०२, सूत्र, तन्त्र वर्ग, 'द' पुट् १८७ ख ५ ।
(ख) त्रिसमयराजसूत्र, शिक्षासमुच्चय में उद्धृत, पृ० ९६ ।

पश्यति, विगतपापो भवति। अथवा चैत्यं प्रदक्षिणीकुर्वन्नष्टसहस्रं जपेत्, चैत्यप्रतिमायाः सद्धर्मपुस्तकानां चैकतमं पुरस्कृत्यायमेव विधिरिति।

अर्थात् "नेत्र बन्द करके बुद्ध एवं बोधिसत्त्वों का आलम्बन करते हुए शताक्षरी मन्त्र का आठ हजार बार जप करने से नेत्र बन्द रहते हुए भी बुद्ध एवं बोधिसत्त्वों का दर्शन होगा और पापों से रहित हो जाएगा। इसके अतिरिक्त स्तूप की परिक्रमा करते हुए आठ हजार बार जप करें। किसी भी बुद्ध की प्रतिमा या सद्धर्म की पोथी को अपने समक्ष रखकर परिक्रमा करते हुए एक हजार बार जप करें तो पापों का विशोधन होगा, यही इसकी विधि है"।

(४) प्रतिबिम्ब (मूर्ति) के द्वारा पापक्षय

बुद्ध के प्रति श्रद्धा उत्पन्न कर साँचे से निर्मित स्तूप अथवा तथागत की मूर्ति का निर्माण अथवा मूर्ति की मरम्मत अथवा स्तूप की मरम्मत इत्यादि से भी पापों का क्षय होगा, यथा—**तथागतबिम्बपरिवर्त**[१] **(धारणी)** में कहा गया है—**योऽपि दशाकुशलकर्मपथसमन्वागतस्तथागते श्रद्धां प्रतिलभ्य तथागतबिम्बं कारयेत्, तस्यापि तत्पापं न प्रज्ञायते विशेषतो बोधिचित्तसमन्वागतस्य, विशेषतोऽभिनिष्क्रान्तगृहावासस्य शीलवतः। इति।**

"जो दश अकुशल कर्मपथ से युक्त है, यदि वह भी तथागत के प्रति श्रद्धा उत्पन्न करके तथागत के बिम्ब का निर्माण करता है, तो उसके पापों का विनाश हो जाता है।

विशेषतः जिसने बोधिचित्त का उत्पाद किया है और जो गृहत्यागी एवं शीलवान् है, उसके पापों का विशोधन होगा"।

(५) पूजा के द्वारा पापक्षय

तथागत बुद्ध के स्तूप अथवा मूर्ति आदि के समक्ष पुष्प इत्यादि अर्पित करने से पापों का विनाश होता है। यथा—**पुष्पकूटधारणी**[२] में कहा गया है—**यश्च खलु पुनः सिंहविक्रीडित तथागतं संमुखं वर्षं वा वर्षसहस्रं वा वर्षशतसहस्रं वा सर्वसुखोपधानैरुपतिष्ठेत, यश्च परिनिर्वृतस्य तथागतस्य चैत्ये बोधिचित्तसंगृहीतं एकपुष्पमारोपयेत्, तथागतपूजायै जलाञ्जलिं चोपनामयेत्,**

---

१. द्र०-तथागतबिम्बपरिवर्त (धारणी), शिक्षासमुच्चय में उद्धृत, पृ० ९६ ।

२. (क) देगे संस्करण, सं० ५१६, सूत्र, तन्त्र वर्ग, 'न', पृ० ३२ ख १ ।
(ख) द्र०-पुष्पकूटधारणी, शिक्षासमुच्चय में उद्धृत, पृ० ९६-९७ ।

जलेन वा सिञ्चयेत्, इषिकापदं वा दद्यात्, निर्माल्यं चापनयेत्, उपलेपनप्रदानं वा पुष्पप्रदानं वा दीपप्रदानं वा कुर्यादात्तमनाः, एकक्रमव्यतिहारं वातिक्रम्य वाचं भाषते नमस्तस्मै बुद्धाय भगवत इतिमात्रे अत्र सिंहविक्रीडित काङ्क्षा वा विमतिर्वा विचिकित्सा वा यदसौ कल्पं वा कल्पशतं वा कल्पसहस्रं वा दुर्गतिविनिपातं गच्छेत्, नेदं स्थानं विद्यत इति

अर्थात् ''सिंहविक्रीडित, जो तथागत अर्हत् सम्यक्संबुद्ध का एक वर्ष अथवा हजार वर्ष अथवा एक लाख वर्ष तक समस्त सुख के उपकरणों से सेवन करता है, अथवा बोधिचित्त के द्वारा सम्यक् रूप से गृहीत एक पुष्प को परिनिर्वृत तथागत के चैत्य पर अर्पित करता है, अथवा एक अंजलि जल अर्पित करता है, अथवा लकड़ी का आसन (चौकी) अर्पित करता है, अथवा निर्माल्य (चढ़े हुए पुष्प आदि) को हटाता है, अथवा उपलेपन, पुष्प, दीप एवं धूप प्रदान करता है तथा हर्षित मन से चलते हुए इस प्रकार कहता है—'उस भगवान् बुद्ध को नमस्कार'—ऐसा करने पर, हे सिंहविक्रीडित, ऐसे व्यक्ति के लिए कल्पपर्यन्त, शत कल्पपर्यन्त अथवा सहस्र कल्पपर्यन्त दुर्गति में पतित होने का कोई अवसर (स्थान) नहीं है। इसमें किसी प्रकार का संशय, विमति अथवा विचिकित्सा नहीं करनी चाहिए। इसके अतिरिक्त भैषज्यगुरुवैडूर्यप्रभराजसूत्र में भी इस सन्दर्भ में अनेक स्थलों पर उल्लेख प्राप्त होता है।

(६) नामश्रवण से पापक्षय

बुद्ध एवं महाबोधिसत्त्वों का नामश्रवण, नामोच्चारण एवं नामग्रहण से भी पापों की विशुद्धि होती है। जैसे **भैषज्यगुरुवैडूर्यप्रभराजसूत्र**[१] में कहा गया है—

भगवान् ने कहा—हे आनन्द, जिसके कान में तथागत का नाम प्रविष्ट होगा, उसके अपाय एवं दुर्गति में पतन होने का अवसर कदापि नहीं है।

पाप एवं आपत्ति की विशुद्धि का लक्षण

चुन्दा धारणी में कहा गया है—**तावज्जपेद्यावत्पापक्षयनिमित्तानि पश्यति स्वप्ने। तद्यथा क्रन्दनादिछर्दनदधिक्षीरादिभोजनात्तु विगतपापो भवति। वमनाद्वा चन्द्रसूर्यदर्शनादाकाशगमनाज्ज्वलितानलमहिषकृष्णपुरुषपराजयाद्।**

---

१. भगवानाह—अस्थानमानन्द, अनवकाशो येषां तस्य नामधेयं निपतेत् कर्णे, तेषां दुर्गत्यपायगमनं भवेदिति। द्र०-भैषज्यगुरुवैदूर्यराजसूत्र, शिक्षासमुच्चय में उद्धृत, पृ० ९७ ।

अर्थात् तब तक चुन्दा धारणी का जप करते रहना चाहिए जब तक पापक्षय के निमित्त (लक्षण) प्रकट न हों। जैसे—स्वप्न में भोजन का वमन होना, दही एवं दूध इत्यादि का सेवन एवं वमन होना, सूर्य एवं चन्द्र का दर्शन, आकाश में उड़ना, अग्नि में प्रवेश, भैंस और कृष्ण पुरुष से विजयी होना, भिक्षु एवं भिक्षुणी संघ का दर्शन होना, क्षीरवृक्ष (जिस वृक्ष से दूध निकलता है), पर्वत, सिंहासन, महल और नौका में आरोहण एवं धर्मश्रवण—ये सब यदि स्वप्न में दिखाई दें, तो उन्हें पापक्षय के निमित्त समझना चाहिए[१]।

स्वप्न में ३५ बुद्धों का दर्शन, महानदी पार करना, नदी में सेतु बनाना, सेतु द्वारा पार करना, स्नान करना, निर्वस्त्र शरीर पर वर्षा होना, रत्न, अलंकार को धारण करना, भिन्न-भिन्न बुद्धक्षेत्रों में गमन करने वाले बुद्धों का दर्शन करना, नए वस्त्र धारण करना, उत्तम विहारों में प्रवेश कर त्रिरत्न को नमस्कार एवं पूजा करना, गुरु के द्वारा आशीर्वाद प्राप्त करना, श्वेत, पीत एवं नील पुष्प ग्रहण करना, अन्य के द्वारा स्वयं का सत्कार किया जाना, हिमगिरि पर आरोहण, अनेक धर्मों का श्रवण करना और उनका अर्थ धारण करना, धर्मदेशना एवं अनेक शास्त्रों का दर्शन करके उनका आदर करना, पुस्तक प्राप्त करना या देना, ढोल बजना, शंख बजना, महागिरि से ध्वनि का निश्चारण होना और समस्त धर्मों का दर्पण में दर्शन की भाँति अवबोध होना—इत्यादि का स्वप्न देखना भी पापविशुद्धि के लक्षण हैं।

तिब्बत के महासाधक **नामखा ग्यलछन्** ने अपनी **त्रिस्कन्धसूत्रटीका**[२] में भी कहा है कि स्वप्न में शरीर से रक्त निकलना, भालू, बिच्छू, मेंढक, बैंगची (मेंढक शिशु) आदि का शरीर से निकलना, कृष्ण पुरुष के प्राणहनन का स्वप्न दिखाई देना इत्यादि रोग से मुक्त होने के निमित्त हैं।

परहित के लक्षणों के बारे में उनका कहना है कि स्वयं के मुख अथवा नाक से रक्त निकलकर गोलाकार होना, अनेक जानवरों को पहाड़ के ऊपर खदेड़ना, अनेक सत्त्वों को भय एवं नदी से बचाना, नाव एवं सेतु का

---

१. तद्यथा क्रन्दनादिच्छर्दनदधिक्षीरादिभोजनात्तु विगतपापो भवति। वमनाद् वा चन्द्रसूर्यदर्शनाद् आकाशगमनाज्ज्वलितानलमहिषकृष्णपुरुषपराजयाद् भिक्षुभिक्षुणीसंघदर्शनात् क्षीरवृक्षगिरि-सिंहासनप्रासादनावारोहणधर्मश्रवणाच्च पापक्षयः संलक्षयितव्यः।

द्र०-चुन्दा धारणी, शिक्षासमुच्चय में उद्धृत, पृ० ९६ ।

२. तिब्बती ग्रन्थालय, धर्मशाला, ग्रन्थ सं० ४०६४, 'प' पुट्, पृ० ७८४ ।

निर्माण—इत्यादि स्वप्न दिखाई दें तो ये परहित के लक्षण हैं—ऐसा समझना चाहिए।

चतुर्थ समापन का विधान

इस समापन के विधान में भी ६ प्रकार के अनुभाग हैं, यथा—१. मन्त्र एवं धारणी का उच्चारण, २. दक्षिणा विधान, ३. कुशलमूलों की परिणामना, ४. विधिपूर्वक पूजन, ५. पुनः आवाहन एवं ६. मंगलकामना। इस सन्दर्भ में विस्तार से महासिद्ध नमखा ग्यलछन, थुहुकेन छोस क्यि ञिमा तथा डिगुङ तेनजिन छोस् क्यि लोडो द्वारा विरचित त्रिस्कन्धसूत्रटीका द्रष्टव्य है।

त्रिस्कन्धसूत्र तथा भारतीय पण्डितों द्वारा विरचित टीकाओं की सूची

(१) (आपत्तिदेशना) **त्रिस्कन्धसूत्र विनयविनिश्चय उपालिपरिपृच्छामहायान-सूत्र**-तु० कु० सं० ६८।

(२) **आर्य त्रिस्कन्धनाममहायानसूत्र**-तु० कु० सं० २४८।

(३) **आचार्य नागार्जुन** कृत-बोध्यापत्तिदेशनावृत्ति-तु० कु० सं० ४००५।

(४) **आचार्य जितारि**-कृत बोध्यापत्तिदेशनावृत्ति बोधिसत्त्वशिक्षाक्रम नामक-तु० कु० सं० ४००६

(५) **आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान**-कृत कर्मावरणविशोधनविधिभाष्य-तु० कु० सं० ४००७।

(६) **आचार्य कृष्णपाद**-कृत त्रिस्कन्धसाधना-तु० कु० सं० ४००८।

त्रिस्कन्धसूत्र के समान सूत्रग्रन्थों की सूची

(१) **आचार्य देवशान्ति**-कृत आपत्तिदेशनाविधि-तु० कु० सं० ३९७३।

(२) **आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान**-कृत आपत्तिदेशनाविधि-३९७४।

(३) **आचार्य मातृचेट** के द्वारा कृत पञ्चत्रिंशत् सुगतरत्नमाला स्तोत्र-११४२।

भोट विद्वानों द्वारा रचित त्रिस्कन्धसूत्रटीकाएं

(१) **साक्य लोतेरवङ्पो** कृत—बोधिसत्त्वापत्तिदेशना संक्षेपविधि भद्रगङ्गा-अधिष्ठान।

(२) **ल्होडक् नमखा ग्यलछेन्**-कृत त्रिस्कन्धसाधना वर्षा-अधिष्ठान।

(३) **लामा तारानाथ**-कृत आपत्तिदेशनाटीका।

(४) **आचार्य ग्यल्-छब्-जे** कृत आपत्तिदेशना संक्षेपटीका अथवा ३५ बुद्धों की नाम-अनुशंसा।

(५) आठवें पणछेन लामा **लोसङ् पल्-देन तेनपई ञिमा**-कृत बोध्यापत्ति-देशना अर्थटीका पापान्धकारनिवारिका।

(६) **अक्य लोसङ् जमयङ् ग्यछो**-कृत आपत्तिदेशनाविधि।

(७) **खर् गे लोडोस् ग्यछो**-कृत आपत्तिदेशनाभाष्य

(८) **चोने डक्पा शेडुप्**-कृत आपत्तिदेशनाविधि सटीक।

(९) **चङ् लुङ् पण्डित डवङ् लोसंग तनपेई ग्यलछेन**-कृत त्रिस्कन्धसूत्र कुसुमरसग्राहक पाठोपाय, ३५ बुद्धों की साधना, ३५ बुद्धों की नाम-पाठानुशंसा और ३५ बुद्धों की साधनाविधि आपत्त्यन्धकारविनाशक।

(१०) **चोसेर् ठि लोसङ् ग्यलछेन् सिंह** कृत ३५ बुद्धों पर आश्रित पाप-आपत्ति-देशनाविधि सूर्याभास।

(११) **छोस् जद् लामा तेनपा रब् ग्ये डोनमा**-कृत आपत्तिदेशनाविधि।

(१२) **शब् डुङ् छोस् जे डवङ् छेरिङ्** कृत आपत्तिदेशना के द्वारा मृत्युवञ्चन-प्रक्रिया।

(१३) **खेडुप् सङ्गे येशे** कृत बोधिसत्त्वापत्तिदेशना भाष्य सार्थकदृष्टि।

(१४) **डवङ् येशे थुपतन रब् जम्** कृत ३५ तथागत देवों की स्तुति तथा पाप-आपत्तिमलप्रक्षालनभद्र-अमृतधारा।

(१५) **लोसङ् पल्देन** अथवा **लोसङ् छुलठिम साङ्पो** कृत त्रिसन्कधसूत्रभाष्य पापान्धकारापहारक चन्द्रप्रभा।

(१६) **साक्य पण्डित**-कृत त्रिस्कन्धसूत्रपाठोपाय।

(१७) मंगोल तायङ् **जमयङ् गेस्पई शेषञेन** अथवा **लोसङ् ताडिन्** कृत बोध्यापत्तिदेशनापाठोपाय सुपाठ्यगर्भपूर्णाविच्छिन्नधाराप्रदीप।

(१८) **थुहुकेन् छोस्-क्यि ञिमा** कृत ३५ भगवान् तथागतों पर आश्रित आपत्तिदेशनाविधि परहितसूर्यप्रभा।

(१९) **डुल छु धर्मभद्र** कृत ३५ तथागत स्तोत्र प्रकरण गङ्गाजलधारा।

(२०) **यङ् छेन डुपेई दोर्जे** कृत आपत्तिदेशना तथा सामान्य देशना दोनों की टिप्पणी।

(२१) **मेद् दोङ् छम्पा रिनपोछे कर्मा डेदोन ठिनले** कृत बोध्यापत्तिदेशना की अर्थसम्बद्ध-टिप्पणी 'अमृतजलधारा'।

(२२) **डग् कर लोसंग पलदेन** कृत बोध्यापत्तिदेशना के प्रयोग हेतु पापापत्त्यन्धकारापहारक।

(२३) **जे गुङ् थङ् पा तेनपई डोनमे** कृत ३५ बुद्धों की साधनोपायविधि आपत्त्यन्धकारनिवारिका तथा दानपरिशोधनविधि आवरणान्धकारापहारक।

(२४) **उर्ग केदोर खेनपो ङ्वङ लोसङ खेडुब** कृत ३५ बुद्धों के कायवर्ण, आयुध तथा नाम (स्मरण) अनुशंसा की स्पष्ट अध्येषणा।

(२५) **शासनध्वज** कृत ३५ तथागतों की मनोकामनापूरक अध्येषणा अभिप्रायिकी-टीका मोक्षाभिलाषीप्रवेश-द्वार।

(२६) मंगोल गेशे **नङ् जेद् दोर्जे** कृत आपत्तिदेशना की विधि, आपत्तिदेशनासंक्षिप्तविधि, आपत्तिदेशनासंक्षिप्तटीका।

(२७) **थोयोन् जमयङ् ठिनले** कृत ३५ बुद्धों की साधनोपायिका।

(२८) **देपा जमयङ् थुपतेन ञिमा** कृत ३५ तथागतों की नामानुशंसा तथा कायवर्ण।

(२९) **खेन्पो ङ्वङ् थुपतेन ग्यछो** कृत आपत्तिदेशना की वन्दना एवं पूजा।

(३०) **आरोल् लोसङ् लुङ् रिग्** कृत त्रिस्कन्ध पर आश्रित पापापत्तिपरिशोधन-विधि-दोषापत्तिविशोधक अमृतजलधारा तथा आपत्तिदेशना-पाठ के अन्त में किया जानेवाला प्रणिधान।

(३१) **कोङ्पो येशे चुङ्डुस्** कृत आपत्तिदेशनाटीका।

(३२) **कोङ् टुल योनतेन ग्यछो** कृत आर्यगगनगर्भजप एवं आगम साधनोपाय तथा आपत्तिदेशना-विधि सहित आर्यमार्गरथी।

(३३) **सेर् जे ल्होपा डगदेन** कृत त्रिस्कन्धसूत्रविधि अमृतसार।

(३४) आचार्य **चोंखापा** के निर्देशानुसार भदन्त सङ् क्योङ् द्वारा रचित ३५ बुद्धों के कायवर्ण एवं आयुध तथा ३५ देवों (तथागतों) के कायमापसुदृष्टि-रूपदर्पण।

(३५) डिगुङ्पा शाक्य भिक्षु **तेनजिन छोस् क्यि लोडोस्** कृत अतिसंक्षिप्त बोध्यापत्तिदेशनाविधि कर्मावरणविशोधन।

(३६) महाविद्वान् एवं साधक कर्मा। **छक् मेद्** कृत आपत्तिदेशनाटीका।

(३७) **बोधिसत्त्व** अथवा **येशे दे** कृत आपत्तिदेशनाटीका।

(३८) **तेनपा ग्यलछेन्** कृत ३५ बुद्धों पर आश्रित सहस्र पूजा-अर्चना-विधि पापान्धकारापत्तिनिवारिका।

(३९) प्रथम पणछेन् लामा **छोस्क्यि ग्यलछेन्** कृत पापान्धकारनिवारिका चन्द्रप्रकाश तथा चतुर्बलप्रतिदेशना तथा संवर का पालन।

(४०) दो डुप् छेन् तृतीय **जिगमेद् तेनपई ञिमा** कृत त्रिस्कन्धसूत्रवर्गसंग्रह तथा त्रिस्कन्धविधि।

तिब्बत के विद्वानों द्वारा त्रिस्कन्धसूत्र पर विरचित टीकाओं का अन्वेषण करने पर अब तक इतने ग्रन्थों की सूचनाएं उपलब्ध हुई हैं, इससे अधिक ग्रन्थ हो सकते हैं। प्राप्त होने पर अगले संस्करण में उनका उल्लेख किया जाएगा।

टीकाकार का जीवन-वृत्तान्त

त्रिस्कन्धसूत्र के तीन भारतीय आचार्य टीकाकार हैं, यथा—(१) आचार्य नागार्जुन, (२) आचार्य जितारि तथा (३) आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान।

१. आचार्य नागार्जुन की टीका

सामान्य तौर पर **बोध्यापत्तिदेशनावृत्ति** नामक यह ग्रन्थ आचार्य नागार्जुन द्वारा विरचित माना जाता है, परन्तु तिब्बत के महाविद्वान् बुदोन् रिनपोछे के द्वारा विरचित कन्ग्युर एवं तनग्युर सूची[१] में इस ग्रन्थ के नाम पर एक लघु टिप्पणी दी गई है, जिसमें कहा गया है कि इस ग्रन्थ के एक अन्य अनूदित संस्करण में इस ग्रन्थ के लेखक आचार्य नागार्जुन के स्थान पर उनके परमशिष्य नागबोधि के नाम का उल्लेख उपलब्ध होता है। अतः नागार्जुन अथवा नागबोधि इनमें से किस टीकाकार के जीवनवृत्तान्त का निरूपण करना है—यह एक समस्या मेरे सम्मुख उपस्थित है। अतः मुझे दोनों का संक्षिप्त जीवनवृत्तान्त देना समुचित प्रतीत होता है। वैसे इस त्रिस्कन्धसूत्रटीका का एक अन्य अनुवाद-ग्रन्थ, जो नागबोधि के नाम से वर्णित है, वह इस समय उपलब्ध नहीं है। यदि उपलब्ध होता तो अत्यन्त लाभदायक होता। विशेषरूप से पुनरुद्धार एवं दोनों टीकाओं में परस्पर अन्तर स्पष्ट करने में सहायता मिलती। मैंने अन्य नागबोधि के नाम से प्रसिद्ध टीका को प्राप्त करने हेतु अथक प्रयास किया, किन्तु अब तक प्राप्त नहीं कर सका। भविष्य में इस ग्रन्थ की प्राप्ति के लिए निरन्तर प्रयास करते रहना आवश्यक समझता हूँ।

तिब्बत के वरिष्ठ विद्वान् जिसमें सक्या पण्डित, सातवें दलाई लामा कलसङ् ग्यछो एवं जे गुङ्थन् रिनपोछे इत्यादि ने यहाँ तक कहा है कि नागार्जुन के नाम से विरचित इस त्रिस्कन्धसूत्रटीका को किसी भोट विद्वान् ने लिखा है और उस पर लेखक का नाम नागार्जुन लिख दिया है। लामा तारानाथ ने कहा है कि यह टीका आचार्य नागार्जुन द्वारा विरचित प्रतीत नहीं होती और भारतीय टीका होने में भी सन्देह उत्पन्न होता है।

(१) आचार्य नागार्जुन का जीवन-वृत्तान्त

आचार्य नागार्जुन बौद्ध दर्शन के प्रख्यात विद्वान् ही नहीं, अपितु महायान दर्शन के प्रवर्तक भी हैं। वे समस्त सूत्र, तन्त्र, शास्त्र, कला एवं चिकित्सा इत्यादि अनेक विद्याओं के पारङ्गत विद्वान् थे। अतः उनके अनेक प्रकार के जीवनवृत्तान्त उपलब्ध होते हैं। वे भी न केवल भोट भाषा में, अपितु हिन्दी, अंग्रेजी, जापानी, चाइनीज़, फ्रेञ्च आदि अनेक विभिन्न भाषाओं में भी विस्तारपूर्वक प्राप्त होते हैं।

---

१. बौद्ध धर्म का इतिहास, बुतोन निरछेनडुब, पृ० २३६, तिब्बत के टुङ्गो नामक प्रकाशन से प्रकाशित ।

इन भाषाओं में से किसी किसी में तीन नागार्जुन होने का उल्लेख प्राप्त होता है, जिसमें माध्यमिक दर्शन के प्रवर्तक नागार्जुन, तान्त्रिक नागार्जुन एवं चिकित्सा विद्या के उन्तायक नागार्जुन इस तरह तीन नागार्जुन उपलब्ध होते हैं। वास्तव में मैं यह समझता हूँ कि भगवान् बुद्ध के आगम को प्रमाण मानते हुए एक ही नागार्जुन हुए हैं, जो सूत्र, तन्त्र, शास्त्र, कला एवं चिकित्सा के निष्णात साधक हैं। वे छह सौ वर्ष तक जीवित भी रहे हैं। साधक की आयु की कोई सीमा नहीं हुआ करती और हमारे जैसे साधारण पुद्गल के द्वारा किसी विशिष्ट साधक की आयु एवं विभिन्न विद्याओं में उनकी पारंगतता में सन्देह करना उचित प्रतीत नहीं होता। क्योंकि आजकल भी ऐसे अनेक विद्वान् उपलब्ध होते हैं, जो इन सभी विषयों में पारंगत होते हैं। साधारण व्यक्ति भी आजकल विभिन्न देशों में सौ वर्षों से अधिक जीवित रहते हुए देखे जाते हैं। अतः मैं यह मानता हूँ कि आचार्य नागार्जुन एक विद्वान् ही नहीं थे, अपितु उत्तम कोटि के साधक भी थे तथा इसमें कोई संदेह नहीं है कि वे छः सौ वर्षों तक जीवित रहे। एतद् हेतु स्वयं बुद्धवचन प्रमाण हैं। यथा **लंकावतार**[१] एवं **मञ्जुश्रीमूलकल्प** में कहा गया है—

निवृत्ते सुगते पश्चात्कालोऽतीतो भविष्यति ।
महामते, निबोध त्वं यो नेत्रीं धारयिष्यति ।।

दक्षिणापथवेदल्यां भिक्षुः श्रीमान् महायशाः ।
नागाह्वयः स नाम्ना तु सदसत्पक्षदारकः ।।

प्रकाश्य लोके मद्यानं महायानमनुत्तरम् ।
आसाद्य भूमिं मुदितां यास्यतेऽसौ सुखावतीम् ।।

मञ्जुश्रीमूलकल्पतन्त्रे[२]ऽपि भगवता उक्तम्—

नागाह्वयो नाम सौ भिक्षु शासनेऽस्मिं हिते रतः।
मुदितां भूमिलब्धस्तु जीवेद् वर्षशतानि षट् ।।

मायूरी नामतो विद्या सिद्धा तस्य महात्मनः ।
नानाशास्त्रार्थ-धात्वर्थनिःस्वभावार्थतत्त्ववित् ।।

---

१. लंकावतारसूत्र, १०/१६४-६६, पृ० ११८, मिथिला संस्करण, १९६४ ।
२. मञ्जुश्रीमूलकल्पतन्त्रम्, म० सू० सं०, भाग-२, परिवर्त ५३, ४४९-४५१, पृ० ४८२, मिथिला संस्करण, १९६४ ।

सुखावत्यां चोपपद्येत यदासौ त्यक्तकलेवरः ।
सोऽनुपूर्वेण बुद्धत्वं नियतं संप्रपत्स्यते ।।

जैसा मैंने बताया कि उनका जीवनवृत्तान्त अनेक भाषाओं में प्राप्त होता है, इस कारण मैं उनकी जीवनी प्रस्तुत करना नहीं चाहता। यदि कोई विस्तारपूर्वक उनकी जीवनी जानना चाहे तो इसके लिए उसे केन्द्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा संस्थान, सारनाथ से १९९३ में प्रकाशित **प्रो० नवाङ् समतेन** द्वारा विरचित **'रत्नावली'**[१] नामक तिब्बती ग्रन्थ की भूमिका का अवलोकन करना चाहिए। इसके अतिरिक्त मेरे परम मित्र **डॉ० पेमा तेनजिन** द्वारा विरचित **सुहल्लेख**[२] की भूमिका का भी अवलोकन करें।

आचार्य नागार्जुन की लगभग १२५ कृतियाँ हैं, जिनका विस्तृत विवरण आचार्य नवाङ् समतेन द्वारा सम्पादित रत्नावली के परिशिष्ट में उपलब्ध है। अतः हम यहाँ वर्णन नहीं कर रहे हैं।

यदि आचार्य नागार्जुन के नाम से प्रसिद्ध त्रिस्कन्धसूत्रटीका अन्य भोट अनुवाद में आचार्य नागबोधि की रचना के रूप में उल्लिखित है तो इस मान्यता के अनुसार मैं उनकी भी संक्षिप्त जीवनी को पाठकों की जिज्ञासा हेतु यहाँ प्रस्तुत कर रहा हूँ।

आचार्य नागबोधि का जीवनवृत्तान्त

आचार्य नागबोधि आचार्य नागार्जुन के परम शिष्यों में से एक थे। ये बौद्ध एवं बौद्धेतर सिद्धान्तों के प्रकाण्ड पण्डित थे। इन्हें अपने इष्टदेव का साक्षात् दर्शन हुआ था तथा इन्हें आयुःसिद्धि भी प्राप्त थी। विशेषतः ये तान्त्रिक अनुष्ठान के महान् साधक थे। कहा जाता है कि वर्तमान में भी ये दक्षिण भारत के नागार्जुन कोंडा के समीप किसी अज्ञात स्थान में निवास कर रहे हैं, लेकिन सिद्ध पुरुषों के अतिरिक्त अन्य साधारणजनों को इनका दर्शन होना असम्भव है। नागबोधि और नागबुद्धि ये दोनों पर्यायवाची शब्द हैं। इनके द्वारा विरचित अनेक ग्रन्थ हो सकते हैं, किन्तु इस समय भोट-अनुवाद में मात्र १५ ग्रन्थ उपलब्ध हैं।

---

१. द्र०-रत्नावली, भोट भाषा, भूमिका, पृ० २७, केन्द्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा संस्थान, सारनाथ, १९९३ ।

२. द्र०-सुहल्लेख,भूमिका, पृ० ३५, केन्द्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा संस्थान, सारनाथ १९९६ में प्रकाशित।

नागबोधि की कृतियाँ

	ग्रन्थ का नाम	देगे सं० सं०
(१)	समाजसाधनाव्यवस्थावली	१८०९
(२)	कर्मान्तविभंग	१८११
(३)	कर्मान्तर्भावनोपदेशनाम प्रकरण	१८१२
(४)	सर्वतथागतस्तव	४५२६
(५)	श्रीगुह्यसमाजमण्डलविंशतिविधि	१८१०
(६)	पञ्चक्रमार्थभास्करण	१८३३
(७)	पञ्चक्रमटीका मणिमाला	१८४०
(८)	कृष्णयमारिचक्रोपदेश	१९६४
(९)	यमारिसिद्धिचक्रसाधना	२०१६
(१०)	आर्य नीलाम्बरधरवज्रपाणि नाम तन्त्रटीका	२२००
(११)	बालालंकार	२२०८
(१२)	आर्य नीलाम्बरधरवज्रपाणिसाधना	२२१०
(१३)	आर्यनीलाम्बरधरवज्रपाणिसाधना	२२१३
(१४)	अतियोगभावनोपाय	२४१७
(१५)	अधिष्ठानमहाकालगुह्यसाधना	४८०१

आचार्य जितारिपाद का जीवनवृत्तान्त

त्रिस्कन्धसूत्र की दूसरी टीका **बोध्यापत्तिदेशनाविधि-बोधिसत्त्व-शिक्षाक्रम** के रचयिता आचार्य जितारि हैं। अत: इनका संक्षिप्त जीवन परिचय देना आवश्यक है।

आचार्य जितारि एक प्रख्यात बौद्ध विद्वान् होने के साथ-साथ प्रमाण, माध्यमिक शास्त्र एवं तन्त्र के प्रामाणिक विद्वान् माने जाते हैं।

आर्यावर्त भारतवर्ष के पाल राजाओं के शासनकाल में आचार्य उत्पन्न हुए थे। महाराजा वनपाल के शासनकाल में पूर्वदिशा के वरेन्द्र में सनातन नामक एक छोटा शासक हुआ। उस राजा की एक अतीव सुन्दरी रानी थी। राजा उसको अत्यन्त प्यार करता था और उसे आम लोगों से छिपाकर रखता था। उस समय राजा ने एक ब्राह्मण कुल के आचार्य गर्भपाद से गुह्यसमाज का अभिषेक ग्रहण किया और गुरु दक्षिणा के रूप में उक्त सुन्दरी रानी, अश्व, स्वर्ण एवं गज आदि

भेंट किये। कालान्तर में आचार्य गर्भपाद को दक्षिणा में प्राप्त सुन्दरी रानी से एक लक्षणवान् पुत्र का जन्म हुआ। उस बालक ने लगभग सात वर्ष की आयु में ब्राह्मणकुल के छात्रों के साथ अध्ययन के लिए गुरुकुल में प्रवेश लिया। अन्य ब्राह्मण छात्रों ने उस बालक को यह कहकर निरन्तर प्रताड़ित किया कि तुम्हारे पिता बौद्ध तान्त्रिक हैं और ऊँच-नीच के भेदभाव से रहित होकर सबके साथ एक समान व्यवहार करते हैं। इस प्रकार वे सदैव बालक को सताते थे तथा पीटते भी थे, किन्तु वह घर लौटकर भी किसी से शिकायत नहीं करता था। परन्तु एक दिन वह अपनी सहनशक्ति खो बैठा और उसने रोते हुए अपने पिता को समस्त घटनाओं से अवगत कराया। पिता ने अन्यों के द्वारा प्रताड़ना बन्द करने के लिए तथा अन्य को पराजित करने के लिए अपने पुत्र (आचार्य जितारि) को मञ्जुघोष का अभिषेक दिया और अनुज्ञा देकर उससे साधना कराई। लगभग एक वर्ष बीतने के पश्चात् सिद्धि प्राप्ति के लक्षण प्रकट हुए और उस समाधि भावना के प्रभाव से बाह्य-आभ्यन्तर (सर्वत्र) लाल-पीला प्रकाश फैला। भोजन पहुँचाने वाली माता को ऐसा भान हुआ, मानों साधना भवन में आग लग गई है। आर्तस्वर में क्रन्दन करने से समाधि भंग हो गई और प्रकाश भी लुप्त हो गया। पिता ने कहा कि यदि इस प्रकार की समाधि-अग्नि में एक सप्ताह तक स्थित रहने दिया जाता तो वह बालक स्वयं मञ्जुघोष के समकक्ष हो जाता, किन्तु कुछ विघ्न पड़ गया है। फिर भी सम्पूर्ण विद्या-स्थानों में उसकी बुद्धि अबाधगति से विकसित होगी।

तत्पश्चात् कुछ सामान्य ज्ञान तो उन्होंने बिना अध्ययन के ही प्राप्त कर लिया, जिसमें लिपि, शिल्प, छन्द, अभिधान इत्यादि संगृहीत हैं। कुछ विद्या को मात्र एक बार पढ़ लेने से जान लिया। अत्यन्त कठिन विषयों का दो-एक बार अध्ययन मात्र से ही ज्ञान हो गया। फलतः वे शीघ्र ही पण्डितमण्डलेश्वर हो गए। वे आजीवन उपासक रहे। उन्होंने अपने पिता से **गुह्यसमाजतन्त्र, चक्रसंवरतन्त्र** एवं **हेवज्रतन्त्र** इत्यादि में जितना भी ज्ञातव्य है, उस सबको विधि-विधान से प्राप्त किया। अन्य अनेक गुरुजनों का सेवन करके माध्यमिकशास्त्र, प्रमाणशास्त्र इत्यादि अनेक शास्त्रों का श्रवण कर शिक्षा प्राप्त की। सम्प्रति भोट भाषा में उपलब्ध कग्युर-तनग्युर सूची में इनके द्वारा विरचित तीन प्रमाण ग्रन्थ प्राप्त होते हैं, यथा—**हेतुतत्त्वोपदेश, धर्म-धर्मिविनिश्चय** एवं **बालावतारतर्क**।

विशेषरूप से उन्होंने अनेक ग्रन्थों का श्रवण स्वयं मञ्जुघोष से किया। उनके पिता ब्राह्मण गर्भपाद राजा महीपाल के समय मान्य पण्डित थे, किन्तु उनके

निधन के उपरान्त उन्हें राजा का प्रमाणपत्र प्राप्त नहीं हुआ, अतः वे विभिन्न प्रान्तों के विहारों का दर्शन एवं परिक्रमा करने के साथ-साथ पण्डितों के साथ शास्त्रार्थ करने के लिए निकल पड़े। एक बार जब वे खसर्पण गये तब द्वार पर एक आर्य अचल (बोधिसत्त्व) की मूर्ति का दर्शन हुआ, जो अत्यन्त क्रोधित मुद्रा में थी। उसे राक्षस रूप सोचकर उनके मनमें अश्रद्धा उत्पन्न हुई। उसी रात्रि उन्होंने स्वप्न में मुनीन्द्र के वक्षस्थल से अनेक अचल निर्गत होकर दुष्टों का दमन करते हुए देखा। बुद्ध के उपायकौशल के प्रति उन्होंने अश्रद्धा की है, ऐसा सोचकर उन्होंने प्रायश्चित्त किया। फलस्वरूप तारादेवी ने साक्षात् दर्शन दिया और कहा कि तुम महायान के अनेक शास्त्र रचो, इससे पापों का विशोधन होगा। ऐसा उपदेश दिया। कालान्तर में राजा महीपाल के द्वारा वृक्षपुरी नामक पुनीत स्थान आचार्य को भेंट किया गया। तत्पश्चात् विक्रमशिला महाविहार का पाण्डित्य पत्र भी उन्हें भेंट किया गया। उन्होंने अनेक धर्मप्रवचन भी दिये। फलतः उनकी ख्याति अत्यन्त विस्तृत क्षेत्र में फैल गई।

आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान ने बाल्यावस्था में आचार्य जितारि से सामान्य विद्याओं की शिक्षा प्राप्त की—ऐसा दीपंकरश्रीज्ञान के परम शिष्य डोमतोनपा द्वारा विरचित जीवनवृत्तान्त में उल्लिखित है।

आचार्य जितारि ने **शिक्षासमुच्चय, बोधिचर्यावतार** और **गगनगञ्जसूत्र** इत्यादि पर एक-एक लघु टीका की रचना की है। उन्होंने सूत्र एवं मन्त्रयान सम्बन्धी लगभग सौ विविध शास्त्रों की रचना भी की है।

आचार्य जितारि का प्रस्तुत जीवनवृत्तान्त मैंने लामा तारानाथ द्वारा विरचित **'बौद्ध धर्म का इतिहास'** नामक ग्रन्थ के आधार पर लिखा है।

सम्प्रति आचार्य (जितारि) के द्वारा विरचित ग्रन्थों में से मात्र २१ ग्रन्थ के अनुवाद ही भोट भाषा में प्राप्त होते हैं, जो इस प्रकार हैं—

	ग्रन्थ का नाम	**देगे सं० सं०**
(१)	हेवज्र अभिषेक निश्चय	१२७२
(२)	श्री दशक्रोधविद्याविधि	१२७३
(३)	श्री चतुष्पीठतत्त्वचतुष्कः	१६२०
(४)	अक्षोभ्यसाधना	२६५७
(५)	अपरिमितायुःस्तोत्र	२६९८

गुह्यजितारि के नाम से प्रसिद्ध कुछ ग्रन्थ

बुतोन कृत कन्युर एवं तन्युर सूची में इन उपर्युक्त ग्रन्थों के अतिरिक्त कुछ अन्य ग्रन्थों के नाम भी प्राप्त होते हैं। सम्भवतः गुह्यजितारि एवं आचार्य जितारि एक ही व्यक्ति हैं।

आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान का जीवनवृत्तान्त

त्रिस्कन्धसूत्र की तृतीय टीका आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान द्वारा विरचित है। जिसका नाम '**कर्मावरणविशोधनविधिभाष्य**' है। अतः यहाँ आचार्य का जीवन-वृत्तान्त प्रस्तुत करना उचित है। वैसे तो मैंने आचार्य का जीवनवृत्तान्त पूर्व में अपने ग्रन्थ आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान द्वारा विरचित ५ ग्रन्थों के संग्रह की भूमिका में

लिखा है[१], फिर भी यहाँ पुनः आचार्य की जीवनी लिखने का औचित्य प्रतीत होता है।

आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान आर्यावर्त भारतवर्ष की पूर्व दिशा में स्थित बंगाल प्रदेश के अन्तर्गत विक्रमपुरी नामक नगर के महाराजा श्रीकुशल एवं महारानी श्रीमती के द्वितीय पुत्र के रूप में ९८२ ई० में उत्पन्न हुए। बालावस्था में इनका नाम चन्द्रगर्भ था। लगभग १० वर्ष की आयु तक इन्होंने लिपि, शिल्प, चिकित्सा एवं नीतिशास्त्र का अध्ययन सम्यक् रूप से सम्पन्न किया। लगभग ११ वर्ष की आयु से २१ वर्ष तक इन्होंने व्याकरण, प्रमाण, कला, नाटक, काव्य, अभिधान एवं ज्योतिष विषयों की शिक्षा ग्रहण की। आचार्य जितारि, बोधिभद्र, युक्तिकोकिल, अवधूतीपाद एवं महायोगी राहुल गुप्त इत्यादि से इन्होंने महायान शास्त्रों का अध्ययन किया। विशेष रूप से आचार्य राहुल गुप्त से तन्त्रयान के अन्तर्गत हेवज्र का अभिषेक प्राप्त करके **'गुह्यज्ञानगर्भ'** यह गुह्य नाम प्राप्त किया तथा मन्त्रयान के अववाद का भी श्रवण किया। तत्पश्चात् छह वर्ष तक निरन्तर अवधूत चर्या अथवा युक्तिव्रतचर्या का अनुष्ठान करते हुए तन्त्रयान के क्रिया, चर्या, योग एवं अनुत्तरतन्त्र के शास्त्रों का अध्ययन सम्पूर्ण रूप से सम्पन्न किया। अनेक इष्टदेवों का भी इन्हें साक्षात् दर्शन हुआ। अनेक प्रकार की समाधि का प्रभाव चित्त में उत्पन्न हुआ। अभिज्ञाएं भी प्राप्त कीं। वज्रयोगिनी का भी साक्षात् दर्शन हुआ और उन्होंने महामण्डल का निर्माण कर आचार्य को अभिषेक प्रदान करके सम्पूर्ण मन्त्रयान का अववाद प्रदान किया। उसी समय उनमें इस जगत् के सम्पूर्ण मन्त्रयान के निष्णात विद्वान् होने का अहंकार उत्पन्न हुआ, परन्तु महायोगियों ने अन्य अनन्त मन्त्रयान-ग्रन्थों का आवाहन करके आचार्य के समक्ष प्रदर्शन किया, जिसमें कुछ ग्रन्थ तो ऐसे थे, जिनका आचार्य ने नाम तक नहीं सुना था। तब आचार्य के अहंकार का दमन हो गया।

योगी के रूप में चर्या करते हुए वे वन एवं श्मशान इत्यादि में निवास करते थे। उसी समय आचार्य को स्वप्न में मुनीन्द्र ने दर्शाया कि आप अब तक प्रव्रज्या ग्रहण न करके कहाँ भ्रमण कर रहे हो? तब आचार्य के मन में यह विचार आया कि मुनीन्द्र की इच्छा के अनुसार मुझे प्रव्रज्या ग्रहण करना चाहिए। तदनुसार उन्होंने दीक्षा ग्रहण की। तब वे महासांघिक उपाध्याय शीलरक्षित से

---

१. द्र०-आचार्य दीपंकर विरचितः पञ्चग्रन्थसंग्रहः (केन्द्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा संस्थान से प्रकाशित-१९९८)।

भिक्षु की उपसम्पदा ग्रहण करके आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान के नाम से लोक में प्रसिद्ध हुए। तत्पश्चात् लगभग २९ वर्ष की अवस्था में गुरु धर्मरक्षित से वैभाषिक निकाय की महाविभाषा एवं सप्त अभिधर्म इत्यादि हीनयान के अनेक ग्रन्थों का सम्यक् रूप से अध्ययन किया। उस समय उन्होंने वैभाषिक आदि चारों मूल निकायों के विनय ग्रन्थों का भी नियत रूप से श्रवण किया तथा वे आपत्तियों के अल्पमात्र दोष से भी मुक्त रहते थे। विनय के नियम के अनुसार शील का पालन करते थे।

तब उनमें शीघ्र ही सम्यक् संबुद्ध बनने की इच्छा उत्पन्न हुई और उसके लिए बोधिचित्त की शिक्षा को ग्रहण करना उन्होंने उचित समझा। उस काल में इसी विषय में पारंगत विद्वान् स्वर्णद्वीप के महाचार्य स्वर्णद्वीपीय धर्मकीर्ति के बारे में उन्हें सूचना प्राप्त हुई। तत्काल **आचार्य स्वर्णद्वीपीय धर्मकीर्ति** से मिलने की अभिलाषा से प्रेरित हुए। स्वर्णद्वीप जाने के लिए १३ महीने निरन्तर नाव के द्वारा उन्होंने यात्रा की। आचार्य स्वर्णद्वीपीय से निरन्तर १२ वर्षों तक बोधिचित्त की शिक्षा का अभ्यास अववाद के साथ सम्पूर्ण रूप से करते रहे। तत्पश्चात् आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान की चित्तसन्तति में बोधिचित्त के विशिष्ट लक्षण का अवबोध हुआ। आचार्य स्वर्णद्वीपीय ने अत्यन्त प्रसन्न होकर अपने हृदय गर्भ का प्रतीक चिह्न एक स्वर्णमयी बुद्धप्रतिमा को आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान के हाथ में प्रदान कर उनमें बुद्धशासन के शासक पद का हस्तान्तरण किया। पुनः आचार्य दीपंकर आर्यावर्त भारतवर्ष में लौट आये।

इस प्रकार आचार्य दीपंकर के द्वारा सर्वदा सश्रद्ध सेवन किये जानेवाले आचार्यों में आचार्य शान्तिपाद, स्वर्णद्वीपीय धर्मकीर्ति, बोधिभद्र एवं आचार्य ज्ञानश्रीमित्र प्रमुख थे। इन आचार्यों से आचार्य दीपंकर ने आचार्य नागार्जुन द्वारा प्रवर्तित गम्भीर (माध्यमिक) दर्शन की परम्परा का अववाद, आचार्य मैत्रेयनाथ द्वारा प्रवर्तित विस्तृत चर्यापक्ष अभिसमय की परम्परा का अववाद और महाजिनपुत्र आचार्य शान्तिदेव द्वारा प्रवर्तित विस्तृत बोधिचित्तचर्या की परम्परा का अववाद सम्पूर्ण रूप से ग्रहण किया।

अन्य महासाधक डोम्बी-पा द्वारा प्रवर्तित व्रतों के अधिष्ठान की परम्परा, आचार्य बलिन् द्वारा प्रवर्तित कर्मसंवर के अधिष्ठान की परम्परा, आचार्य महानाम द्वारा प्रवर्तित ऋद्धि-अधिष्ठान की परम्परा एवं आचार्य बुद्धकोटि के द्वारा प्रवर्तित वज्रवाराही अधिष्ठान की परम्पराओं को भी पूर्णतया प्राप्त किया। इस प्रकार सूत्र

एवं तन्त्र दोनों विषय में इस जगत् के समस्त पण्डितों से अतुल्य होकर महाविद्वान् का शीर्षपद प्राप्त किया।

तब शीघ्र ही महाराज धर्मपाल ने उन्हें बोधगया से विक्रमशिला महाविहार में आमन्त्रित करके बुद्धशासन के शासक पद को ग्रहण करने का निवेदन किया। तदनुसार आचार्य ने उसे स्वीकार कर बुद्धशासन के विकास को सूर्य की भाँति अत्यन्त प्रदीप्त करते हुए निवास किया।

आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान के पूर्व भोट देश में बुद्धशासन की स्थिति

हिमशिखर भोट देश में तीन महान् धर्मराजाओं ने बुद्धशासन की स्थापना, विकास एवं चिरस्थिति के लिए पर्याप्त प्रयास किया, किन्तु तीसरे महाराज श्री रल्पाचेन के शासनकाल में बौद्ध धर्म के प्रति श्रद्धारहित कुछ मन्त्रियों एवं सहोदर भाई लङ् दरमा ने मिलकर परोक्ष में षड्यन्त्र रचकर राजा रल्पाचेन को मद्य पिलाकर युवावस्था में ही गला घोंटकर उनकी हत्या कर दी। तत्पश्चात् राजा के बड़े भाई लङ्दरमा, जो दुष्ट प्रकृति के थे, उन्हें राजसिंहासन पर बैठाया गया। उन्होंने पूर्व धर्मराजाओं द्वारा स्थापित विहारों का विनाश, संघ का वध एवं बौद्ध ग्रन्थों में आग लगाकर बौद्ध धर्म का नामोनिशान मिटा दिया। तीन वर्ष के बाद बौद्धशासन के विनाश को सहन न करके ल्हालुङ् पेल् ग्यि दोर्जे ने राजा की बाण मारकर हत्या कर दी। उसके बाद से सम्पूर्ण तिब्बत में राज करने वाला कोई राजा नहीं हुआ। इस प्रकार बिना राजा के लगभग ७० वर्ष तक मध्य तिब्बत में बौद्ध धर्म प्राय: लुप्त सा हो गया।

मध्य तिब्बत में बौद्ध धर्म के विलोप के पश्चात् तिब्बत की पूर्वदिशा में स्थित खम् प्रदेश के पश्चिम के भिक्षु लाछेन गोङ्पा रबसेल आदि ने भिक्षुसंघ का पुनर्गठन किया तथा शासन की पुन: स्थापना की। पश्चिम प्रदेश ऊचाङ् के महापुरुष येशे होद् तथा लाछेन गोङ्पा रबसेल ने भिक्षुसंघ का विस्तार किया। किन्तु विनय तथा तन्त्र में प्रधानता के विषय में परस्पर विवाद उत्पन्न हो गया, जिससे शासन में विघटन हो गया। अधिकांश जनता बौद्ध धर्म से यद्यपि परिचित थी, फिर भी उसका अभ्यास और चिन्तन न होने से उसके वास्तविक अर्थ से अनभिज्ञ थी। विशेषकर जबसे लङ् दरमा ने शासन का दमन किया था, उसके बाद से शासन की पुन: स्थापना हेतु कुछ तान्त्रिकों ने कण्ठस्थ तन्त्र को लिपिबद्ध करना प्रारम्भ किया, जिसका उन्होंने अध्ययन किया था। जहाँ-जहाँ स्मरण नहीं

हो पाया, वहाँ वे अपनी ओर से रचना कर पूर्ण कर देते थे। कुछ लोगों ने नकली तन्त्रग्रन्थों की भी रचना कर उसमें सामान्य बोलचाल की भाषा का प्रयोग कर दिया। कुछ तान्त्रिकों ने अपनी पत्नी से स्वादिष्ट मदिरा पिलाने को कहा ताकि वे तन्त्रग्रन्थ की रचना कर सकें। साथ ही, इसी समय भारत से लाल आचार्य एवं नील आचार्य तिब्बत पहुँचे और उन्होंने नकली धर्म, योग और मुक्ति का प्रचार किया। उनके अनुसार स्त्री से सम्भोग योग है तथा शत्रु का विनाश मुक्ति है। कुछ नकली 'तेरतोन' (बुद्धवचनों के अन्वेषक) ने स्वयं को असली बताते हुए नकली शास्त्र-ग्रन्थों की खोज की। कुछ नकली तान्त्रिकों ने तन्त्र ग्रन्थों का गलत अर्थ निकालते हुए हिंसा आदि अनेक प्रकार के अकुशल कार्य किए। कुछ तान्त्रिकों ने जादू-टोना दिखाकर लोगों को पथभ्रष्ट किया। कुल मिलाकर यह काल शासन के लिए एक विकट काल साबित हुआ और शासन का ह्रास होता गया। नकली भिक्षु बनकर भी लोगों ने धर्म प्रचार का कार्य करना चाहा तथा उनके चरित्र एवं व्यवहार ने लोगों को गुमराह किया।

इस प्रकार शासन की दयनीय स्थिति को देखते हुए पश्चिमी तिब्बत के राजा 'येशे-होद' चिन्तित हो उठे। यह उनके लिए असह्य हो गया। पूर्व के तिब्बती महाराजाओं के द्वारा बौद्ध शासन की वृद्धि एवं विकास के लिए किए गए प्रयासों को स्मरण करते हुए उस समय की विकट स्थिति को देखकर उनका मन खिन्न हो गया। उनके मन में भी पूर्व के राजाओं की भाँति शासन की वृद्धि हेतु कुछ कर गुजरने की इच्छा प्रबल हुई। फलस्वरूप उन्होंने अपना राज्य अपने भाई 'ल्हादे' को सौंप दिया और स्वयं भिक्षु हो गए।

तत्पश्चात् "येशे होद" तथा लोछेन रिन्छेन् साङ्पो दोनों ने मिलकर विधर्म अर्थात् मिथ्याधर्म को समाप्त करने हेतु व्यापक प्रचार-प्रसार किया तथा इसके विरुद्ध राजाज्ञा भी निकलवाई, किन्तु इन सबका कोई ठोस परिणाम नहीं निकला, जिससे वे और अधिक चिन्तित हो उठे। अन्त में उन्होंने निर्णय किया कि इन सबको दूर करने का एक ही उपाय है कि भारत से किसी भारतीय बौद्ध आचार्य को तिब्बत आमन्त्रित किया जाए। उन्होंने भारत में तत्कालीन प्रसिद्ध आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान के बारे में सुन रखा था। उन्होंने सोचा कि यदि ऐसे महान् आचार्य को तिब्बत में आमन्त्रित किया जा सका तो शासन में फैली समस्त मिथ्या दृष्टियाँ, भ्रम एवं गलत धारणाओं का समाधान हो जाएगा और तिब्बत की जनता के हित में एक महान् कार्य होगा।

तत्पश्चात् महामहिम येशे होद् ने आर्यावर्त भारतवर्ष से महापण्डित आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान को बुलाने के लिए महानुवादक 'ग्या चोन्डुस् सेङ्गे' को प्रभूत स्वर्णमुद्राएं और अनेक सेवकों के साथ भारत भेजा। दुर्भाग्य से अधिकांश स्वर्णमुद्राओं की चोरी-डकैती हो गई तथा कुछ खो गए और अधिकांश सेवकों का नेपाल तथा भारत के बीच मार्ग में गर्मी के कारण देहान्त हो गया तथा कुछ तिब्बत वापस लौट गये। मात्र ग्या चोन्डुस् सेङ्गे ही विक्रमशिला महाविहार में पहुँच सके। स्वयं अत्यन्त दरिद्र होने के कारण तथा आचार्य दीपंकर को निमन्त्रण देने के लिए मुद्रा एवं द्रव्य की कमी के कारण उनमें आचार्य को भोट देश में निमन्त्रित करने की न हिम्मत हुई न निमन्त्रण दे सके।

फिर भी येशे होद के उत्साह में कोई कमी नहीं आयी और अधिक धन एकत्रित करने की अभिलाषा से सोना एकत्रित करने सीमा पर गए। वहाँ के मुस्लिम राजा (गरलोक) ने उन्हें कैद कर लिया। मुस्लिम राजा ने दो शर्तों पर उन्हें रिहा करने का प्रस्ताव रखा—१. बौद्ध धर्म त्यागकर मुस्लिम धर्म स्वीकार कर लें २. अपने शरीर के वजन के बराबर सोना पेश करें। तब येशे होद ने कहा कि चाहे प्राण क्यों न चले जाए, किन्तु बौद्ध धर्म का परित्याग नहीं करूँगा। कुछ इतिहासकारों का कहना है कि 'येशे होद' गरलोक राजा से युद्ध करने गए थे और युद्ध हार कर बन्दी बना लिए गए थे"। किन्तु ये बातें सर्वथा अनुचित जान पड़ती हैं, क्योंकि वे राजगद्दी त्यागकर भिक्षु बन चुके थे। अतः युद्ध का कोई औचित्य नहीं जान पड़ता है।

बाद में येशे-होद के छोटे भाई 'जङ्छुब होद' काफी सोना लेकर अपने भाई को मुस्लिम राजा की कैद से छुड़ाने गए। जब सोना तौला गया तो 'येशे होद' के सिर के बराबर सोना कम पड़ गया। जिस कारण उन्हें कैद से रिहा नहीं किया गया और 'जङ्छुब होद' मायूस हो गए, किन्तु उन्हें अपने बड़े भाई से कैदखाने में मिलने की अनुमति दी गई, जहाँ 'येशे होद' ने बताया कि—'मुझे अपने मरने का दुःख नहीं है। तुम सारा सोना ले जाकर भारत से आचार्य दीपंकर को तिब्बत बुला सको तो मैं अपने को भाग्यशाली समझूंगा।' तब 'जङ्छुब होद' सोना लेकर वापस अपने राज्य लौट गए। इस प्रकार तिब्बत में बौद्ध शासन के पुनरुत्थान के लिए राजा 'येशे होद' ने अपने प्राणों की आहुति दे दी और मुस्लिम राजा के कैद में ही उनकी मृत्यु हो गयी।

'येशे होद' की इच्छा के अनुसार 'जङ्छुब होद' ने लोचावा 'नगछो छुलठिम ग्यलवा' को पाँच सेवकों एवं सात सौ स्वर्ण मुद्राओं सहित भारत से आचार्य दीपंकर को आमन्त्रित करने हेतु प्रस्थान कराया। भारत पहुँचकर छुलठिम ग्यलवा विक्रमशिला बौद्धविहार में अध्ययन कर रहे तिब्बती अनुवादक 'ग्या चोन्डुस् सेङ्गे' से मिले। दोनों ने विचार-विमर्श कर यह निर्णय लिया कि फिलहाल इस बात को गुप्त रखा जाए और अध्ययन के बहाने वहीं रहा जाए, क्योंकि यदि लोगों को पता चल गया कि वे आचार्य को आमन्त्रित करने आये हैं तो शायद ही आचार्य को जाने दें। इस प्रकार समय बीतने लगा। लोचावा ग्या चोन्डुस् सेङ्गे ने लोचावा नगछो से कहा कि हम भोटवासियों के आचार-विचार के अनुरूप सबसे उपयुक्त आचार्य मात्र दीपंकरश्रीज्ञान ही हैं। अतः उन्हें ही निमन्त्रण हेतु प्रयास करना चाहिए। वैसे तो उस समय आचार्य दीपंकर के अतिरिक्त अन्य बहुत बड़े महाचार्य भी विद्यमान थे, जिनमें आचार्य शान्तिपाद, नडपाद, डोम्बीपाद, दीपंकर भद्रपाद, अवधूतीपाद, बोधिभद्र, रत्नभद्र, जितारि, ललितवज्र, भूमिगर्भ, ज्ञानगर्भ, कल्याण धर्म और शैलेन्द्र इत्यादि लगभग ५२ वरिष्ठ विद्वान् जीवित थे। ये सभी अपने-अपने विषय के प्रकाण्ड पण्डित थे, न कि समस्त विषयों के। हम तिब्बतवासियों के लिए आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान ही कल्याण करनेवाले हैं।

अतिश का भोट देश में आमन्त्रण :

एक दिन अवसर पाकर बिना किसी भारतीय आचार्य एवं शिष्यों की जानकारी के 'ग्या चोन्डुस् सेङ्गे' ने लोचावा 'छुलठिम ग्यल्वा' को आचार्य दीपंकर से एकान्त में भेंट करवाई। इस बीच उन्होंने आचार्य को एक बड़ा सोने का टुकड़ा तथा चारों तरफ स्वर्ण मुद्राओं से सजा एक 'मण्डल' भी भेंट किया। दोनों ने तिब्बत में बौद्धधर्म की स्थापना तथा सोङ्चन गम्पो, ठ्रिसोङ् देउचन एवं ठ्रि रलपाचन के काल में हुए बौद्धधर्म के विकास एवं पश्चात् लाङदारमा द्वारा सद्धर्म का विनाश, पुनः सद्धर्म का पुनरुत्थान एवं इस समय तक की सद्धर्म की उन्नति एवं ह्रास के बारे में विस्तारपूर्वक चर्चा की। उस समय तिब्बत में बौद्धधर्म की जो दयनीय स्थिति थी और सद्धर्म में जो गलत धारणाएं फैल रही थीं, उन सभी समस्याओं से आचार्य को अवगत कराया। इन 'दुष्प्रवृत्तियों को दूर करने के लिए एक भारतीय आचार्य को तिब्बत में बुलाया जाना आवश्यक समझकर 'येशे होद' ने जो प्रयास किया तथा जिसके फलस्वरूप उन्हें मुस्लिम राजा ने कैद कर

लिया और वही उन्होंने अपने प्राण त्याग दिए, इन सब बातों का भी विस्तारपूर्वक आचार्य से निवेदन किया। साथ ही यह संदेश भी दिया कि येशे होद ने अपने प्राणों की परवाह न कर अपने भाई जङ्छुब होद से कहा था कि तिब्बत में बौद्ध शासन की पुनः स्थापना एवं विस्तार के लिए भारत से आपको किसी भी तरह तिब्बत बुलाना परम आवश्यक है। तदनुसार हमें महाराज जङ्छुब होद ने आपको बुलाने के लिए भेजा है। वे आपके आने की प्रतीक्षा में आँखें बिछाए राह देख रहे हैं। ऐसा निवेदन करते हुए दोनों की आँखे भर आईं और उन्होंने अश्रुपूर्ण नेत्रों से आचार्य से निवेदन किया कि वे सद्धर्म की रक्षा हेतु महाराज का निमन्त्रण स्वीकार कर तिब्बत चलने की कृपा करें।

तब आचार्य ने कहा—भोट के तीनों पूर्व नरेश, लाछेन गोङ्पा रबसेल, येशे होद ये सभी बोधिसत्त्व के अवतार मालूम होते हैं। अतः मैं बोधिसत्त्वों की आज्ञा की अवमानना नहीं कर सकता। राजा जङ्छुब होद भी करुणा के पात्र हैं। उन्हें सद्धर्म की सेवा के लिए अपार धन-सम्पत्ति एवं मानव की हानि उठानी पड़ी। तिब्बत-वासियों पर दया आती है, फिर भी मेरे आचार्य रत्नाकर शान्ति बहुत ही सख्त हैं, वे शायद ही मुझे जाने की अनुमति दें। इतना ही नहीं, मैं तो अब वृद्धावस्था की ओर अग्रसर हूँ। बहुत अधिक कुञ्जियों की जिम्मेदारी का बोझ मुझ पर है और बहुत अधिक कार्य अवशिष्ट हैं। शायद ही मैं तिब्बत जा सकूँ। फिर भी मैं आज रात परीक्षण करूँगा।

उस रात आचार्य ने अपनी इष्ट देवी तारा की स्तुति कर उनसे तिब्बत जाने के बारे में निवेदन किया। तारादेवी ने उन्हें साक्षात् दर्शन दिए और भविष्यवाणी की—"तिब्बत के लोगों का कल्याण होगा। विशेषकर, एक उपासक के माध्यम से तुम्हारा सत्त्वार्थ बहुत अधिक सार्थक होगा, किन्तु तुम्हारी आयु कम हो जाएगी।

आयु कितनी कम हो जाएगी? ऐसा पूछने पर तब देवी ने कहा कि—यदि भारत में रहोगे तो तुम ९२ वर्ष जीवित रहोगे। किन्तु यदि तिब्बत गए तो २० वर्ष आयु कम हो जाएगी और तुम ७२ वर्ष जीवित रहोगे।"

भविष्यवाणी के आधार पर आचार्य ने यह निर्णय लिया कि यदि मेरी वजह से भोटवासियों का उपकार होता है तो मैं अवश्य वहाँ जाऊँगा, चाहे मेरी आयु कम क्यों न हो जाए। दूसरे दिन उन्होंने दोनों लोचावा को बुलाकर उन्होंने

तिब्बत जाने की इच्छा व्यक्त की तथा कहा कि मुझे यहाँ के शेष कार्यों को समाप्त करने में कम से कम डेढ़ वर्ष लग जाएंगे। तब तक तुम दोनों आचार्य रत्नाकर शान्ति के पास अध्ययन करो। वे दोनों आचार्य की इस स्वीकारोक्ति से फूले नहीं समाए और उन्होंने आचार्य से निवेदन किया कि आचार्य यदि आपने तिब्बत जाने का निर्णय कर लिया है तो जितना आप चाहें हम दोनों यहाँ रुकने के लिए तैयार हैं।

इस दौरान आचार्य दीपंकर ने अपने सेवकों, शिष्यों को बोधगया, नेपाल, स्वयंभू चैत्यों में पूजा करने हेतु भेजा ताकि मार्ग में बाधा न हो। एक दिन समय पाकर आचार्य ने अपने गुरु रत्नाकर शान्ति से निवेदन किया कि तिब्बत में बौद्धधर्म का बहुत ज्यादा विकास हुआ है तथा वहाँ के लोगों की बौद्धधर्म में अगाध श्रद्धा है। इसलिए मेरी वहाँ जाने की अभिलाषा है। क्या आप मुझे वहाँ जाने की अनुमति देंगे? तब आचार्य रत्नाकर शान्ति ने लोचा़वा छुलठिम ग्यलवा से कहा कि—तुमने कहा था कि तुम यहाँ अध्ययन करने आये हो लेकिन तुम तो यहाँ हमारे पण्डित को चुराने आये हो। दीपंकर तिब्बत जाने के लिए आग्रह कर रहा है। इतना ही नहीं, तिब्बत में बौद्धधर्म हेतु जो जनहानि एवं धनहानि हुई है, यहाँ तक कि येशे होद ने अपने प्राण तक त्याग दिए, उन सबका वर्णन भी तुमने आचार्य से किया है। इसलिए तुम लोगों पर दया भी आती है, अतः मैं तुम्हें मात्र तीन वर्ष के लिए आचार्य को तिब्बत ले जाने की अनुमति देता हूँ। किन्तु याद रहे, तीन वर्ष बाद आचार्य को भारत में वापस लाना होगा—ऐसी लोचा़वा छुलठिम ग्यलवा से प्रतिज्ञा करवाई।

१०४० ई० में आचार्य दीपंकर दोनों लोचा़वा एवं अपने सेवकों सहित भारत से तिब्बत की यात्रा पर निकल पड़े। एक वर्ष उपरान्त वे नेपाल पहुँचे तथा वहाँ एक वर्ष रहे। तत्कालीन नेपाल नरेश अनन्तकीर्ति आदि श्रद्धालु जनों ने आचार्य का आदरपूर्वक सत्कार किया तथा आचार्य ने उन लोगों को अपेक्षानुसार धर्म प्रवचन दिया। प्रसिद्ध 'थाङ्' विहार का निर्माण इसी समय प्रारम्भ किया गया। आचार्य इससे काफी आनन्दित हुए। इसी समय किसी तैर्थिक के काले जादू से महा-अनुवादक लोचा़वा ग्या चोन्डुस् सेङ्गे की मृत्यु हो गयी। आचार्य को गहरा आघात पहुँचा और उन्होंने कहा कि—"मेरी जीभ कट गई"। अर्थात् लोचा़वा संस्कृत के अच्छे ज्ञाता एवं विद्वान् भी थे। फलस्वरूप उन्हें तिब्बत जाने की इच्छा नहीं हुई। इस पर लोचा़वा नागछो गहरे सोच में पड़ गए और उन्होंने

उनसे काफी प्रार्थना की। साथ ही, उन्हें इस बात से भी अवगत कराया कि तिब्बत में मा गेवे लोडो, रिनछेन साङ्पो, लेगपे शेरब आदि अनेक संस्कृत के अच्छे ज्ञाता एवं लोच़ावा विद्यमान हैं। मैं स्वयं भी कुछ हद तक अनुवाद का कार्य कर सकता हूँ। अत: आप चिन्तित न होवें। आचार्य ने कहा कि—"ग्या चोन्डुस सेङ्गे जैसा कोई नहीं है। अर्थात् वे बहुत अच्छे विद्वान् थे।"

वहाँ से प्रस्थान कर वे १०४२ ई० वर्ष में तिब्बत के ङरी प्रान्त के गुगे नामक स्थान पर पहुँचे। वहाँ के राजा जङ्छुब होद ने उनका भव्य स्वागत किया। तदुपरान्त वहाँ से 'माङ् युल' तथा थोलिङ विहार पधारे।

जङ्छुब होद की बहिन आचार्य के दर्शन के लिए आई, जो एक भिक्षुणी थी। उसने आचार्य से निवेदन किया कि—मेरा हीरा जैसा एक भाई था, जिसने आपके लिए अपने प्राणों की आहुति दे दी। इस कारण मैं शोक से व्याकुल हूँ।" आज आपके तिब्बत आगमन से मेरे भाई का बलिदान सार्थक हो गया। अत: आज मुझे दु:ख से मुक्ति मिल गई। तिब्बत में प्रवास के दौरान बौद्ध शासन के विकास एवं जगत् हित के लिए आप व्यापक कार्य करें, ऐसी मेरी हार्दिक अभिलाषा है। उस समय जङ्छुब होद ने तिब्बत में विद्यमान ङरी के विद्वानों के बारे में आचार्य से निवेदन किया। उनमें से लगभग ८५ वर्ष के एक वयोवृद्ध प्रसिद्ध अनुवादक लोच़ावा रिनछेन साङ्पो भी ङरी प्रान्त में रहते थे। उन्होंने आचार्य के तिब्बत बुलाए जाने तथा वहाँ पहुँचने के बारे में सुना, किन्तु उनके मन में यह विचार आया कि वे मुझसे अधिक विद्वान् नहीं होंगे। फिर भी महाराज जङ्छुब होद के द्वारा आमन्त्रित किए जाने तथा शाही मेहमान होने के कारण उन्होंने उनका सत्कार करने का निर्णय किया। तदर्थ उन्होंने आचार्य को 'थोलिङ' विहार में आमन्त्रित किया। थोलिङ विहार के चारों मंजिलों की दीवारों पर क्रमश: चारों तन्त्रों के इष्ट देवों के चित्र बने हुए थे। जब आचार्य ने वहाँ प्रवेश किया तो उन्होंने प्रत्येक तन्त्रों के इष्टदेवों की एक-एक श्लोक द्वारा स्तुति की। इस प्रकार चारों तन्त्र देवों की चार श्लोकों द्वारा स्तुति कर आसन पर विराजमान हुए। रिनछेन साङ्पो ने आचार्य से निवेदन किया कि आपके द्वारा की गई स्तुति की रचना किसने की है? आचार्य ने उत्तर दिया कि—यह किसी की रचन। नहीं है, यह तो मैंने तत्काल इसी समय रचना कर स्तुति की है। रिनछेन साङ्पो आश्चर्यचकित होकर सहम गए। तब आचार्य ने उनसे पूछा—आप क्या-क्या जानते हैं? उन्होंने अपने सम्पूर्ण अध्ययन का विवरण संक्षेप में निवेदन

किया। तब आचार्य ने बड़े आश्चर्य के साथ कहा कि आप जैसे विद्वान् पुरुष के होते हुए मुझे तिब्बत आने की क्या आवश्यकता थी।

पुनः उन्होंने लोचावा से पूछा कि चारों तन्त्रों के अर्थों को एक में संगृहीत करके एक ही आसन पर एक ही व्यक्ति के द्वारा किस प्रकार अनुष्ठान किया जा सकेगा? लोचावा ने उत्तर दिया—"प्रत्येक तन्त्रों की अपनी व्याख्यानुसार क्रमशः पृथक्-पृथक् अनुष्ठान किया जाना चाहिए।

तब आचार्य ने कहा कि लोचावा यहाँ आप मात खा गये। मेरे तिब्बत में आगमन का प्रयोजन सार्थक है—ऐसा 'नील पुस्तक' में कहा गया है।

पश्चात् चारों तन्त्रों को एक में संगृहीत कर अभ्यास-विधि को आचार्य ने संक्षेप में बताया तथा "**गुह्यऋद्धि-आदर्श**" की टीका रची, जिससे लोचावा अति प्रसन्न हुए। तब उन्होंने सोचा कि—ये तो महा आचार्यों से भी महान हैं। अनन्तर आचार्य एवं लोचावा ने मिलकर **अष्टसाहस्त्रिकाप्रज्ञापारमिता, पञ्चविंशतिसाहस्त्रिकालोकप्रज्ञापारमिता, अष्टसाहस्त्रिकाप्रज्ञापारमितालोक** आदि पूर्व में अनूदित प्रज्ञापारमिता ग्रन्थों का संशोधन किया। महाराज जङ्छुब होद ने आचार्य को तिब्बत में बौद्धधर्म के पूर्व शासन का विकास, लाङ्दरमा द्वारा शासन का विनाश, शासन का विप्रलोप, बौद्धसंघ का पुनरुत्थान, परवर्ती शासन में तन्त्र एवं सूत्र में लोगों के द्वारा फैलाई जा रही भ्रान्तियों, गलत धारणाओं आदि से अवगत कराया। इस कारण उन्होंने आचार्य से निवेदन किया कि "बहुत अधिक न कहकर बुद्धवचनों को एक में संगृहीत कर अनुष्ठान करने का एक संक्षिप्त उपदेश दें।" हम भोटवासियों को गम्भीर एवं अद्भुत धर्म की आवश्यकता नहीं है। अतः आप कर्म-हेतुफल से सम्बन्धित धर्म का उपदेश करने की कृपा करें। इसके अतिरिक्त भी महाराज ने बौद्धधर्म से सम्बन्धित सूत्र एवं तन्त्र के दस प्रश्न किए।

आचार्य अत्यन्त प्रसन्न हुए। उन्होंने कहा कि—कर्म एवं हेतुफल के अतिरिक्त अन्य कोई गम्भीर धर्म नहीं है। यही सबसे गम्भीर धर्म है। अतः सावधानी बरतें। धर्मविरुद्ध, गलत धारणाओं एवं धर्म के विपरीत भ्रान्तियों को दूर करने के लिए ग्रन्थ की रचना करने का निवेदन किये जाने पर आचार्य ने १०४४ में "**बोधिपथप्रदीप**" नामक प्रसिद्ध ग्रन्थ की रचना की। इसके फलस्वरूप लोगों में जो गलत धारणाएं थीं एवं बौद्धधर्म में जो विप्रतिपत्तियां थीं, वे स्वतः दूर हो गईं। इस बोधिपथप्रदीप का मुख्य अभिधेय विषय मुख्य रूप से तीन प्रकार के

पुरुषों के मुक्तिमार्ग का क्रम है तथा इसमें सूत्र एवं तन्त्र दोनों का समन्वय है। यह ग्रन्थ तिब्बत में बहुत अधिक लोकप्रिय हुआ। इस ग्रन्थ को आधार बनाकर तिब्बत के चारों सम्प्रदायों की परम्पराओं में अनेकों ग्रन्थों की रचनाएं हुई हैं। जैसे—गेलुग परम्परा में 'लमरिम छेनमो तथा ङगस् रिम छेनमो', साक्य में—थुबपा गोङ्सेल एवं लमडेस, कार्ग्युद में थरग्यन तथा ञिङमा में ज़-पलटुल कृत कुनसाङ लामई श्यललुङ आदि।

इस प्रकार ङरी प्रान्त में तीन वर्षों तक रहकर आचार्य ने बौद्धधर्म का प्रचार-प्रसार कर अनेक विशिष्ट विनेयजनों को निर्वाण मार्ग में प्रवृत्त कराया। तत्पश्चात् उन्होंने भारत लौटने का विचार किया, किन्तु नेपाल की सीमा पर युद्ध छिड़ जाने के कारण वे कुछ समय तक पुरङ् नामक जगह में रुक गए। पूर्व में भविष्यवाणी के अनुसार उपासक 'डोम तोनपा' उस समय खम प्रान्त में लामा सेचुन के पास अध्ययनरत थे। जब उन्होंने सुना कि आचार्य दीपंकर तिब्बत आये हुए हैं तो वे उसी क्षण अपने गुरु से अनुमति लेकर आचार्य के दर्शन के लिए ङरी की ओर चल पड़े। जब वे पुरङ् पहुँचे तो एक सकरी गली में आचार्य का दर्शन हुआ। उन्होंने जमीन पर लेटकर आचार्य को साष्टांग प्रणाम किया। आचार्य ने उनके सिर पर हाथ रखकर संस्कृत में मंगलाचरण पाठ किया तथा अपने साथ निवास स्थान पर ले गये और उन्हें "**गुह्यसमाजमञ्जुश्रीवज्र**" का अभिषेक दिया और वे आचार्य अतिश के परम शिष्य हो गये।

डोम तोनपा ने उपायकौशल से पूर्वी एवं मध्य तिब्बत में स्थित बौद्ध-विहारों, विद्वानों तथा वहीं अध्ययनरत हजारों भिक्षु-भिक्षुणियों की स्थिति को संक्षेप में आचार्य को बताया। तब आचार्य के मुँह से निकल पड़ा—इतनी अधिक संख्या में भिक्षु-भिक्षुणियाँ तो भारत में भी नहीं हैं। तब तो यह अवश्य सम्भव है कि उनमें बहुत से अर्हत् भी होंगे। उन्हें मध्य तिब्बत की ओर जाने की इच्छा हुई। उनके विचारों को जानकर नागछो लोच़ावा को बड़ी चिन्ता हुई। उन्होंने आचार्य से आचार्य रत्नाकर शान्ति के सामने स्वयं द्वारा की गई प्रतिज्ञा का स्मरण कराया और आचार्य को पकड़कर निवेदन किया कि आप मध्य तिब्बत न जाएं, बल्कि भारत लौट चलें, अन्यथा मैं स्वयं को विश्वासघाती एवं अपराधी महसूस करूँगा। इस पर आचार्य ने कहा कि—"जो कार्य नहीं किया जा सकता है, उसमें पाप नहीं होता है।" आचार्य के इस वक्तव्य से नागछो लोच़ावा को थोड़ी राहत मिली। तब आचार्य ने तदर्थ "बोधिपथप्रदीप" की संस्कृत प्रति तथा एक पत्र के

साथ दो व्यक्तियों को विक्रमशिला अपने गुरु के पास भेजा। पत्र एवं ग्रन्थ प्राप्त होने पर पण्डितों ने उनके द्वारा रचित ग्रन्थ का अवलोकन किया तथा उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि भारत से अधिक तिब्बत में आचार्य की यात्रा लाभकारी रही। यदि भारत में रहे होते तो शायद ऐसा गम्भीर एवं संक्षिप्त लघु ग्रन्थ की रचना नहीं कर पाते। तिब्बती लोग अल्पबुद्धि वाले होते हैं, अतः आचार्य ने इस प्रकार के लघु, किन्तु सरल एवं गम्भीर ग्रन्थ की रचना की है। आचार्य रत्नाकर शान्ति तथा अन्य विद्वान् पण्डितों ने एक मत होकर उत्तर में उन्हें पत्र भेजकर निवेदन किया कि इस ग्रन्थ की स्ववृत्ति लिखें तथा उन्हें यह संदेश भी भेजा कि वे तिब्बत में जब तक चाहें रह सकते हैं।

पत्रोत्तर प्राप्त होने पर डोम तोनपा (उपासक) बहुत प्रसन्न हुए। किन्तु नागछो लोचावा ने यह कहकर चैन की सांस ली कि—स्थविर ने जो जिम्मेदारी मुझे सौंपी थी मैं आज उससे मुक्त हो गया।" तदुपरान्त उपासक ने मध्य तिब्बत में रह रहे कावा शक्या वाङ्छुग आदि अन्य तिब्बती विद्वानों को आचार्य की भावी यात्रा की सूचना दी। कावा शक्या वङ्छुग ने मध्य तिब्बत के सम्भ्रान्त व्यक्तियों को सूचित किया कि उन्हें आचार्य के स्वागत में उपस्थित होना है। उस समय प्रसारित सूचना में "**खुतोन चोन्डुस युङ्डोङ्**" नामक विद्वान् का नाम गलती से छूट गया था, जिस पर उन्होंने अपना नाम न होने का आरोप लगाया। इस पर अन्य लोगों ने उन्हें यह कहकर समझाने का प्रयत्न किया कि "आदि" शब्द से आप को भी समावेश कर लिया गया है। तब उन्होंने कहा कि मैं "आदि" शब्द के अन्तर्गत परिगणित किया जानेवाला व्यक्ति नहीं हूँ"। इस कारण वे अन्य लोगों से पहले ही आचार्य के स्वागत के लिए चल पड़े, जिस कारण अन्य लोगों में भी हड़बड़ी मच गयी और लोग उनके स्वागत में आगे पहुँचने के लिए प्रयास करने लगे। अन्ततः दो माह पश्चात् आचार्य मध्य तिब्बत के 'ञाङ तोद्' नामक स्थान पर पहुँचे। जहाँ 'खुतोन चोन्डुस युङ्डोङ्' ने उनका स्वागत करते हुए आशीर्वाद प्राप्त करने के लिए आचार्य के चरणों में अपनी टोपी रखी, जो उनके सबसे पहले पहुँचने का प्रतीक था।

वहाँ से प्रस्थान कर आचार्य 'वेन' विहार में एक माह तक रुके तथा वहाँ विहार के लोगों ने उनके आगमन के साक्षी के रूप में उन्हीं की एक मूर्ति स्थापित की।

तत्पश्चात् सपरिवार अर्थात् शिष्य मण्डली के साथ वे 'समये' महाविहार पधारे। वहाँ पद्मकरलिंग में निवास करते हुए उन्होंने अनेकों बौद्ध संस्कृत ग्रन्थों

को देखा। यहीं पर आचार्य ने महान् अनुवादक रिनछेन सांगपो के साथ मिलकर "**प्रज्ञापारमिता दुरवबोधिनी आलोक टीका**" का तिब्बती भाषा में अनुवाद किया तथा नागछो लोच़ावा के साथ आचार्य वसुबन्धु रचित "महायान संग्रह टीका" का तिब्बती भाषा में अनुवाद किया। आचार्य ने तिब्बत में हुए बौद्धधर्म के प्रचार-प्रसार एवं विकास का अवलोकन करते हुए कहा कि—"शायद ही भारत में बौद्धधर्म का इतना विकास हुआ हो, जितना तिब्बत में हुआ है"।

उन्होंने 'समये' में ऐसे अनेकों तन्त्र ग्रन्थों को देखा, जो भारत में उपलब्ध नहीं थे। उन्होंने आश्चर्यचकित होकर आचार्य पद्मसम्भव के प्रति श्रद्धा प्रकट करते हुए कहा कि—शायद आचार्य पद्मसम्भव इन तन्त्रों को नागलोक से लाये होंगे।

वहाँ कुछ साल रहने के पश्चात् वे 'ञेथाङ्' गये। ञेथाङ् में उन्होंने "**अभिसमयालंकार**" का संक्षिप्त एवं विस्तार से दो बार प्रवचन दिया, जिससे शिष्यगण आनन्द से गद्गद् हो उठे। उनमें से एक शिष्य 'छगदर तोनपा' भी था, जिसने आचार्य के प्रवचन को टिप्पणी के रूप में लिपिबद्ध किया। कालान्तर में इस टिप्पणी ने ग्रन्थ का रूप ले लिया तथा तिब्बत में 'खम प्रान्त के मत वाली अभिसमयालंकार की टिप्पणी' के नाम से वह बहुत लोकप्रिय हुआ और आगे चलकर इसे बहुत ही प्रसादपूर्ण माना गया। 'ञेथाङ' में ही आचार्य ने अपने परम शिष्य उपासक को तीन पुरुषों के मार्गक्रम के परम प्रवचन का उपदेश दिया।

तत्पश्चात् लोच़ावा 'ङोग लेग पेइ शेरब' ने आचार्य को ल्हासा आमन्त्रित किया तथा वहाँ "जोवो (स्वामी) शाक्यमुनि एवं मिक्यो दोर्जे" (अचलवज्र) का दर्शन कराया। उसी समय उन्होंने आचार्य एवं रिनछेन संगपो से आचार्य भव्यकृत 'तर्कज्वाला' नामक ग्रन्थ का अनुवाद करने का निवेदन किया। तदनुसार आचार्य ने रिनछेन संगपो के साथ इस ग्रन्थ का तिब्बती में अनुवाद किया। स्वयं आचार्य ने वहाँ रहते हुए 'लघु एवं विस्तृत माध्यमिक उपदेश' नामक दो ग्रन्थों की रचना की तथा उनका अनुवाद भी किया। इसके बाद वे पुनः 'ञेथाङ' लौट आए। उस वर्ष ग्रीष्मकाल के दौरान 'ङोग जङछुब जुङने' ने उन्हें 'डागयेरवा' नामक स्थान में आमन्त्रित किया। वहाँ उन्होंने बोधिसत्त्वमण्यावलि की आभिप्रायिक टीका 'पितृधर्म एवं पुत्रधर्म' का उपदेश किया। साथ ही, आचार्य असंगकृत 'उत्तरतन्त्र' की टीका का अनुवाद भी आप दोनों ने सम्पन्न किया।

तत्पश्चात् **कावा शाक्य वाङ्छुग** ने आचार्य को 'फेनपो' नामक स्थान पर आमन्त्रित किया। वहाँ पहुँचने पर एक स्थानीय 'भूमि संरक्षक देव' ने आचार्य को बाधा पहुँचानी चाही, तब आचार्य ने हयग्रीव तन्त्र के द्वारा उसका दमन किया तथा उसे परिवर्तित कर शासन की सेवा एवं संरक्षण में संलग्न किया।

इस प्रकार यदि हम तिब्बत में आचार्य की कर्मभूमि का अवलोकन करें तो ञेथाङ, ल्हासा, येरपा, लेनपा आदि जगहों पर प्रमुख रूप से आचार्य ने धर्मोपदेश किया। इसके पश्चात् आचार्य पुनः 'ञेथाङ' गये। बहुत अधिक परिश्रम करने तथा वृद्धावस्था के कारण उनका शरीर काफी दुर्बल हो गया था। आचार्य दीपंकर नागार्जुन की गुह्यसमाज परम्परा प्राप्त करना चाहते थे, जो उस समय नरोपा के शिष्य काश्मीरी पण्डित आचार्य ज्ञानाकर के पास सुरक्षित थी। सौभाग्य से वे उस समय नेपाल में निवास कर रहे थे, ऐसा एक पत्र नागछो लोच़ावा को प्राप्त हुआ। नागछ़ो स्वयं भी उस परम्परा को प्राप्त करना चाहते थे, किन्तु आचार्य के बिगड़ते स्वास्थ्य के कारण विवश थे। नागछ़ो लोच़ावा यह सोचकर काफी चिन्तित थे कि उन्हें शायद अब आचार्य ज्ञानाकर का दर्शन नहीं हो सकेगा। इस चिन्ता में वे स्वयं भी काफी कमजोर हो गए थे।

आचार्य दीपंकर ने उनके मन की बात जान ली तथा उन्होंने नागछ़ो लोच़ावा से कहा कि महायानी कल्याणमित्र का प्राप्त होना बहुत ही दुर्लभ है। अतः तुम नेपाल चले जाओ। नागछ़ो लोच़ावा आचार्य को इस स्थिति में छोड़कर जाना नहीं चाहते थे, किन्तु आचार्य के बार-बार समझाने पर वे जाने को तैयार हो गए। परन्तु उन्होंने जाने से पूर्व आचार्य से दो निवेदन किये—१. आप तो तुषित देवलोक में जन्म लेंगे ही, मैं भी आपके चरणों में तुषित में पैदा होऊँ तथा २. मैंने अपने मठ में आपका एक चित्र बनाया है, कृपा कर आप वहाँ पधार कर उस चित्र का परिशोधन कर आशीर्वाद प्रदान करें।

आचार्य ने लोच़ावा की दोनों बातें स्वीकार कर ली। परवर्ती कादम्पा लोगों ने वास्तविकता को न जानते हुए नागछ़ो लोच़ावा की यह कहकर निन्दा की कि "आचार्य निर्वाणोन्मुख थे, ऐसी अवस्था में आचार्य को छोड़कर नागछ़ो लोच़ावा का नेपाल प्रस्थान करना गुरु-शिष्य परम्परा में आस्था न होना लक्षित करता है।" इस पर गेशे शेरावा यह कहते हुए डाँटते हैं कि "सम्प्रति हम जो

थोड़ा बहुत सुख-शान्ति का अनुभव कर रहे हैं वह नागछो लोचावा की कृपा है। हम कादम्पा लोग व्यर्थ में ही एक-दूसरे पर परस्पर अंगुलि उठाते रहते हैं।"

सामान्यत: आचार्य तिब्बत में प्रवास के दौरान ज्यादातर समय उपासक के साथ रहे और चूँकि वे उनके प्रिय शिष्य थे, इसलिए आचार्य ने तिब्बत में शासन का भार भी उन्हें सौंपा। 'समये' विहार में रहते समय आचार्य ने अनेक गुह्यचर्या, उपाय तथा 'छिमफु' में दोहा आदि गम्भीर उपदेश उपासक को दिए। मृत्यु के पूर्व आचार्य ने उपासक से कहा कि—"मैंने अपना शासन भार तुम्हें सौंप दिया है, तुम्हें इसको सम्भालना है। साथ ही, इस परम्परा के निर्वाह एवं संरक्षण के लिए मठ एवं विहारों का निर्माण भी करना है।"

उपासक ने कहा—मैं एक अत्यन्त दरिद्र व्यक्ति हूँ, उस पर भी एक उपासक मात्र। अत: शायद ही मैं ऐसा विस्तृत कार्य कर सकूँ।

आचार्य ने कहा—शिक्षा (=विनय) के अनुसार कार्य करें, मेरा आशीर्वाद तुम्हारे साथ है। तुम्हें चिन्ता करने की कोई आवश्यकता नहीं है। कालान्तर में 'कादम्पा' के प्रसिद्ध अध्ययन केन्द्र "राडेङ मठ" की स्थापना उपासक ने ही की है।

इस प्रकार आचार्य तिब्बत के डरी प्रान्त में तीन वर्ष, ञेथाङ में नौ वर्ष तथा उचाङ में पांच वर्ष रहे। इस दौरान उन्होंने तिब्बत के सौभाग्यशाली विनेयजनों को सूत्र एवं तन्त्र ग्रन्थों का प्रवचन , उपदेश एवं अववाद दिया। विनष्ट शासन परम्परा का पुनरुत्थान किया तथा जो किञ्चिद् मात्रा में अवशिष्ट था, उसका संवर्धन किया। तिब्बत में धर्म की विप्रतिपत्तियों को चन्द्रमा पर सूर्य के प्रकाश पड़ने की भाँति धूमिल किया। मलरहित शुद्ध बुद्धशासन की पुन: स्थापना की। इस जीवन के समस्त विनेयजनों की अभिलाषाओं की पूर्ति होने पर आचार्य को दूसरे लोक में जाने की इच्छा हुई। तदनुसार वे ७३ वर्ष की अवस्था में १०५४ ई० में, तिब्बती पञ्चाङ्ग के अनुसार ९वें माह की २०वीं तिथि को ञेथाङ में महापरिनिर्वाण को प्राप्त हो गए। उनके परिनिर्वाण के उपरान्त उनकी अस्थियाँ 'ञेथाङ' के 'नामोछे' में रखी गई। 'ञेथाङ' के 'होद' में उनकी अस्थियों पर एक स्तूप का निर्माण किया गया।

आचार्य अतिश द्वारा रचित, संशोधित एवं अनूदित ग्रन्थों का परिचय

सामान्यतया आचार्य के द्वारा रचित, सम्पादित एवं अनूदित लगभग सौ से भी अधिक ग्रन्थ हैं। उनके द्वारा अनूदित एवं संशोधित ग्रन्थों में कुछ प्रसिद्ध ग्रन्थ इस प्रकार हैं—जैसे **अभिसमयालंकारदुरवबोधिनी आलोकटीका** का अनुवाद इन्होंने लोछेन रिनछेन सांगपो के साथ किया। लोचा़वा छुलठिम ग्यलवा के साथ '**माध्यमिकहृदयकारिका**' एवं उसकी टीका '**तर्कज्वाला**' का अनुवाद किया। लोचा़वा **ग्या-चोन्डुस् सेङ्गे** के साथ '**माध्यमिक रत्नप्रदीप**' का अनुवाद किया।

उनकी कुछ प्रमुख स्वतन्त्र रचनाओं का उल्लेख करना चाहता हूँ। इनमें '**बोधिपथप्रदीप**' एवं उसकी स्ववृत्ति, **सत्यद्वयावतार**, लघु एवं विस्तृत माध्यमिक उपदेश, '**चर्यासंग्रहप्रदीप**' **बोधिसत्त्वमण्यावलि, महायानसूत्रसमुच्चय** आदि उनकी प्रमुख रचनाएं हैं। इसके अतिरिक्त भी आचार्य की अनेकों रचनाएं हैं, जिनका विस्तृत विवरण मैंने पूर्व आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान कृत पंचग्रन्थ संग्रह के परिशिष्ट में विस्तारपूर्वक दिया गया है। जिज्ञासु पाठकगण सुविधानुसार वहाँ अवलोकन करें।

भारत एवं तिब्बत में आचार्य के शिष्य—भारत एवं तिब्बत में सामान्य तौर पर आचार्य के अनेकों शिष्य हुए। फिर भी भारत में उनके प्रमुख पाँच शिष्य हुए, जो इस प्रकार हैं—१. पितोवा, २. धर्माकरमति, ३. कल्याणगुप्त, ४. ज्ञानमति तथा ५. भूमिगर्भ। तिब्बत में भी उनके अनेकों शिष्य हुए, किन्तु ङरी से लोछेन रिनछेन सांगपो, नागछो लोचा़वा छुलठिम ग्यलवा, जङ्डुब होद, चाङ प्रान्त से गोस् खुकपा ल्हाचे़, योल, छोस्, वङ तीन भाई, ल्होडाग से छब ठिछोग, ग्यलवा क्योङ, ग्याचोन्डुस् सेङ्गे, मासे लोडो, छुलठ्रिम जुङ्ने, खम प्रान्त से जङ्छुब रिनछेन, गोनपावा, शेरबदोर्जे, छागदर तोनपा, जमपल लोडो मध्य तिब्बत से खुतोन चोन्डुस् युङ्डुङ्, ङोग लेगपेई शेरब, डोमतोन ग्यलवई जुङ्ने आदि प्रसिद्ध शिष्य हैं।

अनुवादक ञग् देवघोष का जीवनवृत्तान्त

आचार्य नागार्जुन द्वारा विरचित **त्रिस्कन्धसूत्र-टीका-आपत्तिदेशनावृत्ति** नामक यह ग्रन्थ तिब्बत के पूर्व शासनकाल में भारत के आचार्य शान्तरक्षित तथा

तिब्बत के अनुवादक ञक् देवघोष के द्वारा भोट भाषा में अनूदित किया गया था। इन दोनों का नाम अधिकांश तिब्बत की कंग्युर-तंग्युर सूचियों में उपलब्ध होता है। इस अनुवादक के नाम से अनूदित यही एकमात्र ग्रन्थ है। ये इतने प्रसिद्ध अनुवादक (लोचावा) भी नहीं लगते हैं। क्योंकि मैंने इस अनुवादक के नाम से अनूदित अन्य ग्रन्थों की प्राप्ति के लिए अत्यधिक प्रयास किया, किन्तु अब तक कोई ग्रन्थ प्राप्त नहीं हो सका। इनकी जीवनी भी किसी भी ग्रन्थ में उपलब्ध नहीं होती। लेकिन तिब्बत के अनेक प्राचीन बौद्ध धर्म के इतिहास की पुस्तकों में इनके नाम का उल्लेखमात्र प्राप्त होता है। अतः इनकी जीवनी को प्रस्तुत करना मेरे लिए असम्भव है। भविष्य में इनकी जीवनी के सन्दर्भ में कोई सूचना प्राप्त होगी तो मैं अवश्य अगले संस्करण में उसका उल्लेख करूँगा। लेकिन मुझे आश्चर्य इस बात का है कि इन्होंने आचार्य शान्तरक्षित के साथ कार्य किया है, फिर भी इनके विषय में तिब्बतवासियों ने जानकारी देना उचित क्यों नहीं समझा। क्योंकि आचार्य शान्तरक्षित न केवल भारत के प्रसिद्ध विद्वान् थे, अपितु तिब्बत में बुद्धशासन के प्रतिष्ठापक भी थे। ऐसी स्थिति में लोचावा का जीवनवृत्तान्त भी अवश्य कहीं उल्लिखित होना चाहिए था।

छग् लोचावा का जीवनवृत्तान्त

आचार्य जितारि के द्वारा विरचित त्रिस्कन्धसूत्र-टीका **'बोध्यापत्तिदेशनावृत्ति बोधिसत्त्वशिक्षाक्रम'** नामक इस ग्रन्थ का तिब्बत के प्रसिद्ध महानुवादक छग् नामक लोचावा ने संस्कृत से भोट भाषा में अनुवाद किया था। किन्तु भोट अनुवादकों में छग् नाम से दो अनुवादक प्रसिद्ध हैं। ये दोनों चाचा-भतीजा हैं और पहला छग् डाचोमपा है तथा दूसरे का नाम छग् छोस् जे पेल् है। इस ग्रन्थ का किस छग् लोचावा ने अनुवाद किया, इसका कोई विशेष उल्लेख नहीं है। इस ग्रन्थ के अन्तिम पृष्ठ में ऐसा उल्लेख प्राप्त होता है कि एक नेपाली पण्डित तथा छग् नामक लोचावा ने इसका अनुवाद किया। दोनों छग् लोचावाओं ने नेपाल की यात्रा की थी। अतः दोनों लोचावाओं का वृत्तान्त लिखना मैं उचित समझता हूँ, क्योंकि इन दोनों में से किसी एक ने अवश्य अनुवाद किया होगा।

छग् लोचावा डाचोमपा का जीवनवृत्तान्त

छग् लोचावा डाचोमपा तिब्बत के एक प्रसिद्ध अनुवादक ही नहीं, अपितु भोटदेश के एक वरिष्ठ विद्वान् तथा साधक माने जाते हैं। ये सन् ११५३ में

छग् नामक ग्राम में उत्पन्न हुए थे। इनके पिता का नाम टशी दावा था। बाल्यावस्था से ही ये पठन-पाठन एवं लेखन में अत्यन्त रुचि लेते थे और उनमें कुशल भी थे। गुरुवर छग् तोन् रिनपोछे रिन्छेन् छुलठिम से इन्होंने प्रव्रज्या प्राप्त की। तेङ् लोचावा छुलठिम जुङ् नेस् से नागार्जुन परम्परा के **गुह्यसमाजतन्त्र, कालचक्र, शब्दविद्या** एवं अनुवाद कला के विषय में शिक्षा ग्रहण की। हस्तचतुष्टय धर्मपाल के आवाहन की साधना की और निरन्तर उनसे ये आशीर्वाद प्राप्त करते रहते थे। दरमा चोन्डुस् नामक उपाध्याय आदि से भिक्षु की उपसम्पदा प्राप्त की। तदनन्तर क्रमशः गुरु शाक्यडुब्, चङ्करवा, चोगडु लोचावा ञडेन मेदपेल् और शङ् लोचावा इत्यादि भोट देश के लगभग ५० गुरुजनों का सेवन करके इन्होंने सूत्र, तन्त्र, शास्त्र एवं साधारण विद्याओं का अध्ययन कर उनमें कुशलता प्राप्त की। तत्पश्चात् आर्यावर्त भारतवर्ष की ओर प्रस्थान करके आचार्य मैत्रीचन्द्र इत्यादि अनेक भारतीय गुरुओं से अनेक विषयों की पारम्परिक रूप से शिक्षा प्राप्त की। पुनः भोट देश में लौटने के पश्चात् अनेक धनपतियों से छुमिक, ग्यल् ल्हा खङ् और थङ् पोछे इत्यादि मठों को दक्षिणा के रूप में प्राप्त किया, किन्तु उन सभी मठों में मात्र कुछ-कुछ वर्ष ही निवास किया। प्रमुख रूप से तेहुरा नामक मठ में विराजित होकर पूर्व के खण्डित मठों का पुनरुद्धार किया। तदनन्तर आर्यावर्त भारतवर्ष से आचार्य शुद्धश्री को तिब्बत में आमन्त्रित करके **जिनमार्गावतार** नामक ग्रन्थ का संस्कृत से भोटभाषा में अनुवाद किया। अन्य आचार्य शाक्यश्री, सर्वज्ञश्री तथा रत्नश्री इत्यादि आचार्यों का भी सेवन करके अनेक ग्रन्थों का अनुवाद किया। कायिक आचरण अत्यन्त विशुद्ध होने के कारण तथा शील का पालन विनय के अनुसार नियमित रूप से करने के कारण इनके शील की सुगन्ध दूर-दूर तक व्याप्त रहती थी। पाषाणों में इन्होंने हस्त एवं मस्तक के चिह्न स्पष्ट रूप से स्थापित किये, जिनका इनके अनुयायियों ने साक्षात् दर्शन किया। इस प्रकार बुद्धशासन की सेवा करते हुए अनुयायियों को प्रशिक्षित किया तथा इस जगत् हित के लिए चिरकाल तक कल्याण कार्य और सार्थक कार्य करके लगभग ६४ वर्ष की अवस्था में सन् १२१६ ई० को उन्होंने निर्वाण प्राप्त किया। इनके द्वारा अनूदित ग्रन्थों की सूची क्रमशः नीचे दी जा रही है—

	ग्रन्थ का नाम	देगे सं० सं०
(१)	बोधिपद्धति	३७६६
(२)	वज्रतारा साधना	१३२४
(३)	जिनमार्गावतार	३९६४

(४)	बोधिसत्त्वसंवरग्रहणविधि	३९७०
(५)	आदिकर्मिक संक्षिप्त संवरक्रम	३७२६

छग् लोचावा छोस् जे पेल् का जीवनवृत्तान्त

महान् अनुवादक छग् लोचावा छोस् जे पेल् सन् ११९७ ई० में मध्य तिब्बत के ल्होखा प्रान्त के ङेन तेहुरा गाँव में उत्पन्न हुए थे। इनके पिता का नाम छोस् क्यि जुङ् नेस् एवं माता का नाम छोस् बुम् था। ये महापण्डित साक्या कुङ्गा ग्यलछन्, डोगोन छोस् ग्यल फग्पा के समकालीन थे। उस समय आर्यावर्त भारतवर्ष में मगध के राजा बुद्धसेन, मंगोलिया में राजा कुबलई खान और तितहुरी में राजा रामसिंह भी शासन करते थे।

इन्होंने लगभग सात वर्ष की आयु से लेखन, पठन एवं कण्ठस्थीकरण आदि का अध्ययन प्रारम्भ किया। विशेष रूप से संस्कृत व्याकरण एवं भोट व्याकरण का अत्यधिक रुचि के साथ अध्ययन किया। छग् लोचावा डाचोमपा इनके चाचा थे। लगभग ११ वर्ष की आयु से २० वर्ष की आयु तक इन्होंने निरन्तर अपने चाचा छग् डाचोमपा का सेवन करते हुए चक्रसंवर का अभिषेक इत्यादि अनेक तन्त्र-ग्रन्थ, दर्शन एवं उपदेशों का श्रवण किया। उस अन्तराल में बोधिचित्तोत्पाद का अभिषेक पाँच बार प्राप्त किया। लगभग १४-१५ वर्ष की अवस्था में तिहुरा (टशी ल्हुन् पो) में निवास करते समय एकान्तवास में स्थित होकर आर्य अक्षोभ्य बुद्ध के नाम-मंत्र का २६ लाख बार जप तथा प्रणाम, उपवास आदि का अनुष्ठान परिपूर्ण किया, जिसकी वजह से इष्टदेव आर्य अक्षोभ्य बुद्ध ने साक्षात् प्रकट होकर दर्शन दिया। महापण्डित कुङ्गा ग्यलछन्, ञङ् तो लोचावा, ठोफु लोचावा, जम्पापेल्, नरथङ् पा, डोतोन् दुद्ची डक्, गुङ् थङ् ल्हाचुन् पा और चङ्पा ग्यारेवा इत्यादि भोट देश के महाविद्वानों के सांनिध्य में रहकर अनेक सूत्र, तन्त्र एवं शास्त्रों का विधिवत् अध्ययन किया। विशेष रूप से गुङ् थङ् ल्हा चुन् पा नामक गुरु से **अभिधर्मसमुच्चय** का श्रवण किया एवं आचार्य नागार्जुन परम्परा के गुह्यसमाज तन्त्र का अभिषेक ग्रहण किया। इस प्रकार लगभग १० वर्ष तक चङ् प्रदेश में अध्ययन करते रहे।

अपने प्रथम गुरु चाचा छग् लोचावा डाचोम पा की इच्छा एवं आदेश के अनुसार लगभग २० वर्ष की अवस्था में ही इन्होंने नेपाल तथा आर्यावर्त भारतवर्ष की यात्रा की। नेपाल में स्वयम्भू के महापण्डित **रत्नरक्षित** से चक्रसंवर के १३

देवों का अभिषेक ग्रहण किया तथा अन्य भाषी लोगों के लिए अनुवाद का कार्य भी सम्पन्न किया। महापण्डित उपासक **रवीन्द्रदेव** अथवा **रवीन्द्ररुचि** से आचार्य नागार्जुन परम्परा के **गुह्यसमाजतन्त्र** और **वज्रावली** इत्यादि अनेक तन्त्रों का अभिषेक लिया तथा उनका विधिवत् श्रवण किया। सूत्र एवं तन्त्रों के **सर्वकल्पसमुच्चय** नामक ग्रन्थ का भी तीन बार श्रवण करने के पश्चात् भी जब वे सन्तुष्ट न हुए तो पुनः उन्होंने पुनः देशना हेतु निवेदन किया। अत्यन्त प्रसन्न होकर इनके प्रति महापण्डित को सहानुभूति उत्पन्न हुई। इस प्रकार नेपाल में लगभग ८ वर्ष रहे—ऐसा उल्लेख मिलता है।

तत्पश्चात् इन्होंने आर्यावर्त भारतवर्ष की ओर प्रस्थान किया। भारत के महापण्डित यशोमित्र एवं राहुलश्रीभद्र इत्यादि के चरणों का निरन्तर सेवन करते हुए महायान एवं हीनयान के अनेक सूत्र शास्त्रों की शिक्षा ग्रहण की। भारत में यात्रा करते हुए मुसलमानों से युद्ध का अत्यधिक भय रहते हुए भी इन्होंने तिरहुती, बोधगया, वैशाली, नालन्दा, राजगृह, गृध्रकूट इत्यादि अनेक बौद्धतीर्थ स्थानों में तीर्थयात्रा की तथा इस क्रम में पूर्वोक्त दो गुरुजनों के दर्शन करने में दो वर्ष लग गये। भारत से वापस तिब्बत में लौटते समय तिरहुत होते हुए नेपाल के मार्ग से तिब्बत पहुँचे।

ये जब भारतवर्ष से तिब्बत पहुँचे तो महापण्डित साक्य कुङ्गा ग्यलछन् ने कहा कि महानुवादक रिन्छेन् संग्पो के पश्चात् आप भोट देश के सर्वश्रेष्ठ विद्वान् निकले—ऐसी प्रशंसा की। उसी समय साक्या पण्डित के प्रमाण के शिक्षक गुरु आचार्य दानशील ने भी ऐसी प्रशंसा की कि आप तो पण्डितों के भी महापण्डित सिद्ध हो गए।

इस प्रकार इन्होंने भारत एवं नेपाल के १२ आचार्य एवं तिब्बत के चार लोचावा तथा २१ विद्वानों से सूत्र एवं तन्त्र तथा अनेक धर्मों का अभिषेक, श्रवण, अववाद एवं अध्ययन किया।

भारत से तिब्बत लौटने के बाद महानुवादक ने नग्छो लोचावा के मठ गुङ् थङ् में शिष्यों द्वारा बार-बार निवेदन करने पर चार वर्ष निवास किया। इस अन्तराल में अनेक अनुयायियों को अनेक प्रकार की धर्मदेशना की। लगभग ६२ वर्ष की आयु में थङ् पोछे विहार में जाकर विस्तृत रूप से धर्मदेशना दी। तत्पश्चात् यरलुङ्, जुफु, देफुग, खोर दोगोन् रिगुद्, इत्यादि स्थानों की यात्रा करके

बौद्ध धर्म का प्रचार किया। साक्या मठ में जाकर महागुरु शर्वा येशे ग्यल्छन् एवं पोन छेन् कुङ्गा सङ्पो दोनों ने इन्हें अपने गुरु के रूप में स्वीकार किया।

तत्पश्चात् शेष जीवन तेहुरा में निवास करते हुए अनेक धर्मों की देशना एवं प्रचार करते हुए बुद्धशासन के संरक्षण एवं विस्तृत सत्त्वार्थ करते हुए व्यतीत किया। ये लगभग ६८ वर्ष की आयु में सन् १२६४ ई० में अपने ही मठ तेहुरा में जीवन का त्याग करके तुषित लोक में उत्पन्न हुए।

इनके परम शिष्य साक्य कुल के उपासक छोस्फेल् दरचङ् के द्वारा रचित छग् लोचावा के जीवनवृत्तान्त 'विमल गुरुवचन' में कहा गया है कि छग् छोस् जे पेल् ने पूर्वकाल में भोट भाषा में नवविद्यातन्त्र का अनुवाद किया तथा नामसंगीति की टीका एवं आचार्य चन्द्रकीर्ति विरचित प्रदीपोद्योतन के प्रथम पटल की टीका की रचना की है। ऐसा उल्लेख मिलता है, परन्तु इस समय हम लोगों की दृष्टि में यद्यपि एक भी ग्रन्थ दृष्टिगोचर नहीं हो रहा है, फिर भी इनके द्वारा अनूदित कुछ ग्रन्थों का उल्लेख प्राप्त होता है, जिनकी सूचना इस जीवनवृत्तान्त के अन्त में दी जा रही है। रूस के विद्वान् रोरिक् ने छग् छोस् जे पेल् के द्वारा अनूदित तन्त्र के लगभग ३० ग्रन्थों का नाम देगे तन्ग्युर सूची से निकाल कर दिखाया है, परन्तु उनमें से कुछ ग्रन्थ छग् लोचावा छोस् जे पेल् के द्वारा अनूदित हैं—इसमें सन्देह पैदा होता है।

लोचावा गोस् शुनुपेल् ने अपने "**बौद्ध धर्म का इतिहास**" नामक **नीलपुस्तक**[१] में छग् लोचावा की संक्षिप्त जीवनी प्रस्तुत की है, जिसमें उन्होंने कहा है कि छग् छोस जे पेल् ने ङोग मुनि के शिष्य जोचुन् तग्पा के शिष्य गुङ् थङ् गुरु ल्हा गोन्पो पेल से **गुह्यसमाजतन्त्र** की गोस् लोचावा (फुगपा-ल्हचे) की परम्परा के अनुसार अध्ययन किया। तत्पश्चात् नेपाल के महापण्डित रवीन्द्ररुचि इत्यादि से तन्त्रों की शिक्षा ग्रहण की और तन्त्रों की टीकाओं एवं पिण्डीकृत तथा पञ्चक्रम इत्यादि पूर्वानूदित ग्रन्थों का संशोधन किया। प्रदीपोद्योतन के पिण्डार्थ तथा टीका की भी रचना करके अनेक सत्त्वों का कल्याण किया। महान् विद्वान् बुस्तोन ने भी अपने "बौद्ध धर्म का इतिहास" ग्रन्थ में कहा है कि लोचावा छोस् जेपेल ने नौ तन्त्र ग्रन्थों का अनुवाद एवं प्रदीपोद्योतन के प्रथम पटल की टीका भी की है।

---

१. द्र०-नीलपुस्तक, भाग-१, पृ० ४४५, सीठोन मिरिग प्रकाशन, तिब्बत, १९८४ ।

छग् छोस जे पेल् द्वारा अनूदित ग्रन्थ

	ग्रन्थ का नाम	देगे सं० सं०
(१)	अमृतकणिका नाम आर्यनामसंगीति टिप्पणी (मूल लेखक-सूर्य श्रीज्ञान)	१३९५
(२)	कर्मान्त विभङ्ग (नागबोधिकृत)	१८११
(३)	रक्तयमान्तक साधना (विरूपा कृत)	२०१७
(४)	प्रभास्वरोदयक्रमः (विरूपा कृत)	२०१९
(५)	रक्तयमारिसाधनाविधि (वीरवज्र)	२०२१
(६)	श्री रक्तयमारिसाधना (श्रीधर कृत)	२०२३
(७)	श्री रक्तयमारिमण्डलविधि (श्रीधर)	२०२४
(८)	कृष्णयमारि रक्तयमारि पूजाविधि (श्रीधर)	२०२९
(९)	रक्तयमारिबलिविधि (श्रीधर कृत)	२०३०
(१०)	रक्तयमारिसाधना (श्रीधर कृत)	२०३१
(११)	स्वानुष्ठानक्रमोपदेशरक्तयमान्तक अभिसमय (सुमति कृत)	२०३२
(१२)	चर्यागीतिकोशवृत्ति (मुनिदत्त)	२२९३
(१३)	अरपचन साधना (अजितमित्र)	२७१४
(१४)	लोकेश्वरसाधना (नागार्जुन)	२८५०
(१५)	वज्रयानस्थूलापत्ति (नागार्जुन)	२४८२
(१६)	पञ्चरक्षाविधि (रत्नाकरशान्ति)	३१२६
(१७)	वज्रावलिनाममण्डलविधि (अभयाकरगुप्त)	३१४०
(१८)	निष्पन्नयोगावलि (अभयाकरगुप्त)	३१४१
(१९)	ज्योतिर्मञ्जरी नाम होमविधि (अभयाकरगुप्त कृत)	३१४२
(२०)	उच्छुष्मजम्भलसाधना (अभयाकरगुप्त कृत)	३७४३
(२१)	प्रज्ञालोकसाधना (कोकदत्त)	४७८७
(२२)	रक्तयमारियन्त्रतत्त्वनिर्देशनामसाधना (बोधिगर्भ)	४७२०
(२३)	यमान्तकयन्त्रविधि	४७२२

(२४)	बोध्यापत्तिदेशनावृत्ति बोधिसत्त्वशिक्षाक्रमः (आचार्य जितारि)	४००६
(२५)	होमविधि	५०२१
(२६)	कालचक्रावतार (अभयाकरगुप्त)	१३८३
(२७)	श्रीवज्रडाकस्तोत्रदण्डकम् (धर्मकीर्ति)	१४४२
(२८)	निष्पन्नयोगावली (अभयाकरगुप्त)	२१४१

लोचावा छुलठिम ग्यलवा का जीवनवृत्तान्त

त्रिस्कन्धसूत्र की तीसरी टीका "**कर्मावरणविशोधन-विधिभाष्य**" नामक इस ग्रन्थ की आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान ने रचना की। इसका लोचावा छुलठिम ग्यलवा ने संस्कृत से भोट भाषा में अनुवाद किया। इस महानुवादक नगछ्रो छुलठिम ग्यलवा ने सन् १०११ ई० में ङरिजोङ् नामक प्रदेश के गुङ्थङ् नामक ग्राम में जन्म ग्रहण किया। नग्छो कुल का होने से वे 'नग्छो' कहे गये। विनय धर्म का अधिक पालन करने से एवं विनय शास्त्रों में विशिष्ट पण्डित होने से विनयवान् के नाम से भी तिब्बत में प्रसिद्ध हुए। ये बाल्यावस्था से ही अध्ययन में अत्यन्त रुचि के साथ वीर्य करने वाले तथा तीक्ष्णबुद्धि वाले भी थे। बाद में भिक्षु बनने पर ये छुलठिम ग्यलवा के नाम से प्रसिद्ध हुए। इन्होंने लोचावा ग्या चोंडुस् सेङ्गे से अभिधर्मकोशकारिका एवं स्वभाष्य का अध्ययन किया तथा अभिधर्म में भी निष्णात हो गए। सन् १०३५ ई० में लगभग २७ वर्ष की आयु में ङरि प्रान्त के शासक के भाई जङ्छुप् होद् की आज्ञा के अनुसार भारत से आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान को आमन्त्रित करने हेतु भारत में प्रस्थान किया। सन् १०४२ ई० में आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान तिब्बत के ङरी प्रदेश में पहुँचे और बोधिपथप्रदीप इत्यादि अनेक ग्रन्थों की रचना सहित धर्म प्रवचन किया और अनेक बौद्ध ग्रन्थों का संशोधन भी किया। इस प्रकार निरन्तर १८ वर्षों तक आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान की सेवा में संलग्न रहे। जब आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान तिब्बत के ञेथङ् से ङरी की ओर प्रस्थान कर रहे थे उस समय आचार्य लोचावा नग्छो को अनेक धर्मोपदेश दिये। उस समय आचार्य ने त्रिसमयव्यूह की प्रतिमा लोचावा को देते हुए अनुष्ठित किया। विनयसूत्र, गुह्यसमाजतन्त्र का संस्कृत पाठ और लगभग २० असाधारण अवलोकितेश्वर गुह्यसाधना के भी अनेक आगमों की देशना की। आचार्य ने स्वयं

की अङ्गुलिमात्र प्रतिमा, जो लकड़ी पर उत्कीर्थ थी, उसे लोचावा के गले में ताबीज के रूप में बाँध दी। कालान्तर में आचार्य की आज्ञानुसार साधना करने से मंजुश्रीवज्र, तारादेवी और षडक्षरी (अवलोकितेश्वर) का साक्षात् दर्शन हुआ। विशिष्ट साधना का परिपाक (फल) चित्तसन्तति में उत्पन्न हुआ। लोचावा नग्छो ने दीपंकरश्रीज्ञान के अतिरिक्त महापण्डित आचार्य ज्ञानाकर, शान्तिभद्र और कृष्णसमयवज्र इत्यादि का सेवन करके अनेक बौद्ध दर्शन, सूत्र, तन्त्र एवं शास्त्रों का भोट भाषा में अनुवाद किया। सन् १०६४ ई० में लगभग ५३ वर्ष की आयु में ही उनका निधन हो गया। इनके द्वारा विरचित अनेक ग्रन्थ हो सकते हैं, किन्तु सम्प्रति मात्र आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान का जीवनवृत्तान्त अशीतिस्तुति के रूप में उपलब्ध होता है। वैसे तो उनके अनेक शिष्य थे, किन्तु सर्वश्रेष्ठ मात्र रोङ्पा छक् सोर ही प्रसिद्ध हुए। इन (नग्छो लोचावा) के द्वारा अनूदित लगभग १५० ग्रन्थ हैं, यहाँ कुछ प्रमुख प्रसिद्ध ग्रन्थों का उल्लेख किया जा रहा है—

	ग्रन्थ का नाम	देगे सं० सं०
(१)	श्रीज्ञानवज्रसमुच्चय	४५०
(२)	सर्वतथागतकायवाक्चित्तकृष्णयमारिर्नाम तन्त्रम्	४६७
(३)	त्रिसमयव्यूहराजतन्त्रम्	५०१
(४)	धर्मधातुस्तवः	१११८
(५)	निरुपमस्तवः	१११९
(६)	लोकातीतस्तवः	११२०
(७)	परमार्थस्तवः	११२२
(८)	त्रिकायस्तवः	११२३
(९)	योगरत्नमालानाम हेवज्रपञ्जिका	११८३
(१०)	श्रीचक्रसंवरपञ्चक्रम	१४३३
(११)	एकवीरसाधना	१४६४
(१२)	वज्रासनवज्रगीति	१४९४
(१३)	चर्यागीतिवृत्ति	१४९७
(१४)	चित्तावरणविशुद्धिर्नाम प्रकरणम्	१८०४
(१५)	पञ्चक्रमपञ्जिका	१८४१

(१६)	श्रीयमारितन्त्रपञ्जिका सहजालोको नाम	१९१८
(१७)	सकलतन्त्रसमभावसंचोदनी श्रीगुह्यसिद्धि	२२१७
(१८)	सेकनिर्देश	२२५२
(१९)	मूलप्रकृतिस्वाभरण (चतुर्मुद्रावबाद)	२२९५
(२०)	धर्मधातुदर्शनगीति	२३१४
(२१)	मूलापत्तिटीका	२४८७
(२२)	विमलोष्णीषधारणीविधि	३०८२
(२३)	आर्यतारादेवीस्तोत्र	३६७१
(२४)	मन्त्रावतार	३५१८
(२५)	पञ्चविंशतिसाहस्त्रिका प्रज्ञापारमिता	३७९०
(२६)	प्रज्ञाहृदयव्याख्या	३८२३
(२७)	मध्यमकहृदयकारिका	३८५५
(२८)	मध्यमकहृदयवृत्तिः तर्कज्वाला	३८५६
(२९)	पञ्चस्कन्धप्रकरण	३८६६
(३०)	बोधिसत्त्वचर्यावतारपिण्डार्थ	३८७९
(३१)	मध्यमकोपदेशः	३९२९
(३२)	रत्नकरण्डको नाम मध्यमकोपदेशः	३९३०
(३३)	सूत्रसमुच्चयभाष्यं रत्नालोकालंकारो नाम	३९३३
(३४)	बोधिमार्गप्रदीपपंजिका	३९४८
(३५)	सूत्रार्थसमुच्चयोपदेश	३९५७
(३६)	आर्यसर्वधर्मस्वभावसमताविप्रपञ्चसमाधिराजो नाम महायानसूत्रटीका कीर्तिमाला	४०१०
(३७)	धर्मधर्मताविभंग	४०२२
(३८)	बोधिसत्त्वभूमिवृत्ति	४०४४
(३९)	महायानसंग्रहभाष्य	४०५०
(४०)	मध्यमकावतारकारिका	५०५३

लोचावा नगछो ने मध्य तिब्बत में अनेक शिष्यों को उत्पन्न किया, परन्तु उनमें सर्वश्रेष्ठ शिष्य **रोङ्पा छग् सोर** ही अधिक प्रसिद्ध हुए। ये अपने तेरह पूर्वजन्मों की गतियों को जानने वाले एक विशिष्ट विद्वान् थे। प्रारम्भ में ये मात्र आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान की कृतियों एवं उपदेशों को ही ढूँढने एवं समीक्षा करने में लगे रहे। किन्तु कालान्तर में आचार्य दीपकंर श्रीज्ञान के साक्षात् शिष्य शङ्चुन येरवा आदि १३ शिष्यों से आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान के साधनोपदेश तथा आचार्य के चर्यावदान को प्राप्त करना प्रारम्भ किया। तत्पश्चात् कुछ वर्षों के अनन्तर न केवल आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान के शिष्य, बल्कि आचार्य के निरन्तर १९ वर्ष तक सेवन करने वाले नग्छो लोचावा के जीवित होने की जानकारी मिलने पर उनकी शरण में जाने के लिए उन्होंने गुङ् थङ् की ओर प्रस्थान किया। प्रारम्भ में इन्होंने लोचावा नग्छो से आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान के तन्त्रपक्ष के अनेक साधनोपदेश प्राप्त किये। पश्चात् प्रज्ञापारमिता साधनोपदेश का श्रवण तथा लोचावा नगछो से आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान के काय, वाक् एवं चित्त की विशिष्ट गुणचर्या को प्राप्त करना प्रारम्भ किया। उनमें से विशेष रूप से आचार्य के भोट देश में आमन्त्रण के सन्दर्भ में जानकारी हेतु जिज्ञासा प्रदर्शित की। उस समय लोचावा नगछो ने अत्यन्त हर्ष एवं आनन्द के साथ आचार्य के विस्तृत जीवितावदान एवं ज्ञातृलेख का इनको उपदेश किया तथा समस्त साधनोपदेश की शिक्षा प्रदान की।

बाद में रोङ्पा ने वर्तमान जीवन के समस्त कार्यों का सम्पूर्ण रूप से त्याग कर गुरु लोचावा नगछो की आज्ञा के अनुसार एकान्त में साधना का अनुष्ठान किया। उस दौरान उन्होंने अपने सेवक तक से भी मिलने से परहेज किया। समस्त खाद्य पदार्थ (भोजन) वे खिड़की से ग्रहण करते थे। इस प्रकार निरन्तर तीन वर्ष तक साधना में रहने के पश्चात् उन्होंने आर्य अवलोकितेश्वर का साक्षात् दर्शन प्राप्त किया। तब आर्य अवलोकितेश्वर ने भविष्यवाणी की कि—तुम इसी जन्म में दर्शन मार्ग प्राप्त करोगे और अपने तीस शिष्यों को भी मेरा दर्शन कराओगे।

लगभग २४ वर्ष की आयु में उन्हें एक स्वप्न आया। जिसमें उन्हें अनेक देवियों का दर्शन हुआ और आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान की अस्थि का दर्शन किया तथा आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान की अस्थि से पूर्ण एक क्लश प्राप्त किया। साथ ही

उन अस्थियों को दक्षिण तिब्बत की ओर विसर्जित करते हुए अपने को देखा। अत: इससे यह लक्षित होता है कि भविष्य में दक्षिण तिब्बत में चार परम शिष्य उत्पन्न होंगे। कालान्तर में रोङ् पा जी के चार प्रमुख पुत्र अर्थात् शिष्य दक्षिण में उत्पन्न हुए। उन चार प्रमुख शिष्यों के नाम इस प्रकार हैं, यथा—(१) जा दुलवा जिनपा, (२) रोग् छिनूफु बा, (३) नाम पर्वा एवं (४) गेशे शुलेन पा। ग्यारा तोन्जित् भी उनके परम शिष्य हैं, किन्तु वे मात्र उपासक तक भी न होने के कारण रोङ्पा के चार परम शिष्यों की गणना में संगृहीत नहीं होते। पूर्वोक्त चार शिष्यों ने आचार्य दीपंकरश्रीज्ञान के उपदेशों का श्रवण किया तथा मठों की स्थापना एवं आचार्य के वचनों की टीका-टिप्पणी की और कदम्पा परम्परा का अधिक विस्तार किया।

प्रथम परिशिष्ट भूमिका

अश्वघोष विरचित सामान्य-प्रतिदेशना की संक्षिप्त भूमिका

संक्षिप्त परिचय—सामान्य प्रतिदेशना नामक यह ग्रन्थ एक अत्यन्त लघु एवं महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है। ऐसा माना जाता है कि इसे आचार्य अश्वघोष ने त्रिरत्न के प्रति की गई निन्दा के परिशोधन हेतु रचा है। कहा जाता है कि बौद्ध धर्म में प्रविष्ट होने से पूर्व ब्राह्मण अश्वघोष ने त्रिरत्न की निन्दा की थी। आचार्य दीपंकर श्रीज्ञान के द्वारा विरचित '**आपत्तिदेशना**' नामक एक अन्य लघु ग्रन्थ भी है, जो इस ग्रन्थ से पर्याप्त मिलता-जुलता है। अत: पूर्वोक्त ग्रन्थ जो आचार्य अश्वघोष की रचना है, उस पर सन्देह उत्पन्न होता है, क्योंकि (१) यह ग्रन्थ भोट कंग्युर-तंग्युर-सूची में उपलब्ध नहीं है। (२) इस ग्रन्थ के अन्त में लेखक और अनुवादक का कोई उल्लेख प्राप्त नहीं होता है। (३) इस ग्रन्थ पर किसी भी भारतीय पण्डित द्वारा की गई टीका-टिप्पणी प्राप्त नहीं होती है तथा (४) इस ग्रन्थ के बारे में किसी भी भारतीय विद्वान् के ग्रन्थ में कोई सूचना अथवा विवरण मुझे उपलब्ध नहीं हुआ है।

इस ग्रन्थ पर भोट विद्वानों की मात्र एक-दो टीकाएँ ही उपलब्ध होती हैं। इसमें से मुझे मात्र डुलछु पिता-पुत्र (गुरु-शिष्य) में से डुलछु धर्मभद्र (पिता)

के द्वारा रचित टीका प्राप्त हुई, जिसके कुछ अंशों का संशोधन एवं सम्पादन उनके परम शिष्य यङ्छेन् डुपई दोर्जे ने किया था। यह टीका धर्मभद्र की पोथी 'च' में विद्यमान है। इसके अतिरिक्त लामा तनपा रब् ग्यस् द्वारा रचित एक लघु टीका की भी सूचना मुझे प्राप्त हुई, परन्तु ग्रन्थ अब तक प्राप्त नहीं हो सका है। लेकिन आश्चर्य की बात यह है कि पूर्वोक्त उपलब्ध (ङुङ्छु की) टीका में ऐसी कुछ भी सूचना प्राप्त नहीं है, जिससे यह मूल ग्रन्थ अश्वघोष विरचित है, यह प्रमाणित हो सके और न तो उसमें किसी भारतीय विद्वान् की टीका का भी संकेत उपलब्ध होता है। लेकिन मैं यह नहीं स्थापित कर सकता हूँ कि उक्त ग्रन्थ आचार्य अश्वघोष द्वारा पूर्णतः विरचित नहीं ही है, क्योंकि हो सकता है कि इस पर अनेक भारतीय टीकाएँ रची गई हों और कालान्तर में यवनों के आक्रमण के काल में वे जला दी गई हों या किसी तरह नष्ट हो गई हों। तिब्बत में भी भारत में हुए बौद्धधर्म के ह्रास की भाँति राजा लङ् दरमा के काल में अनेक ग्रन्थ नष्ट कर दिये गये थे। हो सकता है कि उस समय इनका भी नाश हो गया हो। यह मेरा अनुमान मात्र है।

मूल ग्रन्थ का अभिधेय

सर्वप्रथम सामान्यतया इस ग्रन्थ में प्रतिमोक्ष, बोधिचित्त तथा मन्त्रसंवर इन तीनों संवरों की आपत्तियों की प्रतिदेशना कही गई है, जिसमें प्रकृति सावद्य और प्रज्ञप्ति सावद्य के रूप में संचित दोषों की सामान्य तौर पर प्रतिदेशना की गई है। इस कारण इसे 'सामान्य प्रतिदेशना' कहा गया है।

ग्रन्थ के प्रारम्भ में 'उहू' (हा हा) शब्द प्रयुक्त है, जिसमें परिदेव (विलाप) का संकेत मिलता है। पूर्वकाल में प्रमाद के आचरण द्वारा दोष और आपत्तियों के प्रति अत्यन्त कौकृत्य (पछतावा) से उत्पन्न असह्य शोक होने से दीर्घकाल तक विलाप होने पर भोट भाषा में 'हू' के पूर्व 'उ' का योग करके 'उहू' शब्द का प्रयोग हुआ है—ऐसा यङ् छेन् डुपई दोर्जे ने अपनी सामान्य प्रतिदेशना टीका में कहा है।

सर्वप्रथम तीन संवरों से प्रयुक्त पुद्गल की प्रतिदेशना के विषय के रूप में महागुरु वज्रधर, दश दिशाओं में स्थित बुद्ध-बोधिसत्त्व तथा संघों का प्रतिपादन किया गया है। तत्पश्चात् दोषी व्यक्ति का स्वयं का नामोच्चारण करना तथा समस्त

मूल ग्रन्थ के अभिधेय के रूप में की जानेवाली प्रतिदेशना के पाप विषय का परिचय एवं मूलप्रतिदेशना दिखाई गई है।

परिचय भी दो प्रकार का है, यथा--(क) प्रतिदेशना एवं परिणामना की विस्तृत संख्या तथा (ख) अर्थ का संक्षिप्त अभिधान।

(क) प्रतिदेशना एवं परिणामना की विस्तृत संख्या

प्रतिदेशना एवं परिणामना की विस्तृत संख्या को छह प्रकार से कहा गया है। यथा—(१) काल (२) हेतु (३) मार्ग (४) कर्म (५) विषय एवं (६) प्रयोग।

(१) काल—"अनादिसंसारात् प्रभृति प्रत्युत्पन्नपर्यन्तं" अर्थात् अनादि जन्मों से लेकर अब तक काल की अवधि दिखाई गई है।

(२) हेतु—"रागद्वेषमोहवशात्" अर्थात् राग, द्वेष एवं मोह रूपी क्लेशों के वशीभूत होकर--यहाँ तक हेतु का प्रदर्शन किया गया है।

(३) मार्ग—"कायवाङ्मनोभिः" इसके द्वारा काय, वाक् एवं चित्त इनमें से किसी भी मार्ग के द्वारा पाप का संचय दिखाया गया है।

(४) कर्म—"दशाकुशलानि कृतवान्, पञ्चानन्तर्याणि, पञ्च तत्सभागानि प्रातिमोक्षसंवरविरोधः, बोधिसत्त्वसंवरविरोधः गुह्यमन्त्रसमयादिविरोधः" अर्थात् जो दश अकुशल कर्म, पांच आनन्तर्य कर्म, पाँच आनन्तर्य सभाग-कर्म, प्रातिमोक्षसंवर का उल्लंघन एवं बोधिसत्त्वशिक्षा का उल्लंघन आदि कर्म किये गये हैं। ये ही कर्म हैं। इनमें से जिन्होंने काय, वाक् एवं चित्त के द्वारा अकुशल कर्म तथा माता-पिता का वध आदि पाँच आनन्तर्य कर्म, उद्भूयमान बोधिसत्त्व का वध, सोत-आपन्न का वध, भिक्षुणी माता को दूषित करना, स्तूप का विनाश एवं संघद्रव्य का अपहरण ये पाँच आनन्तर्य सभाग-कर्म, आठ प्रातिमोक्षसंवर में से किसी का भी उल्लंघन, बोधिसत्त्व की १८ मूल आपत्तियों में से किसी का उल्लंघन तथा ४६ दुष्कृत्यों से किसी का भी उल्लंघन किया है, ये सब कर्म हैं। इसके अतिरिक्त और भी कर्म हैं, जिनमें १४ मूल आपत्ति एवं आठ स्थूल आपत्ति का उल्लंघन तथा गुह्यमन्त्र के समय का उल्लंघन तक कर्म का प्रदर्शन किया गया है।

(५) विषय—"मातापित्रोरनादरः.........सत्त्वाहितकरं कर्म एवमादीनि कर्माणि कृतवान्"—अर्थात् 'इस जन्म के माता-पिता के अनादर से लेकर सत्त्वों को हानि पहुँचाने वाले कर्म किये गये हैं, तक विषय का प्रतिपादन किया गया है। इसमें प्रमुख रूप से इस जन्म के माता-पिता का अनादर, विनय के आचार्य, वज्रधरगुरु, तन्त्र का अभिषेक प्रदान करने वाले और जिससे शिक्षा प्राप्त की है—ऐसे गुरुजनों एवं साथ में संवर ग्रहण करनेवाले सब्रह्मविहारी मित्रों के प्रति अनादर आदि विषय अन्तर्भूत होते हैं। अन्य और भी विषय हैं, जिनमें त्रिरत्न का प्रतिघात करनेवाला कर्म एवं कर्म-फल व्यवस्था के प्रति अविश्वास करके सद्धर्म का परित्याग, एक से अधिक संख्या वाले आर्यसंघ और चार से अधिक पृथग्जन की अवमानना या निन्दा, किसी सत्त्व के काय, प्राण, सम्पत्ति, भवन एवं वस्त्र आदि को हानि पहुँचाने वाला कर्म आदि तथा पूर्वोक्त दश अकुशल कर्म भी प्रतिदेशना के विषय के रूप में प्रतिपादित किये गये हैं।

(६) प्रयोग—"यान्युकुशलान्यहं कृतवान्, यानि चान्यैः कारितवान्, यान्यन्यकृतान्यनुमोदितवान्" अर्थात् जो अकुशल पाप मेरे द्वारा किये गये हैं, दूसरों के द्वारा कराये गये हैं तथा दूसरों के द्वारा किये गये अकुशल कर्मों का अनुमोदन किया गया है—यहाँ तक प्रयोग दिखलाया गया है। इसके द्वारा स्वयं के काय एवं वाक् के द्वारा साक्षात् किये गये अकुशल कर्म तथा विशेष रूप से वाक् के द्वारा अन्यों को पापकर्म करने के लिए प्रेरित करना एवं चित्त के द्वारा अन्यों के द्वारा किये गये पापकर्मों के प्रति हर्ष एवं गौरव का भाव प्रदर्शित करना—ये सभी कर्म प्रतिदेशना के प्रयोग के रूप में प्रदर्शित किये गये हैं।

(ख) अर्थ का संक्षिप्त अभिधान

"**संक्षेपेण ये च**" यहाँ से लेकर "**तान् सर्वान्**" तक सम्पूर्ण ग्रन्थ में उल्लिखित दोष एवं आपत्तियों के पिण्डार्थ का प्रतिपादन किया गया है। इस संक्षेपार्थ में अभ्युदय एवं निःश्रेयस की प्राप्ति में प्रमुख बाधा प्रकृतिसावद्य एवं प्रज्ञप्तिसावद्य आपत्तियाँ कही गई हैं।

"**गुरुवज्रधरादीनां**" से लेकर "**अनन्तरं संवरमापत्स्ये**" तक के द्वारा इन आपत्तियों की प्रतिदेशना करने के लिए विषय (आलम्बन) के रूप में

गुरुवज्रधर इत्यादि कहे गये हैं। इन गुरुवज्रधर इत्यादि के समक्ष समस्त आपत्तियों की प्रतिदेशना करना और प्रतिदेशना द्वारा दोष एवं आपत्तियों को स्वीकार करना दोनों बातें कही गयी हैं। "जो मैंने छिपाया है", इस प्रकार के दोषों के प्रति अत्यन्त कौकृत्य के साथ प्रतिदेशना एवं उनकी अभिव्यक्ति करनी चाहिए। पुनः भविष्य में प्राणों की आहुति देकर भी इस प्रकार की आपत्तियों को देश, काल एवं किसी भी परिस्थिति में न करने हेतु चित्त में दृढ़ प्रतिज्ञा के साथ संवर ग्रहण करना कहा गया है।

"**प्रतिदेशनायां कृतायां**" इत्यादि के द्वारा इस प्रकार के दोष एवं आपत्तियों का विशोधन हो जाने पर मुझे स्वर्ग एवं मोक्ष का सुख प्राप्त हो सकता है। प्रतिदेशना एवं प्रायश्चित्त न किये जाने पर वैसा सुख प्राप्त नहीं हो सकेगा। अतः निश्चित रूप से प्रतिदेशना एवं अभिव्यक्ति (प्रकट) करके संवर ग्रहण करने हेतु प्रयत्न करना—इस वाक्य द्वारा परोक्ष रूप में कहा गया है।

आचार्य अश्वघोष विरचित 'सामान्य प्रतिदेशना' नामक यह लघु ग्रन्थ की टिप्पणी का परिचय समाप्त॥

आर्यावर्त में गणनातीत
नक्षत्रगण की भाँति हैं विद्वत् समूह,
कुछ ही उनमें हैं पारंगत
सम्पूर्ण बौद्ध विद्यास्थानों में ।

बुद्ध वचनों में विकसित बुद्धिवाले
विद्वानों में अग्रणी रामशङ्कर त्रिपाठी के
पादों में चिरकाल सेवन कर, यत्न से
प्राप्त हुआ सौभाग्य मुझे ग्रन्थ के प्रणयन का ।

पूर्वाचार्य, विद्वान् व सिद्धों के प्रामाणिक
अनेक वचनों की परम्परा का कर अनुसरण,
परार्थ आशय से मैंने जो लिखा है इसमें
क्षमा प्रार्थी हूँ त्रुटित व भ्रान्त अंश हेतु ।

समस्त अनन्त सत्त्वों सहित मैंने जो
पाप आवरण का किया संचय अनादि से,
पैंतीस सुगतों के प्रभाव व आनुभाव से
परिशुद्ध हो वह, प्राप्त होवे कायद्वय मुझे ।

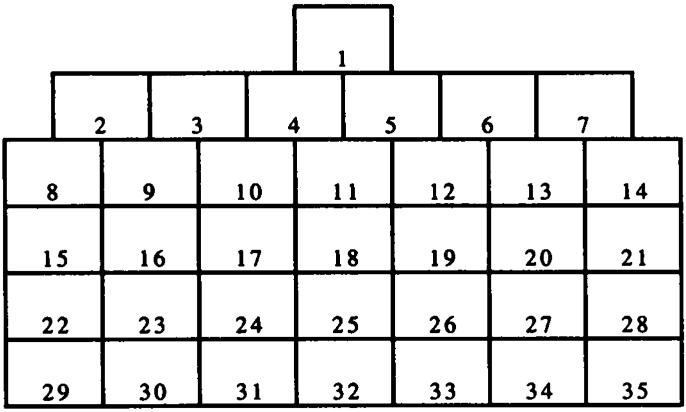
मैत्री-करुणा व अध्याशय से सिञ्चित
बोध्यापत्तिदेशना की भूमिका लिखने से
प्राप्त पुण्य से षड्गति के समस्त सत्त्व
प्राप्त करें पद पैंतीस उत्तम सुगतवत् ।

कार्तिक पूर्णिमा
दिनांक : ३० नवम्बर, २००१

लोसङ दोर्जे (रबलिङ)
शोध सहायक, शोध अनुभाग



མགོན་པོ་ཀླུ་སྒྲུབ་ལུགས་ཀྱི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་ལྷ་སངས་རྒྱས་སོ་ལྔའི་སྐུ་བརྙན།
आर्य नागार्जुन के मतानुसार आपत्तिदेशना के ३५ बुद्धों के चित्र



མགོན་པོ་ཀླུ་སྒྲུབ་ལུགས་ཀྱི་སངས་རྒྱས་སོ་ལྔའི་མཚན།

1 དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཤཱཀྱ་ཐུབ་པ། 2 རྡོ་རྗེ་སྙིང་པོ་རབ་ཏུ་འཇོམས་པ། 3 རིན་ཆེན་འོད་འཕྲོ། 4 ཀླུ་དབང་གི་རྒྱལ་པོ། 5 དཔའ་བོའི་སྡེ། 6 དཔའ་དགྱེས། 7 རིན་ཆེན་མེ། 8 རིན་ཆེན་ཟླ་འོད། 9 མཐོང་བ་དོན་ཡོད། 10 རིན་ཆེན་ཟླ་བ། 11 དྲི་མ་མེད་པ། 12 དཔའ་སྦྱིན། 13 ཚངས་པ། 14 ཚངས་པས་བྱིན། 15 ཆུ་ལྷ། 16 ཆུ་ལྷའི་ལྷ། 17 དཔལ་བཟང་། 18 ཙནྡན་དཔལ། 19 གཟི་བརྗིད་མཐའ་ཡས། 20 འོད་དཔལ། 21 མྱ་ངན་མེད་པའི་དཔལ། 22 སྲེད་མེད་ཀྱི་བུ། 23 མེ་ཏོག་དཔལ། 24 དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཚངས་པའི་འོད་ཟེར་རྣམ་པར་རོལ་པས་མངོན་པར་མཁྱེན་པ། 25 དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་པདྨའི་འོད་ཟེར་རྣམ་པར་རོལ་པས་མངོན་པར་མཁྱེན་པ། 26 ནོར་དཔལ། 27 དྲན་པའི་དཔལ། 28 མཚན་དཔལ་ཤིན་ཏུ་ཡོངས་གྲགས། 29 དབང་པོ་ཏོག་གི་རྒྱལ་མཚན་གྱི་རྒྱལ་པོ། 30 ཤིན་ཏུ་རྣམ་པར་གནོན་པའི་དཔལ། 31 གཡུལ་ལས་ཤིན་ཏུ་རྣམ་པར་རྒྱལ་བ། 32 རྣམ་པར་གནོན་པས་གཤེགས་པའི་དཔལ། 33 ཀུན་ནས་སྣང་བ་བཀོད་པའི་དཔལ། 34 རིན་ཆེན་པདྨས་རྣམ་པར་གནོན་པ། 35 དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་རི་དབང་གི་རྒྱལ་པོ།



ཆོས་རྗེ་ས་པཎ་ཀུན་དགའ་རྒྱལ་མཚན་ལུགས་ཀྱི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་ལྷ་སངས་རྒྱས་སོ་ལྔའི་སྐུ་བརྙན།

साक्य पण्डित कुनाग्यलछेन के मतानुसार आपत्तिदेशना के ३५ बुद्धों के चित्र

1	2	3	4	5
6	7	8	9	10
11	12	13	14	15
16	17	18	19	20
21	22	23	24	25
26	27	28	29	30
31	32	33	34	35

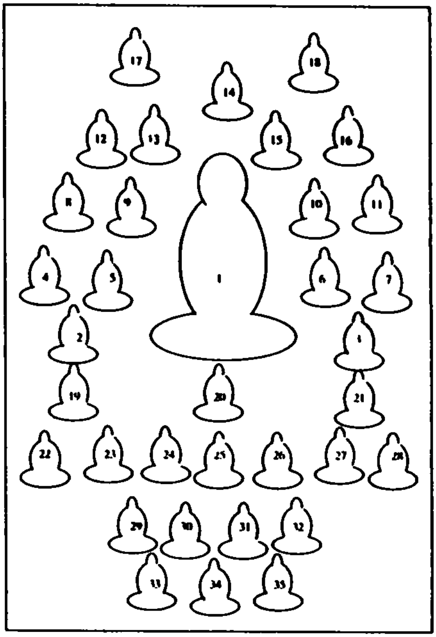
ཆོས་རྗེ་ས་པཎ་ཀུན་དགའ་རྒྱལ་མཚན་ལུགས་ཀྱི་སངས་རྒྱས་སོ་ལྔའི་མཚན།

1 དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཤཱཀྱ་ཐུབ་པ། 2 རྡོ་རྗེ་སྙིང་པོ་རབ་ཏུ་འཇོམས་པ། 3 རིན་ཆེན་འོད་འཕྲོ། 4 ཀླུ་དབང་གི་རྒྱལ་པོ། 5 དཔའ་བོའི་སྡེ། 6 དཔའ་དགྱེས། 7 རིན་ཆེན་མེ། 8 རིན་ཆེན་ཟླ་འོད། 9 མཐོང་བ་དོན་ཡོད། 10 རིན་ཆེན་ཟླ་བ། 11 དྲི་མ་མེད་པ། 12 དཔའ་སྦྱིན། 13 ཚངས་པ། 14 ཚངས་པས་བྱིན། 15 ཆུ་ལྷ། 16 ཆུ་ལྷའི་ལྷ། 17 དཔལ་བཟང་། 18 ཙནྡན་དཔལ། 19 གཟི་བརྗིད་མཐའ་ཡས། 20 འོད་དཔལ། 21 མྱ་ངན་མེད་པའི་དཔལ། 22 སྲེད་མེད་ཀྱི་བུ 23 མེ་ཏོག་དཔལ། 24 དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཚངས་པའི་འོད་ཟེར་རྣམ་པར་རོལ་པས་མངོན་པར་མཁྱེན་པ། 25 དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་པདྨའི་འོད་ཟེར་རྣམ་པར་རོལ་པས་མངོན་པར་མཁྱེན་པ། 26 ནོར་དཔལ། 27 དྲན་པའི་དཔལ། 28 མཚན་དཔལ་ཤིན་ཏུ་ཡོངས་གྲགས། 29 དབང་པོ་ཏོག་གི་རྒྱལ་མཚན་གྱི་རྒྱལ་པོ། 30 ཤིན་ཏུ་རྣམ་པར་གནོན་པའི་དཔལ། 31 གཡུལ་ལས་ཤིན་ཏུ་རྣམ་པར་རྒྱལ་བ། 32 རྣམ་པར་གནོན་པས་གཤེགས་པའི་དཔལ། 33 ཀུན་ནས་སྣང་བ་བཀོད་པའི་དཔལ། 34 རིན་ཆེན་པདྨས་རྣམ་པར་གནོན་པ། 35 དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་རི་དབང་གི་རྒྱལ་པོ།



རྗེ་ཙོང་ཁ་པའི་ལུགས་ཀྱི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་ལྷ་སངས་རྒྱས་སོ་ལྔའི་སྐུ་བརྙན།

जे चोङ्खापा के मतानुसार आपत्तिदेशना के ३५ बुद्धों के चित्र



ཁམས་གསུམ་ཆོས་ཀྱི་རྒྱལ་པོ་རྗེ་ཙོང་ཁ་པའི་ལུགས་ཀྱི་སངས་རྒྱས་སོ་ལྔའི་མཚན།

1 དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཤཱཀྱ་ཐུབ་པ། 2 དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་རྡོ་རྗེ་སྙིང་པོ་རབ་ཏུ་འཇོམས་པ། 3 དེ་བཞིན་
གཤེགས་པ་རིན་ཆེན་འོད་འཕྲོ། 4 དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཀླུ་དབང་གི་རྒྱལ་པོ། 5 དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དཔའ་
བོའི་སྡེ། 6 དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དཔའ་དགྱེས། 7 དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་རིན་ཆེན་མེ། 8 དེ་བཞིན་
གཤེགས་པ་རིན་ཆེན་ཟླ་འོད། 9 དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་མཐོང་བ་དོན་ཡོད། 10 དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་རིན་
ཆེན་ཟླ་བ། 11 དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དྲི་མ་མེད་པ། 12 དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དཔའ་སྦྱིན། 13 དེ་
བཞིན་གཤེགས་པ་ཚངས་པ། 14 དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཚངས་པས་བྱིན། 15 དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཆུ་ལྷ།
16 དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཆུ་ལྷའི་ལྷ། 17 དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དཔལ་བཟང་། 18 དེ་བཞིན་གཤེགས་
པ་ཙནྡན་དཔལ། 19 དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་གཟི་བརྗིད་མཐའ་ཡས། 20 དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་འོད་
དཔལ། 21 དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་མྱ་ངན་མེད་པའི་དཔལ། 22 དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་སྲེད་མེད་ཀྱི་བུ
23 དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་མེ་ཏོག་དཔལ། 24 དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཚངས་པའི་འོད་ཟེར་རྣམ་པར་རོལ་
པས་མངོན་པར་མཁྱེན་པ། 25 དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་པདྨའི་འོད་ཟེར་རྣམ་པར་རོལ་པས་མངོན་པར་མཁྱེན་པ།
26 དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ནོར་དཔལ། 27 དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དྲན་པའི་དཔལ། 28 དེ་བཞིན་
གཤེགས་པ་མཚན་དཔལ་ཤིན་ཏུ་ཡོངས་གྲགས། 29 དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དབང་པོ་ཏོག་གི་རྒྱལ་མཚན་གྱི་རྒྱལ་
པོ། 30 དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཤིན་ཏུ་རྣམ་པར་གནོན་པའི་དཔལ། 31 དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་གཡུལ་ལས་
ཤིན་ཏུ་རྣམ་པར་རྒྱལ་བ། 32 དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་རྣམ་པར་གནོན་པས་གཤེགས་པའི་དཔལ། 33 དེ་བཞིན་
གཤེགས་པ་ཀུན་ནས་སྣང་བ་བཀོད་པའི་དཔལ། 34 དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་རིན་ཆེན་པདྨས་རྣམ་པར་གནོན་པ།
35 དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་རི་དབང་གི་རྒྱལ་པོ།

གཞུང་དངོས་གཞི།

मूल ग्रन्थ

འཕགས་པ་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་འཕགས་པ་ཉེ་བར་འཁོར་གྱིས་ཞུས་པའི་མདོར་གསལ་བ་བཞུགས་སོ།།

༄༅། །དེ་ལ་བཤགས་པ་ནི་འདི་ཡིན་ཏེ། བདག་མིང་འདི་ཞེས་བགྱི་བ།

སངས་རྒྱས་ལ་སྐྱབས་སུ་མཆིའོ། །
ཆོས་ལ་སྐྱབས་སུ་མཆིའོ། །
དགེ་འདུན་ལ་སྐྱབས་སུ་མཆིའོ། །

དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དགྲ་བཅོམ་པ་ཡང་དག་པར་རྫོགས་པའི་སངས་རྒྱས་ཤཱཀྱ་[1] ཐུབ་པ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །རྡོ་རྗེ་[2]སྙིང་པོས་རབ་ཏུ་འཇོམས་པ་[3]ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །རིན་ཆེན་འོད་འཕྲོ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །ཀླུ་དབང་གི་རྒྱལ་པོ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དཔའ་བོའི་སྡེ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དཔའ་དགྱེས་[4]ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །རིན་ཆེན་མེ་[5]ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །རིན་ཆེན་ཟླ་འོད་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །མཐོང་བ་དོན་ཡོད་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །རིན་ཆེན་ཟླ་བ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དྲི་མ་མེད་པ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དཔས་བྱིན་[6]ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །ཚངས་པ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །ཚངས་པས་བྱིན་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །ཆུ་ལྷ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །ཆུ་ལྷའི་

---

1 ཤཱགྱ་- པེ།
2 རྡོ་རྗེའི་- སྡེ། ཅོ།
3 འཇོམ་- པེ།
4 དཔལ་དགྱེས་- སྡེ། ཅོ། སྣ། པེ་བཅས་སུ་གསལ་ཡང་ལེགས་སྦྱར་མ་དཔེར་ཝཱི་རནནྡི་སྟེ་དཔའ་དགྱེས་གསལ་བས་ལེགས་སྦྱར་གྱི་ཚིག་དོན་གྱི་འགྱུར་བཟང་ཞིང་ལེགས་པ་མངོན་སྟེ་བཞག
5 ལེགས་སྦྱར་མ་དཔེར་རཏྣ་ཤྲཱི་སྟེ་རིན་ཆེན་དཔལ་ཞེས་པའི་ཚིག་འགྱུར་ཡིན་ཡང་ཡོངས་གྲགས་རིན་ཆེན་མེ་གྲགས་པས་རང་སོར་བཞག
6 དཔལ་བྱིན་- པེ། སྣ། ལེགས་སྦྱར་ལྟར་ན་དཔའ་བྱིན་དགོས།

ལྷ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དཔལ་བཟངས་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །ཙན་དན་དཔལ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །གཟི་བརྗིད་མཐའ་ཡས་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །འོད་དཔལ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །མྱ་ངན་མེད་པའི་དཔལ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །སྲེད་མེད་ཀྱི་བུ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །མེ་ཏོག་དཔལ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཚངས་པའི་འོད་ཟེར་རྣམ་པར་རོལ་པས[1]མངོན་པར་མཁྱེན་པ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ།། དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་པད་མའི་འོད་ཟེར་རྣམ་པར་རོལ་པས་[2]མངོན་པར་མཁྱེན་པ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །ནོར་དཔལ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དྲན་པའི་དཔལ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །མཚན་དཔལ་ཤིན་ཏུ་ཡོངས་བསྒྲགས་[3]ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དབང་པོ་ཏོག་གི་རྒྱལ་མཚན་གྱི་རྒྱལ་པོ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །ཤིན་ཏུ་རྣམ་པར་གནོན་པའི་དཔལ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །གཡུལ་ལས་ཤིན་ཏུ་རྣམ་པར་རྒྱལ་བ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །རྣམ་པར་གནོན་པས་གཤེགས་པ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །ཀུན་ནས་སྣང་བ་བཀོད་པའི་དཔལ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །རིན་ཆེན་པད་མས་རྣམ་པར་གནོན་པ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དགྲ་བཅོམ་པ་ཡང་དག་པར་རྫོགས་པའི་སངས་རྒྱས་རིན་པོ་ཆེའི་པད་མ[4]ལ་རབ་ཏུ་བཞུགས་པ་རི་དབང་གི་རྒྱལ་པོ[5]ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ།།

དེ་དག་ལ་སོགས་པ་[6]ཕྱོགས་བཅུའི་འཇིག་རྟེན་གྱི་ཁམས་ཐམས་ཅད་ན་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དགྲ་བཅོམ་པ་ཡང་དག་པར་རྫོགས་པའི་སངས་རྒྱས་ཇི་སྙེད་ཅིག་བཞུགས

1 རོལ་བ་- པེ། རོལ་པ་- སྣ།

2 རོལ་བ་- པེ། རོལ་པ།

3 ཡོངས་སྒྲགས་- པེ།

4 པད་མོ་- སྣ།

5 རི་དབང་རྒྱལ་པོ་- པེ།

6 དེ་དག་ལས་སྩོགས་པ་- པེ།

དེ་འཚོ་ཞིང་གཞེས་པའི[1]སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་དེ་དག་ཐམས་ཅད་བདག་ལ་དགོངས་སུ་གསོལ། བདག་གིས་སྐྱེ་བ་འདི་དང་། སྐྱེ་བ་ཐོག་མ་དང་། ཐ་མ་མ་མཆིས་པ་ནས་འཁོར་བ་ན་[2]འཁོར་བའི་སྐྱེ་བ་གཞན་དག་ཏུ་སྡིག་པའི་ལས་བགྱིས་པ་དང་། བགྱིད་དུ་སྩལ་བ་དང་། བགྱིད་པ་ལ་རྗེས་སུ་ཡི་རང་བའམ།[3] མཆོད་རྟེན་གྱི་དཀོར་རམ། དགེ་འདུན་གྱི་དཀོར་རམ། ཕྱོགས་བཞིའི་དགེ་འདུན་གྱི་དཀོར་ཕྲོགས་པ་དང་།[4] འཕྲོག་ཏུ་སྩལ་བའམ།[5] འཕྲོག་པ་[6]ལ་རྗེས་སུ་ཡི་རང་བའམ།[7] མཚམས་མ་མཆིས་པ་ལྔའི་ལས་བགྱིས་པ་དང་། བགྱིད་དུ་སྩལ་བ་དང་། བགྱིད་པ་ལ་རྗེས་སུ་ཡི་རང་བའམ།[8] མི་དགེ་བ་བཅུའི་ལས་ཀྱི་ལམ་ཡང་དག་པར་བླང་བ་ལ་ཞུགས་པ་དང་། འཇུག་ཏུ་སྩལ་བ་དང་། འཇུག་པ་ལ་རྗེས་སུ་ཡི་རང་བའམ།[9] ལས་ཀྱི་སྒྲིབ་པ་གང་གིས་བསྒྲིབས་ནས་བདག་སེམས་ཅན་[10]དམྱལ་བར་མཆི་བའམ། དུད་འགྲོའི་སྐྱེ་གནས་སུ་མཆི་བའམ། ཡི་དྭགས་ཀྱི་ཡུལ་དུ་མཆི་བའམ། ཡུལ་མཐའ་འཁོབ་ཏུ་སྐྱེ་བའམ། ཀླ་ཀློར་སྐྱེ་བའམ། ལྷ་ཚེ་རིངས་པོ་རྣམས་སུ་སྐྱེ་བའམ། དབང་པོ་མ་ཚང་བར་འགྱུར་

1 མཆོ་ཞིང་བཞེས་པའི་- པེ། འཚོ་ཞིང་བཞེས་པའི་- སྣ།

2 འཁོར་བ་ནས་- སྣ།

3 ཡིད་རང་བའམ་- པེ། སྣ།

4 མཆོད་རྟེན་གྱི་སྐོར་རམ། དགེ་འདུན་གྱི་སྐོར་རམ། ཕྱོགས་བཞིའི་དགེ་འདུན་གྱི་སྐོར་ཕྲོགས་པ་དང་།- པེ།

5 སྩལ་བ་དང་- སྣ། པེ།

6 འཕྲོག་པ་- སྣ།

7 ཡིད་རང་བ་- པེ། སྣ།

8 ཡིད་རང་བ་- པེ། སྣ།

9 ཡིད་རང་བ་- པེ། སྣ།

10 གང་གིས་སྒྲིབས་ནས་བདག་སེམས་ཅན་- པེ།

བའམ། ལྷ་བ་ལོག་པ་འཛིན་པར་འགྱུར་བའམ། སངས་རྒྱས་འབྱུང་བ་ལ་མཉེས་པར་མི་བགྱིད་པར་འགྱུར་བའི་ལས་ཀྱི་སྒྲིབ་པ་གང་ལགས་པ་དེ་དག་ཐམས་ཅད་སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་ཡེ་ཤེས་སུ་གྱུར་པ། སྤྱན་དུ་གྱུར་པ། དཔང་དུ་གྱུར་པ། ཚད་མར་གྱུར་པ། མཁྱེན་པ།[1] གཟིགས་པ་དེ་དག་གི་སྤྱན་སྔར་མཐོལ་ལོ། །འཆགས་སོ།[2] །མི་འཆབ་བོ།[3] །སླན་ཆད་ཀྱང་སྡོམ་པར་བགྱིད་ལགས་སོ། །

སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་དེ་དག་བདག་ལ་དགོངས་སུ་གསོལ། བདག་གིས་[4]སྐྱེ་བ་འདི་དང་། སྐྱེ་བ་ཐོག་མ་དང་ཐ་མ་མ་མཆིས་པ་ནས་འཁོར་བ་ན་[5]འཁོར་བའི་སྐྱེ་བ་[6]གཞན་དག་ཏུ་སྦྱིན་པ་ཐ་ན་དུད་འགྲོའི་སྐྱེ་གནས་སུ་སྐྱེས་པ་ལ་ཟས་ཁམ་གཅིག་ཙམ་[7]སྩལ་བ་གང་ལགས་པ་དང་། བདག་གིས་[8]ཚུལ་ཁྲིམས་བསྲུངས་པའི་དགེ་བའི་རྩ་བ་གང་ལགས་པ་དང་།[9] བདག་གིས་ཚངས་པར་སྤྱོད་པ་ལ་གནས་པའི་དགེ་བའི་རྩ་བ་གང་ལགས་པ་དང་། བདག་གིས་སེམས་ཅན་ཡོངས་སུ་སྨིན་པར་བགྱིས་པའི་དགེ་བའི་རྩ་བ་གང་ལགས་པ་དང་། བདག་གི་བྱང་ཆུབ་ཀྱི་སེམས་ཀྱི་དགེ་བའི་རྩ་བ་གང་ལགས་པ་དང་། བདག་གི་བླ་ན་མེད་པའི་ཡེ་ཤེས་ཀྱི་དགེ་བའི་རྩ་བ་གང་ལགས་པ་དེ་དག་ཐམས་ཅད་གཅིག་ཏུ་བསྡུས་ཤིང་བསྒྲུམས་

---

1 མཁྱེན་པར།- སྣ།

2 བཤགས་སོ།- པེ།

3 མི་འཆབ་བོ། མི་སྦེད་དོ།- སྣ།

4 བདག་གི་- པེ།

5 འཁོར་བ་ནས་- སྣ།

6 སྐྱེ་བའི་- པེ།

7 ཅིག་ཙམ་- པེ། སྣ།

8 བདག་གི་- པེ། བདག་གི་- སྣར་ཐང་དཔར་མར་མི་སྣང་།

9 ཚུལ་ཁྲིམས་བསྲུངས་པ་གང་ལགས་པ་དང་- སྣ།

དེ་[1]བསྒོམས་[2]ནས་བླ་ན་མ་མཆིས་པ་[3]དང་། གོང་ན་མ་མཆིས་པ་དང་། གོང་མའི་ཡང་གོང་མར་ཡོངས་སུ་བསྔོ་བས་བླ་ན་མེད་པ་ཡང་དག་པར་རྫོགས་པའི་བྱང་ཆུབ་ཏུ་ཡོངས་སུ་བསྔོ་བར་བགྱིའོ།།

ཇི་ལྟར་འདས་པའི་སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་རྣམས་ཀྱིས་ཡོངས་སུ་བསྔོས་པ་དང་། ཇི་ལྟར་མ་འོངས་པའི་སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་རྣམས་ཡོངས་སུ་བསྔོ་བར་འགྱུར་བ་དང་། ཇི་ལྟར་ད་ལྟར་བྱུང་བའི་སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་རྣམས་ད་ལྟར་ཡོངས་སུ་སྔོ་[4]བར་མཛད་པ་དེ་ལྟར་[5]བདག་གིས་ཀྱང་ཡོངས་སུ་བསྔོ་བར་བགྱིའོ།།

སྡིག་པ་ཐམས་ཅད་འཆགས་སོ།[6] །བསོད་ནམས་ཐམས་ཅད་ཀྱི་[7]རྗེས་སུ་ཡི་རང་ངོ་།[8] །སངས་རྒྱས་ཐམས་ཅད་ལ་གསོལ་བ་འདེབས་སོ། །བདག་གི་[9]ཡེ་ཤེས་བླ་ན་མེད་པའི་མཆོག་ཏུ་གྱུར་ཅིག

མི་མཆོག་རྒྱལ་བ་གང་དག་ད་ལྟར་བཞུགས་པ་དང་། །
གང་དག་འདས་པ་དག་དང་དེ་བཞིན་གང་མ་བྱོན། །

---

1 སྒྲུམས་དེ་- པེ། སྣ།
2 སྒོམ་- སྣ།
3 བླ་ན་མས་མཆིས་- སྣ།
4 བསྔོ་- པེ། སྣ།
5 ད་ལྟར་- པེ་ཅིང་དང་སྣར་ཐང་དཔར་མར་མི་སྣང་།
6 བཤགས་སོ།- སྣ། པེ།
7 ཐམས་ཅད་རྗེས་སུ་- སྣ། ཐམས་ཅད་ལ་- སྣ།
8 ཡིད་རང་ངོ་།- སྣ།
9 བདག་གིས་- པེ།

ཡོན་དན་[1]བསྔགས་པ་མཐའ་ཡས་རྒྱ་མཚོ་འདྲ་ཀུན་ལ། །
ཐལ་མོ་སྦྱར་བ་བགྱིས་ཏེ་སྐྱབས་སུ་ཉེ་བར་མཆིའོ།[2] །

(འཕགས་པ་ཕུང་པོ་གསུམ་པ་ཞེས་བྱ་བ་ཐེག་པ་ཆེན་པོའི་མདོ་འཕགས་པ་ཉེ་བ
འཁོར་གྱི་ཞུས་པའི་མདོ་ལས་ཕྱུང་བ་རྫོགས་སོ།། །།)

1 ཡོན་གདན་- སྣ།
2 མཆི།- སྣ།

འཕགས་པ་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་བསླབ་བཏུས་སུ་བཞུགས་པ་བཞུགས་སོ།།

༄༅། །དེ་ལ་ལྟུང་བ་བཤགས་པ་ནི་འདི་ལྟ་སྟེ། བདག་མིང་འདི་ཞེས་བགྱི་བ།

སངས་རྒྱས་ལ་སྐྱབས་སུ་མཆིའོ། །
ཆོས་ལ་སྐྱབས་སུ་མཆིའོ། །
དགེ་འདུན་ལ་སྐྱབས་སུ་མཆིའོ། །

དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དགྲ་བཅོམ་པ་ཡང་དག་པར་རྫོགས་པའི་སངས་རྒྱས་ཤཱཀྱ་ཐུབ་པ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །རྡོ་རྗེ་སྙིང་པོས[1]རབ་ཏུ་འཇོམས་པ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ།། རིན་ཆེན་འོད་འཕྲོ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །ཀླུ་དབང་གི་རྒྱལ་པོ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དཔའ་བོའི་སྡེ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དཔལ་དགྱེས་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །རིན་ཆེན་མེ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །རིན་ཆེན་ཟླ་འོད་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །མཐོང་བ་དོན་ཡོད་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །རིན་ཆེན་ཟླ་བ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དྲི་མ་མེད་པ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དཔས་བྱིན་[2]ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །ཚངས་པ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །ཚངས་པས་བྱིན་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །ཆུ་ལྷ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །ཆུ་ལྷའི་ལྷ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དཔལ་བཟང་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །ཙནྡན་དཔལ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །གཟི་བརྗིད་མཐའ་ཡས་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །འོད་དཔལ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ།། མྱ་ངན་མེད་པའི་དཔལ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ།། སྲེད་མེད་ཀྱི་བུ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །མེ་ཏོག་དཔལ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཚངས་པའི་འོད་ཟེར་རྣམ་པར་རོལ་པས་མངོན་པར་མཁྱེན་པ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་པདྨའི་འོད་ཟེར་རྣམ་པར་རོལ་པས་མངོན་པར་མཁྱེན་པ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ།།

---

1 སྙིང་པོ་- པེ།

2 དཔལ་བྱིན་- པེ།

ནོར་དཔལ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དྲན་པའི་དཔལ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །མཚན་དཔལ་ཤིན་ཏུ་ཡོངས་བསྒྲགས་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དབང་པོ་ཏོག་གི་རྒྱལ་མཚན་གྱི་རྒྱལ་པོ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །ཤིན་[1]ཏུ་རྣམ་པར་གནོན་པའི་དཔལ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །གཡུལ་ལས་ཤིན་ཏུ་རྣམ་པར་རྒྱལ་བ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །རྣམ་པར་གནོན་པས་གཤེགས་པ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །ཀུན་ནས་སྣང་བ་བཀོད་པའི་དཔལ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །རིན་ཆེན་པད་མོས་རྣམ་པར་གནོན་པ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དགྲ་བཅོམ་པ་ཡང་དག་པར་རྫོགས་པའི་སངས་རྒྱས་རིན་པོ་ཆེའི་པདྨ་ལ་རབ་ཏུ་བཞུགས་ཏེ་རི་དབང་གི་རྒྱལ་པོ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ།།

དེ་དག་ལ་སོགས་པ་[2]འཇིག་རྟེན་གྱི་ཁམས་ཐམས་ཅད་ན་[3]དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དགྲ་བཅོམ་པ་ཡང་དག་པར་རྫོགས་པའི་སངས་རྒྱས་ཇི་སྙེད་ཅིག་བཞུགས་ཏེ་[4]འཚོ་ཞིང་གཞེས་པའི་སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་དེ་དག་བདག་ལ་དགོངས་སུ་གསོལ། གང་[5]བདག་གིས་[6]སྐྱེ་བ་འདི་དང་། སྐྱེ་བ་[7]གཞན་[8]དག་[9]ཐོག་མ་མ་མཆིས་པའི་[10]སྐྱེ་བ་ནས་འཁོར་བར་འཁོར་བ་ན། སྡིག་པའི་ལས་བགྱིས་པ་དང་། བགྱིད་དུ་སྩལ་བ་དང་། བགྱིད་པ་ལ་རྗེས་སུ་ཡི་རང་བའམ། མཆོད་རྟེན་གྱི་དང་དགེ་

1 གཤིན་- གསེར་བྲིས།

2 དེ་དག་ལ་སོགས་པ་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་- པེ།

3 འཇིག་རྟེན་གྱི་ཁམས་ཐམས་ཅད་ན་- གསེར་བྲིས་སུ་མི་སྣང་།

4 ཇི་སྙེད་ཅིག་འཇིག་རྟེན་གྱི་ཁམས་ཐམས་ཅད་ན་བཞུགས་ཏེ་- གསེར་བྲིས།

5 གང་- གསེར་བྲིས་སུ་མི་སྣང་།

6 བདག་གི་- གསེར། པེ།

7 སྐྱེ་བའམ་- པེ།

8 སྐྱེ་བ་གཞན་དང་- པེ།

9 གཞན་དག་དང་- གསེར་བྲིས།

10 ཐོག་མ་མ་མཆིས་པའི།- གསེར་བྲིས།

འདུན་གྱི་དང་ཕྱོགས་བཞིའི་དགེ་འདུན་གྱི་ནོར་ཕྲོགས[1]པ་དང་། འཕྲོག་ཏུ་སྩལ་བ་དང་། འཕྲོག་པ་ལ་རྗེས་སུ་ཡི་རང་བར་གྱུར་པ་དང་། མཚམས་མ་མཆིས་པའི་ལས་བགྱིས་པ་དང་། བགྱིད་དུ་སྩལ་བ་དང་། བགྱིད་པ་ལ་རྗེས་སུ་ཡི་རང་བ་གྱུར་པ་དང་། མི་དགེ་བ་བཅུའི་ལས་ཀྱི་ལམ་བཟུང་སྟེ་སྤྱོད་པ་དང་སྤྱོད་དུ་སྩལ་བ་དང་རྗེས་སུ་ཡི་རང་བར་གྱུར་པ་དང་། ལས་ཀྱི་སྒྲིབ་པ་གང་གིས་བསྒྲིབས་ནས་[2] སེམས་ཅན་དམྱལ་བར་མཆི་བའམ། དུད་འགྲོའི་སྐྱེ་གནས་དང་གཤིན་རྗེའི་ཡུལ་དུ་མཆི་བའམ། ཡུལ་མཐའ་འཁོབ་ཀྱི་ཀླ་ཀློ་རྣམས་སུ་སྐྱེ་བར་འགྱུར་བའམ། ལྷ་ཚེ་རིང་པོར་སྐྱེ་བར་འགྱུར[3]བའམ།[4] དབང་པོ་མ་ཚང་བར་འགྱུར་བ་དང་། ལོག་པར་ལྟ་བ་ཡོངས་སུ་འཛིན་པ་དང་། སངས་རྒྱས་འབྱུང་བ་ལ་མཉེས་པར་མི་བགྱིད་པའི་ལས་ཀྱི་སྒྲིབ་པ[5]དེ་དག་ཐམས་ཅད་[6]ཡེ་ཤེས་སུ་གྱུར་པ། སྤྱན་དུ་གྱུར་པ། དཔང་དུ་གྱུར་པ།[7] ཚད་མར་གྱུར་[8]པའི་སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་མཁྱེན་ཅིང་གཟིགས་པ་དེ་དག་གི་སྤྱན་སྔར་སོ་སོར་བཤགས་སོ། །མཐོལ་ལོ། །མི་འཆབ་བོ། །སླན་ཆད་ཀྱང་སྡོམ་པར་བགྱིའོ། །

སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་དེ་དག་བདག་ལ་དགོངས་སུ་གསོལ། གང་བདག་གིས་སྐྱེ་བ་འདི་དང་། སྐྱེ་བ་གཞན་དང་ཐོག་མ་མ་མཆིས་པའི་སྐྱེ་བ་ནས་

---

1 ཕྲོག་པ་- གསེར་བྲིས།
2 བསྒྲིབས་ཏེ་- གསེར། པེ།
3 འགྱུར་- གསེར་བྲིས་སུ་མི་སྣང་།
4 ལྷ་ཚེ་རིང་པོར་སྐྱེ་བའམ་- པེ།
5 སྒྲིབས་པ་- པེ།
6 དེ་ཐམས་ཅད་- པེ།
7 དཔང་དུ་གྱུར་པ།- གསེར་བྲིས།
8 ཚད་མར་གྱུར་ཏེ།- གསེར། པེ།

འཁོར་བར་འཁོར་བའི་ཚེ།[1] ཐ་ན་དུད་འགྲོའི་སྐྱེ་གནས་སུ་གྱུར་པ་ལ་ཟན་ཆང་ཅིག་ཙམ་[2]སྦྱིན་པ་སྩལ་བ་དང་། ཚུལ་ཁྲིམས་བསྲུངས་པར་གྱུར་པ་དང་། གང་བདག་གིས་ཚངས་པར་སྤྱད་པར་གནས་པའི་དགེ་བའི་རྩ་བ་དང་། གང་[3]བདག་གིས་སེམས་ཅན་ཡོངས་སུ་སྨིན་པར་བགྱིས་པའི་དགེ་བའི་རྩ་བ་དང་། གང་བདག་གིས་བྱང་ཆུབ་ཀྱི་སེམས་ཀྱི་དགེ་བའི་རྩ་བ་དང་། གང་བདག་གིས་བླ་ན་མེད་པའི་ཡེ་ཤེས་ཀྱི་དགེ་བའི་རྩ་བ་དེ་དག་ཐམས་ཅད་[4]གཅིག་ཏུ་བསྡུས། གཅིག་ཏུ་སྒྲུངས་བཙལ་ཏེ།[5] མངོན་པར་བསྡུས་ནས་བླ་མའི་ཡང་བླ་མ་བླ་ན་མེད་པ་ཡང་དག་པར་རྫོགས་པའི་བྱང་ཆུབ་ཏུ་ཡོངས་སུ་བསྔོ་བས་ཡོངས་སུ་བསྔོ་བར་བགྱིའོ།།

ཇི་ལྟར་འདས་པའི་སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་རྣམས་ཀྱིས་ཡོངས་སུ་བསྔོས་པ་དང་། ཇི་ལྟར་མ་བྱོན་པའི་སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་རྣམས་ཡོངས་སུ་བསྔོ་བར་འགྱུར་བ་དང་། ཇི་ལྟར་ད་ལྟར་བྱུང་བའི་སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་རྣམས་[6]ཡོངས་སུ་བསྔོ་བ་དེ་བཞིན་དུ་[7]བདག་གིས་ཀྱང་ཡོངས་སུ་བསྔོའོ།།

སྡིག་པ་ཐམས་ཅད་སོ་སོར་བཤགས་སོ། །བསོད་ནམས་ཐམས་ཅད་ཀྱི་རྗེས་སུ་ཡི་རང་ངོ་། །སངས་རྒྱས་ཐམས་ཅད་ལ་གསོལ་བ་གདབ་བོ། །བདག་བླ་ན་མེད་པའི་ཡེ་ཤེས་སུ་གྱུར་ཅིག

---

1 འཁོར་བའི་ཚེ་ན།- ཡེ།

2 ཟན་ཆངས་གཅིག་ཙམ་- ཡེ།

3 གང་- གསེར་པེ་གཉིས་སུ་མི་སྣང་།

4 དེ་ཐམས་ཅད་- ཡེ། གསེར།

5 བཙལ་ཏེ་- ཡེ།

6 རྣམས་སུ་- གསེར།

7 བསྔོ་བ་བཞིན་དུ་- གསེར།

མི་མཆོག་རྒྱལ་བ་གང་དག་ད་ལྟར་བཞུགས་པ་དང་། །
གང་དག་འདས་པ་དག་དང་དེ་བཞིན་གང་མ་བྱོན། །
ཡོན་ཏན་བསྔགས་པ་མཐའ་ཡས་རྒྱ་མཚོ་འདྲ་ཀུན་ལ། །
ཐལ་མོ་སྦྱར་བ་[1]བགྱིས་ཏེ་སྐྱབས་སུ་ཉེ་བར་མཆི། །

(འཕགས་པ་ཕུང་པོ་གསུམ་པ་ཞེས་བྱ་བ་ཐེག་པ་ཆེན་པོའི་མདོ་སློབ་དཔོན་ཞི་བ་ལྷས་མཛད་པའི་བསླབ་པ་ཀུན་ལས་བཏུས་པར་བཞུགས་པ་རྫོགས་སོ།།) །།

1 བར་- པེ།

སློབ་དཔོན་པེར་ཙན་རཀྵིཏས།

ཕྱིག་པ་བཤགས་དང་སངས་རྒྱས་ལ། །
གསོལ་འདེབས་བསོད་ནམས་རྣམས་ལ་ནི། །
རྗེས་ཡི་རང་རྣམས་བསོད་ནམས་ཀྱི། །
ཕུང་པོ་ཡིན་ཕྱིར་ཕུང་པོ་གསུམ། །

བསླབ་བྱ་མེ་ཏོག་གི་ཕྲེ་མ།

འཕགས་པ་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་བོད་ནང་ཡོངས་གྲགས་འདོན་སྒྲོལ་ཁག་ཅིག་བཞུགས་སོ།།

༄༅། །ན་མོ། བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་ལྟུང་བ་བཤགས་པ།[1] བདག་མིང་འདི་ཞེས་བགྱི་བ།

དུས་རྟག་ཏུ་བླ་མ་ལ་སྐྱབས་སུ་མཆིའོ།[2] །
སངས་རྒྱས་ལ་སྐྱབས་སུ་མཆིའོ། །
ཆོས་ལ་སྐྱབས་སུ་མཆིའོ། །
དགེ་འདུན་ལ་སྐྱབས་སུ་མཆིའོ། །

སྟོན་པ་བཅོམ་ལྡན་འདས་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དགྲ་བཅོམ་པ་ཡང་དག་པར་རྫོགས་པའི་སངས་རྒྱས་ཤཱཀྱ་ཐུབ་པ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་[3]རྡོ་རྗེ་སྙིང་པོས་རབ་ཏུ་འཇོམས་པ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་རིན་ཆེན་འོད་འཕྲོ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཀླུ་དབང་གི་རྒྱལ་པོ་ལ་ཕྱག་འཚལ

---

1 འདི་ལ་བཤགས་པ་ནི་འདི་ལྟ་སྟེ- ཉེར་འཁོར་མདོ། འདི་ལ་ལྟུང་བ་བཤགས་པ་ནི་འདི་ལྟ་སྟེ- བསླབ་བཏུས།

2 ཉེར་འཁོར་མདོ་དང་བསླབས་བཏུས་གཉིས་སུ་མི་སྣང་།

3 བོད་གངས་ཅན་གྱི་ལྗོངས་སུ་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་འདོན་སྐབས་འཕགས་པ་ཉེ་བར་འཁོར་གྱིས་ཞུས་པའི་མདོ་དང་། བསླབ་བཏུས་གཉིས་ཀྱི་ནང་བཞུགས་པ་ལྟར་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་མ་སྤྱར་བར་འདོན་སྲོལ་ཞིག་དང་། རྗེ་རིན་པོ་ཆེའི་སྐབས་ནས་དར་བའི་སངས་རྒྱས་སོ་ལྔ་ཚང་མར་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་སྦྱར་ནས་འདོན་སྲོལ་ཁག་གཉིས་འདུག་པས་གོང་སྨོས་ཉེར་འཁོར་མདོ་དང་བསླབ་བཏུས་ཀྱི་ཁུངས་གཉིས་པོ་དེར་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་བཞི་ཙམ་ལ་མ་གཏོགས་ལྷག་མ་རྣམས་ལ་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་སྦྱར་བ་མ་མཆིས་ཀྱང་། བཀའ་བསྟན་གཞུང་ཆེན་དུ་མ་ཞིག་ཏུ་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དེ་དག་ལས་ཕལ་མོ་ཆེར་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་སྦྱར་བ་སྣང་བ་དང་། རྗེའི་གཟིགས་སྣང་དུའང་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་སྦྱར་དགོས་པ་སྣང་བ་བཅས་ལ་བརྟེན། དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་སྦྱོར་དགོས་པའི་རྒྱུ་མཚན་བཅས་ཀྱི་སྒོར་རྒྱས་པ་གླེང་བརྗོད་དུ་གཟིགས་པ་འཚལ།

ལོ། །དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དཔའ་བོའི་སྡེ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དཔལ་དགྱེས་[1]ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་རིན་ཆེན་མེ་[2]ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་རིན་ཆེན་ཟླ་འོད་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་མཐོང་བ་དོན་ཡོད་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་རིན་ཆེན་ཟླ་བ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དྲི་མ་མེད་པ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ལ་དཔའ་བྱིན་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཚངས་པ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཚངས་པས་སྦྱིན་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཆུ་ལྷ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཆུ་ལྷའི་ལྷ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དཔལ་བཟང་[3]ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཙནྡན་དཔལ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་གཟི་བརྗིད་མཐའ་ཡས་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་འོད་དཔལ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་མྱ་ངན་མེད་པའི་དཔལ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་སྲེད་མེད་ཀྱི་བུ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་མེ་ཏོག་དཔལ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཚངས་པའི་འོད་ཟེར་རྣམ་པར་རོལ་བས་མངོན་པར་མཁྱེན་པ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ།། དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་པདྨའི་འོད་ཟེར་རྣམ་པར་རོལ་བས་མངོན་པར་མཁྱེན་པ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ནོར་དཔལ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དྲན་པའི་དཔལ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་མཚན་དཔལ་ཤིན་ཏུ་ཡོངས་གྲགས་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དབང་པོ

1 ལེགས་སྦྱར་མ་དཔེར་དཔའ་དགྱེས་གསལ།

2 ལེགས་སྦྱར་མ་དཔེར་རིན་ཆེན་དཔལ་གསལ་མོད་ཀྱང་སློབ་དཔོན་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱི་འགྲེལ་པ་དང་བོད་འགྲེལ་ཕྱི་འགྱུར་ཡོངས་ལ་རིན་ཆེན་མེ་གསལ་བས་རང་སོར་བཞག

3 བཟངས་- ཉེར་འཁོར་མདོ།

དོག་གི་རྒྱལ་མཚན་གྱི་རྒྱལ་པོ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཤིན་དུ་རྣམ་པར་གནོན་པའི་དཔལ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་གཡུལ་ལས་ཤིན་དུ་རྣམ་པར་རྒྱལ་བ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་རྣམ་པར་གནོན་པས་གཤེགས་པའི་[1]དཔལ[2]ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཀུན་ནས་སྣང་བ་བཀོད་པའི་དཔལ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་རིན་ཆེན་པདྨ[3]རྣམ་པར་གནོན་པ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དགྲ་བཅོམ་པ་ཡང་དག་པར་རྫོགས་པའི་སངས་རྒྱས་རིན་པོ་ཆེ[4]དང་[5]པདྨ་ལ་རབ་ཏུ་བཞུགས་པ[6] རི་དབང་གི་རྒྱལ་པོ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ།།

དེ་དག་ལ་སོགས་པ་ཕྱོཀ་བཅུའི་[7]འཇིག་ཧྟེན་གྱི་ཁམས་ཐམས་ཅད་ན་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དགྲ་བཅོམ་པ་ཡང་དག་པར་རྫོགས་པའི་སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་གང་ཇི་སྙེད་ཅིག་[8]བཞུགས་ཏེ་འཚོ་ཞིང་གཞེས་པའི་སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་དེ་དག་ཐམས་ཅད་[9]བདག་ལ་དགོངས་སུ་གསོལ། བདག་[10]གིས་སྐྱེ་བ་འདི་དང་། སྐྱེ་བ་[11]ཐོག་མའི་ཐ་མ་མ་མཆིས་པ་ནས་འཁོར་བ་ན་འཁོར་བའི་སྐྱེ་གནས་ཐམས་

1 པ།- ཉེར་འཁོར་མདོ།
2 དཔལ་- མདོ་དང་བསླབ་བཏུས་སུ་མི་གསལ།
3 པདྨས་- བསླབ་བཏུས།
4 ཆེའི་- ཉེར་འཁོར་མདོ།
5 དང་- ཉེར་འཁོར་མདོ་དང་བསླབ་བཏུས་སུ་མི་སྣང་།
6 བཞུགས་དེ་- ཉེར་འཁོར་མདོ། བསླབ་བཏུས།
7 ཕྱོགས་བཅུའི་- བསླབ་བཏུས་སུ་མི་གསལ།
8 ཅིག་- བསླབ་བཏུས་སུ་མི་གསལ།
9 ཐམས་ཅད་- བསླབ་བཏུས་སུ་མི་གསལ།
10 གང་བདག་- བསླབ་བཏུས།
11 གཞན་དག་ཐོག་མ་མ་མཆིས་པའི་སྐྱེ་བ་ནས།- བསླབ་བཏུས།

ཅན་དུ་[1]སྡིག་པའི་ལས་བགྱིས་པ་དང་། བགྱིད་དུ་བསྐུལ་བ་དང་། བགྱིད་པ་ལ་རྗེས་སུ་ཡི་རང་བའམ།[2] མཆོད་རྟེན་གྱི་[3]དཀོར་རམ། དགེ་འདུན་གྱི་དཀོར་རམ་ཕྱོགས་བཅུའི་[4]དགེ་འདུན་གྱི་དཀོར་ཕྲོགས་པ་དང་། འཕྲོག་ཏུ་བཅུག་[5]པ་དང་། འཕྲོག་པ་ལ་རྗེས་སུ་ཡི་རང་བའམ།[6] མཚམས་མ་མཆིས་པ་ལྔའི་[7]ལས་བགྱིས་པ་དང་། བགྱིད་དུ་བསྐུལ་བ་དང་། བགྱིད་པ་ལ་རྗེས་སུ་ཡི་རང་བའམ།[8] མི་དགེ་བ་བཅུའི་ལས་ཀྱི་ལམ་ཡང་དག་པར་བླང་བ་ལ་ཞུགས་པ་དང་། འཇུག་ཏུ་བསྐུལ་བ་དང་། འཇུག་པ་ལ་རྗེས་སུ་ཡི་རང་བའམ།[9] ལས་ཀྱི་སྒྲིབ་པ་གང་གིས་བསྒྲིབས་ནས་བདག་[10]སེམས་ཅན་དམྱལ་བར་མཆི་བའམ། དུད་འགྲོའི་སྐྱེ་གནས་སུ་[11]མཆི་བའམ། ཡི་དྭགས་ཀྱི་ཡུལ་དུ་མཆི་བའམ།[12] ཡུལ་མཐའ་

---

1 སྐྱེ་བ་གཞན་དག་ཏུ།- ཉེར་འཁོར་མདོ།
2 རྗེས་སུ་ཡི་རང་དང་།- བསླབ་བཏུས།
3 མཆོད་རྟེན་གྱི་དང་། དགེ་འདུན་གྱི་དང་། ཕྱོགས་བཞིའི་དགེ་འདུན་གྱི་ནོར་ཕྲོགས་པ་དང་།- བསླབ་བཏུས།
4 ཕྱོགས་བཞི་- ཉེར་འཁོར་མདོ། བསླབ་བཏུས།
5 འཕྲོག་ཏུ་སྐུལ་བའམ།- ཉེར་འཁོར་མདོ། བསླབ་བཏུས།
6 རྗེས་སུ་ཡི་རང་བར་གྱུར་པ་དང་།- བསླབ་བཏུས།
7 ལྔའི་- བསླབ་བཏུས་སུ་མི་གསལ།
8 ཡི་རང་བར་གྱུར་པ་དང་།- བསླབ་བཏུས།
9 ལས་ཀྱི་ལམ་བཟུང་སྟེ་སྤྱོད་པ་དང་། སྤྱོད་དུ་སྐུལ་བ་དང་། རྗེས་སུ་ཡི་རང་བར་གྱུར་པ་དང་།- བསླབ་བཏུས།
10 བདག་- བསླབ་བཏུས་སུ་མི་གསལ།
11 དུད་འགྲོའི་སྐྱེ་གནས་དང་།- བསླབ་བཏུས།
12 གཤིན་རྗེའི་ཡུལ་དུ་མཆི་བའམ།- བསླབ་བཏུས།

འཁོབ་ཏུ་སྐྱེ་བའམ། ཀླ་ཀློར་སྐྱེ་བའམ།[1] ལྷ་ཚེ་རིང་པོ་རྣམས་སུ་[2]སྐྱེ་བའམ།[3] དབང་པོ་མ་ཚང་བར་འགྱུར་བའམ།[4] ལྟ་བ་ལོག་པར་[5]འཛིན་པར་འགྱུར་བའམ།[6] སངས་རྒྱས་འབྱུང་བ་ལ་མཉེས་པར་མི་བགྱིད་པར་འགྱུར་བའི་ལས་ཀྱི་སྒྲིབ་པ་གང་ལགས་པ་དེ་དག་ཐམས་ཅད་སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་ཡེ་ཤེས་སུ་གྱུར་པ།[7] སྤྱན་དུ་གྱུར་པ། དཔང་དུ་གྱུར་པ། ཚད་མར་གྱུར་པ། མཁྱེན་པས་[8]གཟིགས་པ་དེ་དག་གི་སྤྱན་སྔར་མཐོལ་ལོ། །འཆགས་སོ།[9] །མི་འཆབ་བོ། །མི་སྦེད་དོ།[10] །སླན་ཆད་ཀྱང་གཅོད་ཅིང་[11]སྡོམ་པར་བགྱིད་ལགས་སོ།།[12]

སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་དེ་དག་ཐམས་ཅད[13]བདག་ལ་དགོངས་སུ་གསོལ། བདག་གིས་[14]སྐྱེ་བ་འདི་དང་། སྐྱེ་བ་ཐོག་མའི་ཐ་མ་མ་མཆིས་པ་

---

1 ཡུལ་མཐའ་ཁོབ་ཀྱི་ཀླ་ཀློ་རྣམས་སུ་སྐྱེ་བར་འགྱུར་བའམ།- བསླབ་བཏུས།

2 ལྷ་ཚེ་རིངས་པོ་རྣམས་ཀྱི་ནང་དུ་- ཉེར་འཁོར་མདོ།

3 ལྷ་ཚེ་རིང་པོར་སྐྱེ་བར་འགྱུར་བའམ།- བསླབ་བཏུས།

4 འགྱུར་བ་དང་།- བསླབ་བཏུས།

5 ལོག་པ་- ཉེར་འཁོར་མདོ།

6 ལོག་པར་ལྟ་བ་ཡོངས་སུ་འཛིན་པ་དང་།- བསླབ་བཏུས།

7 མི་བགྱིད་པའི་ལས་ཀྱི་སྒྲིབ་པ་དེ་དག་ཐམས་ཅད་ཡེ་ཤེས་སུ་གྱུར་པ།- བསླབ་བཏུས།

8 མཁྱེན་པ་- ཉེར་འཁོར་མདོ།

9 ཚད་མར་གྱུར་པའི་སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་མཁྱེན་ཅིང་གཟིགས་པ་དེ་དག་གི་སྤྱན་སྔར་སོ་སོར་བཤགས་སོ།།- བསླབ་བཏུས།

10 མི་སྦེད་དོ། །མདོ་དང་བསླབ་བཏུས་གཉིས་སུ་མི་གསལ་ནའང་སློབ་དཔོན་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱི་འགྲེལ་པར་གསལ་བས་རང་སོར་བཞག

11 གཅོད་ཅིང་- མདོ་དང་བསླབ་བཏུས་སུ་མི་གསལ།

12 སླན་ཆད་ཀྱང་སྡོམ་པར་བགྱིའོ།- བསླབ་བཏུས།

13 ཐམས་ཅད་- ཉེར་འཁོར་མདོ་དང་བསླབ་བཏུས་སུ་མི་གསལ།

14 གང་བདག་གིས་- བསླབ་བཏུས།

ནས་འཁོར་བ་ན་འཁོར་བའི་[1]སྐྱེ་གནས[2]གཞན་དག་ཏུ་སྲིན་པ་ཐ་ན་དུད་འགྲོའི་སྐྱེ་གནས་སུ་སྐྱེས་པ་ལ་ཟས་ཁམ་གཅིག་ཙམ་བསྩལ་བའི་[3]དགེ་བའི་རྩ་བ[4] གང་ལགས་པ་དང་།[5]བདག་གིས་ཚུལ་ཁྲིམས་བསྲུངས་བའི་དགེ་བའི་རྩ་བ་གང་ལགས་པ་དང་།[6] བདག་གིས་ཚངས་པར་སྤྱོད་པའི་[7]དགེ་བའི་རྩ་བ་གང་ལགས་པ་དང་།[8] བདག་གིས་[9]སེམས་ཅན་ཡོངས་སུ་སྨིན་པར་བགྱིས་པའི་དགེ་བའི་རྩ་བ་གང་ལགས་པ[10] དང་། བདག་གིས་བྱང་ཆུབ་མཆོག་ཏུ་སེམས་བསྐྱེད་པའི[11]དགེ་བའི་རྩ་བ་གང་ལགས་པ་དང་།[12] བདག་གིས་ [13]བླ་ན་མེད་པའི་ཡེ་ཤེས་ཀྱི་དགེ་བའི་རྩ་བ་གང་ལགས་པ་[14]དེ་དག་ཐམས་ཅད་གཅིག་ཏུ་བསྡུས་ཤིང་བཟླུམས་ཏེ་བསྡོམས་ནས་བླ་ན་མ་མཆིས་པ་དང་། གོང་ན་མ་མཆིས་པ་དང་། གོང་མའི་ཡང་གོང་མ་བླ་མའི་ཡང་བླ་མར་[15]ཡོངས་སུ་བསྔོ་བས་བླ་ན་མེད་པ་ཡང་དག་པར་རྫོགས་པའི་བྱང་ཆུབ

---

1 སྐྱེ་བ་གཞན་དང་ཐོག་མ་མ་མཆིས་པའི་སྐྱེ་བ་ནས་འཁོར་བར་འཁོར་བའི་ཚེ།- བསླབ་བཏུས།

2 སྐྱེ་བ- ཉེར་འཁོར་མདོ།

3 སྩལ་བ- ཉེར་འཁོར་མདོ།

4 དགེ་བའི་རྩ་བ- ཉེར་འཁོར་མདོར་མི་གསལ།

5 སྐྱེ་གནས་སུ་འགྱུར་པ་ལ་ཟན་ཆང་ཅིག་ཙམ་སྦྱིན་པ་སྩལ་བ་དང་།- བསླབ་བཏུས།

6 ཚུལ་ཁྲིམས་བསྲུངས་པར་གྱུར་པ་དང་།- བསླབ་བཏུས།

7 ཚངས་པ་ལ་གནས་པའི་- ཉེར་འཁོར་མདོ།

8 གང་བདག་གིས་ཚངས་པར་སྤྱད་པར་གནས་པའི་དགེ་བའི་རྩ་བ་དང་།- བསླབ་བཏུས།

9 གང་བདག་གིས་- བསླབ་བཏུས།

10 གང་ལགས་པ- བསླབ་བཏུས་སུ་མི་གསལ།

11 བདག་གི་བྱང་ཆུབ་ཀྱི་སེམས་ཀྱི- ཉེར་འཁོར་མདོ།

12 གང་བདག་གིས་བྱང་ཆུབ་ཀྱི་སེམས་ཀྱི་དགེ་བའི་རྩ་བ་དང་།- བསླབ་བཏུས།

13 གང་དག་གིས་- བསླབ་བཏུས།

14 གང་ལགས་པ- བསླབ་བཏུས་སུ་མི་གསལ།

15 བླ་མའི་ཡང་བླ་མ- མདོ་དང་བསླབ་བཏུས་སུ་མི་སྣང་ནའང་སློབ་དཔོན་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱི་འགྲེལ་པར་གསལ་བས་རང་སོར་བཞག

དུ་ཡོངས་སུ་བསྔོ་བར་བགྱིའོ། [1]

ཇི་ལྟར་འདས་པའི་སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་རྣམས་ཀྱིས་ཡོངས་སུ་བསྔོས་པ་དང་། ཇི་ལྟར་མ་བྱོན་པའི་[2]སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་རྣམས་ཀྱིས་[3] ཡོངས་སུ་བསྔོ་བར་འགྱུར་བ་དང་། ཇི་ལྟར་ད་ལྟར་བཞུགས་པའི་སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་རྣམས་ཀྱིས་[4]ཡོངས་སུ་[5]སྔོ་བར་མཛད་པ་དེ་བཞིན་དུ་[6] བདག་གིས་ཀྱང་ཡོངས་སུ་བསྔོ་བར་བགྱིའོ།།[7]

སྡིག་པ་ཐམས་ཅད་ནི་[8]སོ་སོར་བཤགས་སོ།[9] །བསོད་ནམས་ཐམས་ཅད་ལ་ནི་[10]རྗེས་སུ་ཡི་རང་ངོ་། །སངས་རྒྱས་ཐམས་ཅད་ལ་ནི་[11]བསྐུལ་ཞིང་གསོལ་བ་འདེབས་སོ།[12] །བདག་གིས་བླ་ན་མེད་པའི་ཡེ་ཤེས་ཀྱི་མཆོག་དམ་པ་ཐོབ་པར་གྱུར་ཅིག[13]

---

1 གཅིག་ཏུ་བསྡུས། གཅིག་ཏུ་སྤུངས་བཅལ་ཏེ། མངོན་པར་བསྡུས་ནས། བླ་མའི་ཡང་བླ་མ་བླ་ན་མེད་པ་ཡང་དག་པར་རྫོགས་པའི་བྱང་ཆུབ་ཏུ་ཡོངས་སུ་བསྔོ་བས་ཡོངས་སུ་བསྔོ་བར་བགྱིའོ།- བསླབ་བཏུས།

2 ཇི་ལྟར་མ་འོངས་པའི་- ཉེར་འཁོར་མདོ།

3 རྣམས་ཀྱིས་- ཉེར་འཁོར་མདོ་དང་བསླབ་བཏུས་སུ་མི་སྣང་།

4 རྣམས་ཀྱིས་- ཉེར་འཁོར་མདོ་དང་བསླབ་བཏུས་སུ་མི་གསལ།

5 ད་ལྟར་ཡོངས་སུ་- ཉེར་འཁོར་མདོ།

6 བསྔོ་བ་དེ་བཞིན་དུ་- བསླབ་བཏུས་སུ་གསལ་གྱི་- མཛད་པ་ཞེས་པ་- མི་གསལ།

7 ཡོངས་སུ་བསྔོའོ།- བསླབ་བཏུས།

8 ནི་- བསླབ་བཏུས་སུ་མི་གསལ།

9 སྡིག་པ་ཐམས་ཅད་འཆགས་སོ།- ཉེར་འཁོར་མདོ།

10 ཐམས་ཅད་ཀྱི་- ཉེར་འཁོར་མདོ།

11 ཐམས་ཅད་ནི་བསྐུལ་ཞིང་- ཉེར་འཁོར་མདོར་མེད།

12 གདབ་བོ་- བསླབ་བཏུས།

13 བདག་གི་ཡེ་ཤེས་བླ་ན་མེད་པའི་མཆོག་ཏུ་གྱུར་ཅིག- ཉེར་འཁོར་མདོ། བདག་བླ་ན་མེད་པའི་ཡེ་ཤེས་སུ་གྱུར་ཅིག- བསླབ་བཏུས།

མི་མཆོག་རྒྱལ་བ་གང་དག་ད་ལྟར་བཞུགས་པ་དང་། |
གང་དག་འདས་པ་དག་དང་དེ་བཞིན་གང་མ་བྱོན། |
ཡོན་ཏན་བསྔགས་པ་མཐའ་ཡས་རྒྱ་མཚོ་འདྲ་ཀུན་ལ། |
ཐལ་མོ་སྦྱར་བར་[1]བགྱིས་ཏེ་སྐྱབས་སུ་ཉེ་བར་མཆིའོ།[2] |

(འཕགས་པ་ཕུང་པོ་གསུམ་པ་[3]ཞེས་བྱ་བ་ཐེག་པ་ཆེན་པོའི་མདོ་རྫོགས་སོ།། །།)

---

1 སྦྱར་བ་- བསླབ་བཏུས།

2 ཉེ་བར་མཆི།- བསླབ་བཏུས།

3 འཕགས་པ་ཕུང་པོ་གསུམ་པ་ཞེས་བྱ་བ་ཐེག་པ་ཆེན་པོའི་མདོ་རྫོགས་སོ། །ཞེས་པའི་ཚིག་འདི་འདྲ་གསལ་བའི་མདོ་ཞིག་འདུག་ཀྱང་མདོ་དེར་འདིར་བསྟན་གྱི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་ལྷ་སོ་ལྔའི་མཚན་རྣམས་དང་བཤགས་ཚུལ་བསྔོ་ཚུལ་སོགས་འདི་དང་མི་མཐུངས། ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་མདོ་འདི་ནི་འཕགས་པ་དཀོན་བརྩེགས་ཁོངས་གཏོགས་ཀྱི་མདོ་ཡ་གྱལ་བ་འཕགས་པ་ཉེ་བར་འཁོར་གྱིས་ཞུས་པར་གསལ་ཞིང་། འདི་གཉིས་ལས་གཞན་པའི་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་རང་བཙན་པ་ཞིག་ད་ལྟ་མཐོང་རྒྱུ་མི་འདུག་པས། མཚན་བྱང་འདི་ཕྱིས་བོད་ཀྱི་མཁས་པ་ཞིག་གིས་གསར་བསྣན་བྱས་པ་མིན་ནམ་སྙམ།

༄༅། །རྒྱ་གར་སྐད་དུ། བོ་དྷི་སཏྭ་ཙརྻ་ཨ་ཝ་ཏཱ་རཿ།[1]

བོད་སྐད་དུ། བྱང་ཆུབ་ཀྱི་ལྷུང་བ་བཤགས་པའི་འགྲེལ་པ།

འཕགས་པ་འཇམ་དཔལ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ།།

བཅོམ་ལྡན་འདས་ཤཱཀྱ་ཐུབ་པ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ།།

བདེ་གཤེགས་གང་ཞིག་མི་རྟོག[2]ཐུགས་ཆུད་རྟོག་མེད་ཐམས་ཅད་མཁྱེན། །
ཐུགས་རྗེ་ཆེན་པོས་འགྲོ་དོན་མཛད་པའི་མགོན་དམ་ཕྱག་འཚལ་ནས། །
བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་ལྷུང་བ་དག་བྱེད་བྱང་ཆུབ་ལྷུང་བཤགས་ནི། །
སེམས་ཅན་ཀུན་ལ་ཕན་ཕྱིར་ལུང་དང་མན་ངག་གིས་བཤད་བྱ། །

རྣམ་པ་ཐམས་ཅད་མཁྱེན་པའི་སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་སྐུ་གསུམ་དང་ལྡན་པའི་སངས་རྒྱས་ཤཱཀྱ་ཐུབ་པས་སེམས་ཅན་ཐམས་ཅད་ཀྱི་དོན་དུ་དམ་པའི་ཆོས་མང་པོ་གསུངས་པ་ཐམས་ཅད་བསྡུས་པ་ནི་ལུང་གི་ཆོས་གསུང་རབ་ཡན་ལག་བཅུ་གཉིས[3]སུ་འདུས་ཏེ། དེའི་ནང་ནས་མདོའི་སྡེ་ཞེས་བྱ་བར་འདིར[4]འགྱུར་

---

1 བོདྷིསཏྭཙརྻཱཝཏཱརཿ- པེ། སྣར། བོདྷིསཏྭཙརྻཱཝཏཱརཿ- སྡེ། ཅོ།

2 མི་རྟོགས་- པེ།

3 གསུང་རབ་ཡན་ལག་བཅུ་གཉིས་ནི། བརྒྱུད་སྟོང་པའི་འགྲེལ་པ་རྒྱན་གྱི་སྣང་བ་ལས།
མདོ་སྡེ་དབྱངས་བསྙད་ལུང་དུ་བསྟན། །
ཚིགས་བཅད་ཆེད་བརྗོད་གླེང་གཞི་དང་། །
རྟོགས་བརྗོད་དེ་ལྟ་བུ་བྱུང་དང་། །
སྐྱེས་རབས་ཤིན་ཏུ་རྒྱས་པ་དང་། །
རྨད་བྱུང་གཏན་ལ་དབབ་པ་དང་། །
གསུང་རབ་ཡན་ལག་བཅུ་གཉིས་ཡིན། །
Toh-3791 སྡེ། བསྟན། ཤེར་ཕྱིན། "ཆ" ༣༣ ན ༡

4 འདི་- པེ། གསེར།

ལ། བཅུ་གཉིས་པོ་ཡང་བསྡུས་པས་སྡེ་སྣོད་གསུམ་སྟེ། དེ་ལས་འདི་ནི་མདོ་སྡེ་ཞེས་བྱ་བར་ཡང་འགྱུར་ལ། གཙོ་བོར་[1]ནི་ཐེག་པ་ཆེན་པོའི་འདུལ་བ་ཡིན་ཏེ། གཞི་དང་ཡན་ལག་གཉིས་ཀ་སྟོན་པའི་ཕྱིར་རོ།།

དེ་ལ་སྟོན་བྱེད་ནི་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་ལྟུང་མ་ཅན་ལ་སོགས་པ་ལས་དང་པོ་པ་[2]སོ་ལྷས་རྒྱལ་པོའི་ཁབ་ཏུ་བསོད་སྙོམས་ལ་བྱོན་པས་ཆང་[3]འཚོང་མའི་བུ་འོག་ཏུ་ཤི་བའི་ལྟུང་བ་བཤགས་པའི་དོན་དུ་འཕར་པ་ཉེ་བ་འཁོར་ལ་བསྐུལ་[4]ཏེ་བཅོམ་ལྡན་འདས་ཀྱིས་གསུངས་པའོ། །རྗེས་སུ་འཇུག་པའི་ནི་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་རིགས་ཅན་གྱི་ལམ་གྱི་ཡན་ལག་ཏུ་འགྱུར་རོ།། [5]

ཡང་ན་རྒྱལ་པོའི་ཁབ་ཀྱི་གྲམ་ཟེ་ཁམས་པ་[6]སྐྱེས་ཞེས་བྱ་བས་ཉ་པ་སོ་ལྔ་ལ་ལམ་ལོག་པ་བསྟན་[7]པས་ཉ་མགོ་བོ་[8]སོ་ལྔ་བར་གྱུར་པའི་དོན་དུ་ཡིན་ནོ་ཞེས་ལ་ལ་ནས་བཤད་དེ། དེ་ནི་དཀོན་མཆོག་བརྩེགས་པའི་གཞུང་མ་ཡིན་ནོ།།

དེ་ཉིད་བཤད་པ་ནི་དགོས་[9]པ་ལ་སོགས་པ་བཞིར་ཤེས་པར་བྱའོ། །དེ་དག་གང་ཞེ་ན། དགོས་པའི་དོན་ལ་ནི་རྣམ་པ་ལྔ་སྟེ། བརྗོད་བྱ་ནི་བྱང་ཆུབ་སེམས

1 གཙོར་- སྡེ། ཅོ།
2 ས་དང་པོ་པ་- ཅོ།
3 ཆབ་- གསེར།
4 བསྐུར་- སྡེ། ཅོ། སྣར། པེ།
5 རོ།- སྣར་ཐང་དུ་མི་གསལ།
6 ཁམ་པ་- པེ། གསེར།
7 བསྟེན་- ཅོ།
8 མགོ་སོ་ལྔ་- སྣར། གསེར།
9 སོགས་- སྡེ། ཅོ།

དཔའི་ལྟུང་བ་དང་དེ་འདག་པའི་ཐབས་སོ། །རྗོད་བྱེད་ནི་གཞུང་དེ་[1]དག་གོ ། དགོས་པ་ནི་ལྟུང་བ་དེ་དག་པར་བྱེད་པའོ། །དགོས་པའི་ཡང་དགོས་པ་ནི། དེས་སངས་རྒྱས་ཉིད་འཐོབ་པའོ། །འབྲེལ་བ་ནི་ཐབས་དང་ཐབས་ལས་བྱུང་བ་སྟེ་ཤུགས་ཀྱིས་བསྟན་པའོ།།

བསྡུས་པའི་དོན་ནི་ཕུང་པོ་གསུམ་མམ། བདུན་དག་པའམ། ཡང་ན་སྟོབས་བཞི་ཁོ་ན་ཡིན་ནོ། །ཞར་ལ་བཤལ་[2]ལན་ལ་སོགས་པ་གསུམ་ཡང་ཤེས་པར་བྱའོ།།

མན་ངག་[3]ནི་མངོན་པར་རྟོགས་པ་སྟེ། མཚམས་མེད་པ་ལ་སོགས་པ་བྱས་པ་ཆེན་པོས་ནི། བར་མ་ཆད་པར་ཤིན་ཏུ་འགྱོད་པས་སྟོབས་བཞི་པོ་འདིས་ཉི་བའམ་ལོ་ལ་སོགས་པར་ཡན་ལག་ལྔ་[4]ས་ལ་གཏུགས་ཤིང་བཤགས་པས་དག་པའི་མཚན་མ་འབྱུང་ཞིང་དག་པར་འགྱུར་རོ། །བར་པས་ནི་ཐུན་དྲུག་ཏུ་ཉི་བ་གཅིག་ཏུའོ།[5] །ཐ་མས་ནི་ཐུན་གསུམ་དུ་ཞག་བདུན་དུའོ། །ལྟུང་བ་བྱུང་གིས་[6]རྫོགས་པ་ལ་ནི་ཆོས་ཀྱི་ཡན་ལག་གཅིག་གིས་སོ་ཞེས་བྱ་བ་ནི་མན་ངག་གི་དོན་ཡིན་ནོ།།

འོ་ན་འདི་ན་བདག་གིས་ཐོས་པ་ལ་སོགས་པ་དང་པོ་དང་ཐ་མ་མེད་པས་བཀའ་མ་ཡིན་ནོ་ཞེ་ན། དེ་ནི་མ་ཡིན་ཏེ། འཕགས་པ་དཀོན་མཆོག་བརྩེགས་པ་ཆོས་ཀྱི་རྣམ་གྲངས་སྟོང་ཕྲག་བརྒྱ་པར་གླེང་གཞི་ལ་སོགས་པར་འདི་དག་ཐམས་ཅད

---

1 འདི་- སྣ། པེ། གསེར

2 ཤལ་- སྣ། གསེར།

3 དག་- ཅོ།

4 ཡན་ལག་ལྔ་ནི། ཕྱག་གཉིས་དང་པུས་མོ་ལྷ་ང་གཉིས་དང་དབུ་བཅས་ལྔ་ས་ལ་རེག་པར་ཡན་ལག་ལྔ་ཞེས་བརྗོད།

5 དྲུག་དུའོ།- པེ། གསེར།

6 བྱུང་གི་- སྡེ། ཅོ།

གསུངས་པའི་ཕྱིར་རོ། །འདི་ནི་དེའི་ནང་ནས་དམ་བུར་བཏོན་པས་དེ་མེད་པ་ལ་འགལ་བ་ཅི་ཡང་མེད་དོ།།

ཝ་ན་ལྷུང་བའི་དངོས་གཞི་མེད་པར་བཤགས་པ་དེ་མི་ཤེས་སོ་ཞེ་ན། དེ་ནི་འདིའི་དང་པོ་དང་མཇུག[1]གོ །སངས་རྒྱས་སུམ་ཅུ་སོ་ལྔ་ཁོ་ནར་ငེས་པ་ནི་སྟོན་གྱི་གདུལ་བྱ་སོ་ལྔའི་དོན་དང་སངས་རྒྱས་ཉེ་བ་ལ་དགོངས་པ་སྟེ། གཞན་མ་བྱོན་ཞིང་ཕྱག་མི་འཚལ་བ་ནི་མ་ཡིན་ཏེ། འདིའི་འོག་ནས་དེ་དག་ལ་སོགས་པ གསུངས་སོ། །ཕྱོགས་ཆད་པ་ནི་མེད་དེ། སྤྲུལ་པའི་སྐུ་སྐུ་ཚེ་རིང་བ་དང་དེ་ལྟར་བཞུགས་པ་དོན་མཛད་པ་འདིའི་ཕྱོགས་བཅུ་ན་བཏེན[2]པ་སྟེ་ཕྱོགས་བཅུ་ཞེས་བྱའོ།[3]། འདས་པ་དང་མ་འོངས་པའི་སངས་རྒྱས་ནི་དཔང་པོར་མ་བཞག་སྟེ། ཀུན་རྫོབ་ལ་འགལ་བའི་ཕྱིར་རོ། །ཀུན་ལ་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་མེད་ལ་བཞི་སྨོས་པ་ནི་དོན་གྱིས་ཤེས་པར་བྱས་ལ་སློས་དམིགས་པ་སྟེ། བསྡུན་ན་ནི་བཀའ་ལས་འདའ་བར་འགྱུར་ལ། ཚིག་བསྡུས་ནས་བསྟན་པའི་ཕྱིར་རོ།།

སྟོབས་བཞི་ཁོ་ནས་སྡིག་པ་འཆགས་པ་ནི་སངས་རྒྱས་ཀྱི་ཆོས་བཞི་བསྟན་པ[4] དང་། མ་སྐྱེས་དགྲའི་འགྱོད་པ་བསལ་བའི་མདོར་[5]དེ་བཞི་ཤིན་ཏུ་བསྔགས་པ ཡིན་ནོ་ཞེས་བྱ་བ་ནི་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་གཉིས་ལ་གདམས་པའོ། །དེ་ལ་ཆོས་འདི་ཅི་ཞེ་ན། འཕགས་པ་ཉེ་བ་འཁོར་གྱིས་ཞུས་པ་[6]ཞེས་གསུངས་ཏེ། དེའི་ཚེ

---

1 འཇུག་- པེ།

2 ཧེན་- སྣེ། ཅོ།

3 ཞེས་པའོ།- སྣེ། ཅོ། པེ།

4 ཆོས་བཞི་བསྟན་པའི་མདོ། Toh- 249 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "ཟ" ༥༩ ན

5 མ་སྐྱེས་དགྲའི་འགྱོད་པ་བསལ་བའི་མདོ། Toh- 216 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "ཚ" ༣༡༡

6 དཀོན་བརྩེགས་ཀྱི་ཁོངས་སུ་ཆོས་ཚན་ཞེ་དགུ་བཞུགས་པ་ལས་ཉེར་བཞི་པ་འཕགས་པ་ཉེ་བར་འཁོར་གྱིས་ཞུས་པའི་མདོ། Toh-68 སྡེ། བཀའ། དཀོན་བརྩེགས། "ཅ" ༡༡༥-༡༣༡

བཅོམ་ལྡན་འདས་ཀྱིས་ཉེ་བའི་ཉེ་གནས་[1]ལ་འདུལ་བའི་བཀའ་སྩུད་པ་པོར་གཏད་པས་དགྲ་བཅོམ་པས་ཞུས་པས་སོ། །འདུལ་བ་གཏན་[2]ལ་དབབ་པ་ནི་ཐེག་པ་ཆེན་པོ་པའི་ལྟུང་བའི་གཞི་ལ་སོགས་པ་འདིས་གཏན་ལ་འབེབས་པའོ། །དེ་ནི་བྱེ་བྲག་པ་ཡིན་ལ། སྤྱི་ནི་དཀོན་མཆོག་བརྩེགས་པ་ཞེས་སྨོས་སོ།།[3]

འདི་ལ་ཕུང་པོ་གསུམ་པ་ཞེས་ཀྱང་[4]གསུངས་ཏེ། ཕྱག་འཚལ་བའམ་བཤགས་པ་ལ་སོགས་པ་བསོད་ནམས་ཀྱི་ཕུང་པོ་དཔག་ཏུ་མེད་པ་ལ་སོགས་ཏེ། །ཕུང་པོ་གསུམ་པ་ཆུང་ངུ་ཡིན་ལ། ཆེན་པོ་ནི་མ་ཡིན་ནོ། །**བྱང་ཆུབ་ཀྱི་ལྟུང་བ་བཤགས་པ་**ཞེས་པ་ལ། **བྱང་ཆུབ་**ནི་བྱང་ཆུབ་ཆེན་པོའི་རྒྱུ་སྟེ། དེ་ལ་སེམས་དཔའ་ཞེས་བྱ་བ་ནི་ལྷག་མའོ། །ཡང་ན་བྱང་ཆུབ་ལས་ཉམས་པས་ན་བྱང་ཆུབ་ཀྱི་ལྟུང་བ་ཞེས་གསུམ་པར་སྦྱར་རོ། །དེ་ཡང་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་ལས་དང་པོ་པ་དང་། མོས་པས་སྤྱོད་པ་ལ་གནས་པ་སྟེ། ས་དང་པོ་ལ་སོགས་པའི་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་ནི་མ་ཡིན་པར་ཤེས་པར་བྱའོ།།

དེའི་**ལྟུང་བ་**ནི་དེ་བྱུང་ན་ངན་སོང་དུ་འགྲོ་བ་སྟེ། དེ་ཡང་ལྟུང་བ་དང་། སྦོམ་པོ་དང་། ཕམ་པ་དང་།[5] ཉེས་བྱས་[6]དང་། ཉེས་པ་མེད་པ་དང་། ཕྲ་མོའི་

---

1 བཅོམ་ལྡན་འདས་ཀྱི་ཉེ་བའི་གནས་ཉེ་གནས་- སྡེ། ཅོ།

2 བཏན་- སྣ། པེ། གསེར།

3 སྨོས་སོ།- ཅོ།

4 ཀྱང་- སྣར་ཐང་དུ་མི་གསལ།

5 ཕ་མི་པ་དང་།- ཅོ།

6 ཉེས་བྱས་ཞི་དྲུག་པོ་ནི། བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་སྡོམ་པར། དཀོན་མཆོག་གསུམ་ལ་མི་མཆོད་པ། འདོད་པའི་སེམས་ཀྱི་རྗེས་སུ་འཇུག་པ། རྒན་པ་ལ་མི་གུས་པ། དྲིས་པ་ལ་ལན་མི་འདེབས་པ། མགྲོན་དུ་བོས་པ་ཁས་མི་ལེན་པ། གསེར་སོགས་བསླབས་པ་མི་ལེན་པ། ཆོས་འདོད་པ་ལ་མི་སྦྱིན་པ། མ་གདུང་པ་དང་ཚུལ་འཆལ་ཡལ་བར་འདོར་བ། ཕ་རོལ་དད་ཕྱིར་

རིམ་པ་མདོ་འདིའི་སྟོད་དང་། གཞན་ལས་ཤེས་པར་བྱ་ལ། **བཤད་པའི་** ཐབས་ནི་རྒྱས་པར་[1]མདོ་འདིའི་འཇུག་ནས་ཤེས་པར་བྱ་སྟེ། འདི་ནི་ལྟུང་བ་དེའི་དག་བྱེད་འབའ་ཞིག་ཡིན་ནོ། །དེ་དག་བྱུང་ན་བཤགས་པ་ནི་དག་པར་བྱེད་པའོ།།

ཐུན་མོང་བའི་བཅས་པར་མི་སློབ་པ། སེམས་ཅན་གྱི་དོན་ལ་བྱ་བ་ཆུང་ངུར་གནས་པ། ལོག་འཚོ་ལྔ་དང་དུ་ལེན་པ། འཕྱར་ནས་རབ་ཏུ་རྒོད་པ་སོགས་བྱེད་པ། འཁོར་བ་གཅིག་པུ་བགྲོད་པར་སེམས་པ། གྲགས་པ་མ་ཡིན་པ་མི་སྤོང་བ། གཞན་དོན་དུ་འགྱུར་བཞིན་སྤྱོར་བ། རྒྱབ་མོས་མི་འཆེས་པ། དགེ་སྦྱོང་གི་ཆོས་བཞི་དང་བྲལ་བ། ཁྲིམས་པ་རྣམས་ཡལ་བར་འདོར་བ། ཕ་རོལ་ཤད་ཀྱིས་འཆགས་པ་སྤོང་བ། ཁྲོས་པའི་རྗེས་སུ་འཇུག་པ། རྙེད་བཀུར་འདོད་པས་འཁོར་བསྡུས་པ། ལེ་ལོ་སོགས་སེལ་བར་མི་བྱེད་པ། བྲེ་མོའི་གཏམ་ལ་ཆགས་པ། ཏིང་ངེ་འཛིན་གྱི་དོན་མི་འཚོལ་བ། སྒྲིབ་པ་ལྔ་མི་སྤོང་བ། བསམ་གཏན་གྱི་རོ་ལ་ཡོན་ཏན་དུ་ལྟ་བ། ཉན་ཐོས་ཀྱི་ཐེག་པ་སྤོང་བ། རང་ཚུལ་ཡོད་བཞིན་བོར་ནས་ཏ་ཅང་དེ་ལ་མི་བརྩོན་པ། ཕྱི་རོལ་པའི་གཞུང་ལ་མཐའ་གཅིག་ཏུ་བརྩོན་པ། དེ་ལ་དགའ་བཞིན་དུ་བརྩོན་པ། བྱང་སེམས་ཀྱི་སྡེ་སྣོད་ལ་བསྐུར་བ་འདེབས་པ། བདག་ལ་བསྟོད་ཅིང་གཞན་ལ་སྨོད་པ། ཆོས་བགྲོ་བའི་ཆེད་དུ་འགྲོ་བར་མི་བྱེད་པ། ཆོས་སྨྲ་བ་ལ་སྨོད་ཅིང་ཚིག་ལ་རྟོན་པ། དགོས་པའི་གྲོགས་སུ་མི་འགྲོ་བ། ནད་པའི་རིམ་གྲོ་སྤོང་བ། སྡུག་བསྔལ་སེལ་བར་མི་བྱེད་པ། བག་མེད་པ་ལ་རིགས་པ་མི་སྟོན་པ། ཕན་ལན་མི་བྱེད་པ། གཞན་གྱི་མྱ་ངན་མི་སེལ་བ། ནོར་འདོད་པ་ལ་མི་སྦྱིན་པ། འཁོར་རྣམས་ཀྱི་དོན་མི་བྱེད་པ། གཞན་གྱི་བློ་དང་མཐུན་པར་མི་བྱེད་པ། ཡོན་ཏན་ཅན་གྱི་བསྔགས་པ་མི་བརྗོད་པ། སྐྱོན་དུ་འཆམ་པར་ཆར་མི་གཅོད་པ། རྫུ་འཕྲུལ་གྱིས་བསྡིགས་པར་མི་བྱེད་པ། སྙིང་བརྩེ་ཅན་ལ་སྐབས་སུ་བབས་ན་ལུས་ངག་གི་བདུན་གནང་བ་མི་བྱེད་པ་སྟེ་ཞེ་དྲུག་གོ །ལྕང་སྐྱའི་དག་ཡིག་མཁས་པའི་འབྱུང་གནས་ཞེས་བྱ་བ་ལས་དབུ་མའི་སྐོར། ཤོག་གྲངས། ༨༠༩ ཀྲུང་གོའི་བོད་ཀྱི་ཤེས་རིག་དཔེ་སྐྲུན་ཁང་གི་པར་དུ་བསྐྲུན། ༡༩༨༩

མཁས་དབང་ཐུབ་བསྟན་ཆོས་ཀྱི་གྲགས་པས་མཛད་པའི་སྤྱོད་འཇུག་གི་འགྲེལ་བཤད་རྒྱལ་སྲས་ཡོན་ཏན་བུམ་བཟང་དུ་ཉེས་བྱས་ལ་སྡེ་ཚན་གཉིས་སུ་ཕྱེ་སྟེ། དང་པོ། དགེ་བའི་ཆོས་སྡུད་ཀྱི་ཕྱིན་དྲུག་གི་མི་མཐུན་ཕྱོགས་ཀྱི་ཉེས་པ། གཉིས་པ། སེམས་ཅན་དོན་བྱེད་ཀྱི་ཚུལ་ཁྲིམས་ཀྱི་མི་མཐུན་ཕྱོགས་ཀྱི་ཉེས་པ། དེའི་སྐོར་ཞིབ་པར་གཟིགས་འདོད་ན་དེའི་ཤོག་གྲངས། ༡༥༨ ཀྲུང་གོའི་བོད་ཀྱི་ཤེས་རིག་དཔེ་སྐྲུན་ཁང་གིས་པར་དུ་སྐྲུན་པ། ༡༩༩༠

1 པས- གསེར།

དེ་ཡང་གཉིས་ཏེ། དོན་དམ་གྱི་བཤགས་པ་ནི་འགྱོད་པ་བསལ་བའི་མདོ་[1] ལྟར་ཆོས་ཐམས་ཅད་རང་བཞིན་མེད་པར་ཡིད་ལ་བྱ་བ་ནི་བཤགས་པ་ཆེན་པོ་སྟེ།

དྲང་པོ་འདུག་ལ་ཡང་དག་ལྟོས། །
ཡང་དག་ཉིད་ལ་ཡང་དག་ལྟ། །
ཡང་དག་མཐོང་ན་རྣམ་པར་གྲོལ། །
དེ་ནི་བཤགས་པ་ཆེན་པོ་ཡིན།[2] །

ཞེས་བྱ་བ་[3]གསུངས་སོ། །ཀུན་རྫོབ་ཀྱི་བཤགས་པ་ནི་སྟོབས་བཞིས་འགྱོད་པ་དང་བཅས་པའི་ཤེས་པས་ཕྱག་འཚལ་བ་ལ་སོགས་པ་ཐམས་ཅད་བྱ་བ་ནི་སྒྲུ་མ་ལྟ་བུའི་བློ་དང་ལྡན་པས་བཤགས་པ་ནི་ཆུང་ངུའོ།།

དེ་ཡང་དང་པོར་འདི་ཞུས་པའི་ཚེ་བཅོམ་ལྡན་འདས་ཀྱིས་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་དེ་དག་གི་དོན་དུ་འོད་ཟེར་གྱིས་འདི་ནས་ལྟོས་པའི་ཕྱོགས་བཅུའི་སངས་རྒྱས་སུམ་ཅུ་རྩ་བཞི་དང་། དེ་དག་ལ་སོགས་པ་མང་པོ་སྤྱན་དྲངས་ཏེ། འདིར་ནམ་

1 མ་སྐྱེས་དགྲའི་འགྱོད་པ་བསལ་བའི་མདོ། Toh-216 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "ཚ" ༣༥༠ བ

2 སློབ་དཔོན་བིམལམིཏྲས་མཛད་པའི་ཅིག་ཅར་འཇུག་པའི་རྣམ་པར་མི་རྟོག་པའི་བསྒོམ་དོན་ལས། ཁ་ཅིག་ན་རེ། མི་རྟོག་པ་ལ་སྡིག་པ་བཤགས་པ་མེད་དོ་ཞེས་ཟེར་ན། དེ་ལ་བཤད་པ་ཕྱོགས་སུ་རྒྱས་པའི་མདོ་ལས།

གང་ཞིག་འགྱོད་ཚངས་བྱེད་འདོད་ན། །
དྲང་པོར་འདུག་ལ་ཡང་དག་ལྟོས། །
ཡང་དག་ཉིད་ལ་ཡང་དག་ལྟ། །
ཡང་དག་མཐོང་ནས་རྣམ་པར་གྲོལ། །
འདི་ནི་འགྱོད་ཚངས་མཆོག་ཅེས་བྱ། །

ཞེས་གསུངས་པས་སེམས་མི་གཡོ་བར་འདུག་པ་ཉིད་ནི་འགྱོད་ཚངས་ཀྱི་མཆོག་ཡིན་པ་གསུངས་སོ།།

Toh-3910 དབུ་མ། "ཀི" ༡༣ བ ༡ དགས་པོ་རིན་པོ་ཆེའི་ཐར་རྒྱན་དུ་ལུང་འདི་ལས་རྣམ་པར་དག་པའི་མདོར་ཡང་གསལ་གསུངས་ཀྱང་། ད་ལྟ་རྙེད་སོན་མ་བྱུང་།

3 བྱ་བ་- གསེར་བྲིས་སུ་མི་སྣང་།

མཁའ་ལ་བཞུགས་པ་ལ་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་རྣམས་ཀྱིས་འཁོད་པ་དང་བཅས་པས་མཆོད་ཅིང་སེམས་བསྐྱེད་ནས་སྐྱབས་སུ་སོང་སྟེ། ཕྱག་འཚལ་ནས་སྡིག་པ་བཤགས་པ་ལ་སོགས་པ་ལན་ཅིག་བྱས་པས་སྡིག་པ་ཐམས་ཅད་དག་སྟེ་ས་དང་པོ་ལ་སོགས་པ་ལ་གནས་པར་གྱུར་ཏོ། །དེའི་རྗེས་སུ་ཞུགས་པས་[1]ནི་གནས་དབེན་པར་མཐུལ་དང་། མཆོད་པ་དང་འདི་རྣམས་ཀྱི་བྲིས་སྐུ་ལ་བརྟེན་ཏེ། བླ་མའི་མན་ངག་གིས་[2]སེམས་བསྐྱེད་པ་ལ་སོགས་པ་བྱས་ལ་བཤགས་པས་སྡིག་པ་ཐམས་ཅད་དག་པར་འགྱུར་ལ། འབྲས་བུ་ཡང་དག་པར་རྫོགས་པའི་སངས་རྒྱས་འཐོབ་པར་འགྱུར་རོ་ཞེས་བྱ་བ་ནི་འདིའི་ཚུལ་ལོ།།

དེ་ལ་བཤགས་པའི་ཐབས་དངོས་ལ། དང་པོ་**རྟེན་གྱི་སྔོ་ནས་སྡིག་པ་བཤགས་པ་**ནི། **བདག་མིང་འདི་ཞེས་**བྱ་བ་ལ་སོགས་པས་གསུངས་སོ། །དེ་ལ་རྟེན་སངས་རྒྱས་སུམ་ཅུ་རྩ་ལྔ་ལ་སོགས་པ་ལ་མཆོད་པ་བྱས་ཏེ་བྱང་ཆུབ་ཀྱི་སེམས་རྣམ་པ་གཉིས་[3]བསྐྱེད་པ་འདིར་ཤེས་པར་བྱས་ལ། དེ་ནས་སྐྱབས་སུ་འགྲོ་བ་ནི་གཉིས་པའོ། །དེ་ལ་**བདག་མིང་འདི་ཞེས་**བྱ་བ་ནི་སྤྱིར་བཏང་ཡང་དམིགས་ཀྱིས་བདག་གི་ཐ་མལ་བའི་མིང་ཆེ་གེ་མོ་ཞེས་བརྗོད་པར་བྱ་སྟེ། དཔེར་

1 ཞུགས་པ་- སྡེ། ཅོ། སྣར།

2 མན་ངག་གི་- པེ། གསེར་

3 བྱང་ཆུབ་ཀྱི་སེམས་རྣམ་པ་གཉིས་ནི། སྤྱོད་འཇུག་ལས།

བྱང་ཆུབ་སེམས་དེ་མདོར་བསྡུས་ན། །
རྣམ་པ་གཉིས་སུ་ཤེས་བྱ་སྟེ། །
བྱང་ཆུབ་སྨོན་པའི་སེམས་དང་ནི། །
བྱང་ཆུབ་འཇུག་པ་ཉིད་ཡིན་ནོ། ། ༡.༡༥

Toh-3871 སྡེ། བསྟན། དབུ་མ། "ལ" ༣ བ ༨

ན་འཇིགས་སྡེའི་[1]ནང་ནས་འཇིགས་བྱེད་ཆེན་པོ་ཞེས་བྱ་བ་ལྟ་བུའོ། །གཞན་དུ་ན་བདག་ཏུ་མ་ཟད་དེ་དགེ་བའི་བཤེས་གཉེན་ནི་བདག་ལ་ཕན་འདོགས་པའོ། །ཕ་མ་ནི་ཕན་འདོར་པའི་ཞིང་ངོ་། །སེམས་ཅན་མཐའ་ཡས་པ་ནི་ནམ་མཁའ་[2]ཁྱབ་པའི་སེམས་ཅན་ཏེ་བདག་གིས་ཕན་གདགས་པའི་ཡུལ་ལོ། །དེ་དག་དང་བཅས་པར་སྐྱབས་སུ་འགྲོ་བའོ། །གང་ལ་ཞེ་ན། སངས་རྒྱས་ལ་སོགས་པ་ལའོ། །གང་གིས་ཤེ་ན།[3] ངག་དང་ཡིད་ཀྱིས་[4]ཏེ་སྐྱབས་སུ་འགྲོ་བའི་ངོ་བོ་ལ་སོགས་པ་ཡང་ཤེས་པར་བྱའོ།།

དེ་ལ་**སངས་རྒྱས**་ནི་སྟོན་པ་དང་འབྲས་བུ་སྟེ། སྐུ་གསུམ་གྱི་[5]བདག་ཉིད་ཅན་**ལ**། བདག་**སྐྱབས་སུ་འགྲོ་བ**་ནི་དེ་ལ་བློ་གཏོད་པའོ། །འདིར་ཕྱག་འཚལ་བ་ནི་ལུས་དང་ངག་དང་ཡིད་ཀྱིས་ཏེ་དེ་ལྟར་ངེས་པར་འགྲོའོ་ཞེས་པའོ། །
དེ་བཞིན་དུ་**ཆོས**་ནི་བསྟན་པ་དང་ལམ་མོ། །དེ་ཡང་ལུང་དང་རྟོགས་པ་དང་དོན་དམ་པ་སྟེ་རྒྱུ་དང་འབྲས་བུའི་བདག་ཉིད་དོ། །**དགེ་འདུན**་ནི། སྒྲུབ་པ་པོ་དང་རྟེན་ཏེ་མི་ཕྱེད་པས་ན་དགེ་འདུན་ནོ། །དེ་ཡང་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་དང་ཉན་ཐོས་དང་རང་སངས་རྒྱས་ཏེ་འདིར་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་དགེ་འདུན་ཕྱིར་མི་ལྡོག་པའི་དགེ་འདུན་ཡིན་པར་ཤེས་པར་བྱའོ།།

དེ་ལྟར་རྟེན་གྱི་སྟོབས་བསྟན་ནས། ད་ནི་**རྣམ་པར་སུན་འབྱིན་པས་ཀུན་དུ་སྤྱོད་པའི་སྟོབས**་ཀྱི་སྒོ་ནས་སྡིག་པ་འཆགས་པ་ནི། **དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་**

1 འཇིག་སྡེའི་- སྡེ། ཅོ།

2 ནམ་ཁས་- སྣ།

3 ཞེ་ན།- སྣ། པེ།

4 ཡིད་ཀྱི་- སྣ། པེ།

5 གསུམ་གྱི་- སྡེ་ཅོར་མི་གསལ།

ཞེས་བྱ་བ་ལ་སོགས་པ་གསུངས་སོ། །དེ་ཡང་སྡིག་པའི་དངོས་པོ་བཤགས་པའི་ཡན་ལག་ཏུ་སངས་རྒྱས་སུམ་ཅུ་སོ་ལྔ་ལ་ཕྱག་འཚལ་བས་སྡིག་པ་དག་པར་འགྱུར་པ་ཡིན་ནོ། །དེ་ལ་མ་འོངས་པས་ནི། སངས་རྒྱས་འདི་དག་བདག་གི་མདུན་དུ་པདྨ་དང་སེང་གེ་དང་རིན་པོ་ཆེ་དང་ཟླ་བའི་གདན་ལ་རབ་ཏུ་བྱུང་བ་སྤྲུལ་པའི་སྐུ་མཚན་དང་དཔེ་བྱད་འོད་དང་ལྡན་པ། སྐུ་མདོག་དང་། ཞིང་དང་། ཕྱོགས་དང་། མཚམས་དང་། ཆོས་གོས་ལ་སོགས་པ་དང་། ཕྱག་མཚན་དང་། རྡོ་རྗེའི་སྐྱིལ་ཀྲུང་ཅན་འཁོར་མང་པོ་དང་བཅས་པ་འོག་ནས་འབྱུང་བ་བཞིན་དུ་དབུས་ནས་བཀྱམས་ཏེ་ཕྱོགས་བཅུར་རིམ་པ་བཞིན་དུ་བཞུགས་པ་ལ་དམིགས་ཏེ། ལུས་མང་པོར་སྤྲུལ་ཅིང་།[1] ངག་སྨྲ་དང་། ཡིད་ཀྱི་[2]མོས་པས་ཞབས་ལ་ཕྱག་འཚལ་བྱའོ།། ཡང་ན་བློ་དམན་པས་ནི་ཐམས་ཅད་ཞལ་གཅིག་པ། ཕྱག་གཉིས་ཆོས་འཆད་པའམ། བསོད་སྙོམས་ལ་གཤེགས་པའམ། ས་གནོན་པ་ལ་སོགས་པའི་ཕྱག་རྒྱར་བསམས་ཏེ། དཀར་པོ་ལ་སོགས་པ་གང་ལྟར་མོས་པར་ཐམས་ཅད་མཉམ་པར་བསམས་ཏེ་[3]ཕྱག་བྱའོ། །འདི་དག་ནི་བདག་ཅག་གི་སྟོན་པ་གཙོ་བོ་ཡིན་ལ། དེ་མ་གཏོགས་པ་རྣམས་ནི་བསྐལ་པ་མང་པོར་བཞུགས་པ་ཡིན་པར་ཤེས་པར་བྱའོ།།

༡ དེ་ལ་དང་པོ་མི་མཇེད་ཀྱི་བདག་པོ་དབུས་ན་བཞུགས་པའི་སངས་རྒྱས་དེའི་ཡོན་ཏན་ནི་**དེ་བཞིན་གཤེགས་པ**་ཞེས་གསུངས་ཏེ། སྒྲའི་སྟོབས་ལས་དེ་བཞིན་ཉིད་གསུངས་[4]པ་དང་། རྟོགས་པ་དང་། དེ་བཞིན་ཉིད་དུ་གཤེགས་ཤིང་སླར་བྱོན་པ་སྟེ། འདིས་ནི་ཐམས་ཅད་ལས་ཁྱད་པར་དུ་འཕགས་པའོ།།

1 སྤྲུལ་ཞིང་།- ཅོ།

2 ཡིད་ཀྱིས་- པེ།

3 བསམ་ཏེ་- སྣ། པེ། གསེར་

4 གསུང་- སྡེ། སྣ། གསེར། གསུམ་པ་- ཅོ།

དགྲ་བཅོམ་པ་ནི་ཉོན་མོངས་པ་དང་ཤེས་བྱའི་སྒྲིབ་པའི་དགྲ་བསད་པའོ། ། དེས་ནི་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་ལས་ཁྱད་པར་དུ་འཕགས་པའོ། ། **ཡང་དག་པར་**[1]ནི་ཕྱིན་ཅི་མ་ལོག་པ་སྟེ། དེས་ནི་འཁོར་བ་དང་ཐེག་པ་དམན་པ་ལས་སོ།། **རྫོགས་པ་**ནི་ཚོགས་གཉིས་དང་བདག་གཞན་གྱི་དོན་གྱི་སྐུ་གཉིས་སོ།། **སངས་རྒྱས་**ནི་སྤངས་པ་དང་ཡེ་ཤེས་ཀྱི་བྱེ་བྲག་གིས་གཉིས་སོ། །དེ་གཉིས་ཀྱིས་འཁོར་བ་དང་མྱ་ངན་ལས་འདས་པའི་གང་ཟག་ཐམས་ཅད་ལས་ཁྱད་པར་དུ་འཕགས་པར་བསྟན་ཏོ། །དེའི་མཚན་ཉིད་ནི་**ཤཱཀྱ་ཐུབ་པ་**སྟེ། དེ་ནི་ཡེ་ཤེས་དང་ནུས་པ་དང་ཡོན་ཏན་ནོ། །དེ་ལ་ཡེ་ཤེས་ནི། (མཁྱེན་པ?) **ཤཱ་**ནི་མ་ལུས་པའོ།། **ཀྱ་**ནི་རྫོགས་པའོ[2] །**མུ་ནི་**ནི་གཉིས་སུ་མེད་པར་བསྒོམས་པའོ[3] །ཤཱ་ནི་ཤཱཀྱའི་རྒྱལ་པོའི་རིགས་ཡིན་པས་[4]དེ་དོན་ཡོད་ཅིང་དེ་ལས་སྐྱེས་པའི་གདུག་པ་ཐུབ་པ་སྟེ་ལས་སོ། ། ཡོན་ཏན་ནི། **ཤཱཀྱ་**སྟེ་ཁྱད་པར་དུ་འཕགས་པའོ། །དེའི་སྐུ་དང་གསུང་དང་ཐུགས་[5]བསྡམས་པ་ཐུན་མོང་མ་ཡིན་པ་ནི་ཐུབ་པའོ། །དེ་ལ་**ཕྱག་འཚལ་བ་**ནི་དང་བའི་དད་པས་སྒོ་གསུམ་གྱིས་ཕྱག་བྱ་བའོ། །འདི་ཡང་དབུས་སུ་གདན་ལ། སེར་པོ་ཆོས་འཆད་པར་བསམ་མོ། །སྔ་མ་ལྟར་ཁྱད་པར་ལྟ་དང་། བཤད་པ་གསུམ་པོ་ནི་འོག་མ་ལ་ཡང་ཤེས་པར་བྱའོ། །ཡེ་ཤེས་ལ་སོགས་པ་ནི་དཔེ་དང་དོན་གྱིས་སྦྱའི་

---

1 ཡང་དག་པ་- པེ།

2 རྫོག་པའོ།- ཐེ། སྣ།

3 བསྡམས་པའོ།- སྣ། པེ།

4 ཡིན་ལ་- སྣ། པེ། གསེར།

5 སྐུ་གསུང་ཐུགས་ཀྱི་ཡོན་ཏན་གྱི་རྣམ་དབྱེ་ལ་གསུམ་སྟེ། སྐུ་ལ་མཚན་བཟང་སོ་གཉིས་དང་དཔེ་བྱད་བརྒྱད་ཅུ། གསུང་གི་ཡོན་ཏན་ལ་གསུང་དབྱངས་ཡན་ལག་དྲུག་ཅུ། ཐུགས་ཀྱི་ཡོན་ཏན་ལ་འཕྲིན་ལས་ཉེར་བདུན།

སྟོབས་ཀྱིས་ཚང་བ་དང་གཉིས་དང་གཅིག་ལ་ཡང་བཤད་པར་བྱའོ།།

༢ སྙིང་ནམ་མཁའི་སྙིང་པོའི་ཞིང་ན་བཞུགས་པ་སྔོན་པོ་རྡོ་རྗེ་གཉིས་བསྣམས་པ་ནི་རྡོ་རྗེ་སྙིང་པོས་རབ་ཏུ་འཇོམས་པའོ། །དེ་ལ་**རྡོ་རྗེ་**ནི་རྡོ་རྗེ་ལྟར་རྟོག་པ་མེད་པའི་ཡེ་ཤེས་སོ། །**སྙིང་པོ་**ནི་ཐམས་ཅད་ཀྱི་སྐྱེ་གནས་ཏེ་ཡོན་ཏན་ནོ། །ལས་ནི་ཉོན་མོངས་པ་ལ་སོགས་པ་ཐམས་ཅད**འཇོམས་པ**འོ།།

༣ **རིན་ཆེན་འོད་འཕྲོ་**ནི། ཤར་ཕྱོགས་རིན་ཆེན་ཡོད་པའི་ཞིང་ན་དཀར་པོ་རྡོ་རྗེ་དང་ཉི་མ་བསྣམས་པ་བཞུགས་སོ། །དེ་ལ་**རིན་ཆེན་**ནི་རིན་པོ་ཆེ་ལྟར་སྟོབས་ལ་སོགས་པའི་ཡོན་ཏན་ཐམས་ཅད་འབྱུང་བས་ན་ཡོན་ཏན་ནོ། །ཡེ་ཤེས་ནི་**འོད་**དེ་རང་བཞིན་གསལ་བས་[1]མི་ཤེས་པའི་མུན་པ་མེད་པའོ། །**འཕྲོ་**བ་ནི་ལས་ཏེ་དེས་སེམས་ཅན་ཐམས་ཅད་ཀྱི་མི་ཤེས་པ་འཇོམས་པར་བྱེད་པའོ།།

༤ ཤར་ལྷོ་ཀླུ་ཡིས་ཁྱབ་པའི་ཞིང་ན**ཀླུ་དབང་གི་རྒྱལ་པོ་**སྔོ་སྔོན་པོ། ཀླུ་ཤིང་དང་སྦྲུལ་སྔོན་པོ་[2]བསྣམས་པའོ། །དེ་ལ་ཡེ་ཤེས་ནི་**ཀླུ་**སྟེ་བསིལ་བར་བྱེད་པ་དང་གདུག་པ་ལྟར་ཡེ་ཤེས་ཀྱང་ཉོན་མོངས་པ་དང་བྲལ་བ་དང་མཚན་མ་གསོད་པའོ། །**དབང་**པོ་ནི་ལས་ཏེ་དེས་ཐམས་ཅད་ལ་དབང་བསྒྱུར་བའོ།[3] །**རྒྱལ་པོ་**ནི་ཡོན་ཏན་ཏེ་རྒྱལ་པོ་ལྟར[4]ཐམས་ཅད་ཀྱི་ནང་ན་འབར་ཞིང་མཛེས་ལ་འཇིགས་པ་དང་བྲལ་བའོ།།

༥ **དཔའ་བོའི་སྡེ་**ནི། ལྷོ་དཔའ་བ་དང་ལྡན་པའི་ཞིང་ན་སེར་པོ་པོ་ཏི་དང་རལ་

---

1 བསལ་བས་- པ། གསེར།

2 སྦྲུལ་སྔོན་པོ་- སྣ།

3 བསྒྱུར་བའོ།- པ།

4 ལྟར་- གསེར་ཕྲེང་སུ་མེད།

གྱི་བསྣམས་པ་བཞུགས་པའོ། །དེ་ལ་**དཔའ་བོ**་ནི་ཡེ་ཤེས་དེ་འགྲན་ཟླ་མེད་ཅིང་མི་ཚུགས་པའོ། །ཡང་ན་**དཔའ་བོ**་ནི་ལས་དེ་སེམས་ཅན་གྱི་འཁོར་བའི་གཡུལ་ཐམས་ཅད་འཇོམས་པའོ། །ཡོན་ཏན་ནི་**སྡེ**་སྡེ་ཡོན་ཏན་གྱི་ཚོགས་མང་པོ་མངའ་བའོ།།

༦ **དཔལ་དབྱིས**[1]ནི། ལྷོ་ནུབ་དགའ་བ་དང་ལྡན་པའི་ཞིང་ན། དམར་སེར་ཉི་མ་དང་པདྨ་དམར་པོ་བསྣམས་པའོ། །དེ་ཡང་**དཔལ**་ནི་ཡེ་ཤེས་དང་ལས་དེ་སྔ་མ་བཞིན་དུ་ཤེས་པར་བྱའོ། །ཡོན་ཏན་ནི་**དབྱིས**་པ་སྡེ་ཐུགས་རྗེ་ཆེན་པོས་སེམས་ཅན་གྱི་དོན་མཛད་པ་ལ་ཐུགས་བཞུགས་པའོ།།

༧ ནུབ་སྣང་བ་དང་ལྡན་པའི་ཞིང་ན་དམར་པོ། རིན་པོ་ཆེ་དང་མེའི་དཀྱིལ་འཁོར་བསྣམས་པ་ནི་**རིན་ཆེན་མེ**་སྡེ། དེ་ལ་**རིན་ཆེན**་ནི་ཡེ་ཤེས་དེ་རྟོག་པ་མེད་པར་དོན་འབྱུང་བའོ། །ཡང་ན་ཡོན་ཏན་ནི་རིན་ཆེན་དེ་ཏིང་ངེ་འཛིན་དང་འཇིག་རྟེན་ལས་འདས་པའི་ཕུན་སུམ་ཚོགས་པ་ཐམས་ཅད་འབྱུང་བའོ།། **མེ**་ནི་ལས་དེ་ཡེ་ཤེས་དང་བརྩོན་འགྲུས་ཆེན་པོས་སེམས་ཅན་གྱི་དོན་མཛད་ཅིང་ཉོན་མོངས་པ་ལ་སོགས་པ་བསྲེགས་པའོ།།[2]

༨ **རིན་ཆེན་ཟླ་འོད**་ནི། ནུབ་བྱང་འོད་བཟང་པོའི་ཞིང་ན་དཀར་པོ་རིན་པོ་ཆེ་དང་ཟླ་བ་བསྣམས་པའོ། །དེ་ལ་**རིན་ཆེན**་ནི་སྔ་མ་ལྟར་ཡོན་ཏན་ནོ། **ཟླ་བ**་ནི་ཡེ་ཤེས་དེ་ཡེ་ཤེས་རྫོགས་ཤིང་གསལ[3]ལ་ཤིན་དུ་བསིལ་བའོ། ། **འོད**་ནི་ལས་དེ་ལས་དང་ཉོན་མོངས་པ་ལ་སོགས་པ་བསལ་དེ་དོན་གྱི་ཆོས་ཉིད་གསལ་བར་བྱེད་པའོ།།

---

1 ལེགས་སྦྱར་མ་དཔེར་ཤྲཱིཏྣཀྟད་སྡེ་དཔའ་དབྱིས་གསལ།

2 སོགས་སྲེག་པའོ།- སྡེ། ཅོ། གསེར།

3 གིས་ལ་ལ་- སྡེ།

༩ བྱང་ཕྱོགས་ཛ་སྦྲའི་ཞིང་ན་མཐོང་བ་དོན་ཡོད་ལྡང་ག་སངས་རྒྱས་ཀྱི་སྤྱན་གཉིས་བསྣམས་པའོ། །དེའི་ཡེ་ཤེས་ནི་**མཐོང་བ**་སྟེ་ཡེ་ཤེས་མ་བསྒྲིབས་པའོ།། ཡང་ན་**མཐོང་བ**་ནི་ཡོན་ཏན་ཏེ། ཤེས་རབ་དང་ཐུགས་རྗེས་སྤྱན་གྱིས་ཆོས་ཉིད་དང་སེམས་ཅན་གྱི་དོན་གསལ་བའོ། །ལས་ནི་**དོན་ཡོད**་པ་སྟེ། འདིས་སེམས་ཅན་ཐམས་ཅད་མངོན་པར་མཐོ་བ་དང་ངེས་པར་ལེགས་པའི་འབྲས་བུ་གདོན་མི་ཟ་བར་ཡོད་པར་མཛད་པའོ།།

༡༠ **རིན་ཆེན་རླ་བ**་ནི། བྱང་ཤར་འོད་ཟེར་ཅན་གྱི་ཞིང་ན་དཀར་ལྡང་**རིན་པོ་ཆེ**་དང་རླ་བ་བསྣམས་པའི་སངས་རྒྱས་སོ། །དེའི་ཡོན་ཏན་ནི་རིན་པོ་ཆེའོ།། **རླ་བ**་ནི། །ཡེ་ཤེས་དང་ལས་དེ་སྔ་མ་ལྟར་ཤེས་པར་བྱའོ།།

༡༡ འདིའི་འོག་ན་ཐལ་བས་ཁྱབ་པའི་ཞིང་ན་དྲི་མ་མེད་པ་སྟེ་དུད་ཁའམ་ཐལ་བའི་མདོག་ཅན་མི་ལོང་དྲི་མ་མེད་པ་གཉིས་[1]བསྣམས་པ་བཞུགས་ཤིང་འཚོའོ། ། དེ་ལ་**དྲི་མ་མེད་པ**་ནི་ཡེ་ཤེས་ཏེ་སྒྲིབ་པ་སྤངས་པའོ། །ནུས་པ་ནི་གཞན་དྲི་མ་མེད་པར་བྱེད་པའོ། །སྟོབས་ལ་སོགས་པ་གློ་བུར་བའི་དྲི་མ་དང་བྲལ་བས་ཤིན་ཏུ་གསལ་བ་ནི་ཡོན་ཏན་ནོ། །དེ་ལ་སྔ་མ་ལྟར་ཕྱག་འཚལ་བའོ།། དེ་དག་ནི་བཅུ་ཚན་དང་པོའོ།།

ཡང་བཅུ་ཚན་གཉིས་པ་ནི།

༡༢ **དཔལ་སྦྱིན**་[2]ཞེས་བྱ་བ་ལ་སོགས་པ་སྟེ། དེ་ལ་དེའི་ཡང་སྟེང་གི་ཕྱོགས་ན་དཔལ་དང་ལྡན་པའི་ཞིང་ན་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་**དཔས་སྦྱིན**་དཀར་པོ་ཤིང་དཔལ་འབྲས་ཀྱི་སྡོང་བུ་ལོ་མ་འབྲས་བུ་དང་[3]བཅས་པ་བསྣམས་པ་བཞུགས་

1 གཉིས་- སྡེ་ཅོར་མི་གསལ།

2 ལེགས་སྦྱར་མ་དཔེ་དང་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་ཉིད་དུ་ཤྲཱིརྡཏ་སྟེ་དཔལ་བྱིན་གསལ།

3 ལོ་མ་དང་འབྲས་བུ་དང་།- སྣ། པེ།

ནས་སེམས་ཅན་གྱི་དོན་མཛད་པ་ཡིན་ལ། འདིར་སྙིང་དུ་གདན་ལ་བཞུགས་པར་བསམས་ཏེ་[1]བདག་གིས་ཕྱག་འཚལ་བ་བྱས་པ་སྡིག་པར་དག་པར་འགྱུར་རོ།[2] །དེ་ལ་**དཔའ་བ་**ནི་གཉིས་སུ་མེད་པའི་ཡེ་ཤེས་ཀྱིས་རྟོག་པ་ཐམས་ཅད་འཇོམས་པས་སོ། །ཡང་ན་[3]ཡོན་ཏན་ནི་**དཔའ་བ་**སྟེ། གཞན་ལ་ཕུན་སུམ་ཚོགས་པ་ཐམས་ཅད་དང་བདེ་བ་ཐམས་ཅད་ཐོགས་[4]པ་མེད་པར་མཛད་པའོ། །**སྦྱིན་**པ་ཞེས་པས་ལས་བསྟན་ཏེ། ཁམས་གསུམ་གྱི་སེམས་ཅན་ཐམས་ཅད་ལ་ཇི་ལྟར་འདོད་པའི་བྱ་བའམ་དགོས་པ་སྦྱིན་པའོ། །དེ་ལ་སྒོ་གསུམ་དང་བས་ཕྱག་འཚལ་བར་བྱའོ།།

༡༣ ཤར་ཕྱོགས་སྒྲིབ་པ་དང་བྲལ་བའི་ཞིང་ན་དཔལ**ཚངས་པ་**དམར་སེར་པདྨ་དང་ཉི་མ་བསྣམས་པའོ། །དེ་ལ་སྒྲིབ་པ་ཐམས་ཅད་དང་བྲལ་བའི་ཡེ་ཤེས་ནི་**ཚངས་པ**འོ། །ཡང་ན་**ཚངས་པ་**བཞིན་དུ་སེམས་ཅན་ཐམས་ཅད་འཁོར་བ་ནས་དག་པར་བྱེད་པ་ནི་ཚངས་པ་སྟེ་ལས་སོ། །ཡང་ཚངས་པ་ནི་རང་ཉིད་དང་གཞན་དག་པར་བྱེད་པའི་ཡོན་ཏན་ཚད་མེད་པ་མངའ་བས་ན་ཚངས་པ་སྟེ་ཡོན་ཏན་ནོ།།[5]

༡༤ **ཚངས་པས་སྦྱིན་**ནི། ཤར་ལྷོ་མྱ་ངན་མེད་པའི་ཞིང་ན་སེར་པོ་ཟླ་བ་དང་

---

1 བསམ་ཏེ་- པེ།

2 རོ།- སྣར་ཐང་དུ་མི་སྣང་།

3 ཡང་ནི་- ཅོ།

4 ཐོག་- ཅོ།

5 ནོ།- སྣར་ཐང་དུ་མི་སྣང་།

པདྨ་མ་བསྣམས་པའོ། །དེ་ཡང་**ཚངས་པ་**ནི་ཡེ་ཤེས་དང་ཡོན་ཏན་དེ[1]སྤྲོ་མ་དང་འདྲའོ། །དེས་སེམས་ཅན་ཐམས་ཅད་ལ་དག་པའི་བདེ་བ་**སྦྱིན་**པ་ནི་ལས་སོ།།

༡༥ **ཆུ་ལྷ་**ནི། ལྷོ་ཕྱོགས་དྲི་མ་མེད་པའི་ཞིང་ན་སྔོན་པོ་ཆུའི་དཀྱིལ་འཁོར་ན་ཆོས་འཆད་པའི་ཕྱག་རྒྱ་ཅན་ནོ། །དེ་ཡང་**ཆུ་**ནི་ཡེ་ཤེས་ཏེ་ཤིན་ཏུ་དྲི་མ་མེད་ཅིང་དང་བའོ། །ཡང་ན་ལས་ནི་ཐུགས་རྗེ་ཆེན་པོས་དམ་པའི་ཆོས་ཀྱིས་སེམས་ཅན་གྱི་རྒྱུད་བརླན་པར་མཛད་པས་ན་**ཆུའོ**། །**ལྷ་**ནི་ཡོན་ཏན་ཏེ་མཐུ་དང་རྫུ་འཕྲུལ་ལ་སོགས་པ་དང་ལྡན་པའོ།།

༡༦ ལྷོ་ནུབ་གསལ་བའི་ཞིང་ན་དཀར་པོ་ཆུ་ལྷའི་དཀྱིལ་འཁོར་དང་མེ་ལོང་བསྣམས་པ་ནི་**ཆུ་ལྷའི་ལྷའོ**། །དེ་ལ་ཆུ་ནི་ཡེ་ཤེས་ཏེ་སྤྲ་མ་བཞིན་ནོ། །ལས་ནི་ལྷ་སྟེ་རྫུ་འཕྲུལ་ལ་སོགས་པས་སེམས་ཅན་ཐམས་ཅད་ཀྱི་དོན་མཛད་པའོ། །དེའི་ཡང་ལྷ་ནི་ཡོན་ཏན་ནོ།།

༡༧ **དཔལ་བཟང་**ནི། ནུབ་ཕྱོགས་བདེ་བ་ཅན་གྱི་ཞིང་ན་བཞུགས་པ་དམར་པོ་པདྨ་དང་དཔག་བསམ་གྱི་ཤིང་བུ་བསྣམས་པ་ཡིན་ལ། **དཔལ་**ནི་ཡོན་ཏན་ཏེ་བདག་དང་གཞན་གྱི་དོན་ཕུན་སུམ་ཚོགས་པའོ། །**བཟང་**པོ་ནི་ཡེ་ཤེས་དང་ལས་ཏེ། ཡེ་ཤེས་ཤིན་ཏུ་མཆོག་ཏུ་གྱུར་པ་དང་། གཞན་མྱ་ངན་ལས་འདས་པའི་ལམ་བཟང་པོས་མྱ་ངན་ལས་འདས་པར་འདྲེན་པ་མཛད་པའོ།།

༡༨ ནུབ་བྱང་དྲི་བཟང་པོས་ཁྱབ་པའི་ཞིང་ན་སངས་རྒྱས་**ཙནྡན་དཔལ་**དམར་སེར་ཙནྡན་གྱི་སྡོང་པོ་དང་དཔལ་འབྲས་བསྣམས་པ་བཞུགས་པའོ། །དེའི་ཡེ་ཤེས་ནི་**ཙནྡན་**ཏེ། མ་རིག་པ་ལ་སོགས་པའི་གདུང་བ་བསིལ་ཞིང་དག་པའོ།།

1 ཡོན་ཏན་ད་- སྣ། པ།

ཡང་ན་ཙནྡན་ནི་ཡོན་དན་དེ་སྟོབས་ལ་སོགས་པའི་ཡོན་དན་ཆེན་པོས་ཐམས་
ཅད་དུ་ཁྱབ་པའོ། །**དཔལ་**ནི་ལས་དེ་སྔ་མ་བཞིན་དུ་ཤེས་པར་བྱའོ།།

༢༩ **གཟི་བརྗིད་མཐའ་ཡས་**ནི། བྱང་ཕྱོགས་གཟི་བརྗིད་དང་ལྡན་པའི་ཞིང་ན་
དམར་པོ་ཉི་མ་གཉིས་བསྣམས་པ་འཁོར་མང་པོ་དང་བཅས་པ་བཞུགས་སོ། །
དེའི་ཡེ་ཤེས་ནི་**གཟི་བརྗིད་**དེ་གསལ་བའི་ཡེ་ཤེས་ཀྱིས་གཞན་གསལ་བར་
མཛད་ཅིང་ཟིལ་གྱིས་གནོན་པའི་ནུས་པ་ཅན་ནོ། །**མཐའ་ཡས་**ནི་ལས་དང་
ཡོན་དན་དེ་སེམས་ཅན་གྲངས་མེད་པའི་དོན་མཛད་པ་དང་། གཟུགས་ཅན་
དང་གཟུགས་ཅན་མ་ཡིན་པའི་ཡོན་དན་དཔག་ཏུ་མེད་པ་དང་ལྡན་པའོ།།

༣༠ བྱང་ཤར་དོན་ཡོད་པ་དང་ལྡན་པའི་ཞིང་ན་**འོད་དཔལ**དཀར་པོ། འོད་
དཀར་པོའི་དཀྱིལ་འཁོར་བསྣམས་པ་བཞུགས་ཤིང་འཚོ་སྐྱོང་བའོ། །དེ་ལ་
འོད་ནི་ཡེ་ཤེས་དེ། ཉི་མ་ཟླ་བུའི་ཡེ་ཤེས་དེས་ནི་རང་དང་གཞན་གྱི་ཉོན་
མོངས་པ་དང་ཤེས་བྱའི་སྒྲིབ་པའི་མུན་པ་སེལ་བའོ། །**དཔལ་**ནི་ཡོན་དན་
དང་ལས་དེ་སྔ་མ་ལྟར་གཉིས་སུ་ཤེས་པར་བྱའོ།།

༣༡ **མྱ་ངན་མེད་པའི་དཔལ་**ནི་འོག་གི་ཕྱོགས་སྒྲིབ་པ་དང་བྲལ་བའི་ཞིང་ན་སྐུ་
མདོག་སྔོ་སྐྱ་ཤིང་མྱ་ངན་མེད་པ་བསྣམས་པ་བཞུགས་ཏེ། དེ་ཡང་**མྱ་ངན་
མེད་པ་**ནི་ཡེ་ཤེས་དེ་འཁོར་བ་ལས་འདས་ཤིང་སྒྲིབ་པ་ཐམས་ཅད་དང་བྲལ་
བའོ། །ཡང་ན་ལས་ནི་སེམས་ཅན་ཐམས་ཅད་ཀྱི་མྱ་ངན་དེ་སྡུག་བསྔལ་དང་
འཁོར་བ་བྲལ་བར་མཛད་པས་ན་དེ་དག་མེད་པའོ། །**དཔལ་**ནི་ཡོན་དན་ནོ།།
དེ་ལ་སྔ་མ་ལྟར་སྒོ་གསུམ་དང་བསྡུ་ཚུལ་བར་བྱའོ། །དེ་དག་ནི་བཅུ་
ཚན་གཉིས་པའོ།།

ཡང་བཅུ་ཚན་གསུམ་པ་ནི།

༣༣ དེའི་ཡང་སྟེང་གི་ཕྱོགས་ན་སྲིད་པ་དང་བྲལ་བའི་ཞིང་ན**སྲིད་མེད་ཀྱི་བུ་**སྔོན་

པོ་རི་རབ་དང་པདྨའི་ཕྱུག་རྒྱ་ཅན་འཁོར་ལ་ཆོས་འཆད་ཅིང་སེམས་ཅན་རྣམས་ལ་འཚོ་སྐྱོང་ངོ་། །དེ་ཡང་**སྲིད་མེད་**ནི་ཡེ་ཤེས་ཏེ་རྟོག་དང་བྲལ་བའོ། །ལས་ནི་སྲིད་པ་མེད་པ་སྟེ་སེམས་ཅན་འཁོར་བ་ལ་ཆགས་པ་དང་བྲལ་བར་མཛད་པའོ། །དེའི་**སྲུ་**ནི་སངས་རྒྱས་ཏེ་དེ་ལས་སྐྱེས་ཤིང་བྱམས་པ་ལ་སོགས་པའི་ཡོན་ཏན་དང་ལྡན་པས་ན་སྲུ་ཞེས་བཤད་དོ།།

༣༣ ཤར་ཕྱོགས་མི་རྟོག་ཆེར་རྒྱས་པ་ཞེས་[1]བྱ་བའི་ཞིང་ན་སེར་པོ་མི་རྟོག་སེར་པོ་དང་ཤིང་རྟོག་[2]དཔལ་འབྲས་བསྣམས་པའི་སངས་རྒྱས་**མི་རྟོག་དཔལ་**བཞུགས་ཏེ་དེའི་ཡོན་ཏན་ནི་མཚན་ལ་སོགས་པ་རྒྱས་ཤིང་མཛེས་པ་དང་། ཡེ་ཤེས་**མི་རྟོག་**ལྟར་རྒྱས་པའོ། །**དཔལ་**ནི་ལས་ཏེ། །དེ་བཞིན་དུ་ཕུན་སུམ་ཚོགས་པ་དང་ལྡན་པར་བྱེད་པའོ།།

༣༤ ཤར་ལྷོ་ཚངས་པས་ཁྱབ་པའི་ཞིང་ན་**དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཚངས་པའི་འོད་ཟེར་རྣམ་པར་རོལ་པས་[3]མངོན་པར་མཁྱེན་པ་** དཀར་པོ་པདྨ་དང་འོད་ཕུང་བསྣམས་པའོ། །**དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་**ནི་སྔ་མ་ལྟར་ཏེ་འདིར་ཡང་དགྲ་བཅོམ་པ་ལ་སོགས་པའང་སྔ་མ་ལྟར་བལྟའོ། །བར་འདིར་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་གཉིས་བསྟན་པ་ནི་གོང་འོག་[4]ཡའང་ཤེས་པར་བྱའོ། །དེ་ཡང་**ཚངས་པ་**སྟེ་ཡེ་ཤེས་སོ། །**འོད་ཟེར་**ནི་ནུས་པ་སྟེ། །ཤིན་ཏུ་གསལ་ཞིང་ནུས་པ་ཆེན་པོ་དང་ལྡན་པའོ། །**རྣམ་པར་རོལ་པ་**ནི་ལས་ཏེ། ཛྫུ་འཕྲུལ་ལ་སོགས་པས་སེམས་ཅན་གྱི་དོན་མཛད་པའོ། །ཐུགས་ཀྱི་ཡེ་ཤེས་

---

1 ཞེས་- གསེར་བྲིས་སུ་མི་གསལ།

2 ཤིང་ཐོག་- སྡེ། ཅོ།

3 རོལ་པ་- སྣ། པེ། རོལ་པས་- མདོ།

4 གོང་འོག་- སྡེ།

ཀྱིས་[1] དོན་བྱའི་ཐབས་ལ་སོགས་པ་གསལ་བར་རྟོགས་པ་ནི་**མངོན་པར་མཁྱེན་པའོ**།།

༣༥ ལྷོ་ཕྱོགས་པདྨ་དང་ལྡན་པའི་ཞིང་ན་**དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་པདྨའི་འོད་ཟེར་རྣམ་པར་རོལ་པ་མངོན་པར་མཁྱེན་པ་** དམར་པོ་པདྨ་དང་ཉི་མའི་ཕྱག་རྒྱ་ཅན་ནོ། །དེ་ལ་**པདྨ་**ནི་ཡེ་ཤེས་ཏེ་པདྨ་ཉིས་པས་མ་གོས་ལ་མ་ཆགས་ཤིང་རྒྱས་པའོ། །**འོད་ཟེར་**ནི་ཡོན་ཏན་ནོ། །**རྣམ་པར་རོལ་པ་**ལ་སོགས་པ་ནི་ལས་སོ།།

༣༦ ལྷོ་ནུབ་ནོར་བུ་ཡོད་པའི་ཞིང་ན་**ནོར་དཔལ་**དམར་པོ་དཀར་བའི་མདངས་ཅན་ཕྱག་རྒྱ་རིན་པོ་ཆེ་གཉིས་ཅན་ནོ། །དེ་ལ་**ནོར་**ནི་ཡེ་ཤེས་ཏེ། ཡེ་ཤེས་ཆེན་པོ་མི་ཟད་པ་དང་། ནོར་བུའི་ཡོན་ཏན་དང་འདྲ་བའི་ཡོན་ཏན་ཆེན་པོ་དང་ལྡན་པས་འདོད་པ་ཐམས་ཅད་བསྐང་བ་ནི་ལས་སོ། །ཡོན་ཏན་ནི་**དཔལ་**ཏེ་གཉིས་སོ།།

༣༧ ནུབ་ཕྱོགས་གསལ་བ་དང་ལྡན་པའི་ཞིང་ན་**དྲན་པའི་དཔལ་**སེར་པོ་པོ་ཏི་དང་རལ་གྲི་ཅན་ནོ། །དེ་ལ་དྲན་པ་ནི་ཡེ་ཤེས་ཏེ། ཡེ་ཤེས་ཆེན་པོ་མི་བརྗེད་པའི་གཟུངས་དང་ལྡན་པ་དང་། ཡང་ཡོན་ཏན་ནི་**དྲན་པ་**སྟེ། རྣམ་པ་ཐར་པ་བསམ་གྱིས་མི་ཁྱབ་པའི་ཡོན་ཏན་ནོ། །ལས་ནི་**དཔལ་**ལོ།།

༣༨ ནུབ་བྱང་མཚན་མ་མེད་པའི་ཞིང་ན་ལྗང་གུ་ཕྱག་གཉིས་ཀྱིས་དེ་བཞིན་གཤེགས་པའི་གཙུག་ཏོར་དབུའི་སྟེང་དུ་འདོགས་པ་ནི་**མཚན་དཔལ་ཤིན་ཏུ་ཡོངས་གྲགས་**སོ། །དེ་ལ་**མཚན་**ནི་ཡེ་ཤེས་ཏེ། མི་ཟད་པའི་ཡེ་ཤེས་འཛིན་པའོ།། **དཔལ་**ནི་ལས་སོ། །ཤིན་ཏུ་ཡོངས་གྲགས་ནི་ཡོན་ཏན་ཏེ། འཇིག་རྟེན་གྱི་ཁམས་སུ་སྙན་པ་ཁྱབ་པར་གྱུར་བའི་གྲགས་པ་ཆེན་པོའོ།།

---

1 ཡེ་ཤེས་ཀྱི་- པེ།

༢༩ བྱང་ཕྱོགས་དབང་པོ་གསལ་བའི་ཞིང་ན་**དབང་པོ་ཏོག་གི་རྒྱལ་མཚན་གྱི་རྒྱལ་པོ་**སེར་པོ་རིན་པོ་ཆེ་ཏོག་དང་རྒྱལ་མཚན་ཅན་ནོ། །དེ་ལ་**དབང་པོ་ཏོག་**[1]ནི་ཡེ་ཤེས་ཏེ། དབང་པོས་ཡུལ་རྟོགས་པ་ལྟར་ཡེ་ཤེས་དེས་ཆོས་ཉིད་རྟོགས་ཤིང་དེ་ཉིད་མཛེས་པས་ན་ཏོག་གོ །**རྒྱལ་མཚན་**ནི་ཡོན་ཏན་ཏེ་ཐམས་ཅད་འཁོར་བ་ལས་རྒྱལ་བར་བྱེད་པའི་ཡོན་ཏན་ནོ། །ལས་ནི་**རྒྱལ་པོ་**སྐྱེ་བོ་ཐམས་ཅད་མཛད་པའོ།།

༣༠ བྱང་ཤར་རོལ་པ་དང་ལྡན་པའི་ཞིང་ན་**ཤིན་ཏུ་རྣམ་པར་གནོན་པའི་དཔལ་དཀར་པོ་ས་གནོན་པ**འི་ཕྱག་རྒྱ་ཅན་ནོ། །དེ་ལ་**ཤིན་ཏུ་**ནི་ཡེ་ཤེས་ཏེ་ཡང་དག་པའི་ཡེ་ཤེས་སོ། །ལས་ནི་**རྣམ་པར་གནོན་པ་**སྟེ། །སེམས་ཅན་ཐམས་ཅད་ཀྱི་[2]བདུད་དང་ཉོན་མོངས་པ་ལ་སོགས་པ་ཐམས་ཅད་འཇོམས་པའོ།། **དཔལ་**ནི་ཡོན་ཏན་ཏེ་སྔ་མ་ལྟར་གཉིས་སོ།།

༣༡ འོག་གི་ཕྱོགས་ན་ཉོན་མོངས་པ་མེད་པའི་ཞིང་ན་**གཡུལ་ལས་ཤིན་ཏུ་རྣམ་པར་རྒྱལ་བ་**ནི་ནག་པོ་ཁྲབ་དང་རལ་གྲི་བསྣམས་པའོ། །དེའི་ལས་ནི་གཡུལ་ལས་རྒྱལ་བ་སྟེ། །སེམས་ཅན་ཐམས་ཅད་ཀྱི་ལས་དང་ཉོན་མོངས་པའི་**གཡུལ་**ངོ་བཟློག་པའོ། །**ཤིན་ཏུ་**ཡེ་ཤེས་སོ། །ཡོན་ཏན་ནི་[3]**རྣམ་པར་རྒྱལ་བ་**སྟེ་བདག་དང་གཞན་འཁོར་བ་ལས་རྒྱལ་བའི་ནུས་པ་མངའ་བའོ།།

༣༢ ཡང་དེ་དག་གི་ཕྱིའི་གཞི་ལ་ཤར་ཕྱོགས་དཔལ་དང་ལྡན་པའི་ཞིང་ན་**རྣམ་པར་གནོན་པས་གཤེགས་པའི་དཔལ་**དཀར་པོ་ས་གནོན་དང་མི་འཇིགས་པའི་ཕྱག་རྒྱ་ཅན་ནོ། །དེའི་ལས་ནི་**རྣམ་པར་གནོན་པ་**སྔ་མ་བཞིན་ནོ། །

---

1 དབང་པོ་ཏག་- པེ།

2 ཀྱིས་- པེ། གསེར།

3 འདི་- པེ། གསེར།

གཤེགས་པ་ནི་ཡེ་ཤེས་དེ་མཐར་ཐུག་པ་རྟོགས་པའོ། །ཡོན་དན་ནི་**དཔལ་**དེ་སྐྱ་མ་ལྟར་རོ།།

༣༣ ལྷོ་ཕྱོགས་སྣང་བ་བཀོད་པའི་ཞིང་ན་**ཀུན་ནས་སྣང་བ་བཀོད་པའི་དཔལ་**སེར་པོ་ཉི་མ་དང་རིན་པོ་ཆེའི་སྡོང་བུ་བསྣམས་པའོ། །དེ་ལ་ལས་ནི་ **ཀུན་ནས་སྣང་བ་**སྟེ། ཡེ་ཤེས་ཀྱིས་ [1]སེམས་ཅན་གྱི་མ་རིག་པ་སེལ་བའོ། །བཀོད་པ་ནི་ཡེ་ཤེས་དེ་དཔག་ཏུ་མེད་པའི་ཡེ་ཤེས་སོ། །**དཔལ་**ནི་ཡོན་ཏན་ནོ།།

༣༤ ནུབ་ཕྱོགས་དཔལ་དང་ལྡན་པའི་ཞིང་ན་**རིན་ཆེན་པདྨ་རྣམ་པར་གནོན་པ་**དམར་པོ་རིན་པོ་ཆེ་དང་པད་མ་བསྣམས་པའོ། །དེ་ལ་**རིན་ཆེན་**ནི་ཡོན་ཏན་ནོ། །**པདྨ་**ནི་ཡེ་ཤེས་དེ་དྲི་མ་དང་བྲལ་བའོ། །ལས་ནི་**རྣམ་པར་གནོན་པ་**སྟེ་སྔ་མ་བཞིན་ནོ།།

༣༥ བྱང་ཕྱོགས་རིན་པོ་ཆེའི་ཞིང་ན་**དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དགྲ་བཅོམ་པ་ཡང་དག་པར་རྫོགས་པའི་སངས་རྒྱས་**རིན་པོ་ཆེ་པདྨའི་གདན་ལ་རབ་ཏུ་བཞུགས་པ་**རི་དབང་གི་རྒྱལ་པོ་**བཞུགས་ཤིང་འཚོ་སྐྱོང་སྟེ། དེའི་གདན་པདྨ་དང་སེང་གེ་དང་རིན་པོ་ཆེ་དང་ཟླ་བའོ། །ནམ་མཁའ་ལྟར་སྔོ་བ་ཕྱག་གཉིས་ཀྱིས་**རི་རབ་**བཏེག་པ་སྤྱན་དྲངས་ཏེ་[2]བཤགས་ལ། སྒྲུབ་པ་པོས་ནི་དེ་ལྟར་བསམས་[3]ལ་བཤགས་སོ། །**དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་**ལ་སོགས་སྔ་མ་ལྟར་ཤེས་པར་བྱའོ། །དེ་ལ་**རིན་པོ་ཆེ་པདྨ་**སྟེ་དེས་ནི་གདན་གྱི་ཡོན་ཏན་དང་ལས་དང་ཡེ་ཤེས་བཤད་དེ་གཞན་ལས་གདན་འདི་ཤེས་པར་བྱའོ། །ལ་ལ་ལས་ནི་ཟླ་བ་ཞེས་པ་ཡོད་དེ་དེ་ནི་ལས་སུ་ཤེས་པར་བྱ་སྟེ། འདི་ནི་ཐམས་

---

1 ཀྱི་- གསེར་བྲིས།

2 དྲང་སྟེ་- སྣ། པེ།

3 བསམ་- པེ།

ཅན་ལ་ཤེས་པར་བྱའོ། །**རི་དབང་**ནི་ཡེ་ཤེས་དང་ཡོན་ཏན་ཏེ་རིའི་རྒྱལ་པོ་ལྟར་མི་བསྒུལ་བའི་ཡེ་ཤེས་དང་ཡོན་ཏན་རི་རབ་ལྟ་བུའོ། །**རྒྱལ་པོ་**ནི་ལས་སོ། །དེ་ལ་སྒོ་གསུམ་དང་བས་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །ཞེས་པ་ནི་ཚིག་གི་དོན་ཏོ།། འདི་དག་ནི་སྟོན་ཕྱིན་པ་སྟེ་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་ལ་ནི་ལྟུང་བ་བྱུང་བ་མེད་ཅིང་བཅོས་མ་ཡིན་ལ། མ་འོངས་པ་ལ་གདམས་པ་སྟེ་བསམས་[1]ལ་བཤགས་པར་བྱའོ།།

དེ་ལྟར་ཕྱག་འཚལ་བ་བཤད་ནས་དེ་དག་གི་སྤྱན་སྔར་སྡིག་པ་བཤགས་ཏེ། དེ་ཡང་སངས་རྒྱས་དེ་དག་ལ་ཐུགས་གཏད་[2]པར་གསོལ་བ་གདབ་པ་ནི་**དེ་དག་ལ་སོགས་**ཏེ་ཞེས་བྱ་བ་ལ་སོགས་པ་གསུངས་སོ།།

དེ་ལ་བདག་གིས་པུས་མོ་གཉིས་ས་ལ་བཙུགས་ལག་པ་སྤྱི་བོར་ཐལ་མོ་སྦྱར་ཏེ་གུས་པས་འདི་དག་བརྗོད་པས་བདག་གི་དཔང་པོ་མཛད་པར་བསམ་མོ། །དེ་ལ་དེ་དག་ནི་སོ་ལྔ་པོ་དེ་དག་གོ།

དེ་ནི་གདུལ་བྱ་ལ་དགོངས་པ་སྟེ། གཞན་ཡང་སོགས་པས་ནི་དེ་དག་ཀུང་དཔང་པོར་བྱས་པའོ། །ཤར་ལ་སོགས་པའི་**ཕྱོགས་བཅུའི་འཇིག་རྟེན་ཐམས་ཅད་**དེ་ནམ་མཁའི་མཐར་ཐུག་པའི་སངས་རྒྱས་ཐམས་ཅད་དམིགས་པའོ། །**དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་**ལ་སོགས་པ་ནི་གོ་སླའོ། །**ཇི་སྙེད་ཅིག་**ནི་བགྲང་བ་ལས་འདས་པའི་གྲངས་སོ། །**འཚོ་བ་**ནི་ཐུགས་རྗེའི་སྤྱན་གྱིས་སེམས་ཅན་གཟིགས་ནས་སྐྱོང་བའོ།། **བཞེས་པ་**ནི་བཞུགས་པ་སྟེ་འཁོར་བ་ཇི་སྲིད་ཀྱི་བར་དུའོ། །**བཅོམ་ལྡན་འདས་**

---

1 བསམ་- པེ།

2 བསྣད་- སྣ། པེ།

ནི་སྐལ་བ་དང་ལྡན་ཞིང་བདུད་བཞི་[1]བཅོམ་པའོ། **ཀེ་དག་ཐམས་ཅད་** ནི་སོ་ལྡ་ལ་སོགས་པའོ། །**བདག་**ཅེས་པ་ནི་དང་པོའི་མིང་བརྗོད་པར་བྱའོ། །ཐུགས་མི་འགྱུར་བར་གསོལ་བ་གདབ་པ་ནི**དགོངས་སུ་གསོལ་**བའོ།།

གཉིས་པ་བཤགས་པ་རང་གི་ངོ་བོ་ལ་དུས་ཀྱི་སྒོ་ནས་བསྟན་པ་ནི། **བདག་གི་**[2]**སྐྱེ་བ་**ཞེས་བྱ་བ་ལ་སོགས་པའོ། །**བདག་གི་**དུས་འདི་ཙམ་དུ་ཟློག་པ་བྱས་སོ་ཞེས་སེམས་ལ་བསམས་ནས་འགྱོད་པ་བསྐྱེད་པའོ། །དེ་ལ་**སྐྱེ་བ་འདི་**ནི་དུས་འདིར་ཟློག་པ་བྱས་པ་དྲན་པར་བྱའོ། །དེས་མཚོན་ནས་ **སྐྱེ་བ་ཐོག་མ་མེད་པ་**སྐེ་སྔ་མ་འདས་པ་ནས་དཔག་ཏུ་མེད་པ་སྟེ། འཁོར་བ་ཐོག་མ་མེད་པའི་དུས་ཅན་ནོ། །**ཐོག་མ་མེད་པ་**ནི་སྤྱིར་དགོངས་པ་འཁོར་བའི་སེམས་ཅན་ནམ་མཁའ་ལྟར་མཐའ་ཡས་པའོ། །དེ་དག་ཏུ**འཁོར་བ་**ནི་ཟོ་ཆུན་གྱི་འཁྲུལ་འཁོར་ལྟར་ཡང་ནས་ཡང་དུ་འབྱུང་ཞིང་འཇིག་པའོ། །དེ་ཡང་ཚེ་རབས་སྔ་མ་ལ་སོགས་པར་འཁོར་བ་བཞིན་འདི་དང་ཕྱིས་སོ། །**སྐྱེ་གནས་**[3]གཞན་ནི་བྱོལ་སོང་ལ་སོགས་པ་དྲུག་པོའི་མངལ་ལ་སོགས་པར་རོ།།

གསུམ་པ་རང་གི་ངོ་བོའི་སྒོ་ནས་ཟློག་པ་བཤགས་པ་ནི། **ཟློག་པ་**ཞེས་བྱ་བ་ལ་སོགས་པའོ། །དེ་ཡང་བདག་གིས་[4]ཟློག་པ་འདི་ཙམ་ཞིག་བྱས་པ་ཞེས་འགྱོད་དེ།

1 བདུད་བཞི་ནི། ཉོན་མོངས་པའི་བདུད། ཕུང་པོའི་བདུད། འཆི་བདག་གི་བདུད། ལྷའི་བུ་ཡི་བདུད། བློ་གྲོས་རྒྱ་མཚོས་ཞུས་པའི་མདོ། Toh-152 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "ཕ" ༣༧ བ ༥ བདུད་བཞིའི་སྐོར་མདོ་འདིའི་ནང་རྒྱས་པར་གསལ།

2 མདོར་- བདག་གིས།

3 སྐྱེ་གནས་- སྐྱ།

4 བདག་གི་- ཡི།

སེམས་སྲུན་བརྟོན་ལ་བཤགས་པར་བྱའོ་ཞེས་བྱ་བའི་དོན་ཏོ། །སྡིག་པ་བྱས་པ་ཡང་ རྒྱུ་མ་རིག་པ་ལ་བརྟེན་ནས་རྐྱེན་འདོད་ཆགས་ལ་[1]སོགས་པ་གསུམ་གྱིས་བྱེད་པ[2] ལུས་ལ་སོགས་པ་གསུམ་གྱིས་བྱས་སོ།[3] །དེ་ཡང་གསུམ་སྟེ། བྱས་ལ་མ་བསགས་པ་དང་། མ་བྱས་ཀྱང་བསགས་པ་དང་། བྱས་ལ་བསགས་པའི་སྡིག་པ་གསུམ་སྟེ་འདི་དག་ནི་མདོ་སྡེ་ལྟར་ཤེས་པར་བྱའོ། །དེ་ལ་སྡིག་པ་ནི་ངན་སོང་དུ་འགྲོ་བའི་རྒྱུ་ལྟས་སོ། །འབྲས་བུ་ངན་སོང་སྐྱེད་ཅིང་དམ་པས་སྨད་པས་ན་མི་དགེ་བའོ། ། ལས་ནི་གོས་ཤིང་འབྱུར་བ་སྟེ། ལུས་ལ་སོགས་པས་སྲོག་གཅོད་པ་ལ་སོགས་པ་བཅུའོ། །ལྟ་ཡང་ལ་སོགས་པ་ནི་གཞན་ལྟར་ཤེས་པར་བྱའོ། །དེ་ཡང་གསུམ་སྟེ་ བདག་གིས་[4]དངོས་སུ་བྱས་པ་དང་། གཞན་**བསྒྱིད་**[5]**དུ་སྩལ་བ་**དང་། **བྱེད་པ་ལ་**[6]**རྗེས་སུ་ཡི་རང་བ་** གསུམ་ནི་རྣམ་པར་སྨིན་པ་འདྲ་སྟེ། ཁྱད་པར་དུ་ནི་ **བསྒྱིད་དུ་སྩལ་བ་**སྡེ་ཐེག་པ་ཆེན་པོ་པ་ཡིན་པའི་ཕྱིར་རོ། །དེ་དག་ནི་སྤྱི་ཡིན་ནོ།།

བྱེ་བྲག་ནི་མ་བྱིན་[7]པར་ལེན་པ་ལ་སོགས་པའི་ ནང་ནས་ལྗི་བ་ལྔ་ལས་འདིར་གསུམ་སྟེ། སེམས་ཅན་གྱི་དོན་དུ་**མཆོད་རྟེན་**བརྒྱད་པོའི་གསེར་ལ་སོགས་པའི་ནོར་རོ། །**དགེ་འདུན་**ནི་མི་ཕྱེད་པ་སྟེ། བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་དང་ཉན་ཐོས་ཀྱིས་ཕྱེ་བའོ། །དེ་ཡང་དང་པོ་ནི་གཉིས་ལ་སོགས་པའི་འོ།[8] །

---

1 ཆགས་པ་- པེ།

2 གསུམ་གྱི་ཕྱེད་པོ་- སྡེ། ཅོ།

3 བྱས་པའོ།- སྣར། པེ། གསེར།

4 བདག་གི་- སྣར།

5 གཞན་བྱིད་- པེ།

6 བགྱིད་པ་ལ་- སྣར།

7 མ་ཕྱིན་- སྡེ།

8 ལ་སོགས་ཡིའོ།- སྣར། པེ།

གཉིས་པ་ནི་དགེ་སློང་བཞི་ལ་སོགས་པའོ། །དེ་བས་ཀྱང་ལྕི་བ་ནི་ཕྱོགས་བཞིའི་**དགེ་འདུན་ལ**་སོགས་པའི་མགྲོན་པོ་[1]ལ་སོགས་པའི་ནོར་ཕྲ་བ་དང་དངོས་སུ་**འཕྲོག་པ**འོ། །ཤིན་ཏུ་ལྕི་བ་ནི་མཚམས་མེད་པ་ལྔའོ། །དེ་ཡང་སྡུག་བསྔལ་དང་བར་དོ་མེད་པར་ཡིན་ཏེ། འདིའི་སྡིག་པའི་འབྲས་བུ་ལ་ནི་ཚད་མེད་དོ། །ཉེས་པ་མེད་པ་དང་ཆུང་བ་ཡང་ཤེས་པར་བྱའོ།།

གཞན་ཡང་གཞན་དག་སྲོག་གཅོད་པ་ལ་སོགས་པ་བཅུ་ལྡངས་པ་[2]དེའི་ཟླ་ལ་ཐེ་ཚོམ་མེད་པར་བདག་ཞུགས་པ་[3]ཡང་ཤེས་པར་བྱའོ། །དེ་དག་གི་ཉེས་དམིགས་ཀྱི་སྒོ་ནས་བསྟན་པ་ནི་**ལས་ཀྱི་སྒྲིབ་པ**་ལ་སོགས་པའོ། །དེ་ཡང་རྣམ་པར་སྨིན་པ་འདི་ལྟ་བུ་ཆ་བ་ཡིན་ལ་བསམས་ཏེ།[4] རང་གི་སེམས་སུན་བཏོན་ལ། ཤིན་ཏུ་འགྱོད་པས་བཤགས་པར་བྱའོ། །ཞེས་བྱ་བ་ནི་ངག་གི་དོན་ཏོ། །དེ་ཡང་ལས་དེ་དག་གིས་བསྒྲིབས་པ་ནི་ཡེ་ཤེས་མི་གསལ་བར་བྱས་པའོ[5]། །དེ་དག་གི་རྣམ་པར་སྨིན་པ་ཅིར་འགྱུར་ཞེ་ན། སེམས་ཅན་དམྱལ་བ་ལ་སོགས་པའི་མི་ཁོམ་པ་བརྒྱད་དེ། དམ་པའི་ཆོས་ཀྱི་གོ་སྐབས་མེད་ལ། ལ་ལ་ད་ལྟར་[6]སྡུག་བསྔལ་དང་བཅས་

---

1 འགྲོན་པོ་- པེ།

2 པ་- གསེར་བྲིས་སུ་མི་སྣང་།།

3 འདག་པར་ཞུགས་པ་ཡིན་ནམ་སྙམ་མོ།།

4 བསམ་ཏ་- པེ།

5 བྱའོ་- གསེར་བྲིས།

6 ལ་ལ་དེ་ལྟར་- སྣེ། ཅོ།

ལ། ལ་ལ་ཕྱིས་འགྱུར་བས་མི་ཁོམ་པ་སྐྱེ་དལ་འབྱོར[1]མེད་པའོ། །དེ་ལ་ **དམྱལ་བ**་ནི་ཤིན་ཏུ་སྡུག་བསྔལ་བ་སྐྱེ་ཕལ་པོ་ཆེ་དང་[2]ཁ་འཐོར་བའོ།[3] །དེ་ལ་[4] དང་པོ་ནི་ཚ་བ་དང་གྲང་བས[5]བཅུ་དྲུག་[6]གོ །གཉིས་པ་ནི་གནས་ཀྱིས་[7]གཉིས་ཏེ། དེ་དག་ནི་མདོ་དྲན་པ་ཉེ་བར་གཞག་པ[8]ཆེན་པོ་[9]ལས་ཤེས་པར་བྱ་སྟེ། ལས་ངན་པ་ཤིན་ཏུ་ཆེ་བའི་འབྲས་བུ་ཡིན་ནོ། **དུད་འགྲོ**་ནི་མི་ཤེས་པ་སྟེ། དེའི་**སྐྱེ**་

---

1 དལ་བའི་གོ་དོན་ནི། མི་ཁོམ་པ་བརྒྱད་ཀྱི་གནས་ལས་གྲོལ་བས་དལ་བ། འབྱོར་བ་བཅུའི་གྲངས་ནི། འབྱོར་བ་ལ་རང་འབྱོར་ལྔ་དང་གཞན་འབྱོར་ལྔ་སྟེ་བཅུའོ། །རང་འབྱོར་ལྔ་ནི། མི་ཡིན་པ། ཡུལ་དབུས་སུ་སྐྱེས་པ། དབང་པོ་ཚང་བ། ལས་ཀྱི་མཐའ་ལས་མ་ལོག་པ། སངས་རྒྱས་ཀྱི་བསྟན་པ་ལ་དད་པ། གཞན་འབྱོར་ལྔ་ནི། སངས་རྒྱས་བྱོན་པ། དམ་ཆོས་སྟོན་པ། བསྟན་པ་གནས་པ། བསྟན་པའི་རྗེས་སུ་འཇུག་པ། མཐུན་རྐྱེན་དགེ་བའི་བཤེས་གཉེན་ཡོད་པ།

2 དང་- པེ་ཅིང་དཔར་མར་མི་སྣང་།

3 ཡོངས་གྲགས་ཞལ་རྒྱུན་ལྟར་ན་དུད་འགྲོ། ཕྱིངས་ལ་གནས་པ་དང་ཁ་འཐོར་བའོ་ཞེས་བཤད་སྲོལ་ཡོད། དམྱལ་བར་ཕལ་པོ་ཆེ་དང་ཁ་འཐོར་བའོ་ཞེས་པའི་དབྱེ་རྩལ་འདི་འདྲ་གཞུང་འདི་ཁོ་ནའོ།།

4 དེ་ཡང་- སྣ། པེ།

5 གྲངས་བས་- པེ།

6 ཚ་བ་དང་གྲང་བའི་དམྱལ་ཁམས་བཅོ་བརྒྱད་ནི། ཡང་སོས། ཐིག་ནག བསྡུས་འཇོམས། ངུ་འབོད། ངུ་འབོད་ཆེན་པོ། ཚ་བ། རབ་ཏུ་ཚ་བ། མནར་མེད་བཅས་ལ་ཚ་དམྱལ་བརྒྱད་དང་། ཆུ་བུར་ཅན། ཆུ་བུར་རྡོལ་བ། སོ་ཐམ་པ། ཀྱི་ཧུད་ཟེར་བ། ཨ་ཆུ་ཟེར་བ། ཨུཏྤལ་ལྟར་གས་པ། པདྨ་ལྟར་གས་པ། པདྨ་ལྟར་གས་པ་ཆེན་པོ་བཅས་ལ་གྲང་དམྱལ་བརྒྱད་དོ།། ཆོས་མངོན་པ་མཛོད་ཀྱི་རང་འགྲེལ། ཤོག ༣༦༧ དང་ ༣༦༨ ལྷ་ཆ་དགེ་ལྡན་སྤྱི་ལས་ཁང་ནས་དཔར་བསྐྲུན། དེབ་གཟུགས། ༡༩༩༧

7 གནས་ཀྱི་- པེ།

8 ངན་པ་ཉེར་བཞག་- པེ།

9 དྲན་པ་ཉེ་བར་བཞག་པའི་མདོ་ཆེན་པོ། Toh-287 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། པོད་ "ཡ། ར། ལ། ཤ།" བཅས་ལ་བཏོན།

བའི་གནས་ནི་མངལ་ནས་སྐྱེ་བ་ལ་སོགས་པའོ། །དེ་ཡང་གཉིས་ཏེ། དབྱིབས་
ཀྱིས་ནི་བཞིའོ། །དེ་ནི་ཐ་མའི་འོ། །ལས་བར་མ་ནི་**ཡི་དྭགས་**ཏེ་ཟས་ལ་
སོགས་པ་བཟའ་བ་ལ་སོགས་པ་འདོད་ལ་དེ་མེད་པ་སྟེ། །དེའི་**ཡུལ་**ནི་འདུག་སྟེ།
གཤིན་རྗེའི་འཇིག་རྟེན་ནོ། །དེ་ཡང་གཉིས་སུ་ཤེས་པར་བྱའོ། །ཡང་ན་ངན་སོང་
གསུམ་པོ་དེ་དག་གི་རྒྱུ་ནི་ཕལ་ཆེར་སྲོག་གཅོད་པ་དང་སེར་སྣ་དང་གཏི་མུག་ལས
ཤེས་པར་བྱའོ། །གསུམ་པོ་དེ་དག་ནི་[1]ངན་པར་སོང་བ་ཡིན་នོ། །ལས་ངན་པ
ཤིན་ཏུ་ཆུང་བ་ནི**ཡུལ་མཐའ་འཁོབ་**ལ་སོགས་སྟེ། མི་དང་ལྷའི་នང་ནས་མི
ཁོམ་པ་ཡིན་នོ། །ངན་པ་འདི་དག་ནི་ངན་འགྲོ་ཡིན་នོ། །**མཐའ་འཁོབ་**ནི་ཡུལ
གང་ན་ཆོས་ལ་སོགས་པ་མེད་པ་སྟེ།[2] ཡུལ་གྱི་མཐའོ།[3] །**ཀླ་ཀློ་**ནི་གླེན་ཞིང
ལྐུགས་པའི་རང་བཞིན་ཏེ་སྐད་བཟང་པོ་མེད་པ་ལ་སོགས་པ་མི་ཤེས་པའོ། །ཡང
ན་ཡུལ་མཐའ་འཁོབ་ཀྱི་ཀླ་ཀློ་ཞེས་ལ་ལ་དག་བྱེད་དོ། །དེ་དག་རྒྱུ་དེས་ལས་ངན
པ་བྱེད་པས་ངན་སོང་དུ་འགྲོ་བའོ། །**ལྷ་ཚེ་རིང་པོ་**ནི་བསོད་ནམས་ཆེ་ཞིང་ང
རྒྱལ་ཆེ་བ་སྟེ་བསྐལ་པ་དཔག་ཏུ་མེད་པར་གནས་པ་ལྷ་བ་ལོག་པ་གཟུགས་ཀྱི་ཁམས
ཀྱི་གནས་ནའོ། །ཡང་ན་འགོག་པ་ངན་པ་སྒྲུངས་པས་འདུ་ཤེས་འགོག་པ་ཡིན་ནོ
ཞེས་ཀྱང་འཆད་དོ། །དེ་ཤི་ནས་དམྱལ་བར་འགྱུར་རོ། །མིར་སྐྱེས་ན་གཟུགས
ལ་སོགས་པ་ལ་དབང་བྱེད་པའི་མིག་ལ་སོགས་པའི་**དབང་པོ་**ལྔའམ་དྲུག་པ་ལ
སྐྱོན་ཞུགས་པས་དམ་པའི་ཆོས་ཀྱི་སྐལ་པ་མེད་པ་ཡིན་ཏེ། གཅིག་དང་། གཉིས
དང་། གསུམ་དང་། བཞི་དང་། ལྔ་དང་། དྲུག་ཀ་མ་ཚང་བ་སྲིད་དོ། །ཤིན
ཏུ་ཡིད་ཀྱི་**དབང་པོ**ལ་སྐྱོན་ཞུགས་པ་ནི་ངན་པའོ། །ཡང་དག་པའི་**ལྟ་བ་**དང

---

1 དེ་དག་ན་- ཞོ།

2 མེད་པའོ། ཞོ། པེ། གསེར

3 མཐའ་འོ། པེ།

བྲལ་བ་སྟེ་སངས་རྒྱས་ལ་སོགས་པ་མེད་དོ་ཞེས་སེམས་པ་ལྟ་བ་ཡིན་ཏེ་**ལོག་**ཉི་ཚད་པར་ལྟ་བ་སྟེ། མི་དགེ་བ་ཐམས་ཅད་པས་ལྷི་བའོ། །གཞན་པ་རྟག་པར་ལྟ་བ་ལ་སོགས་པ་ཡང་ངོ་། །དེ་ལྟར་ན་བརྒྱད་དོ། །**སངས་རྒྱས་འབྱུང་བ་**ནི་ཡིན་ཏེ། དེ་[1]འཇིག་རྟེན་དུ་བྱོན་པ་ཕྱག་ལ་སོགས་པ་མི་བྱེད་པར་སྐུར་བ་འདེབས་པའོ། །ཡང་དེས་མཚོན་ནས་སངས་རྒྱས་མེད་པའི་གནས་སུ་སྐྱེས་པ་ནི་བརྒྱད་པའོ།།

དེ་ལྟར་རང་གི་ངོ་བོ་བསྟན་ནས། ཡུལ་གང་ལ་བཤགས་པ་ནི། **སངས་རྒྱས་**ཞེས་བྱ་བ་ལ་སོགས་པ་སྟེ་འདི་ཁོ་ན་དཔང་པོ་བཟང་པོ་ཡིན་གྱི་གཞན་ནི་མ་ཡིན་ནོ། །དེ་ལ་**སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་**ནི་ཤཱཀྱ་ཐུབ་པ་ལ་སོགས་པ་དེ་རྣམས་སོ། །དེ་དག་ནི་ཐམས་ཅད་མཁྱེན་པས་ན་**ཡེ་ཤེས་**སོ། །དགེ་སྡིག་གི་ལས་ལ་སོགས་པ་[2]གསལ་བར་རྟོགས་པས་ན་**སྤྱན་**ནོ། །**དཔང་**པོ་ནི་ལེགས་པ་དང་ཉེས་པའི་ཁྱད་པར་ཐུགས་སུ་ཆུད་པའོ། །ཚིག་ལ་སོགས་པ་འཁྲུལ་པ་མེད་པས་ན་**ཚད་མ་**སྟེ་མི་སླུ་བའོ། །ཐུགས་ཀྱིས་[3]ཐམས་ཅད་མཁྱེན་པས་ན་**མཁྱེན་**པའོ། །ཤེས་རབ་ཀྱི་སྤྱན་གྱིས་ཐམས་ཅད་གཟིགས་པས་ན་**གཟིགས་པ**འོ། །**སྤྱན་སྔར་**ནི་ད་ལྟར་མདུན་དུའོ།།

རྒྱལ་ཇི་ལྟར་བཤགས་པ་ནི། **མཐོལ་བ་**ལ་སོགས་པ་སྟེ། ཡང་དག་པར་ཡིན་གྱི་ངག་འཁྲུལ་ལ་སོགས་པ་ནི་མ་ཡིན་ནོ། །དེ་ལ་ངག་གིས་[4]བརྗོད་པ་ནི་མཐོལ་བའོ། །**འཆགས་**པ་ནི། ཡིད་ཀྱིས་སོ་སོར་རོ། །ཉེས་པ་དེ་ཁས་ལེན་

1 དེ་- གསེར་ཕྲེང་སུ་མི་སྣང་།

2 སོགས་པར་- སྣ། པེ། གསེར།

3 ཐུགས་ཀྱི་- སྣ། པེ། གསེར།

4 ངག་གི་- སྣ།

པས་ཞེ་[1]ལ་**མི་འཆབ**་པའོ། །**མི་སྦེད**་པ་ནི་དངོས་སུ་སྟེ། དེ་བཞིན་[2]བཤགས་ན་དག་པར་འགྱུར་རོ།།

དེ་ལྟར་སྟོབས་གཉིས་བསྟན་ནས། ད་ནི་[3]**ཉེས་པ་ལས་ཀུན་ཏུ་ལྡོག་པའི་སྟོབས**་ཀྱིས་སྡིག་པ་བཤགས་པ་ནི། **སླན་ཆད་ཀྱང་གཅོད་ཅིང་སྡོམ་པར་བགྱིད་ལགས་སོ**་ཞེས་གསུངས་སོ། །དེ་ཡང་སྔར་གྱི་འགྱོད་ཅིང་། ད་ལྟར་གྱི་འཆགས་ལ། ཕྱིས་མི་བྱེད་པ་ནི་དམ་པ་ཡིན་ལ། བཤགས་ཀྱང་ཕྱིས་ན་སླར་འཕེལ་བར་འགྱུར་བས་ན་ནད་ལ་གསོད་པ་ན་བཟའ་བཏང་ལྟར་མཚམས་གཅད་[4]པར་བྱའོ། དེ་**ཕན་ཆད་ཀྱང**་མི་དགེ་བ་བཅུ་ལ་སོགས་པའི་ཉེས་པ་རྣམས་རྒྱུན་**གཅོད་ཅིང**་ཕྱིས་མི་བྱེད་པར་**བསྡམས**་ཏེ་དེས་ནི་སྡིག་པ་དག་པར་འགྱུར་རོ།།

དེ་ལྟར་སྟོབས་གསུམ་པ་བསྟན་ནས། ད་ནི་**གཉེན་པོ་ཀུན་དུ་སྤྱོད་པའི་སྟོབས**་ནི། **སངས་རྒྱས**་ཞེས་བྱ་བ་ལ་སོགས་པའོ། །དེ་ལ་སྡིག་པ་དེ་དག་སླར་མི་འཕེལ་ཞིང་ཚོགས་བསགས་པའི་དོན་དུ་རྒྱུད་ལ་དགེ་བ་བསྟན་པ་ནི་སྨན་ལྟ་བུར་ཤེས་པར་བྱའོ། །དེ་ལ་བསྔོ་བ་ལ་སོགས་པ་ཐམས་ཅད་ནི་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་ལ་ཕ་རོལ་ཏུ་ཕྱིན་པ་དྲུག་དང་ལྡན་ལ། དེས་ཟིན་དགོས་པས་ཕ་རོལ་ཏུ་ཕྱིན་པ་དྲུག་དང་འདྲ་བ་ཡིན་ལ་དེ་ཡང་གཉིས་སོ། །དེ་ལ་བླ་ན་ཡོད་པ་ནི་ཀུན་དང་མཐུན་པ་སྟེ། དེ་ནི་སྐྱེ་བ་བཟང་པོ་བླངས་པར་ཡང་ཤེས་པར་བྱའོ། །དེ་ལ་ཁམས་གསུམ་གྱི་སྐྱེ་གནས་ཏེ་ལྷ་དང་མི་དག་ཏུའོ།།

---

1 ཞེས་- གསེར།

2 དེ་བཞིས་- གསེར།

3 དེ་ནི་- སྡེ། ཅོ། སྣ།

4 བཅད་- སྣ། པེ། གསེར།

སྦྱིན་པ་དང་མཐུན་པ་ནི་སྦྱིན་པའི**ཕ་ན**་སྟེ།[1] དེས་མཆོག་ཀྱང་ཤེས་པར་བྱའོ། །**དུད་འགྲོའི་སྐྱེ་གནས**་ནི་ཁྱི་ལ་སོགས་པའོ། །དེ་ནི་ཡུལ་ཆུང་བ་སྟེ་ཆེན་པོ་ཡང་གཟུང་ངོ་། **ཁམ་གཅིག**་ནི་དངོས་པོ་ཆུང་བ་སྟེ་ཆེན་པོ་ཡང་ཤེས་པར་བྱའོ།། **ཚུལ་ཁྲིམས**་ནི་ཚུལ་ཁྲིམས་དང་མཐུན་པ་སྟེ། སྡོམ་པའི་**ཚུལ་ཁྲིམས**་ལ་སོགས་པའོ། །རྣམ་པར་དཀར་[2]བ་བསྐྱེད་པས་ན་[3]དགེ་བའི་རྩ་བའོ། །བཟོད་པ་དང་མཐུན་པ་ནི་**ཚངས་སྤྱོད**་དེ་སྡིག་པ་དང་བྲལ་ཞིང་བྱམས་པ་ལ་སོགས་པ་ལ་གནས་པས་གཞི་བ་ལ་སླར་མི་གཞི་བ་ལ་སོགས་པ་དགེ་སྦྱོང་གི་ཆོས་དང་ལྡན་པ་སྟེ། འདོད་ཆགས་དང་བྲལ་བ་ལ་ནི་མི་བྱའོ། །བརྩོན་འགྲུས་དང་མཐུན་པ་ནི་**སེམས་ཅན་ཡོངས་སུ་སྨིན་པར**་བྱེད་པ་སྟེ། བདག་གིས་བརྩོན་འགྲུས་ཆེན་པོས་སེམས་ཅན་ཐམས་ཅད་ལ་མངོན་པར་ཤེས་པ་ལྔའི་སྒོ་ནས་ཕྱིན་ཅི་ལོག་གི་ལྟ་བ་དང་ལམ་ལས་བཟློག་པ་སྟེ་ཡང་དག་པ་ལ་བཙུག་པས་རྒྱུད་སྨིན་པར་བྱས་པ་སྟེ། གྲོལ་བ་དང་མཐར་ཕྱིན་པར་ཤེས་པར་བྱའོ། །བསམ་གཏན་དང་མཐུན་པ་ནི་སྙིང་པ་དང་འཇུག་པ་ཀུན་རྫོབ་དང་དོན་དམ་པའི**བྱང་ཆུབ་ཏུ་སེམས་བསྐྱེད་པ**་སྟེ། དེ་དག་ལ་རྩེ་གཅིག་ཏུ་གནས་པ་ནི་[4]ཡམ་ཕྱིན་ཅི་མ་ལོག་པའོ།།

ཟླ་ན་མེད་པའི་ཡེ་ཤེས་ནི་ཤེས་རབ་ཀྱི་ཕ་རོལ་ཏུ་ཕྱིན་པ་དང་མཐུན་པར་བསྟོ་བ་སྟེ། དེ་ལ་**གོང་ན་མེད་པའི**་ཡེ་ཤེས་ནི་གཉིས་སུ་མེད་པའི་ཆོས་ཉིད་རྟོགས་པ་སྟེ་ཡེ་ཤེས་ཀྱི་ཚོགས་སོ། །དེ་ལ་བཞི་ནི་བསོད་ནམས་ཀྱི་ཚོགས་སུ་འགྱུར་ལ། ལྔ་པ་ནི་གཉིས་ཀའོ། །དྲུག་པ་ནི་ཅིག་ཤོས་ཏེ་ཐམས་ཅད་ཀྱང་གཉིས་སུ་

---

1 སྦྱིན་པའི་ཐ་མ་སྟེ།- སྡེ། ཅོ།

2 རྣམ་པར་དཀའ་- སྡེ། ཅོ།

3 བསྐྱེད་པས་ནི་- སྡེ། ཅོ།

4 གནས་པ་ན་- སྣ་ཕེར་མི་སྣང་།

འདུས་སོ། །དྲུག་པོ་དེ་དག་ཐམས་ཅད་ཚུལ་ཇི་ལྟར་ཞེ་ན། **གཅིག་ཏུ་བསྡུས་པ**ལ་སོགས་པ་སྟེ། དགེ་བ་སོ་སོ་བ་དང་། དངོས་པོ་གཅིག་ཏུ་བྱས་ཏེ་**བསྡུམས་**པ་ནི་འདྲེས་པར་བྱས་པའོ། །མི་ཕྱེད་པར་བྱས་པ་ནི་**བསྡོམས་**པ་སྟེ་རང་བཞིན་མེད་པར་རོ།[1] །གང་བསྔོ་ཞེ་ན། **བླ་ན་མེད་པ**ལ་སོགས་པའི་སངས་རྒྱས་སུའོ། །དེ་ཉན་ཐོས་ལས་འཕགས་པ་ནི་**བླ་ན་མེད་པ**འོ། །**གོང་ན་མེད་པ**་ནི་སངས་རྒྱས་སོ། །གོང་མ་ནི་འཇིག་རྟེན་པའི་གོང་ན་གནས་པ་གཉིས་པོ་དེ་ཡིན་ལ། དེ་དག་གི་**གོང་མ་**ནི་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའོ། །**བླ་མ་**ནི་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་རྣམས་ཡིན་ལ། དེའི་**བླ་མ་**ནི་སངས་རྒྱས་ཏེ་དེའི་གོང་ན་གཞན་མེད་པའོ། །དེ་ཉིད་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་ཆེན་པོ་སྟེ་རྣམ་པ་ཐམས་ཅད་མཁྱེན་པའོ།།

ཡོངས་སུ་བསྔོ་བ་ནི་འཁོར་གསུམ་ཡོངས་སུ་དག་པ་སྟེ་མི་དམིགས་པའོ། །དེ་ནི་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་བསྔོ་བ་ཐུན་མོང་བའོ། །བླ་ན་མེད་པའི་སངས་རྒྱས་ཉིད་ཀྱི་བསྔོ་བ་ནི་ཐབས་མཁས་པ་སྟེ། དེ་ལྟར་བསྔོ་བ་ནི་**ཇི་ལྟར་**ཞེས་བྱ་བ་ལ་སོགས་པའོ། །བདག་གིས་བསྔོ་བ་མི་ཤེས་པས། དེ་ལྟར་ཡོངས་སུ་བསྔོ་བ་ནི་གྱུ་ཚོམ་པ་ལ་སོགས་པས་གསུས་པའོ། །དུས་གསུམ་གྱི་སངས་རྒྱས་ཀྱིས་བསྔོས་པ་ལྟར་**བདག་ཀྱང་**གསུས་པས་**ཡོངས་སུ་བསྔོ་བ་**ནི་གདམས་པ་ཆེན་པོ་ཡིན་ནོ།།

ཕུང་པོ་གསུམ་པ་དང་མཐུན་པར་བསྔོ་བ་ནི་**སྡིག་པ་ཐམས་ཅད་ནི་སོ་སོར་བཤགས་སོ་**ཞེས་བྱ་བ་ལ་སོགས་པའོ། །དེ་ལ་སྡིག་པ་བཤགས་པའི་ཕུང་པོ་དང་། དག་པ་དང་མ་དག་པའི་དགེ་བའི་རྗེས་སུ་ཡི་རང་བ་ནི་དེ་དག་ཡུལ་དུ་བྱས་ན་དགའ་བའི་ཕུང་པོ་དང་། **སངས་རྒྱས་ཐམས་ཅད་ལ་**མྱ་ངན་ལས་མི་འདའ་བ་དང་།

1 རང་བཞིན་མེད་པའོ།- ཅོ།

ཆོས་ཀྱི་འཁོར་ལོ་**བསྐུལ་བ་ནི་གསོལ་བ་འདེབས་**པའི་ཕུང་པོ་སྟེ། དེ་གསུམ་གྱིས་བསོད་ནམས་ཀྱི་ཕུང་པོ་དཔག་ཏུ་མེད་པ་ལ་སོར་པའོ།།

དེ་དག་གི་ཞར་ལ་སྨོན་ལམ་འདེབས་པ་ནི། སངས་རྒྱས་ཐོབ་པར་སྨོན་པས་ན་**ཡེ་ཤེས་བླ་ན་མེད་**[1]**པ**ར་གྱུར་ཅིག་པའོ། །སྡིག་པ་ཐམས་ཅད་ཀྱི་གཉེན་པོ་སྐྱབས་སུ་འགྲོ་བ་མཆོག་ཡིན་པས་འདིར་ཡང་སྐྱབས་སུ་འགྲོ་བ་ནི་**མི་མཆོག་རྒྱལ་བ**་ཞེས་བྱ་བ་ལ་སོགས་པའོ། །དེ་ལ་སྔོན་ནི་ཐུན་མོང་དུ་བསྟན་ལ། ད་ལྟར་ནི་སྐྱབས་ཀྱི་མཐར་ཐུག་པ་ནི་སངས་རྒྱས་ཁོ་ན་ཡིན་པས་གཉིས་པོ་ནི་འདིར་མ་སྨོས་པའོ། །དེ་ལ་**མི་མཆོག་**ནི་མིའི་སྐྱེ་བ་ཞེས་པ་སྟེ་སྤྲུལ་སྐུའོ། །**ཡོན་ཏན་**ནི་སངས་རྒྱས་ཀྱི་སྟོབས་ལ་སོགས་པའོ། །**བསྔགས་པ་**ནི་ཁྱད་པར་དུ་བསྟོད་པའོ།། སུམ་ཅུ་རྩ་ལྔ་པོ་ལ་སོགས་པ་དེ་དག་**མཐའ་ཡས་**པ་ནི་མི་ཟད་པའི་**རྒྱ་མཚོ**་དཔེར་བྱས་པ་སྟེ་གྲངས་སོ། །**ཐལ་མོ་**ནི་ལུས་ཀྱིས་སོ། །**སྐྱབས་སུ་**འགྲོ་བ་ནི་[2]ངག་དང་སེམས་ཀྱིས་སོ།།

དེ་ལྟར་སྟོབས་བཞི་དང་ལྡན་པས། །
སྡིག་པ་ཐམས་ཅད་དག་འགྱུར་ཏེ། །
ཚོགས་རྫོགས་ནས་ནི་སངས་རྒྱས་འཐོབ། །
དེ་བས་ཀུན་གྱིས་འདི་ཤེས་བྱ[3] །
འདི་ནི་མདོ་ཙམ་དུ་བཀྲལ་ཏེ། ། །

1 བླ་མེད་པ- གསེར།
2 ནི།- ཡེ་ཅིང་དུ་མི་གསལ།
3 འདི་ཤེས་བྱ- གསེར།

རྒྱས་པར་མདོ་སྡེ་ལས་ཤེས་བྱ། |
འདི་ལྟར་ཤེས་བྱས་འབད་པ་ཡིས། |
ནུས་ཚད་སྡིག་པ་བཤགས་པར་བྱ། |

རིན་ཆེན་ལུས་འདི་ཐོབ་ནས་ནི། |
ལེ་ལོ་སྒོམས་ལས་[1]མེད་པ་མཚར། |
རང་སེམས་ཀྱིས་ནི་རང་ལ་རྟོགས། |
ཡི་མུག་མི་འགྱུར་ངོ་མཚར་ཆེ། |

བདག་གིས་སྙིང་རྗེའི་ཞུགས་ཀྱིས་སེམས་ཅན་དོན་དུ་ནི། |
བྱང་ཆུབ་ལྟུང་བ་བཤགས་པའི་འགྲེལ་པ་འདི་བྱས་པས། |
དེ་སྐྱེས་དགེ་བ་དྲི་མེད་དེ་ཡིས་སེམས་ཅན་རྣམས། |
ཀླུ་ཡི་རྒྱལ་པོ་ལྟ་བུའི་སངས་རྒྱས་འགྲུབ་པར་ཤོག |

ལྟ་བ་ཐམས་ཅད་སེལ་མཛད་ཅིང་། |
ཡང་དག་ལམ་ནི་སྟོན་པ་པོ། |
སེང་གེ་ལྟ་བུའི་བདུད་འཛོམ་པའི། |
གཽཏམ་དེ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ།[2] |

---

1 སྒོམ་ལས་- སྒྲི། ཅོ། སྣ།

2 གོང་གི་གཞུང་ཚིག་འདི་དང་ཆ་འདྲ་བ་དབུ་མ་རྩ་བ་ཤེས་རབ་ལས།
གང་གིས་ཐུགས་རྗེ་ཉེར་བཟུང་ནས། |
ལྟ་བ་ཐམས་ཅད་སྤང་པའི་ཕྱིར། |
དམ་པའི་ཆོས་ནི་སྟོན་མཛད་པ། |
གཽ་ཏམ་དེ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། |

བྱང་ཆུབ་ཀྱི་ལྟུང་བ་བཤགས་པའི་འགྲེལ་པ། སློབ་དཔོན་ཆེན་པོ་འཕགས་པ་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱིས་མཛད་པ་རྫོགས་སོ།། །།

རྒྱ་གར་གྱི་མཁན་པོ་ཤཱཀྵཱརཀྵཱིཏ་དང་བོད་ཀྱི་ལོ་ཙྪ་བ་ཏྟི་བ་[1]དེ་བ་སྐོ྅ས་བསྒྱུར་ཅིང་ཞུས་ཏེ་གཏན་ལ་ཕབ་པའོ།།

སློབ་དཔོན་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱིས་མཛད་པའི་རྩ་བ་ཤེས་རབ། རབ་བྱེད། ༣༨ ཤོག ༡ Toh-3824 སྡེ། བསྟན། དབུ་མ། "ཙ" ༡༨ བ ༨

1 གཉགས- དཔར་མ་ཁ་ཅིག བུ་སྟོན་ཆོས་འབྱུང་དུ། རྟུན་དེཝ་གོ྅།

༄༅། །རྒྱ་གར་སྐད་དུ། བོདྷིསཏྭཔཏྟིདེཤནཱཝྲྀཏྟིཿབོདྷིསཏྭཤིཀྵཱཀྲམོ་ནཱམ།[1]

བོད་སྐད་དུ། བྱང་ཆུབ་ཀྱི་ལྟུང་བ་བཤགས་པའི་འགྲེལ་པ་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་བསླབ་པའི་རིམ་པ་ཞེས་བྱ་བ།

འཕགས་པའི་ཚོགས་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ།།

གང་གིས་ཐམས་ཅད་གཟིགས་གྱུར་པའི། །
ཀུན་མཁྱེན་ཉིད་ལ་ཕྱག་འཚལ་ནས། །
བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་བསླབ་པ་ནི། །
བདག་གིས་དད་པས་བྲི་བར་བྱ། །

དེ་ལ་གང་དག་བྱང་ཆུབ་ཏུ་སེམས་བསྐྱེད་ནས་ངེས་པར་ལེགས་པ་ཐོབ་པར་འདོད་པ་རྣམས་ལ། ཉེས་པ་ལས་ལྡོག་པའི་ཐབས་ཤེས་པར་བྱ་བའི་ཕྱིར་འདི་གསུངས་ལ། ཉེས་པ་དེ་ཡང་ཕམ་པའི་རིགས་སུ་གཏོགས་པ་[2]དང་། ཉེས་བྱས་[3]ཀྱི་རིགས་སུ་གཏོགས་པའོ། །ཕམ་པའི་རིགས་སུ་གཏོགས་པ་ཡང་[4]ཉན་ཐོས་དང་

1 བོདྷིསཏྭཔཏྟིདེཤནཱཝྲྀཏྟིབོདྷིསཏྭཤིཀྵཱཀྲམནཱམ།- སྡེ། ཅོ། བོདྷིསཏྭཔཏྟིདེཤནཝྲྀཏྟིབོདྷིསཏྭཤིཀྵཱཀྲམནཱམ།- པེ། སྣ།

2 དེ་ནི་- སྡེ།

3 སློབ་འཇུག་གི་འགྲེལ་བཤད་རྒྱལ་སྲས་ཡོན་ཏན་བུམ་བཟང་དུ། ཉེས་བྱས་ལ་ཞེ་དྲུག་དང་བརྒྱད་ཀྱི་རྩིས་ཚུལ་ཞིག་ཀྱང་སྣང་སྟེ། དགེ་བའི་ཆོས་སྡུད་ཀྱི་ཕྱིན་དྲུག་གི་མི་མཐུན་ཕྱོགས་ཀྱི་ཉེས་པ་ལྔ་དང་། སེམས་ཅན་དོན་བྱེད་ཀྱི་ཚུལ་ཁྲིམས་ཀྱི་མི་མཐུན་ཕྱོགས་ཀྱི་ཉེས་པ་གསུམ་བཅས་བརྒྱད་དོ།། ཤོག ༡༥༨ ཀྲུང་གོའི་བོད་ཀྱི་ཤེས་རིག་དཔེ་སྐྲུན་ཁང་། ༡༩༩༠

4 ཕམ་པ་ལ་བྱང་ས་ནས་གསུངས་པ་བཞི་དང་བསླབ་བཏུས་ནས་གསུངས་པ་བཅུ་བཞི་བཅས་བསྡོམས་པས་ཕམ་པ་བཅོ་བརྒྱད་ཡོད།།

ཐུན་མོང་[1]དང་། ཐུན་མོང་མ་ཡིན་པའི་བྱེ་བྲག་གིས་གཉིས་སོ། །དེ་རྣམས་ལས་[2]ལྡོག་པ་ནི་སེམས་བསྐྱེད་ནས་སྡོམ་པ་གསུམ་[3]ལེན་པའོ། །ཉེས་པ་ལས་ལྡོག་པ་ནི་གང་ཟག་གསུམ་[4]ལ་བཤགས་པ་དང་། གང་ཟག་གཅིག་ལ་བཤགས་པ་[5]དང་། སངས་རྒྱས་སུམ་ཅུ་རྩ་ལྔ་[6]ལ་བཤགས་པ་འདི་ཡིན་ནོ། ཐོག་མར་རེ་ཞིག་རྟེན་ཁྱད་པར་ཅན་ལ་སྐྱབས་སུ་འགྲོ་བ་དང་། དེ་ནས་ཕྱག་འཚལ་ལ་སྡིག་པ་བཤགས་པའོ། །དེ་ནས་ཕྱིས་སྡོམ་པ་མི་ཉམས་པར་བྱ་བར་དམ་བཅའ་བའོ། །

---

1 ཐུན་མོང་དང་- གསེར་ཕྲིས་སུ་མི་སྣང་།

2 ལས་- གསེར་ཕྲིས་སུ་མི་སྣང་།

3 སྡོམ་པ་གསུམ་ནི། སོ་ཐར་གྱི་སྡོམ་པ། བྱང་སེམས་ཀྱི་སྡོམ་པ། གསང་སྔགས་ཀྱི་སྡོམ་པ་བཅས་སོ།།

4 གང་ཟག་གསུམ་ནི། སློབ་དཔོན་ཞི་བ་འཚོའི་སྡོམ་པ་ཉི་ཤུ་པའི་འགྲེལ་པ་ལས། "ཉན་ཐོས་ཀྱི་ཐེག་པ། ཐེག་པ་ཆེན་པ། ལོངས་སྤྱོད་པའི་གང་ཟག་གསུམ་པོ་རྣམས་སྟེ།" ཞེས་གསུངས་སོ།། Toh-4082 སྡེ། བསྟན། སེམས་ཙམ། "ཧི" ༡༧༣ ན ༤

5 གང་ཟག་གཅིག་ནི། སློབ་དཔོན་ཞི་བ་འཚོའི་སྡོམ་པ་ཉི་ཤུ་པའི་འགྲེལ་པ་ལས། གང་ཟག་ཅིག་དེ་བད་ཕྲད་ཅིང་འཛིན་པ་རྣམས་ལ་བཤགས་པར་བྱ་བ་ཡིན་ཞེས་གསུངས་སོ།། Toh-4082 སྡེ། བསྟན། སེམས་ཙམ། "ཧི" ༡༧༣ ན ༤

6 སངས་རྒྱས་སུམ་ཅུ་རྩ་ལྔའི་མདུན་དུ་བཤགས་པའི་ཚུལ་ནི། འཕགས་པ་ཉེ་བར་འཁོར་གྱིས་ཞུས་པའི་མདོ་ལས། ཤཱ་རིའི་བུ། དེ་ལ་བྱང་ཆུབ་སེམས་པ་ཉེས་པ་དང་པོའི་ལྟུང་བ་ནི་ཚོགས་བཅུ་ལ་སྔང་པོར་བཤགས་པར་བྱའོ། །བུད་མེད་ཀྱི་ལག་པ་ནས་འཛིན་པའི་ཉེས་པ་ལྗི་བ་ནི་ཚོགས་ལྔ་ལ་བཤགས་པར་བྱའོ། །ཉོན་མོངས་པ་ཅན་གྱི་སེམས་ཀྱིས་མིག་གིས་བལྟས་པའི་ཉེས་པ་ནི་གང་ཟག་གཅིག་གམ། གཉིས་ཀྱི་མདུན་དུ་བཤགས་པར་བྱའོ། །བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་མཚམས་མེད་པ་ལྔ་དང་ལྡན་པའི་ཉེས་པ་དང་། བུད་མེད་ཀྱི་ཉེས་པ་དང་། ཕྲུའུའི་ཉེས་པ་དང་། ལག་པའི་ཉེས་པ་དང་། མཆོད་རྟེན་གྱི་ཉེས་པ་དང་། དགེ་འདུན་གྱི་ཉེས་པ་དང་། དེ་ལས་གཞན་པའི་ཉེས་པ་ལྗི་བ་རྣམས་ནི་སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་སོ་ལྔའི་སྤྱན་སྔར་གཅིག་པུས་ཉིན་མཚན་དུ་བཤགས་པར་བྱའོ། །ཞེས་གསུངས་སོ།། Toh-68 སྡེ། བཀའ། དཀོན་བརྩེགས། "ཙ" ༡༣༠ ན

དེ་ནས་དགེ་བའི་རྩ་བ་ཐམས་ཅད་བླ་ན་མེད་པའི་བྱང་ཆུབ་ཏུ་བསྔོས་ལ། དེ་ལ་ཕྱིས་གནས་པར་བྱ་བའི་ཕྱིར་སྡིག་པ་བཤགས་པ་དང་། བསྐུལ་ཞིང་གསོལ་བ་དང་། དགེ་བའི་རྩ་བ་བསྔོ་བ་དང་། སྐྱབས་སུ་འགྲོ་བའོ། །དེ་ནི་བསྡུས་པའི་དོན་ནོ།།

ད་ནི་[1]ཡན་ལག་གི་དོན་བཤད་པར་བྱ་སྟེ། བདག་མིང་འདི་ཞེས་བགྱི་བ་[2] ཞེས་བྱ་བ་ནི་ལྷས་སྦྱིན་[3]ནམ་མཆོད་སྦྱིན་ལ་སོགས་པ་ཆེ་གེ་མོའོ། །**སངས་རྒྱས་ལ་སྐྱབས་སུ་མཆིའོ། །ཆོས་ལ་སྐྱབས་སུ་མཆིའོ། །དགེ་འདུན་ལ་སྐྱབས་སུ་མཆིའོ།** །སྤངས་པ་དང་ཡེ་ཤེས་དང་ལྡན་པས་ན་**སངས་རྒྱས**་སོ། །དེ་ནི་སྐུ་གསུམ་སྟེ། ཆོས་ཀྱི་སྐུ་དང་། ལོངས་སྤྱོད་རྫོགས་པའི་སྐུ་དང་། སྤྲུལ་པའི་སྐུའོ།། **ལ**་ནི་ཡུལ་གྱི་ལ་སྟེ། གནས་གཞིའི་[4]བདུན་པའོ། །**སྐྱབས་སུ་མཆི**་བ་ནི་ཉོན་མོངས་པ་ལ་སོགྲ་པའི་འཆི་བ་ལས་སྐྱོབ་པའོ། །**ཆོས**་ནི་ལུང་གི་ཆོས་དང་། རྟོགས་པའི་ཆོས་སོ། །**དགེ་འདུན**་ནི་ཉན་ཐོས་དང་། རང་སངས་རྒྱས་དང་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའོ། །ཉན་ཐོས་ལ་ཡང་ཞུགས་པ་བཞི་དང་། འབྲས་བུ་ལ་གནས་པ་བཞིའོ།[5] །རང་སངས་རྒྱས་ལ་ཡང་གཅིག་པུར་གནས་པ་དང་། ཚོགས་དང་སྤྱོད་པའོ། །བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་ལ་ཡང་ངེས་པ་དང་མ་ངེས་པའོ། ། ལྷག་མ་ནི་བཤད་ཟིན་ཏོ།།

༡ བཅོམ་ལྡན་འདས་**དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དགྲ་བཅོམ་པ་ཡང་དག་པར**

---

1 དེ་ནི- སྡེ།

2 བགྱི་པ་- སྣ་ཐེར་མི་གསལ།

3 ལྷ་སྦྱིན་- སྡེ། ཅོ།

4 གནས་བཞིའི་- སྡེ། ཅོ།

5 འབྲས་གནས་བཞི་ནི། རྒྱུན་ཞུགས་འབྲས་གནས། ཕྱིར་འོང་འབྲས་གནས། ཕྱིར་མི་འོང་འབྲས་གནས། དགྲ་བཅོམ་འབྲས་གནས།

རྫོགས་པའི་སངས་རྒྱས་ཤཱཀྱ་ཐུབ་པ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ་ ཞེས་བྱ་བ་ནི། བདུད་ཀྱི་དཔུང་དང་བཅས་པ་ཐམས་ཅད་ཀྱི་ཡུལ་ཆེན་པོ་འཇོམས་པའི་ཕྱིར་བཅོམ་ལྡན་འདས་ཉིད་དོ།[1] །**དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་**ནི་དེ་བཞིན་ཉིད་ཕྱིན་ཅི་མ་ལོག་པར་གསུང་པའོ། །**དགྲ་བཅོམ་པ་**ནི་ཐོབ་པར་བྱ་བའི་དོན་ཐམས་ཅད་བརྙེས་པ་དང་། བསོད་ནམས་ཀྱི་ཞིང་བླ་ན་མེད་པ་དང་། མཆོད་པར་འོས་པའོ། །ཆོས་རྣམས་ཇི་ལྟ་བ་བཞིན་དུ་དོན་དམ་པར་ཐུགས་སུ་ཆུད་པས་ན་**ཡང་དག་པར་རྫོགས་པའི་སངས་རྒྱས་** ཞེས་བྱའོ། །**ཤཱཀྱ་ཐུབ་པ་**ནི་ཉོན་མོངས་པ་ཐམས་ཅད་སྤངས་པའི་མཐར་ཕྱིན་པ་དང་། ཚིག་བཙན་པ་དང་། རིགས་ཕུན་སུམ་ཚོགས་པ་དང་། དབང་ཕྱུག་ཕུན་སུམ་ཚོགས་པའོ།།

༢ **རྡོ་རྗེ་སྙིང་པོ་རབ་ཏུ་[2]འཇོམས་པ་**ཞེས་བྱ་བ་ནི་སྲིན་པ་དང་བྲལ་བས་དངོས་པོར་འཛིན་པ་འཇོམས་པས་རྡོ་རྗེ་ཕ་ལམ་དང་འདྲ་བ་དེ་ཉིད་ཐམས་ཅད་ཀྱི་སྙིང་པོ་ཡང་ཡིན་ལ་རབ་ཏུ་འཇོམས་པ་ཡང་ཡིན་នོ། །ཡང་ན་རྡོ་རྗེ་ནི་རིན་པོ་ཆེའོ། །སྙིང་པོ་ནི་དཀྱིལ་ལོ། །རབ་ཏུ་འཇོམས་པ་ནི་མཐུའོ།།

༣ **རིན་ཆེན་འོད་འཕྲོ་**ནི་ནོར་བུ་རིན་པོ་ཆེ་དང་མཚུངས་པས་དེ་སྐད་ཅེས་བྱ་སྟེ། ལྷ་རྫས་ཀྱི་ནོར་བུ་རིན་པོ་ཆེ་ནི་ཡང་བ་དང་། འོད་གསལ་བ་དང་། འཆི་བ་ཐམས་ཅད་ཟློག་པ་དང་། ཡོན་ཏན་འབྱུང་བ་དང་། ཉམས་དགའ་བ་ལ་སོགས་པའི་ཆོས་དང་ལྡན་པ་དེ་བཞིན་དུ་ཡང་དག་པའི་རིན་པོ་ཆེ་ཡང་ཡོན་ཏན་ཐམས་ཅད་ཀྱི་འོད་འཕྲོ་བས་ཕན་འདོགས་པའོ།།

༤ **ཀླུ་དབང་གི་རྒྱལ་པོ་**ཞེས་བྱ་བ་ནི་ཀླུའི་དབང་པོའི་རྒྱལ་པོའི་[3]རྫུ་འཕྲུལ་དང་

1 ཉིད་དེ་- སྣ། པེ།

2 ཏུ་- པེ་ཅིང་དང་གསེར་བྲིས་དཔར་མར་མི་སྣང་།

3 རྒྱལ་པོའི་- སྡེ། ཅོ། སྣ། པེ་བཞི་ཀར་མི་གསལ།

ལྡན་པ་སྟེ། དེ་ཡང་ལོ་ཏོག་ཐམས་ཅད་ལ་ཆར་འབེབས་པའོ། །དེའི་དབང་པོ་ནི་[1]བདག་པོའོ། །དེ་རྣམས་ཀྱི་**རྒྱལ་པོ་**ནི་སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་སོ།།

༥ **དཔའ་བོའི་སྡེ་**ནི་དཔའ་[2]བོའི་རིཀ་ཏེ། མི་མཐུན་པའི་ཕྱོགས་འཇོམས་པའོ།།

༦ དེ་ལ་དགྲེས་པས་ན་**དཔལ་དགྱེས་**[3]སོ།།

༧ **རིན་ཆེན་མེ་**ནི་དཀོན་[4]པ་དང་། རིན་ཆེ་བ་དང་། དགོས་འདོད་འབྱུང་བ་དང་། ཉོན་མོངས་པའི་བུད་ཤིང་སྲེག་པའོ།།[5]

༨ **རིན་ཆེན་ཟླ་འོད་**ནི་ཟླ་བ་བཞིན་བསིལ་བ་སྟེ། མ་རིག་པའི་མུན་ནག་དང་བྲལ་བའོ། །རྣམ་པར་རྟོག་པའི་ཚ་བས་མ་གདུངས་པའོ།།

༩ **མཐོང་བ་དོན་ཡོད་**ཅེས་བྱ་བ་ནི་གདུལ་བྱ་ཐམས་ཅད་མངོན་དུ་གཟིགས་པ་སྟེ། སྨོད་དང་འཚམ་པར་དོན་མཛད་ནས་འདྲེན་པའི་ཕྱིར་རོ།།

༡༠ **རིན་ཆེན་ཟླ་བ་**ནི་ཀུན་ཏུ་བཟང་པོ་བྱང་ཆུབ་ཀྱི་སེམས་སོ། །ལྷག་མ་ནི་སྔ་མ་བཞིན་ནོ།།

༡༡ ཉོན་མོངས་པའི་དྲི་མ་དང་། ཤེས་བྱའི་དྲི་མ་ཐམས་ཅད་མཐོང་བ་དང་བསྒོམས་[6]པས་སྤངས་པས་**དྲི་མ་མེད་པ**འོ།[7] །ཟག་པ་[8]ཤེས་པའི་དོན་ཏོ།།

---

1 ནི་- གསེར་བྲིས་སུ་མི་སྣང་།

2 དབང་- སྡེ། ཅོ། སྣ། པེ།

3 ལེགས་སྦྱར་མ་དཔེར་ཤྲཱིནནྡ་སྟེ་དཔའ་དགྱེས་ཞེས་གསལ།

4 དགོན་- སྡེ། ཅོ། སྣ། པེ།

5 བསྲེགས་པའོ།།- པེ། བསྲེག གསེར།

6 བསྒོམ་- གསེར་བྲིས།

7 དྲི་མ་མེད་པ་སྟེ།- སྣ། པེ། གསེར།

8 ཟད་པར་- སྡེ། ཅོ། པེ།

༡༢ དེ་ཉིད་དཔལ་དུ་གྱུར་པ་སྟེ། ཕན་པ་བསྒྲུབ་པའི་མཆོག་གོ །སེམས་ཅན་ཐམས་ཅད་ཀྱི་ཕན་པ་སྒྲུབ་པས་**དཔལ་བྱིན**་ནོ།།

༡༣ **ཚངས་པ**་ནི་གཟུགས་ཀྱི་ཁམས་བསམ་གཏན་དང་པོའི་ལྷའོ། །དེའི་ཆ་ལུགས་ཅན་ནམ། ཚངས་པ་ནི་ཉོན་མོངས་པའི་ལས་ཟད་པའི་མྱ་ངན་ལས་འདས་པའོ།།

༡༤ དེ་ལྟ་བུ་དེ་གཞན་ལ་བྱིན་ཞེས་དང་པོ་སྦྱར་བའམ་[1]དེ་ལྟ་བུས་བྱིན་ཞེས་གསུམ་པར་སྦྱར་བས་**ཚངས་པས་བྱིན**་ནོ།།

༡༥ **ཆུ་ལྷ**་ནི་སེམས་ཅན་གྱི་རྒྱུད་ལ་ང་རྒྱལ་གྱིས[2]ཁེངས་ཤིང་ཞེ་སྡང་གི་མེས་གདུངས་ལ། མ་རིག་པས་མཁྲིགས་ཤིང་[3]ཉོན་མོངས་པ་སྨྲ་བར་གྱུར་[4]པ་རྣམས་བརླན་པ་དང་ཞི་བར་བྱེད་པའོ། །སོ་སོ་[5]སྐྱེ་བོའི་དུས་ན་གདུགས་མཁན་ཡིན་པ་དེས་སངས་རྒྱས་རིན་ཆེན་མཆོད་འོས་ལ་བསིལ་ཡབ་ཅིག་ཕུལ་ནས་[6]..............................།

༡༦ **ཆུ་ལྷའི་ལྷ**་ནི་ཕྱོགས་སྐྱོང་བ་ཀླུའི་རིགས་སུ་གཏོགས་པ་ཆུ་ལྷ་སྟེ་དེ་ཞི་བར་བྱེད་པའོ།།

༡༧ **དཔལ་བཟང**་ནི་གཉིས་སུ་མེད་པའི་ཡེ་ཤེས་ཏེ། འཇིག་རྟེན་པའི་ཉོན་མོངས་པ་ལས་བཟློམ་པས་ཁྱད་པར་དུ་གྱུར་པའོ།།

༡༨ **ཙནྡན་དཔལ་ཏེ**། འབྲུ་མང་པོ་པའི་བསྡུ་བའོ། །དཔེར་ན་ཙནྡན་གྱི་དྲི་ཁྱད

1 སྦྱར་བའི་འམ་- སྡེ། ཅོ།

2 ང་རྒྱལ་གྱི་- སྣར། པེ། གསེར།

3 མཁེགས་ཤིང་- སྣར། པེ།

4 ས་བར་གྱུར་- སྡེ། ཅོ།

5 སོ་སོའི་- སྡེ། ཅོ།

6 ཕུལ་ནས་.........དཔར་མ་ཚང་མའི་ནང་གཞུང་ཚིག་ཆ་ཚང་མི་རྫོགས་པར་འགྲོ་ལུས་པ་གསལ།

པར་ཅན་ལྡན་ཅིག་སྐྱེས་པ་ཡོད་པས་སྣའི་དབང་པོ་ལ་ཕན་འདོགས་པ་ལྟ་བུར་སེམས་ཅན་ཐམས་ཅད་ལ་ཕན་འདོགས་པ་རྟོགས[1]པ་མེད་པར་རྒྱུན་དུ་འབྱུང་བས་དེ་ཉིད་དཔལ་ལོ།།

༢༩ **གཟི་བརྗིད་**ནི་འོད་ཟེར་ཏེ། འོད་ཟེར་གྱིས་འཇིག་རྟེན་པ་ཐམས་ཅད་ལ་སྣང་བར་མཛད་པས་དེ་སྐད་ཅེས་བྱའོ།།

༣༠ **འོད་དཔལ་**ནི་འོད་ཀྱིས་གསལ་བ་སྟེ། ཐུགས་ཡང་དག་པའི་ཡེ་ཤེས་བསྒྲིལ་[2]བ་མི་མངའ་བ་ཐམས་ཅད་ལ་ཐོགས་པ་[3]མེད་ཅིང་ཆགས་པ་མེད་པར་མཁྱེན་པའི་དཔལ་ལོ།།

༣༡ **མྱ་ངན་མེད་པའི་དཔལ་**ནི་སྤངས་པ་དང་ཡེ་ཤེས་དང་ལྡན་པ་སྟེ། ཉོན་མོངས་པའི་སྒྲིབ་པ་སྤངས་པས་གདུང་བ་མེད་ལ།[4] ཤེས་བྱའི་སྒྲིབ་པ་སྤངས་པས་རྟོག་པ་[5]མེད་པའི་ཡེ་ཤེས་བཞིའི་དཔལ་ལོ།།

༣༢ **སྲིད་མེད་[6]ཀྱི་བུ་** ནི་མཐུ་དང་ལྡན་པས་གཞན་འཇོམས་པ་ལ་གྲགས་པའི་མིང་ཅན་ནོ།།

༣༣ **མི་ཏོག་དཔལ་**ནི་མཛེས་ཤིང་ཉམས་དགའ་བར་བྱེད་པའོ།།[7]

༣༤ **དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཚངས་པའི་འོད་ཟེར་རྣམ་པར་རོལ་པས་མངོན་**

---

1 རྟོག་- གསེར།

2 བསྒྲིལ་- སྡེ། ཅོ།

3 ཐོག་པ་- སྣར། པེ། གསེར།

4 མེད་པ།- སྡེ། ཅོ།

5 རྟོགས་པ་- སྣར། པེ།

6 སྲིད་ཀྱི་བུ་- ཅོ།

7 ,དགའ་བྱེད་པའོ།།- པེ།

པར་མཁྱེན་པ་ནི། ཚངས་ཤིང་དག་པ་སྟེ། སྒྲིབ་པ་ཐམས་ཅད་ཟད་ཅིང་ རྟོག་པའི་དྲི་མ་དང་བྲལ་བའོ། །**འོད་ཟེར་**ནི་ཕན་པ་དང་བདེ་བ་དང་གྲོལ་ བའི་སྒོ་སྟེ། རྫུ་འཕྲུལ་གྱི་ཆོ་འཕྲུལ་དང་། ཀུན་བརྗོད་པའི་ཆོ་འཕྲུལ་དང་། རྗེས་སུ་བསྟན་པའི་ཆོ་འཕྲུལ་གྱི་སྒོ་ནས་རྣམ་པར**རོལ་**ཅིང་ཤེས་བྱ་ཐམས་ ཅད་དུས་གཅིག་ཏུ**མངོན་**སུམ་དུ**མཁྱེན་པ**འོ།།

༣༥ **དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་པདྨའི་འོད་ཟེར་རྣམ་པར་རོལ་པ་**ནི་པད་མ་ལྟར་ ཉེས་པས་མ་གོས་པའོ། །ལྷག་མ་ནི་སྔ་མ་བཞིན་ནོ།།

༣༦ **ནོར་དཔལ་**ནི་ནོར་བདུན[1]གྱི་དཔལ་རྫོགས་པ་སྟེ། དད་པ་དང་འཕགས་ པའི་ཚུལ་ཁྲིམས་དང་། ཐོས་པ་དང་། གཏོང་བ་དང་། ངོ་ཚ་ཤེས་པ་ དང་། ཁྲེལ་ཡོད་པ་དང་། ཤེས་རབ་ཀྱི་ངོ་བོ་ཉིད་དོ།།

---

1 འཕགས་ནོར་བདུན་ནི། འདུལ་བ་གཞུང་བླ་མ། Toh-7A སྡེ། བཀའ། འདུལ་བ། "པ" ༣༡
སངས་རྒྱས་ཕལ་པོ་ཆེ་ཤིན་ཏུ་རྒྱས་པའི་མདོ། Toh-44 སྡེ། བཀའ། ཕལ་ཆེན། "ཀ" ༣༣༣ བ
བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་སྡེ་སྣོད། Toh-56 སྡེ། བཀའ། དཀོན་བརྩེགས "ག" ༧༤ བ
འཕགས་པ་ཐེག་པ་ཆེན་པོའི་མན་ངག་ཅེས་བྱ་བ་ཐེག་པ་ཆེན་པོའི་མདོ། Toh-169 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "བ" ༣༩༧ ན
འཕགས་པ་དཀོན་མཆོག་སྤྲིན་གྱི་མདོ། Toh-231 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "ཤ" ༥༠ བ
ཞིན་ལོག་སྒྲོན་མ། Toh-3729 སྡེ། བསྟན། རྒྱུད་འགྲེལ། "ཚུ" ༥༩ ན
འཕགས་པ་ཤེས་རབ་ཀྱི་ཕ་རོལ་ཏུ་ཕྱིན་པ་འབུམ་དང་ཉི་ཁྲི་ལྔ་སྟོང་པ་དང་ཁྲི་བརྒྱད་སྟོང་པའི་རྒྱ་ཆེར་ བཤད་པ། Toh-3808 སྡེ། བསྟན། ཤེར་ཕྱིན། "ཞ" ༦༨ བ
བྱང་ཆུབ་ཀྱི་ལྟུང་བ་བཤགས་པའི་འགྲེལ་པ་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་བསླབ་པའི་རིམ་པ། Toh-4006 སྡེ། བསྟན། མདོ་འགྲེལ། "ཇི" ༡༨༩ ན
མདོ་སྡེ་རྒྱན་གྱི་འགྲེལ་བཤད། Toh-4034 སྡེ། བསྟན། སེམས་ཙམ། "མི" ༡༦ བ
རྣམ་པར་བཤད་པའི་རིགས་པའི་བཤད་པ། Toh-4069 སྡེ། བསྟན། སེམས་ཙམ། "ཤི" ༡༧༩ ན བ
འདུལ་བ་གཞི་རྒྱ་ཆེར་འགྲེལ་པ། Toh-4113 སྡེ། བསྟན། འདུལ་བ། "ཙུ" ༣༡༩ བ

༢༧ **དྲན་པའི་དཔལ་**ནི་དྲན་པ་ཉེ་བར་གཞག་པ[1]ལུས་དང་། སེམས་དང་། ཚོར་བ་དང་། ཆོས་བཞིའི་དཔལ་ཏེ། ཚིག་བར་མི་མངོན་པར་བྱས་པའོ།།

༢༨ **མཚན་དཔལ་ཤིན་ཏུ་ཡོངས་གྲགས་**ནི་མཚན་སུམ་ཅུ་རྩ་གཉིས་མངའ་བས་ཤིན་ཏུ་དག་པར་འཇིག་རྟེན་གྱི་ཁམས་སུ་ཡོངས་སུ་གྲགས་པའོ།།

༢༩ **དབང་པོ་ཏོག་གི་རྒྱལ་མཚན་གྱི་རྒྱལ་པོ་**ནི། **དབང་པོ་**ལྔ་དད་པ་དང་། བརྩོན་འགྲུས་དང་། དྲན་པ་དང་། ཏིང་ངེ་འཛིན་དང་། ཤེས་རབ་ཀྱི་དབང་པོའོ། །**ཏོག་**ནི་[2]མངོན་པར་ཤེས་པ་སྟེ། རྫུ་འཕྲུལ་དང་། ལྷའི་རྣ་བ་དང་། སེམས་ཀྱི་རྣམ་གྲངས་དང་། སྔོན་གྱི་གནས་རྗེས་སུ་ཤེས་པ་དང་། འཆི་འཕོ་དང་སྐྱེ་བ་ཤེས་པ་དང་། ཟག་པ་ཟད་པ་ཤེས་པའོ། །དབང་པོ་དང་མངོན་ཤེས་ཀྱི་**རྒྱལ་མཚན་**དང་ལྡན་པའི་འཁོར་ལོས་སྒྱུར་བའི་**རྒྱལ་པོའོ**།།

༣༠ **ཤིན་ཏུ་རྣམ་པར་གནོན་པའི་དཔལ་**ནི་ཁྱད་པར་དུ་གནོན་པ་ནི་ཤིན་ཏུ་རྣམ་པར་གནོན་པ་སྟེ་རྩ་བ་ནས་འབྱིན་པའོ། །རྣམ་པར་ནི་རྣམ་པར་རྟོག་པ་སྟེ། ཉོན་མོངས་པའི་རྣམ་པར་རྟོག་པ་རྩ་བ་ནས་འབྱིན་པའོ།།

༣༡ **གཡུལ་ལས་ཤིན་ཏུ་རྣམ་པར་རྒྱལ་བ་**ནི་དགྲ་བོའི་ཚོགས་ཏེ་བདུད་བཞི་ལས་རྒྱལ་བའོ། །རྣམ་པ་ནི་བྱེ་བྲག་སྟེ་ཐམས་ཅད་ལས་རྒྱལ་བའོ།།

༣༢ **རྣམ་པར་གནོན་པས་གཤེགས་པའི་དཔལ་**ནི་གནོད་པ་བཅོམ་པའི་སྟོབས་ཀྱིས་འཇིག་རྟེན་གྱི་ཁམས་ཐམས་ཅད་དུ་གདུལ་བྱ[3]ཇི་ལྟ་བ་བཞིན་དུ་དོན་མཛད་པའོ།།

འདུལ་བ་རྣམ་པར་འབྱེད་པའི་ཚིག་རྣམ་པར་བཤད་པ། Toh-4114 སྡེ། བསྟན། འདུལ་བ། "ཚུ" ༧༩ བ

1 བཞག་པ་- སྣ། པེ།

2 ཏོག་ནི་- པེ།

3 འདུལ་བྱ་- སྣ། པེ། གསེར།

༣༣ **ཀུན་ནས་སྣང་བ་བཀོད་པའི་དཔལ་**ནི། མཛེས་པར་གཤེགས་པ་སྟེ་ན་ཆུང་བརྒྱན་པ་བཞིན་ནོ།།

༣༤ **རིན་ཆེན་པདྨ་རྣམ་པར་གནོན་པ་** ནི་དགོས་འདོད་སྐོང་ཡང་འཁོར་བའི་སྒྲོན་གྱི་[1]མ་གོས་པས་ཟིལ་གྱིས་གནོན་པའོ།།

༣༥ དགོས་འདོད་སྐོང་བ་ཆགས་པའི་ཉེས་པས་མ་གོས་པ་ལ་བཞུགས་པ་ནི་འཇིག་པ་དང་བྲལ་བའི་**རིའི་རྒྱལ་པོ་**[2]རི་རབ་ལྟར་གནོན་པའོ།།

སྡིག་པ་བཤགས་པ་ནི། ཉེས་པའི་དྲི་མ་འཁྲུ་བ་སྟེ། ཕྱག་འཚལ་བ་**དེ་དག་ལ་སོགས་པ་** སྟེ། **འཚོ་ཞིང་བཞེས་པ་**ཉིད་**ཕྱོགས་བཅུ་**གཞན་**ན་བཞུགས་པ་**ཐམས་ཅད་དོ། །དེ་ཉིད་**ཇི་སྙེད་**བཞུགས་པའོ། །གཞན་དག་ནི་གོ་སླའོ། །**དགོངས་སུ་གསོལ་བ་**ནི། ཐུགས་གཏད་དུ་ཞེས་པའོ། །**བདག་**ད་ལྟར་**སྐྱེ་བ་**སླངས་ལ་མ་ཟད་པ་དང་། **འཁོར་བ་ཐོག་མ་མེད་པ་ནས་**སྐྱེ་བ་སླངས་པ་མང་བ་དང་། དྲོད་གཤེར་དང་། རྫུས་པ་དང་། སྒོང་ལས་སྐྱེས་པ་ཐམས་ཅད་ནི་འདི་ལས་གཞན་ནོ། །**སྡིག་པ་**ནི་[3]**མི་དགེ་བ་ཡིན་པས་སྡིག་པའི་ལས་**ཞེས་པ་སྟེ། ལུས་ངག་ཡིད་གསུམ་གྱིས་བྱས་པའོ། །**རང་གིས་བྱས་པ་དང་། །གཞན་དག་ལ་བཅོལ་བ་དང་། གཞན་བྱེད་པ་ལ་དགའ་བར་བྱས་པ་**ཕྱིར་བཤགས་པའོ།[4] །**མཆོད་རྟེན་**ནི་སྐུ་གཟུགས་དང་། གསུང་རབ་དང་། རིང་བསྲེལ་དང་། ལྷ་ཁང་ལ་སོགས་པའོ། །དགེ་འདུན་ནི་སྡེ་པའོ།།

---

1 གྱིས་- གསེར།

2 རྒྱལ་པོའི་- གསེར། པེ།

3 ནི་- པེ་ཅིང་དང གསེར་ བྲིས་གཉིས་སུ་མི་གསལ།

4 བཤགས་སོ།- སྣ། པེ། གསེར།

ཕྱོགས་བཅུའི་**དགེ་འདུན**་ནི་གཞན་འདྲེན་པོའོ།[1] །དེ་རྣམས་ཀྱི་**དཀོར**་ཕྱོགས་ན་དམྱལ་བར་འགྲོ་སྟེ། དེ་ཡང་། "མཆོད་རྟེན་དང་གཙུག་ལག་ཁང་བཞིག་པ[2]དང་། དཀོན་མཆོག་གསུམ་གྱི་དཀོར་སྤྲས་ནས་བདག་ཉིད་ཀྱི་ཕྱིར་ཡོངས་སུ་སྤྱོད་པ་གང་ཡིན་པ་དེ་ནི[3]ཚེ་འཕོས་ནས[4]དམྱལ་བ་ཆེན་པོ་མནར་མེད་པར་ལྟུང་ངོ་།"[5] །ཞེས་གསུངས་པ་དང་། "དགེ་འདུན་གྱི་དཀོར་བརྐུས[6]པས་རང་འཐག་འདྲེན་པའི་གླང་དང་བོང་བུར་སྐྱེ་བར་འགྱུར་རོ། །དགེ་འདུན་གྱི[7]དཀོར་ལ་ནན་གྱིས་སློང་ཞིང་གསང་སྔོན་བྱེད་ན་ཕུག་རོན་དུ་སྐྱེ་བར་འགྱུར་རོ། །དགེ་འདུན་གྱི་ཚོད་ལུམ[8]

---

1 འདྲེན་པའོ།- སྡེ། ཅོ། འགྲོན་ སྣ། པེ། འདྲེན་དང་འགྲོན་གཉིས་ཀ་སྐབས་དོན་མི་སྟོན་སྐབས་"འདྲེན་"དག་པར་སེམས་ཏེ་གསར་སྒྱུར་བྱས།

2 བཞིགས་པ་- སྣ། པེ།

3 གང་ཡིན་པ་ལ་དེ་ནི་- སྣ། པེ།

4 འཕོས་ན་- གསེར། པེ།

5 འཕགས་པ་ལེགས་ཉེས་ཀྱི་རྒྱུ་དང་འབྲས་བུ་བསྟན་པ་ཞེས་བྱ་བ་ཐེག་པ་ཆེན་པོའི་མདོ་ལས། བཅོམ་ལྡན་འདས་ཀྱིས་བཀའ་བསྩལ་པ། མིར་གྱུར་ཀྱང་མཆོད་རྟེན་དང་གཙུག་ལག་ཁང་བཤིག་པ་དང་། དཀོན་མཆོག་གསུམ་གྱི་དཀོར་སྤྲས་ནས་བདག་ཉིད་ཀྱི་ཕྱིར་ཡོངས་སུ་སྤྱོད་པ་གང་ཡིན་པ་དེ་ནི་ཤི་འཕོས་ནས་སེམས་ཅན་དམྱལ་བ་ཆེན་པོ་མནར་མེད་པར་ལྟུང་བར་འགྱུར་རོ།།
Toh-354 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "ཨཿ" ༣༠༩ བ ༥
དགེ་བ་དང་མི་དགེ་བ་ལས་ཀྱི་རྣམ་པར་སྨིན་པ་བསྟན་པའི་མདོ། Toh-355 སྡེ། བཀའ སྡེ། "ཨཿ" ༡༧༣ ན ༧

6 རྐུས་པས་- ཅོ།

7 གྱིས་- པེ།

8 ལྷུམ་- མདོ།

རྫས་ན་ཚོད་མའི་[1]ནང་གི་སྲིན་བུར་སྐྱེ་[2]བར་འགྱུར་རོ།།"[3] ཞེས་གསུངས་སོ།། དེ་ཡང་རང་གིས་བྱས་པ་དང་། གཞན་ལ་བཅོལ་བ་དང་། གཞན་བྱེད་པ་ལ་ཡི་རང་བ་བཤད་སོ། |**མཚམས་མེད་པ་ལྔ་** ནི་ཕ་མ་དང་དགྲ་བཅོམ་པ་གསོད་པ་དང་། དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ལ་ངན་སེམས་ཀྱིས་ཁྲག་བཏོན་པ་དང་། དགེ་འདུན་[4]མཐུན་པའི་ནང་དུ་དབྱེན་བྱེད་པའོ། |དེ་རྣམས་བྱས་ན་བར་མཚམས་མེད་པར་[5]དམྱལ་བར་འགྲོའོ། |མི་དགེ་བ་བཅུ་ནི། "སྲོག་གཅོད་པ་དང་། མ་བྱིན་པར་ལེན་པ་དང་། མི་ཚངས་བར་སྤྱོད་པ་དང་། བརྫུན་དུ་སྨྲ་བ་དང་། ཚིག་ཕྲ་མ་དང་། ཚིག་རྩུབ་པོ་དང་། ངག་འཁྱལ་བ་དང་། བརྣབ་སེམས་དང་། གནོད་སེམས་དང་། ལོག་པར་ལྟ་བའོ།"[6] |དེ་རྣམས་སེམས་མཚམས་མེད་པར་སྤྱད་ན

---

1 ཚོད་མ་- སྣེ། ཅོ། པེ།

2 སྲིན་བུར་སྐྱེའོ་- སྣར། པེ། གསེར།

3 ཀ དགེ་འདུན་གྱི་དཀོར་བརྐུས་པ་གང་ཡིན་པ་དེ་ནི་རང་ཐག་འདྲེན་པའི་གླང་དང་བོང་བུ་བྱེད་པར་འགྱུར་རོ། |དགེ་འདུན་གྱི་དཀོར་ལ་ནན་གྱིས་སློང་ཞིང་ཐ་སྐྱོན་བྱེད་ན་ཕྱུག་རོན་དཀར་པོ་བྱེད་པར་འགྱུར་རོ། |དགེ་འདུན་ལ་འཕྱ་ཞིང་དམོད་པར་བྱེད་ན་གླང་གི་གཉའ་བའི་སྲིན་བུར་སྐྱེ་བར་འགྱུར་རོ།། དགེ་འདུན་གྱི་ཚོད་ལྡུམ་རྫས་ན་ཚོད་མའི་སྲིན་བུར་སྐྱེ་བར་འགྱུར་རོ། |འཕགས་པ་ལེགས་ཉེས་ཀྱི་རྒྱུ་དང་འབྲས་བུ་བསྟན་པ་ཞེས་བྱ་བ་ཐེག་པ་ཆེན་པོའི་མདོ། Toh-354 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "ཨཿ" ༣༠༡ བ ༡

ཁ དགེ་འདུན་གྱི་ནོར་བརྐུས་པས་ནི་རང་འཐག་སྐོར་བའི་བོང་བུ་དང་གླང་དུ་སྐྱེའོ། |དགེ་འདུན་གྱི་ནོར་ནན་གྱིས་བསྐྱི་བརྙ་བྱས་པས་ནི་ཕྱུག་རོན་དུ་སྐྱེའོ། |དགེ་འདུན་ལ་སྐྱོ་བ་བྱས་པས་ནི་གླང་གི་གཉའ་བའི་སྲིན་བུར་སྐྱེའོ། |དགེ་འདུན་གྱི་ལྡུམ་སྣུར་རྫས་པས་ནི་ལྡུམ་བུར་རྩ་བ་གང་གི་སྲིན་བུར་སྐྱེའོ།། Toh-355 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "ཨཿ" ༣༡༡ ན ༥

4 དགེ་འདུན་གྱིས་- པེ།

5 པས་- ཅོ།

6 ས་བཅུ་པའི་མདོ། Toh-44 སྡེ། བཀའ། ཕལ་ཆེན། "ཁ" ༡༨༩ ན ༧ ས་གཉིས་པ།

"དམྱལ་བར་འགྲོའོ། །དུད་འགྲོར་འགྲོའོ། །ཐ་མ་ཡི་དྭགས་སུ་སྐྱེའོ།"[1] ། ལས་ཚབས་ཆུང་ལ་དགེ་བ་གཞན་གྱི་དབང་གིས་མིར་སྐྱེས་ན་ཡང་། "སྲོག་བཅད་པས་ཚེ་ཐུང་བ་དང་། ནད་མང་བའོ།" [2] །མ་བྱིན་པར་བླངས་པས་ནི་དབུལ་ཞིང་ཕོངས་པ་དང་ནོར་གཞན་གྱིས་རང་དབང་མེད་པར་སྤྱོད་པའོ།[3] །མི་ཚངས་པར་སྤྱོད་པས་ནི་མངལ་གྱི་གནས་མིན་པ་མི་ལེན་པ་དང་། ལུས་མི་ཚངས་བའོ།། "འདོད་པ་ལ་ལོག་པར་གཡེམ་པ་ནི་ཆུང་མ་ལ་གཞན་སྤྱོད་པ་དང་། ཆུང་མ་དང་འཐབ་ཅིང་བསམས[4]བཞིན་དུ་མི་བདུབ་པའོ།"[5] "།བརྫུན་དུ་སྨྲ་བས་ནི་སྐུར་པ

1 ས་བཅུ་པའི་མདོ་ལས། མི་དགེ་བ་བཅུའི་ལས་ཀྱི་ལམ་འདི་དག་བསྟེན་པ་དང་། བསྒོམ་པ་དང་མང་དུ་བྱས་པའི་ཤས་ཆེ་བས་ནི་སེམས་ཅན་དམྱལ་བའི་རྒྱུར་འགྱུར་རོ། །འབྲིང་གིས་ནི་བྱོལ་སོང་གི་སྐྱེ་གནས་ཀྱི་རྒྱུར་པ་འགྱུར་རོ། ཐ་མས་ནི་གཤིན་རྗེའི་འཇིག་རྟེན་གྱི་རྒྱུར་འགྱུར་ཏེ། Toh-44 སྡེ། བཀའ། ཕལ་ཆེན། "ཁ" ས་གཉིས་པ། ༡༥༦ ན ༧ ནས ༡༦༠ ན ༡ བར་རོ།།

2 ས་བཅུ་པའི་མདོ་ལས། དེ་ལ་སྲོག་གཅོད་པས་ནི། སེམས་ཅན་དམྱལ་བར་ཕྱིར་རོ། །བྱོལ་སོང་གི་སྐྱེ་གནས་སུ་ཕྱིར་རོ། །གཤིན་རྗེའི་འཇིག་རྟེན་དུ་ཕྱིར་རོ། །དེ་ནས་ཅི་སྟེ་མིར་སྐྱེས་ན་ཡང་རྣམ་པར་སྨིན་པ་གཉིས་མངོན་པར་འགྲུབ་པ་འདི་ལྟ་སྟེ། ཚེ་ཐུང་བ་དང་ནད་མང་བའོ།། Toh-44 སྡེ། བཀའ། ཕལ་ཆེན། "ཁ" ས་གཉིས་པ། ༡༥༦ ན ༧ ནས ༡༦༠ ན ༡ བར་རོ།།

3 ས་བཅུ་པའི་མདོ་ལས། མ་བྱིན་པར་ལེན་པས་ནི། སེམས་ཅན་དམྱལ་བར་ཕྱིར་རོ། །བྱོལ་སོང་གི་སྐྱེ་གནས་སུ་ཕྱིར་རོ། གཤིན་རྗེའི་འཇིག་རྟེན་དུ་ཕྱིར་རོ། །དེ་ནས་ཅི་སྟེ་མིར་སྐྱེས་ན་ཡང་རྣམ་པར་སྨིན་པ་གཉིས་མངོན་པར་འགྲུབ་པ་འདི་ལྟ་སྟེ། ལོངས་སྤྱོད་ཆུང་བ་དང་ཐུན་མོང་གི་ལོངས་སྤྱོད་དུ་འགྱུར་བའོ།། Toh-44 སྡེ། བཀའ། ཕལ་ཆེན། "ཁ" ༡༥༦ ན ༧ ནས ༡༦༠ ན ༡ བར།

4 བསམ་- གསེར།

5 ས་བཅུ་པའི་མདོ་ལས། འདོད་པས་ལོག་པར་གཡེམ་པ་ནི། སེམས་ཅན་དམྱལ་བར་ཕྱིར་རོ།། བྱོལ་སོང་གི་སྐྱེ་གནས་སུ་ཕྱིར་རོ། །གཤིན་རྗེའི་འཇིག་རྟེན་དུ་ཕྱིར་རོ། །དེ་ནས་ཅི་སྟེ་མིར་སྐྱེས་ན་ཡང་རྣམ་པར་སྨིན་པ་གཉིས་མངོན་པར་འགྲུབ་པ་འདི་ལྟ་སྟེ། ཡྙོད་པ་དང་བཅས་པའི་ཆུང་མ

མང་བ་དང་། གཞན་གྱིས་བསྙུས་པར་འགྱུར་རོ།"[1] "།ཕྲ་མས་ནི་འཁོར་མི་ཆང་བ་དང་། མཛའ་བ་དང་འབྱེད་པའོ། །ཚིག་རྩུབ་པོས་ནི་སྙན་མི་སྙན་པ་ཐོས་པ་དང་། ཅི་སྨྲས་པ་རྩོད་པར་འགྱུར་བའོ། །ཚིག་འཁྱལ་པས་ནི་གཞན་ཡིད་མི་ཆེས་པ་དང་། གཞན་གྱིས་མི་གོ་བའོ། །བརྣབ་སེམས་ཀྱིས་ནི་བཀམ་ཞིང་ཆོག་མི་ཤེས་པ་དང་། བཙལ་བས་མི་རྙེད་པའོ། །གནོད་སེམས་ཀྱིས་ནི་གཞན་སྐྲགས་ཚོལ་བ་དང་། གཞན་ལ་གནོད་པ་བྱེད་པའོ། །ལོག་པར་ལྟ་བས་ནི་གཡོ་[2]སྒྱུ་དང་བཅས་པ་དང་། ལོག་པར་ཞུགས་པའི་རིགས་སུ་སྐྱེའོ།"[3] །དེ་དག་ཉིད་

དང་གཡོག་འཁོར་མི་སྲུན་པའོ།། Toh-44 སྡེ། བཀའ། ཕལ་ཆེན། "ཁ" ས་གཉིས་པ། ༡༨༩ ན ༧ ནས ༡༩༠ ན ༡ བར་རོ།།

1 ས་བཅུ་པའི་མདོ་ལས། ཧྲུན་དུ་སྨྲ་བས་ནི། སེམས་ཅན་དམྱལ་བར་ཁྲིད་དོ། །བྱོལ་སོང་གི་སྐྱེ་གནས་སུ་ཁྲིད་དོ། །གཤིན་རྗེའི་འཇིག་རྟེན་དུ་ཁྲིད་དོ། །དེ་ནས་ཅི་སྟེ་མིར་སྐྱེས་ན་ཡང་རྣམ་པར་སྨིན་པ་གཉིས་མངོན་པར་འགྲུབ་པ་འདི་ལྟ་སྟེ། གཡོག་མི་འདུམ་པ་དང་གཡོག་ངན་པར་འགྱུར་བའོ།། Toh-44 སྡེ། བཀའ། ཕལ་ཆེན། "ཁ" ས་གཉིས་པ། ༡༨༩ ན ༧ ནས ༡༩༠ ན ༡ བར་རོ།།

2 ག་ལོ་- སྡེ།

3 ལྷག་མ་རྣམས་ས་བཅུ་པའི་མདོ་ལས། ཞེ་གཅོད་པའི་ཚིག་གིས་ནི། སེམས་ཅན་དམྱལ་བར་ཁྲིད་དོ། །བྱོལ་སོང་གི་སྐྱེ་གནས་སུ་ཁྲིད་དོ། །གཤིན་རྗེའི་འཇིག་རྟེན་དུ་ཁྲིད་དོ། །དེ་ནས་ཅི་སྟེ་མིར་སྐྱེས་ན་ཡང་རྣམ་པར་སྨིན་པ་གཉིས་མངོན་པར་འགྲུབ་པ་འདི་ལྟ་སྟེ། ཡིད་དུ་མི་འོང་བ་ཐོས་པ་དང་། འཐབ་མོའི་ཚིག་གོ།

ཚིག་ཀྱལ་བས་ནི། སེམས་ཅན་དམྱལ་བར་ཁྲིད་དོ། །བྱོལ་སོང་གི་སྐྱེ་གནས་སུ་ཁྲིད་དོ། །གཤིན་རྗེའི་འཇིག་རྟེན་དུ་ཁྲིད་དོ། །དེ་ནས་ཅི་སྟེ་མིར་སྐྱེས་ན་ཡང་རྣམ་པར་སྨིན་པ་གཉིས་མངོན་པར་འགྲུབ་པ་འདི་ལྟ་སྟེ། ཚིག་མི་བཙུན་པ་དང་། སྤོབས་པ་མ་བརྟགས་པའོ།།

གནོད་སེམས་ཀྱི་ནི། སེམས་ཅན་དམྱལ་བར་ཁྲིད་དོ། །བྱོལ་སོང་གི་སྐྱེ་གནས་སུ་ཁྲིད་དོ། །གཤིན་རྗེའི་འཇིག་རྟེན་དུ་ཁྲིད་དོ། །དེ་ནས་ཅི་སྟེ་མིར་སྐྱེས་ན་ཡང་རྣམ་པར་སྨིན་པ་གཉིས་མངོན་པར་འགྲུབ་པ་འདི་ལྟ་སྟེ། གནོད་པ་སྐྲགས་ལྟ་བ་དང་། ཕ་རོལ་གྱིས་མནར་བའོ།།

ལས་ཀྱི་[1]ལམ་སྟེ་གཞི་[2]མཐུན་པའི་དྲུག་པའོ། །ཡང་དག་པར་བླང་བ་ནི་དེ་དག་ལ་དགའ་ཞིང་དེའི་གཉེན་པོ་ལ་མི་འབད་པའོ། །དེ་ལས་གཞན་[3]ཕ་རོལ་ཏུ་ཕྱིན་པ་དྲུག་གི་[4]མི་མཐུན་པའི་ཕྱོགས་དང་།[5] ལོག་པ་རྣམ་པ་བརྒྱད་དང་།[6] མནར་

ལོག་པར་ལྟ་བས་ནི། སེམས་ཅན་དམྱལ་བར་ཁྲིད་དོ། །ཁྲོལ་སོང་གི་སྐྱེ་གནས་སུ་ཁྲིད་དོ། །གཤིན་རྗེའི་འཇིག་རྟེན་དུ་ཁྲིད་དོ། །དེ་ནས་ཅི་སྟེ་མིར་སྐྱེས་ན་ཡང་རྣམ་པར་སྨིན་པ་གཉིས་མངོན་པར་འགྲུབ་པ་འདི་ལྟ་སྟེ། ལྟ་བ་ངན་པར་ལྷུང་བ་དང་གཡོ་སྒྱུ་ཅན་ནོ།།
དེ་ལྟར་ན་མི་དགེ་བ་བཅུའི་ལས་ཀྱི་ལམ་འདི་དག་ནི་སྡུག་བསྔལ་གྱི་ཕུང་པོ་ཆེ་ཞིང་ཚད་མེད་པ་སྡུད་པར་འགྱུར་གྱིས་མི་དགེ་བ་བཅུའི་ལས་ཀྱི་ལམ་འདི་དག་བདག་གིས་སྤངས་སྟེ་ཆོས་ལ་དགའ་ཞིང་མོས་པར་དགའ་བར་གནས་པར་བྱའོ། །དེ་མི་དགེ་བ་བཅུའི་ལས་ཀྱི་ལམ་འདི་དག་སྤང་ནས་དགེ་བ་བཅུའི་ལས་ཀྱི་ལམ་ལ་གནས་ཤིང་གཞན་ཡང་དེ་ཉིད་ལ་རབ་ཏུ་གཞག་གོ།
ས་བཅུ་པའི་མདོ། Toh-44 སྡེ། བཀའ། ཕལ་ཆེན། "ཁ" ས་གཉིས་པ། ༡༨༩ ན ༧ ནས་ ༡༩༠ ན ༡ བར་རོ།།
ལུང་འདི་འཕགས་པ་ཀླུའི་རྒྱལ་པོ་རྒྱ་མཚོས་ཞུས་པ་ཞེས་བྱ་བ་ཐེག་པ་ཆེན་པོའི་མདོར་ཡང་གསལ། Toh-154 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "ཕ" ༣༠༣ བ༡

1 དེ་དག་ཉིད་ཀྱི་- གསེར།

2 ལམ་སྟེ་བཞི་- པེ། གཞི་འཐུན། - གསེར།

3 གཞན་- གསེར་དུ་མི་སྣང་།

4 གི་- གསེར་ཕྲིས་སུ་མི་གསལ།

5 ཕྱིན་དྲུག་གི་མི་མཐུན་ཕྱོགས་དྲུག་ནི། ཁྱིམ་བདག་དྲག་ཤུལ་ཅན་གྱིས་ཞུས་པའི་མདོ་ལས། སེར་སྣ་ཅན་རྣམས་ནི་གཏོང་བ་དང་། ཚུལ་ཁྲིམས་འཆལ་བ་རྣམས་ནི་ཚུལ་ཁྲིམས། གནོད་སེམས་ཅན་རྣམས་ནི་བཟོད་པ། ལེ་ལོ་ཅན་རྣམས་ནི་བརྩོན་འགྲུས་རྩོམ་པ། བརྗེད་ངེས་པ་རྣམས་ནི་དྲན་པ་དང་ཤེས་བཞིན། འཆལ་བའི་ཤེས་རབ་ཅན་རྣམས་ནི་ཤེས་རབ་ལ་བཟུང་བར་བྱའོ།། Toh-63 སྡེ། བཀའ། དཀོན་བརྩེགས། "ང" ༣༦༣ བ ༦

6 བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་སྡེ་སྣོད་ལས། ལོག་པ་རྣམ་པ་བརྒྱད་ནི། ལོག་པའི་ལྟ་བ་དང་། ལོག་པའི་རྟོག་པ་དང་། ལོག་པའི་ངག་དང་། ལོག་པའི་ལས་ཀྱི་མཐའ། ལོག་པའི་འཚོ་བ། ལོག་པའི་རྩོལ་བ་དང་། ལོག་པའི་དྲན་པ་དང་། ལོག་པའི་ཏིང་ངེ་འཛིན་ཏོ།། Toh-56 སྡེ། བཀའ། དཀོན་བརྩེགས། "ག" ༣༣ ན ༣

སེམས་དགུ་[1]ལ་སོགས་པ་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་སྡེ་སྣོད་ལ་སོགས་པ་རྣམས་ལས་མང་ཞིང་བཤད་པ་དག་ཀྱང་འདིར་གསུངས་པ་ཉིད་དོ། །དེ་ལས་འབྲས་བུ་མི་ཁོམ་པ་བརྒྱད་འབྱུང་བས། ལས་ཀྱི་སྒྲིབ་པ་གང་གིས་དང་པོ་དང་གཉིས་ཀའོ།། སྨྲར་བཤད་པའི་གང་ཡང་རིང་[2]བའི་དགེ་སློང་མ་སུན་བཏོན་པའམ། ཆོས་ལ་སྐུར་པའམ། མཁན་པོ་ལ་སོགས་པ་ལ་ལུས་ངག་གིས[3]ཚད་པའི་ལས་བྱས་པ་ཡང་དངོས་སོ། །ཉོན་མོངས་པ་དྲག་པོས་དམྱལ་བ་འབྲིང་གིས་དུད་འགྲོ ཐ་མས་ཡི་དྭགས་བརྒྱད་པ་དང་ཆ་ཕྲ་བས་ཡུལ་མཐའ་འཁོབ་ལ་སོགས་པའོ། །དེ་ཡང་། "མཆོད་རྟེན་བཤིག་པ་དང་། གཙུག་ལག་ཁང་བཤིག་པ་དང་། དཀོན་མཆོག་གསུམ་གྱི་ནོར་སྤྲས་ནས་བདག་ཉིད་ཀྱི་ཕྱིར་ལོངས་སུ་སྤྱོད་པ་གང་ཡིན་པ་དེ་ནི་ཤི་འཕོས་ནས་དམྱལ་བ་མནར་མེད་པར་ལྟུང་བར་འགྱུར་རོ། །གལ་ཏེ་དེ་ལས་ཐར་པར་གྱུར་ན་ཡང་དུད་འགྲོའི་སྐྱེ་གནས་ཀྱི་ལུས་འདི་ལྟ་སྟེ། ཕུག་རོན་དང་། མཆིལ་པ་དང་། ངུར་པ་དང་། ནེ་ཙོ་དང་། བྱིའུ་སྔོན་པོ་དང་། ཉ་དང་། རུས་སྦལ་དང་། སྤྲེའུ་དང་། རི་དྭགས་ཀྱི་ལུས་ལེན་པར་འགྱུར་རོ། །བརྒྱལ་མིའི་ལུས་ཐོབ་པར་གྱུར་ན་ཡང་། མ་ནིང་དང་། བུད་མེད་དང་། མཚན་

---

1 བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་སྡེ་སྣོད་ལས། མནར་སེམས་དགུ་ནི། བདག་ལ་གནོད་པ་བྱས་སོ་ཞེས་ཀུན་ནས་མནར་སེམས་སྐྱེད་པ་དང་། གནོད་པ་བྱེད་དོ་ཞེས་ཀུན་ནས་མནར་སེམས་སྐྱེད་པ་དང་། གནོད་པ་བྱེད་པར་འགྱུར་རོ་ཞེས་ཀུན་ནས་མནར་སེམས་སྐྱེད་པ་དང་། བདག་གི་མཛའ་བོ་ལ་གནོད་པ་བྱས་སོ། །བྱེད་དོ། བྱེད་པར་འགྱུར་རོ་ཞེས་སེམས་ལ་ཀུན་ནས་མནར་སེམས་སྐྱེད་པ་དང་། བདག་ལ་མི་མཛའ་བའི་དོན་བྱས་སོ། །བྱེད་དོ། །བྱེད་པར་འགྱུར་རོ་ཞེས་ཀུན་ནས་མནར་སེམས་སྐྱེད་པའོ།། Toh-56 སྡེ། བཀའ། དཀོན་བརྩེགས། "ག" ༣༣ ན ༣

2 དཔར་མ་ཕལ་ཆེར་"རིང་"གསལ་ཡང་"རུང་"ཞེས་པའི་གོ་དོན་ཡིན་ནམ་སྙམ་མོ།

3 གི་- གསེར་ཕྲིས་སུ་མི་གསལ།

གཉིས་པ་དང་། དབང་པོ་མེད་པ་དང་།[1] སྐྱེད་ཚོང་མ་དག་ཏུ་འགྱུར་རོ།།"[2]

ཞེས་གསུངས་པ་དང་། ཡང་གསུངས་པ། "ཚེ་འདི་ལ་མཆོད་སྟོན་དྲལ་ནས་[3]

ནུབ་མོ་ཟས་ཟོས་པ་གང་ཡིན་པ་དེ་ནི། ཡི་དྭགས་ལྐོགས་པ་[4]བཀྲེས་པ་དག་ཏུ་

---

1 དབང་པོ་མེད་པ་དང་།- པེ་ཅིང་དཔར་མར་མི་སྣང་།

2 ཀ འཕགས་པ་ལིགས་ཉེས་ཀྱི་རྒྱུ་དང་འབྲས་བུ་བསྟན་པ་ཞེས་བྱ་བ་ཐེག་པ་ཆེན་པོའི་མདོ་ལས། བཅོམ་ལྡན་འདས་ཀྱིས་བཀའ་སྩལ་པ། མེར་གྱུར་ཀྱང་མཆོད་རྟེན་དང་གཙུག་ལག་ཁང་བཤིག་པ་དང་། དཀོན་མཆོག་གསུམ་གྱི་དཀོར་ཟླས་ནས་བདག་ཉིད་ཀྱི་ཕྱིར་ཡོངས་སུ་སྤྱོད་པ་གང་ཡིན་པ་དེ་ནི་ཤི་འཕོས་ནས་སེམས་ཅན་དམྱལ་བ་ཆེན་པོ་མནར་མེད་པར་ལྟུང་བར་འགྱུར་རོ། །སེམས་ཅན་དམྱལ་བ་ལས་ཐར་བར་གྱུར་ན་ཡང་དུད་འགྲོའི་སྐྱེ་གནས་ཀྱི་ལུས་འདི་ལྟ་སྟེ། ཕུག་རོན་དང་། མཆིལ་པ་དང་། ངུར་པ་དང་། ནེ་ཙོ་དང་། བྱིའུ་སྔོན་པོ་དང་། ཉ་དང་། རུས་སྦལ་དང་། སྤྲེའུ་དང་། རི་དྭགས་ཀྱི་ལུས་ལེན་པར་འགྱུར་རོ། །བརྒྱ་ལམ་ན་མིའི་ལུས་ལེན་པར་གྱུར་ན་ཡང་མ་ནིང་དང་། བུད་མེད་དང་། མཚན་གཉིས་པ་དང་། དབང་པོ་མེད་པ་དང་། སྐྱེད་འཚོང་མ་དག་ཏུ་འགྱུར་རོ། Toh-354 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "ཨཿ" ༣༠༥ བ ༥ ཁ དགེ་བ་དང་མི་དགེ་བའི་ལས་ཀྱི་རྣམ་པར་སྨིན་པ་བསྟན་པའི་མདོ་ལས། བཅོམ་ལྡན་འདས་ཀྱིས་བཀའ་སྩལ་པ། གང་ལ་ལ་ཞིག་གཙུག་ལག་ཁང་དང་མཆོད་རྟེན་འཇིག་ཅིང་། གང་གིས་དཀོན་མཆོག་གསུམ་གྱི་རྫས་བླངས་ཤིང་སྤྱད་ན་ཚེ་ཕྱི་མ་ལ་བསྐོར་མེད་པའི་སེམས་ཅན་དམྱལ་བར་སྐྱེ་སྟེ། ཅི་སྟེ་དེར་སྐྱེས་ནས་དམྱལ་བ་ལས་ཐར་ན་ཡང་འདི་ལྟ་སྟེ། ཕུག་རོན་དང་། མཆིལ་པ་དང་། ངུར་པ་དང་། ནེ་ཙོ་དང་། བྱིའུ་སྐེ་ཙེ་དང་། ཉ་དང་། རུས་སྦལ་དང་། སྤྲེའུ་དང་། ཕག་པ་དང་། ཤ་བར་སྐྱེའོ། གལ་ཏེ་མིར་སྐྱེས་ན་ཡང་། མ་ནིང་དང་། བུད་མེད་དང་། མཚན་གཉིས་པ་དང་། མཚན་མ་མེད་པ་སྨྲུན་པ་ལ་སོགས་པར་སྐྱེའོ།། Toh-355 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "ཨཿ" ༣༡༣ ན ༧

3 སྡེ་ཚོ་སྣ་པེ་བཞི་དང་གསེར་བྲིས་བཅས་སུ"མཆོད་རྟེན་དྲན་ནས"ཞེས་གསལ་ཞིང་ཚིག་གི་དོན་ཁ་གསལ་པོ་མི་སྟོན་པའི་དབང་གིས་མདོ་ཚིག"མཆོད་སྟོན་དྲལ་ནས"ཞེས་པའི་ཚིག་འདི་གོང་གི་མ་དཔེར་སྦྱོར་བ་ཡིན།

4 པ་- སྣ། པེར་མི་གསལ།

སྐྱེས་ཏེ་[1]ལོ་བརྒྱ་སྟོང་མང་པོར་བཟའ་བ་དང་། བཏུང་བ་[2]ཐོབ་པར་མི་འགྱུར་རོ།། འགྲོ་བའི་ཆེ་ལྷུ་ཚིགས་[3]ཀུན་ཏུ་མི་འབར་བར་འགྱུར་རོ།"[4] །ཞེས་གསུངས་པ་དང་། ཡང་། "ལྐུགས་པ་ནི་ཆོས་ལ་སྐུར་པ་བཏབ་པ་ལས་འབྱུང་བ་ཡིན་ནོ། ། འོན་པ་ནི་ཆོས་ཐོས་པ་ལ་མི་དགའ་བས་ཡིན་ནོ།"[5] "།དབང་པོ་མ་ཚང་བ་ནི་

---

1 སྐྱེ་སྟེ་- སྣ། པེ།

2 ལྟུང་བ་- སྡེ། ཅོ།

3 ལྷུ་ཚིགས་- སྡེ། ཅོ།

4 ཀ འཕགས་པ་ལེགས་ཉེས་ཀྱི་རྒྱུ་དང་འབྲས་བུ་བསྟན་པ་ཞེས་བྱ་བ་ཐེག་པ་ཆེན་པོའི་མདོ་ལས། ཚེ་འདི་ལ་མཆོད་སྟོན་བྲལ་ནས་ནུབ་མོ་ཟན་ཟོས་པ་གང་ཡིན་པ་དེ་ནི་ཚེ་འཕྲོས་ནས་ཡི་དྭགས་འདྲེ་བགྲེན་དག་ཏུ་ལྟུང་བས་ལོ་བརྒྱ་ཕྲག་མང་པོ་བཟའ་བ་དང་། བཏུང་བ་མང་པོ་ཐོབ་པར་མི་འགྱུར་རོ།། འགྲོ་བའི་ཆེ་ལྷུ་ཚིགས་ཀུན་ཏུ་མི་རབ་ཏུ་འབར་བར་འགྱུར་རོ།། Toh-354 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "ཨཿ" ༣༠༥ ན ༧

ཁ དགེ་བ་དང་མི་དགེ་བའི་ལས་ཀྱི་རྣམ་པར་སྨིན་པ་བསྟན་པའི་མདོ་ལས། ཚེ་འདི་ལ་མཆོད་སྟོན་ཟོས་པའི་ནུབ་མོ་ཟས་ཟོས་ན་ཚེ་ཕྱི་མ་ལ་འདྲེ་ལྟོགས་སུ་འགྱུར་རོ།། ལོ་ཁྲི་བརྒྱ་སྟོང་གི་བར་དུ་བཟའ་བ་དང་། བཏུང་བ་རྙེད་པར་མི་འགྱུར་རོ། །ཡན་མན་དུ་འགྲོ་བའི་ཆེ་ཚིགས་ཐམས་ཅད་དུ་མི་འབར་རོ།། Toh-355 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "ཨཿ" ༣༡༣ བ ༧

5 ཀ འཕགས་པ་ལེགས་ཉེས་ཀྱི་རྒྱུ་དང་འབྲས་བུ་བསྟན་པ་ཞེས་བྱ་བ་ཐེག་པ་ཆེན་པོའི་མདོ་ལས། མིར་གྱུར་ཀྱང་ལྐུགས་པ་གང་ཡིན་པ་དེ་ནི་ཆོས་ལ་སྐུར་བ་བཏབ་པ་ལས་འོངས་པ་ཡིན་ནོ།། མིར་གྱུར་ཀྱང་འོན་པར་གྱུར་པ་གང་ཡིན་པ་དེ་ནི་ཆོས་ཐོས་པར་མི་དགའ་བ་ལས་འོངས་པ་ཡིན་ནོ།། Toh-354 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "ཨཿ" ༡༩༩ བ ༣

ཁ དགེ་བ་དང་མི་དགེ་བའི་ལས་ཀྱི་རྣམ་པར་སྨིན་པ་བསྟན་པའི་མདོ་ལས། ལྐུགས་པ་ནི་དམ་པའི་ཆོས་ལ་སྐུར་བ་འདེབས་པ་འོངས་སོ།། འོན་པ་ནི་ཆོས་ཐོས་སུ་མི་དགའ་བ་ལས་འོངས་སོ།། Toh-355 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "ཨཿ" ༣༡༠ ན ༥

ཚུལ་ཁྲིམས་འཆལ་བ་ལས་འགྱུར་རོ།"[1] "།ལྐུ་རིག་པ་ནི་དབེན་པར་བླ་མ་ལ་མི་སྙན་པ་བརྗོད་པོ།"[2] "།མདའ་གཞུ་དང་གཞོན་ཆོས་ལ་དགའ་བ་ནི་ཀླ་ཀློ་ཅན་དུ་སྐྱེའོ།"[3] "།ཀང་ལག་ཞ་བ་ནི་མཁན་པོ་དང་བླ་མ་མཐོང་ཡང་མི་ལྡང་བའོ།།"[4]

---

1 ཀ འཕགས་པ་ལེགས་ཉེས་ཀྱི་རྒྱུ་དང་འབྲས་བུ་བསྟན་པ་ཞེས་བྱ་བ་ཐེག་པ་ཆེན་པོའི་མདོ་ལས། མིར་གྱུར་ཀྱང་དབང་པོ་རྣམས་མ་ཚང་བ་གང་ཡིན་པ་དེ་ནི་ཚུལ་ཁྲིམས་འཆལ་བ་ལས་འོངས་པ་ཡིན་ནོ།། **Toh-354** སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "ཨཿ" ༣༠༠ བ ༣

ཁ དགེ་བ་དང་མི་དགེ་བའི་ལས་ཀྱི་རྣམ་པར་སྨིན་པ་བསྟན་པའི་མདོ་ལས། དབང་པོ་དྲུག་མ་ཚང་བ་ནི་ཚུལ་ཁྲིམས་བཤིག་པ་ལས་འོངས་སོ།། **Toh-355** སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "ཨཿ" ༣༡༠ བ ༥

2 ཀ འཕགས་པ་ལེགས་ཉེས་ཀྱི་རྒྱུ་དང་འབྲས་བུ་བསྟན་པ་ཞེས་བྱ་བ་ཐེག་པ་ཆེན་པོའི་མདོ་ལས། མིར་གྱུར་ནས་ལྐུ་སྦུང་བ་གང་ཡིན་པ་དེ་ནི་དབེན་པ་དག་ཏུ་བླ་མ་དག་ལ་ཚིག་མི་སྙན་པ་བརྗོད་པ་ལས་འོངས་པ་ཡིན་ནོ།། **Toh-354** སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "ཨཿ" ༣༠༠ བ ༥

ཁ དགེ་བ་དང་མི་དགེ་བའི་ལས་ཀྱི་རྣམ་པར་སྨིན་པ་བསྟན་པའི་མདོ་ལས། ལྐུ་སྦུང་བ་ནི་བཙུན་པ་དང་བླ་མ་ལ་ཁ་བྱུས་པ་དང་ཕྱོག་ཏུ་འཕྱས་པ་ལས་འོངས་སོ།། **Toh-355** སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "ཨཿ" ༣༡༠ བ ༦

3 ཀ འཕགས་པ་ལེགས་ཉེས་ཀྱི་རྒྱུ་དང་འབྲས་བུ་བསྟན་པ་ཞེས་བྱ་བ་ཐེག་པ་ཆེན་པོའི་མདོ་ལས། མིར་གྱུར་ནས་མདའ་གཞུ་ཐོགས་ཤིང་གཞོན་པ་ལ་མངོན་པར་དགའ་བ་གང་ཡིན་པ་དེ་ནི་ཤི་འཕོས་ནས་ཀླ་ཀློ་ཅན་དུ་ལྟུང་བར་འགྱུར་རོ།། **Toh-354** སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "ཨཿ" ༣༠༠ ༧ བ

ཁ དགེ་བ་དང་མི་དགེ་བའི་ལས་ཀྱི་རྣམ་པར་སྨིན་པ་བསྟན་པའི་མདོ་ལས། མདའ་གཞུ་ཐོགས་པ་དང་རྟ་ཞོན་པ་ལ་དགའ་བ་ནི་ཚེ་ཕྱི་མ་ལ་འཕར་བ་དང་སྲུང་ཀིར་སྐྱེའོ།། **Toh-355** སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "ཨཿ" ༣༡༠ བ ༧

4 ཀ འཕགས་པ་ལེགས་ཉེས་ཀྱི་རྒྱུ་དང་འབྲས་བུ་བསྟན་པ་ཞེས་བྱ་བ་ཐེག་པ་ཆེན་པོའི་མདོ་ལས། མིར་གྱུར་ཀྱང་ཀང་ལག་ཞ་བོར་གྱུར་པ་གང་ཡིན་པ་དེ་ནི་མཁན་པོ་དང་སློབ་དཔོན་དང་བླ་མ་རྣམས་མཐོང་ཡང་ལྡང་བ་མེད་པ་ལས་གྱུར་པ་ཡིན་ནོ།། **Toh-354** སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "ཨཿ" ༡༩༩ བ ༦

"གཉའ་བ་ཐུང་བ་ནི་བླ་མ་མཐོང་ན་མགོ་གཡོགས་ཏེ་ཐྲོས་པའོ།"[1] །ཞེས་གསུངས་པའོ། །བྱམས་མའི་བུ་གང་པོ་འཇིག་རྟེན་པ་ནི་སྒྲའི་དོན་ལ་མངོན་པར་ཞེན་པས་ཕལ་ཆེར་ངན་སོང་དུ་སྐྱེ་སྟེ། དེ་དག་ཐམས་ཅད་ཀྱང་ཕལ་ཆེར་བདེ་བར་གཤེགས་པའི་གསུང་རབ་ལས་འབྱུང་བའི་དོན"བྱང་ཆུབ་ཏུ་སེམས་བསྐྱེད་པ་དང་། སེམས་ཅན་གྱི་དོན་བྱ་བ་དང་། བསྔོ་བའི་དངོས་པོ་བཞིས་[2]བསྔོ་[3]བར་བྱ་བ་དང་། སྦྱིན་པ་ལ་སོགས་པ་ཕ་རོལ་ཏུ་ཕྱིན་པ་རྣམས་སྤྱངས་པ་དང་། ས་དང་ལམ་རྣམས་སྤྱང་ཞིང་[4]བྱང་ཆུབ་ཀྱི་སྤྱོད་པ་སྤྱངས་ནས། ལོག་པའི་དོན་ལ་མངོན་པར་ཞེན་པ་ཡོད་

ཁ   དགེ་བ་དང་མི་དགེ་བའི་ལས་ཀྱི་རྣམ་པར་སྨིན་པ་བསྟན་པའི་མདོ་ལས། ཞར་བ་དང་གྲོལ་བ་ནི་མཁན་པོ་དང་བླ་མ་མཐོང་སྟེ་མི་ལྡང་བ་ལས་འོངས་སོ།། Toh-355 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "ཨཿ" ༣༡༠ ན ༦

1 ཀ   འཕགས་པ་ལེགས་ཉེས་ཀྱི་རྒྱུ་དང་འབྲས་བུ་བསྟན་པ་ཞེས་བྱ་བ་ཐེག་པ་ཆེན་པོའི་མདོ་ལས། མིར་གྱུར་ཀྱང་གཉའ་བ་ཐུང་བ་གང་ཡིན་པ་དེ་ནི་བླ་མ་དག་མཐོང་ནས་མགོ་ཐུམས་ཏེ་ཐྲོས་ནས་འགྲོལ་བ་ལས་གྱུར་པ་ཡིན་ནོ།། Toh-354 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "ཨཿ" ༣༠༠ ན ༡

ཁ   དགེ་བ་དང་མི་དགེ་བའི་ལས་ཀྱི་རྣམ་པར་སྨིན་པ་བསྟན་པའི་མདོ་ལས། མཇིང་པ་ཐུང་བ་ནི་བཙུན་པ་དང་བླ་མ་མཐོང་ནས་མགོ་སྒྲད་ཅིང་བྲོལ་བ་ལས་འོངས་སོ།། Toh-355 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "ཨཿ" ༣༡༠ ན ༧

2 ས་བཅུ་པའི་མདོ། Toh-44 སྡེ། བཀའ། ཕལ་ཆེན། "ཁ" ༣༠༡ བ

རྒྱ་ཆེར་རོལ་པའི་མདོ། Toh-95 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "ཁ" ༣༩

བློ་གྲོས་མི་ཟད་པ་བསྟན་པའི་མདོ། Toh-175 སྡེ། བཀའ། "མ" ༡༩༣

འཕགས་པ་ཆོ་འཕྲུལ་ཆེན་པོ་བསྟན་པའི་མདོ། Toh-66 སྡེ། བཀའ། དཀོན་བརྩེགས། "ཅ" ༩༤ བ

མ་སྐྱེས་དགྲའི་འགྱོད་པ་བསལ་བའི་མདོ། Toh-216 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "ཚ" ༣༡༨ བ

བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་ས། Toh-4037 སྡེ། བསྟན། སེམས་ཙམ། "ཝི" ༡༡༧

བསླབ་པ་ཀུན་ལས་བཏུས་པ། Toh-3940 སྡེ། བསྟན། དབུམ། "ཁི" ༣༥ དང་ ༣༦༡ བ

མདོ་ཀུན་ལས་བཏུས་པ། Toh-3934 སྡེ། བསྟན། དབུ་མ། "ཀི" ༡༡ ན

3 གཞིས་བསྔོ་- ཅོ།

4 སྤྱོང་ཞིང་- པེ། གསེར།

དེ་དེའི་རྒྱུས་ངན་སོང་དུ་སྐྱེའོ། །བཀའ་ལས་འབྱུང་བའི་ཆོས་རྣམས་སྤྱོད་པ་ནི[1] དེའི་གཉེན་པོའོ།"[2] །ཞེས་གསུངས་པའོ། །ཡང་། "གཞན་གྱི་ཁྲིམ་རྣམས་སུ་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་ལ་ཕྲག་དོག་དང་སེར་སྣ་བྱེད་ན་དེས་དེའི་ཚེ་རིང་ཞིང་དེ་ལས་འཇིགས་པ་ཆེན་པོ་གསུམ་སྐྱེ། གང་ཞེ་ན། སེམས་ཅན་དམྱལ་བར་སྐྱེ་བས་འཇིགས་པ་དང་། དམུས་ལོང་གིས་འཇིགས་པ་དང་། ཡུལ་མཐའ་འཁོབ་ཏུ་སྐྱེ་བས་འཇིགས་པ་སྐྱེ་གསུམ་མོ།"[3] །ཞེས་པ་དང་། ཡང་། "དགེ་སློང་མ་སུན་བཏོན[4]ན་སེམས་ཅན་དམྱལ་བའི་གནས་སུ་མུན་ནག་ཡོད་པར་སྐྱེའོ།"[5] ། "སློག་བཅད་པས་རལ་གྲིའི་ལོ་མ་ཅན་དུ་སྐྱེའོ། །ཛོན་པ་

---

1 ནི་- ཕེ་ཅིང་པར་མར་མི་སྣང་།

2 བྱང་ཆུབ་ཏུ་སེམས་བསྐྱེད་པ་ཞེས་པ་ནས..........དེའི་གཉེན་པོའོ་ཞེས་པའི་བར་གྱི་ལུང་འདི་ད་ལྟ་རྙེད་སོན་མ་བྱུང་།

3 རབ་ཏུ་ཞི་བ་རྣམ་པར་ངེས་པའི་ཆོ་འཕྲུལ་གྱི་ཏིང་ངེ་འཛིན་གྱི་མདོ་ལས། འཇམ་དཔལ་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་གང་ལ་ལ་གཞན་གྱི་ཁྱིམ་རྣམས་སུ་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་ལ་ཕྲག་དོག་དང་། སེར་སྣ་བྱེད་ན་དེས་དེའི་ཚེ་གཞི་དེ་ལས་འཇིགས་པ་ཆེན་པོ་གསུམ་ཤེས་པར་བྱ་སྟེ། གསུམ་གང་ཞེ་ན། སེམས་ཅན་དམྱལ་བར་སྐྱེ་བའི་འཇིགས་པ་དང་། དམུས་ལོང་གི་འཇིགས་པ་དང་། ཡུལ་མཐའ་ཁོབ་ཏུ་སྐྱེ་བའི་འཇིགས་པ་དང་། འཇིགས་པ་གསུམ་མོ།། Toh-129 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "ད" ༡༠༧ བ

Toh-3940 བསླབ་པ་ཀུན་ལས་བཏུས་པ། ལེའུ ༨ སྡེ། བསྟན། དབུ་མ། "ཁི" ༥༢ ན ༥

4 གཏོན་- སྡེ།

5 འཕགས་པ་ལེགས་ཉེས་ཀྱི་རྒྱུ་དང་འབྲས་བུ་བསྟན་པ་ཞེས་བྱ་བ་ཐེག་པ་ཆེན་པོའི་མདོར་ལུང་འདིའི་མཚམས་སུ.....ཚེ་འདི་ལ་སྐྲ་གཟུགས་དང་མདོ་སྡེའི་སྤྱན་སྔར་མར་མི་སྤྲར་བར་མངོན་པར་མི་དགའ་ན་ཤི་འཕོས་ནས་རི་ཁོར་ཡུག་གི་བར་ན་སེམས་ཅན་དམྱལ་བའི་གནས་མུན་ནག་ཡོད་པ་དག་ཏུ་ལྟུང་བར་འགྱུར་རོ།། ཞེས་འཁོད་པ་ཙམ་ལས་དགེ་སློང་མ་སོགས་གང་ཡང་མི་གསལ། Toh-354 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "ཨཿ" ༣༠༣ བ ༣

བྱེད་པས་[1]ཐིག་ནག་ཏུ་སོག་ལེས་འགྲེའོ།།"[2] "འདོད་པ་ལོག་པར་གཡེམ་པས་ཟངས་ཀྱི་ཁང་པ་རབ་ཏུ་འབར་བ་ལ་འཇུག་པ་དང་། ལྕགས་ཀྱི་ཁྲི་རབ་ཏུ་ཚ་བའི་དམྱལ་[3]བར་སྐྱེའོ།"[4] "།ཆང་འཐུངས་ནས་མྱོས་པ་ནི་ལྕགས་ཆང་འཐུངས་པའི་སེམས་ཅན་དམྱལ་བར་སྐྱེའོ། །དགེ་འདུན་གྱི་ཞིང་ཏོག་[5]བརྐུས་པས་ལྕགས་ཀྱི་ཐུ་ལུམ་འབར་བ་ཟ་བར་སྐྱེའོ། །རྒྱ་མ་དང་ཤ་ཟོས་པས་ལྷན་ལྷིན་གྱིས་གང་བའི་དམྱལ་བར་སྐྱེའོ། །ཕྲ་མ་བྱས་ཏེ་དཀྲུགས་པས་ལྕགས་ཀྱི་ཐོང་གཤོལ་[6]གྱིས་ལྕེ་རྨོ་བའི་དམྱལ་བར་སྐྱེའོ། །ཚིག་མི་སྙན་བརྗོད་པས་ལྕེ་རབ་ཏུ་འབྱིན་པའི་དམྱལ་བར་སྐྱེའོ། །བརྫུན་མང་དུ་སྨྲས་པས་ལྕེ་ལ་ལྕགས་ཀྱི་གཟེར་གྱིས་འདེབས་པའི་སེམས་ཅན་དམྱལ་པར་སྐྱེའོ། །སྲོག་བཅད་ནས་ལོག་པའི་ལྷ་ལ་མཆོད་སྦྱིན་བྱས་པས་

1 ཇོན་བྱེད་པས་- སྡེ། ཅོ།

2 སོགས་ལེས་འདྲའོ།- སྡེ། ཅོ།

3 ལྕགས་ཀྱི་ཁྲི་རབ་ཏུ་ཚ་བ་ལ་ཉལ་བར་སྐྱེའོ།། དཔར་མ་ཚང་མར་གསལ་ཡང་མ་དག་མངོན་ཏེ་བཅོས།

4 འཕགས་པ་ལེགས་ཉེས་ཀྱི་རྒྱུ་དང་འབྲས་བུ་བསྟན་པ་ཞེས་བྱ་བ་ཐེག་པ་ཆེན་པོའི་མདོ་ལས། ཚེ་འདི་ལ་སེམས་ཅན་གྱི་སྲོག་བཅད་པས་དམྱལ་ཞིང་བཏབ་པར་བྱེད་ན་ཤི་འཕོས་ནས་སེམས་ཅན་དམྱལ་བ་མཆོན་ལྟར་རབ་ཏུ་རྣོ་བའི་རི་ལ་རལ་གྲི་ལོ་མ་ཅན་གྱི་ལྷོན་ཤིང་འཛེག་པ་དག་ཏུ་ལྟུང་བར་འགྱུར་རོ། །ཚེ་འདི་ལ་ཁ་ཅིག་ཐིག་གཏོང་ཞིང་ཇོན་པ་བྱེད་པར་མངོན་པར་དགའ་བ་དེ་དག་ནི་ཤི་འཕོས་ནས་སོག་ལེས་འདྲལ་བའི་སེམས་ཅན་དམྱལ་བར་ལྟུང་བར་འགྱུར་རོ། །ཚེ་འདི་ལ་མང་དུ་འདོད་པས་ལོག་པར་གཡེམ་པ་གང་ཡིན་པ་དེ་ནི་ཤི་འཕོས་ནས་ཟངས་ཀྱི་ཀ་བ་རབ་ཏུ་འབར་བ་ལ་འཇུ་བ་དང་ལྕགས་ཀྱི་ཁྲི་རབ་ཏུ་ཚ་བ་ལ་ཉལ་བའི་སེམས་ཅན་དམྱལ་བར་ལྟུང་བར་འགྱུར་རོ།། Toh-354 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "ཨཿ" ༣༠༣ བ ༣

5 ཞིང་ཐོག- སྡེ། ཅོ།

6 ཐང་གཤོལ་- སྡེ། ཐོང་བཤོལ་- ཅོ།

ལྷགས་ཀྱི་གདུན་གྱིས་བརྡུང་པའི་དམྱལ་བར་སྐྱེའོ།[1] །ཞེས་གསུངས་སོ། ། འདི་སྐད་དུ།

གང་ཟག་གཉིས་ནི་མ་གདོགས་ཏེ།།
གཅིག་ནི་ཕྱོགས་སྒོམས་ཆོས་ལ་སྐུར།།
གཉིས་པོ་དེ་ནི[2]འདོད་ཆེ་བ།[3] །ཞེས་གསུངས་སོ།།[4]

དེ་དག་ཐམས་ཅད་སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་ཡེ་ཤེས་སུ་གྱུར་པ། སྤྱན་དུ་གྱུར་པ། དཔང་དུ་གྱུར་པ། ཚད་མར་གྱུར་པ། མཁྱེན་ཅིང་གཟིགས་པ་ཞེས་བྱ་བ་ནི། ཉེས་པའི་ཚོགས་ཐམས་ཅད་བཤགས་པའོ། །

---

1 འཕགས་པ་ལེགས་ཉེས་ཀྱི་རྒྱུ་དང་འབྲས་བུ་བསྟན་པ་ཞེས་བྱ་བ་ཐེག་པ་ཆེན་པོའི་མདོ་ལས། ཚེ་འདི་ལ་ཆང་འཐུངས་ནས་མྱོས་པར་བྱས་པ་གང་ཡིན་པ་དེ་ནི་ཤི་འཕོས་ནས་ལྷགས་ཁྲུ་འཐུང་བའི་སེམས་ཅན་དམྱལ་བར་ལྟུང་བར་འགྱུར་རོ། །ཚེ་འདི་ལ་སེམས་ཅན་གྱི་ལུས་ཀྱི་ཡན་ལག་བཅད་ཅིང་བདུབ་པ་གང་ཡིན་པ་དེ་ནི་ཤི་འཕོས་ནས་ལྷགས་ཀྱི་འཁོར་ལོ་དང་ལྡན་པའི་སེམས་ཅན་དམྱལ་བར་འགྱུར་རོ། །ཚེ་འདི་ལ་དགེ་འདུན་གྱི་ཞིང་རྡོག་བརྐུས་པ་གང་ཡིན་པ་དེ་ནི་ཤི་འཕོས་ནས་ལྷགས་ཀྱི་ཐུ་ལུམ་ཟ་བའི་སེམས་ཅན་དམྱལ་བར་ལྟུང་བར་འགྱུར་རོ།།............ཚེ་འདི་ལ་ཕྲ་མ་བྱས་ནས་དཀྲུགས་མ་བྱས་པ་གང་ཡིན་པ་དེ་ནི་ཤི་འཕོས་ནས་ལྷགས་ཀྱི་ཐོང་གཤོལ་གྱིས་རྨོ་བའི་སེམས་ཅན་དམྱལ་བར་ལྟུང་བར་འགྱུར་རོ། །ཚེ་འདི་ལ་མི་སྙན་པས་གཞན་དག་ལ་སྤྲོས་པ་གང་ཡིན་པ་དེ་ནི་ཤི་འཕོས་ནས་ལྕེ་རབ་ཏུ་འབྱིན་པའི་སེམས་ཅན་དམྱལ་བར་ལྟུང་བར་འགྱུར་རོ། །ཚེ་འདི་ལ་རྫུན་མང་དུ་སྨྲས་པ་གང་ཡིན་པ་དེ་ནི་ཤི་འཕོས་ནས་ལྕེ་ལྷགས་ཀྱིས་གཟེར་འདེབས་པའི་སེམས་ཅན་དམྱལ་བར་ལྟུང་བར་འགྱུར་རོ། །ཚེ་འདི་ལ་སྲོག་བཅད་ནས་ལོག་པའི་ལྷ་ལ་མཆོད་སྦྱིན་བྱས་པ་གང་ཡིན་པ་དེ་ནི་ཤི་འཕོས་ནས་ལྷགས་ཀྱི་གདུན་གྱིས་བརྡུངས་པའི་སེམས་ཅན་དམྱལ་བར་ལྟུང་བར་འགྱུར་རོ།། Toh-354 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "ཨཿ" ༣༠༣ ན ༡

2 དེ་ན་- སྡེ།

3 འཕགས་པ་རྟོགས་པ་ཆེན་པོ་ཡོངས་སུ་རྒྱས་པའི་མདོ། Toh-265 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "འ" ༣༧༡ ན

4 ཞེས་གསུངས་པའོ།།- པེ།

རྣམ་པ་ཐམས་ཅད་མཁྱེན་པ་དང་། མངོན་སུམ་དུ་གཟིགས་པ་དང་། གཉའ་དྲག་མཛད་པ་དང་།[1] བརྩུན་མི་སླ་བ་དང་། མཛད་པ་དང་། ཐུགས་རྗེ་ཆེ་བ་སྟེ། དེ་བཞིན་གཤེགས་པའི་ཡོན་ཏན་རྣམ་པ་དྲུག་གོ །ལྷག་མ་ནི་གོ་བར་ཟད་དོ།། **ལྟུན་ཆད་ཀུང་སྨོམ་པར་** ཞེས་པ་ནི་ཁས་ལེན་པའོ།།

ཉེས་པར་བྱུང་ན་བཤགས་པར་བྱ། །
སྙིང་རྗེ་བྱམས་པ་ཞུགས་གྱུར་ན། །
སྔར་བྱས་ཉེས་པ་འདི་ཡིས་དག །
བཤགས་ཀུང་ཕྱིར་ཞིང་མི་སྡོམ་ན། །
བཤགས་ཀུང་དྲི་མ་འདག་པ་མེད། །ཅེས་བཤད་དོ།།[2]

སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་དེ་དག་ཐམས་ཅད་བདག་ལ་དགོངས་སུ་གསོལ། བདག་གིས་སྐྱེ་བ་འདི་དང་སྐྱེ་བ་ཐོག་མ་དང་ཐ་མ་མ་མཆིས་ ཞེས་བྱ་བ་ནི་དགེ་བའི་རྩ་བ་བསྔོ་བའི་ཕྱིར་ཐུགས་གཏོད་པ་སྟེ། གང་ཞེ་ན

1 གཉའ་དྲག་མཛད་པ། ཞེས་པའི་ཚིག་འདིའི་དོན་གཞུང་ཚན་མང་པོར་འཚོལ་ཞིབ་བྱས་ཀུང་སངས་རྒྱས་ཀྱི་ཡོན་ཏན་དེ་འདྲ་ཅན་ད་བར་རྙེད་སོན་མ་བྱུང་ཡང་རྒྱལ་སྲས་ཞི་བ་ལྷའི་སྤྱོད་འཇུག་གི་ལེའུ་བརྒྱད་པར་དེ་སྐད་དུ། འདི་ནི་གཉའ་དྲག་འགྱུར་རྩུལ་དང་། །ཤེད་བསྐྱེད་པར་ནི་མི་བྱ་སྟེ། ། ཞེས་གསལ། དེའི་འགྲེལ་ཀྱི་ཤེར་འབྱུང་བློ་གྲོས་ཀྱི་འགྲེལ་པར། གཉའ་དྲག་ཅེས་པའི་ཚིག་འདིའི་བསྒྱུར་དུ་ངག་རྩུབ་འགྱུར་ཞེས་པ་གསལ་ཞིང་། དེའི་དོན་དེ་ཉིད་ལས། གང་གིས་ངག་རྩུབ་པར་འགྱུར་བ་ནི་ཕོད་པ་ཆེ་བ་ཡིན་དེ། ཞེས་གསུངས་སོ།། Toh-3872 སྡེ། བསྟན། དབུ་མ། "ལ" ༡༨༠ ན སློབ་དཔོན་གྱིཛྙའི་སྤྱོད་འགྲེལ་དུའང་། གཉའ་གྲག་ཅེས་གསལ། སློབ་དཔོན་བཻརོཙནརཀྴིཏའི་སྤྱོད་འགྲེལ་དུའང། གཉའ་དྲག་པ་ནི་ཕོད་ཤེད་སྐྱེས་པའོ།། ཞེས་གསུངས་སོ།། Toh-3876 སྡེ། བསྟན། དབུ་མ། "ལ" ༡༣༦ ན ༥ དེ་ལྟར་དཔྱད་པ་ན་སངས་རྒྱས་ཀྱི་གསུངས་ཀྱིང་རོའམ་ཆོས་འཆད་པ་ལ་འཇིགས་ཞུམ་མེད་ཅིང་སྤོབས་པ་ཆེ་བ་ལ་བརྗོད་པ་ཡིན་ནམ་སྙམ།

2 ལུང་ཚིག་འདི་རྙེད་སོན་མ་བྱུང་།

འདི་ལ་བྱས་པ་[1]དང་། གཞན་དུ་བྱས་པའོ། །ཐ་མ་ནི་ཐོག་མའི་མཐའོ། །**སངས་རྒྱས་ཀྱི་ཞིང་གི་ཡོན་ཏན་བཀོད་པའི་མདོ་**[2]**ལས།**

འཁོར་བའི་མཐའ་ནི་མེད་པ་ལས། །
སྔོན་གྱི་མཐའ་ནི་ཇི་སྲིད་པ། །
སེམས་ཅན་དེ་སྲིད་ཕན་དོན་དུ། །
སྤྱོད་པ་དཔག་ཡས་[3]སྤྱད་པར་བྱ།[4] །ཞེས་གསུངས་སོ།།

དེ་ཡང་དང་པོ་ཚེ་རབས་དཔག་ཏུ་མེད་པ་ནས་བྱས་པ་ཐམས་ཅད་བསྡོམས་ནས་འཁོར་བ་ན་[5]འཁོར་བའི་ཚེ་སྐྱེ་བ་གཞན་དུ་ལྷ་དང་མི་དང་། ཡི་དྭགས་དང་དུད་འགྲོ་དང་། དམྱལ་བ་ལ་སོགས་པའི་འཁོར་བ་རྣམས་སུ་སྐྱེས་པ་ན། སྦྱིན་པ་ཆུང་ངུ་སྦྱིན་པའི་སེམས་ཅན་རྣམས་ནི་**ཐ་ན་དུད་འགྲོའི་སྐྱེ་གནས་སུ་སྐྱེས་པ་རྣམས་ལ་ཁམ་ཅིག་ཙམ་སྦྱིན་པ་**སྟེ། ཆེར་བྱིན་པ་ལྷ་ཅི་སྨོས། ཡང་རྟེན་ཁྱད་པར་ཅན་ལ་ཕུལ་བ་དང་། སྦྱིན་པ་མང་པོ་དང་། བཟང་པོས་[6]སྦྱིན་པའོ། །སྦྱིན་ནུས་པ་ལ་**ཚུལ་ཁྲིམས་བསྲུང་བའི་**སེམས་འབྱུང་བས་སྡོམ་པ་ལེན་ཏེ་ཐ་ན་བསྙེན་གནས་ཀྱིའོ། །དགེ་བསྙེན་ནམ། དགེ་ཚུལ་ལམ། དགེ་སློང་ཅི་ནུས་པ་བསྲུངས་པ་ཐམས་ཅད་དོ། ཁྱད་པར་ཅན་གྱི་དབང་དུ་བྱས་ན། **ཚངས་པར་**

---

1 གུས་པ་- སྣ། པེ།

2 Toh-59 སྡེ། བཀའ། དཀོན་བརྩེགས། "ག" ༢༧༩ ན

3 དཔག་ལས་- ཅོ།

4 སྤྲུང་པར་བ་- སྣ། བྱུས་ གསེར།

5 འཁོར་བ་ནས་- སྡེ། ཅོ།

6 བཟང་པོ་- པེ།

སྦྱོད་པ་ལ་གནས་པའི་དགེ་བ་སློས་སོ། །དེ་ཡང་། བཅོམ་ལྡན་འདས་ཀྱིས།[1] "དུད་འགྲོའི་སྐྱེ་གནས་སུ་སོང་པ་རྣམས་ལ་སྦྱིན་པ་བཏང་ན་བརྒྱ་འགྱུར་འཐོབ་པར་འགྱུར་[2]རོ། །མི་ཕལ་པ་གཅིག་[3]ལ་བཏང་ན་སྟོང་འགྱུར་འཐོབ་པར་འགྱུར་རོ།། ཚུལ་ཁྲིམས་དང་ལྡན་པའི་དགེ་སློང་ལ་བཏང་ན་ཁྲི་འགྱུར་འཐོབ་པར་འགྱུར་རོ། དེ་ཉིད་ཆོས་སྨྲ་བ་ལ་བཏང་ན་ཚད་མེད་པ་འཐོབ་པར་འགྱུར་རོ།" །ཞེས་གསུངས་པ་དང་། ཡང་། "དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དང་། ཕ་མ་དང་། ནད་པ་རྣམས་ལ་ཟས་ཟ་གཅིག་[4]བཏང་ན་འབྲས་བུ་ཚད་མེད་པ་འཐོབ་པར་འགྱུར་རོ།། "[5]

---

1 འཕགས་པ་ལེགས་ཉེས་ཀྱི་རྒྱུ་དང་འབྲས་བུ་བསྟན་པ་ཞེས་བྱ་བ་ཐེག་པ་ཆེན་པོའི་མདོ་ལས། གང་གིས་དུད་འགྲོའི་གནས་སུ་སོང་བ་རྣམས་ལ་སྦྱིན་པ་ཡོངས་སུ་བཏང་ན་རྣམ་པར་སྨིན་པའི་འབྲས་བུ་བརྒྱ་འགྱུར་རྙེད་འཐོབ་པར་འགྱུར་རོ། །འདོད་ཆེན་པ་དག་ལ་སྦྱིན་པ་ཡོངས་སུ་བཏང་ན་རྣམ་པར་སྨིན་པ་སྟོང་འགྱུར་རྙེད་འཐོབ་པར་འགྱུར་རོ། །ཚུལ་ཁྲིམས་དང་ལྡན་པའི་དགེ་སློང་ལ་སྦྱིན་པ་ཡོངས་སུ་བཏང་ན་རྣམ་པར་སྨིན་པ་ཁྲི་འགྱུར་རྙེད་འཐོབ་པར་འགྱུར་རོ། །གང་གིས་ཐེག་པ་ཆེན་པོ་དེ་བཞིན་གཤེགས་པའི་གསང་བའི་སྙིང་པོ་འཁོར་མང་པོ་ལ་ཡང་དག་པར་བསྒྲགས་ནས་སེམས་ཀྱི་མིག་འབྱེད་པའི་ཆོས་སྨྲ་བ་གང་དག་ལ་སྦྱིན་པ་ཡོངས་སུ་བཏང་ན་རྣམ་པར་སྨིན་པའི་འབྲས་བུ་ཚད་མེད་པ་རྙེད་འཐོབ་པར་འགྱུར་རོ།། Toh-354 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "ཨཿ" ༣༠༧ བ ༣
དགེ་བ་དང་མི་དགེ་བའི་ལས་ཀྱི་རྣམ་པར་སྨིན་པ་བསྟན་པའི་མདོ། Toh-355 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "ཨཿ" ༣༡༥ ན ༧
འཕགས་པ་རབ་ཏུ་ཞི་བ་རྣམ་པར་ངེས་པའི་ཆོ་འཕྲུལ་གྱི་ཏིང་ངེ་འཛིན་ཞེས་བྱ་བ་ཐེག་པ་ཆེན་པོའི་མདོ། Toh-129 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "ད" ༣༠༦ བ ༦

2 ཐོབ་པར་འགྱུར་- སྡེ། ཅོ། སྣ།

3 ཅིག་- པེ།

4 ཟ་ཅིག་- སྣ། པེ། གསེར།

5 ཀ འཕགས་པ་ལེགས་ཉེས་ཀྱི་རྒྱུ་དང་འབྲས་བུ་བསྟན་པ་ཞེས་བྱ་བ་ཐེག་པ་ཆེན་པོའི་མདོ་ལས། དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་རྣམས་དང་། ཕ་མ་དང་ནད་པ་རྣམས་སོ། །ཟས་ཟ་གཅིག་ཙམ་ཡོངས་སུ་བཏང་བས་ཀྱང་རྣམ་པར་སྨིན་པའི་འབྲས་བུ་ཚད་མེད་པ་རྙེད་ཐོབ་པར་འགྱུར་རོ།། Toh-354 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "ཨཿ" ༣༠༧ བ ༣

ཞེས་གསུངས་པ་དང་། **འཕགས་པ་རབ་ཏུ་ཞི་བ་རྣམ་པར་ངེས་པའི་ཆོ་འཕྲུལ་གྱི་ཏིང་ངེ་འཛིན་ཞེས་བྱ་བ་**[1]**ཐེག་པ་ཆེན་པོའི་མདོ་**[2]ལས། "བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་བསོད་སྙོམས་བླངས་ཏེ། རིད་པ་དང་། ཕོངས་པ་དང་། སྐྱུང་པོ་དང་། སློབ་མ་རྣམས་ལ་བགོས་ཏེ་བྱིན་ན་དགེ་བའི་རྩ་བ་དེས་ཆེ་བརྗེས་ནས་འཁོར་ལོས་སྒྱུར་བའི་རྒྱལ་པོ་རྫུ་འཕྲུལ་ཆེན་པོ་དང་ལྡན་པར་འགྱུར་རོ།"[3] ཞེས་གསུངས་པ་དང་། "དབང་པོ་དྲུག་ཚང་བ་གང་ཡིན་པ་དེ་ནི་ཚུལ་ཁྲིམས་བསྲུངས་པ་ལས་འགྱུར་བ་ཡིན་ནོ།"[4] །ཞེས་གསུངས་པ་དང་། **འོད་ཟེར་ཀུན་ནས་འཕྱིད་བ་བསྟན་པའི་མདོ་**[5]ལས།

རེས་འགའ་འོད་ཟེར་གཅིག་ལས་ནི། |
ཁ་དོག་རྣམ་པ་བཅུ་འབྱུང་བ། |

ཁ གཞན་ཡང་སྦྱིན་གནས་གསུམ་ལ་སྦྱིན་པ་བྱས་ན་རྣམ་པར་སྨིན་པའི་འབྲས་བུ་ཟད་མི་ཤེས་སོ། གསུམ་གང་ཞེ་ན། སངས་རྒྱས་ཕ་མ་དང་ནད་པའོ། །དེ་དག་ལ་ཟས་གཅིག་སྦྱིན་པ་བྱས་པས་ཀྱང་དེ་ལྟ་བུའི་འབྲས་བུ་མི་བཟད་པ་འཐོབ་པར་འགྱུར། Toh-355 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "ཨཾ" ༣༡༥ བ ༣

1 ཅེས་བྱ་བ- སྣ།

2 Toh-129 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "ད" ༡༠༧ བ

3 འཇམ་དཔལ་གལ་ཏེ་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔས་བསོད་སྙོམས་བླངས་ཏེ། རིད་པ་དང་། ཕོངས་པ་དང་། སྐྱུང་པོ་དང་། སློང་བ་རྣམས་ལ་བགོས་ཏེ་བྱིན་ན་དེ་དགེ་བའི་རྩ་བ་དེས་ཆེ་བརྗེས་ནས་འཁོར་ལོས་སྒྱུར་བའི་རྒྱལ་པོ་རྫུ་འཕྲུལ་ཆེན་པོ་དང་ལྡན་པར་འགྱུར་རོ།། Toh-129 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "ད" ༡༠༧ བ ༣

4 ཀ མིར་འགྱུར་ནས་དབང་པོ་དྲུག་ཚང་བ་གང་ཡིན་པ་དེ་ནི་ཚུལ་ཁྲིམས་བསྲུངས་བ་ལས་འོངས་པ་ཡིན་ནོ།། Toh-354 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "ཨཾ" ༣༠༠ བ ༡

ཁ དབང་པོ་དྲུག་ཚང་བ་ནི་ཚུལ་ཁྲིམས་བསྲུངས་བ་ལས་འོངས་སོ།། Toh-355 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "ཨཾ" ༣༡༠ བ ༨

5 Toh-55 སྡེ། བཀའ། དཀོན་བརྩེགས། "ཁ" ༡༠༦ བ

སོ་སོ་རབ་འབྱིད་ཐ་མ་ཡང་། །
སྨིན་པ་ལས་ནི་སྐྱེས་པ་ཡིན། །
རེས་འགའ་འདྲེས་པ་གཅིག་ལས་ནི། །
ཁ་དོག་ཉི་ཤུ་གང་བྱུང་བ། །
སོ་སོ་རབ་འབྱིད་ཐ་མ་ཡང་། །
ཚུལ་ཁྲིམས་བསྲུངས་[1]པ་ལས་སྐྱེས་ཡིན། །ཞེས་གསུངས་སོ།།

ཚུལ་ཁྲིམས་སྡོམ་པའི་དགེ་ཚུལ་དང་། །
རྣམ་དག་ཁྲིམས་འཛིན་དགེ་སློང་དག །
ཀླི་བ་ཕྱིད་ཅིང་གསོ་སྦྱོང་བྱ། །
ཆོས་གོས་བདགས་པ་རྣམས་ཀུན་ཏེ། །

ལྷུང་བཟེད་འཁར་གསིལ་སོར་བསྐུར་[2]ཞིང་།།
དག་པས་བསོད་སྙོམས་ཡང་[3]བླང་བྱ། །
ལྷ་རྣམས་ཐམས་ཅད་དགའ་[4]འགྱུར་ཏེ། །
གུས་པས་ཐལ་སྦྱར་ཕྱག་འཚལ་ནས། །

ལྷ་རྣམས་ངེས་[5]ཀྱི་མི་འདི་དག །
དེ་ཡི་[6]མངག་གཞུག་བསྒྲུབ་པར་བྱ། །

---

1 བསྲུང་- སྣ། པེ།
2 བཀུར་- པེ། གསེར།
3 སླང་- སྣ། པེ།
4 དགར་- སྣེ།
5 ངེད་- གསེར།
6 དེའི་- པེ།

དཔེར་ན་ལྷ་དབང་བརྒྱ་བྱིན་ལ། །
སུམ་ཅུ་རྩ་གསུམ་ལྷ་གཞན་རྣམས། །

རིམ་གྲོ་གུས་བྱེད་ཚུལ་བཞིན་དུ། །
ཚེ་འདིར་ཞིགས་ཉིད་ཐོབ་པ་སྟེ། །
ཚེ་རབས་གཞན་གྱི་[1]བསམ་མི་ཁྱབ། །
རབ་ཏུ་བྱུང་ཞིང་ཚུལ་ཁྲིམས་སྡོམ། །
སངས་རྒྱས་བཀའ་དྲིན་ལན་བསྒྲུབས་ཡིན།[2] །ཞེས་གསུངས་སོ། །

དེ་ལྟར་སོ་སོ་ཐར་པའི་སྡོམ་པ་ལ་ཞིགས་པར་བསླབས་ལ་བྱང་ཆུབ་ཏུ་སེམས་བསྐྱེད་པ་ནི། སྡོམ་པ་རྒྱ་ཆེན་པོའི་ཧེན་ཞེས་པ་ལྟ་བུའོ། །དེ་ཡང་སྨོན་པའི་སེམས་

---

1 གཞན་གྱིས་- སྣ། པེ། གསེར།

2 འཕགས་པ་རྟོགས་པ་ཆེན་པོ་ཡོངས་སུ་རྒྱས་པའི་མདོ། Toh-265 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "འ" ༣༨༧ ན

འགྱུར་གཞན་ཞིག་ཏུ།

ཚུལ་ཁྲིམས་འཛིན་པའི་དགེ་སློང་དང་། །རྣམ་དག་ཁྲིམས་འཛིན་དགེ་སློང་མ། །
ཀླ་བ་ཕྱེད་ཅིང་གསོ་སྦྱོང་བྱས། །ཆོས་གོས་རྣམ་པ་ལྔས་གྱོན་ཏེ། །
ལྷུང་གཟེད་གསེག་གཤང་ཐོགས་ནས་སུ། །རྣམ་དག་བསོད་སྙོམས་འགྲོ་བྱས་ན། །
ལྷ་རྣམས་ཀུན་ཀྱང་དགའ་འགྱུར་བས། །ཐལ་མོ་སྦྱར་ཅིང་གུས་ཕྱག་འཚལ། །
ངས་ཀྱང་ལྷ་དང་མི་རྣམས་ཀུན། །དེ་ཡི་བུ་བ་བྱེད་དུ་གཞུག །
དཔེར་ན་ལྷ་བྲན་ཐམས་ཅད་ཀྱིས། །ལྷ་ཡི་དབང་པོ་བརྒྱ་བྱིན་ལ། །
རིམ་གྲོ་གུས་པར་བྱེད་པ་བཞིན། །ད་ལྟར་འཕྲུལ་དུའང་ལན་ཐོབ་སྟེ། །
ཕྱི་མའི་དུས་སུའང་དཔག་ཏུ་མེད། །རབ་ཏུ་བྱུང་ཞིང་ཁྲིམས་འཛིན་པ། །
སངས་རྒྱས་དྲིན་ལན་ལོན་ཞེས་བྱ། །

Toh-264 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "འ" ༣༥༣ ན

དང་འཇུག་པའི་སེམས་ཀྱི་རབ་ཏུ་དབྱེ་བ་གཉིས་སོ། །**སྡོང་པོ་བཀོད་པའི་མདོ་**[1] ལས། "རིགས་ཀྱི་བུ་སེམས་ཅན་གྱི་ཚོགས་ལས་གང་བླ་ན་མེད་པ་ཡང་དག་པར་རྫོགས་པའི་བྱང་ཆུབ་ཀྱི་སེམས་སྔོན་པ་ནི་ཉེད་པར་དཀའོ། །དེ་བས་ཀྱང་སེམས་ཅན་བླ་ན་མེད་པ་ཡང་དག་པར་རྫོགས་པའི་བྱང་ཆུབ་ལས་མངོན་པར་ཞུགས་པ་ནི་ཆེས་ཉེད་པར་དཀའོ།" །ཞེས་གསུངས་སོ།།

དཀོན་མཆོག་ཏ་ལ་ལའི་མདོ་[2]ལས།

གང་དག་རྒྱལ་བ་རྣམས་ཀྱིས་བྱིན་བརླབས་པ། །
དེ་དག་བྱང་ཆུབ་སེམས་བསྐྱེད་དོན་གཉེར་བ། །
གང་དག་བྱང་ཆུབ་དོན་དུ་སེམས་སྐྱེ་བ། །
དེ་དག་དྲང་སྲོང་མཆོག་གི་ཡོན་ཏན་སྒྲུབ། །

ཅེས་གསུངས་པ་དང་། **འཕགས་པ་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་**[3]ལས་ཀྱང་། "བྱང་ཆུབ་སེམས་དེས་མ་ཁྱབ་པའི་ཆོས་ཀྱི་དབྱིངས་དེ་གང་ཡང་མ་མཆིས་སོ། །

---

1 སྡོང་པོ་བཀོད་པའི་རྒྱན་ལས། རིགས་ཀྱི་བུ། འདི་ལྟར་བླ་ན་མེད་པ་ཡང་དག་པར་རྫོགས་པའི་བྱང་ཆུབ་ཏུ་སེམས་བསྐྱེད་པ་དེ་ལྟ་བུའི་སེམས་ཅན་ཡང་རབ་ཏུ་དཀོན་ཏེ། དེ་བས་ཀྱང་གང་གིས་བླ་ན་མེད་པ་ཡང་དག་པར་རྫོགས་པའི་བྱང་ཆུབ་ཏུ་སེམས་བསྐྱེད་ནས། བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་སྤྱོད་པ་ཡོངས་སུ་ཚོལ་བ་དེ་ལྟ་བུའི་སེམས་ཅན་ནི་ཆེས་དཀོན་ནོ།། Toh-44 སྡེ། བཀའ། ཕལ་ཆེན། "ག" ༣༣༣ བ

2 འགྱུར་གཞན་དུ།

གང་དག་རྒྱལ་བ་ཀུན་གྱིས་བྱིན་བརླབས་པ། །
དེ་དག་བྱང་ཆུབ་དོན་དུ་སེམས་ཀུང་སྐྱེ། །
གང་དག་བྱང་ཆུབ་དོན་དུ་སེམས་སྐྱེ་བ། །
དེ་དག་དྲང་སྲོང་ཆེན་པོའི་ཡོན་ཏན་བརྟེན། །

Toh-145 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "པ" ༦༢ བ

3 Toh-284 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "ཡ" ༦༩ ན འགྱུར་ཅུང་མི་མཐུན།

བྱང་ཆུབ་ཏུ་སེམས་བསྐྱེད་པའི་དགེ་བའི་རྩ་བ་དེས་དུས་གསུམ་དུ་མ་ཁྲུབ་པ་ཙུང་ཟད་ཀྱང་མ་མཆིས་སོ་ཞེས་པ་དང་། ཡང་གང་དུ་སེམས་བསྐྱེད་དེ་བསྐྱེད་མ་ཐག་པའི་[1]བསོད་ནམས་ཀྱི་ཕུང་པོ་ནི་རབ་ཏུ་མང་གི་སེམས་ཅན་ཐམས་ཅད་འཁོར་ལོས་སྒྱུར་བ་དང་། འཇིག་རྟེན་སྐྱོང་བ་དང་། བརྒྱ་བྱིན་དང་། ཚངས་པ་དང་། ཉན་ཐོས་དང་། རང་སངས་རྒྱས་སུ་གྱུར་པ་རྣམས་ཀྱི་བསོད་ནམས་ཀྱི་ཕུང་པོ་ནི་དེ་ཙམ་མ་ལགས་སོ།" །ཞེས་གསུངས་སོ། །དེ་ཡང་།

བླ་མ་སྟོམ་ལ་གནས་ཤིང་མཁས། །
ནུས་དང་ལྡན་ལས་བླང་བར་བྱ།[2] །ཞེས་གསུངས་སོ།།

དེ་ལྟ་བུ་མེད་ན་སངས་རྒྱས་དཀོན་མཆོག་ལས་བླང་བར་བྱའོ། །དེ་ནི་ཐོག་མའི་དུས་འཕགས་པའི་གནས་ལྟ་བུར་བྱུང་བའི་དུས་སོ། །དེ་ནས་ཐོས་པ་དང་། བསམ་པ་དང་།[3] བསྒོམ་པ་[4]ལ་སོགས་པས་བདག་ཡོངས་སུ་སྨིན་པ་དེས་སེམས་ཅན་ཡོངས་སུ་སྨིན་པར་བགྱིས་པ་སྟེ། "ཉན་ཐོས་ཀྱི་[5]རིགས་ཅན་ཉན་ཐོས་ཀྱི་བྱང་ཆུབ་ལ་འགོད་པར་བགྱིའོ། །རང་སངས་རྒྱས་ཀྱི་རིགས་ཅན་རང་སངས་རྒྱས་ཀྱི་ལམ་ལ་དགོད་པར་བགྱིའོ། །བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་རིགས་ཅན་བླ་ན་མེད་པའི་བྱང་ཆུབ་ལ་འགོད་པར་བགྱིའོ།"[6] །ཞེས་གསུངས་པ་དང་། "སྦྱིན་

---

1 གང་དུ་སེམས་བསྐྱེད་མ་ཐག་པའི་- སྡེ།

2 སློབ་དཔོན་ཙནྡྲ་གོ་མིས་མཛད་པའི་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་སྡོམ་པ་ཉི་ཤུ་པ། Toh-4081 སྡེ། བསྟན། སེམས་ཙམ། "ཧི" ༡༧༦ བ

3 བསམས་པ་དང་- སྡེ། ཅོ།

4 བསྒོམས་པ་- སྡེ། ཅོ།

5 ཐོས་ཀྱིས་- ཅོ།

6 ལུང་འདི་རྙེད་སོན་མ་བྱུང་།།

པ་ལ་སོགས་པའི་མི་མཐུན་པའི་ཕྱོགས་ཉམས་པ[1]དང་། རྣམ་པར་མི་རྟོག་པའི་ཡེ་ཤེས་དང་། འདོད་པ་ཐམས་ཅད་རྫོགས་པར་བྱེད་པ་དང་།[2] སེམས་ཅན་ཐམས་ཅད་ཡོངས་སུ་སྨིན་པར་བྱེད་པས་བྱང་ཆུབ་རྣམ་པ་གསུམ་འགྲུབ་བོ།།"[3] ཞེས་བྱ་བས་[4]གསུངས་སོ། །དེ་ནས་མཐར་རྣམ་པར་མི་རྟོག་པའི་ཡེ་ཤེས་ཀྱི་ཡུལ་དོན་དམ་པ་བྱང་ཆུབ་ཀྱི་སེམས་ནི་བླ་ན་མེད་པའི་ཡེ་ཤེས་ཀྱི་དགེ་བའི་རྩ་བའོ། །དེ་ཡང་**འོད་ཟེར་ཀུན་འབྱེད་པའི་མདོ**་ལས།[5]

གང་ཞིག་མདོ་སྡེ་འདི་ལ་རབ་མོས་ཤིང་། །
མི་ཟད་ངོ་བོ་ཉིད་ནི་མངོན་པར་རྟོགས། །
དེས་ནི་དིང་འཛིན་མངོན་པར་བསྒྲུབས་[6]པས་ན། །
བླ་མེད་ཡེ་ཤེས་མངོན་བྱེད་དཀའ་བ་མེད། །

ཅེས་གསུངས་པ་དང་། ཡང་།

དགེ་སློང་དག་ནི་གང་ཞིག་གིས། །
བླ་མེད་ཡེ་ཤེས་བཙལ་བའི་ཕྱིར། །
ཤིན་ཏུ་དད་པའི་སེམས་ཀྱིས་ནི། །
མདོ་སྡེ་འདི་ལ་གང་དག་བརྟེན།[7] །ཞེས་པ་དང་།

1 ཉམས་པ་- གསེར།
2 རྫོགས་པར་བྱེད་དང་།- སྣ། པེ། གསེར།
3 ལུང་འདི་རྙེད་སོན་མ་བྱུང་།
4 ཞེས་བྱ་བ་- གསེར།
5 Toh-55 སྡེ། བཀའ། དཀོན་བརྩེགས། "ཁ" ༣༠༥ བ འགྱུར་ཙུང་མི་མཐུན།
6 བསྒྲུབ་པ་ནི་- སྡེ།
7 Toh-55 སྡེ། བཀའ། དཀོན་བརྩེགས། "ཁ" ༣༠༦ ན འགྱུར་ཙུང་མི་མཐུན།

བླ་མེད་ཡེ་ཤེས་གང་ཚོལ་བ། །
འཁོར་བ་དག་ལ་འཇིགས་པ་མེད། །
དེས་ནི་སྡིག་པ་རྣམ་སྦྱངས་ནས། །
ཕན་ཡོན་མཆོག་ནི་ཐོབ་པར་འགྱུར།[1] །ཞེས་གསུངས་སོ། །

གང་ལགས་པ་དེ་དག་ཐམས་ཅད་ ཅེས་བྱ་བ་ནི་སྨྲས་པ་དང་། མ་སྨྲས་པ་སྟེ། དེ་ཡང་གང་ཞེ་ན། ཕ་རོལ་ཏུ་ཕྱིན་པ་བཅུ་[2]དང་། དྲན་པ་ཉེ་བར་གཞག་པ་བཞི་[3]དང་། ཡང་དག་པར་སྤོང་བ་བཞི་[4]དང་། རྫུ་འཕྲུལ་གྱི་རྐང་པ་བཞི[5]དང་། དབང་པོ་ལྔ[6]དང་། སྟོབས་ལྔ་[7]དང་། བྱང་ཆུབ་ཀྱི་ཡན་ལག་བདུན་[8]དང་།

---

1 Toh-55 སྡེ། བཀའ། དཀོན་བརྩེགས། "ཁ" ༣༠༨ ན འགྱུར་ཙང་མི་མཐུན།

2 ཕར་ཕྱིན་བཅུ་ནི། སྦྱིན་པ། ཚུལ་ཁྲིམས། བཟོད་པ། བརྩོན་འགྲུས། བསམ་གཏན། ཤེས་རབ། སྨོན་ལམ། སྟོབས། ཐབས། ཡེ་ཤེས། ཤོག ༡༠ ཆོས་ཡང་དག་པ་བསྡུས་པ། ལྷ་ཚ་མཐོ་སློབ་ཁང་ནས་དཔར་བསྐྲུན།

3 དྲན་པ་ཉེར་གཞག་བཞི་ནི། ལུས་དང་། ཚོར་བ་དང་། སེམས་དང་། ཆོས་དྲན་པ་ཉེར་བཞག ཤོག ༣༩ ཆོས་ཡང་དག་པ་བསྡུས་པ། ལྷ་ཚ་མཐོ་སློབ་ཁང་ནས་དཔར་བསྐྲུན།

4 ཡང་དག་སྤོང་བ་བཞི་ནི། དགེ་བའི་རྩ་བ་སྐྱེས་པ་རྣམས་ཡང་དག་པར་བསྲུང་བ། མ་སྐྱེས་པ་རྣམས་ཡང་དག་པར་བསྐྱེད་པ། མི་དགེ་བའི་ཆོས་སྐྱེས་པ་རྣམས་སྤོང་བ། མ་སྐྱེས་པ་རྣམས་སླར་མི་བསྐྱེད་པར་བྱེད་པ། ཤོག ༣༥ ཆོས་ཡང་དག་པ་བསྡུས་པ།

5 རྫུ་འཕྲུལ་གྱི་རྐང་པ་བཞི་ནི། འདུན་པའི་ཏིང་ངེ་འཛིན་སྤོང་པའི་འདུ་བྱེད་དང་ལྡན་པའི་རྫུ་འཕྲུལ་གྱི་རྐང་པ། དེ་བཞིན་དུ་སེམས་པའི་རྫུ་འཕྲུལ་གྱི་རྐང་པ། བརྩོན་འགྲུས་ཀྱི་རྫུ་འཕྲུལ་གྱི་རྐང་པ། དཔྱོད་པའི་ཏིང་ངེ་འཛིན་སྤོང་པའི་འདུ་བྱེད་དང་ལྡན་པའི་རྫུ་འཕྲུལ་གྱི་རྐང་པ། ཤོག ༣༥ ཆོས་ཡང་དག་པ་བསྡུས་པ།

6 དབང་པོ་ལྔ་ནི། དད་པའི་དབང་པོ། ཏིང་ངེ་འཛིན་གྱི་དབང་པོ། བརྩོན་འགྲུས་ཀྱི་དབང་པོ། དྲན་པའི་དབང་པོ། ཤེས་རབ་ཀྱི་དབང་པོ། ཤོག ༣༥ ཆོས་ཡང་དག་པ་བསྡུས་པ།

7 སྟོབས་ལྔ་ནི། དད་པའི་སྟོབས། ཏིང་ངེ་འཛིན་གྱི་སྟོབས། བརྩོན་འགྲུས་ཀྱི་སྟོབས། དྲན་པའི་སྟོབས། ཤེས་རབ་ཀྱི་སྟོབས། ཤོག ༣༦ ཆོས་ཡང་དག་པ་བསྡུས་པ།

འཕགས་པའི་ལམ་ཡན་ལག་བརྒྱད[1]་པ་དང་། བདེན་པ་བཞི་[2]དང་། ཚད་མེད་པ་བཞི་[3]དང་། བསྡུ་བའི་དངོས་པོ་བཞི་[4]དང་། བསམ་གཏན་[5]དང་། རྣམ་པ་ཐར་པ[6]ལ་སོགས་པ་སླང་་[7]བར་བྱ་བ་ཐམས་ཅད་དོ། །**གཅིག་ཏུ་བསྡུས་**

---

8 བྱང་ཆུབ་ཡན་ལག་བདུན་ནི། དྲན་པ་ཡང་དག་བྱང་ཆུབ་ཡན་ལག ཆོས་རབ་ཏུ་རྣམ་འབྱེད་ཡང་དག་བྱང་ཆུབ་ཡན་ལག བརྩོན་འགྲུས་ཡང་དག་བྱང་ཆུབ་ཡན་ལག དགའ་བ་ཡང་དག་བྱང་ཆུབ་ཡན་ལག ཤིན་སྦྱངས་ཡང་དག་བྱང་ཆུབ་ཡན་ལག ཏིང་ངེ་འཛིན་ཡང་དག་བྱང་ཆུབ་ཡན་ལག བཏང་སྙོམས་ཡང་དག་བྱང་ཆུབ་ཡན་ལག ཤོག ༣༦ ཆོས་ཡང་དག་པ་བསྡུས་པ།

1 འཕགས་ལམ་ཡན་ལག་བརྒྱད་ནི། ཡང་དག་པའི་ལྟ་བ། ཡང་དག་པའི་རྟོག་པ། ཡང་དག་པའི་ངག ཡང་དག་པའི་ལས་ཀྱི་མཐའ། ཡང་དག་པའི་འཚོ་བ། ཡང་དག་པའི་རྩོལ་བ། ཡང་དག་པའི་དྲན་པ། ཡང་དག་པའི་ཏིང་ངེ་འཛིན། ཤོག ༣༦ ཆོས་ཡང་དག་པ་བསྡུས་པ།

2 འཕགས་པའི་བདེན་པ་བཞི་ནི། སྡུག་བསྔལ་བདེན་པ། ཀུན་འབྱུང་བདེན་པ། འགོག་པའི་བདེན་པ། ལམ་གྱི་བདེན་པ། ཤོག ༡༡ ཆོས་ཡང་དག་པ་བསྡུས་པ།

3 ཚད་མེད་བཞི་ནི། བྱམས་པ་ཚད་མེད། སྙིང་རྗེ་ཚད་མེད། དགའ་བ་ཚད་མེད། བཏང་སྙོམས་ཚད་མེད། ཤོག ༩ ཆོས་ཡང་དག་པ་བསྡུས་པ།

4 བསྡུ་བའི་དངོས་པོ་བཞི་ནི། མགོ་བར་སྦྱིན་པ། སྙན་པར་སྨྲ་བ། དོན་མཐུན་པ། དོན་སྤྱོད་པ། ཤོག ༡༠ ཆོས་ཡང་དག་པ་བསྡུས་པ།

5 བསམ་གཏན་བཞི་ནི། རྟོག་པ་དང་བཅས་ཤིང་དཔྱོད་པ་དང་བཅས་པ་དབེན་པ་ལས་སྐྱེས་པའི་དགའ་བ་དང་བདེ་བ་ཅན་གྱི་བསམ་གཏན་དང་པོ། ནང་རབ་ཏུ་དགའ་བ་དང་བདེ་བ་ཅན་བསམ་གཏན་གཉིས་པ། བཏང་སྙོམས་དང་དྲན་པ་དང་ཤེས་བཞིན་གྱི་བདེ་བ་བསམ་གཏན་གསུམ་པ། བདེ་མིན་སྡུག་མིན་གྱི་ཚོར་བ་བཏང་སྙོམས་དང་དྲན་པ་ཡོངས་སུ་དག་པའི་བསམ་གཏན་བཞི་པ། ཤོག ༣༩ ཆོས་ཡང་དག་པ་བསྡུས་པ།

6 རྣམ་ཐར་བརྒྱད་ནི། གཟུགས་ཅན་གཟུགས་ལ་ལྟ་བས་སྟོང་བ། ནང་གཟུགས་མེད་པར་འདུ་ཤེས་ཤིང་ཕྱི་རོལ་གྱི་གཟུགས་རྣམས་ལ་ལྟ་བས་སྟོང་བ། ནམ་མཁའ་མཐའ་ཡས་ཀྱི་སྐྱེ་མཆེད་རྣམས་ལ་ལྟ་བས་སྟོང་བ། རྣམ་ཤེས་མཐའ་ཡས་ཀྱི་སྐྱེ་མཆེད་རྣམས་ལ་ལྟ་བས་སྟོང་བ། ཅི་ཡང་མེད་ཀྱི་སྐྱེ་མཆེད་རྣམས་ལ་ལྟ་བས་སྟོང་བ། འདུ་ཤེས་མེད་འདུ་ཤེས་མེད་མིན་གྱི་སྐྱེ་མཆེད་རྣམས་ལ་ལྟ་བས་སྟོང་བ། བཞགས་སེལ་སྡུག་པ་ལ་ལྟ་བས་སྟོང་བ། འདུ་ཤེས་དང་ཚོར་བ་འགོག་པ་ལ་ལྟ་

ཤིང་བརླུམས་ཏེ་བསྔོམས་ནས་ ཞེས་པ་ནི་ཆེ་འདིའི་ཆེད་དུ་མ་བསྔོས་པས་བསྡུས་པ། འཇིག་རྟེན་གྱི་ཕུན་སུམ་ཚོགས་པར་མ་བསྔོས་པར**བརླུམས་**ནས། ཉན་ཐོས་དང་རང་སངས་རྒྱས་སུ་མ་བསྔོས་པས་བསྔོམས་པའོ། །ཡང་ན་འཇིག་རྟེན་པ་དང་། ཐེག་པ་ཆུང་ངུ་དང་། བདག་ཉིད་གྱི་དོན་དུ་ལ་སོགས་པ་སྔེ་གོ་རིམ་བཞིན་ནོ། **།འཕགས་པ་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་**[1]**ལས།** "བདག་གི་དགེ་བའི་རྩ་བ་ཐོག་མ་དང་ཐ་མ་མ་མཆིས་པ་ནས་བགྱིས་པ་ཐམས་ཅད་མཁྱེན་པར་ཡོངས་སུ་བསྔོས་པ་གང་ལགས་པ་དང་། བདག་གི[2]དགེ་བའི་རྩ་བ་འདུས་བྱས་ཀྱི་ཡོ་བྱད་འཚལ་བས་མངོན་པར་བསྒྲུབས་པ[3]གང་ལགས་པ་དང་། བདག་གི[4]དགེ་བའི་རྩ་བ་ཉན་ཐོས་དང་རང་སངས་རྒྱས་ཀྱིས་མངོན་པར་བསྒྲུབས་པའི་དགེ་བའི་རྩ་བ[5]གང་ལགས་པ་དང་། བདག་གི་དགེ་བའི་རྩ་བ་ལས་བསྒྲུབས་པའི་དུས་ཐམས་ཅད་དུ་བསགས་པ་དེ་བཞིན་གཤེགས་པའི་ཡེ་ཤེས་ཀྱིས་མཁྱེན་པ་གང་ལགས་པ་དེ་དག་ཐམས་ཅད་ཡོངས་སུ་བསྡུས་པའི་བརླུམས་པར་བསྔོམས་པ་བགྱིའོ།། "[6]

བས་སྟོང་བ་རྣམས་སོ།། ཤོག ༣༡ སློབ་དཔོན་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱིས་མཛད་པའི་ཆོས་ཡང་དག་པ་བསྡུས་པ། ལྷ་ཚ་མཐོ་སློབ་ཁང་ནས་དཔར་བསྐྲུན། ༡༩༨༨

7 བླངས་- གསེར།

1 Toh-284 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "ཡ" ༦༩ བ འགྱུར་ཚུང་མི་མཐུན།

2 བདག་གིས་- སྣ། པེ།

3 བསྒྲུབ་པ་- པེ།

4 བདག་གིས་- པེ། གསེར།

5 དགེ་བའི་ལས་ཀྱིས་- སྡེ།

6 རླུམ་པར་སྔོམས་པར་བགྱིའོ།།- སྡེ། ཅོ།

ཞིས་གསུངས་པ་དང་། ཡང་། "དེ་དག་ཐམས་ཅད་བསྡུས་ནས་[1]བླ་ན་མེད་པ་ཡང་དག་པར་རྫོགས་པའི་བྱང་ཆུབ་ཏུ་བསྔོས་པའོ།" །ཞིས་གསུངས་པའི་ཕྱིར་རོ།།

བླ་ན་མ་མཆིས་པ་དང་། གོང་ན་མ་མཆིས་པ་དང་། གོང་མའི་ཡང་གོང་མ་བླ་ན་མེད་པ་ཡང་དག་པར་རྫོགས་པའི་བྱང་ཆུབ་ཏུ་ཡོངས་སུ་བསྔོ་བར་བགྱིའོ་ཞེས་པ་ནི། བསྔོ་བ་ཡོངས་སུ་དག་པའོ།[2] །མཆོག་ཉིད་ཀྱིས་གཞན་བླ་མ་ལྟ་བུ་མེད་ལ། བགྲོད་པར་བྱ་བ་མཐར་ཐུག་པས་གོང་མ་ཡང་མེད་པ་ཉིད་གཞན་བླ་མ་ཐམས་ཅད་ཀྱི་བླ་མ་དང་གོང་མ་སྟེ། དེ་ཉིད་ནི་མཐར་ཐུག་པའོ། །རྒྱུ་ངན་ལས་འདས་པ་ནི་གོང་མ་སྟེ། འཕགས་པ་ཉན་ཐོས་དང་རང་སངས་རྒྱས་སོ། །དེ་རྣམས་ཀྱི་གོང་མ་ཐེག་པ་ཆེན་པོའི་བྱང་ཆུབ་བོ། །བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་བླ་མ་སྟེ། འགྲོ་བ་ཐམས་ཅད་ཀྱི་དོན་མཛད་པ་དེའི་བླ་མ་སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་སོ། །ཡང་དག་པའི་ཡོན་ཏན་ཐམས་ཅད་རྫོགས་པའི་ཆོས་ཀྱི་སྐུ་ནི་བྱང་ཆུབ་པ་སྟེ། ཤེས་བརྗོད་ལས་འདས་པས་སྤྲོས་པ[3]ཐམས་ཅད་ཉེ་བར་ཞི་བ་སོ་སོ་རང་གིས་རིག་པའི་ཡེ་ཤེས་དམ་པའི་ཡུལ་དུ་གྱུར་པའོ། །

འཕགས་པ་འོད་ཟེར་བཀྲི་བ་བསྟན་པའི་མདོ་[4]ལས།

གཟུགས་མེད་འགྲོ་དང་འོང་བ་མེད། །
ཕྱོགས་མཚམས་ཕྱོགས་ཀྱང་ཡོད་མ་ཡིན། །

1 བསྡུས་ན་- པེ།

2 དགེ་བའོ།- སྡེ། ཅོ།

3 སྒྲོས་པ་- སྡེ།

4 Toh-55 སྡེ། བཀའ། དཀོན་བརྩེགས། "ཁ" ༣༨༨ བ

མཚན་མ་མེད་ཅིང་བརྗོད་དང་བྲལ། །
སྨྲོས་པ་དག་ལས་ཡང་དག་འདས། །
བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔས་བསྒྲུབ་[1]བྱས་ན། །
མཐར་ཐུག་བསོད་བ་འཐོབ་པར་འགྱུར། །ཞེས་པ་དང་།

ཡང་།

དགེ་བའི་སྟོབས་ཀྱི་མཐུ་ཡིས་ནི། །
ཉོན་མོངས་རབ་བཅོམ་ཉེར་ཞིར་གནས། །
ཁྱད་འཕགས་ཡོན་ཏན་འཐོབ་པར་བྱེད། །
ཡོན་ཏན་དང་ནི་ཤེས་རབ་དག །
ཤིན་ཏུ་རྒྱ་ཆེ་རྒྱ་མཚོ་འདྲ། །

བཟོད་པ་དག་ནི་སྒྲུབ་པར་བྱེད། །
སེམས་ནི་རབ་བདེ་གཡོ་མེད་འགྱུར།[2] །
བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་རྟག་ཏུ་སྒོམ། །
མཁས་པ་དག་གིས་རབ་ཏུ་བསྔགས། །

ཞེས་གསུངས་སོ།།

1 བསྒྲུབས་- པེ། གསེར་

2 གཟུགས་ནི་གང་ཡིན་དེ་དག་གི །དགེ་བའི་ཆོས་ཀྱི་མཐུ་སྟོབས་ཀྱིས།། ཞེས་སོགས་······
འཕགས་པ་འོད་ཟེར་ཀུན་ཏུ་བཀྱེ་བ་བསྟན་པ་ཞེས་བྱ་བའི་ཐེག་པ་ཆེན་པོའི་མདོ། Toh-55 སྡེ།
བཀའ། དཀོན་བརྩེགས། "ཁ" ༢༩༩ བ འགྱུར་ཙུང་མི་མཐུན།

ཇི་ལྟར་འདས་པའི་སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་རྣམས་ཀྱིས་ ཡོངས་སུ་བསྔོས་པ་དང་། ཇི་ལྟར་མ་བྱོན་པའི་སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་རྣམས་ཡོངས་སུ་བསྔོ་བར་འགྱུར་བ་དང་། ཇི་ལྟར་ད་ལྟར་བཞུགས་པའི་སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་རྣམས་ད་ལྟར་ཡོངས་སུ་ བསྔོ་བ་མཛད་པ་དེ་ལྟར་བདག་གིས་ཀྱང་ཡོངས་སུ་བསྔོ་བར་བགྱིའོ། །

སྡིག་པ་ཐམས་ཅད་ནི་སོ་སོར་བཤགས་སོ། །བསོད་ནམས་ཐམས་ཅད་ལ་རྗེས་སུ་ཡི་རང་ངོ་། །སངས་རྒྱས་ཐམས་ཅད་ལ་བསྐུལ་ཞིང་གསོལ་བ་འདེབས་སོ། །བདག་བླ་ན་མེད་པའི་ཡེ་ཤེས་ཀྱི་མཆོག་དམ་པ་ཐོབ་པར་གྱུར་ཅིག

མི་མཆོག་རྒྱལ་བ་གང་དག་ད་ལྟར་བཞུགས་པ་དང་། །
གང་དག་འདས་པ་དག་དང་དེ་བཞིན་གང་མ་བྱོན། །
ཡོན་ཏན་བསྔགས་པ་མཐའ་ཡས་རྒྱ་མཚོ་འདྲ་ཀུན་ལ། །
ཐལ་མོ་སྦྱར་བར་བགྱི་[1]སྟེ་སྐྱབས་སུ་ཉེ་བར་མཆི། [2] །

ཞེས་པ་ནི་གོ་སླ་བས་མ་བཤད་དོ། །

བྱང་ཆུབ་ཀྱི་ལྟུང་བ་བཤགས་པའི་འགྲེལ་པ་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་བསླབ[3]

---

1 བགྱིས་- སྣ། པེ།

2 འཆི།- པེ།

3 སློབ་- སྡེ།

པའི་རིམ་པ་ཞེས་བྱ་བ། སློབ་དཔོན་ཛེ་[1]ཏཱ་རི་དགྲ་ལས་རྣམ་པར་རྒྱལ་བས་མཛད་པ་རྫོགས་སོ།།[2] །།བལ་པོའི་པཎྜིཏ་[3]དང་། ཆགས་[4]ལོ་ཙཱ་བས་བསྒྱུར་པའོ།།

---

1 ཛེ་ཏཱ་རི་- སྡེ། ཅོ

2 སྟོ།- པེ།

3 ཀོང་སྤྲུལ་ཡོན་ཏན་རྒྱ་མཚོས་མཛད་པའི་ཤེས་བྱ་ཀུན་ཁྱབ་མཛོད་ཀྱི་དེབ་དང་པོར་ལོ་ཙཱ་བ་ཆོས་རྗེ་དཔལ་གྱི་བལ་པོའི་བླ་མ་པཎ་ཆེན་ཉི་མའི་སྦྱང་བ་ཞེས་གསལ་ཀྱང་། དཀར་ཆག་མ་ལག་གི་ཁྲིད་དུ་བལ་པོའི་སློབ་དཔོན་ཉི་མའི་དབང་པོའི་འོད་ཟེར་ཞེས་གསལ་ཞིང་ལྷུང་བཤགས་ཀྱི་གཞུང་འདི་འགྱུར་སྐབས་སློབ་དཔོན་འདི་གཉིས་ལས་སུ་ཡིན་ངོས་འཛིན་ཐུབ་པ་དཀའོ།།

4 དཔར་མ་ཤས་ཆེར་ཆགས་ཞེས་གསལ་ཡང་དོན་ལ་ཆག་ཉིད་གྲགས་ཆེ།

སློབ་དཔོན་བཻརོཾ་ཙན་རཀྵི་ཏས།

སྡིག་པ་བཤགས་དང་སངས་རྒྱས་ལ། །
གསོལ་འདེབས་བསོད་ནམས་རྣམས་ལ་ནི། །
རྗེས་ཡི་རང་རྣམས་བསོད་ནམས་ཀྱི། །
ཕུང་པོ་ཡིན་ཕྱིར་ཕུང་པོ་གསུམ། །

བསླབ་བྱ་མེ་ཏོག་གི་སྡེ་མ།

༄༅། །རྒྱ་གར་སྐད་དུ། ཀརྨཱཝརཎཝིཤོདྷནཝིདྷིསཱུཏྲཾནཱམ།[1]
བོད་སྐད་དུ། ལས་ཀྱི་སྒྲིབ་པ་རྣམ་པར་སྦྱོང་བའི་ཆོ་ག་བཤད་པ་ཞེས་བྱ་བ།

སངས་རྒྱས་དང་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་ཐམས་ཅད་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ།།

ཐུབ་པ་དྲི་མས་མ་གོས་ཤིང་། །
ཡེ་ཤེས་དཀྱིལ་འཁོར་རབ་གསལ་བ། །
གསུང་གི་ཟེར་གྱིས་འགྲོ་ཀུན་གྱི། །
སྒྲིབ་པ་མེས་བསྲེགས་[2]ཉི་མ་རྒྱལ། །

དཔའ་བོ་གང་དག་འགྲོ་བ་སྡུག་བསྔལ་གྱི་རྒྱ་མཚོ་ཡང་བར་[3]བྱིང་བ་རྣམས་ཀྱི་སེམས་ཞྭགས་ཤིང་། དེ་དག་གདོན་པར་འདོད་པའི་ཡིད་ཅན་དག་གིས་བྱང་ཆུབ་ལ་བློ་གཞོལ་བར་བྱ་སྟེ། དེ་ཐོབ་པའི་ལམ་དམ་པར་ཞུགས་ལ་མི་ཉམས་པར་བྱ་ཞིང་ཇི་ལྟར་བྱ་བ་དེ་འཕེལ་བར་འགྱུར་བའི་ཐབས་ལ་བརྩོན་པར་བྱ་སྟེ། གལ་ཏེ་རྐྱེན་འགའ་ཞིག་གིས་ཉམས་པར་གྱུར་ན་ཡང་དེ་མ་ཐག་ཏུ་ཕྱིར་ལྡང་བའི་ཐབས་ལ་འབད་པར་བྱ་སྟེ། "ཕམ་པའི་གནས་ལྔ་བུའི་ཆོས་སྤྱད་པས་སྡོམ་པ་སླར་གླང་བ་དང་། ཟག་པ་འབྲིང་ལས་གྱུར་པ་རྣམས་གསུམ་ལ་བཤགས་པ་དང་། ཆུང་ངུ་ལས་གྱུར་པ་རྣམས་གཅིག་ལ་བཤགས་པ་དང་། དེ་དག་ལས་ལྷག་མ་[4] རྣམས་རང་གི་སེམས་ཀྱིས་བསྡམ་པར་བྱ་བ་རྣམས་ཇི་ལྟར་སྤྱད་པ་བཞིན་ཆོས་

---

1 ཀརྨ་ཨཱ་ཝ་ར་ཎི་བི་ཤོ་དྷ་ན་བི་དྷི་སཱུ་ཏྲཾ་ནཱ་མ- སྡེ། ཅོ།
ཀརྨ་ཨཱ་ཝ་ར་ཙ་བི་ཤོ་དྷན་བི་དྷི་སཱུ་ཏྲཾ་ནཱ་མ། - པེ། སྣ།

2 མེད་སྲིད་- སྡེ། ཅོ།

3 ཡངས་བར་ ཞེས་པ་དགོས་ངེས་ཀྱང་དཔར་མ་ཁག་ཏུ་མ་ཐོབ་སྐབས་རང་སོར་བཞག

4 གཞན་པ་- སྣ། པེ།

དང་མཐུན་པར་སོར་ཆུད་པར་བྱའོ།"[1] །དེ་དག་གིས[2]ལས་ཀྱི་སྒྲིབ་པ་ལྷག་མར་གྱུར་པར་དག་དང་། གཞན་ཡང་ཐོག་མ་མེད་པའི་དུས་ནས་ཀུན་ནས་བསྐྱེད་པའི་སྒྲིབ་པ་སྡུག་པོ་[3]ཇི་སྙེད་པ་རྣམས་ཀྱིས་བྱང་ཆུབ་ཆེན་པོ་ལ་གེགས་སུ་མི་འགྱུར་བར་བྱ་བའི་ཕྱིར་ཐུབ་པས་གནང་བའི་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་ལྟུང་བ་བཤགས་པའི་ཆོ་ག་འདིས་ཉིན་མཚན་དུས་དྲུག་ཏུ་བཤགས་པ་ལ་འབད་པར་བྱའོ།།

དེ་ལ་ཡང་གང་ལ་བདག་གི་སྒྲིབ་པ་རྣམས་བཤགས་པར་བྱ[4]བ་དེ་དག་ལ་དཔུང་གཉེན་དུ་གཟུང་སྟེ། [5] གུས་པས་ཕྱག་འཚལ་ལ་གསོལ་བ་གདབ་པར་བྱ་བ་ཡིན་པས་ཐོག་མར་སྐྱབས་སུ་འགྲོ་བ་ནི། **བདག་མིང་འདི་ཞེས་བགྱི་བ་སངས་རྒྱས་ལ་སྐྱབས་སུ་མཆིའོ་**ཞེས་བྱ་བ་ལ་སོགས་པ་སྟེ། ཡང་དག་པར་རྫོགས་པའི་སངས་རྒྱས་དང་། **ཆོས་**དང་། དེའི་རྗེས་སུ་སྒྲུབ་པའི་**དགེ་འདུན་**རྣམས་ནི[6]རིམ་པ་བཞིན་འཁོར་བ་ལས་རྒོལ་བའི[7]ལམ་སྟོན་པ་དང་། ལམ་དང་། དེ་སྒྲུབ་པའི་གྲོགས་ཡིན་པའི་ཕྱིར་རོ། །གཞན་དབྱིག་གི་སྙིང་པོ་དང་། འཕྲོག་བྱེད་དང་། སེངྒེ་དང་། མཐུ་བོ་ཆེ་ལ་སོགས་པ་དང་།

---

1 སློབ་དཔོན་ཞི་བ་འཚོས་མཛད་པའི་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་སྡོམ་པ་ཉི་ཤུ་པའི་དཀའ་འགྲེལ། Toh-4082 སྡེ། བསྟན། སེམས་ཙམ། "ཧི" ༡༧༣ ན ༥ བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་སྡོམ་པ་ཉི་ཤུ་པའི་དཀའ་འགྲེལ། Toh-4083 སྡེ། བསྟན། སེམས་ཙམ། "ཧི" ༣༠༣ བ ༣

2 གི་- སྣ། པེ།

3 སྡུག་པོ་- པེ། བསྡུག་པོ་= ཅོ།

4 བཤགས་པར་བྱས་- ཅོ།

5 བཟུང་སྟེ།- སྣ། པེ།

6 དགེ་འདུན་ནི་- སྡེ། ཅོ།

7 བརྒལ་བའི་- སྣ། པེ།

སེར་སྐྱ་དང་། གཉེགས་ཟན་ལ་སོགས་པ་ནི་མ་ཡིན་ཏེ། རང་ཉིད་སྲིད་པའི་བཙོན་ར་མི་བཟད་པར་ལས་དང་ཉོན་མོངས་པའི་ལྕགས་སྒྲོག་དམ་པོས་བཅིངས་ཤིང་འཆི་[1]བ་ལ་སོགས་པའི་སྲིན་པོ་འཇིགས་སུ་རུང་བ་དག་གིས་ཀུན་དུ་བཙོམ་[2]པའི་ཕྱིར་རོ། །དེ་བས་ན་འདི་དག་ཀྱང་སྲིད་པའི་བཙོན་ར་ནས་ཐར་པ་སངས་རྒྱས་ཁོ་ན་ལ་རག་ལས་པའི་ཕྱིར། སེམས་དང་ལྡན་པ་སུ་ཞིག་སངས་རྒྱས་ལ་སོགས་པ་བོར་[3]ཏེ་གཞན་ལ་སྐྱབས་སུ་འགྲོ་བར་བྱེད།

ཕྱག་འཚལ་བ་ནི་**དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དགྲ་བཅོམ་པ་ཡང་དག་པར་རྫོགས་པའི་སངས་རྒྱས་ཤཱཀྱ་ཐུབ་པ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ་** ཞེས་བྱ་བ་ལ་སོགས་པ་སྟེ། །དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་སུམ་ཅུ་རྩ་ལྔ་པོ་འདི་དག་གིས་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་སྤྱོད་པ་སྤྱོད་པའི་ཚེ་བདག་ཅག་བླ་ན་མེད་པ་ཡང་དག་པར་རྫོགས་པའི་བྱང་ཆུབ་ཏུ་མངོན་པར་རྫོགས་པར་སངས་རྒྱས་པ་ན། གང་ཞིག་བདག་ཅག་གི་མཚན་འཛིན་ཅིང་ཕྱག་འཚལ་བ་དེ་དག་ཀྱང་ལས་ཀྱི་སྒྲིབ་པ་ཟད་པར་གྱུར་ཅིག་ཅེས་སྨོན་ལམ་བཏབ་བོ། །དེས་ན་[4]སྨོན་ལམ་གྱི་[5]སྟོབས་ཅན་ཡིན་པའི་ཕྱིར་འདི་རྣམས་ཕྱག་འཚལ་བའི་གནས་སུ་བཀོད་དེ། གཞན་རྣམས་ལ་ཕྱག་འཚལ་བར་བྱ་བ་མ་ཡིན་ནོ་ཞེས་པ་ནི་མི་བརྗོད་དོ། །དེ་ལ་**དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་**ནི་ཆོས་ཐམས་

1 འཆི་- སྡེ་ཅོར་མི་གསལ།

2 ཀུན་ཏུ་བཙོམས་- སྣ། སྡེ། ཅོ། པེར། "ཏུ" མི་གསལ།

3 འབོར་- ཅོ།

4 དེས་ན་- སྡེ་ཅོར་མི་སྣང་།

5 གྱིས་- པེ།

ཅན་གྱི་[1]དེ་བཞིན་ཉིད་རྟོགས་པའམ་[2]དེར་ངེས་པའོ། །**དགྲ་བཅོམ་པ་**ནི་ཨར་ནའི་དགྲའམ་རྐྱེབས་ཏེ། དེ་བཅོམ་ཞིང་བཅག་པ་དང་ཧན་ནོ། །ཉོན་མོངས་པ་བག་ཆགས་དང་བཅས་ཤིང་ཡང་མི་སྐྱེ་བའི་ཆོས་ཅན་དུ་བྱས་པས་རྟེན་ཅིང་འབྲེལ་བར་འབྱུང་བའི་རྐྱེབས་བཅག་པའི་ཕྱིར་དགྲ་བཅོམ་པ་ཞེས་བྱ་སྟེ་ཨར་ཧན་ནོ། །ཡང་ན་འོས་པ་སྟེ། ཁམས་གསུམ་པ་ཐམས་ཅད་ཀྱིས་མཆོད་པར་འོས་པ་ལ་སོགས་པའི་ཕྱིར་རོ། །**ཡང་དག་པར་**རམ་མཉམ་པ་ཀུན་ཏུ་མ་ལུས་པའི་ཕྱིར་སངས་རྒྱས་པས་**ཡང་དག་པར་རྫོགས་པར་སངས་རྒྱས་**པ་འདི་དག་གིས་སྒྲངས་པ་དང་ཡོན་ཏན་གྱི་ཆེ་བ་གཉིས་བརྗོད་དོ། །གཞན་གྱི་ཡོན་ཏན་དུ་ཡང་བལྟའོ། །**ཤཱཀྱ་ཐུབ་པ་**ནི་ཤཱཀྱའི་རིགས་སུ་ཐུབ་པ་བྱུང་བས་དེ་སྐད་ཅེས་བྱའོ། །ཡང་དག་པར་རྫོགས་པའི་སངས་རྒྱས་ཀྱི་ཡེ་ཤེས་ནི་མི་ཕྱེད་[3]པས་**རྡོ་རྗེ་**སྟེ། །དེའི་སྙིང་པོས་འཇིག་ཚོགས་སུ་ལྟ་བ་ལ་སོགས་པ་མི་མཐུན་པའི་ཕྱོགས་ཐམས་ཅད་འཇོམས་པས་**རྡོ་རྗེ་སྙིང་པོ་རབ་ཏུ་འཇོམས་པ**འོ། །དེ་བཞིན་དུ་གཞན་རྣམས་ལ་ཡང་ཡོན་ཏན་གྱི་མཚན་གྱི་[4]རྗེས་སུ་འབྲངས་ནས་ཇི་ལྟར་རིགས་པར་མཚན་གྱི་དོན་བཤད་པར་བྱ་སྟེ།[5] ཡོན་ཏན་མཐའ་ཡས་པས་རེ་རེ་ལ་ཐམས་ཅད་ཀྱི་མཚན་བརྗོད་ཀྱང་དེའི་རྒྱུ་མཚན་གནས་པའི་ཕྱིར་རང་དགའི་ཉེས་པར་འགྱུར་དུ་དོགས་པར་[6]མི་བྱའོ།།

---

1 དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ནི་ཆོས་ཐམས་ཅད་ཀྱི་- སྡེ་ཅོར་མི་གསལ།

2 རྟོག་པའམ་- པེ།

3 མི་ཕྱེད་ཡིན་ནམ་སྙམ།

4 མཚན་ཉིད་- སྣ། ཅོ།

5 དོན་བཤགས་པར་བྱ་སྟེ།- སྣ། པེ།

6 པས་མི་བྱའོ།- སྣ། ཅོ།

གསོལ་བ་གདབ་པ་ནི**དེ་དག་ལ་སོགས་ཏེ**་ཞེས་བྱ་བ་ལ་སོགས་པ་སྟེ། བཅོམ་ལྡན་འདས་ནི་ཉེས་པ་རྣམས་བཅོམ་པའམ། དཔལ་ལ་སོགས་པའི་ཡོན་ཏན་དང་ལྡན་པའོ། །**ཇི་སྙེད**་པ་ནི་མ་ལུས་པའོ། །**བཞུགས་པ**་དང་**འཚོ་བ**་དང་**གཤེགས་པ**་ནི་རིམ་པ་བཞིན་དུ་ཆོས་ཀྱི་སྐུ་ལ་སོགས་པ་གསུམ་གྱིས་སོ། །བདག་ལ་དགོངས་པ་ནི་ཐུགས་གཏད་པར་གསོལ་བའོ། །བདག་གི་གསོལ་བ་ཚུལ་དང་མཐུན་པ[1]ཡིན་གྱི། སངས་རྒྱས་རྣམས་བསྐུལ་བ་མི་མངའ་བའི་ཆོས་ཉིད་བརྙེས་པ་ནམ་དུ་ཡང་སེམས་ཅན་གཅིག་ལ་ཡང་མི་དགོངས་པ་མི་སྲིད་དོ། །དེ་ལྟར་ན་སེམས་ཅན་རྣམས་འཁོར་བའི་སྡུག་བསྔལ་ཡང་པ[2]འདི་དག་ལས་ཅིའི་ཕྱིར་གྲོལ་བར་མི་མཛད་ཅེ་ན། སེམས་ཅན་རྣམས་རང་རང་གི་ཉེས་པ་སྟེ། ཇི་ལྟར་ཉི་མའི་དཀྱིལ་འཁོར་གཟི་བརྗིད་དང་ལྡན་པའི་འོད་ཀྱིས་ཕྱོགས་ཐམས་ཅད་རྒྱས་པར་བྱེད་པ་ཉིད་ཉེ་བར་གནས་ཀྱང[3]དམུས་ལོང་དག་གིས་མི་མཐོང་བ་བཞིན་ནོ། །

དེས་ན་**དཀོན་མཆོག་ཏ་ལ་ལས**[4]ཀྱང་།

དམུས་ལོང་གིས་ནི་ཉི་མ་མི་མཐོང་ཡང་། །
དེ་མེད་མ་ཡིན་འཇིག་རྟེན་ཀུན་ཏུ་འཆར། །
མིག་དང་ལྡན་པས་ཤར་བར་ཤེས་གྱུར་ནས། །
ཀུན་ཀྱང་སོ་སོ[5]རང་གི་ལས་ལ་འཇུག །

1 འཐུན་པ་- པེ།

2 ཡངས་པ་ཡིན་ནམ་སྙམ།

3 ཉེ་བར་གནས་ཀྱང་- སྡེ་ཅོར་མི་གསལ།

4 Toh-145 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "པ" ༧༥ བ

5 སོ་སོར་- སྣ། པེ།

ཅེས་བྱ་བ་ལ་སོགས་པ་དོན་འདི་རྒྱས་པར་བསྟན་ཏོ།།[1]

ཡུལ་དེ་དག་གང་ལ་བཤགས་པར་བྱ་བ་སྒྲིབ་པའི་དངོས་པོ་ནི་བདག་གིས་བྱས་པ་ལ་སོགས་པ་སྟེ། **བདག་གིས** ནི་བྱེད་པ་པོའོ། **།སྐྱེ་བ་འདི་དང་སྐྱེ་བ་ཐོག་མ་དང་ཐ་མ་མ་མཆིས་པ** ནི་བྱས་པའི་དུས་སོ། **།འཁོར་བ་ན་འཁོར་བའི** ཚེ་**སྐྱེ་གནས་གཞན་དག** ནི་བྱས་པའི་གནས་སོ། །བྱས་པའི་སྡིག་པའི་རང་བཞིན་སྤྱིར་བརྗོད་པ་ནི་**སྡིག་པའི་ལས**ཞེས་བྱ་བ་ལ་སོགས་པ་སྟེ། གང་ཅི་ཡང་རུང་སྟེ། སྡུག་བསྔལ་གྱི་རྒྱུ་བར་འགྱུར་བའི་ལས་རང་གིས་བྱས་ཤིང་གཞན་ལ་བྱེད་དུ་བཅུག་པ་ནི་དེ་ལྟར་མ་ཡིན་ཡང་[2]བྱས་པ་ལ་དགའ་བས་**རྗེས་སུ་ཡི་རང་བ**་དང་། བྱེ་བྲག་ཏུ་རྣམ་པར་སྨིན་པ་ལྕི་བ་ནི་**མཆོད་རྟེན་གྱི་དཀོར་རམ** ཞེས་བྱ་བ་ལ་སོགས་པ་སྟེ། མ་བྱིན་པར་ལེན་པ་[3]རྣམས་ཀྱི་ནང་ན་ལྕི་བ་སྦྱིན་བདག་དད་པ་ཅན་རྣམས་ཀྱིས་གནས་ཆེན་པོ་བརྒྱད་ལ་སོགས་པའི་མཆོད་རྟེན་གྱི་ཆེད་དུ་ཕུལ་བའི་ཡོ་བྱད་དམ། **ཕྱོགས་བཞིའི་དགེ་འདུན** ཐམས་ཅད་དབང་བ་དང་གང་ཟག་སོ་སོའི་བདག་གིར་[4]མ་བྱས་པ་**ཕྱོགས་པ**་ལ་སོགས་པའོ། །དེ་དག་གིས་ངན་སོང་ངན་འགྲོ་རྣམ་པ་གསུམ་གྱི་བར་དུ་ཡང་། སྡུག་བསྔལ་མི་བཟད་པ་མྱོང་བར་བྱེད་ཅིང་སྲུང་དཀའ་བས་རྣམ་པར་སྨིན་པ་ལྕི་བའོ། །ཤིན་ཏུ་སྡུག་བསྔལ་བའི་ཉེས་པའི་རྒྱུ་ནི་**མཚམས་མེད་པའི་ལས**ཞེས་བྱ་བ་ལ་སོགས་པ་སྟེ། ཕ་བསད་པ་ལ་སོགས་པ་འདི་དག་གང་གིས་བྱས་པ་ལ་སོགས་པ་ནི་ཤིན་ཏུ་བཟོད་པར་དཀའ་བའི་སྡུག་བསྔལ་ཉམས་སུ་འབབ་པའི་མཐར་མེད་པའི་སེམས་ཅན་དམྱལ་བ

---

1 བསྟན་ཏེ་- སྣ།

2 གཞན་དེ་ལྟར་མ་ཡིན་ཡང་- སྡེ། ཅོ།

3 ལེན་པ་- ཅོ།

4 བདག་གི་- པེ

གཞན་ལས་སྡུག་བསྔལ་ཁྱད་པར་ཅན་དུ་འགྱུར་བར་སྐྱེ་བ་ལ་གང་གིས་ཀྱང་བར་མ་ཆོད་པས་མཚམས་མེད་པ་སྟེ། དེས་ན་དེ་དག་ཤིན་ཏུ་སྡུག་བསྔལ་བའི་ཉེས་པའི་རྒྱུ་ཞེས་ཀྱང་བྱའོ། །གཞི་ཐམས་ཅད་ཀྱིས་བསྡུས་པའི་མི་དགེ་བ་ནི་མི་དགེ་བ་བཅུ་ཞེས་བྱ་བ་ལ་སོགས་པ་སྟེ། ངན་འགྲོ་གསུམ་ཅི་རིགས་པར་རྣམ་པར་སྨིན་པ་[1]སྤྱོང་བར་འགྱུར་བ་ལུས་ལ་སོགས་པ་གཞི་ཐམས་ཅད་ཀྱི་[2]ལས་ཏེ། ལུས་ལ་བརྟེན་པ་སྲོག་གཅོད་པ་ལ་སོགས་པ་གསུམ་དང་། ངག་ལ་བརྟེན་པ་བརྫུན་དུ་སྨྲ་བ་ལ་སོགས་པ་བཞི་དང་། ཡིད་ལ་བརྟེན་པ་གནོད་སེམས་ལ་སོགས་པའོ། །དེ་གསུམ་གྱིས་ནི་གཞི་ཐམས་ཅད་བསྡུས་པ་མི་དགེ་བའི་[3]ལས་ཀྱི་ལམ་འདུས་པ་[4] ཞེས་བྱའོ། །དེ་ལས་གཞན་པའི་སྒྲིབ་པ་དེ་དང་རྗེས་སུ་མཐུན་པ་རྣམས་ནི་**ལས་ཀྱི་སྒྲིབ་པ་གང་གིས**ཞེས་བྱ་བ་ལ་སོགས་པའོ། །དེ་དག་ཀྱང་གང་བྱས་ན་རང་དང་གཞན་གྱི་དོན་སྒྲུབ་པ་ལ་ནུས་པ་མེད་ཅིང་བར་དུ་ཆོད་པའི་སྐྱེ་བ་འཛིན་པ།

སེམས་དམྱལ་ཡི་དྭགས་དུད་འགྲོ་དང་། །
ཀླ་ཀློ་འདུ་ཤེས་མེད་ལྷ་དང་། །
ལོག་ལྟ་སངས་རྒྱས་ལ་མི་འདུན། །
ལྐུགས་པ་[5]མི་ཁོམ་གནས་བརྒྱད་དོ། [6] །

1 སྨིན་པར་- སྣ། པེ།

2 བཞི་ཐམས་ཅད་ཀྱི་- པེ།

3 མི་དགེ་བ་- པེ།

4 མ་འདུས་པ་- སྣ། པེ། མ་ལུས་པ་- པེ།

5 ལྐུགས་དང་- སྣ། པེ།

6 མི་ཁོམ་པ་བརྒྱད་ཀྱི་གྲངས་འདྲེན་གཤམ་འཕོད་གཞུང་ཚན་ཁག་ཏུའང་གསལ། 1 འཕགས་པ་འདུལ་བ་རྣམ་པར་གཏན་ལ་དབབ་པ་ཉེ་བར་འཁོར་གྱིས་ཞུས་པ་ཞེས་བྱ་བ་ཐེག་པ་ཆེན་པོའི་མདོ། Toh-68 སྡེ། བཀའ། དཀོན་བརྩེགས། "ཅ" ༡༣༠ བ 2 Toh-1867 སྡེ།

ཞེས་གསུངས་པ་དེ་དག་ཏུ་སྐྱེ་བར་གྱུར་བའི་གནས་ཏེ།[1] ཆོས་ཟབ་མོ་སྤོང་བ་དང་། ལྟུང་བ་ཕྲ་མོ་དག་ལ་མི་འཛེམས་པ་དང་།[2] སེར་སྣས་ཡོ་བྱད་ལ་

བསྟན། རྒྱུད་འགྲེལ། "དི" ༡༤༡ བ 3 Toh-1868 སྡེ། བསྟན། རྒྱུད་འགྲེལ། "དི" ༡༨༩ བ 4 Toh-1869 སྡེ། བསྟན། རྒྱུད་འགྲེལ། "ན" ༣ ན 5 Toh-2533 སྡེ། བསྟན། རྒྱུད་འགྲེལ། "ཁུ" ༡༠༩ ན 6 Toh-2534 སྡེ། བསྟན། རྒྱུད་འགྲེལ། "ཁུ" ༣༩༣ བ ༣༩༨ བ 7 Toh-3766 སྡེ། བསྟན། རྒྱུད་འགྲེལ། "ཚུ" ༡༡༩ བ 8 Toh-3787 སྡེ། བསྟན། ཤེར་ཕྱིན། "ཀ" ༡༤༧ 9 Toh-3791 སྡེ། བསྟན། ཤེར་ཕྱིན། "ཅ" ༣༤༨ ན 10 Toh-3799 སྡེ། བསྟན། ཤེར་ཕྱིན། "ཉ" ༣༣༤ ན 11 Toh-3805 སྡེ། བསྟན། ཤེར་ཕྱིན། "ད" ༡༥༣ བ 12 Toh-3807 སྡེ། བསྟན། ཤེར་ཕྱིན། "ན" ༡༩ བ 13 Toh-3808 སྡེ། བསྟན། ཤེར་ཕྱིན། "པ" ༣༩ ན 14 Toh-3856 སྡེ། བསྟན། དབུ་མ། "ཛ" ༤༩ ན 15 Toh-3872 སྡེ། བསྟན། དབུ་མ། "ཡ" ༤༥ བ 16 Toh-3875 སྡེ། བསྟན། དབུ་མ། "ཤ" ༩༧ ན 17 Toh-3880 སྡེ། བསྟན། དབུ་མ། "ཤ" ༡༩༧ བ 18 Toh-3903 སྡེ། བསྟན། དབུ་མ། "ཨ" ༣༣༠ བ 19 Toh-3934 སྡེ། བསྟན། དབུ་མ། "ཀི" ༡༤༩ བ 20 Toh-3935 སྡེ། བསྟན། དབུ་མ། "ཀ" ༣༣༣ བ ༣༣༤ བ 21 Toh-3943 སྡེ། བསྟན། དབུ་མ། "ཁི" ༣༡༦ ན 22 Toh-3994 སྡེ། བསྟན། མདོ་འགྲེལ། "ཅི" ༣༧ བ 23 Toh-4005 སྡེ། བསྟན། མདོ་འགྲེལ། "ཇ" ༡༨༥ བ 24 Toh-4006 སྡེ། བསྟན། མདོ་འགྲེལ། "ཇི" ༡༩༠ ན 25 Toh-4007 སྡེ། བསྟན། མདོ་འགྲེལ། "ཇི" ༡༩༥ བ 26 Toh-4112 སྡེ། བསྟན། འདུལ་བ། "ཙུ" ༡༣ ན 27 Toh-4167 སྡེ། བསྟན། སྤྲིང་ཡིག "གེ" ༡༧༥ ན 28 Toh-4168 སྡེ། བསྟན། སྤྲིང་ཡིག "གེ" ༡༧༩ ན 29 Toh-4182 སྡེ། བསྟན། སྤྲིང་ཡིག "ངེ" ༤༣ བ 30 Toh-4190 སྡེ། བསྟན། སྤྲིང་ཡིག "ངེ" ༩༦ བ 31 Toh-4346 སྡེ། བསྟན། སྣ་ཚོགས། "ཅོ" ༡༧༥ ན 32 སློབ་དཔོན་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱིས་མཛད་པའི་ཆོས་ཡང་དག་པ་བསྡུས་པ། ཤོག ༨༡ ལྷ་ཆ་མཚོ་སློབ་ཁང་ནས་དཔར་བསྐྲུན། ༡༩༨༨

1 ལས་ཏེ་- སྣ། པི།

2 འཛེམ་པ་དང་- སྣ།

སོགས་པ་ལ་ཞེན་ཏེ་ཙུང་ཟད་ཀྱང་མི་གཏོང་བར་སོག[1]པ་དང་། སངས་རྒྱས་ལ་སོགས་པ་ལ་མི་གུས་པ་དང་། ཐབས་མི་མཁས་པས་འདུ་ཤེས་མེད་པའི་སྙོམས་པར་འཇུག་པ་ཡིད་ལ་བྱེད་པ་དང་། གཞན་གྱི་མིག་གི་དབང་པོ་ལ་སོགས་པ་དང་བྲལ་བར་བྱེད་པ་དང་། ལོག་པར་ལྟ་བའི་རྗེས་སུ་ཕྱོགས་པ་དང་། སྨོན་ལམ་མ་སྦྱངས་པ་སྟེ། ཇི་ལྟར་རིགས་པར་གཞན་ཡང་བགྲང་བ་ལས་འདས་པ་ཤིན་ཏུ་ཕྲ་བར་འགྱུར་བ་དེ་དག་ཐམས་ཅད་དོ།།

དངོས་པོ་དེ་དག་ཇི་ལྟར་བཤགས་པ་ནི**སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་** ཞེས་བྱ་བ་ལ་སོགས་པ་སྟེ། སངས་རྒྱས་རྣམས་མངོན་དུ་བྱས་དེ་མཐོལ་བ་ལ་སོགས་པ་བྱས་ཏེ་ཕྱིས་སྡོམ་པའོ། །དེ་ལ་**ཡེ་ཤེས་སུ་གྱུར་བ་**ནི་ཇི་ལྟ་བའི་རྣམ་པ་དོན་དམ་པ་དང་། ཇི་སྙེད་པའི་རང་བཞིན་དུ་ཀུན་རྫོབ་[2]ཐམས་ཅད་མཁྱེན་པའི་རང་བཞིན་ཅན་ནོ། །**སྤྱན་དུ་གྱུར་པ་**ནི་སྤྱན་ལྔ་རྣམ་པར་དག་པས་མཁྱེན་པའོ། །**དཔང་དུ་གྱུར་པ་**ནི་དོན་ཐམས་ཅད་ཕྱིན་ཅི་མ་ལོག་པར་མཁྱེན་པའོ། །**ཚད་མར་གྱུར་པ་**ནི་དཔང་དུ་གྱུར་པ་དེ་ཉིད་ཀྱི་ཕྱིར་རོ། །**མཁྱེན་པ་**ནི་ཡེ་ཤེས་ཀྱིས་སོ། །**གཟིགས་པ་**ནི་སྤྱན་གྱིས་ཏེ་དེ་དག་གི་**སྤྱན་སྔར་**རོ། །ཡང་ན་མངོན་པར་ཤེས་པ་དྲུག་དང་སྤྲུར་རོ་ཞེས་ཁ་ཅིག་འཆད་དོ་ཞེས་གྲག་གོ[3] །**མཐོལ་བ་**ནི་རང་གི་ངོ་བོས་འདི་བྱས་སོ་ཞེས་ངག་ཏུ་བརྗོད་པའོ། །དེ་དག་ལ་ཉེས་པ་རྣམ་པ་དུ་མར་ལྟ་ཞིང་སེམས་ཀྱིས་མི་མཐུན་པར་བཟུང་ནས་ཉེས་པ་ཅན་དུ་སྟོན་པ་ནི་[4]

1 སོགས་པ་དང་།- སྣ། པེ། ཚིག་དོན་ལྟར་ན་གསོག་པ་ཞེས་ཐོབ་དགོས་པ་སྙམ་མོ།།
2 རང་བཞིན་ཀུན་རྫོབ་- སྣ། པེ།
3 གྲགས་སོ།- པེ།
4 བསྟོན་པ་ནི་- ཅོ།

བཤགས་པའོ། །**མི་འཆབ་པ་**ནི་བདག་གིས་བགྱིས་པའི་སྡིག་པ་རྣམས་གཞན་གྱིས་ཚོར་རེ་འོང་ངོ་སྙམ་ནས་དེའི་ཐབས་ཡོད་ལ་མི་བྱེད་པའོ། །**སླན་ཆད་ཀྱང་སྡོམ་པ་**ནི་གཉེན་པོས་ཀུན་ནས་བཟུང་སྟེ། སྔ་མ་རྗེས་སུ་མི་འཇུག་པར་རྒྱུན་ཀུན་ནས་གཅོད་པའོ།།

དེ་དག་གིས་ནི་བདག་གིས་བྱས་ཤིང་བསགས་པའི་སྡིག་པའི་ལས་ཟད་པར་འགྱུར་བའི་སྟོབས་བཞི་ཡང་བསྟན་ཏེ། རྟེན་གྱི་སྟོབས་དང་། རྣམ་པར་སུན་འབྱིན་པའི་སྟོབས་དང་། གཉེན་པོ་ཀུན་དུ་སྤྱོད་པའི་སྟོབས་དང་། སོར་ཆུད་པའི་སྟོབས་སོ། །དེ་ལ་གང་ལ་སྒྲིབ་པ་རྣམས་བཤགས་པར་བྱ་བའི་རྟེན་དཀོན་མཆོག་གསུམ་དང་། དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་རྣམས་ལ་སྐྱབས་སུ་འགྲོ་བ་དང་། ཕྱག་འཚལ་བ་ནི་རྟེན་གྱིས་སྟོབས་སོ། །བྱས་པའི་རྣམ་གྲངས་ཉེ་བར་རྟོགས་ཅིང་[1]ཉེས་པ་དུ་མའི་འབྱུང་གནས་སུ་བཟུང་ནས་ཡིད་ལ་གཙགས་པས་བདག་ཉེས་པ་ཅན་དུ་བརྗོད་པ་ནི་རྣམ་པར་སུན་འབྱིན་པའི་སྟོབས་སོ། །གཉེན་པོ་དེ་དང་དེ་དག་ཡིད་ལ་བྱས་པས་ཡང་མི་འབྱུང་བར་བྱེད་པ་ནི་གཉེན་པོ་ཀུན་དུ་སྤྱོད་པ་དང་། སོར་ཆུད་པའི་སྟོབས་སོ། །སྟོབས་བཞི་པོ་དེ་དག་[2]ཡིད་ལ་བྱས་ཤིང་སེམས་ཐག་པ་ནས་ཁ་ཏོན་བྱས་ན་ལས་ཀྱི་སྒྲིབ་པ་རྣམས་ཀུན་ནས་བསྲབས་པར་འགྱུར་ཏེ། **ཇི་སྐད་དུ།**[3] "བྱམས་པ་ཆོས་བཞི་པོ་འདི་དག་ནི་སྡིག་པ་བྱས་ཤིང་བསགས་པ་རྣམས་ཀུན་ནས་བསྲབས་པར་འགྱུར་བ་སྟེ། བཞི་གང་ཞེ་ན། རྟེན་གྱི་སྟོབས་དང་། རྣམ་པར་སུན་འབྱིན་པའི་སྟོབས་དང་། གཉེན་པོ་ཀུན་དུ་སྤྱོད་པའི་

---

1 རྟོག་ཅིང་- སྣ།

2 དག- སྡེ་དགེར་མི་གསལ།

3 སྟོབས་བཞི་ནི། འཕགས་པ་ཆོས་བཞི་བསྟན་པའི་མདོ། Toh-249 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "ཟ" ༥༩ བ

སྟོབས་དང་། སོར་ཆུད་པའི་སྟོབས་སོ། །དེས་ན་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་གང་དག་སྡིག་པའི་ལས་ཟད་པར་འདོད་པ་དག་གིས་མདོ་འདི་མང་དུ་ཡིད་ལ་བྱའོ།། ཁ་ཏོན་དུ་བྱའོ" ཞེས་གསུངས་པ་བཞིན་ནོ།།

དེ་ལྟར་ལས་ཀྱི་སྒྲིབ་པ་རྣམས་བཤགས་ནས། ད་ནི་བདག་གིས་བྱས་པའི་དགེ་བའི་རྩ་བ་རྣམས་ཡང་དག་པའི་བསྔོ་བས་མ་ཟིན་པས་འབྲས་བུ་མེད་པའམ། ཡོད་ཀྱང་དམན་པར་འགྱུར་བས་སྲིད་པའི་རྒྱ་མཚོ་ལས་རྒལ་བའི་ཕྱིར་[1]དགེ་བ་རྣམས་བསྔོ་བར་བྱ་སྟེ། དེས་ནི་འབྱུང་ཁུངས་ནས་འདུས་བྱས་པའི་གསེར་གྱི་ཕུང་པོ་མགར་བ་མཁས་པས་རྒྱན་དུ་བྱས་ན་རང་དང་གཞན་ལ་[2]ཉེ་བར་མཁོ་བའི་ཡན་ལག་ཏུ་འགྱུར་པ་བཞིན་དུ་ཇི་ལྟར་འདོད་པའི་འབྲས་བུར་འགྱུར་རོ། །དེ་ལ་གང་གི་མདུན་དུ་བསྔོ་བར་བྱ་བ་དག་ལ་གསོལ་བ་གདབ་པ་ནི་**སངས་རྒྱས**་ཞེས་བྱ་བ་ལ་སོགས་པའོ། །གང་བསྔོ་བར་བྱ་བའི་དགེ་བ་ནི་**བདག་གིས**་[3]ཞེས་བྱ་བ་ལ་སོགས་པ་སྟེ། བདག་ཅེས་བྱ་བ་ལ་སོགས་པ་ནི་སྔ་མ་བཞིན་ནོ།།

དགེ་བའི་རང་བཞིན་ནི་རྣམ་པ་གསུམ་སྟེ། "སྦྱིན་པ་ལས་བྱུང་བ་དང་། ཚུལ་ཁྲིམས་ལས་བྱུང་བ་དང་། བསྒོམ་པ་ལས་བྱུང་བའོ།"[4] །དེ་ལ་སྦྱིན་པ་ལས་བྱུང་བ་ནི། **སྦྱིན་པ་བཏང་ན**་ཞེས་བྱ་བ་ལ་སོགས་པ་སྟེ། ཆེན་པོར་འགྱུར་བའི་སྦྱིན་པ་སྣོད་དུ་གྱུར་པ་ལ་ཆོས་ཀྱི་སྦྱིན་པ་དང་། འཇིགས་པ་ལ་མི་འཇིགས

---

1 བརྒལ་བའི་ཕྱིར་- པེ།

2 གཞན་དང་- སྣེ།

3 བདག་གི་- སྣེ།

4 བསོད་ནམས་སུ་བྱ་བའི་ཆོས་གསུམ་ནི། བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་སྡེ་སྣོད། Toh-56 སྣེ། བཀའ། དཀོན་བརྩེགས། "ག" ༡༧༣ ན ༡

པའི་སྦྱིན་པ་དང་། བྱམས་པའི་སྦྱིན་པ་དང་། ཟང་ཟིང་གི་སྦྱིན་པ་[1]དངོས་པོ་མིག་ལ་སོགས་པ་ནས་ཡོངས་སུ་བཏང་བ་དང་། ཁྱད་པར་དུ་འཕགས་པ་དག་ལ་ཕྱི་རོལ་དུ་གྱུར་པའི་སེམས་ཅན་གྱིས་བསྡུས་པའི་བུ་ལ་སོགས་པ་བཏང་བ་དང་། དེ་ལས་གཞན་པ་གླིང་བཞི་ལ་སོགས་པ་བཏང་བ་དང་། རྒྱལ་སྲིད་དང་དེའི་ཕྱེད་དང་། ཡུལ་འཁོར་དང་། ལྗོངས་དང་། གྲོང་[2]ལ་སོགས་པ་དང་། ཟས་དང་སྐོམ་ལ་སོགས་པ་བཏང་བ་དང་། **ཐ་ན་དུད་འགྲོའི་སྐྱེ་གནས་སུ་སྐྱེས་པ་ལ་ཟས་[3]ཁམ་གཅིག་ཙམ་བྱིན་པ** ཡན་ཆད་དེ། ཡུལ་དང་དངོས་པོ་ཤིན་ཏུ་དམན་པར་གྱུར་པའོ།།

ཚུལ་ཁྲིམས་ལས་བྱུང་བའི་དགེ་བ་ཐེག་པ[4]ཐམས་ཅད་ལ་སོ་སོར་ཐར་པའི་སྡོམ་པས་བསྡུས་པ། བསྙེན་པར་རྫོགས་པ་ནས་དགེ་བསྙེན་གྱི་བར་གྱི་ཐུན་མོང་གི་ཚུལ་ཁྲིམས་བསྲུང་བའོ། །རབ་ཏུ་བྱུང་བར་གདོགས་པ་ཁོ་ན་ནི་ཚངས་པར་སྤྱོད་

---

1 སྦྱིན་པའི་དབྱེ་བ་རྟོས་ཚུལ་མང་བས་འདིར་བསྟན་གྱི་སྦྱིན་པའི་དབྱེ་བ་བཞི་པོ་རྣམས་ནི། འཕགས་མ་སྒྲོལ་མ་ཀུ་རུ་ཀུལླའི་རྟོག་པ་ལས།

ཆོས་དང་དེ་བཞིན་ཟང་ཟིང་དང་། །
བྱམས་དང་མི་འཇིགས་ཞེས་བྱ་བཞི། །

Toh-437 སྡེ། བཀའ། རྒྱུད། "ཙ" ༣༧ བ ༥

2 གཏོང་ནོར་གྱི་དངོས་པོ་རྒྱ་ཆེ་བ་ཁག་ནི། ཏིང་ངེ་འཛིན་རྒྱལ་པོའི་མདོ།

གྲོང་ཁྱེར་དང་ནི་རྒྱལ་སྲིད་ཡོངས་གཏོང་ཞིང་། །
གསེར་དང་དངུལ་དང་གསེར་དང་བྱི་རུ་དང་། །
དེ་བཞིན་གནས་དང་བུ་དང་བུ་མོ་དང་། །
རང་གི་མགོ་ཡང་གཏོང་ཞིང་བྱང་ཆུབ་བཙལ་གས། །

Toh-127 སྡེ། བཀའ། མདོ་སྡེ། "ད" ལེའུ ༣༦ ཤོག ༡༣༨ བ

3 ཟས་- སྡེ་དགེར་མི་སྣང་།

4 ཐེག་པ་- སྡེ་དགེར་མི་སྣང་།

པ་ཀོ་ན་ལ་གནས་པའོ། །བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་ཀོ་ནའི་དབང་དུ་བྱས་པ་སེམས་ཅན་རྣམས་ཡོངས་སུ་སྨིན་པར་བྱ་བ་དང་། བྱང་ཆུབ་ཀྱི་སེམས་ཀྱི་དགེ་བའི་རྩ་བ་སྟེ། སྦྱོར་བས་[1]སེམས་ཅན་སྨིན་པར་བྱེད་པ་དང་། བསམ་པས་བྱང་ཆུབ་ཀྱི་སེམས་ཡོངས་སུ་མི་གཏོང་བ་ཀོ་ན་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་ཚུལ་ཁྲིམས་རྣམ་པར་དག་པ་ཡིན་པའི་ཕྱིར་རོ། །དེ་ལྟར་མ་ཡིན་ན་དགེ་བའི་ལས་ཀྱི་ལམ་བཅུ་ལ་བསྐལ་བ་བྱེ་བ་ཙམ་དུ་མི་དགེ་བའི་སྐབས་མ་ཕྱེ་ཡང་ཚུལ་ཁྲིམས་དག་པ་ཞེས་མི་བྱ་ལ། བསམ་པ་དང་སྦྱོར་བ་དེ་ལྟ་བུས་བརྩོན་ན་འདོད་པའི་ཡོན་ཏན་ལྔ་དང་འདྲེ་བར་སྤྱོད་ཀྱང་ཚུལ་ཁྲིམས་རྣམ་པར་དག་པ་ཞེས་བརྗོད་དེ། དེ་སྐད་དུ་ཡང་
བཅོམ་ལྡན་འདས་མ་[2]ལས།

བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་གང་ཞིག་[3]འདོད་ཡོན་ལྔ་སྤྱོད་ཀྱང་། །
སངས་རྒྱས་ཆོས་དང་འཕགས་པའི་དགེ་འདུན་སྐྱབས་སོང་སྟེ། །
སངས་རྒྱས་འགྲུབ་བྱ་སྙམ་དུ་ཀུན་མཁྱེན་ཡིད་བྱེད་ན། །
མཁས་པ་ཚུལ་ཁྲིམས་ཕ་རོལ་ཕྱིན་གནས་རིག་པར་བྱ། །

གལ་ཏེ་བསྐལ་པ་བྱེ་བར་དགེ་བའི་ལས་ལམ་བཅུ། །
སྤྱོད་ཀྱང་དགྲ་བཅོམ་རང་རྒྱལ་ཉིད་དུ་འདོད་སྐྱེད་ན། །
དེ་ཚེ་ཚུལ་ཁྲིམས་སྐྱོན་བྱུང་ཚུལ་ཁྲིམས་ཉམས་པ་ཡིན། །
སེམས་བསྐྱེད་དེ་ནི་ཕས་ཕམ་པས་ཀྱང་ཤིན་ཏུ་ལྕི། །

1 སྦྱིན་པས་- སྣ། པེ།
2 ཤེར་ཕྱིན་སྡུད་པ། Toh-13 སྡེ། བཀའ། ཤེར་ཕྱིན། "ཀ" ༡༨ བ
3 གལ་ཏེ་- མདོ།

ཞེས་གསུངས་སོ། །འདི་ཡང་གཞན་གྱི་དོན་གཙོ་བོར་གྱུར་པས་གཙོ་བོར་བཞག་པ་ཡིན་གྱི།[1] རང་གི་དོན་འགོག་པ་ནི་[2]མ་ཡིན་ནོ།།

བསྒོམས་པ་ལས་བྱུང་བ་ནི་**ཟླ་ན་མེད་པའི་ཡེ་ཤེས་ཀྱི་དགེ་བའི་རྩ་བ་**ཞེས་བྱ་བ་སྟེ། **ཟླ་ན་མེད་པའི་ཡེ་ཤེས་**ནི་རྣམ་པ་ཐམས་ཅད་མཁྱེན་པ་སྟེ། ཀུན་རྫོབ་ཀྱིས་བསྡུས་པ་ཇི་སྙེད་ཡོད་པ་དང་། དོན་དམ་པས་བསྡུས་པ་ཇི་ལྟ་བར་གནས་པ་ཐམས་ཅད་མཁྱེན་པ་ཉན་ཐོས་ལ་སོགས་པ་ཐམས་ཅད་[3]ལས་ཕུལ་དུ་བྱུང་བའོ། །དེ་ནི་ཆོས་རྣམས་ཀྱི་རང་བཞིན་སྟོང་པ་ཉིད་དང་། སྒྱུ་མ་ལྟ་བུས་[4] བསྒོམས་པ་ལས་བྱུང་བ་སྟེ། དེ་དག་གོམས་པ་[5]ཕུལ་དུ་ཕྱིན་པ་[6]ན་སྒྲིབ་པ་ཐམས་ཅད་བཅད་དོ། །རང་བཞིན་མེད་པ་གསལ་བ་རབ་ཏུ་གྱུར་ནས་ཅི་ཡང་མཐོང་བ་མེད་པའི་ཚུལ་གྱིས་ཆོས་རྣམས་རང་བཞིན་སྟོང་པ་ཉིད་ཇི་ལྟ་བ་ཡུལ་དུ་བྱེད་ཅིང་སྒྱུ་མ་ལྟ་བུའི་དོན་ནམ་མཁའ་དང་མཉམ་པ་རྒྱུ་དང་འབྲས་བུས་བསྡུས་པའི་ཆོས་ཐམས་ཅད་ལག་མཐིལ་དུ་སྐྱུ་རུ་ར་བཞག་པ་[7]བཞིན་དུ་སྒྲིབ་པའི་དྲི་མ་སྤངས་པ་ལས་མངོན་སུམ་དུ་འགྱུར་རོ། །དེས་ན་**སློབ་དཔོན་ཞི་བའི་ལྷས་**[8]ཀྱང་།

ཉོན་མོངས་ཤེས་བྱའི་སྒྲིབ་པ་ནི། །

---

1 གཞན་གྱི་དོན་གཙོ་བོར་གྱུར་པ་ཡིན་གྱི།- སྡེ།

2 འདོགས་པ་ནི་- སྣ། པེ།

3 ཐམས་ཅད་- སྡེ་དགེར་མི་སྣང་།

4 སྒྱུ་མ་ལྟ་བུ་- སྡེ། ཅོ།

5 གོམ་པ་- སྣ། པེ།

6 ཕུལ་ཕྱིན་པ་- སྣ། པེ།

7 གཞག་པ་- སྡེ། ཅོ།

8 སྤྱོད་འཇུག ཤློ་ཀ ༥༥ Toh-3871 སྡེ། བསྟན། དབུ་མ། "ལ" ལེའུ ༩ ༣༣ ན

མུན་པའི་གཉེན་པོ་སྟོང་པ་ཉིད། །
མྱུར་དུ་ཐམས་ཅད་མཁྱེན་འདོད་པས། །
ཅི་ཕྱིར་དེ་ནི་སྒོམ་མི་བྱེད། །

ཅེས་ཐམས་ཅད་མཁྱེན་པའི་ཡེ་ཤེས་ཀྱི་རྒྱུ་སྟོང་པ་ཉིད་བསྒོམ་པ་གསུངས་ཏེ། དེ་ལྟར་སྦྱིན་པ་དང་ཚུལ་ཁྲིམས་དང་བསྒོམས་པ་ལས་བྱུང་བ་དེ་ཐམས་ཅད་བསྔོ་བར་བྱའོ།།

ཇི་ལྟར་བསྔོ་ཞེ་ན། བསྔོ་བའི་རྣམ་པ་ནི་**གཅིག་ཏུ་བསྡུས་ཤིང་**ཞེས་བྱ་བ་ལ་སོགས་པ་སྨོས་ཏེ། དེ་ཐམས་ཅད་བློས་ཕྱོགས་གཅིག་ཏུ་བྱས་ཏེ། གཞན་ལས་ཕུལ་དུ་བྱུང་བ་རྣམས་སོ།[1] །དེ་ལ་**གཅིག་ཏུ་བསྡུས**་པ་ནི་རང་གི་ངོ་བོའི་སྒོ་ནས་སོ།། **བསྒྲུམས**་པ་ནི་བྱ་བའི་སྒོ་ནས་སོ། །**བསྡོམས**་པ་ནི་ནུས་པའི་སྒོ་ནས་སོ། ། **བླ་ན་མ་མཆིས་པ**་ལ་སོགས་པ་གསུམ་ནི་ཉན་ཐོས་དང་རང་སངས་རྒྱས་དང་། བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་ལས་ཁྱད་དུ་འཕགས་པ་སྨོས་ཏེ། དེ་ལྟར་བསྔོ་བའོ། །གང་དུ་བསྔོ་བ་ནི་**བླ་ན་མེད་པ**་ཞེས་བྱ་བ་ལ་སོགས་པ་སྨོས་ཏེ་གནས་སྐབས་དེར་རོ།།

ཐབས་གང་གིས་བསྔོ་བ་ནི་**ཇི་ལྟར**་ཞེས་བྱ་བ་ལ་སོགས་པ་སྨོས་ཏེ། **འདས་པ**་ལ་སོགས་པའི་བསྔོ་བ་ཇི་ལྟ་བས་སོ། །དེ་ཡང་**སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་ཀྱིས**་དགེ་བའི་རྩ་བ་རྣམས་ཡང་དག་པར་མེད་པ་ཤེས་བཞིན་དུ་མདུན་དུ་བྱས་ནས་དགེ་བའི་རྩ་བ་དེ་དག་དང་། སྔོ་བར་བྱེད་པའི་སེམས་དང་། གང་དུ་བསྔོ་བར་བྱ་བའི་བླ་ན་མེད་པའི་བྱང་ཆུབ་ཀྱང་དོན་དམ་པའི་མཚན་མ་ཙུང་ཟད་དུ་ཡང་མི་འཛིན་པར་སེམས་ཅན་གྱི་ཆེད་དུ**བླ་ན་མེད་པའི་བྱང་ཆུབ་ཏུ་བསྔོ་བར་མཛད་པ་དེ་བཞིན་དུ་བདག་གིས་ཀྱང་བསྔོ་བ**འམ། དེ་ལྟ་བུའི་ཐབས་

[1] གཞན་ལ་ཕུལ་བྱུང་བ་རྣམས་སོ།- སྣ།

བདག་གིས་མངོན་དུ་བྱ་བར་མ་ནུས་ན་ཡང་། སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་ཀྱིས་དགེ་བའི་རྩ་བ་**ཇི་ལྟར་བསྔོས་པ་དེ་བཞིན་དུ་བདག་གི**་དགེ་བའི་རྩ་བ་དེ་ཡང་བསྔོའོ་ཞེས་ཚུལ་དེ་ལྟར་བསྔོ་བར་བྱ་བ་ནི་སངས་རྒྱས་ཀྱིས་ཡོངས་སུ་གནང་བ་ཐབས་དང་བཅས་པའི་བསྔོ་བ་ཡིན་ནོ།།

དེ་ལྟར་སྡིག་པ་བཤགས་པ་དང་། དགེ་བ་བསྔོ་བ་གསུངས་ནས། བྱང་ཆུབ་ཆེན་པོ་ཐོབ་པའི་ཐབས་བསྡུས་ཏེ་བརྗོད་པ་ནི་**སྡིག་པ་ཐམས་ཅད་ནི་སོ་སོར་བཤགས་སོ་**ཞེས་བྱ་བ་ལ་སོགས་པ་སྟེ། སྲིད་པའི་བརྩོན་རར་འཁྲུམས་ཤིང་བྱང་ཆུབ་ཆེན་པོ་མི་འཐོབ་པའི་རྒྱུ་ནི་རང་གིས་སྡིག་པའི་ལས་བསགས་པ་དང་། གཞན་གྱི་དགེ་བ་ལ་ཞེ་སྡང་བ་དང་། སངས་རྒྱས་ཀྱི་བསྟན་པ་མེད་ཅིང་དེ་འཇིག་རྟེན་ན་མི་བཞུགས་པ་དང་། སྨོན་ལམ་ཕྱིན་ཅི་ལོག་བཏབ་པ་དང་། སངས་རྒྱས་ལ་མ་གུས་པ་དང་། དེའི་སྐྱབས་དང་བྲལ་བ་ལས[1]ཡིན་ལ། ཉེས་པ་དེ་དག་རིམ་པ་བཞིན་སྡིག་པ་བཤགས་པ་ལ་སོགས་པས་བྱང་ཆུབ་ཆེན་པོ་ཐོབ་པར་འགྱུར་རོ། །དེས་ན་**སློབ་དཔོན་དབྱིག་གཉེན**་གྱིས་ཀྱང་། "བྱང་ཆུབ་ཆེན་པོ་འཐོབ་པའི་རྒྱུ་ནི། སྡིག་པ་ཐམས་ཅད་ནི་སོ་སོར་བཤགས་སོ། །བསོད་ནམས་ཐམས་ཅད་ཀྱི་རྗེས་སུ་ཡི་རང་ངོ་། །སངས་རྒྱས་ཐམས་ཅད་ལ་གསོལ་བ་འདེབས་སོ། །བདག་གི་ཡེ་ཤེས་བླ་ན་མེད་པའི་མཆོག་ཏུ་གྱུར་ཅིག"[2]ཅེས་བྱའོ། །ཞེས་གསུངས་ཏེ། སྔར་བཤད་པ་བཞིན་སྟོབས་བཞིའི་སྒོ་ནས་རང་གིས་བྱས་ཤིང་བསགས་པའི་སྡིག་པ་བཤགས་པ་དང་། ཟག་པ་དང་བཅས་པ་དང་། ཟག་པ་མེད་པའི་དགེ་བ་རྣམས་བྱེད་པའི་བསམ་པས་ཕུལ་དུ་བྱུང་བའི

---

1 "བྲལ་བ་རྣམས"ཞེས་པ་ཡོད་ན་དོན་རྟོགས་སླ་བ་སེམས།

2 སྡེ་བསྟན་དུ་བཞུགས་པའི་སློབ་དཔོན་དབྱིག་གཉེན་གྱིས་མཛད་པའི་གཞུང་མ་ལག་གི་ཁྲོད་དུ་ལུང་འདི་འཚོལ་ཞིབ་བྱས་ཀྱང་རྙེད་སོན་མ་བྱུང་།

དགའ་བ་ཐོབ་པ་དང་། སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་གང་དག་ཆོས་ཀྱི་འཁོར་ལོ་བསྐོར་བར་མི་བཞེད་ཅིང་ཐུགས་ལས་ཆུང་པ་ལ་གཞོལ་བར་མཛད་པ་དང་། མྱ་ངན་ལས་འདས་པ་ཀུན་ཏུ་སྟོན་པ་རྣམས་ལ་འགྲོ་བ་རྣམས་ཀྱི་དོན་དུ་ཆོས་ཀྱི་འཁོར་ལོ་བསྐོར་བ་དང་། མྱ་ངན་ལས་མི་འདའ་བར་བསྐལ་པ་གྲངས་མེད་པར་བཞུགས་པར་གསོལ་བ་འདེབས་པ་དང་། དགེ་བ་གང་དང་གང་བྱེད་པ་རྣམས་ཀྱིས་བདག་ཡེ་ཤེས་ཀྱི་མཆོག་རྣམ་པ་ཐམས་ཅད་མཁྱེན་པར་སྨོན་ལམ་འདེབས་པའོ།།[1]

སངས་རྒྱས་རྣམས་ལ་**ཐལ་མོ་སྦྱར་བ་**ནི་ཕྱག་འཚལ་བ་ཡིན་ལ། **སྐྱབས་སུ་ཉེ་བར་མཆི་བ་**ནི། འཇིགས་པ་ཐམས་ཅད་ཀྱི་དཔུང་གཉེན་དུ་གཟུང་བ་སྟེ། དེས་ནི་སངས་རྒྱས་རྣམས་ལ་གུས་ཤིང་སྐྱབས་ཀྱི་གནས་སུ་གཟུང་བའོ། །དེ་དག་གིས་ནི་མདོ་སྡེ་གཞན་ནས་ཕུང་པོ་གསུམ་ཞེས་གང་བསྟན་པ་དེ་ཡང་བསྡུས་པ་སྟེ། སྡིག་པ་བཤགས་པ་ནི་བཤགས་པའི་ཕུང་པོའོ། །དགེ་བའི་རྩ་བ་བསྔོ་བ་ནི་བསྔོ་བའི་ཕུང་པོའོ། །བྱང་ཆུབ་ཆེན་པོ་ཐོབ་པའི་ཐབས་ཀྱིས་སྡིག་པ་ནི་བཤགས་པས་སོ། །རྗེས་སུ་ཡི་རང་བ་ནི་བསྔོ་བའི་ཡན་ལག་སྟེ། རྗེས་སུ་ཡི་རང་བའི་དགེ་བ་བསྔོ་བས་སོ། །གསོལ་བ་འདེབས་པ་ནི་གསོལ་བ་འདེབས་པའི་ཕུང་པོའོ། །སྨོན་ལམ་འདེབས་པ་ནི་བསྔོ་བའི་རང་བཞིན་ཡིན་ནོ། །ཕྱག་འཚལ་བ་དང་སྐྱབས་སུ་གཟུང་བ[2]་ནི་རྟེན་གྱི་སྟོབས་ཏེ། སྡིག་པ་བཤགས་པའི་ཕུང་པོར་འདུས་སོ། །དེ་དག་སེམས་ཐག་པ་ནས་ཉིན་ལན་གསུམ་མཚན་ལན་གསུམ་དུ་རྒྱུན་མི་འཆད་པར་བྱས་ན། བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་དེའི་ལས་ཀྱི་ལམ་གྱི་སྒྲིབ་པ་རྣམས་ཟད་ནས་

---

1 འདེབས་སོ།- སྡེ།

2 བཟུང་བ་- སྣ།

འདོད་པའི་འབྲས་བུ་མངོན་དུ་འགྱུར་བས་འདི་ལ་བརྩོན་པར་བྱའོ།།

སློབ་དཔོན་ཞི་བའི་ལྷས་ [1]ཀྱང་།

ཉིན་དང་མཚན་མོ་ལན་གསུམ་དུ། །
ཕུང་པོ་གསུམ་པ་གདོན་བྱ་ཞིང་། །
རྒྱལ་དང་བྱང་ཆུབ་སེམས་བརྟེན་པས། །
ལྟུང་བའི་ལྷག་མ་དེས་ཞི་བྱ། །

ཞེས་གསུངས་སོ། །ཇི་ལྟར་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་ལས་ཀྱི་སྒྲིབ་པ་རྣམས་འདིས་སྦྱོང་བར་བྱ་བ་བཞིན་དུ་གཞན་ཐམས་ཅད་ཀྱང་ལྟུང་བ་རྣམས་ཆོས་དང་མཐུན་པར་སོར་ཆུད་པར་བྱས་ནས་ལས་ཀྱི་སྒྲིབ་པ་ལྷག་མ་རྣམས་འདིས་སྦྱོང་བར་བྱ་བ་ཡིན་ནོ། །གཞན་དག་ལས་ཀྱི་སྒྲིབ་པ་ཟད་པར་འདོད་པ་སུ་ཡང་རུང་བ་དག་གིས་ཀྱང་འདི་ལ་བརྩོན་པར་བྱའོ། །དེ་ལྟར་ན་ལས་ཀྱི་སྒྲིབ་པ་རྣམས་ཟད་པར་འགྱུར་རོ། །སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་ཉེས་པ་མ་ལུས་པ་སྤངས་ནས་ཕྱུང་ཞིང་མ་ནོར་བར་རྟོགས་པའི་ཡེ་ཤེས་ཅན་བརྩེ་བ་ཆེན་པོ་གཞན་སྡུག་བསྔལ་དང་བྲལ་བར་བཞེད་པའི་བདག་ཉིད་ཆེན་པོ་ཡིན་པས་འདི་ལ་ཡིད་གཉིས་ཙུང་ཟད་ཀྱང་མེད་དེ། བརྫུན་གསུང་བ་མི་སྲིད་པའི་ཕྱིར་རོ།།

སྤྱོད་ཡུལ་མ་ཡིན་འདོད་ཆེན་ལ། །
རང་དང་གཞན་གྱི་དོན་གྱི་ངོར། །

1 སྤྱོད་འཇུག ཤློཀ་ ༩༨ Toh-3871 སྡེ། བསྟན། དབུ་མ། "ལ" ༡༥ ན

བདག་གིས་འབད་[1]བགྱིས་ནོངས་པ་ལ།[2] །
སྐྱེ་བོ་མཁས་རྣམས་བཟོད་པར་མཛོད།[3] །

འདི་བྲིས་པ་ལས་བསོད་ནམས་ནི། །
དམ་ཚིག་ཇོ་རྗེས་ཐོབ་གང་ཡིན། །
དེས་ནི་འཁོར་བ་མ་ལུས་པའི། །
མ་རིག་འཐིབས་[4]པོར་བྱེད་[5]འབྱིན་ཤོག །

ལས་ཀྱི་སྒྲིབ་པ་རྣམ་པར་སྦྱོང་བའི་ཆོ་ག་བཤད་པ་ཞེས་བྱ་བ་སློབ་དཔོན[6] དཱི་པཾ་ཀ་ར་ཤྲཱི་ཛྙཱ་ནས་མཛད་པ་རྫོགས་སོ། །པཎྜིཏ་དེ་ཉིད་དང་། ལོ་ཙཱ་བ་དགེ་སློང་ཚུལ་ཁྲིམས་རྒྱལ་བས་བསྒྱུར་བའོ།། །།

---

1 བདག་གིས་འདབ་- སྣ། པེ།

2 ནོངས་པ་ལས་- སྣ། པེ།

3 གོང་གི་གཞུང་ཚིག་འདི་དང་ཚིག་ཕལ་ཆེ་བ་འདྲ་བ་སློབ་དཔོན་སེངྒེ་བཟང་པོས་མཛད་པའི་ཕར་ཕྱིན་འགྲེལ་པ་དོན་གསལ་ལས།

འོན་ཀྱང་སྤྱོད་ཡུལ་མ་ཡིན་ལ། །
རང་དང་གཞན་གྱི་དོན་གྱི་ངོར། །
བདག་གིས་འབད་བགྱིས་ནོངས་པ་ལ། །
སྐྱེ་བོ་མཁས་རྣམས་བཟོད་པ་མཛོད། །

Toh-3793 སྡེ། བསྟན། ཤེར་ཕྱིན། "ཇ" ༡༥༠ ན ༥

4 ཐིབས་- པེ།

5 དབྱིས་- པེ།

6 ཞེས་པ་སློབ་དཔོན།- པེ།

རྒྱལ་སྲས་ཆེན་པོ་ཞི་ལྷས།

ཉིན་དང་མཚན་མོ་ལན་གསུམ་དུ། །
ཕུང་པོ་གསུམ་པ་གདོན་བྱ་ཞིང་། །
རྒྱལ་དང་བྱང་ཆུབ་སེམས་བརྟེན་པས། །
ལྷུང་བའི་ལྷག་མ་དེས་ཞི་བྱ། །

བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་སྤྱོད་པ་ལ་འཇུག་པ།

आर्यत्रिस्कन्धसूत्रम्[1]

तत्रेयं(आपत्ति)[2] देशना[3]—अहमेवंनामा बुद्धं शरणं गच्छामि। धर्मं शरणं गच्छामि। संघं शरणं गच्छामि[4]। नमः (भगवते) शाक्यमुनये तथागतायार्हते[5] सम्यक्संबुद्धाय[6]। नमो वज्र—(गर्भ)[7]प्रमर्दिने। नमो रत्नार्चिषे। नमो नागेश्वरराजाय। नमो वीरसेनाय।

---

१. भोटभाषायां त्रिस्कन्धसूत्रनाम्ना पृथक्तया अनुवादद्वयमुपलभ्यते। अनयोरेकस्तु संक्षिप्तोऽन्यश्च विस्तृतः। विस्तृतस्तावत् देगे-संस्करणे २८५ तमे सूत्रे समुपलभ्यते। यः खलु सक्षिप्तो लघुर्वा ग्रन्थः, स न स्वतन्त्ररूपेण प्राप्यते। ग्रन्थोऽयं रत्नकूटवर्गे 'अर्थविनयविनिश्चय-उपालिपरिपृच्छासूत्रान्तर्गत उपलभ्यते। किन्तु सूत्रमिदम् अधुना संस्कृते नोपलभ्यते, भोटभाषायामेव केवलमनुवादरूपेण प्राप्यते। परन्तु सम्पूर्णमिदं संक्षिप्त त्रिस्कन्धसूत्रम् आचार्यशान्तिदेवकृते शिक्षासमुच्चये पूर्णतया समुद्धृतमुपलभ्यते। सूत्रमिदं प्रस्तुतं शिक्षासमुच्चयत एवास्माभर्गृहीतम्।

भोटदेशे अस्य लघुत्रिस्कन्धसूत्रस्य द्विविधः खलु पाठविधिः। गेलुक्-सम्प्रदायं विहाय अन्येषां त्रिविधसम्प्रदायानुयायिनां मतेन अस्य पाठः यथासूत्रमेव कर्त्तव्यः, किन्तु गेलुग्-मतानुयायिनां मान्यता भिन्नैव। तदनुसारं महापण्डितेन चोंखपा महोदयेन यदा सूत्रस्यास्य पाठो विहितस्तदा फलस्वरूपं तस्मै पञ्चत्रिंशद्बुद्धानां दर्शनं तु जातम्, किन्तु तेषां मुखमण्डलानि नासन्। स खल्वाश्चर्यचकितो बभूव। तदनन्तरं तेन सर्वेषां बुद्धनाम्नामादौ तथागतशब्दं योजयित्वा पुनः सूत्रपाठः कृतस्तदा तस्मै सर्वेषां बुद्धानां सम्पूर्णकायानां दर्शनं जातम्। ततः प्रभृति गेलुग्-सम्प्रदायानुयायिषु सूत्रपाठकाले आदौ तथागतशब्दयोगस्य प्रथा प्रावर्तत।

२. सर्वेषु भोटपाठेषु 'आपत्ति'-शब्द उपलभ्यते, किन्तु शिक्षासमुच्चयतः समुपलब्धेऽस्मिन् संस्कृतपाठे नोपलभ्यते।

३. भोटसंस्करणेषु सर्वत्र सूत्रादौ "नमो बोधिसत्त्वापत्तिदेशनायै" इत्येवं विधीयमानः सूत्रप्रणामोऽवलोक्यते। मन्ये, भोटग्रन्थकाराणामयं शैलीविशेषः। तदनन्तरं "एवंरूपेयमापत्तिदेशना" एवमभिहितम्।

४. संस्कृतपाठे केवलं त्रिशरणगमनमेव वर्णितम्, किन्तु भोटानुवादे ततः (त्रिशरणगमनतः) पूर्वं गुरुशरणगमनम् अतिरिक्ततया सयोजितम्। अनेन रूपेण भोटसंस्करणे चत्वारि शरणगमनान्युक्तानि।

५. संस्कृतपाठे "भगवते शास्त्रे" इति नोपलभ्यते, किन्तु भोटपाठे वचनमिदमाधिक्येनोल्लिख्यते।

६. भोटपाठे "सम्यक्संबुद्धाय भगवते" इति, किन्तु संस्कृतपाठे "भगवते" इति नोपलभ्यते।

७. 'गर्भ'-शब्दः सर्वेषु भोटपाठेषूपलभ्यते।

नमो वीरनन्दिने । नमो रत्नाग्नये[१] । नमो रत्नचन्द्रप्रभाय । नमोऽमोघदर्शिने । नमो रत्नचन्द्राय । नमो निर्मलाय[२] । नमः शूरदत्ताय । नमो ब्रह्मणे । नमो ब्रह्मदत्ताय । नमो वरुणाय । नमो वरुणदेवाय । नमो भद्रश्रिये । नमश्चन्दनश्रिये । नमोऽनन्तौजसे । नमः प्रभासश्रिये । नमोऽशोकश्रिये । नमो नारायणाय । नमः कुसुमश्रिये । नमो ब्रह्मज्योतिर्विक्रीडिताभिज्ञाय तथागताय । नमः पद्मज्योतिर्विक्रीडिताभिज्ञाय तथागताय[३] । नमो घनश्रिये । नमः स्मृतिश्रिये । नमः सुपरिकीर्तितनामधेयश्रिये ।नम इन्द्रकेतुध्वजराजाय । नमः सुविक्रान्तश्रिये । नमः सुविजितसंग्रामाय[४] । नमो विक्रान्तगामिने । नमः समन्तावभासव्यूहश्रिये । नमो रत्नपद्मविक्रामिणे । नमो रत्नपद्मसुप्रतिष्ठितशैलेन्द्रराजाय तथागतायार्हते सम्यक्संबुद्धाय ॥

एवंप्रमुखा[५] यावन्तः दशदिक्षु[६] सर्वलोकधातुषु तथागता अर्हन्तः सम्यक्संबुद्धास्तिष्ठन्ति ध्रियन्ते यापयन्ति, ते मां समन्वाहरन्तु बुद्धा भगवन्तः । यन्मया अस्यां जातौ अन्यासु वा जातिषु अनवराग्रे जातिसंसारे संसरता पापकं कर्म कृतं स्यात्कारितं वा क्रियमाणं वा अनुमोदितं भवेत्, स्तौपिकं वा सांघिकं वा द्रव्यमपहृतं स्यात्, हारितं वा ह्रियमाणं वा अनुमोदितं भवेत् । पञ्चानन्तर्याणि कृतानि स्युः कारितानि वा क्रियमाणानि वा अनुमोदितानि भवेयुः । दशाकुशलान् कर्मपथान् समादाय वर्तितं स्यात्, परे वा समादापिताः स्युर्वर्तमाना वा अनुमोदिता भवेयुर्येन कर्मावरणेनावृतोऽहं निरयं वा गच्छेयं तिर्यग्योनिं वा यमविषयं वा गच्छेयं प्रत्यन्तजनपदेषु म्लेच्छेषु वा प्रत्याजायेयं दीर्घायुष्केषु देवेषूपपद्येयमिन्द्रियविकलतां वाधिगच्छेयं मिथ्यादृष्टिं वोपगृह्णीयां बुद्धोत्पादं वा विरागयेयम्, तत्सर्वं

---

१. उपलब्धसंस्कृतमूले 'रत्नश्रिये' इति पाठः ।
२. संस्कृतमूले 'निर्मलाय' 'विमलाय' इति नामद्वयम्, किन्तु भोटपाठानुसार 'निर्मलाय' इत्येक एव पाठः ।
३. उपलब्धे संस्कृतमूले नास्त्ययं पाठः ।
४. 'नमो विचित्रसंक्रमाय' इति संस्कृतमूले पाठः ।
५. भोटपाठे नास्ति ।
६. उपलब्धसंस्कृतमूले नास्त्ययं पाठः ।

कर्मावरणं तेषां बुद्धानां भगवतां ज्ञानभूतानां चक्षुर्भूतानां[१] साक्षिभूतानां प्रमाणभूतानां जानतां पश्यतामग्रतः प्रतिदेशयामि, आविष्करोमि न प्रतिच्छादयामि, आयत्यां संवरमापद्ये ।

समन्वाहरन्तु मां ते बुद्धा भगवन्तो यन्मया अस्यां जातावन्यासु वा जातिष्वनवराग्रे वा जातिसंसारे संसरता दानं दत्तं भवेदन्तशस्तिर्यग्योनिगतायाप्यालोपः, शीलं वा रक्षितं भवेद् यच्च मे ब्रह्मचर्यवासकुशलमूलम्, यच्च मे सत्त्वपरिपाककुशलमूलम्, यच्च मे बोधिचित्तकुशलम्, यच्च मेऽनुत्तरज्ञानकुशलमूलम्, तत्सर्वमैकध्यं पिण्डयित्वा तुलयित्त्वा अभिसंक्षिप्य अनुत्तरायां सम्यक्संबोधौ उत्तरोत्तरया(गुरुगुरुणा)[२] परिणामनया, यथा परिणामितमतीतैर्बुद्धैर्भगवद्भिर्यथा परिणामयिष्यन्त्यनागता बुद्धा भगवन्तः, यथा परिणामयन्ति एतर्हि दशसु दिक्षु[३] प्रत्युत्पन्ना बुद्धा भगवन्तः, तथा अहमपि परिणामयामि ।

सर्वं पापं प्रतिदेशयामि[४] । सर्वं पुण्यमनुमोदयामि । सर्वान् बुद्धानध्येष्यामि । भवतु मे ज्ञानमनुत्तरम् ॥

ये चाप्यतीतास्तथपि च ये अनागता
ये चापि तिष्ठन्ति नरोत्तमा जिनाः ।
अनन्तवर्णान् गुणसागरोपमा-
नुपैमि सर्वान् शरणं कृताञ्जलिः ॥

॥ समाप्तम् ॥

(आर्यत्रिस्कन्धमहायानसूत्रं समाप्तम्)[५]

---

१. उपलब्धसंस्कृतमूले नास्त्ययं पाठः ।
२. भोटानुवादे 'उत्तरोत्तरया उत्तमोत्तमया' इत्युभयमप्युपलभ्यते ।
३. भोटानुवादे नास्त्ययं 'दशसु दिक्षु' इति शब्दः ।
४. उपलब्धसंस्कृतमूले नास्ति ।
५. भोटसंस्करणेषु सर्वेषु लघुसूत्रग्रन्थस्यास्य अन्ते "आर्यत्रिस्कन्धसूत्रं समाप्तम्" इति सुस्पष्टं समुल्लिखितम्, किन्तु समुपलभ्यमाने एकमात्रे संस्कृतपाठे वचनमिदमन्ते नोपलभ्यते । सम्भवतः आदौ चान्ते च भोटभाषानुवादानुरूपमस्य त्रिस्कन्धसूत्रस्य स्वातन्त्रिकी सत्ता स्यात्तथा वचनद्वयमादावन्ते च स्यादिति प्रतीयते ।

तथागत ने कहा है—

न क्षालयन्ति मुनयो जलेन पापं
नैवापकर्षन्ति करेण जगद्-दुःखम्।
नैव च सङ्क्रमते ह्यन्येषु स्वाधिगमः
सद्धर्मतादेशनया विमोचयन्ति ।।

भारतीय(संस्कृत)भाषायाम् : बोध्यापत्तिदेशनावृत्तिः

आर्यमञ्जुश्रिये (कुमारभूताय) नमः

नमो भगवते शाक्यमुनये

बुध्वा यो ह्यविकल्पतां च सुगतोऽकल्प्यानशेषांश्च सः
कारुण्यातिशयाज्जगद्धितकरो नत्वा च तं गौतमम् ।
सत्त्वानां हितकाम्ययाऽऽप्तवचनात् सूत्राच्च वक्ष्यमि तां
बोध्यापत्तिकदेशनां-जिनसुतव्यापत्तिसंशोधिनीम् ॥

त्रैकायिकेन[1] सर्वाकारज्ञेन बुद्धेन भगवता शाक्यमुनिना सर्वसत्त्वहिताय बहुविधा सद्धर्मदेशना प्रवर्तिता । सङ्ग्रह(-दृष्ट्या) सङ्कलिता सती पर्याप्ति(आगम)धर्मः (बुद्धवचनानि) द्वादशसु प्रवचनाङ्गेषु सङ्गृह्यते । इदं तावत् (त्रिस्कन्धसूत्र)[2] तेषु सूत्राङ्गे परिगण्यते । द्वादशाङ्गान्यपि[3] पिटकत्रये सङ्गृह्यन्ते । तेषु (त्रिपिटकेषु) इदं (त्रिस्कन्धसूत्रं) सूत्रपिटके(ऽन्तर्भूतं) भवति । मुख्यतस्तावदिदं महायानविनय(पिटक) मेव, (यतो ह्यस्मिन्) वस्तुनोऽङ्गस्य चोभयोर्निर्देशो वर्तते ।

अस्येदं पौराणिकं(कथानकम्), तथाहि-कौतुकादीनां पञ्चत्रिंशत आदिकर्मिकाणां बोधिसत्त्वानां राजगृहे पिण्डाय चरतामवमर्देन तदा मद्यविक्रेतुः(एकः) पुत्रो मृतः । तदापत्तिदेशनायै उपालिना[4] प्रार्थितो भगवान् (बुद्धः) इदं (सूत्रं) अदेशयत् । बोधिसत्त्वकुलस्य मार्गाङ्गत्वेनेदमनुवर्तते ।

---

१. धर्मकायः सम्भोगकायः निर्माणकायश्च ।

२. नमस्कारस्कन्धः पापदेशनास्कन्धः परिणामनास्कन्धश्च (अस्यां गणनाया सन्ति मतमतान्तराणि) ।

३. सूत्र गेयं व्याकरण गाथोदानावदानकम् ।
इतिवृत्तकं निदानं वैपुल्यं च सजातकम् ।
उपदेशाद्भुतौ धर्मौ द्वादशाङ्गमिदं वचः ॥
सारोत्तमा (आलोके समुद्धतम्, पृ० २८८ मिथिलासंस्कृणे १९६०) ।

४. आर्योपालिस्तावच्छूद्रजातावुत्पन्नः । बौद्धधर्मे प्रव्रज्य तेनार्हत्त्वं समधिगतम् प्रथमसंगीतौ तेनोपालिना विनयसूत्राणि संगीतानि ।

अथवा राजगृहे (समुपजातेन) 'पुरोज'-नामधेयेन ब्राह्मणेन पञ्चत्रिंशद्-व्याधकानधिकृत्य मिथ्या मार्गो देशितः, फलतः पञ्चत्रिंशच्छिरस्कमत्स्यरूपेण (सः) समुत्पन्नः । तदर्थमिदं (सूत्रं) देशितमिति केषुचन ग्रन्थेषूपलभ्यते, किन्तु रत्नकूटे[१] नास्तीदं वचनमिति ।

अस्याः (बोध्यापत्तिदेशनायाः) व्याख्यानं प्रयोजनादिना प्रकारचतुष्केणावगन्तव्यम् । कानि तानि (प्रयोजनादीनि)? पञ्चप्रकाराणि प्रयोजनादीनि । **अभिधेय**स्तावद् (आदिकर्मिकाणां) बोधिसत्त्वानाम् आपत्तयस्तच्छुद्धिकरणोपायश्च । **अभिधानं** तु ग्रन्थगतानि सर्वाणि वचनानि । **प्रयोजनं** हि (तासाम्) आपत्तीनां शुद्धिरेव । **प्रयोजन-प्रयोजनं** (प्रयोजननिष्ठा) तदुपायेन बुद्धत्वावाप्तिः । **सम्बन्ध**-स्तावदुपायोपेयभाव एव, यः खल्वर्थतो निर्दिष्टः ।

अयं संक्षेपार्थः-त्रिस्कन्धानां सप्त(स्कन्धानां) वा शुद्धिः, चत्वारि वा बलानि[२] । त्रिविधविवादादीनां चोद्य-**परिहाराश्च** सहैवावगन्तव्याः ।

तदयमुपदेशाभिप्रायः—आनन्तर्यादि(पञ्च)[३]महापातकान्यपि निरन्तरात्यन्तविप्रतिसारेण एभिश्चतुर्बलैः मासं वर्षं यावत्

---

१. अनेकसूत्राणामयं संग्रहग्रन्थः । लघुकायानामस्मिन् अष्टचत्वारिंशत्सूत्राणां सकलनं विद्यते । प्रस्तुतं तावत् त्रिस्कन्धसूत्रम् उपालिपरिपृच्छासूत्रान्तगतं विद्यत इति ।

२. प्रस्तुतं सूत्रं त्रिधा संगृह्यमाणमवलोक्यते-(क) त्रिस्कन्धेन (उपर्युक्तमेतत्),
(ख) सप्तस्कन्धेन, यथा—
वन्दन पूजन देशनतायानुमोदनाध्येषणयाचनताय ।
यच्च शुभं मयि संचित किञ्चिद् बोधये नामयमि अहु सर्वम् ॥
(भद्रचर्या, अवतंसक, देगे-सं० ४४ 'अ' पुटे, पृ० ३५९ ख १ ।
(ग) चतुर्भिर्बलैः (आश्रयबलं विदूषणाबलं प्रतिपक्षसमुदाचारबल प्रत्यापत्तिबलं च । द्र०-चतुर्धर्मनिर्देशसूत्रम्, दे-गे-सं० २४९ सूत्रं 'स'-पुटे पृ० ५९ ख, शिक्षासमुच्चयः मिथिलासंस्करणे, पृ० ८९।

३. पञ्चानन्तर्याणि कर्मावरणम्, तद्यथा-मातृवधः, पितृवधः, अर्हद्वधः, संघभेद, तथागतशरीराद् दुष्टचित्तेन रुधिरोत्पादनम् । द्र०-अ०को०भा० ४ ९६ पृ० ७२२, बौ०भा०सं० १९८७ ।

पञ्चभिरङ्गैः[१] सभूमिस्पर्शं (प्रणामेन) प्रतिदेशनया शुद्धलक्षणान्वितानि भवन्ति, शुद्धानि भवन्तीति ।

मध्ये (पापग्रस्ते) सति मासं यावत् (प्रतिदिनं) षड्वारं (प्रतिदेशयेत्) । क्षुद्रकाणां (पापकानां कृते) (प्रतिदिनं) त्रिषु यामेष्विति सप्त दिनानि (उपर्युक्तविधिना प्रतिदेशना) कर्तव्या । यदि आपत्तिसंस्पर्शाशङ्का स्यात्तदा धर्मैकाङ्गेन (प्रतिदेशना) विधेया । अयमेवोपदेशस्य (वास्तविकः) अर्थः ।

यदि पूर्वं **'एवं मया श्रुतम्'** इति तथा अन्ते (भगवतो भाषितमभ्यनन्दन्) इत्याद्यन्तयोः (वचनयोः) अभावान्नेदं बुद्धवचनमिति चेन्न, आर्यरत्नकूटधर्मपर्याय- शतसाहस्रिकासूत्रे निदानादिसर्वस्याभिहितत्वात् तत एव चांशतोऽस्य (त्रिस्कन्धसूत्रस्य) निर्गतत्वाद् अस्मिन् (त्रिस्कन्धसूत्रे) (एवं मया श्रुतमित्याद्यन्तवचनयोः) अभावान्नास्ति विरोधाख्यो दोषः ।

(यद्येवं) तर्हि (अत्र) आपत्तिमूलस्याभावात् कस्यापि प्रतिदेशना न ज्ञायेतेति चेत् ? इदं त्वस्य (ग्रन्थस्य) आद्यन्ताभ्यां (भागाभ्यां ज्ञातुं) शक्यते । पञ्चत्रिंशद्बुद्धानां निश्चित(संख्या)निर्धारणं, पूर्वोक्तानां पञ्चत्रिंशद्विनेयानाम् इष्टसम्पादनं च (तेषां) बुद्धानां नैकटयाभिप्रायेणैवेति । नेदमस्य तात्पर्यं यदत्रान्येषां (बुद्धानां) असमावेशो वा अन्येषु प्रणामाभावो वा । अस्मिन्नेव (ग्रन्थे) अग्रे 'इत्यादि'-वचनेन (पञ्चत्रिंशदतिरिक्त-बुद्धेष्वपि नमस्कारः) अभिहितः । नात्र दिशाविशेषेण प्रयोजनम्, अपि तु दीर्घायुष्ट्वान्निर्माणकायस्य तदनुकूलदिशासु विद्यमानत्वात् दशसु दिक्षु (विद्यमानसत्त्वानां) हितार्थं दशदिगाश्रयणाच्चात्र 'दशसु दिक्षु' इत्येवं (कथितम्) । नात्र अतीता अनागताश्च बुद्धाः साक्षिरूपेण समुद्धृताः, संवृतितो विरोधात् । अत्रोद्धृतानां सर्वेषां (बुद्धानां नाम्ना सह) तथागत इति (शब्दप्रयोगो) नास्ति, केवलं

---

१. पञ्चाङ्गानि तावद् द्वौ हस्तौ द्वौ पादौ शिरश्च ।

चतुर्भिः सहैव । अतश्च अर्थत एवं (सर्वैः सह तथागतशब्दस्य विद्यमानत्वं) ज्ञातव्यं मनसा चालमम्बितव्यम् । (शब्दशः तथागत-(शब्द)योगेन वचनविरोधः स्यात्, समस्तपदैः देशितत्वादिति ।

अत्र तावच्चतुर्भिर्बलैः पापदेशना कर्तव्या । यतो हि (भगवता) बुद्धेन 'चतुर्धर्मनिर्देश'[१]-अजातशत्रुकौकृत्यविनोदनसूत्र'[२]योश्च एतेषां चतुर्णां (बलानां) महती अनुशंसा कृता । इदं (सूत्रद्वयं) द्वयोर्बोधिसत्त्वयोः कृते समुपदिष्टम् ।

अत्र (त्रिस्कन्धसूत्रे) को नाम धर्मः ? इत्युपालिना पृच्छा[३] कृता । अयं तस्मिन् समये भगवतो बुद्धस्यान्तेवासित्वात् विनयवचनानि संगातुमुपालेर्निर्दिष्टत्वाच्च अर्हत्परिपृच्छयोक्तो विनयविनिश्चयः, यतो हि महायानापत्तिवस्तून्यनेन निर्धारितानि । अतः इदं (त्रिस्कन्धसूत्रं) विशिष्टं वचनम् । सामान्येनेदं रत्न-कूटमभिधीयते, त्रिस्कन्ध इत्यप्यभिधीयते । नमस्कार-प्रतिदेशनाद्यपरिमित- पुण्यस्कन्धादीनां (निर्देशकः) अयं लघुः त्रिस्कन्धः, न तु बृंहीयान्[४] । अत्र बोध्यापत्तिदेशनायां बोधेरभिप्रायस्तावन्महाबोध्यर्थकः । 'सत्त्व' इत्यवशिष्टं (पदम्) । अथवा बोध्या पातयतीति बोध्यापत्तिरिति तृतीयायाः प्रयोगः करणीयः । इमे हि आदिकर्मिकबोधिसत्त्वा अधिमुक्तिचर्याभूमिस्थिता (विनेय)-जनाः, न तु प्राथमभूमिका बोधिसत्त्वा इति ज्ञातव्यम् । अस्यामापत्तौ सत्यां दुर्गतौ गम्यते । अस्या आपत्तेः स्थूलायाः सूक्ष्मायाः पाराजयिक-दुष्कृतादुष्कृतानां[५] च क्रमः सूत्रस्यास्य

---

१. देगे-संस्करणम्, २४९ सूत्र, 'स' पुटे ।

२. देगे-संस्करणम्, २१६ सूत्र, 'छ' पुटे ।

३. देगे-संस्करणम्, ६८ रत्नकूटे, 'च' पुटे ।

४. बृहत्त्रिस्कन्धसूत्रं तावदेकमन्यत् सूत्रम्, तत्तु 'ये' तो० २८४ सूत्रसंग्रहान्तर्गतम् ।

५. सर्वासामापत्तीनां विषये आचार्यगुणप्रभकृत 'विनयसूत्रम्', तस्य टीका चेति नामकः संस्कृतग्रन्थोऽवलोकनीयः । पुनश्च द्रष्टव्यम्—आचार्यचन्द्रगोमिकृतः विंशति-संवरस्तस्य टीके च, बोधिसत्त्वभूमिः, शिक्षासमुच्चयः, आकाशगर्भसूत्र च । एतेषु पाराजयिकानां दुष्कृतानां च संख्यायां कश्चन भेदः समवलोक्यते ।

पूर्वभागाद् अन्येभ्यश्च (ग्रन्थेभ्यः) ज्ञातव्यः । प्रतिदेशनागतोपायाः सूत्रस्यास्यान्तिमे (भागे) विस्तरेणावसेयाः । इदं तावदापत्तीनां विशोधनमात्रम् । तासु आपत्तिषु सतीषु प्रतिदेशनैव विशुद्धिः । साऽपि द्विविधा—

(१) पारमार्थिकी प्रतिदेशना- (इयं) (अजातशत्रुः)कौकृत्य-विनोदनसूत्रानुसारं सर्वधर्मनिःस्वभावताचिन्तनमेव । इयं हि महाप्रतिदेशना । यथोक्तम्[१] :

ऋजुःस्थित्वा च सम्पश्येन्महती सैव देशना ।
द्रष्टव्यं भूततो भूतं भूतदर्शी विमुच्यते ॥

इत्युक्तम् ।

(२) सांवृतिकी प्रतिदेशना—इयं तावच्चतुर्भिर्बलैः सकौकृत्येन च मनसा सर्वं नमस्कारादिकं मायोपमबुद्धया करणीयमिति । (इयं हि) लघुप्रतिदेशना ।

एतदर्थं (सूत्रार्थम् उपालिना) निवेदिते सति भगवान् तेषां बोधिसत्त्वानामर्थाय रश्मिभिर्दशदिगवस्थितान् चतुस्त्रिंशद्बुद्धादीन् अनेकान् निमन्त्रयामास ।

अत्राकाशस्थितानां (बुद्धबोधिसत्त्वानामग्रे उक्तापत्तिकाः) बोधिसत्त्वाः सकौकृत्याः पूजां चित्तोत्पादं शरणगमनं नमस्कारात् प्रभृति पापदेशनं यावत् युगपत् कृत्वा सर्वपापैः सुविशुद्धाः (भूत्वा) प्रथमभूमिस्थिता अभूवन् । तदनु तदनुयायिनां तावत् विजने स्थाने मण्डलेन पूजया (पञ्चत्रिंशद्बुद्धानां) चित्रोपस्थानेन गुरूपदेश-

---

१. आचार्यो विमलकीर्तिस्तावदिदमुद्धरणं स्वकीये 'सकृत्प्रावेशिकनिर्विकल्पभावनार्थः' इति ग्रन्थे 'आर्यमहामोक्षदिशुनपुष्यक्रोकम्प्त्यपापं शोधनं नाम विहरति स्म' इत्यस्य ग्रन्थस्येति स्वीकृतवान्, किन्तु सूक्ष्मतयाऽन्वेषणेऽपि तदुद्धरण तत्र नोपलब्धम् । भोट-विद्वान् दग-पो रिन्पोछे स्वकीये मोक्षालङ्कारग्रन्थे तथा लोङ् छिन् रब् जम्पा-महोदयः स्वकीये गुरूपदेशनामके ग्रन्थे उद्धरणमिदं कर्मविशुद्धसूत्रमिति ग्रन्थस्येति लिखितवन्तौ, किन्तु सूत्रमेतन्नामकं क-ग्युरसंग्रहे दे-गे संस्करणे नैवोपलभ्यते ।

तश्चित्तोत्पादादिना सह प्रतिदेशनाकरणेन सर्वपापविशुद्धिर्भविष्यतीति । फलतश्च सम्यक्संबुद्धत्वमवाप्स्यते । अयमेवास्य विधिरिति ।

तद(नन्तरं) सर्वप्रथमं यथार्थप्रतिदेशना तावत् आश्रयबलेनैवं पापप्रतिदेशनम्—**'अहं अमुकनामा'** इत्यादिना अभिहितम् । इदमत्र ज्ञातव्यं यत् आश्रयभूतान् पञ्चत्रिंशद्बुद्धान् सम्पूज्य समभ्यर्च्य द्विविधबोधिचित्तोत्पादौ[1] विधेयः । तदनन्तरं द्वितीयतः शरणगमनं कर्तव्यम् । अत्र **'अहं अमुकनामा'** इति सामान्यतोऽपि (निर्देशे) विशेषतः स्वमसाधारणं नामोच्चारणीयम्, भीमसेनेषु महाभीमसेनवत् । न केवलं स्वयमेव, अपि तु अन्यैः कल्याणमित्रैर्ये आत्मानमुपकृतवन्तः, मातापितरौ यौ कृतज्ञताया भाजनभूतौ, अनन्तैश्च सत्त्वैः आगगनं व्यापिभिः सत्त्वैर्ये आत्मना उपकार्याः, तैः सर्वैः सह शरणं गन्तव्यम् । कस्मिन् ? **बुद्धा**दिषु । कथम् ? वाचा चित्तेन च । (इत्येवं) शरणगमनस्वरूपादिकमपि ज्ञातव्यम् ।

अत्र **बुद्ध**स्य (तात्पर्यद्वयम्)–शास्ता फलप्राप्तश्च यश्च त्रिकायात्मकः । इदं तावद् अस्माकं तच्**छरण**गमनस्य तात्पर्यम् यद् (बुद्धया) तन्निर्भरत्वं नाम । नमस्कारार्थोऽप्यत्र कायवाक्चित्तैस्तथैव सुनियतत्वं नाम । तथैव **धर्मो**ऽपि पर्याप्ति (परियत्ति)–प्रतिपत्तिभेदेन (द्विविधः) । सोऽपि आगमाधिगमपरमार्थात्मकः, हेतुफलात्मक (इत्यर्थः) । **संघो**ऽपि प्रतिपन्नकाश्रयाभेद्यार्थकत्वेन संघ (उच्यते) । सोऽपि श्रावक–प्रत्येकबुद्ध–बोधिसत्त्वसंघ इति (त्रिविधः) । अत्र तु बोधिसत्त्वसंघ इति अवैवर्तिकसंघ एवाभिप्रेतः ।

इत्येवम् आश्रयबलं प्रतिपाद्य इदानीं विदूषणासमुदाचारबलेन पापदेशनार्थं **तथागते**त्याद्युक्तम् । तदपि पापवस्तुप्रतिदेशनाङ्गत्वेन पञ्चत्रिंशद्बुद्धेषु नमस्करणमेव, अनेन पापशुद्धिर्भवतीति । तत्र (क्रमेण) आगामिनः सर्वे बुद्धाः सम्मुखागता रत्न–सिंह–पद्म–

---

१. तद्बोधिचित्तं द्विविधं विज्ञातव्यं समासतः ।
बोधिप्रणिधिचित्तं च बोधिप्रस्थानमेव च ॥ (बोधिचर्यावतारः १ : १५)

चन्द्रासनेषु (विराजिताः) प्रव्रजितनिर्माणकायाः लक्षणानुव्यञ्जन-प्रभायुक्ताः कायवर्ण-क्षेत्र-दिग्दिगन्तर-चीवरायुधादीन् धारयित्वा वज्रपर्यङ्कमुद्रास्थिता विविधपर्षद्भिः सह बुद्धाः वक्ष्यमाणक्रमेण मध्यभागत आरभ्य क्रमशः दशसु दिशासु विराजमाना आलम्बनीयाः। (तानभिलक्ष्य नमस्कारादि करणीयम्) । तदपि (कल्पनया) अनेककायान् निर्माय वाक्चित्ताधिमुक्त्या तच्चरणेषु नमस्करणीयमिति । अथवा मन्दप्रज्ञाः (तथाविधालम्बनभावनायामसमर्थाः) (पुरुषा) अपि एकमुखः द्विहस्तः धर्मदेशना (मुद्राविराजितः) पिण्डपातार्थं चारिकां चरन् वा भूमिस्पर्शादिमुद्रास्थितो वा बुद्धः इति विदित्वा सर्वांश्च (बुद्धान्) श्वेतवर्णादीन् यथारुचि समानवर्णान् विदित्वा नमस्करणीयाः। एतेष्वस्माकं शास्ता प्रमुखः । एनं विहाय शेषाः (अन्ये बुद्धाः) अनेककल्पपर्यन्तं विराजन्त इति ज्ञातव्यम् ।

एतेषु प्रथमं तावन्मध्ये विराजमानस्य लोकपतेर्बुद्धस्य गुणा(नाख्यातुं) तथागतेत्याद्याह । (तथागत-तात्पर्य) शब्दबलेन तथता-(अधिगम)-वानित्युक्तम्, तथताधिगमलीनत्वात् पुनरागतत्वाच्च (तथागत इत्युच्यते) । अत एव स सर्वेभ्यः (आर्यपुद्गलेभ्यो देवेभ्यश्च) विशिष्ट इति । क्लेशज्ञेयावरणारीणां हन्तृत्वाद् **अर्हन्** इति । अनेन बोधिसत्त्वेभ्यस्तस्य वैशिष्ट्यं (प्रर्दिशतम्) । **सम्यगि** ति अविपरीतम् । अनेन संसाराद् हीनयानाच्च (वैशिष्ट्यं प्रतिपादितम्) **सम्पन्न** इति सम्भारद्वयेन स्व-परार्थ-(सम्पद्भ्यां च सम्पन्नं) कायद्वयमिति । प्रहाणस्य ज्ञानस्य च भेदद्वयेन **बुद्धो** भवतीति । आभ्यां तावत् संसारनिर्वाणस्थितेभ्यः सर्वपुद्गलेभ्यो विशिष्टः (बुद्धः) प्रदर्शितः, **शाक्यमुनि**रिति तदर्थः । (अर्थतः) तज्ज्ञानं सामर्थ्यं गुणाश्चैव (बुद्धत्वम्) । **'शा'** इति ज्ञानम्, अशेषज्ञानमित्यर्थः । **'क्य'** इत्यवबोधः । **'मुनिः'** इत्यद्वयतया युक्तत्वम् । मुनिः (शाक्यः) इति वा शाक्यराजवंशे जातत्वाद् दोषजन्मनां विजेता इति । एतत्तावत्तत् कारित्रम् । गुणेन शाक्य-(शब्द)स्य (तात्पर्यम्) अतिविशिष्टमिति ।

कायवाक्चित्तानाम¹- साधारणसंवरेण स मुनिः । तस्मै नमस्कार इति त्रिभिर्द्वारैः श्रद्धाप्रसादयोगेन नमस्करणम् । अयं (बुद्धः) मध्यासनासीनः पीत(वर्णः) धर्मोपदेशमुद्रान्वित इत्यवगन्तव्यम् ।

पूर्ववत् पञ्च विशेषणानि तिस्रश्च व्याख्याः पश्चाद् आगामिभिः (सर्वबुद्धैः) च सम्बद्धा इत्यवबोध्यम् । ज्ञानादीनां तात्पर्यं दृष्टान्त-(बलेन) अर्थबलेन च शब्दद्वयेन एकेन वा व्यक्तीकरिष्यते ।

(२) उपरिष्टाद् गगनगर्भ(बुद्ध)-क्षेत्रे स्थितः नील(वर्णः) (हस्तयोः)धृतवज्रद्वयः, (स च तथागतः) **वज्रगर्भप्रमर्दी** इति । अत्र **'वज्रम्'** इति वज्रोपमं निर्विकल्पकं ज्ञानम् । तच्च सर्वगुणोत्पत्तिस्थानत्वाद् **'गर्भः'** इत्यपि । क्लेशादीनां सर्वेषां (विपक्षावरणानां) प्रहाणं तत्कारित्रम् ।

(३) पूर्वस्यां दिशि रत्नभव(बुद्ध)-क्षेत्रे (तथागतः) **रत्नार्चीः** श्वेत(वर्णः) (द्वाभ्यां कराभ्यां क्रमशः) वज्रं सूर्यं च धारयन् विराजते । अत्र **रत्नमि**ति रत्नवत्सर्वविध-(प्रातिहार्यादि)-बलान्वितत्वात्, तदिदं (एतेषां) गुणः । **अर्चिरि**ति ज्ञानप्रकाशः । तत्स्वभावस्य स्फुटत्वात्तेन अज्ञानान्धकारोऽपनीयते । तदेवं **अर्चिस्ता**वत्तत्कारित्रमिति । येन सर्वसत्त्वानाम् अज्ञानं दूरीक्रियते ।

(४) (तथागतः) **नागेश्वरराजः** दक्षिणपूर्वदिशायां नागव्याप्तस्य (बुद्ध)क्षेत्रस्य (शास्ता) भवति । (अयं) नील(वर्णः) (द्वाभ्यां हस्ताभ्यां क्रमशः) नागलतां नीलसर्पं च धारयति । **नाग** इति ज्ञानम् । यथा नागे शैत्यं दुष्टत्वं च भवति तथैव ज्ञानमपि क्लेश(सन्ताप)-रहितं निमित्तानां विनाशकमिति । ऐश्वर्यं हि (तेषां) कृत्यम्, येन सर्वगुणाधिपतित्वं निर्वाह्यते । **राजे**ति तद्गुणः, येन राजेव सर्वेषु प्रतापवान् मनोज्ञः निर्भयश्च ।

---

१. काये तावद् द्वात्रिंशन्महापुरुषलक्षणानि अशीत्यनुव्यञ्जनानि च भवन्ति । वाचि षष्टिः ब्रह्मस्वराणि, चित्ते च सप्तविंशतिः कर्मगुणा इति ।

(५) (तथागतः) **वीरसेनः** दक्षिणस्यां दिशि वीरवत्यां (बुद्ध)-भूमौ (शास्तृत्वेन तिष्ठति) । पीत(वर्णः) स (द्वाभ्यां हस्ताभ्यां क्रमशः) पुस्तकं खड्गं च धारयन् विराजते । **वीर** इति ज्ञानम्, यन्निर्द्वन्द्वम् अदम्यं च । अथवा वीरेति कर्म, येन सत्त्वानां सर्वविधसांसारिकरणानां विनाशः क्रियते । **सेने**ति गुणः । अयं हि अनेकगुणगणान्वित इति ।

(६) दक्षिणपश्चिमायां दिशि नन्दवती(बुद्ध)क्षेत्रे (तथागतः) **वीरनन्दी**[१], पिङ्गल(वर्णः) (हस्तद्वये क्रमशः) सूर्यं रक्तपद्मं च धारयन् (विराजते) । अत्र **वीरेति** ज्ञानं कर्म च । (अर्थस्त्वस्य) पूर्ववदवगन्तव्यः । **नन्दनं** (एतेषां) गुणः । करुणान्वितेन मनसा इमे सत्त्वहिताय प्रवृत्ताः सन्तीति ।

(७) (तथागतः) **रत्नाग्निः** प्रतीच्यां (दिशि) आभासवती(बुद्ध-)क्षेत्रेऽस्ति (शास्ता) । रक्त (वर्ण)-मणिरत्नम् अग्निमण्डलं च (हस्तयोः क्रमशः) धारयन् विराजते । **रत्नमि**त्यत्र ज्ञानम् । (येन रत्नवद्) कल्पनारहितेन अर्थाः प्राप्यन्ते । अथवा रत्नं (एतेषां) गुणः, (येन) समाध्यादयः सर्वाः लोकोत्तरसम्पत्तयः प्राप्यन्ते । **अग्नि**रिति (तेषां) कारित्रम्, (येन) ते ज्ञानेन महता वीर्येण च सत्त्वहितं प्रसाध्य क्लेशादींश्च दहन्ति ।

(८) (तथागतः) **रत्नचन्द्रप्रभः** शुक्ल(वर्णः) पश्चिमोत्तरदिशायां सुप्रभे (बुद्ध-)क्षेत्रेऽस्ति (शास्ता) । (हस्तयोः) रत्नं चन्द्र-(मण्डलं) च धारयति । **रत्नम**त्रापि पूर्ववदेतेषां गुणः । **चन्द्रश्च** (चैतेषां) ज्ञानमिति । ज्ञानमस्य परिपूर्णं अत्यन्तशीतलं प्रकाशमानमित्यर्थः । प्रभा चैतेषां कारित्रम् । कर्माणि क्लेशादींश्च (आवरणानि) अपकृष्य धर्मतां प्रकाशयतीत्यर्थः ।

---

१. सर्वेषु च भोटसंस्करणेषु 'श्रीनन्दिन्' इति पाठ प्राप्यते, सस्कृतमूलग्रन्थे 'वीरनन्दिन्' इति पाठः । अतस्तदनुसारमत्र 'वीरनन्दिन्' इति पाठ शुद्धं ज्ञात्वा परिगृहीतः ।

(९) (तथागतः) **अमोघदर्शनः** हरित(वर्णः) उदीच्यां दिशि दुन्दुभिघोषे (नाम बुद्ध–)क्षेत्रे (विराजते) । (अयं हस्तद्वयेन) बुद्धचक्षुर्द्वयं धारयति । **दर्शनमि**त्येषां ज्ञानम्, अनावरणज्ञानमित्यर्थः । अथवा दर्शनमेतेषां गुणः । ते महाप्रज्ञाकरुणानेत्राभ्यां धर्मतां प्रकाशयन्ति सत्त्वहितं च साधयन्तीत्यर्थः । **अमोघ**श्चैतेषां कारित्रम्, येन ते सर्वसत्त्वान् अभ्युदयनिःश्रेयसफलयोर्नियमेन स्थापयन्ति ।

(१०) (तथागतः) **रत्नचन्द्रः** पूर्वोत्तरदिशायां मरीचिकानाम्नि (बुद्धक्षेत्रे तिष्ठति) । (अयं) हरितश्वेत(वर्णः) (हस्तयोः) रत्नं चन्द्रं च धारयन् बुद्धः एवास्ति । रत्नमित्येतेषां गुणः । **चन्द्र** इति ज्ञानम्, यच्चैतेषां कारित्रम् । (अर्थस्त्वस्य) पूर्ववदवगन्तव्यः ।

(११) तदनन्तरं (तथागतः) **निर्मलः** भस्मव्यापिनि (बुद्ध–)क्षेत्रे (विराजते) । (अयं) धूम(वर्णः) भस्म(वर्णो) वा । (हस्तयोः क्रमशः) निर्मलादर्शद्वयं धारयन् तिष्ठति । **निर्मल**मित्यत्र ज्ञानम्, यच्चावरणप्रहाणं (करोति) । अन्यान् (सत्त्वान्) निर्मलीकर्तुमस्ति तत्सामर्थ्यम् । आगन्तुकमलीमसबलादि–रहितत्वादत्यन्त–प्रकाशितत्वं (तेषां) गुणः । एभ्यः पूर्ववन्नमस्कारो विधेयः । प्रथमं दशकम् ।

(१२) शूरदत्त इत्यादिना द्वितीयं दशकम् । तथागतः **शूरदत्तः** शुक्ल(वर्णः) ऊर्ध्वदिशायां श्रीवत्सनामके बुद्धक्षेत्रे (विराजते) । इमे (द्वाभ्यां हस्ताभ्यां) पत्रफलयुक्तं श्रीफलवृक्षं धारयन्ति सत्त्वार्थं च कुर्वन्ति । अत्रेमान् ऊर्ध्वमासने विराजमानान् विचिन्त्य स्वतः नमस्कारकरणेन पापानि विशुध्यन्ति । अत्र **'शूरः'** इत्यनेनायं अद्वयज्ञानद्वारा सर्वविकल्पप्रहायक इत्यभिप्रेतः । अथवा शूर इति तद्गुणः । इमे परेभ्यः सर्वसुखोपकरणानि सर्वदा अनिर्बाधं वितरन्ति । **'दत्त'** इत्यनेन तत्कार्याणि प्रदर्श्यन्ते । (इमे) त्रैधातुकेभ्यः सर्वसत्त्वेभ्यः यथाभिलषितवस्तुप्रदानं कुर्वन्ति । एभ्यस्त्रिभिः (काय–वाक्–चित्त–) द्वारैः सप्रसादं नमस्कारः करणीयः ।

(१३) (तथागतः) **ब्रह्मा** पूर्वदिशायां विगतावरणनामके (बुद्ध)क्षेत्रे (तिष्ठति) । पिङ्गलवर्णोऽयं (द्वाभ्यां हस्ताभ्यां क्रमशः) पद्मं सूर्यं च धारयन् (विराजते) । अत्र सर्वावरणरहितं ज्ञानमेव ब्रह्म । अथवा (अयं) सर्वसत्त्वानां सांसारिक(मल)-शोधकत्वाद् ब्रह्मवद् **"ब्रह्मेति"**, (इदं) (मलशोधनम्) एव तत्कारित्रम् । अथवा ब्रह्मेति स्व-परविशुद्धिकारकाणां अपरिमितगुणानां योगादयं (तथा) ब्रह्मेत्यभिधीयते । (अयमेव) तद्गुणः ।

(१४) (तथागतः) **ब्रह्मदत्तः** दक्षिणपूर्वदिशायां अशोकनामके (बुद्धक्षेत्रे) (शास्ता) विद्यते । पीत(वर्णः)अयं (द्वाभ्यां हस्ताभ्यां क्रमशः) चन्द्रं पद्मं च धारयन् (विराजते) । अत्र **ब्रह्मे**ति तज्ज्ञानं गुणश्च । एतयोर्व्याख्यानं पूर्ववद् (अवगन्तव्यम्) । तेन (गुणेन) सर्व-सत्त्वेभ्यो विशुद्धसुखप्रदातृत्वं नाम तत्कारित्रम् ।

(१५) (तथागतः) **वरुणः** दक्षिणदिशायां विमले (बुद्ध)क्षेत्रे (तिष्ठति) । नील(वर्णो)ऽयं जलमण्डलमध्ये धर्मचक्रमुद्रया(विराजते) । वरुणेन (जलेन) तज्ज्ञानं द्योत्यते, यदत्यन्तं विमलं स्वच्छं च । अथवा (जलमिति) तत्कारित्रम् । अर्थात् महाकरुणया (अयं) सत्त्वसन्ततिं सद्धर्मेन आर्द्रयति । (अत) एव तज्जलम् । देव इति गुणवाचकः (शब्दः) शक्ति-ऋद्ध्यादिभिश्च युक्तः ।

(१६) (तथागतः) **वरुणदेवः** दक्षिणपश्चिमदिशायां आभावत्यां (बुद्धक्षेत्रे) (शास्ता) । (अयं हि) श्वेत(वर्णः) । द्वाभ्यां (हस्ताभ्यां क्रमेण) मण्डलम् आदर्शं च धारयन् (विराजते) । अत्र जलेन (अर्थाद्) **वरुणेन** तज्ज्ञानम् (अभिधीयते)। पूर्ववदस्य (व्याख्यानम्) । **देव** इति तत्कारित्रम्, ऋद्ध्यादिभिः सर्वसत्त्वार्थकरणम् । अयमपि **'देव'**—शब्दः गुणवाचकः ।

(१७) (तथागतः) **भद्रश्रीः** पश्चिमदिशायां सुखावतीक्षेत्रे (तिष्ठति) । रक्तवर्णोऽयम् । (द्वाभ्यां हस्ताभ्यां क्रमशः) पद्मं कल्पवृक्षं च धारयन् (विराजते) । (अत्र) **श्रीरि**ति तद्गुणः, स च

स्व-परार्थसम्पद् । **भद्रे**ति ज्ञानं कारित्रं च, तच्चानुत्तरज्ञानमिति । एभिः नैर्वाणिक-भद्रमार्गेण परे (विनेय-) जना निर्वाणाभिमुखमाकृष्यन्ते ।

(१८) (तथागतः) **चन्दनश्रीः** उत्तरपश्चिमदिशायां सुगन्धव्यापिनि (बुद्धक्षेत्रे) (शास्ता) । (अयं हि) पिङ्गल(वर्णः), (हस्तयोश्)चन्दनवृक्षं श्रीफलं च धारयन् विराजते । तज्ज्ञानमेवात्र **चन्दनम्**, अनेन अविद्यादिसन्तापमपसार्य शीतलीकरणात् अथवा चन्दनमिति तद्गुणः, बलादिगुणेन सर्वत्र व्यापनात् । **श्री**रित्येतस्य कारित्रमर्थः, अस्य व्याख्यानं पूर्ववदवगन्तव्यम् ।

(१९) (तथागतः) **अनन्तौजाः** रक्त(वर्णः), उत्तरदिशायां तेजस्वत्यां (बुद्धक्षेत्रे) (शास्ता) विद्यते । (अयं द्वाभ्यां हस्ताभ्यां क्रमशः) सूर्यमण्डलद्वयं धारयन् बहुलैरनुयायिभिः परिवृतो विराजते । तज्ज्ञानमेवात्र**ौजः** । प्रभास्वरज्ञानेन विपरीतं (अन्धकारं) प्रकाशीकुर्वन् तथाप्रभावक्षमः । **अनन्ते**ति तत्कर्माणि गुणाश्च, तैश्च असंख्यसत्त्वानां कल्याणं भवतीति । (स च) अपरिमितैः रूप्यरूपिगुणैः समन्वितः ।

(२०) (तथागतः) **प्रभासश्रीः** श्वेत(वर्णः) । स चोत्तरपूर्वदिशायाम् अमोघवत्यां (बुद्धक्षेत्रे) (शास्ता) विद्यते । (स आत्मनः करकमलयोः) श्वेतप्रभामण्डलं धारयन् जीवनं च यापयन् विराजते । **प्रभास** इति तज्ज्ञानम् । सूर्यसदृशेन तज्ज्ञानेन स्वपरक्लेशज्ञेयावरणान्धकारं दूरीभवति । **श्री**रिति तद्गुणाः कर्माणि चेति । तान्यपि पूर्ववद् द्विविधानीत्यवगन्तव्यम् ।

(२१) (तथागतः) **अशोकश्रीः** (वर्णेन) श्वेतनीलः । अधोदिशायाम् आवरणविगते (बुद्ध)-क्षेत्रे (सः) (शास्ता) । (हस्ताभ्यां) अशोकविटपं धारयन् विराजते । **अत्राशोक** इति ज्ञानम्, यत् संसारापगतम् आवरणरहितं च । अथवा (अशोकेति) तत्कारित्रम्, समस्तसत्त्वानां शोकात् संसारदुःखान्मोचकत्वात् स

(शोक–) रहित इत्यभिधीयते । **श्री**रिति तद्गुणः । एभ्यस्त्रिभिर्द्वारैः प्रसादयुक्तेन (मनसा) नमस्कारः करणीयः । [इदं द्वितीयं दशकम्]

(२२) इदानीं तृतीयं दशकमारभ्यते । ऊर्ध्वदिशायां तृष्णाविगते (बुद्ध) क्षेत्रे **नारायणः** (शास्ता) भवति । (स च) नील(वर्णः) (हस्ताभ्यां) मेरुं पद्मं च धारयन् धर्मचक्रमुद्रया स्थितः सन् परिवारजनेभ्यः (शिष्येभ्यः) धर्ममुपदिशन् सत्त्वान् यापयति । अत्रापि नारायणो नाम तज्ज्ञानम्, यत् सर्व(विध)कल्पनारहितमिति । (सर्व)सत्त्वानां संसारासक्तितृष्णाभ्यां मोचने (सदा) तत्परत्वं तत्कारित्रम् । अपत्य इति बुद्धः । यस्तदुत्पन्नः मैत्र्यादिगुणयुक्तश्च । (अत एव) अपत्यः **पुत्र** इति वाऽभिहितः ।

(२३) (तथागतः) **कुसुमश्रीः** पूर्वदिशायां कुसुमविकासनामके (बुद्ध)क्षेत्रे (शास्ता) भवति । (अयं) पीत(वर्णः) । (हस्ताभ्यां क्रमशः) पीतकुसुमं श्रीफलं च धारयन् विराजते । तद्गुणसम्पल्लक्षणैः सुशोभितं व्याप्तं च । **कुसुम**वत्तज्ज्ञानं विकसितम् । **श्री**रिति तत्कारित्रम् । ते तथाविधया श्रिया सम्पत्त्या च समन्विता इति ।

(२४) दक्षिणपूर्वदिशायां ब्रह्मव्यापिनि (बुद्धक्षेत्रे) **ब्रह्मज्योतिर्विक्रीडिताभिज्ञो नाम तथागतः**, श्वेतवर्णश्च । (स एकेन करेण) पद्मम् अपरेण च प्रकाशपुञ्जं धारयन् (विराजते) । अत्रापि तथागत(शब्दस्य) अर्थः पूर्ववत्, अर्हन्नादयोऽपि पूर्ववदेव द्रष्टव्याः । (सूत्र)मध्ये बुद्धद्वयेन सह तथागतविशेषणयोगः, अतः पूर्ववर्तिषु पश्चाद्वर्तिषु च (सर्वबुद्धेषु विशेषणमिदम्) अवगन्तव्यम् । अत्र ब्रह्मेति ज्ञानम् प्रकाशबलं च, यतो हि स अत्यन्तं **ज्योतिष्मान्** बलान्वितश्च । **विक्रीडितेति** तत्कारित्रम्, यतो हि ऋद्ध्यादिभिः सत्त्वार्थः साध्यते । चित्तेन ज्ञानेन वा (हितादि–) कार्याणां स्फुटम् उपायावगमः **'अभिज्ञा'** इति ।

(२५) दक्षिणदिशायां पद्मावत्यां (बुद्ध–)क्षेत्रे **पद्म–ज्योतिर्विक्रीडिताभिज्ञस्तथागतो** विराजते । स रक्त(वर्णः) (हस्ताभ्यां) पद्मं सूर्यं (मण्डलं) च धारयन्त्या मुद्रया तिष्ठति । अत्र **पद्ममि**ति तज्ज्ञानम्, यत् पद्मस्य (जलस्य पङ्कस्य च) दोषेण निर्लिप्तं विरजस्कं विकसितं च । **ज्योति**रिति तद्गुणः । **विक्रीडिते**त्यादि तत्कारित्रम् ।

(२६) दक्षिण–पश्चिमदिशायां मणिवर्तने (नाम बुद्ध)क्षेत्रे (तथागतः) **धनश्रीः** शुक्लप्रकाशयुक्तः रक्तवर्णश्च (तिष्ठति) । यः खलु (हस्तयोः) मुद्रया रत्नद्वयं धारयन् (विराजते) । अत्र **धनमि**ति ज्ञानम्, यच्चाक्षयं महाज्ञानमभिधीयते, तच्च चिन्तामणिगुण इव महागुणान्वितं च । (अतः) सर्वेच्छापरिपूरणं तावत् तत्कारित्रम् । **श्री**रिति गुणः । सा(श्रीः) द्विविधा ।

(२७) पश्चिमदिशायां प्रभावती (नामके) (बुद्ध)–क्षेत्रे (तथागतः) **स्मृतिश्रीः** (शास्ता) पीत(वर्णः) । (हस्ताभ्यां क्रमशः) पुस्तकं खड्गं च (धारयन् विराजते) । अत्र **स्मृतिरि**ति तज्ज्ञानम्, अविस्मृतमहाज्ञानधारण्या समन्वितत्वात् । अथवा स्मृतिरेव तेषां (प्रमुखः) गुणः, अचिन्त्यविमुक्तिगुणान्विततत्वाच्च । **श्री**रेव तत्कारित्रमपि ।

(२८) पश्चिमोत्तरदिशायां अनिमित्त (बुद्ध–) क्षेत्रे हरित(वर्णः) (तथागतः) **सुपरिकीर्तितनामधेयश्रीः** । हस्ताभ्यां तथागतोष्णीषं स्वशिरसि धारयन् (विराजते) । **नाम**धेयेति तज्ज्ञानम्, अक्षयं ज्ञानं बिभ्राणास्ते (विद्यन्ते) । श्रीरिति तत्कर्म । **सुपरिकीति**तेति तद्गुणः । (समस्तेषु) लोकधातुषु प्रथितत्वमेव सुपरिकीर्तितत्वम् ।

(२९) उत्तरदिशायाम् इन्द्रप्रभ (बुद्ध–) क्षेत्रे पीत–(वर्णः) (तथागतः) **इन्द्रकेतुध्वजराजः** (स्वीयहस्ताभ्यां क्रमशः) रत्नकेतुं ध्वजं च धारयन् (विराजते) । **इन्द्रकेतु**रिति तज्ज्ञानम् ।

यथेन्द्रियैर्विषयाः परिज्ञायन्ते, तथा तज्ज्ञानेन धर्मताऽवगम्यते तया च सुशोभितत्वात् स केतुरिति । **ध्वज** इति तद्गुणः समस्तसत्त्वेभ्यः संसारविजयदायकगुणेन युक्तत्वात् । **राजे**ति तत्कर्म, यत् सर्वं कृत्यं निष्पादयति ।

(३०) उत्तरपूर्वदिशायां लीलावत्यां (बुद्ध-) क्षेत्रे श्वेत (वर्णः) (तथागतः) **सुविक्रान्तश्रीः** भूमिस्पर्शमुद्रया स्थितः । **'सु'** इति तज्ज्ञानम्, तच्च सम्यग्ज्ञानमिति । **विक्रान्ते**ति तत्कर्म, येन सर्वसत्त्वानां मारदमनं क्लेशदमनं च सम्पाद्यते । **श्री**रिति तेषां गुणः । (तद्व्याख्यानं) द्विविधं पूर्ववदेव ।

(३१) अधःस्तन्यां दिशायाम् अक्लिष्ट(नामके) (बुद्ध-) क्षेत्रे श्याम (वर्णः) (तथागतः) **विजितसंग्रामस्तिष्ठ**ति । (स हस्ताभ्यां) कवचं खड्गं च धारयन् (विराजते) । **संग्रामविजय** स्तावदेतेषां कर्म, (अनेन) सर्वसत्त्वानां कर्म-क्लेशसंग्रामो विनिवार्यते । **'वि'** इति तज्ज्ञानम्, विजेतृत्वं च तद्गुणः स्व-परसंसारविजयक्षमत्वात् ।

(३२) एभ्यः पुनः (उक्तेभ्यो बुद्धक्षेत्रेभ्यः) **बहिर्भागे** पूर्वदिशायां श्रीवत्से (बुद्ध-) क्षेत्रे (तथागतः) **विक्रान्तगामी** (शास्ता) श्वेत (वर्णः) भूमि-स्पर्श(मुद्रया) अभयमुद्रया च (विराजमानोऽस्ति) । **विक्रान्ते**त्यनेन तत्कारित्रं (प्रदर्श्यते) । पूर्ववदेवास्य व्याख्यानम् । **गामीति** तज्ज्ञानम्, यच्च पर्यन्तावबोधः । **श्री**रिति तद्गुणः पूर्ववत् ।

(३३) दक्षिणदिशायाम् अवभासव्यूहनामके (बुद्ध-) क्षेत्रे (तथागतः) **समन्तावभासव्यूहश्रीः** पीत (वर्णः) (स्थितः) । (स्वीयहस्ताभ्यां क्रमशः) सूर्यं रत्नदण्डं च धारयन् (विराजते) । **समन्तावभासे**ति तत्कर्म, यतो हि तेन ज्ञानेन सत्त्वानाम् अविद्याया निवारणं क्रियते । **व्यूहे**ति तज्ज्ञानम्, यदपरिमितं (परिपूर्णं) च । **श्री**रिति गुणवैशिष्टचम् ।

(३४) पश्चिमायां खलु दिशायां श्रीवत्से (बुद्ध–) क्षेत्रे (तथागतः) **रत्नपद्मविक्रामी** रक्त (वर्णः) (तिष्ठति) । (हस्ताभ्यां क्रमशः) मणिरत्नं पद्मं च धारयन् (विराजते) । अत्र **रत्ने**ति तद्गुणः । **पद्मे**ति तज्ज्ञानम्, यच्च मलरहितम् । **विक्रामी**ति तत्कारित्रम्, पूर्ववदस्य व्याख्यानम् ।

(३५) उत्तरदिशायां रत्न(भूमिबुद्ध)–क्षेत्रे **रत्न पद्मसुप्रतिष्ठितशैलेन्द्रराजः तथागतः अर्हन् सम्यक्संबुद्धः** विराजमानो यापयति । पद्मं सिंहः रत्नं चन्द्रश्च तेषामासनम् । तेषां (वर्णः) आकाशवन्नीलम् । स हस्ताभ्यां मेरुपर्वतमुत्थाप्य धारयति ।

(अनेन प्रकारेण) आवाहनं कृत्वा प्रतिदेशना करणीया । साधकः तथा (सपरिवारान् सर्वबुद्धान् सम्मुखस्थान्) विदित्वा प्रतिदेशयेत् । **तथागते**त्यादिपदानामर्थः पूर्ववदवगन्तव्यः । अत्र **रत्न पद्मे**त्याद्यासनैः तद्गुणः कार्यं ज्ञानं च प्रदर्श्यन्ते । अत्र अन्येभ्य एतेषामासन (वैशिष्टचमपि) ज्ञातव्यम् । क्वचिच्चन्द्र इत्यप्युपलभ्यते तेन तत्कर्मेति ज्ञातव्यम् । किन्तु (पद्ममिति) सर्वेषां (बुद्धानां) सामान्येनासनम् । **शैलेन्द्रे**ति तज्ज्ञानं गुणश्च । पर्वतराज इव तेषामचलं ज्ञानम्, मेरुरिव च तद्गुणः । **राजे**ति तत्कारित्रम् । तेभ्यः श्रद्धया त्रिभिः (कायवाक्चित्तैः) नमस्कारो विधेयः । इमे (सर्वे) पदार्थाः । सर्व एवेमे बोधिसत्त्वेभ्यः औपचारिकमात्रम् आपत्त्यभावात् । अनागतानां कृतेऽयमपवादः । (एवं) विचारयन् प्रतिदेशयेत् ।

तदित्थं नमस्कारव्याख्यानसमनन्तरमिदानीं तेषां सर्वेषां समक्षं देशना (विधेया) । तदर्थमेषां बुद्धानां स्वाभिमुखं ध्यानाकर्षणार्थं प्रार्थना **'एवं प्रमुखे'** त्यादिना कथिता । अत्र (प्रतिदेशना–काले) आत्मनः जानुद्वयं भूमौ प्रतिष्ठाप्य हस्ताभ्यां शिरसि अञ्जलिं बद्ध्वा सादरं (पूर्वोक्तं) कथयित्वा तान् स्वसाक्षिणः अवगच्छेत् । अत्र एवमिति पञ्चत्रिंशद् (बुद्धा) एव ।

(एवमिति) अनेन विनेयान् प्रति ध्यानाकर्षणमेव । अन्यत्र (प्रमुखेति) आदिना तेषां सर्वेषां साक्षीकरणं नाम । पूर्वेत्यादिना समस्तलोक(व्यापिन्यः) **दशदिशः** (प्रदर्श्यन्ते) । आकाशव्यापिनः सर्वे बुद्धा आलम्बनीयाः । **तथागते**त्यादीनामर्थः सुगमः । **"यावन्तः"** इति संख्याया असंख्येयत्वमिति । **'यापयन्ति'** इति महाकृपया (सर्वदा) सत्त्वानामवलोकनं पालनं चेति । **'ध्रियन्ते'** **'तिष्ठन्ति'** इति यावत्संसारमवस्थानम् । भगवन्त इति सौभाग्यशालित्वं चतुर्मारदमनं[१] चेति । **'ते'** इति सर्वे पञ्चत्रिंशद् (बुद्ध-)आदयः । **'माम्'** इत्यत्र स्वनामोच्चारणं कर्तव्यम् । 'समन्वाहरतु' इत्यनेन चित्तान्यथात्वं न भवेदित्येतदर्थम् अध्येषणा ।

द्वितीयदेशनायाः कालदृष्ट्या निर्देशं कर्तुं **'मया** (अस्यां) जातौ' इत्यादिकमभिहितम् । "मया" एतावत्कालपर्यन्तमेतावत् पापं कृतम् इत्येवं मनसि विचिन्त्य कौकृत्यमनुभवितव्यम् । अत्र **'अस्यां जातौ'** इति इह जन्मनि कृतपापानां स्मरणमिति । ततः पूर्वमतीतमुपादायापरिमितानादिकालपर्यन्तं संसारः । अनादिकाल इति सामान्यतया सांसारिकाणां जीवानामाकाशवदनन्तत्वं नाम । तत्र संसरणमिति चक्रवत् पुनः पुनरुत्पादविनष्टत्वमिति । तदपि यथा पूर्वजन्मसु संसरणं तथैव इह जन्मन्यनागते चापि जन्मनि (संसरणम्) इति । **'अन्यासु वा जातिषु'** इत्यनेन तिर्यगादिषड्योनिषु (जन्मग्रहणं प्रदर्शितम्) ।

तृतीयः खलु स्वभावेन स्वपापदेशनमित्थम्—'पापकम्' इत्यादिना । तदपि **"मया अद्य यावद् एतावत् पापं कृतम्"** इत्येवं विप्रतिसारपूर्वकं मानसिकं खेदं प्रकटयन् देशना कर्तव्या—अयमेवास्यार्थः । पापान्यपि कर्माण्यविद्यामाश्रित्य रागादिभिस्त्रिभिः प्रत्ययैः कायादिभिस्त्रिभिर्द्वारैः सम्पाद्यन्ते । तानि कर्माण्यपि त्रिविधानि—कृतानि असञ्चितानि, अकृतानि सञ्चितानि, कृतानि

---

१. स्कन्धमार क्लेशमारः देवपुत्रमारः मृत्युमारश्च । द्र०-नागार्जुनकृतः धर्मसंग्रहः, पृ० ४५ तिब्बती सस्थान सस्करणे, १९८८ ।

सञ्चितानि चेति त्रीणि पापानि । एतानि सर्वाणि (पापानि) सूत्रानुसारं ज्ञातव्यानि । अत्र **पापमि**त्यनेन (तदेव पापं ग्रहीतव्यं येषाम्) आभासः दुर्गतिगमनात् पूर्व भवति । दुर्गतिफलत्वेनोत्पन्नत्वात् सद्भिर्गर्हितत्वाच्च अकुशलानीत्युच्यन्ते । तान्येव **कर्मा**णि यानि (कायादिस्कन्धेषु) लिप्तानि वासितानि च भवन्ति । कायादिभिः कृतानि प्राणातिपातादि दश(अकुशलानि) भवन्ति । (कर्मणां) गुरुलघ्वादिभेदः ज्ञातव्यः । इमान्यपि त्रिविधानि–साक्षात् स्वयं कृतानि, परैः कारितानि, **कृतानुमोदि**तानि चेति । (एतेषां) त्रयाणां समानो विपाकः । कृतमिति सम्पादितं कर्म । सर्वाण्येतानि महायाने समुपवर्णितान्येव । इमानि सामान्यतः सर्वसाधारणानि । विशेषतः अदत्तादानादिषु गुरुतरेषु पञ्चसु अत्र त्रीण्येव निर्दिष्टानि । सत्त्वहिताय अष्टविधचैत्येषु[१] समर्पितं सुवर्णादिकं तावद् धनं (स्तौपिकम्) इति । संघः अभेद्यत्वात् । श्रावक–बोधिसत्त्वभेदेन (संघस्तावद् द्विविधः) । तत्रापि प्रथमे (बोधिसत्त्व–) संघे (बोधिसत्त्वानां) द्वयमित्यादि (आवश्यकम्) । द्वितीये (श्रावकसंघे) चतुर्णां भिक्षूणां (सामग्र्यं) आवश्यकम् । तत्रापि गुरुतरं तावत् चतुर्दिगवस्थितस्य संघस्य अतिथ्यादीनां च धनस्य साक्षादपहरणं लुण्ठनं चेति । अत्यन्तं गुरुतराणि पञ्चानन्तर्याणि (कर्माणि) भवन्ति । तान्यपि (अतो हेतोः) आनन्तर्याणि (यतः) तेषां (फलरूपेण प्राप्तानां) दुःखानां मध्ये न भवत्यन्तरालः, न च भवति पापतत्फलानां कश्चित् सीमा । सहैव निर्दोषत्वमल्पदोषत्वं चापि ज्ञातव्यम् ।

अपि च, परप्राणातिपातादीनां **दशाकुशलानां** कर्ता (पुरुषः) तस्मिन्नेव मासे निःसंकोचं प्रतिदेशनायां प्रविशेदित्यपि ज्ञेयम् । इमान् आदीनवान् निर्देष्टुं कर्मावरणानीत्युक्तानि ।

---

१. सुगतचैत्यं बोधिचैत्यं धर्मचक्रचैत्यं प्रातिहार्यचैत्यं देवावरणचैत्य भेदयोगचैत्यं विजयचैत्यं निर्वाणचैत्यं च ।

तथा हि—इत्येवं दाहकरान् विपाकान् अनुविचिन्त्य स्वचित्तदोषान् अपसारयन् अत्यन्तं विप्रतिसारेण सह प्रतिदेशयेत् । अयमेव तावद् वाक्यार्थः । अत्रापि एतेषां कर्मणामावरणस्य तात्पर्यं ज्ञानस्य स्पष्टताया बाधकमिति ।

कथमेषां विपाकः ? नारकीयसत्त्वादयोऽष्टाभिरक्षणैः[१] समन्विता भवन्ति, (यतो ह्यस्यामवस्थायां) नास्ति सद्धर्माचरणस्यावसरः । केचन तदानीन्तनैर्दुःखैः (पीडिता भवन्ति), केचन पश्चात्तनैरिति । इत्थम् अवसराभावान्नास्ति तेषां कृते क्षणसम्पत्[२] ।

तेषु (प्रथमः) तावन्नरक आत्यन्तिकैर्दुःखैरन्वितः । (तेऽपि द्विविधाः—) भूयिष्ठा अभूयिष्ठाश्च[३] । तयोः प्रथमे तावत् शीताः (अष्टौ नरकाः[४], अष्टौ च) उष्णा[५] इत्येवं षोडशधा भवन्ति

---

१. नरकप्रेततिर्यञ्चो म्लेच्छा दीर्घायुषोऽमराः ।
मिथ्यादृग्बुद्ध कान्तारौ मूकताष्टाविहाक्षणाः ॥
(द्र०—बोधिचर्यावतारपंजिका, पृ० ८ बौ०भा० प्रकाशन १९८८ ।
सूत्रेषु शास्त्रेषु च अष्टानामक्षणानां गणनाया भूयान् भेदः समुपलभ्यते, किन्तु नागार्जुनकृते धर्मसंग्रहे तावदधिको भेद, तद्यथा—नरकोपपत्तिः, तिर्यगुपपत्तिः, यमलोकोपपत्तिः, प्रत्यन्तजनपदोपपत्तिः, दीर्घायुषदेवोपपत्तिः, इन्द्रियविकलता, मिथ्यादृष्टिः चित्तोत्पादविरागिता च । द्र०—नागार्जुनकृतो धर्मसंग्रहः पृ० ८१ तिब्बतीसस्थान—सारनाथ १९८८ ।

२. अष्टाक्षणवियुक्त क्षण उच्यते । दश च सम्पत्तयो भवन्ति । एतासु पञ्च स्वसम्पदः पञ्च च परसम्पद इति । स्वसम्पद इमाः पञ्च—मनुष्यत्व मध्यदेशोत्पादः इन्द्रियपरिपूर्णता कर्मान्ताविनिवृत्तिः बुद्धशासने श्रद्धा । पञ्चेमाः परसम्पदः—बुद्धोत्पादः सद्धर्मोपदेशः शासनसमवस्थानं शासनानुसरणं कल्याणमित्रसेवनं च ।

३. सामान्यतः भूयिष्ठाभूयिष्ठाविति न नरकभेदौ । तिर्यग्योनिभेदाविमाविति मन्यते । अत्र नरकभेदाविमावित्युक्तम् । मया भूयासि सूत्राणि शास्त्राणि चावलोकितानि, किन्तु कुत्रापि नरकभेदरूपेण एतयोर्वर्णनं नोपलब्धम् ।

४. अर्बुद, निरर्बुदः, अटट, अपपः, हाहाधर, उत्पलः, पद्मः महापद्मश्च ।
धर्मसग्रहः पृ० ७५ तिब्बतीसंस्थान—सारनाथ १९८८ ।

५. संजीवः, कालसूत्र, सघात, रौरव, तापन, प्रतापन अवीचिश्च ।
धर्मसग्रह पृ० ७५ तिब्बतीसस्थान—सारनाथ १९८८ ।

(नरकाः) । द्वितीयतश्च स्थान–दृष्ट्या चेमे भवन्ति द्विप्रकारकाः । सर्वे इमे महास्मृत्युपस्थानसूत्रानुसारमवगन्तव्याः । (सर्वे तावदिमे नरकाः) कृतातिमात्रदुष्टकर्मणां फलानि ।

तिर्यञ्चोऽज्ञानिनो भवन्ति । ते जरायुजादियोनिषु सम्भवन्ति । ते (तिर्यञ्चो) अपि द्विविधा भवन्ति । आकारेण तावच्चतुर्विधाः । ते चाधमयोनिजाः । मध्यमकर्मिकास्तावत् प्रेताः । इष्यमाणान्यप्यन्नादिकानि तैर्नोपलभ्यन्ते । दुष्टो यमलोकस्तेषां स्थानम् । तेऽपि द्विधा ज्ञातव्याः । एतासां तिसृणां दुर्गतीनां हेतवः प्रायेण प्राणातिपात–मत्सर– मोहजादिकर्माणीत्यवगन्तव्याः । अत इमे त्रयः **'दुर्गतयः'** इत्युच्यन्ते ।

अन्ततश्च लघूनां दुष्कर्मणां फलं प्रत्यन्तप्रदेशे (जन्म) । इम एव मनुष्यदेवेषूपपन्नानामक्षणाः । दुष्टगतिजनकत्वाद् 'दुर्गतयः' । यस्मिन् प्रदेशे धर्मादीनां (सर्वथा) अभावः, स **प्रत्यन्तः** (प्रदेशः) । देशगतोऽयं प्रत्यन्तः । **म्लेच्छा** इत्यज्ञानिनो **मूढाः** कुत्सितभाषा–भाषिणश्च । अथवा प्रत्यन्ता मलेच्छा इत्यपि केचिद् अभिप्रयन्ति । तेऽप्यनेन दुष्कर्मणां सम्पादनेन दुर्गीतिषु गच्छन्ति । दीर्घायुषो देवा बहुलपुण्यत्वेन सह गाढाहङ्कारिणो भवन्ति । तेऽपरिमितकालं यावत्तत्र तिष्ठन्ति । ते मिथ्यादृष्टयोऽपि भवन्ति, प्रायशो रूपधातौ निवासं कुर्वन्ति । अथवा दुष्टस्य (चित्तस्य) निरोधाभ्यासं कृत्वा निरोधसंज्ञिनो (असंज्ञिनः) भवन्तीत्यप्युच्यते । सर्वे ते पश्चान्मरणाद् नरकेषु गच्छन्ति । (दैवात्) मनुष्ययोनावपि जन्मसम्भवे रूपाद्याधिपत्यकारिषु चक्षुरादिपञ्चसु षट्सु वेन्द्रियेषु दोषसद्भावात्ते सद्धर्मार्थस्य न ज्ञातारो भाग्यवन्तश्च न भवन्ति । तेषु एकस्य द्वयोस्त्रयाणां चतुर्णां पञ्चानां षण्णां वा (इन्द्रियाणां) विकलत्वं सम्भाव्यते । (तेषु) मानसेन्द्रिये दोषावस्थानमत्यन्तं दुर्भाग्यकरम् । सम्यग्दृष्टिविकलानां सत्त्वानां **'न सन्ति बुद्धादयः'** इत्यध्यवसायिनी विपरीतदृष्टिरेव उच्छेददृष्टिः । इयं सर्वाकुशलेषु महासावद्या गुरुतरा । शाश्वताद्यन्यदृष्टयोऽपि (मिथ्यादृष्टयः) सन्ति ।

इत्येवमष्टौ भवन्ति (अक्षणाः) । बुद्धानां (लोके) प्रादुर्भावः सामान्येन भवति, तथापि ते बुद्धस्य (लोके) आगमनकाले न केवलं नमस्कारादिकं न कुर्वन्त्यपितु अपवादमपि कुर्वन्ति । अपि च, इदमेवाभिलक्ष्य बुद्धशून्ये स्थाने जन्मापि अष्टमः (अक्षणः) ।

इत्थं (पापानां) स्वरूपमभिधाय कस्मिन् विषये (स्थाने) प्रतिदेशयितव्यमितीदं **'बुद्धे'** त्यादिनाऽभिधीयते । स एव सम्यक् साक्षी, न त्वन्यः । अत्र भगवान् बुद्ध इति शाक्यमुनिरित्येवमादयः । सर्वज्ञत्वात्ते **ज्ञानभूताः**, शुभाशुभाना सुस्पष्टावगमाद् **'चक्षुर्भूताः'** । **साक्षिभूता** इति शुभाशुभयोर्विशेस्यावबोधका इति । शब्दभ्रान्तेरभावात्ते **प्रमाणभूताः**, अविसंवादका इत्यर्थः । मनोज्ञानेन सर्वज्ञातृत्वात्ते ज्ञातारः । प्रज्ञाचक्षुषा सर्वदर्शकत्त्वात्ते विपश्यकाः (विदर्शकाः) इति । 'अग्रतः' इत्यनेन साम्प्रतिकः स्वसम्मुखीभावः ।

केन विधिना प्रतिदेशयितव्यम् ? **'आविष्करोमि'** इत्यादिना । अर्थात् सम्यक्तयेदं (कथनं) न तु सम्प्रलापादिरूपेण । अत्र वचनेन व्याहरणमेवाविष्करणम् । (देशना अप्रतिच्छादनेति) मनसा पृथक्शः प्रतिदेशनेति । इममेव (अर्थं) स्वीकृत्य वाक्ये **'अप्रतिच्छादनम्'** इति । **'न प्रतिच्छादयामि'** इति विशदीकरोमीत्यर्थः । एवंविधया प्रतिदेशनया (सर्वेभ्यः पापेभ्यः) विशुद्धिर्भविष्यति ।

एवं बलद्वयं प्रदर्श्य सम्प्रति प्रत्यापत्तिबलेन पापदेशनार्थम् **"आयत्यां संवरमापद्ये"** इत्युक्तम् । तदपि पौर्विकं (पूर्वकालकृतं पापकर्म संस्मृत्य) विप्रतिसारं करोति । इदानीं प्रतिदेशयति, अनागते (पापस्य) अकरणं प्रतिजानाति । प्रतिदेशनायां (कृतायां) यदि पुनः (पाप–) आचरणं क्रियेत तदा पापवृद्धिरेव स्यात् । यथा (भोजनोदकादिना यदि) रोगेण हानिर्भवेत् तदा सम्प्रति भोजनोदकादिकम् अवरोधनीयम् । अतोऽनन्तरमपि दश अकुशलादिदोषाणां प्रवाहो विच्छेदनीयः, अनागते च (एवंविधं पापं) अनाचरितुं संवरः प्रतिज्ञा वा ग्रहणीया । (अनेन विधिना समस्तानां) पापानां विशुद्धिर्भविष्यति ।

इत्येवं बलत्रयं प्रदर्श्य सम्प्रति चतुर्थस्य प्रतिपक्षसमुदाचारबलस्य प्रतिपादनार्थम् **"बुद्धाः"** इत्यादिकम् (उक्तम्) । अत्र सर्वेषां पापानां पुनःपुनः वृद्धिरोधनार्थं पुण्यसंचयार्थं च सन्ततिस्थकुशलस्य प्रदर्शनं तावदौषधिरिव ज्ञेयम् । अत्र बोधिसत्त्वस्य समस्ताः परिणामनाः षट्पारमिताप्रतिसंयुक्ता भवन्ति । आभिः परिगृहीतत्वादिमाः पारमितासदृशा एव । सा (परिणामना) अपि द्विविधा । तत्र सोत्तरा सर्वानुकूला । तेन (परिणामनाकर्त्री) भद्रं जन्म लब्धमित्यपि ज्ञातव्यम् । त्रैधातुकयोनिषु स देवो मनुष्यादिर्वेति । **"दानं....अन्तशः"** इति दाना[1]नुकूल्यम् । तत्रोत्तममपि (दानं) ज्ञातव्यम् । तिर्यग्योनिरिति श्वानादयः । लघुगोचरोऽयम्, महत्तमोऽपि ग्रहणीयः । **"आलोपः"** इति लघु वस्तु, महदपि ज्ञातव्यम् । शीलमिति शीलानुकूल्यम्, (यथा–) संवरशीला[2]दीनि (त्रिविधशीलानि) । अत्यन्तावदातत्वाद् विशुद्ध्युत्पादाद् वा कुशलमूलान्युच्यन्ते । क्षान्त्यनुकूलं[3] तावद् ब्रह्मचर्यम्, तच्च पापविरहितं सत् मैत्र्यादिषु स्थित्वा आक्रुष्टस्य अकरणेन अर्थाद् अप्रत्याक्रुष्टेन श्रमणधर्मेण युक्तम् । रागरहितैस्तावद् आक्रुष्टकर्माणि न करणीयानि । वीर्या[4]नुकूल्येन भव्यसत्त्वाः परिपाच्यन्ते । महावीर्ये स्थितेन मया पञ्चाभिज्ञाभिः सर्वसत्त्वानां विपरीतदृष्टिनिवारणं विपरीतमार्गादपसारणं कृत्वा (चित्त)–सन्ततिं परिपाच्य सन्मार्गाधिरूढाः क्रियन्ते । (अर्थात्) मुक्ताः कृतार्थाः क्रियन्त इत्येवं ज्ञातव्यम् । ध्याना[5]नुकूल्येन प्रणिधि–प्रस्थानौ (चित्तोत्पादौ) संवृतिपरमार्थौ (बोधिचित्तोत्पादौ च)

---

१. दानं तावत् त्रिविधम्—धर्मदानम्, आमिषदानं मैत्रीदान च । मैत्रीदानस्य स्थाने सूत्रेष्वधिकांशतया 'अभयदानम्' इत्यप्युल्लेखः प्राप्यते । द्र0–धर्मसंग्रहः, पृ0 ६९ ।
२. संवरशीलं कुशलसंग्राहकशील सत्त्वार्थक्रियाशीलं च । द्र0–धर्मसंग्रह, पृ0 ६९ ।
३. त्रिविधा खलु क्षान्तिः—धर्मनिध्यानक्षान्तिः, दुःखाधिवासनक्षान्ति परापकारमर्षणक्षान्तिश्च द्र0–धर्मसंग्रह, पृ0 ६९ ।
४. त्रिविधं हि वीर्यम्—सन्नाहवीर्यं प्रयोगवीर्यं (प्रायशो वीर्यमिद कुशलपक्षधर्मसंग्रह–वीर्यमित्यप्युच्यते), परिनिष्ठावीर्यं (प्रायेण वीर्यमिद सत्त्वार्थकवीर्यमितिनाम्नाऽपि प्रसिध्यतीति बोधिसत्त्वभूमौ समुल्लिखितम्) । द्र0–धर्मसंग्रहः, पृ0 ७० ।
५. त्रयो ध्यानस्य भेदाः—सदोषापकर्षध्यान सुखवैहारिकध्यानम् अशेषवैभूषितध्यानं च । द्र0–धर्मसंग्रहः, पृ0 ७० ।

क्रियेते । अत्र (चित्तस्य) एकाग्रतया अवस्थानं तावद् अविपर्यस्तो मार्ग इति ।

अनुत्तरज्ञाना[1]नुसारम् अर्थात् प्रज्ञापारमितानुसारं परिणामयितव्यम् । इदमनुत्तरज्ञानं तावदद्वयधर्मताऽवबोध इति । (अयमेव) ज्ञानसम्भार इत्यपि । (षट्सु पारमितासु पूर्ववर्तिन्यः) चतस्रः (पारमितास्तु) पुण्यसम्भारे संगृह्यन्ते । पञ्चमी (ध्यानपारमिता) उभयोः (सम्भारयोः संगृह्यते) । षष्ठी (प्रज्ञापारमिता) तद्भिन्नत्वेन (ज्ञानसम्भारे अभ्युपगता) भवति । (इत्येवम् इमाः) षट्पारमिताः द्वयोः सम्भारयोः (यथायथं) संगृह्यन्ते ।

एतासां षण्णां पारमितानां नयः कीदृशः ? एतदर्थं (मूले) **'एकध्यं पिण्डयित्वा'** इत्यादिकमुक्तम् । पृथक्-पृथक् कुशलानां वस्तूनां चैकत्र सम्पिण्डनं क्रियते, सम्मिश्रणं (मेलनं) चाप्युच्यते) । अविच्छेद इति संवरः, (अर्थात्) प्रकृतितः असम्भेदापादनम् । क्व परिणामयेत् ? अनुत्तरबुद्धेषु (तेषां समक्षं परिणामयेत्) । सा (परिणामना) अनुत्तरा श्रावकादिभ्यो विशिष्टत्वात् । निरुत्तर इति बुद्धः, लोकमतिक्रम्य स्थितत्वात् । सोऽपि द्विविधः । सर्वेभ्य उत्तरः बोधिसत्त्वः । (अतः) बोधिसत्त्वो गुरुः अर्थादुत्तरः । तस्मादपि गुरुः (उत्तरो वा) भगवान् बुद्धः, तदुत्तरस्य कस्याप्यभावात् । स एव बोधिसत्त्वमहासत्त्वः, (स) एव हि सर्वज्ञः । सर्वेभ्य इयं परिणामना तावत् परिशुद्धत्रिमण्डलेत्यप्युच्यते, यश्चानुपलम्भ एव । इयं खलु बोधिसत्त्वानां सामान्यपरिणामना । अनुत्तरबुद्धत्वावाप्तये परिणामना तावदुपायकौशलम् । एतत्परिणामनार्थं **'यथा'** इत्याद्युक्तम् । यदि नास्ति स्वयं परिणामनाज्ञानं तदा अनेन (पूर्वोक्तविधिना) परिणामनं प्रणीतेत्यादिना सादरं (परिणामयितव्यम्) । त्रैकालिकबुद्धैः कृतायाः परिणामनायाः सदृशी परिणामना मयाऽपि सादरं करणीयेति

---

१. त्रिविधा तावत् प्रज्ञा—परमार्थाधिगतप्रज्ञा, सवृत्यधिगतप्रज्ञा सत्त्वार्थक्रियाप्रज्ञा च । एतदतिरिक्ततयाऽपि त्रिविधा प्रज्ञा, यथा-श्रुतमयी प्रज्ञा, चिन्तामयी प्रज्ञा, भावनामयी प्रज्ञा च । द्र०-धर्मसंग्रह, पृ० ७१ ।

महाववादः । त्रिस्कन्धा[1]नुसारं परिणामना तावत् **'सर्वं पापं प्रतिदेशयामि'** इत्यादिना (कथिता) । अयं पापदेशनास्कन्धः, कुशलाकुशलानुमोदनास्कन्धः विषयप्रस्तुतिदृष्टया आनन्द-स्कन्ध एव । महापरिनिर्वाणमनधिगन्तुं सर्वबुद्धानां (प्रार्थना) धर्मचक्रं प्रवर्तयितुं चाध्येषणा 'याचनास्कन्धः' । एभिस्त्रिभिः (स्कन्धैः) अपरिमितः पुण्यस्कन्धः संचीयते ।

एतदनन्तरं प्रणिधानम् । बुद्धत्वमवाप्तुं प्रणिधानकाले भवतु अनुत्तरज्ञानमित्याकारकं (प्रणिधानं क्रियते) सर्वपापप्रतिपक्षभूतं शरणगमनं श्रेयः । अत्रापि शरणगमनस्य (अभिप्रायस्तावद्) **'नरोत्तमा जिनाः'** इत्यादिना (निर्दिष्टः) । (शरणगमनादिकं तु) सामान्येन पूर्वं प्रदर्शितम् । **'तथापि'** इति बुद्धमात्रमेव शरणगमननिष्ठेति (नान्यत्) । (धर्मस्य संघस्य च शरणगमनं) नात्र कथितम् । अत्र **'नरोत्तमाः'** इति मनुष्यरूपधारी निर्माणकायः । **'गुणाः'** इति दशबलादयो बुद्धगुणाः । **'वर्णान्'** इति विशेषेण स्तवः । अनन्तेति पञ्चत्रिंशद् (बुद्धादयः) । सागरोऽत्र उपमारूपेण समुपस्थापितः, यश्चाक्षयः । अञ्जलि-(शब्देन) काय-(प्रणामः) (द्योत्यते) । वाक्चित्ताभ्यां हि शरणगमनं निष्पद्यते ।

चतुर्भिश्च बलैरेवं सर्वपापं विशुध्यति ।
सम्भारपरिपूर्त्याऽतो बुद्धत्वाप्तिं प्रजानताम् ॥

संक्षेपेणात्र चाख्यातं ज्ञेयं सूत्रैश्च भूयसा ।
ज्ञात्वैवं बलयत्नाभ्यां कर्त्तव्या पापदेशना ॥

प्रशस्या कायरत्नाप्तिः कौसीद्यं मिद्धमुत्सृजेत् ।
स्वमनः स्वेन दृष्ट्वाऽहो मानं स्त्यानं न च क्रियात् ॥

---

१. उपरि तावत् त्रिस्कन्धः पृथक्शः त्रिविधः परिगणितः । शिक्षासमुच्चये तु गणनायां भेदो दृश्यते । द्र०–शिक्षासमुच्चयः, पृ० ९ मिथिलासस्करण १९६१ ।

कृपाबलात् सत्त्वहिते मदीया
बोध्यापदां देशनवृत्तिरेषा ।
तज्जामलैः पुण्यमयैर्हि सत्त्वाः
नागस्य राजेव भवन्तु बुद्धाः ॥

सर्वदृष्टिप्रहाणाय यः सन्मार्गमदेशयत् ।
सिंहवन्मारदमकस्तं नमस्यामि गौतमम् ॥[१]

बोध्यापत्तिदेशनावृत्तिः महाचार्येण आर्यनागार्जुनेन विरचिता समाप्ता ॥

भारतीयमहापण्डितेन शान्तरक्षितेन भोटदेशीयानुवादकेन ञेवा देवघोषेण चानूदिता संशोधिता च ।

●

१. मूलमाध्यमिककारिकायामप्येवंविध एकः श्लोकः प्राप्यते । तु०—
सर्वदृष्टिप्रहाणाय यः सद्धर्ममदेशयत् ।
अनुकम्पामुपादाय तं नमस्यामि गौतमम् ॥
द्र०—मू०मा० कारिका २७ : ३० ।

आचार्य शान्तिदेव ने कहा है—

रात्रिन्दिवं च त्रिस्कन्धं त्रिष्कालं च प्रवर्तयेत् ।
शेषापत्तिशमस्तेन बोधिचित्तजिनाश्रयात् ।।

बोधिचर्यावतार

भारत(संस्कृत)–भाषायाम्—बोध्यापत्तिदेशना–
वृत्तिः बोधिसत्त्वशिक्षाक्रमो नाम

आर्यगणेभ्यो नमः

तं सर्वज्ञं नमस्कृत्य येन सर्वं विलोकितम् ।
बोधिसत्त्वीयशिक्षां तां वक्ष्येऽहं श्रद्धयाऽधुना ॥

ये तावद् बोधिचित्तमुत्पाद्य निःश्रेयसं लब्धुकामाः, (तेभ्यो) दोषव्यावृत्त्युपायज्ञानार्थं (त्रिस्कन्धसूत्रं) इदमुपदिष्टम् । ते दोषा अपि (द्विविधा):—पाराजयिककुलान्तर्गताः दोषकृतकुलान्तर्गताश्च । पाराजयिककुलान्तर्गतस्यापि भेदद्वयम्[१]—श्रावकैः सामान्यम्, असामान्यं च । एभ्यः सर्वेभ्यः (दोषेभ्यः) विनिवृत्त्य चित्तोत्पादं कृत्वा त्रिविधः संवरो[२] ग्रहीतव्यः । त्रयाणां पुद्गलानां[३] (समक्षं) प्रतिदेशनया, एकपुद्गलस्य[४] समक्षं प्रतिदेशनया पञ्चत्रिंशद्बुद्धानां[५] (समक्षं) प्रतिदेशनया तावद् दोषविनिवृत्तिः ।

---

१. इद दोषद्वय तावत् प्रहेयानामापत्तीना भेदः । अत एव पाराजयिकं दोषकृतं चेति द्वौ भेदौ । पाराजयिकानां विस्तरेण ज्ञानाय बोधिसत्त्वभूमिः आकाशगर्भसूत्र चापि विशेषण द्रष्टव्यम् । बोधिसत्त्वभूमौ चत्वारः शिक्षासमुच्चये चतुर्दशेत्यष्टादश पाराजयिका भवन्ति । दोषकृतश्च षट्चत्वारिंशत् । बोधिसत्त्वभूमौ समुल्लिखिताश्चत्वारः पाराजयिकाः 'विंशतिसंवरे'ऽप्युक्ता । आचार्येण अतिशेनाष्टौ पाराजयिका निर्दिष्टाः । आकाशगर्भसूत्रे समुल्लिखिता एकादश पाराजयिकाः शिक्षासमुच्चयेऽप्युल्लिखिताः, किन्त्वत्र पञ्चदशपाराजयिकानां चर्चाऽवलोक्यते, किन्तु पञ्चदशे पाराजयिके तावद् भोटदेशीयेषु विद्वत्सु भूयान् मतभेदः । एतान् विभज्य पुनः सप्तत्रिंशत् पाराजयिका कथिता । सवरशीलानि पाराजयिककुलानि, कुशलसग्रहशीलानि षड्पारमित–ाविपक्षकुलानि, कुशलसग्रहशीलानि षड्पारमिताविपक्षकुलानि, सत्त्वार्थशीलानि च विपक्षभूतदोषकृत्कुलानि भवन्ति ।

२. प्रातिमोक्षसवरः बोधिसत्त्वसवरः वज्रसवरश्च ।

३. श्रावकपुद्गलः महायानी पुद्गल सम्भोगी पुद्गलश्च । द्र०–विंशतिसवरव्याख्या, देगे ४०८३, सेमचम 'हि'–पुटे, पृ० २०२ 'ख' ।

४. शब्दश्रवणार्थग्रहणसमर्थो हि पुद्गलस्तावद् 'एकपुद्गल' । द्र०–विंशतिसंवरव्याख्या, देगे ४८०३, सेमचम 'हि'–पुटे, पृ० २०२ 'ख' ।

५. तत्र शारिपुत्र, प्रथमा आपत्तिर्दशवर्गे ऋजुकेन देशयितव्या । हस्तापत्ति पञ्चवर्गे गुर्वी देशयितव्या । स्त्रिया हस्तग्रहण चक्षुर्दर्शनं दुष्टचित्तापत्तिरेक–पुद्गलस्य द्वयोर्वा

सर्वप्रथमं तावद् विशिष्टानां पूजार्हाणां समक्षं शरणगमनं निष्पादनीयम्, तदनु प्रणामं विधाय पापानि प्रतिदेशनीयानि । तदनन्तरं भाविनः संवराद् अच्यवनार्थं प्रतिज्ञातव्यम् । तत्पश्चात् सर्वाणि कुशलमूलानि अनुत्तरबोधौ परिणामयेत् । अनागते संवाराणां स्थित्यर्थं पापदेशनाम् अध्येषणां च विधाय याचना, कुशलमूलपरिणामना शरणगमनानि च कर्तव्यानि । तदयं(सर्वः) संक्षेपार्थः ।

अवयवार्थस्तावदिदानीमभिधीयते । **"अहमेवं नामा"** इत्यस्य देवदत्त-यज्ञदत्तादिव्यक्तिषु तात्पर्यम् । **"बुद्धं शरणं गच्छामि, धर्मं शरणं गच्छामि, संघं शरणं गच्छामि"** । (तत्र) प्रहाणाधिगमयुक्तत्वाद् **बुद्धः** । स (बुद्धः) अपि कायत्रयेण (युक्तः), यथा—धर्मकायः, सम्भोगकायः निर्माणकायश्च । (बुद्धमिति) तद्विषयकं (शरणम्) इति । अत्राधिकरणे सप्तमी । शरणगमनमिति हिंसादिक्लेशेभ्यः परिरक्षणम् । धर्म इति आगमाधिगमात्मकः[1] । **संघ** इति श्रावकाः प्रत्येकबुद्धा बोधिसत्त्वाश्च । श्रावका अपि चतुर्विधप्रतिपन्नकाः[2] चतुर्विधाश्च फलस्था[3] इति । प्रत्येकबुद्धोऽपि एकान्तचारी गणचारी चेति (द्विविधः) । बोधिसत्त्वा अपि नियतानियतभेदेन (द्विविधः) । शेषाणां व्याख्यानमुक्तं(पूर्वम्) ।

(१) **"नमो भगवते शाक्यमुनये तथागतायार्हते सम्यक्संबुद्धाय"** इति बलेन सहितस्य मारस्य महासंग्रामे भञ्जकत्वाद् **'भगवान्'** इति । अविपर्यस्तायास्तथताया देशकत्वात्

शारिपुत्र, ता गुर्वी दर्शयेत् । पञ्चानन्तर्यसमन्वागतापत्तिर्बोधिसत्त्वाना स्त्र्यापत्तिर्दारिकापत्तिर्हस्तापत्ति· स्तूपापत्तिः सघापत्तिः । तथा अन्याश्चापि तिस्रो बोधिसत्त्वेन पञ्चत्रिंशता बुद्धानां भगवतामन्तिके रात्रिन्दिवं एकाकिना गुर्व्यो देशयितव्या· । द्र०-शिक्षासमुच्चय·, पृ० ९४ (मिथिलासस्करण १९६०) ।

१. सद्धर्मो द्विविधः शास्तुरागमाधिगमात्मक· । द्र०-अभि० को० ८ : ३९ ।

२. स्रोत आपत्तिप्रतिपन्नक·, सकृदागामिप्रतिपन्नक·,अनागामिप्रतिपन्नकः, अर्हत्प्रतिपन्नकश्च । द्र०-धर्मसग्रहः, पृ० ६३, ति० सं० सं० १९८८ ।

३. स्रोत आपन्नफलस्थः, सकृदागामिफलस्थ·, अनागामिफलस्थः अर्हत्फलस्थश्च । द्र०-धर्मसंग्रहः, पृ० ६३, ति० सं० सं० १९८८ ।

'तथागतः' । सकलमनोरथपरिपूर्णत्वाद् अनुत्तरपुण्यक्षेत्रत्वात् पूजार्हत्वाच्च **'अर्हन्'** । सर्वधर्माणां परमार्थ(स्वभावस्य) यथावज्ज्ञानात् **'सम्यक् संबुद्धः'** इति । सर्वक्लेशानां प्रहाणपर्यन्तगतत्वाद् आदेयवचनत्वात् सम्पन्नकुलत्वात् समग्रैश्वर्यसम्पन्नत्वाच्च **'शाक्यमुनिः'** इति ।

(२) (तथागतः) **'वज्रगर्भप्रमर्दिन्'** इति (सर्व)–प्रपञ्चरहितः प्रहीणवस्तुग्राहः हीरक इव च । सर्व तद्**गर्भे** विद्यमानं, स एव च प्रमर्दकः इति । अथवा वज्ररत्नं तद्गर्भे तन्मध्ये (विद्यते) । **'प्रमर्दी'** इति आनुभावसम्पन्नः ।

(३) रत्नमणितुल्यत्वात् (तथागतः) **'रत्नार्चिः'** इत्यभिहितः । यथा **रत्न**मणिनामकं देवद्रव्यं तावल्लघु प्रभास्वरं सर्वोपद्रवनिवारकं गुणवद् रमणीयत्वादिधर्मान्वितं च भवति, तथैव सम्यग् रत्नमपि समस्तगुणार्चिषा सम्पन्नमुपकारकं चेति ।

(४) (तथागतः) **नागेश्वरराजः** **नागेश्वर**रऋद्धया समन्वागतः । स समस्तशस्येष्वभिवर्षीति । तदी**श्वर** इति तदधिपतिः । तेषां सर्वेषा राजेति भगवान् बुद्धः ।

(५) (तथागतः) **वीर**कुलवत्त्वाद् **'वीरसेनः'** इति । यः विपक्षं विघातयतीति ।

(६) (तथागतः **वीरनन्दी**), तत्र आनन्दसद्भावाद् **वीरनन्दी** इति ।

(७) (तथागतः) **रत्नाग्नि**रित्यत्र दौर्लभ्याद् महर्घत्वाद् मनोरथपरिपूरकत्वाच्च **'रत्नम्'** इति । (स **अग्निः**) क्लेशेन्धनानि निर्दहति ।

(८) (तथागतः) **चन्द्रप्रभ**स्तु चन्द्र इव शीतलत्वाद् विगताविद्यान्धकारत्वाच्च तथा । विकल्पोष्णताभिश्च असन्तप्तश्चापि ।

(९) (तथागतः) **अमोघदर्शी** तावत् समस्तविनेयजनानां साक्षाद् दर्शित्वात् तथा । पात्रानुकूलं हितं विधाय (संसाराद्) उद्धारयतीति ।

(१०) (तथागतः) **रत्नचन्द्र** इति बोधिसत्त्वः समन्तभद्रः । शेषाः (शब्दार्थाः) पूर्ववज्ज्ञातव्याः ।

(११) (तथागतः) **विमल**स्तावत् समस्तक्लेशज्ञेयमलानां दर्शनभावनाभ्यां प्रहाणकारित्वात् तथा । अर्थात् सास्रवविज्ञानानां प्रहाणात्, तदेव श्रीर्यस्मिन्निति (विमलश्रीः) । स च हितकरणे श्रेयान् ।

(१२) (तथागतः) **शूरदत्त**स्तु समस्तसत्त्वानां हितकारित्वात्तथा ।

(१३-१४) (तथागतः) **ब्रह्मदत्त**श्च । अत्र **ब्रह्मेति** रूपधातोः प्रथमध्यानाधिपतिः । तस्य ब्रह्मणस्तद्विभूतेर्वा क्लेशकर्मक्षयात् परिनिर्वृत्तत्वे तात्पर्यम् । एवमेव स अन्येन (ब्रह्मणा) दत्तत्वाद् प्रथमा (विभक्ति)-प्रयोगः । अथवा तेन (ब्रह्मणा) दत्तत्वाच्च तृतीया (विभक्ति)-प्रयोगः । (फलतः) ब्रह्मदत्तायेति ।

(१५) (तथागतः) **वरुण**स्तावद्, अहङ्कारदृप्तां द्वेषाग्नि-सन्तप्ताम् अविद्योपप्लुतां स्थूलक्लेशपरिगतां सत्त्वसन्ततिं शिथिलयति शमयतीति कृत्वा तथा (उच्यते) । साधारणपुद्गलावस्थायां स छत्रवान् आसीत् । तेन पूज्याय रत्नबुद्धाय (छत्रेण) छाया प्रदत्ता । (ततस्ते वरुणबुद्धकायं धारितवन्तः) ।

(१६) (तथागतः) **वरुणदेवः** क्षेत्रपालके नागकुले अन्तर्गृहीतत्वाद् वरुण इति । तैः (सकलाय जगते) शान्तिः प्रदीयते ।

(१७) (तथागतः) **भद्रश्री**स्तावद् अद्वयज्ञानवत्त्वात्तथा (उच्चते) । लोकस्य क्लेशकर्मणां (प्रहाणाय) भावनाकरणात् ते विशिष्टाः ।

(१८) (तथागतः) **चन्दनश्री** रिति विविधान्नसंग्राहकः । यथा चन्दनस्य विशिष्टो गन्धः सहज एवोत्पद्यते, तेन च घ्राणेन्द्रियमुपक्रियते, तथैव निर्विकल्प(ज्ञानेन) यः सर्वसत्त्वानां निरन्तरं कल्याणं करोति, स श्रीरित्युच्यते ।

(१९) (तथागतः) **तेजा** इति सप्रभः, यतः स प्रभया जगते प्रकाशं ददाति । अतः (**'तेजा'**) इति कथितः ।

(२०) (तथागतः) **प्रभाश्री** रिति यस्य **प्रभ**या स्फुटावभासो भवति । **श्री**रिति सम्यग्ज्ञानत्वेन असंमुष्टचित्ततया स सर्व(धर्मेषु) अप्रतिहतोऽसक्तश्च भवति ।

(२१) (तथागतः) **अशोकश्री**रिति प्रहाणेन ज्ञानेन यो युक्तः । क्लेशावरणप्रहाणात् स असंतप्तः, ज्ञेयावरणप्रहाणाच्च चतुर्भिर्निर्विकल्पज्ञानैः स युक्तः, (अत एव) **श्री**रपि ।

(२२) (तथागतः) **नारायण** इति प्रभूतबलवान् । स अन्येषां संहारकरणे ख्यातः ।

(२३) (तथागतः) **कुंसुमश्री** रिति मनोहरत्वेन रमणीयत्वेन च (ख्यातः) ।

(२४) **ब्रह्मज्योतिर्विक्रीडिताभिज्ञस्तथागतः,** इत्यत्र ब्रह्मेति विशुद्धम्, समस्तावरणानि प्रहाय कल्पनामलविगतत्वात् । ज्योतिरित्युपकारः, सुखं विमुक्तिरिति (त्रीणि) द्वाराणि । (स च) ऋद्धिप्रातिहार्येण आदेशनाप्रातिहार्येण अनुशासनीप्रातिहार्येण च विक्रीडन् समस्तज्ञेयान् एकस्मिन्नेव काले प्रत्यक्षतो जानाति ।

(२५) **पद्मज्योतिर्विक्रीडिताभिज्ञस्ततथागत** इति यो पद्मवद् दोषैरलिप्तः । अवशिष्टः (शब्दार्थः) पूर्ववत् ।

(२६) (तथागतः) **धनश्री** रिति सप्तधनानां श्रियोऽवबोधक इति । यथा—श्रद्धा (धनं), आर्यशीलं(धनं), श्रुतं (धनं), त्यागः

(धनं), ह्रीः (धनं), अपत्राप्यं (धनं), प्रज्ञा (धनं) च । एतत्स्वभावत्वात्[१] ।

(२७) (तथागतः) **स्मृतिश्री**रिति (चतुःस्मृत्युपस्थानावबोधक इति) । कायः स्मृत्युपस्थानं चित्तं (स्मृत्युपस्थानं) वेदना (स्मृत्युपस्थानं) धर्मः (स्मृत्युपस्थानम्) । एतेषां चतुर्णां श्रिया समन्वितः (सः) । अत्र मध्यगतः (स्मृत्युपस्थान–) शब्दोऽप्रकाशित इति ।

(२८) (तथागतः) **सुपरिकीर्तितनामधेयश्री** रिति द्वात्रिंशल्लक्षणोपलब्ध्या स अत्यन्तविशुद्धे लोकधातौ विश्रुत इति ।

(२९) (तथागतः) **इन्द्रकेतुध्वजराज** इत्यत्र पञ्चेन्द्रियाणीति श्रद्धावीर्यस्मृतिसमाधिप्रज्ञेन्द्रियाणि, केतुरिति (षड्) अभिज्ञाः प्रतीयन्ते, (यथा—) ऋद्धिविधदिव्यश्रोत्रचित्तपर्यायज्ञानपूर्वनिवासानुस्मृतिच्युत्युत्पत्ति-ज्ञान–आस्रवक्षयज्ञानानि अभिज्ञाः । (तथागतोऽयं) इन्द्रियाभिज्ञाकेतुमानिति चक्रवर्तिराजेवेति । .

---

१. विवरणमस्य सूत्रे तन्त्रे शास्त्रेषु चैवमुपलभ्यते—
विनय–उत्तरग्रन्थे, देगे. ७अ, सूत्र (विनय) ,'प' पुट्, पृ. ३१खछ
अवतंसक, देगे ४४, सूत्र (फलछेन), 'क' पुट्, पृ. ३३३ख;
बोधिसत्त्वपिटक, देगे. ५६, सूत्र (कोनचेग), 'ग' पुट्, पृ. ७४ख;
आर्य महायानोपदेश–नाम–महायानसूत्र, देगे १६९, सूत्र 'ब', पुट्, पृ. २९७क;
आर्य रत्नमेघसूत्र, देगे. २३१, सूत्र, 'व', पुट्, पृ. ५0ख;
अवमानप्रदीपमान, देगे. ३७२९, तन्त्र 'छु' पुट्, पृ. ५९क;
आर्य शतसाहस्रिका–पञ्चविंशतिसाहस्रिका–अष्टसाहस्रिका–प्रज्ञापारमिता वृहट्टीका, देगे ३0८, शेरछिन 'फ' पुट्, पृ. ४८ख;
बोध्यापत्तिदेशनावृत्ति–बोधिसत्त्वशिक्षाक्रम, देगे ४00६, 'जी' पुट्, पृ. १८९क;
सूत्रालंकारवृत्तिभाष्य, देगे. ४0३४, सेमस्–चम 'मी' पुट्, पृ १६ख;
व्याख्यायुक्तिटीका, देगे. ४0६९, सेमस्–चम, 'सी' पुट्, पृ. १७९क;
विनयवस्तुटीका, देगे. ४११३, विनय, 'चु', पुट्, पृ २१९ख;
विनय–विभङ्ग–पदव्याख्यान, देगे. ४११४, विनय, 'छु', पुट्, पृ. ६९ख ।

(३०) (तथागतः) **सुविक्रान्तश्री** रिति विशेषतो दमक इति। अर्थात् स एव सुविक्रान्तो य उत्खातमूलं करोति। अत्र 'वि' इति विकल्पाः। (अर्थात्) यः क्लेशविकल्पान् उत्खातमूलान् करोतीति।

(३१) (तथागतः) **सुविजितसङ्ग्राम** इति यः शत्रुगणं मारचतुष्टयं विजयते। अत्र 'सु' इति विशेषेण। (येन) सर्वमारेषु विजयः (प्राप्त) इति।

(३२) (तथागतः) **विक्रान्तगामिश्री** रिति विघ्नविनाशकेन बलेन सर्वलोकधातुषु विनेयजनानां यथावत् कल्याणं करोति।

(३३) (तथागतः) समन्तावभासव्यूहश्रीरिति सौन्दर्यार्थं युवतिजनो यथा आभूषणैरलङ्क्रियते इति।

(३४) (तथागतः) **रत्नपद्मविक्रामी** ति पूर्णमनोरथोऽपि संसारदोषैरलिप्तः सन् अभिभवतीति।

(३५) (तथागतः) (**रत्नपद्मसुप्रतिष्ठितशैलेन्द्रराज–तथागतः**) तथागतोऽयम् इच्छापूर्तिं कामयमानैः रागादिदोषैरलिप्तः सन् निर्भयपर्वतराजसुमेरुरिव अभिभवं करोतीति।

पापप्रतिदेशनेति दोषमलानां प्रक्षालनमिति। तत्र नमस्कारादिकं कर्त्तव्यम्। **'ध्रियन्ते यापयन्ती'** इति अन्ये दशदिक्षु विद्यमाना सर्वे (बुद्धाः) इति। **'यावन्तः'** इत्यस्यापि स एवार्थः। अन्येषां (पदानाम्) अर्थः सुगमः। **'माम् समन्वाहरन्तु'** इति मनसि करणीयम्। अहमिदानीं जन्म प्रतिगृह्य जीवामि, **अनादिकाले** (मया) सुबहूनि जन्मानि गृहीतानि, (येषु) संस्वेदजोपपादुकाण्डज–जन्मानि सर्वाणि एतदतिरिक्तानि। पापमिति अकुशलत्वात् पापकं कर्म इति। तत् कायवाक्चित्तद्वारैः कृतम्। (तस्यापि त्रैविध्यम्)— (कः) स्वयं कृतानि, (ख) अन्यैः कारापितानि तथा (ग) अन्यकृतानाम् **अनुमोद** नम्। (एतेषां) प्रतिदेशना करणीया। **'स्तूपः'** इति (बुद्धस्य) काय–वाग्–अवशेष–विहारादयः। **'संघः'**

इति वर्गः । **'दशदिशां संघः'** इति अन्यान् (सत्त्वान् संसारदुःखात्) उद्धर्तुकामा नायका इति । अस्य (संघस्य) ये धनमपहरन्ति ते(ऽवश्यं) नरकेषु गन्तारः । "ये स्तूपं विहारं वा विनाशयन्ति गुप्तरूपेण त्रिरत्नसम्बद्धधनस्योपयोगं वा कुर्वन्ति, ते मरणादनन्तरम(वश्यं) अवीच्यादिमहानरकेषु पतिष्यन्तीति उक्तम्[१] । "संघिकस्य धनस्यापहारकाः (मरणानन्तरं) अरघट्टवाहकवृषभानां गर्दभानां वा योनौ जन्म ग्रहीष्यन्ति । संघसमीपात् पूर्वं पुनः पुनः धनं याचित्वा परोक्षे पश्चाद् दोषमारोपयन्तः (मरणानन्तरं) कपोतयोनौ जन्म प्रतिगृह्णन्ति । संघभोजकाः (मरणादनु) शाकपत्रादिषु कीटयोनौ जन्म गृह्णन्तीति" उक्तम्[२] । (इमान्युक्तानि पापानि) स्वयं कृतानि अन्यैः कारापितानि वा स्युः अन्यकृतत्वे सति **अनुमोदितानि** वा स्युः–(तेषां सर्वेषां) प्रतिदेशना करणीया ।

पञ्चानन्तर्याणि (कर्माणि भवन्ति), (तदयथा)—१. मातृ(वधः), २. पितृ(वधः) ३. अर्हद्--वधः, ४. दुष्टचित्तेन तथागतशरीराद् लोहितोत्पादः, ५. संघभेदश्चेति । एतेषां (पञ्चानां) आचरणेन (अवीचि)नरके पतनं भवति ।

इमानि तावद् **दश अकुशलानि** (कर्माणि), तदयथा—(१) प्राणातिपातः (२) अदत्तादानं (३) काममिथ्याचारः (४) मृषावादः (५) पैशुन्यं (६) पारुष्यं (७) सम्भिन्नप्रलापः, (८) अभिध्या (९) व्यापादः (१०) मिथ्यादृष्टिश्चेति । "य एवं निरन्तरम् आचरन्ति ते नरकेषु गमिष्यन्ति, तिर्यक्षु (जन्म) ग्रहीष्यन्ति, अन्तिमशः प्रेतेषु जन्म ग्रहीष्यन्ति"[३] । (अकुशल–) कर्मणाम् अल्पीयस्त्वाद् अन्येषा कुशलानां च (कर्मणां) बलेन मनुष्ययोनौ

---

१. आर्यशुभाशुभकार्यकारणभावनिर्देशो नाम महायानसूत्रम्, देगे ३५४, सूत्र, 'अ'–पुटे, पृ० २०४ 'ख' ।

२. आर्यशुभाशुभकार्यकारणभावनिर्देशो नाम महायानसूत्रम्, देगे ३५४, सूत्र, 'अ'–पुटे, पृ० २०१ 'ख' ।

३. शुभाशुभकर्मविपाकनिर्देशसूत्र, देगे. ३५५, सूत्र, 'व', पुटे, पृ २११ 'क' ।

उत्पन्नेऽपि "प्राणातिपातेन अल्पायुष्कतां च बहुग्लानतां च अनुभविष्यति । अदत्तादानेन च दारिद्र्यं व्यसनं चानुभविष्यति, स्वसम्पत्तौ अस्वतन्त्रवृत्तिश्च भविष्यति, (तत्सम्पत्तेश्च) अन्यैः उपभोगः करिष्यते ।" अब्रह्मचर्येण तावत् गर्भस्थानं परित्यज्य (अन्यत्र) जन्म न ग्रहीष्यति, विकलाङ्गश्च भविष्यति । "काममिथ्याचारिणस्तु (स्व-) पत्नीं अन्योपभोग्यां करिष्यन्ति, सर्वदा च स्वपत्न्या सह कलहो भविष्यति, जानन्तश्च मित्रतां न करिष्यन्ति"[१] । "मृषावादेन बहुलतया निन्दितो भविष्यति, विसंवादश्च अन्यैः सह भविष्यतीति । पैशुन्येन अशुचिपरिवारतां प्रेयसीविच्छेदं चानुभविष्यति । पारुष्येण अप्रियशब्दश्रवणं उच्चारणमात्रेण च विवादो भविष्यति । सम्भिन्नप्रलापेन तावद् अविश्वसनीयः, अन्येषां (शब्दानाम्) अनवबोधकश्च भविष्यति । अभिध्यया लुब्धोऽसन्तुष्टश्च भूत्वा परिगवेषमाणोऽपि (अर्थं) न प्राप्स्यति । व्यापादेन अन्येषां (हानये) छिद्रान्वेषी अन्येषां कृते लाभविधातको भविष्यति । मिथ्यादृष्टचा हि शठो भूत्वा मिथ्यादृष्टियुतानां कुले जन्मलाभी भविष्यति"[२] ।

---

१. आर्यशुभाशुभकार्यकारणभावनिर्देश-नाम-महायानसूत्रम्, देगे. ३५४ सूत्र 'अ'- पुटे, पृ. २०६ 'क' ।

२. (क) इमे खलु पुनर्दशाकुशलाः कर्मपथा अधिमात्रत्वादासेविता भाविता बहुलीकृता निरयहेतुर्मध्यत्वात् तिर्यग्योनिहेतुर्मृदुत्वाद् यमलोकहेतुः । तत्र प्राणातिपातो निरयमुपनयति, तिर्यग्योनिमुपनयति, यमलोकमुपनयति । अथ चेत् पुनर्मनुष्येषु उपपद्यते, द्वौ विपाकावभिनिर्वर्तयति अल्पायुष्कतां च बहुग्लान्यतां च । अदत्तादानं.....परीत्तभोगतां च साधरणभोगतां च । कामध्यिाचारो....अनाजानेयपरिवारतां च ससपत्नदारतां च । मृषावादो.....अभ्याख्यानबहुलतां च परैर्विसंवादनतां च । पैशुन्यं... .भिन्नपरिवारतां च हीनपरिवारतां च । पारुष्यं.....अमनापश्रवणतां च कलहवचनतां च । सभिन्नप्रलापो....अनादेयवचनतां च अनिश्चितप्रतिभानता च । अभिध्या.. .असंतुष्टितां च महेच्छतां च । व्यापादो....अहितैषितां च परोत्पीडनतां च । मिथ्यादृष्टि....... कुदृष्टिपतितश्च भवति शठश्च मायावी । द्र0-दशभूमकसूत्रम्, पृ. १६-१७, मिथिलासंस्करण १९६७ ।
(ख) आर्यसागरनागराजपरिपृच्छा नाम महायानसूत्रम्, दे-गे १५४ सूत्र, 'फ'-पुटे, पृ0 २०२ 'ख' ।
(ग) शुभाशुभकर्मविपाकनिर्देशसूत्रम्, दे-गे ३५५ सूत्र, 'आ'-पुटे पृ0 २११ 'क' ।

तान्येव (दशाकुशलानि) **कर्मपथाः** । षड् वस्तूनि (पूर्वोक्तानि) अत्रापि समानानि । **'समादाय वर्तितं स्यात्'** इति एतेषां (समेषां निष्पादने) हर्षोत्पादः, तत्प्रतिपक्षोत्पादाय प्रयत्नराहित्यं चेति । एतदतिरिक्तं षट्पारमिताविपक्षाः[१] अष्टविधा मिथ्यादृष्टिः[२] नवविधावीच्यादयश्च[३] बोधिसत्त्वपिटकादिषु विस्तरेण अभिहिताः, तदेव (अस्माभिः) अत्र निरूपितम् ।

तत्फलतया अष्टौ अक्षणाः प्राप्यन्ते । **'येन कर्मावरणेन'** इति पूर्वापरौ उभाविति । पूर्वोक्तेषु (पञ्चानन्तर्येषु) यत्किमपि स्यात् (तदतिरिक्तं) भिक्षुणीदूषणं धर्मापववादः उपाध्यायादिभ्यः कायवाग्द्वारा हानिकरणादिकं च कर्मापि साक्षात् तत्समानमेव । तीव्रक्लेशतया नरकेषु मध्यक्लेशतया च तिर्यग्योन्याख्येषु (जन्मसम्भवः) । मृदुना (क्लेशेन) प्रेतेष्विव प्रान्तस्थानादिषु (जन्म) भविष्यति ।

"**अपि च**, (येन) **स्तूप**विनाशः विहारविनाशो वा कृतः, गुप्तरूपेण त्रिरत्नसम्बद्धधनस्योपयोगो वा कृतः, स मृत्योरनन्तरं (नियतम्) अवीचिनरके पतिष्यति । ततो (नरकात्) मुक्त्यनन्तरमपि एवंविधासु **तिर्यग्योनिषु** शरीरं ग्रहीष्यति, यथा—कपोत-चटका-चक्रवाक-शुक-नीलपक्ष-मत्स्य-कच्छप-वानर-मृगादिषु शरीरं ग्रहीष्यति । जन्मशतानन्तरं प्राप्तेऽपि मनुष्यशरीरे (स) नपुंसक-स्त्री-द्विलिङ्गि-अलिङ्गि-वेश्यादिरूपेण"[४] (जन्म ग्रहीष्यतीति सूत्रेषु) प्रोक्तम् ।

(घ) आर्यशुभाशुभकार्यकारणभावनिर्देशो नाम महायानसूत्रम्, देगे ३५४ सूत्र, 'आ'-पुटे, पृ० २०६ 'क' ।

१. आर्य गृहपति उग्रपरिपृच्छानाममहायानसूत्र, दे-गे ६३ 'ङ' पुटे पृ० २६२ 'ख' ६ ।

२. बोधिसत्त्वपिटकम्, दे-गे ५६ 'ग'-पुटे, पृ० ३२ 'क' ।

३. बोधिसत्त्वपिटकम्, दे-गे ५६ 'ग'-पुटे, पृ० ३२ 'क' ।

४. (क) शुभाशुभकार्यकारणभावनिर्देशसूत्रम्, दे-गे ३५४ सूत्र, 'आ'-पुटे, पृ० २०४ 'ख' ।
(ख) शुभाशुभकर्मविपाकनिर्देशसूत्रम्, दे-गे ३५५ सूत्र, 'आ'-पुटे, पृ० २१३ 'क' ।

अन्यदपि प्रोक्तम्—"इह जन्मनि पूजाद्रव्याणि भेदयित्वा रात्रौ च भोजनं भुञ्जानाः (पुरुषाः) क्षुत्-तृट्क्षामकण्ठानां **प्रेतानां** योनौ जन्म ग्रहीष्यन्ति । ते शतसहस्रवर्षाणि यावत् भोजनपानादिकं न लप्स्यन्ते । गमनवेलायां (तेषां) सम्पूर्णेऽपि शरीरे अग्निवद्दाहो भविष्यतीत्येवं"[१] (सूत्रेषु) कथितम् । अपि च, "धर्मापवादेन पुद्गलः मूको जायते"[२] । "धर्मश्रवणे अप्रियतया बधिर(रूपेण) उत्पन्नो भवति"[३] । "दुःशीलेन **इन्द्रियविकलता विकलाङ्गता** च जायेते"[४] । "परोक्षे गुरूणाम् अपवादेन (जनः) कल्लो भवति"[५] । "ये तावद् धनुषश्चालनेन (अश्वादिषु) आरोहणे च आनन्दं अनुभवन्ति, (ते आगामिनि जन्मनि) म्लेच्छयोनौ जायन्ते"[६] । "आचार्याणां गुरूणां च दर्शनेऽपि अनादरेण स्तब्धतया च हस्ताभ्यां पादाभ्यां च विकला भवन्ति"[७] । "गुरूणां दर्शने सति (ये केनापि) व्याजेन पलायन्ते, (तेषां) ग्रीवा निम्ना भवतीति"[८] (सूत्रेषु) उक्तम् ।

'मैत्रायणीपुत्रलोकप्रमुखपूर्णः' इति शब्दार्थाभिनिविष्टत्वात् प्रायेण दुर्गतौ जन्म गृहीतवान् ।

---

१. (क) शुभा.... कार्य .... निर्देशसूत्रम्, देगे ३५४ सूत्र, 'आ'-पुटे, पृ० २०५ 'क' ।
(ख) शुभा.... कर्म .... सूत्रम्, देगे ३५५ सूत्र, 'आ'-पुटे, पृ० २१३ 'ख' ।
२. (क) शुभा.... कार्य .... निर्देशसूत्रम्, देगे ३५४ सूत्र, 'आ'-पुटे, पृ० १९९ 'ख' ।
(ख) शुभा.... कर्म .... सूत्रम्, देगे ३५५ सूत्र, 'आ'-पुटे, पृ० २१० 'क' ।
३. (क) शुभा.... कार्य ... निर्देशसूत्रम्, देगे ३५४ सूत्र, 'आ'-पुटे, पृ० २०० 'ख' ।
(ख) शुभा.... कर्म .. सूत्रम्, देगे ३५५ सूत्र, 'आ'-पुटे, पृ० २१० 'ख' ।
४. (क) शुभा.... कार्य .... निर्देशसूत्रम्, देगे ३५४ सूत्र, 'आ'-पुटे, पृ० २०० 'ख' ।
(ख) शुभा.... कर्म .... सूत्रम्, देगे ३५५ सूत्र, 'आ'-पुटे, पृ० २१० 'ख' ।
५. (क) शुभा.... कार्य .... निर्देशसूत्रम्, देगे ३५४ सूत्र, 'आ'-पुटे, पृ० २०० 'ख' ।
(ख) शुभा.... कर्म .... सूत्रम्, देगे ३५५ सूत्र, 'आ'-पुटे, पृ० २१० 'ख' ।
६. (क) शुभा.... कार्य .... निर्देशसूत्रम्, देगे ३५४ सूत्र, 'आ'-पुटे, पृ० २०० 'ख' ।
(ख) शुभा.... कर्म .... सूत्रम्, देगे ३५५ सूत्र, 'आ'-पुटे, पृ० २१० 'ख' ।
७. (क) शुभा... कार्य .... निर्देशसूत्रम्, देगे ३५४ सूत्र, 'आ'-पुटे, पृ० १९९ 'ख' ।
(ख) शुभा.... कर्म ... सूत्रम्, देगे ३५५ सूत्र, 'आ'-पुटे, पृ० २१० 'ख' ।
८. (क) शुभा.... कार्य .... निर्देशसूत्रम्, देगे ३५४ सूत्र, 'आ'-पुटे, पृ० २०० 'ख' ।
(ख) शुभा.... कर्म .... सूत्रम्, देगे ३५५ सूत्र, 'आ'-पुटे, पृ० २१० 'ख' ।

(पूर्वोक्ताः) इमे सर्वे अर्थाः प्रायशः तथागतवचनेभ्यः प्राप्ता इति । (यतो हि) बोधिचित्तोत्पादं सत्त्वकल्याणं चतुर्वस्तुसंग्रहं दानादिपारमितादीन् (बोधिसत्त्वस्य) भूमिमार्गादीन् बोधिचर्यां च अपवदमानाः विपरीतार्थं अभिनिविशन्ते । अस्मात् कारणात् (पूर्वोक्तासु इमासु) (सर्वासु) दुर्गतिषु पतिष्यन्ति । (बुद्धानां) वचनानुसारं धर्माचरणमिति तत्प्रतिपक्षा[१]चरणमित्युक्तम् । अपि च (सूत्रेषु) "अन्येषाम् आवासे (निवसन्तं) बोधिसत्त्वं प्रति ईर्ष्यया मात्सर्येण च (जनः) दीर्घायुःपर्यन्तं यद्यपि जीविष्यति, तथापि तस्य त्रीणि महाभयानि भविष्यन्ति । कानि तानि (महाभयानि) ? (१) नरक- पतनभयम् (२) जात्यन्धभयम् (३) प्रान्तदेशे जन्मभयमिति त्रीणि"[२] ।

यदि "भिक्षुणीदूषणं कृतं तदा (सः पुद्गलः) अन्धनरके जन्म ग्रहीष्यति"[३] । "प्राणातिपातेन असिपत्रवने जन्म भविष्यति । आखेटेन कालसूत्रनामके (नरके) पतितो भूत्वा क्रकचैः विपाटितो भविष्यति । काममिथ्याचारेण तु प्रज्वलनशीले त्रपुगृहे पातयिष्यते तथा तप्तलौहासने नरके शाययिष्यते"[४] । "मदपानेन मदान्वितेभ्यः यत्र तप्तलौहद्रवपानं विधीयते, तस्मिन् नरके जन्म भविष्यति । संघीयफलानि चोरयतां तप्तायःपिण्डभोजके नरके जन्म भविष्यति । अन्त्राणि मांसानि च भुञ्जानानां परिक्लिन्ने नरके जन्म भविष्यति । पैशुन्येन विग्रहकारिणां यत्र नरके सत्त्वा हलानि कर्षन्ति, तस्मिन् नरके जन्म भविष्यति । अप्रियवचनः (जनः) यत्र नरके जिह्वाकर्तनं क्रियते, तत्र जन्म ग्रहीष्यति । भूयसा मृषावादिनां यत्र

---

१. बहुशोऽन्वेषणेनापि सूत्रमिद नोपलब्धम् ।
२. आर्यप्रशान्तविनिश्चयप्रातिहार्यसमाधिर्नाम महायानसूत्रम्, १२९, 'द'-पुटे, पृ० १९७ 'ख' । सूत्रमिदं शिक्षासमुच्चयेऽपि समुद्धृतम्, अध्याय-४, पृ० ५० (मिथिलासस्करण १९६०) ।
३. येभ्यो बुद्धप्रतिमा-चैत्य-पिटकसमक्षे दीपदानादिपूजाविधानं नैव रोचते, ते मरणानन्तरम् अन्धकारनरके जन्म ग्रहीष्यन्ति । द्र-शुभाशुभकार्यकारणभावनिर्देशसूत्रम्, देगे ३५४ सूत्र 'आ'-पुटे, पृ० २०२ 'ख' ।
४. शुभा.... कार्य ... निर्देशसूत्रम्, देगे ३५४ सूत्र, 'आ'-पुटे, पृ० २०२ 'ख' ।

जिह्वायां कीलानि प्रवेश्यन्ते, (तत्र) नरके जन्म भवष्यिति । प्राणघातं कृत्वा (बलिं दत्वा) विपर्यस्तदेवान् पूजयतां यत्र नरके लौहमुसलेन हन्यते, तत्र जन्म भविष्यति"[१] । एवं (सूत्रेषु बहुशः) उक्तम् । यथोक्तं कस्मिंश्चित् (आर्यमहासमयवैपुल्यसूत्रम्)[२]—

समधर्मैकपक्षं च श्रयेद् द्वौ पुद्गलौ विना ।
महाकामौ च तावुभौ

इक्युक्तम् **"तेषां बुद्धानां भगवतां ज्ञानभूतानां चक्षुर्भूतानां साक्षिभूतानां प्रमाणभूतानां जानतां पश्यतामि"** इत्यत्र समस्तदोषराशेः प्रतिदेशनायां तात्पर्यम् । सर्वाकारज्ञता, साक्षात्कारित्वम्, मुखरता[३], अमृषावादः, लीला, महाकरुणा चेति षडिमे तथागतगुणाः । शेषं सुगमम् ।

आयत्यां संवरमापद्ये इत्यभ्युपगमः ।

दोषा हि प्रतिदेश्याः स्युर्मैत्री च करुणाऽस्ति चेत् ।
शुद्धः प्राक्कृतदोषेभ्य **प्रतिदेश्याप्यसंवरे** ॥

विशुध्यते मलं नैव कृतेऽपि प्रतिदेशने ।

इत्युक्तम्[४] ।

"समन्वाहरन्तु मां ते बुद्धा भगवन्तो यन्मया अस्यां जातावन्यासु वा जातिष्वनवराग्रे वा जातिसंसारे" इति कुशलमूलपरिणामनार्थं चित्तार्पितत्वम् । किं तत् ? इह कृतं परत्र च कृतं (कुशलम्) । अनन्तेत्यत्र पूर्वान्तो हि अन्तार्थः । यथोक्तं **(आर्यमञ्जुश्री-) बुद्धक्षेत्रगुणव्यूहसूत्रे**[५]—

---

१. शुभा.... कार्य .... निर्देशसूत्रम्, देगे ३५४ सूत्र, 'आ'-पुटे, पृ0 २०३ 'क' ।
२. आर्यमहासमयवैपुल्यसूत्रम्, देगे २६५ सूत्र 'ह'-पुटे, पृ0 २७१ 'क' ।
३. तथागतस्येमे षड्गुणा कस्मिन्नपि सूत्रे नैकत्र लब्धुं शक्यन्ते, पृथक्शस्तु लभ्यन्ते । नैवोत्साहोऽस्य दातव्यो येनायं मुखरो भवेत् । बो0 च0-८/१६६ ।
४. श्लोकोऽय निपुण निरीक्षमाणेनापि मया नोपलब्धम् ।
५. देगे ५९ कोन्छेग 'ग'-पुटे, पृ0 २७९ 'क' । सूत्रमिदं शिक्षासमुच्चयेऽपि समुद्धृतम्, अध्याय-१, पृ0 ११ (मि0 संस्करण १९६0) ।

यावती प्रथमा कोटिः संसारस्यान्तवर्जिता ।
तावत्सत्त्वहितार्थाय चरिष्याम्यमितां चरिम् ॥

इदानीं प्रथमतः अपरिमितपूर्वजन्मसु कृतानां (समस्तकुशलानां) परिणामनां विधाय **'जातिसंसारे संसरता'** इति अन्यासु जातिषु अर्थात् देव–मनुष्य–प्रेत–तिर्यक्–नरकयोनिमति संसारे जन्मादानकाले । **'अन्तशस्तिर्यग्योनिगतायाप्यालोपः'** इति अन्तशः तिर्यग्योनौ समुत्पन्नेभ्यो जीवेभ्यः एकालोपमात्रं यद्दत्तमिति । बहुप्रदानस्य तु कथैव का ? अपि च, विशिष्टस्थानेषु दानम्, प्रभूतदानं कुशलेन मनसा दानमित्यपि (अर्थः) । दातृयोग्यतासमापादनानन्तरं **शील**पालनेच्छायां सत्यां संवरं गृह्णीयात् । (तदपि) अन्तशः उपवसथ (संवर–) ग्रहणं (कर्तव्यम्) । (अथवा) उपासकसंवरो वा श्रमणसंवरो भिक्षुसंवरो वा, योऽपि पालयितुं शक्यते, सर्वेषाम् (अत्र ग्रहणम्) भवति । वैशिष्ट्यमधिकृत्य तावत् **ब्रह्मचर्यव्रतस्था**नि सर्वाणि कुशलानीति तात्पर्यम् । तदपि यथा भगवतोक्तम्— "**तिर्यग्योनिगतेभ्यः** यद्दानं **दत्तं** तेन शतगुणतोऽप्यधिकं फलं (पुण्यं) प्राप्तं भवति । यद्येकस्मै साधारणजनाय दानं दत्तम्, तेन सहस्रगुणतोऽप्यधिकं (पुण्यं) प्राप्तं भवति । शीलवते भिक्षवे दत्तेन दानेन दससहस्रगुणतोऽप्यधिकं (पुण्यं) प्राप्तं भवति । तेनैव धर्मभाणकाय दत्तेन दानेन अपरिमितं (पुण्यं) प्राप्यत"[१] इति (भगवद्वचनेषु) उक्तम् ।

---

१. (क) आर्यश्रद्धाबलाधानावतारमुद्रासूत्रम्, देगे २०१ सूत्रम्, 'छ'–पुटे, पृ० ५३ 'ख' । इदमपि सूत्रं शिक्षासमुच्चयेऽपि समुद्धृतम्, अध्याय–४, पृ० ५२ (मिथिलासंस्करण १९६०) ।
(ख) आर्यप्रशान्तविनिश्चयप्रातिहार्यसमाधिर्नाम महायानसूत्रम्, दे–गे १२९ सूत्र, 'द'–पुटे, पृ० २०६ 'ख' ।
(ग) शुभा... कार्य .... सूत्रम्, देगे ३५४ सूत्र, 'आ'–पुटे, पृ० २०७ 'ख' ।
(घ) शुभा.... कर्म .... सूत्रम्, देगे ३५५ सूत्र, 'आ'–पुटे, पृ० २१५ 'क' ।

अन्यदपि (उक्तम्)—"यदि तथागताय मात्रे पित्रे ग्लानाय वा अल्पमात्रमपि अन्नदानं क्रियते, (तेन) अपरिमितं फलं प्राप्स्यत"[१]–इति (सूत्रेषु) उक्तम् । **आर्यप्रशान्तविनिश्चयप्रातिहार्यसमाधिसूत्रे** [२] उक्तं यत् "बोधिसत्त्वः पिण्डपातमादाय कृश–विवश–द्ररिद्र–शिष्येषु विभज्य ददाति, तदा तेन कुशलमूलेन स अन्यस्मिन् जन्मनि चक्रसंवरराजमहर्द्धिमान् भविष्यति" इति (सूत्रेषु) उक्तम् । "यस्य तावत् षडिन्द्रियाणि परिपूर्णानि तेन (पूर्वजन्मसु) सम्यक् शीलं संरक्षितमिति"[३] (सूत्रेषूक्तम्) । **आर्यरश्मिसमन्तमुक्तनिर्देशसूत्रे** [४] तावदुक्तम्—

"एकया प्रभया यद्वद् दशवर्णाधिगमो भवेत् ।
पृथग् दानात् कदाचिच्च मृदुमध्योत्तमानि हि ॥

"मिश्रणेन यथैकेन वर्णविंशकमाप्यते ।
पृथक् शीलेन जायन्ते मृदुमध्योत्तमानि हि ॥"

"विशुद्धशीलवान् भिक्षुः श्रमणः शीलसंवृतः ।
प्रज्ञप्तिचीवरं धृत्वा पक्षेण पोषधं चरेत् ॥

खक्खरं पात्रमादाय शुद्धं पिण्डं समाहरेत् ।

नमन्ति सादरं देवाः साञ्जलि हर्षनिर्भराः ।
अस्माभिस्ते नराः सेव्या यथेन्द्रस्त्रायस्त्रिशकैः ।
देवैः सत्क्रियते चान्यैः कर्तव्यश्च तथादरः ॥

इहैव प्राप्यते श्रेयः ह्यचिन्त्यं परजन्मनि ।
प्रव्रज्य शीलमादाय बुद्धस्नेहानृणो न्वहम् ॥"[५]

---

१. (क) शुभा.... कार्य .... निर्देशसूत्रम्, देगे ३५४ सूत्र, 'आ'–पुटे, पृ0 २0७ 'ख' ।
(ख) शुभा.... कर्म .... सूत्रम्, देगे ३५५ सूत्र, 'आ'–पुटे, पृ0 २१५ 'ख' ।
२. देगे १२९ सूत्र 'द' १९७ 'ख' ।
३. (क) शुभा.... कार्य .... निर्देशसूत्रम्, देगे ३५४ सूत्र, 'आ'–पुटे, पृ0 २00 'ख' ।
(ख) शुभा.... कर्म .... सूत्रम्, देगे ३५५ सूत्र, 'आ'–पुटे, पृ0 २१0 'ख' ।
४. देगे १२९ सूत्र 'द'–पुटे, पृ0 १९७ 'ख' ।
५. (क) आर्यमहामोक्षदिशन् पुष्यकौकृत्यपापशोधनबुद्धसिद्धिव्यूह नाम महायानसूत्रम्, देगे २६४ सूत्र, 'ह'–पुटे, पृ0 २८७ 'क' ।

इत्येवं कथितम् ।

इत्थं प्रातिमोक्ष[1]संवरे सुशिक्षितव्यम् । बोधिचित्तोत्पादनमिति विस्तृतसंवरसमाश्रयणमिव (द्रष्टव्यम्), तदपि (बोधिचित्तं) प्रणिधि-प्रस्थानचित्ताभ्यां द्विधा विभज्यते । उक्तं च **गण्डव्यूहसूत्रे**[2]—"दुर्लभास्ते कुलपुत्र, सत्त्वाः सत्त्वलोके, येऽनुत्तरायां सम्यक्संबोधौ प्रणिदधति इति । ततोऽपि दुर्लभत-मास्ते सत्त्वा ये अनुत्तरां सम्यक्संबोधिम् अभिसम्प्रस्थिताः" इति । **रत्नोल्कासूत्रे**[3] चोक्तम्—

ये सदधिष्ठितसर्वजिनेभि-
स्तेषुपपद्यति बोधयि चित्तम् ।
येषुपपद्यति बोधयि चित्तं
ते अभियुक्त महर्षिगुणेषु ॥ इति ॥

आर्यत्रिस्कन्धसूत्रे[4] कथितम्—"बोधिचित्तानभिव्याप्तो नास्ति कश्चिदपि धर्मधातुः । बोधिचित्तोत्पादाय अर्जितं किमपि कुशलमूलं त्रिष्वपि कालेषु नास्त्यव्यापकम् अणुमात्रमपि"। अपि च, "यत्र येन चित्तम् उत्पादितं तस्य तत्कालं भूयस्तराः पुण्यसम्भाराः

(ख) आर्यमहासमयवैपुल्यसूत्रोद्धृतनमस्कारनामसगीतिगुणनिदानाना त्रिकालसर्वतथागत-नामसगीतिनमस्काराणां देशनानां च परिवर्ता सशोधिताश्च । देगे २६५ सूत्र, 'ह'-पुटे, पृ० २५३ 'क' ।

१. सप्त प्रातिमोक्षसवरा—भिक्षुसंवरः, भिक्षुणीसंवरः, श्रामणेरसंवर, श्रामणेरीसंवर, उपासकसंवरः, उपासिकासवर, शिक्षमाणासवरश्च । द्र०-अभि० को०, ४ : १४, पृ० ६०६, बौद्धभारतीसंस्करण-१९८७ ।

२. देगेसस्करण ४४ सूत्र, फलछेन, 'ग'-पुटे, पृ० ३२३ 'ख' ।

३. ये सदधिष्ठितसर्वजिनेत्रि—
स्तेषूपपद्यति बोधयि चित्तम् ।
येषुपपद्यति बोधयि चित्त
ते अभियुक्त महर्षिगुणेषु ॥
द्र०-शिक्षासमुच्चयः, पृ० ५ मिथिलासस्करण-१९६० । देगे-सस्करण १४५ सूत्र, 'प'-पुटे, पृ० ६४ 'ख' ।

४. देगे-संस्करण २८४ सूत्र, 'य'-पुटे, पृ० ६९ 'क' ।

समुत्पद्यन्ते । चक्रवर्ति–लोकपाल–ब्रह्मेन्द्र–श्रावक– प्रत्येकबुद्धेष्वपि सत्सु न तेषां तावान् पुण्यसम्भारः यावान् सर्वसत्त्वानां कृते (बोधि चित्तोत्पादस्य)" इति । यथोक्तमपि **(आचार्यचन्द्रगोमिना)**[१]—

संवरस्थगुरोर्विज्ञात् क्षमाच्च परिगृह्यताम् । इत्युक्तम् ।

यदि एवंविधः (गुरुः) नोपलभ्येत तदा बुद्धरत्नात् (संवरः) ग्रहणीयः । अत्र अनादिकाल इत्यस्य यदा आर्याः संविद्यन्ते, तस्मिन् काले तात्पर्यम् । ततः श्रुत–चिन्ता–भावनासु परिपाकमागच्छेत्, तेन च (सर्वेषां) सत्त्वानां परिपाकः क्रियते । "कुलवन्तः श्रावकाः श्रावकबोधौ स्थापनीयाः, प्रत्येकबुद्धाः हि कुलवन्तः प्रत्येकबुद्धमार्गे अधिरोहणीयाः, बोधिसत्त्वाश्च कुलवन्तस्तावद् अनुत्तरबोधौ स्थापयितव्याः इति"[२] **(सूत्रे)** निर्दिष्टम् । "दानादिविपक्षविरहेण निर्विकल्पज्ञानेन सर्वेच्छापरिपूर्त्या सर्वसत्त्वपरिपाकेन हि तिस्रो बोधयः सिध्यन्ति इति"[३] (सूत्रेषु) उक्तम् ।

ततोऽन्तशः निर्विकल्पज्ञानविषयकं यद्धि परमार्थबोधिचित्तम्, तस्य अनुत्तरज्ञानकुशलमूले तात्पर्यम् ।

यथोक्तं **रश्मिसमन्तमुक्तनिर्देशसूत्रे**[४]—

ये श्रद्दधन्ति सूत्रेऽस्मिन् ज्ञास्यन्त्यक्षयरूपताम् ।
तत्सिद्धेऽभिसमाधौ चाखेदो ज्ञाने ह्यनुत्तरे ॥

अपि च[५],

"भिक्षुर्वा कोऽपि चान्वेष्टुं ज्ञानं चानुत्तरं ह्यति– ।
श्रद्धालुमनसा सूत्रे सयत्नं वीर्यमारभेत् ॥

---

१. द्र०–बोधिसत्त्वसंवरविंशिका, चन्द्रगोमिकृता, देगे ४०८१ सूत्र, सेमचम 'ही'–पुटे, पृ० १६६ 'ख' ।
२. नोपलब्धमिदमुद्धरणम् ।
३. न प्राप्तमिदं सूत्रम् ।
४. देगे संस्करण ५५ सूत्रम्, कोनछेग्, 'ख'–पुटे पृ० २०५ 'ख' ।
५. देगे संस्करणं ५५ सूत्रम्, कोनछेग्, 'ख'–पुटे पृ० २०७ 'क' ।

न संसारे भयं योऽनुत्तरज्ञानगवेषकः ।
प्रहाय सर्वपापानि प्राप्तः कल्याणमुत्तमम् ॥"[१]

'यच्च मे .... तत्सर्वम्' इति कथिताकथितम् । किं तत् ? दश पारमिताः[२], चत्वारि स्मृत्युपस्थानानि[३], चत्वारि सम्यक्प्रहाणानि[४], चत्वार ऋद्धिपादाः[५], पञ्चेन्द्रियाणि[६], पञ्च बलानि[७], सप्त बोध्यङ्गानि[८], आर्याष्टाङ्गिको मार्गः[९], चत्वारि आर्यसत्यानि[१०],

---

१. देगे संस्करणं ५५ सूत्रम्, कोनछेग्, 'ख'-पुटे पृ० २०८ 'क' ।
२. (१) दानपारमिता, (२) शीलपारमिता, (३) क्षान्तिपारमिता, (४) वीर्यपारमिता, (५) ध्यानपारमिता, (६) प्रज्ञापारमिता, (७) उपायपारमिता, (८) प्रणिधिपारमिता, (९) बलपारमिता एवं (१०) ज्ञानपारमिता—इमा दश पारमिताः । द्र०-धर्मसंग्रहः, पृ० ९ (तिब्बतीसंस्थानसस्करण १९८८) ।
३. (१) कायस्मृत्युपस्थानम्, (२) वेदनास्मृत्युपस्थानम्, (३) चित्तस्मृत्युपस्थानम्, (४) धर्मस्मृत्युपस्थानं चेति चत्वारि स्मृत्युपस्थानानि । द्र०-धर्मसग्रह., पृ० २४ (तिब्बतीसंस्थानसंस्करण १९८८) ।
४. (१) उत्पन्नाना कुशलमूलानामपरिहाणम्, (२) अनुत्पन्नानामुत्पादः, (३) उत्पन्नानामकुशलमूलानां धर्माणां प्रहाणम्, (४) अनुत्पन्नानां पुनरनुत्पादः इति चत्वारि सम्यकप्रधानानि । द्र०-धर्मसंग्रहः, पृ० २४ ।
५. (१) छन्दसमाधिप्रहाणसस्कारसमन्वागत ऋद्धिपादः (२) चित्तर्द्धिपादः, (३) वीर्यर्द्धिपादः, (४) मीमांसासमाधिप्रहाणसंस्कारसमन्वागत ऋद्धिपाद इति चत्वारि ऋद्धिपादाः । द्र०-धर्मसंग्रहः, पृ० २५ (तिब्बतीसंस्थानसस्करणं १९८८) ।
६. (१) श्रद्धेन्द्रियम्, (२) समाधीन्द्रियम्, (३) वीर्येन्द्रियम्, (४) स्मृतीन्द्रियम्, (५) प्रज्ञेन्द्रियमिति पञ्चेन्द्रियाणि । द्र०-धर्मसंग्रहः, पृ० २५ (तिब्बतीसंस्थानसंस्करण १९८८) ।
७. (१) श्रद्धाबलम्, (२) वीर्यबलम्, (३) स्मृतिबलम्, (४) समाधिबलम्, (५) प्रज्ञाबलमिति पञ्च बलानि । द्र०-धर्मसंग्रहः, पृ० २६ (ति०सं०स० १९८८) ।
८. (१) स्मृतिसम्बोध्यङ्गम्, (२) धर्मविचयसम्बोध्यङ्गम्, (३) वीर्यसम्बोध्यङ्गम्, (४) प्रीतिसम्बोध्यङ्गम्, (५) प्रश्रब्धिसम्बोध्यङ्गम्, (६) समाधिसम्बोध्यङ्गम्, (७) उपेक्षासम्बोध्यङ्गमिति सप्त सम्बोध्यङ्गानि । द्र०-धर्मसंग्रहः, पृ० २६ (ति०स०स० १९८८) ।
९. (१) सम्यग्दृष्टिः, (२) सम्यक् संकल्पः, (३) सम्यग् वाक्, (४) सम्यक् कर्मान्तः, (५) सम्यग् आजीवः, (६) सम्यग् व्यायामः, (७) सम्यक् स्मृतिः, (८) सम्यक् समाधिरित्यष्टौ मार्गाङ्गानि । द्र०-धर्मसंग्रहः, पृ० २७ (ति०सं०सं० १९८८) ।
१०. (१) दुःखसत्यम्, (२) समुदयसत्यम्, (३) निरोधसत्यम्, (४) मार्गसत्यमिति चत्वारि सत्यानि । द्र०-धर्मसंग्रहः, पृ० ११ ।

चत्वारि अप्रमाणानि[१], चत्वारि संग्रहवस्तूनि,[२] ध्यान[३]-विमोक्षादयः[४] सर्वेऽपि ग्रहणार्हाः ।

'एकध्यं पिण्डयित्वा तुलयित्वा अभिसंक्षिप्य' इति अस्यैव जन्मनः कृते परिणामनाऽभावात् लोकसम्पत्त्यर्थं परिणामनाऽभावात् पिण्डयित्वा **'तुलयित्वा'** । श्रावक-प्रत्येकबुद्धत्वाय परिणामनाऽभावात् **'अभिसंक्षिप्य'** इति । अन्यथा लौकिक-हीनयान-आत्मादीनां 'क्रमशः' इत्यर्थे तात्पर्यम् । **आर्यत्रिस्कन्धसूत्रेऽप्युक्तम्**[५]— **"यच्च मे** इत्यादित आरभ्य यावत् पर्यन्तं कृतानां कुशलमूलानां सर्वज्ञतायै या परिणामना, यच्च मे संस्कृतवस्तूनाम् अभिसिद्ध्यर्थं कृतानां कुशलमूलानां या परिणामना, यच्च कृतानि कुशलमूलानि, तानि श्रावकप्रत्येकबुद्धत्वाभिसिद्धये कुशलमूलानि । यच्च मे अर्जितानि कुशलमूलानि सर्वेषु कालेषु सञ्चितानि तन्निष्पादिततथागतज्ञानज्ञेयानि, तानि सर्वाणि पिण्डयित्वा तुलयित्वा संक्षिपामि इत्युक्तम्। अपि च, "तानि सर्वाणि पिण्डयित्वा अनुत्तरायां सम्यक्संबोधौ परिणामयामि"[६]— इत्युक्तम् । **'अनुत्तरायां सम्यक्संबोधौ उत्तरोत्तरया परिणामनया'** इति परिशुद्धा परिणामना । नास्ति गुरुसमः अन्यः कश्चिद् श्रेष्ठः गन्तव्यनिष्ठागतत्वात्, स उत्तररहितः (अनुत्तरः) एव, स अन्येषां सर्वेषां गुरूणां गुरुः, तथा (सर्वेभ्यः) उत्तरः । स

---

१. (१) मैत्री, (२) करुणा, (३) मुदिता, (४) उपेक्षेति चत्वारो ब्रह्मविहाराः । द्र०-धर्मसंग्रहः, पृ० १० ।

२. (१) दानम्, (२) प्रियवचनम्, (३) अर्थचर्या, (४) समानार्थतेति चत्वारि सग्रहवस्तूनि । द्र०-धर्मसंग्रहः, पृ० १० ।

३. प्रथमध्यानम्, द्वितीयध्यानम्, तृतीयध्यानम्, चतुर्थध्यानञ्च ।

४. (१) रूपी रूपाणि पश्यति, शून्यम्, (२) अध्यात्मारूपसज्ञी बहिर्धा रूपाणि पश्यति, शून्यम्, (३) आकाशानन्त्यायतनं पश्यति, शून्यम्, (४) विज्ञानानन्त्यायतन पश्यति, शून्यम्, (५) आकिञ्चन्यायतन पश्यति, शून्यम्, (६) नैवसंज्ञानासंज्ञायतनं पश्यति, शून्यम्, (७) विघ्नापहशुभ पश्यति, शून्यम्, (८) संज्ञावेदयितनिरोधं पश्यति, शून्यम् इत्यष्टौ विमोक्षा । द्र०-धर्मसंग्रहः, पृ० ३१ (ति०सं०स० १९८८) ।

५. देगे संस्करणं २८४ सूत्रम्, कोनछेग्, 'य'-पुटे, पृ० ६९ 'ख' ।

६. देगे संस्करणं २८४ सूत्रम्, कोनछेग्, 'य'-पुटे, पृ० ६९ 'ख' ।

एव इत्यस्य परिनिष्ठया तात्पर्यम् । परिनिर्वाणमित्युत्तरम्, स आर्यश्रावकः प्रत्येकबुद्धश्च(उत्तरः) । एभ्यः सर्वेभ्यः उत्तरा महायानीया बोधिः । बोधिसत्त्वेभ्योऽप्युत्तरं सर्वसत्त्वहितविधानम् । ततोऽप्युत्तरो भगवान् बुद्धः, सर्वाविपरीतगुणैरुपेतः धर्मकाय इति बोधिः । शब्दकल्पनारहितत्वात् सर्वप्रपञ्चोपशमः स्वप्रत्यात्माधिगम-ज्ञानसद्गोचर इति ।

आर्यरश्मिसमन्तमुक्तनिर्देशसूत्रे[1] चोक्तम् :

गमनागमने न स्तो नीरूपे दिग्विदिक्तथा ।
अनिमित्तमवाच्यं तत् प्रपञ्चातीतमेव च ॥

बोधिसत्त्वस्य निष्पन्ने साध्ये शान्तत्वमाप्यते ।

अपि च[2],

क्लेशांश्च दमयित्वा तु कुशलानां बलेन हि ।
स्थितश्चोपशमे प्राप्तो विशिष्टानपि तद्गुणान् ॥

विशालोदधिवत् प्रज्ञा गुणाश्चापि सुसाध्यते ।
क्षान्त्यादिश्च सुखि भूत्वा चित्तं चाविचलं भवेत् ॥

बोधिसत्त्वैः सदाऽभ्यासो विद्वद्भिः स प्रशस्यते ।

यथा परिणामितम् अतीतैर्बुद्धैर्भगवद्भिर्यथा परिणामयिष्यन्ति अनागता बुद्धा भगवन्तः, यथा च परिणामयन्ति एतर्हि (दशसु दिक्षु) प्रत्युत्पन्ना बुद्धा भगवन्तः, तथा अहमपि परिणामयिष्यामि ।

सर्वं पापं प्रतिदेशयामि । सर्वं पुण्यमनुमोदयामि । सर्वान् बुद्धान् अध्येषयामि । भवतु मे ज्ञानमनुत्तरम् ।

---

१. देगे संस्करणं ५५ सूत्रम्, 'कोनछेग्', 'ख'-पुटे, पृ० २८४ 'ख' ।
२. देगे सस्करणं ५५ सूत्रम्, 'कोनछेग्', 'ख'-पुटे, पृ० २८४ 'ख' ।

ये चाभ्यतीतास्तथपि च ये अनागता
ये चापि तिष्ठन्ति नरोत्तमा जिनाः ।
अनन्तवर्णान् गुणसागरोपमा-
नुपैमि सर्वान् शरणं कृताञ्जलिः ।

इत्यादिकस्य अर्थः सुगमत्वान्मया नैव निर्दिष्टः ।

आचार्यजितारिविरचिता बोधिसत्त्वशिक्षाक्रमो नाम बोध्यापत्तिदेशनावृत्तिः परिसमाप्ता

नेपालाभिजनेन पण्डितेन (रविरक्षितेन)[१] भोटदेशीयेन चानुवादकेन (लोचावा) छक् (छोस् जे पेल) विदुषा अनूदिता ।

•

१. भोटदेशीययस्य महाविदुषः कोङ्टुल योनतेन-महोदयस्य कृतौ 'शैजा कुनख्यब जोद्' नामिकायां 'छक् छोस् जे पेल' नाम्नोऽनुवादकस्य गुरुः नेपालदेशीयः पण्डितप्रवर. रविरक्षित आसीदित्युल्लेखः प्राप्यते । द्र०-'शैजा कुनख्यब जोद्', भाग-१, पृ० ५५० (मिरिग-प्रकाशन, तिब्बत १९८५) ।

भारत(–संस्कृत)भाषायाम् कर्मावरणविशोधनविधिभाष्यं नाम

नमः सर्वबुद्धबोधिसत्त्वेभ्यः

मुने रवे मलालिप्त ज्ञानमण्डलभासित ।
वाक्प्रभाहुतभुग्दग्धसर्वजीवावृते जयः ॥

यो वीरो विशालदुःखार्णवनिमग्नाज्जगतः चित्तमपकृष्य तदुद्धर्तुकामः बोधौ कृतबुद्धिः (स) तत्प्रापकसन्मार्गेष्वविचलितः सन् यथाक्रमं तदर्थसंवर्धनोपायेषु उद्यमेत् । यदि केनचित् कारणेन हानिर्भवेत् तदा तदनन्तरं पुनर्व्युत्थानोपायेषु यत्नं कुर्यात् । पाराजयिकस्थानीयधर्मे आचरिते तु पुनः संवरं गृह्णीयात् । मध्यास्रवभूतानां त्रिः देशनं कुर्यात् । लघुभूतानामेकवारं देशनं कुर्यात् । तदवशिष्टान् स्वचित्तेन संवरणीयान् यथाचरणं धर्मानुसार-मुद्धरेत्[1] । ततोऽवशिष्टानि कर्मावरणानि तदन्यानि अनादि-कालपरिसञ्चितानि गहनावरणानि चेत्येतावद्भिर्महाबोधेर- प्रतिघाताय मुनिना समनुज्ञातेन 'बोधिचित्तापत्तिदेशनाविधिः' इत्यनेन अहोरात्रं षदसु यामेषु प्रतिदेशयितुं यत्नं कुर्यात् । अत्रापि येभ्यः स्वानि आवरणानि देश्यन्ते तान् सर्वान् शरणप्रतिरूपकान् मत्वा सादरं नमस्कृत्य अध्येषयेत् ।

तत्र प्रथमं शरणगमनं तावद् '**अहं** अमुकनामा **बुद्धं शरणं गच्छामि**' इत्यादि । सम्यक् संबुद्धः, **धर्मः**, तदनुष्ठायकः **संघश्च** क्रमशः संसारोत्तरणमार्गदेशकः, मार्गः, तत्प्रतिपत्तिसहायकश्च

---

१. (क) द्र०–आचार्यशान्तरक्षितकृति 'सवरविशिकावृत्ति' देगे–संस्करण ४०८२ सूत्रं 'सेमचम' 'ही' पुटे, पृ० १७२ 'क' ।
(ख) द्र०–आचार्यबोधिभद्रकृति 'बोधिसत्त्वसंवरपञ्जिका', देगे–सस्करण ४०८३ सूत्रं 'सेमचम' 'ही' पुटे, पृ० २०२ 'ख' ।

भवन्ति । न तु इतरे हरि–हर–हिरण्यगर्भनारायणादयः, कपिल–कणादादयश्च, यतो हि ते स्वयं भवचारके तीव्रकर्मक्लेशनिगडबद्धाः, मरणादिभिः भयानकरक्षोभिः सर्वदा नाश्यन्ते । अत एतेषां सर्वेषां भवचारकान्मुक्तिरपि बुद्धमात्राश्रितैव । बुद्धादीन् परित्यज्य को हि प्रेक्षावान् इतरशरणं यास्यतीति ।

नमस्कारस्तु–**नमस्तथागताय अर्हते सम्यक् संबुद्धाय शाक्यमुनये**–इत्यादिः । एभिः पञ्चत्रिंशद्भिः तथागतैः बोधिसत्त्व–चर्याचरणकाले 'अनुत्तरायां सम्यक्संबोधौ मयि अभिसम्बुद्धे सति ये अस्मभ्यं सनामग्राहं नमस्कुर्युः तेषां कर्मावरणानि प्रहीणानि स्युरिति प्रणिधानं कृतम् । अतः प्रणिधानबलेन समन्वितत्वाद् इमे एव वन्दनीयस्थानानि, नेतरे वन्दनीया इति कथयितुं न युज्यते । अत्र **तथागतस्तावत्** सर्वधर्मतथताधिगतिः तदध्यवसायो वा । **अर्हंस्तु 'अर'** इति अरयः अराः वा, तान् हन्ति विहेठयतीति वा **'हत्'** इति । सवासनक्लेशानां पुनरनुत्पत्तिकप्रहाणकारित्वात् प्रतीत्यसमुत्पादेन हतारित्वाच्च अर्हन्निति । अथवा अर्हः योग्य इति त्रैधातुकैः पूजनीयत्वादिति । सम्यक् समतया निरवशेषेण वा सर्वथा बुद्धत्वात् **सम्यक्संबुद्ध** इति । अनेन प्रहाणं गुणश्चेति महत्त्वद्वयं ख्यापितम्, इतरेऽपि गुणा द्रष्टव्याः । **शाक्यमुनिस्तावत्** शाक्यकुले जातत्वात्तथोक्तम् ।

अभेद्यत्वात् सम्यक्संबुद्धज्ञानमेव वज्रमिति । तद्गर्भेण सत्कायदृष्ट्यादिसमस्तविपक्षाणां प्रमर्दनात् **वज्रगर्भप्रमर्दिन्** इति। एवमेव अन्येषामपि गुणनामान्यनुसृत्य यथायोग्यं नामार्थाः निर्वचनीयाः । गुणानामानन्त्यात् प्रत्येकं सर्वनामाख्यानेऽपि तद्धेतोः सत्त्वात् स्वातन्त्र्यदोषो नाशङ्कनीयः ।

अध्येषणा तु ते **एवं प्रमुखाः** इत्यादि । भगवांस्तावत् सर्वदोषान् भग्नवान् श्रीप्रभृतिगुणवांश्च । **यावन्त** इति निरवशेषाः ।

तिष्ठन्ति ध्रियन्ते यापयन्ति इति यथाक्रमं धर्मकायादित्रयम् । **मां समन्वाहरन्तु** इति (आत्मानं प्रति) चित्तावर्जनार्थम् अध्येषणा । प्रतिरूपिका ममैषा अध्येषणा, असम्प्रमोषधर्मतापन्नत्वात्, सर्वबुद्धानाम् एकोऽपि सत्त्वः कदापि विस्मृतः स्यादिति स्थानं (सम्भावना) नास्ति । यद्येवं सर्वसत्त्वान् विस्तृतेभ्यः सांसारिकदुःखेभ्य किमर्थं न मोचयन्ति ? सत्त्वानां स्वस्वदोषहेतोः, यथा–सूर्यमण्डलप्रभासु तीक्ष्णासु सर्वदिग्व्यापिकासु पुरःस्थितास्वपि जात्यन्धैर्न दृश्यन्ते तद्वत् । अत उक्तं **रत्नोल्कायाम् (धारण्याम्)** अपि :

सूर्य यथा जात्यन्ध न पश्यी
नो च स नास्ति उदेति स लोके ।
चक्षुसमेत उदागमु ज्ञात्वा
सर्व प्रयुज्य स्वक–स्वकधर्मे[1] ॥

इत्यादिभिरयमेवार्थो विस्तरेण दर्शितः । येषां समक्षं देशनीयावरण–वस्तूनि **यानि मया** कृतानि इत्यादीनि । मया इत्यनेन तावत् कर्ता, **अस्यां जातौ अन्यासु वा जातिष्वनवराग्रे** इत्ययं कृत्यकालः । **जाति–संसारे संसरता** अन्ययोनय एव **कृत्यस्थानम्** । सामान्येन कृतानां पापानां स्वभावकथनाय **पापकं कर्म** इत्यादि । यत्किमपि दुःखमूलं कर्म स्वयं कृतम्, अन्यैः कारितम्, तथा असत्यपि अन्येन कृतस्य प्रीत्या **अनुमोदितं** भवेत्, विशेषेण गुरुविपाकं **स्तौपिकं** वेत्यादि । तदपि अदत्तादानेषु गुरुतरं श्रद्धधानैः दायकैः अष्टमहातीर्थादिषु स्तूपार्थम् अर्पितं **सामग्री**जातम्, चातुर्दिशैः **संघै**रधिकृतम्, पृथक्पुद्गलैर्न परिगृहीतम् **अपहृतम्** इत्यादि । एभिः तीव्रदुःखाः त्रिविधापायाः दुर्गत्यन्ता अनुभूयन्ते । दुष्प्रतिकारत्वाद् (एतेषां) विपाको गुरुतरो भवति । अत्यन्तदुःखप्रदायकानि

---

१. द्र० (क) शान्तिदेव, शिक्षासमुच्चये उद्धृतम्, पृ० १८२ मिथिलाविद्यापीठप्रकाशितम् १९६०
(ख) तोहोकू–145 देगे–काग्युर दोदे 'पा' पृ० ७४ख

दोषकारणानि **आनन्तर्यकर्माणि** इत्यादि । यैः पितृघातादीनि कृतानि इत्यादीनि तावत् तीव्रदुःखानुभवे अवीचिनरके पतितसत्त्वेभ्यः नरकान्तरीयदुःखेभ्यो विशिष्टदुःखकारणात् जन्मान्तरालाभावकारणाच्च **आनन्तर्याणि** इति । अत इमानि आत्यन्तिकदुःखदोषकारणानीत्य-भिधीयन्ते । सर्ववस्तुसङ्गृहीतानि अकुशलानि **दशाकुशलानि** इत्यादि । तिसृषु दुर्गतिषु यथायोग्यं भोगायतनादिसर्ववस्तुविपाकानां कर्माणि । यथा—प्राणातिपातादीनि त्रीणि कायाश्रितानि, मृषावादादीनि चत्वारि वागाश्रितानि तथा व्यापादादीनि चित्ताश्रितानि । एभिस्त्रिभिः सर्ववस्तुसङ्ग्रहो **अकुशलकर्मपथसङ्ग्रहः** इति । तदितरं तदनुरूपम् आवरणं कर्मावरणमित्यादि । तान्यपि कृतानि स्व-परार्थसाधनेऽसमर्थकराणि व्यवहितजन्मग्राहकाणि च भवन्ति, यथोक्तम् :

> नरकप्रेततिर्यञ्चो म्लेच्छासंज्ञिकनिर्जराः ।
> मिथ्यादृग्बुद्धनिःश्रद्धौ मूकताऽष्टाक्षणाः स्थिताः[१] ॥

---

१. द्र0—बोधिचर्यावतारपंजिका, प्रज्ञाकरमतिकृता, पृ0 ५ (मिथिला—सस्करण १९६०) ।
के तावदष्टौ अक्षणाः इत्यस्मिन् विषये बहुविधा गणनाप्रक्रिया समुपलभ्यते । जिज्ञासुभिरधोलिखितानि स्रोतास्यवलोकनीयानि—

१. आर्य विनयविनिश्चय—उपालिपरिपृच्छा नाम—महायानसूत्र, देगे ६८. कोनचेग 'च' पुट्, पृ. १२0ख;
२. समन्तभद्र—साधनावृत्ति., देगे. १८६७, तन्त्र, 'दी' पुट् पृ १४१ख;
३. श्रीसमन्तभद्र—साधनावृत्ति., देगे. १८६८, तन्त्र, 'दी' पुट् पृ. १८९ख;
४. चतुरंगसाधनाटीका—सारमञ्जरीनाम, देगे. १८६९, तन्त्र, 'मी' पुट् पृ. ३क;
५ आर्य नामसगीतिटीका—मन्त्रार्थावलोकिनीनाम,देगे. २५३३, तन्त्र, 'खु' पुट् पृ. १0९क;
६. आर्य मञ्जुश्री नामसगीतिटीका, देगे. २५३४, तन्त्र, 'खु' पुट् पृ २९३ख, २९८ख;
७ बोधि पद्धति नाम, देगे. ३७६६, तन्त्र, 'छु' पुट् पृ. ११९ख;
८ आर्य—पञ्चविंशति—साहस्रिका—प्रज्ञापारमितोपदेशशास्त्र—अभिसमयालकार—वृत्तिः, देगे. ३७८७ शेरछिन, 'क' पुट् पृ. १४७ख;
९. आर्य अष्टसाहस्रिका—प्रज्ञापारमिता—व्याख्या—अभिसमयालंकारालोक—नाम, देगे ३७९१, शेरछिन, 'छ' पुट् पृ. २४८क;

एतदुत्पादकारणानि गम्भीरधर्मपरित्यागः, सूक्ष्मापत्तिभ्योऽपि अनपत्राप्यम्, सम्पत्तिष्वभिष्वङ्गः, मात्सर्यादिष्वनुरागणाद् अल्पमात्रमपि

---

१०. अभिसमयालंकार–वृत्तिः–कीर्तिकला–नाम, देगे. ३७९९, शेरछिन, 'ञ' पुद् पृ. २३४क;
११. आर्य–अष्टसाहस्रिका–प्रज्ञापारमिता वृत्तिः–मर्मकौमुदी–नाम, देगे. ३८०५, शेरछिन, 'द' पुद् पृ. १५३ख;
१२. शतसाहस्रिका–प्रज्ञापारमिता वृत्ति· वृहद्टीका, देगे. ३८०७, शेरछिन, 'न' पुद् पृ. १९ख;
१३. शतसाहस्रिका–पंचविशतिसाहस्रिका–अष्टसाहस्रिका–प्रज्ञापारमिता बृहद्टीका, देगे. ३८०८, शेरछिन, 'फ' पुद् पृ. २९क;
१४. मध्यमकहृदयवृत्ति·–तर्कज्वाला, देगे. ३८५६, उमा, 'ज़' पुद् पृ. ४९क;
१५. बोधिचर्यावतारपञ्जिका, देगे. ३८७२, उमा, 'ल' पुद् पृ. ४५क;
१६. बोधिसत्त्वचर्यावतारपञ्जिका, देगे. ३८७५अ, उमा, 'श' पुद् पृ. ९७क;
१७. बोधिचर्यावतार–तात्पर्य–पञ्जिका–विशेषद्योतनी–नाम, देगे. ३८८०, उमा, 'श' पुद् पृ. १९७ख;
१८. मुनिमतालंकारः, देगे. ३९०३, उमा, 'अ' पुद् पृ. २३०ख;
१९. सूत्रसमुच्चयः, देगे. ३९३४, उमा, 'की' पुद् पृ. १४९ख;
२०. सूत्रसमुच्चय–भाष्य–रत्नालोकालंकार–नाम, देगे. ३९३५, उमा, 'की' पुद् पृ. २२२ख, २२४ख;
२१. शिक्षाकुसुम–मञ्जरी–नाम, देगे. ३९४३, उमा, 'खी' पुद् पृ. २१६क;
२२. आर्य–अक्षयमतिनिर्देशटीका, देगे. ३९९४, दो–डेल 'ची' पुद् पृ. २७ख;
२३. बोध्यापत्तिदेशनावृत्तिः, देगे. ४००५, दो–डेल 'जी' पुद् पृ. १८५ख;
२४. बोध्यापत्तिदेशनावृत्तिः–बोधिसत्त्वशिक्षाक्रमः, देगे. ४००६, दो–डेल 'जी' पुद् पृ. १९०क;
२५. कर्मावरण–विशोधन–विधि–भाष्य–नाम, देगे. ४००७, दो–डेल 'जी' पुद् पृ. १९५ख;
२६. आर्य सर्वास्तिवादी–मूलभिक्षुणी–प्रतिमोक्षसूत्र–वृत्तिः, देगे. ४११२, विनय 'चु' पुद् पृ. १२क;
२७. अष्टाक्षणकथा, देगे. ४१६७, टियिग्, 'गे' पुद् पृ. १७५क;
२८. सुभाषित रत्नकरण्डक कथा, देगे. ४१६४, टिंयिग्, 'गे' पुद् पृ. १७९क;
२९. सुहृल्लेख रत्नकरण्डककथा, देगे. ४१८२, टिंयिग्, 'ङे' पुद् पृ. ४३ख;
३०. व्यक्तपादसुहृल्लेखटीका, देगे. ४१९०, टिंयिग्, 'ङे' पुद् पृ. ९६ख;
३१. महाव्युत्पत्ति, देगे. ४३४६, न–छोग, 'चो' पुद् पृ. ४५क ।
३२ नागार्जुनविरचित· धर्मसंग्रहः, पृ० ८१ तिब्बतीसंस्थान, १९८८ ।

उपरिलिखितानि स्रोतांसि भारतीयपण्डितैर्विरचिताभ्यष्टीकाभ्य· संकलितानि । भोटपण्डितैर्विरचितेषु ग्रन्थेषु त्वनेकानि स्रोतांसि सन्ति ।

दानमकृत्वा सञ्चयनम्, बुद्धादीनाम् अनादरः, उपायकौशल्याभावाद् असंज्ञिसमापत्तिमनसिकारः, परेषां **चक्षुरिन्द्रियविकलता**पादनम्, **मिथ्यादृष्ट**याभिमुख्यम्, प्रणिधानानभ्यासः, यथायोग्यानि अन्यानि असंख्यानि अतिसूक्ष्माणि तानि सर्वाणि भवन्तीति । तानि वस्तूनि कथं देशितानीति **बुद्धानां भगवताम्** इत्यादि । बुद्धा हि साक्षात्कृत्य प्रतिदेशयन्ति तदनन्तरं संवरः । **ज्ञानभूतानाम्** इति यथावदाकाराः परमार्थाः, यावन्तः स्वभावाः सांवृतिकाः सर्वज्ञतास्वरूपाः । **चक्षुर्भूतानाम्** इति पञ्चचक्षुर्विशुद्ध्या ज्ञानम् । **साक्षिभूतानाम्** इति अशेषाणामर्थानाम् अविपर्यस्तं ज्ञानम् । **प्रमाणभूतानाम्** इति साक्षिभूतानामिति । **'अवबोधनात्'** ज्ञानम् । **दर्शनं** तु तेषां चक्षुःसम्मुखीभावः । अथवा षडभिज्ञायोग इति केचित् । **प्रतिदेशनम्** इति तु स्वयं मयैवं कृतमिति वाचाभिधानम् । अनेकविधान् दोषान् दृष्ट्वा तान् चित्तप्रतिकूलांश्च गृहीत्वा स्वदोषाविष्करणं **प्रतिदेशना** । **अप्रतिच्छादनं तु** स्वकृतपापानि माऽन्ये जानीयुरिति विचिन्त्य तदुपायमनसिकरणम् । **आयत्यां संवरम्** इति प्रतिपक्षमुपादाय पूर्वकम् अननुसृत्य सन्तति-विच्छेदापादनम् । एभिः सर्वैः स्वकृत- सञ्चितपापकर्मणां प्रहायकानि चतुर्बलान्यपि प्रदर्शितानि भवन्ति, (**यथा–**) आश्रयबलम्, विदूषणाबलम्, प्रतिपक्षसमुदाचारबलम्, प्रत्यापत्तिबलं च । अत्र तानि दोषप्रतिदेशनाश्रयाणि त्रिरत्नानि तथागतांश्च शरणं गच्छति । नमस्करणम् आश्रयबलम्, कृतप्रकारान् विमृशन् तांश्च अनेकविधदोषजनकान् इति मनसि निधाय स्वयमहं दोषभागित्यावेदनं विदूषणाबलम्, तत्तत्प्रतिपक्षान् मनसि कृत्वा तत्पुनरप्रत्यागमनं प्रतिपक्षसमुदाचारबलं प्रत्यापत्तिबलं च । एतानि चत्वारि बलानि मनसि कुर्वन् हृदन्तेन पठनात् कर्मावरणानि सर्वथा तनूभवन्तीति, **यथोक्तम्**[१]— यथा "चतुर्भिर्मैत्रेय, धर्मैः कृतोपचितं पापमभिभवति ।

---

१. शिक्षासमुच्चय. पृ० ८९, तोहोकू–चतुर्धर्मनिर्देशसूत्रम् 249 देगे–काञ्जुर–दोदे–५९ क।

कतमैश्चतुर्भिः ? यदुत आश्रयबलं विदूषणाबलं प्रतिपक्ष-समुदाचारबलं प्रत्यापत्तिबलं च" । अतः यो बोधिसत्त्वः पापकर्माण्यभिभवितुमिच्छति, तेन सूत्रमिदं बहुलं मनसिकर्तव्यं वाचयितव्यञ्च इत्युक्तम् । एवं कर्मावरणानि प्रतिदेश्य सम्प्रति स्वकृतेषु कुशलमूलेषु सम्यक्परिणामनया अपरिगृहीतेषु निष्फलानि हीनफलानि स्युरिति भवसागरोत्तरणाय कुशलानि परिणामयेत् । यथा आकरोद्धृतं स्वर्णपिण्डं कुशलकर्मकारेण अलङ्काररूपतया परिणामितं स्व-परोभयकृते हितकरं भवति, तथा यथेष्टफलदायकानि भवन्ति । अत्र येषां समक्षं परिणामयितव्यं तत्र प्रार्थनं **बुद्धाः** इत्यादि । परिणामनाकर्मणि कानि कुशलानि ? **मया** इत्यादि । **माम्** इति तु पूर्ववत् ।

त्रिविधो भवति कुशलानां स्वभावः— दानमयः शीलमयः भावनामयश्च । दानमयं[१] तावत् **दानं.....अन्तशः** इत्यादि । योग्यपात्राय धर्मदानं प्रणीतदानम्, भीतेभ्यः अभयदानम्, मैत्रीदानम्[२], आमिषदानं चक्षुरादिवस्त्वारभ्य समस्तपरित्यागः, विशिष्टजनेभ्यः बाह्यसत्त्वान्तर्गतपुत्रादिपरित्यागः, तदतिरिक्तं चतुर्द्वीपादिपारित्यागश्च, सम्पूर्णं राज्यं राज्यार्धं वा,राष्ट्रं जनपदः नगरादीनि[३] खाद्यपेयादीनि इत्येतेषां परित्यागः, अन्तशस्तिर्यग्योनिगतेभ्यः कवलैकग्रासमात्रं खाद्यदानं यावत् क्षेत्राणि वस्तूनि चातिहीनानि ।

---

१. बोधिसत्त्वपिटकम्, देगे-संस्करण ५६ सूत्रं 'कोनछेग' 'ग'-पुटे, १७३ 'क' ।

२. सामान्यतया त्रीणि दानानि परिदृश्यन्ते, किन्त्वत्र चत्वारि कथितानि । सूत्रेऽप्येवं प्राप्यते । द्र०-आर्यताराकुरुकुल्लाकल्पः, देगे-संस्करणं ४३७ सूत्रं, 'तन्त्रम्' 'च'-पुटे-पृ० ३७ 'ख' ५ ।

३. राज्यं त्यजिष्ये तथपि च राजधानी
हिरण्य सुवर्ण तथ मणिमुक्तरत्नान् ।
घातेयमात्मा स्वय शास्त्र गृह्य
निहीनकर्मास्मिह बालबुद्धिः ॥ द्र०-समाधिराजसूत्रं, पृ० २४० मिथिलासंस्करणं १९६१; देगे-संस्करणं १२७ सूत्रं 'द'-पुटे, अध्याय ३६, पृ० १३४ 'ख' ।

शीलमयं कुशलं सर्वेषु यानेषु प्रातिमोक्षसंवरसंगृहीतम् । उपसम्पदाम् आदाय उपासकपर्यन्तं शीलसामान्यसंरक्षणं विद्यते । प्रव्रज्यापन्नं तु ब्रह्मचर्यमात्रे स्थितम् । बोधिसत्त्वेष्वेव सत्त्वपरिपाकोऽधिकृतः । बोधिचित्तं कुशलमूलम् । प्रयोगैः सत्त्वपरिपाकः, आशयैश्च बोधिचित्तापरित्याग एव बोधिसत्त्वानां परिशुद्धं शीलम् । अन्यथा दश कुशलकर्मपथाः कल्पकोटिपर्यन्तं अकुशलावसराप्रदानेनापि विशुद्धानि शीलानीति कथयितुं न युज्यते । एवंविधैः आशयप्रयोगैः वीर्ये सम्पादिते सति पञ्चकामगुणसहितमपि आचरणं विशुद्धं शीलमित्युच्यते ।

यथोक्तं भगवत्याम् :

यदि पञ्च कामगुण भुञ्जति बोधिसत्त्वो
बुद्धं च धर्म शरणागतु आर्यसङ्घम् ।
सर्वज्ञता च मनसी भविष्यामि बुद्धो
स्थितु शीलपारमित वेदयितव्य विज्ञो ॥

यदि कल्पकोटि दशभी कुशलैः पथेभि-
श्चरमाणु प्रत्ययरहत्त्वस्पृहां जनेति ।
तद् खण्डशीलु भवते अपि छिद्रशीलो
पाराजिको गुरुतरो अयु चित्तुपादो[१] ॥

इदमपि परार्थस्यैव प्रधानत्वात् प्रामुख्येन निर्धारितं तथाऽपि न तावत् स्वार्थस्य (सर्वथा) निषेधः ।

.

भावनामयं तावत् कुशलमूलम् अनुत्तरज्ञानमुच्यते । सर्वाकारज्ञतैव अनुत्तरज्ञानमिति । इदं तज्ज्ञानं यत् संवृतिसंगृहीत-

---

१. रत्नगुणसञ्चयगाथा, २८२-२८३ का०, महायानसूत्रसङ्ग्रहः, प्रथमो भागः, पृ० ३९३ (मिथिलाविद्यापीठप्रकाशितः १९६०) तोहोकू १३ देगे काञ्जुर 'क' पृ० १८ ख

यावत्परमार्थसंगृहीतयथावत्स्थितसर्वज्ञत्वं सर्वश्रावकादिप्रतिविशिष्टम् । अस्य स्वभावशून्य–मायोपमधर्मभावनामयरूपत्वात् तदभ्यासातिशये सति सर्वप्रपञ्चानां समुच्छेदो जायते, (तदा) स्पष्टं निःस्वभावतायाः प्रस्फुटीभावेन किञ्चिदप्युपलम्भाभावनयेन सर्वधर्मस्वभावशून्यतां यथावद् विषयीकरोति । मायानिभानर्थान् आकाशसमान् विषयान् हेतुफलसंगृहीतान् सर्वधर्मान् करतलगतामलकसदृशान् आवरणमलप्रहाणेन साक्षात्करोतीति । अत एवाचार्य**शान्तिदेवेन** अप्युक्तम् :

क्लेशज्ञेयावृतितमःप्रतिपक्षो हि शून्यता ।
शीघ्रं सर्वज्ञताकामो न भावयति तां कथम्[१] ॥

इत्येवं शून्यताभावना सर्वज्ञज्ञानस्य हेतुरित्युक्ता । एवमेव दान–शील–भावनामयाः सर्वे परिणामयितव्याः ।

कथं परिणामना कर्त्तव्येति ? परिणामनाप्रकारस्तु **ऐकध्यं....... अभिसंक्षिप्य** इत्यादि । तेषु सर्वेषु बुद्ध्या पिण्डीकरणेन अन्येभ्यो वैशिष्ट्यम् । **ऐकध्यं सङ्क्षिप्य** इति स्वस्वरूपेण । **तुलयित्वा** इति क्रियया । **सङ्क्षिप्य** इति सामर्थ्येन। 'अनुत्तरादित्रीणि' श्रावक–प्रत्येकबुद्ध–बोधिसत्त्वविशिष्टानि । एवं हि परिणामयितव्यम् । कीदृश्यां परिणामनायां ? **अनुत्तरायाम्** इत्याद्यवस्थायामिति । केन प्रकारेण (उपायेन) परिणामना ? **'यथा'** इत्यादि । **अतीतादि** परिणामनावत् । तदपि यथा **बुद्धा भगवन्तः** कुशलमूलानि तत्त्वतोऽसत्यानीति जानन्तोऽपि तानि सम्मुखीकृत्य यैः कुशलमूलपरिणायकैश्चितैः यस्यां परिणामना क्रियते (तस्यां) अनुत्तरबोधिावपि परमार्थतः निमित्तोद्ग्रहणलेशमपि अकृत्वा सत्त्वेभ्यः अनुत्तरबोधये परिणामयन्ति, तथैव अहमपि परिणामयामीति । अथवा

---

१. द्र0–शान्तिदेव., बोधिचर्यावतार· ९ ५५ पृ0 २११ (मिथिलाविद्यापीठप्रकाशितः १९६0)

तेन प्रकारेण (उपायेन) स्वयं साक्षात्कर्तुम् असमर्थत्वेऽपि यथा भगवता बुद्धेन कुशलमूलानि परिणामितानि, तथा अहमपि तानि कुशलमूलानि परिणामयामीत्येवंविधा परिणामना बुद्धप्रदत्तोपायसहिता परिणामना।

एवं पापदेशनायाः कुशलपरिणामनायाः कथनानन्तरं महोबोधिप्रापकान् उपायान् सङ्क्षेपेण कथयितुं **सर्वं पापं प्रतिदेशयामि** इत्यादि। भवचारके परिभ्रमतां महाबोधेः अनधिगमकारणं तावत् स्वकृतपापकर्मसञ्चयः, परकीयकुशलेषु द्वेषः, बुद्धशासनाभावः, तस्य लोके चाविद्यमानत्वम्, विपरीतप्रणिधानम्, बुद्धानादरः, तच्छरणराहित्यम् इतीमे दोषाः। क्रमशः पापदेशनादिकरणेन महाबोधिः प्राप्यते। अतः **आचार्य–वसुबन्धुनाऽप्युक्तम्** [१]–'महाबोधिप्राप्तिहेतोः **सर्वं पापं प्रतिदेशयामि, सर्वं पुण्यमनुमोदयामि, सर्वान् बुद्धानध्येष्यामि, भवतु मे ज्ञानमनुत्तरम्** इति। पूर्वोक्तैश्चतुर्बलैः स्वकृतानां सञ्चितपापानां देशनया सास्रवानास्रवकुशलचिकीर्षया च सातिशया मुदिता प्राप्यते। यो हि भगवान् बुद्धः धर्मचक्रप्रवर्तनाय अनभिलाषुकः, अल्पोत्सुकस्तथा महापरिनिर्वातुकामश्चेत्यतः जगदर्थं धर्मचक्रप्रवर्तनाय (प्रार्थनं) अपरिनिर्वृत्तः सन् असंख्यान् कल्पान् स्थितये अध्येषणम्, यानि यानि कुशलानि आचरितानि तेषामहम् उत्तमसर्वाकारज्ञता–ज्ञानाय (परिणामनं) करोमि। बुद्धान् प्रति अञ्जलिकरणं वन्दना। शरणोपगमनं तु सर्वभयत्रातुर्ग्रहणमित्यत एतद् बुद्धेष्वादरभावेन सह शरणग्रहणमेव। एभिः सूत्रान्तरेषु त्रिस्कन्धेति नाम्ना निर्निष्टान्यपि संगृह्यन्ते। पापदेशना तावत् देशनास्कन्धः, कुशलमूलपरिणामनं

---

१. त्रिस्कन्धसूत्रे मन्यते वसुबन्धोरपि काचित् टीका स्यात्, तत्रत्यान्येवेमानि वचनानि, किन्तु संस्कृते सा नोपलभ्यते, नापि भोटभाषायामप्यनूदितेति। मया टीकेयं भूरिशोऽन्विष्टा, किन्तु तादृशी टीका कुत्रापि नोपलब्धा। उपर्युक्तोद्धरणे 'महाबोधिप्राप्तिहेतोः' इदं वचनं विहाय अवशिष्टोंऽश सूत्रे प्राप्यते। अतो नास्त्यस्य उद्धरणस्य किमपि वैशिष्ट्यम्।

परिणामनास्कन्धः, महाबोधिप्राप्त्युपायभूता पापदेशना, अनुमोदना परिणामनाङ्गं भवति, यतो हि अनुमोदनया कुशलमूल- परिणामना निष्पद्यते, याचनैव याचनास्कन्धः । प्रणिधानमपि परिणामनारूपमेव । वन्दना शरणग्रहणं च आश्रयबलं संवर्तते । इदं तावत् पापदेशनास्कन्धान्तर्गतं भवति । एतेषां निरन्तरं नक्तं दिवा त्रिः मनसिकरणेन बोधिसत्त्वः सर्वाणि कर्मपथावरणानि प्रहाय इष्टफलं साक्षात्करोतीति । अत एतदर्थं यत्न आस्थेयः । **आचार्य-शान्तिदेवेनाप्युक्तम्** :

रात्रिन्दिवं च त्रिस्कन्धं त्रिष्कालं च प्रवर्तयेत् ।
शेषापत्तिशमस्तेन बोधिचित्तजिनाश्रयात्[१] ॥

यथा बोधिसत्त्वानां कर्मावरणानि अनेन परिशोध्यन्ते, तथा अन्यापत्तयोऽपि धर्मानुसारं प्रत्यापाद्येरन् । शेषाणि कर्मावरणानि अनेनैव परिशोधनीयानि भवन्ति । अन्योऽपि यः कश्चन कर्मावरण-क्षयमिच्छेत्, तेन अस्मिन्नेव यत्नः करणीयः । एवं कर्मावरणानि क्षीयन्ते । भगवान् खलु बुद्धः सर्वान् दोषान् समुन्मूल्य अभ्रान्तमवबुध्य ज्ञानवान् महाकारुणिकः परदुःखापनयनाभिलाषी महात्मा, अतो नात्र मनागपि संशयः कार्यः, यतः असम्भवा अनृता वाक् ।

अगोचरे महेच्छेभ्यः यत्नमास्थितावानहम् ।
परात्महितबुद्ध्यैव क्षम्यतामेष साधुभिः[२] ॥

---

१. शान्तिदेव, बोधिचर्यावतार ५-९८ पृ०-७५ (मिथिलाविद्यापीठप्रकाशितः १९६०)

२. तु०- तथाप्यगोचरीभूते यत्नमास्थितवानहम् ।
परात्महितबुद्ध्यैव क्षम्यतामेष साधुभिः ॥
-स्फुटार्था, अभिसमयालङ्कारवृत्ति, हरिभद्रविरचिता, परिणामना, पृ०९४ (केन्द्रीयोच्चतिब्बतीशिक्षासंस्थानम् १९७७) ।

एतत्कृतेषु यत्पुण्यं लब्धं समयवज्रतः ।
तेनाशेषं जगद् भूयाद् घोरयाऽविद्या विना ॥

आचार्यदीपङ्करश्रीज्ञान-विरचितं कर्मावरणविशोधनविधिर्नाम भाष्यं समाप्तम् ।

तेनैव पण्डितेन लोचावा (लोकचक्षुषा) छुलठिम ज्ञल-वा-भिक्षुणा (शीलविजयेन) अनूदितम् ।

•

आर्यत्रिस्कन्धसूत्र[1]

यहाँ यह (आपत्ति)[2] देशना इस प्रकार है[3]– मैं अमुक नामवाला बुद्ध की शरण में जाता हूँ। धर्म की शरण में जाता हूँ और संघ की शरण में जाता हूँ[4]। [5]तथागत अर्हत् सम्यक्सम्बुद्ध[6] शाक्यमुनि को नमस्कार। व्रजगर्भ[7] प्रमर्दिन् को नमस्कार। रत्नार्चिष् को नमस्कार। नागेश्वरराज को नमस्कार।

---

१. भोट भाषा में आर्य त्रिस्कन्धसूत्र के नाम से दो अलग–अलग अनुवाद उपलब्ध हैं, इसमें एक लघु (संक्षिप्त) एवं एक विस्तृत ग्रन्थ। बड़ा ग्रन्थ देगे संस्करण की सूत्रसंख्या २८५ में उपलब्ध है। इस सूत्र का लघु अर्थात् संक्षिप्त ग्रन्थ स्वतन्त्र रूप से प्राप्त नहीं है। यह ग्रन्थ रत्नकूट वर्ग के अन्तर्गत आर्यविनयविनिश्चय–उपालिपरिपृच्छासूत्र के अन्तर्गत में स्थित है, यह सूत्र वर्तमान में संस्कृत में अप्राप्त है मात्र भोट अनुवाद प्राप्त होता है। परन्तु यह लघु आर्यत्रिस्कन्धसूत्र आचार्य शान्तिदेव कृत शिक्षा समुच्चय में पूर्ण रूप में उद्धृत है। तदनुसार प्रस्तुत सूत्र शिक्षा समुच्य से लिया गया है।

भोट देश में लघुत्रिस्कन्ध सूत्र की पाठ–विधि के बारे में दो अलग मत है। गेलुग सम्प्रदाय के अतिरिक्त अन्य तीनों सम्प्रदायों के अनुयायियों का मानना है कि इस सूत्र का पाठ यथासूत्र (सूत्र के अनुसार) ही किया जाना चाहिए। परन्तु गेलुग सम्प्रदाय के अनुयायियों की मान्यता इससे कुछ भिन्न है। उनके अनुसार चोङखा–पा जी ने साष्टाग प्रणाम के साथ–साथ इस सूत्र का पाठ किया, फलस्वरूप उन्हे ३५ तथागतों के दर्शन हुए किन्तु सभी के मुखमण्डल गायब थे। उन्हे बहुत आश्चर्य हुआ। पश्चात् सभी बुद्धों के प्रारम्भ में तथागत जोड़कर सूत्रपाठ करने पर उन्हें सभी तथागतों के पूर्णकायों का दर्शन प्राप्त हुआ। तबसे लेकर गेलुग सम्प्रदाय के अनुयायियों में इस सूत्र का पाठ करते समय प्रारम्भ में तथागत को जोड़ने की प्रथा चल पड़ी।

२. सभी भोट पाठ में 'आपत्ति' उपलब्ध है परन्तु उपलब्ध सस्कृत पाठ (शिक्षासमुच्चय) में उपलब्ध नहीं है।

३. सर्वत्र भोट सस्करणों में सूत्र के प्रारम्भ में "नमो बोधिसत्त्व–आपत्तिदेशना" कहकर सूत्र को प्रणाम किया गया है। यह भोट ग्रन्थकारों की अपनी शैली है। तत्पश्चात् "आपत्तिदेशना इस प्रकार है" ऐसा कहा गया है।

४. संस्कृत पाठ में त्रिशरणगमन की ही चर्चा है किन्तु भोट अनुवाद में त्रिशरणगमन के पूर्व एक और "गुरुशरणगमन" अधिक जोड़ा गया है इस प्रकार भोट सस्करण में चार शरणगमन उल्लिखित हैं।

५. संस्कृत पाठ में "शास्ता भगवान्" प्राप्त नहीं है भोट पूजा–पुस्तकों के पाठ में "शास्ता भगवान्" अधिक है।

६. "सम्यक्सम्बुद्धा भगवन्तः", भोट पाठ, संस्कृत में भगवन्तः" अनुपलब्ध है।

७. सभी भोट पाठ में उपलब्ध है।

वीरसेन को नमस्कार। वीरनन्दिन् को नमस्कार। रत्नाग्नि[1] को नमस्कार। रत्नचन्द्रप्रभ को नमस्कार। अमोघदर्शिन् को नमस्कार। रत्नचन्द्र को नमस्कार। निर्मल[2] को नमस्कार। शूरदत्त को नमस्कार। ब्रह्मन् को नमस्कार। ब्रह्मदत्त को नमस्कार। वरुण को नमस्कार। वरुणदेव को नमस्कार। भद्रश्री को नमस्कार। चन्दनश्री को नमस्कार। अनन्तौजस् को नमस्कार। प्रभासश्री को नमस्कार। अशोकश्री को नमस्कार। नारायण को नमस्कार। कुसुमश्री को नमस्कार। तथागत ब्रह्मज्योतिर्विक्रीडिताभिज्ञ को नमस्कार। तथागत पद्मज्योतिर्विक्रीडिताभिज्ञ को नमस्कार[3]। घनश्री को नमस्कार। स्मृतिश्री को नमस्कार। सुपरिकीर्तितनामधेयश्री को नमस्कार। इन्द्रकेतुध्वजराज को नमस्कार। सुविक्रान्तश्री को नमस्कार। सुविजितसंग्राम को नमस्कार। विक्रान्तगामिन् को नमस्कार। समन्तावभासव्यूहश्री को नमस्कार। रत्न-पद्मविक्रामिन् को नमस्कार। तथागत अर्हत् सम्यक् संबुद्ध रत्नपद्मसुप्रतिष्ठितशैलेन्द्रराज को नमस्कार।

इनके साथ ही जो (पैंतीस बुद्ध) प्रमुख[4] दशों दिशाओं[5] में सभी लोक धातुओं में जितने तथागत अर्हत् सम्यक्सम्बुद्ध स्थित हैं, जीवन्त हैं, यापन कर रहे हैं, वे सभी भगवान् बुद्ध मेरी ओर ध्यान दें। मेरे द्वारा इस जन्म में या अन्य जन्मों में, अनादि और अनन्त संसार में संसरण करते हुए जो पाप कर्म

---

१. सभी मूल भोट पाठ में "रत्नाग्निये" उपलब्ध है मात्र शिक्षा समुच्चया के इस सस्कृत पाठ में "रत्नश्री" है अत· मूल टीकाओं के आधार पर रत्नाग्नि सही लगता है।
२. सस्कृत के पाठ में निर्मल एव विमल दो उपलब्ध है परन्तु सभी भोट पाठ में एक ही 'निर्मल' उपलब्ध है।
३. उपलब्ध सस्कृत पाठ में उपलब्ध नहीं है।
४. उपलब्ध भोट पाठों में उल्लेख नहीं मिलता।
५. उपलब्ध संस्कृत पाठ में नहीं है।

किये गये हों या कराये गये हों, किये जा रहे हों, अथवा अनुमोदित हों, स्तूप या संघ के धन का अपहरण किया हो, अपहरण कराया गया हो, या अपहरण किया जा रहा हो, या अनुमोदित हों, पाँच आनन्तर्य (पाप) कर्म किये गये हों, कराये गये हों, किये जा रहे हों, या अनुमोदित हों, दश अकुशल कर्मपथों का ग्रहण करके आचरण किया गया हो, दूसरों को प्रेरित किया गया हो, करने वालों का अनुमोदन किया गया हो, जिन कर्म–आवरणों से आवृत होकर मैं नरक में जन्म लेने वाला होऊं, तिर्यग्योनि या यमलोक में, प्रत्यन्त जनपद या म्लेच्छ देशों में जन्म लेने वाला होऊं, दीर्घायुष्क देवों में उत्पन्न होऊं, अथवा इन्द्रियविकलता को प्राप्त होऊं या मिथ्यादृष्टि को प्राप्त होऊं, या बुद्धोत्पाद को नापसन्द करने वाला होऊं, उन सब कर्म–आवरणों की वे भगवान् बुद्ध जो ज्ञानभूत हैं, चक्षुर्भूत[१] हैं, साक्षिभूत एवं प्रमाणभूत हैं, जो (सब कुछ) जानते या देखते हैं, उनके समक्ष मैं प्रतिदेशना कर्ता हूँ, प्रकट करता हूँ, कुछ भी छिपाता नहीं हूँ, भविष्य में भी (ऐसे पाप कर्मों) से (बचकर=) संवर ग्रहण करूंगा ।

(वे सभी) बुद्ध भगवान् मेरी ओर ध्यान दें । जो मैंने इस जन्म में या अन्य जन्मों में, या अनादि और अनन्त इस संसार में संसरण करते हुए दान दिया हो, अन्तिमशः तिर्यग् योनि के जीवों को कौर मात्र भोज का दान दिया हो अथवा शील की रक्षा की हो या जो मेरा ब्रह्मचर्यवास नामक कुशलमूल हो, या जो मेरा सत्त्वपरिपाक नामक कुशलमूल हो, या जो मेरा बोधिचित्त नामक कुशलमूल हो, या जो मेरा अनुत्तरज्ञान नामक कुशलमूल हो, उन सबको एक जगह एकत्र कर, जोड़कर, अभिसंक्षिप्त कर अनुत्तर सम्यक् संबोधि में उत्तरोत्तर[२] परिणामना के द्वारा मैं उसी

---

१. उपलब्ध संस्कृत पाठ में उपलब्ध नहीं हैं ।
२. भोट भाठों में उत्तरोत्तर और गुरुगुरुणा ऐसा दो प्रकार का उल्लेख मिलता है ।

तरह परिणामित करता हूँ, जिस तरह अतीत के भगवान् बुद्धों ने परिणामित किया है, अनागत के भगवान् बुद्ध परिणामित करेंगे तथा इस समय के दशों दिशाओं[१] में विद्यमान भगवान् बुद्ध परिणामित कर रहें हैं, उसी प्रकार मैं भी परिणामना करता हूँ ।

मैं सभी पापों की प्रतिदेशना करता हूँ[२] । तथा सभी पुण्यों की अनुमोदना करता हूँ । सभी बुद्धों से अध्येषणा करता हूँ । मुझे अनुत्तर ज्ञान प्राप्त हो ।

नरोत्तम (भगवान्) बुद्ध जो अतीत में हो चुके हैं, अनागत में आने वाले हैं, और जो सम्प्रति विराजमान हैं, जो अनन्त प्रशस्त गुणों के सागर के समान हैं, मैं अंजलिबद्ध होकर उन सभी की शरण में जाता हूँ ।

(आर्यत्रिस्कन्धमहायानसूत्र समाप्त)[३]

---

१. अनूदित भोट पाठों में उपलब्ध नहीं है ।
२. उपलब्ध संस्कृत मूल पाठ (शिक्षासमुच्चय) में उपलब्ध नहीं है ।
३. सभी भोट संस्करणों में इस लघु सूत्र ग्रन्थ के अन्त में "आर्यत्रिस्कन्धसूत्रसमाप्त" ऐसा प्राप्त होता है । किन्तु प्राप्त एक मात्र संस्कृत पाठ के अन्त में ऐसा स्पष्ट उल्लेख नहीं है । शायद प्रारम्भ एव अन्त में भोट अनुवाद के अनुरूप इस लघु त्रिस्कन्धसूत्र की स्वतन्त्र सत्ता सस्कृत में भी रही होगी । ऐसा प्रतीत होता है ।

भारतीय (हिन्दी) भाषा में : बोध्यापत्तिदेशनावृत्ति
आर्यमञ्जुश्री को नमस्कार
भगवान् शाक्यमुनि को नमस्कार

सुगत, जिन्होंने निर्विकल्पकता का अधिगम कर समस्त अविकल्पितों को जाना है और महाकरुणा के द्वारा जगत् हित करने वाले हैं, (उस) गौतम को प्रणाम कर समस्त सत्त्वों के हित के लिए (मैं) आगम एवं उपदेश के (अनुसार) बोधिसत्त्वों की आपत्तियों को विशुद्ध करने वाले बोध्यापत्तिदेशना (नामक त्रिस्कन्ध सूत्र) की व्याख्या करने जा रहा हूँ।

त्रिकाय[1] से युक्त, सर्वाकार के ज्ञाता बुद्ध भगवान् शाक्यमुनि के द्वारा समस्त सत्त्वों के (हित) के लिए अनेक प्रकार के सद्धर्मों की देशना दी गई है। संग्रह (की दृष्टि से) उन सबको संगृहीत करें तो परियत्ति (पर्याप्ति) धर्म (बुद्धवचन) बारह अंगों में संगृहीत हो जाते हैं। यह (त्रिस्कन्धसूत्र)[2] उन (बारह अंगों) में से 'सूत्र' अंग में आता है। (यों) बारह (अंग)[3] भी तीन पिटकों में संगृहीत हो जाते हैं। उस (त्रिपिटक) में से यह (त्रिस्कन्धसूत्र) सूत्रपिटक के अन्तर्गत आता है। मुख्यतः यह महायान विनय है (क्योंकि इसमें विनय के) वस्तु एवं अंग (स्कन्धक=खन्धक) दोनों का निर्देश है।

इसकी पौराणिक (कथा) इस प्रकार है—कौतुक आदि पैंतीस आदिकार्मिक (बोधिसत्त्वों द्वारा) राजगृह में पिण्डार्थ चारिका करते समय मद्यविक्रेता के (एक) पुत्र के दबकर मर जाने के

---

१. धर्मकाय, सम्भोगकाय एव निर्माणकाय।

२. नमस्कार स्कन्ध, पापदेशना-स्कन्ध एव परिणामना स्कन्ध। (इसका गणना में विभिन्न मान्यताए हैं)।

३. सूत्रं गेयं व्याकरण गाथोदानावदानकम्।
इतिवृत्तकं निदानं वैपुल्यं च सजातकम्॥
उपदेशाद्धुतौ धर्मौ द्वादशाङ्गमिदं वच.।
सारोत्तमा (आलोक में उद्धृत, पृ० २८८, मि.सं. १९६०)

(कारण) (इसकी) आपत्तिदेशना के लिए **आर्य उपालि**[१] द्वारा प्रार्थना करने पर भगवान् (बुद्ध) ने इसकी देशना दी । (इसकी) अनुवृत्ति बोधिसत्त्व कुल के मार्ग के अंग के रूप में हैं ।

अथवा राजगृह के पुरोज (धातुजात) नामक एक ब्राह्मण द्वारा पैंतीस मछुवारों को गलत रास्ता दिखलाए जाने पर पैंतीस सिर वाली एक मछली (के रूप में उसका जन्म) हुआ । उसके लिए (बुद्ध ने यह सूत्र कहा) है । ऐसा कुछ (ग्रन्थों में) कहा गया है पर यह रत्नकूट (सूत्र)[२] का वचन नहीं है ।

इसी (बोध्यापत्ति देशना) की व्याख्या के प्रयोजन आदि चार प्रकार जानना चाहिए । वे (चार) कौन हैं ? इनके विषय पाँच प्रकार के हैं । अभिधेय- बोधिसत्त्व (आदिकार्मिक लोगों) की आपत्तियां और उनके शुद्धिकरण का उपाय है । ग्रन्थगत सभी वचन अभिधान हैं । प्रयोजन- (उक्त) आपत्तियों का शुद्धिकरण है । प्रजोजन-प्रजोजन- इसके द्वारा बुद्धत्व की प्राप्ति है और सम्बन्ध तो उपायोपेयभाव है जो, अर्थतः निर्दिष्ट है । संक्षिप्त अर्थ है- त्रिस्कन्ध या सप्त (अङ्ग) की शुद्धि करना अथवा चार बल हैं ।[३] साथ ही तीन (तरह के) विवाद-चोद्य-परिहार भी जानना चाहिए ।

---

१. आर्य उपालि शूद्र जाति के थे । बौद्धधर्म में दीक्षित होने के अनन्तर उन्होंने अर्हत् पद प्राप्त किया । प्रथम संगीति के समय आर्य उपालि ने विनयसूत्रों का सगायन किया ।

२. यह अनेक सूत्रों का सग्रह ग्रन्थ है, इसमें छोटे-छोटे अड़तालीस सूत्रों का संग्रह है । प्रस्तुत त्रिस्कन्धसूत्र रत्नकूट सूत्र के अन्तर्गत उपालिपरिपृच्छासूत्र में विद्यमान है ।

३. प्रस्तुत सूत्र को तीन प्रकार से सगृहीत माना गया है—१. त्रिस्कन्ध के द्वारा (यह ऊपर कहा जा चुका है) २. सप्त स्कन्ध द्वारा (वदन पूजन देशनतायानुमोदना ध्येषणयाचनताय । यच्च शुभं मयि सचित किंचिद् बोधये नामयमि अहु सर्वम् ॥ अवतंसक, देगे. सं. ४४, "अ" पुद्, पृ. ३५९ 'ख' । ३. चार बलों द्वारा (आलयबल, विदूषणा बल, प्रतिपक्षसमुदाचार बल एव प्रत्यापत्ति बल—चतुधर्म निर्देशसूत्र, देगे सं. २४९, सूत्र "स" पुद्, पृ. ५९ब) शिक्षासमुच्चय मिथिला सस्करण, पृ० ८९ ।

(इसका) उपदेश (अर्थात्) अभिप्राय (अभिसमय) यह (समझना) है कि आनन्तर्य आदि (पाँच)[१] महापाप (भी) निरन्तर अत्यन्त पश्चात्ताप के द्वारा (उक्त) चार बलों के आधार पर मास अथवा वर्ष (पर्यन्त) पाँच (काय) अंगों[२] द्वारा भूमि में स्पर्श (करते हुए प्रणाम) करके प्रतिदेशना करने से (जब) शुद्ध होने के लक्षण प्राप्त होते हैं (तब) विशुद्ध हो जाते हैं। मध्य (पापों से पीड़ित) होने पर एक मास पर्यन्त (प्रतिदिन) छहों प्रहर (प्रतिदेशना) करनी चाहिए। क्षुद्र (पापों के लिए) (प्रतिदिन) तीन याम, इस तरह सात दिन पर्यन्त (उक्त विधि से प्रतिदेशना करना) होता है। आपत्तियों के लग जाने की आशंका हो, तो धर्म के एक अंग के द्वारा प्रतिदेशना करनी चाहिए। यह उपदेश का (आभिप्रायिक) अर्थ है।

यदि पूर्व में **'एवं मया श्रुतम्'** आदि तथा अन्त में (भगवतो भाषितमभ्यनन्दन्) इस प्रकार आद्यन्त (वचनों) के न होने के कारण (यह बुद्ध) वचन नहीं है; ऐसा कहें, तो ऐसा (भी) नहीं है। क्योंकि आर्यरत्नकूटधर्मपर्यायशतसाहस्रिका में निदानादि ये सब कहे गये हैं और यह (त्रिस्कन्धसूत्र) उस (समूह) में से निकाला गया (एक खंड) होने के कारण इसमें (एवं मया श्रुतमादि उदान) न होने से (उक्त) विरोध (का कोई दोष) नहीं है। (ऐसा है) तो (यहाँ) आपत्ति का मूल न होने से (किसी की भी) प्रतिदेशना नहीं जानी जा सकती है ?— ऐसा कहें, तो ? यह तो इस (ग्रन्थ) के आदि (पूर्व) एवं अन्त (अंश) से (जाना जा सकता) है। पैंतीस बुद्धों की ही निश्चित संख्या का होना पूर्वोक्त पैंतीस विनेय लोगों का इष्ट सम्पादन (उक्त पैंतीस) बुद्धों की निकटता के अभिप्राय से है। इसका अर्थ यह नहीं है कि अन्य (बुद्धों का इसमें) सम्मिलित न होना या उन्हें नमस्कार

---

१. पञ्चानन्तर्याणि कर्मावरणम्। तद्यथा—मातृवध, पितृवध, अर्हद्वध, संघभेद तथागतशरीराद् दुष्टचित्तेन रुधिरोत्पादनम्। —अभि.को.भा. ४/९६, पृ. ७२२, बौ.भा.प्र १९८७।

२. दो हाथ, दो पैर एवं माथा।

(आदि) न करना है । इस (ग्रन्थ) में ही आगे 'इत्यादि' कह (कर) (पैंतीस के अलावा बुद्धों को भी नमस्कार किया गया) है । (यहाँ) विशेष दिशा (से मतलब) नहीं है, अपितु (बुद्ध के) निर्माणकाय की दीर्घ आयु होने, तदनुकूल (दिशाओं में) विद्यमान रहने एवं दश दिशाओं में (रहते हुए सत्त्वों) के हित के लिए दिशाओं पर आश्रित होने से यहाँ 'दश दिशा' कहा गया है । अतीत एवं अनागत बुद्धों को यहाँ साक्षी के रूप में नहीं रखा गया है । क्योंकि संवृतितः विरोध हो जाता है । (यहाँ प्रयुक्त) सभी (बुद्धों के नाम के साथ) तथागत (शब्द प्रयुक्त) नहीं है । चार के साथ ही है । (अतः) अर्थतः (सब के साथ तथागत का विद्यमान होना) जानना चाहिए । (और) मन से आलम्बन करना चाहिए । (शब्दशः तथागत शब्द) जोड़ दें तो वचन विरोध हो जाएगा । क्योंकि (यह) समस्त पदों द्वारा दी गई देशना है ।

(यहाँ) चार बलों से ही पापदेशना करना (कहा गया) है । क्योंकि बुद्ध ने **'चतुधर्मनिर्देश'**[१] **(सूत्र)** और **'अजातशत्रुकौकृत्य-विनोदनसूत्र'** [२] में इन चार (बलों) की बड़ी प्रशंसा की है । (ये सूत्र) दो बोधिसत्त्वों के लिए उपदिष्ट हैं । यहाँ (त्रिधर्मस्कन्ध में प्रयुक्त) 'धर्म' क्या है ?- ऐसी आर्य उपालि द्वारा परिपृच्छा[३] की गई है । यह, उस समय भगवान् बुद्ध के अन्तेवासी होने की वजह से तथा उपालि को विनय-वचनों का संगायन करने को कहा जाने के कारण (वह अर्हत् थे । अतः यह सूत्र) उस अर्हत् की परिपृच्छा से (उक्त) 'विनयविनिश्चय' है अतः महायान की आपत्ति-वस्तु आदि इसके द्वारा निश्चित की गई है, अतः यह (त्रिधर्मस्कन्धसूत्र के) विशिष्ट वचन हैं । सामान्यतः (इसे) 'रत्न कूट' कहा जाता है । इसे 'त्रिस्कन्ध' (सूत्र) ऐसा भी कहा गया है । (अर्थात्) नमस्कार और प्रतिदेशना आदि अपरिमित 'पुण्यस्कन्ध' आदि का (निर्देश करने वाला) यह लघु त्रिस्कन्ध है,

---

१. देगे संस्करण, २४९ सूत्र, 'स़' पुद् ।
२. देगे संस्करण, २१६ सूत्र, 'छ' पुद् ।
३. देगे संस्करण, ६८ रत्नकूट, 'च' पुद् ।

न कि बृहत्[1] । 'बोध्यापत्तिदेशना'-(इसमें) बोधि (का तात्पर्य) महाबोधि के हेतु से है । 'सत्त्व' (यह) उसका अवशिष्ट (पद) है । अथवा बोधि से पतित (=च्युत) करने के कारण बोध्यापत्ति इस प्रकार तृतीया का प्रयोग करना चाहिए । ये भी आदिकर्मिक बोधिसत्त्व एवं अधिमुक्तिचर्या (भूमि) में स्थित लोग हैं । न कि प्राथमभूमिक आदि बोधिसत्त्व है—ऐसा जानना चाहिए । इस (सूत्र में निर्दिष्ट) आपत्ति होने पर (व्यक्ति) दुर्गति में जाता है । यह आपत्ति भी स्थूल, सूक्ष्म, पाराजयिक, दुष्कृत, अदुष्कृत[2] के क्रम से इसी सूत्र के पूर्व भाग से एवं अन्यों (ग्रन्थों) से जानना चाहिए । प्रतिदेशनागत उपायों को इसी सूत्र के अन्त में विस्तार से जानना चाहिए । यह तो उन आपत्तियों का विशोधन मात्र है । उन आपत्तियों के लगने पर प्रतिदेशना करना ही विशुद्धि है । वह भी द्विविध हैं । (१) पारमार्थिक प्रतिदेशना- (यह तो अजातशत्रु) कौकृत्यविनोदन सूत्र के अनुसार सर्वधर्म निःस्वभावता का चिन्तन करना है । (यह) महाप्रतिदेशना है" । जैसे कहा गया है—[3] "सीधे बैठकर सम्यक् रूप से अवलोकन करें, सत्यो को सत्य के रूप में देखें, सत्य का दर्शन होने पर विमुक्त हो जाता है, यही महाप्रतिदेशना है" । (२) संवृतितः प्रतिदेशना— यह तो चार बल एवं कौकृत्य (=पश्चात्ताप) युक्त मन से नमस्कार आदि सब कुछ मायोपम बुद्धि से करना है । (यह) लघु प्रतिदेशना है ।

(यह भी) सर्वप्रथम इस (सूत्र) के लिए (उपालि आदि द्वारा) निवेदन करते समय भगवान् ने उन बोधिसत्त्वों के लिए

---

१. बृहत्-त्रिस्कन्धसूत्र एक अन्य सूत्र है, जो काजुर 'ये' तो० २८४ और सूत्र संग्रह के अन्तर्गत है ।

२. इन सभी आपत्तिया के बारे में आचार्य गुणप्रभ कृत "विनय सूत्र" एवं इसकी टीका में संस्कृत में विस्तार से द्रष्टव्य है ।

३. आचार्य विमलकीर्ति ने अपने ग्रन्थ "सकृतप्रावेशिकनिर्विकल्पभावनार्थ" में इस उद्धरण को "आर्यमहामोक्षदिशुनपुष्यक्रोक्रम्त्य पापंशोधन-नाम-विहरति स्म" ग्रन्थ का अंश माना है किन्तु खोजने पर इस ग्रन्थ में उपर्युक्त उद्धरण प्राप्त नहीं हो सका । भोट विद्वान् दग-पो रिनपोछे ने "मोक्षालकार में इस उद्धरण को "कर्मविशुद्धसूत्र" का माना है किन्तु इस प्रकार का सूत्र देगे कग्युर संग्रह में उपलब्ध नहीं है ।

(अपनी) रश्मि के द्वारा वहाँ से दशों दिशाओं (में स्थित) चौंतीस बुद्ध आदि अनेकों का आवाह्न किया ।

यहाँ आकाश में विराजमान (आहूत उन बुद्ध बोधिसत्त्वों के सम्मुख उक्त आपत्ति वाले) बोधिसत्त्वों ने कौकृत्य (पश्चात्ताप) से युक्त होकर पूजा एवं (बोधि) चित्तोत्पाद कर शरण गमन ग्रहण किया और नमस्कार से लेकर पाप देशना आदि (कर्म) एक बार करने से ही वे समस्त पापों से विशुद्ध (होकर) प्रथम भूमि आदि में स्थित हो गए । (उसके पश्चात्) उन के अनुयायियों की तो एकान्त (विविक्त) स्थानों में मण्डल, पूजा एवं (उक्त पैंतीस बुद्धों के) चित्रों को सम्मुख रख कर गुरु के उपदेश से चित्तोत्पाद आदि करके प्रतिदेशना करने से सभी पापों से विशुद्धि होगी । फल (के रूप में) सम्यक्सम्बुद्धत्व प्राप्त होगा । यही इसकी विधि है ।

उसके बाद सर्वप्रथम वास्तविक प्रतिदेशना तो आश्रय (बल) के द्वारा इस प्रकार पाप देशना करना है—मैं **'अमुक नामा'** इत्यादि के द्वारा कहा गया है । यहाँ ज्ञातव्य है कि आश्रय पैंतीस बुद्ध आदि की पूजा अर्चना करके दो तरह के बोधिचित्त[1] का उत्पाद करना है । उसके बाद द्वितीयतः शरण गमन करना है । यहाँ 'मैं अमुक नामा' यह सामान्य होने पर भी विशेषकर अपने साधारण नाम को कहना चाहिए । यह भीमसेनों में से 'महाभीमसेन' की भाँति है । केवल स्वयं ही नहीं, अन्य कल्याणमित्र, जो अपने उपकार करने वाले हैं, (साथ ही) माता-पिता, जो कृतज्ञता के पात्र हैं, अनन्त सत्त्व यानि आकाशपर्यन्त व्यापी सत्त्व, जो स्वयं द्वारा उपकार के विषय हैं, इन सभी के साथ शरण में जाना है । किस (की शरण) में ? बुद्ध इत्यादि की । कैसे ? वाक् एवं चित्त के द्वारा । (इस प्रकार) शरण गमन के स्वरूप आदि को भी जानना चाहिए ।

---

१. तद्बोधिचित्तं द्विविधं विज्ञातव्यं समासतः ।
बोधिप्रणिधिचित्तं च बोधिप्रस्थानमेव च ॥ —बो.च., १/१५

यहाँ बुद्ध (से तात्पर्य दो प्रकार का) है—शास्ता एवं फलगत (बुद्ध), जो त्रिकायात्मक है । हमारा उनकी शरण में जाने का (तात्पर्य) बौद्धिक दृष्टि से उस पर निर्भर (विश्वास रखना) हो जाना है । यहाँ नमस्कार करने का तात्पर्य काय, वाक् एवं चित्त द्वारा वैसा सुनियत हो जाना है । उसी प्रकार धर्म भी पर्याप्ति (परियत्ति) एवं प्रतिपत्ति (द्विविध) है । वह भी आगम, अधिगम, एवं परमार्थ यानि हेतु एवं फल के स्वरूप में है । संघ—प्रतिपन्न, आश्रय और अभेद्य होने के अर्थ में 'संघ' कहा गया है । वह भी बोधिसत्त्व, श्रावक एवं प्रत्येकबुद्ध संघ—(इस तरह तीन प्रकार का होता) है । पर यहाँ बोधिसत्त्व संघ से (तात्पर्य) 'अवैवर्तिक संघ' ही है-ऐसा जानना चाहिए ।

इस प्रकार आश्रय बल दिखाने के बाद अब विदूषणा समुदाचार बल के द्वारा पाप देशना करने के लिए **'तथागत'** इत्यादि कहा गया है । वह भी पाप वस्तुओं की प्रतिदेशना के अंग के रूप में पैंतीस बुद्धों को नमस्कार करना है, इससे पाप की शुद्धि हो जाती है । भविष्य में भावना करते समय उनमें (क्रमशः) आनेवाले उन सभी बुद्धों को अपने सम्मुख रत्न, सिंह, पद्म और चन्द्र (मण्डल) के आसन पर प्रव्रजित—निर्माणकाय, जो लक्षण और अनुव्यञ्जनों से (एवं) प्रभा से युक्त हैं, कायवर्ण, क्षेत्र, दिशा, दिशान्तर, चीवर आदि (वस्त्र) आयुध (धारण कर) वज्रपर्यंक मुद्रा में स्थित (हैं, उन बुद्धों) को अनेक पर्षदों के साथ आगे आने वाले क्रमानुसार मध्य भाग से प्रारम्भ कर क्रमशः दशों दिशाओं में विराजमान को आलम्बन करना (चाहिए) तथा (उनको लक्ष्य कर नमस्कार करना चाहिए) । (वह भी कल्पना में) अनेक कायों का निर्माण कर वचन एवं चित्त की अधिमुक्ति के द्वारा उनके चरणों में नमस्कार करना चाहिए । अथवा मन्द बुद्धि (जो उपर्युक्त आलम्बनों की भावना नहीं कर सकते, वे) लोग सभी बुद्धों को जो एक मुखी, दो हाथ, धर्मदेशना मुद्रा में विराजमान हों या पिण्डपात के लिए चारिका कर रहे हों या भूमि स्पर्श आदि मुद्रा में स्थित हों- ऐसा चिन्तन

करें और (सभी बुद्धों को) श्वेत वर्ण आदि, यथारुचि समान (वर्ण के) चिन्तन करके नमस्कार करना चाहिए । ये सब हमारे प्रमुख शास्ता हैं, इन्हें छोड़कर शेष (अन्य बुद्धों को) अनेकों कल्प तक विराजमान रहने वाले समझना चाहिए ।

१. इनमें से पहले मध्य में विराजमान उस लोकपति बुद्ध का गुण (कहने के लिए) **'तथागत'** इत्यादि कहा गया है । (तथागत का तात्पर्य) शब्द के बल से **'तथता'** वाला कहा गया है । अधिगम तथा तथता में लीन होने से, पुनः आगमन करने से (उन्हें तथागत कहा जाता है) । इसीलिए यह सभी (आर्यपुद्गलों एवं देवों) से विशिष्ट हैं । अर्हत्–का (तात्पर्य) क्लेश एवं ज्ञेय आवरण रूपी शत्रुओं का हनन करने वाले से है । इसके द्वारा बोधिसत्त्वों से (बुद्ध की) विशेषता दिखाई गई है । **सम्यक्** का तात्पर्य अविपरीत है । इसके द्वारा संसार एवं हीनयान से (विशिष्टता दिखाई गई) हैं । **सम्पन्न** का (तात्पर्य) दो सम्भार एवं स्व–परार्थ (सम्पद् से सम्पन्न) दो कायों से है । बुद्ध तो प्रहाण एवं ज्ञान (सम्पदाओं के) इन दो भेदों से होते हैं । इन दोनों के द्वारा (बुद्ध को) संसार एवं निर्वाण (में स्थित) सभी पुद्गलों से विशिष्ट दिखाया गया है । इसका लक्षण **'शाक्यमुनि'** है । (अर्थतः) उनका ज्ञान, सामर्थ्य एवं गुण ही है । यहाँ (शाक्य के) **'शा'** का (तात्पर्य) ज्ञान से है । (अर्थात्) अशेष (ज्ञान) । **क्य्** का (तात्पर्य) अवबोध से है । **मुनि**–का (तात्पर्य) अद्वय रूप से युक्त होना है । (अर्थतः) मुनि या सामर्थ्य का (तात्पर्य) शाक्यराजवंश होने से उसका अर्थ जन्मों और दोषों को जीतने वाला होता है । (यह उसका) कारित्र है । गुण (की दृष्टि से) 'शाक्य' (का तात्पर्य) अति विशिष्ट हैं । काय, वाक् एवं चित्त[1] के असाधारण संवरण के कारण ही ये मुनि हैं । उसको नमस्कार करने (का अर्थ) श्रद्धा प्रसाद युक्त होकर तीनों द्वारों से नमस्कार करना है । यह (बुद्ध) भी बीच के आसन में

१. काय में ३२ महापुरुष लक्षण तथा ८० व्यञ्जन होते हैं, वाक् में ६० ब्रह्मस्वर होते हैं तथा चित्त में २७ कर्म होते हैं ।

(विराजमान) एवं पीत वर्ण तथा धर्म उपदेश मुद्रा से युक्त है-ऐसा समझना चाहिए ।

पूर्व **(शाक्यमुनि)** की भाँति पाँच विशेषणों एवं तीन तरह की व्याख्याओं को बाद के (सभी तथागतों के) बारे में भी जानना चाहिए । ज्ञानादि का (तात्पर्य) उपमा तथा शब्दार्थ बल से सम्पन्न है (इस प्रकार) दो (शब्द) तथा एक (शब्द) द्वारा अर्थ भी कहूँगा ।

२. ऊपरी (दिशा में स्थित) गगनगर्भ (बुद्ध-) क्षेत्र में स्थित जो नील (वर्ण) एवं दोनों हाथों से दो वज्र धारण किए हुए हैं, (वह तथागत) **वज्रगर्भ प्रमर्दिन्** है । यहाँ **वज्र** से (तात्पर्य) वज्रोपम निर्विकल्प ज्ञान से है, वही (ज्ञान) सभी गुणों का उत्पत्ति-स्थान होने से **'गर्भ'** है । क्लेशादि सभी (विपक्ष-आवरणों) का प्रहाण करना इसका कारित्र है ।

३. (तथागत) **रत्नार्चिष्** (ये बुद्ध) पूर्व दिशा में रत्नभव (नामक बुद्ध) क्षेत्र के (शास्ता) हैं । (ये बुद्ध) श्वेतवर्ण एवं (दोनों हाथों में क्रमशः) वज्र एवं सूर्य मण्डल धारण किए हुए विराजमान है । यहाँ **रत्न** का (तात्पर्य) रत्न के समान बल (प्रातिहार्य) आदि सभी प्रकार के गुणों को प्राप्त होने से यह (इनका) गुण है । **(अर्चिष्—)** (का तात्पर्य) ज्ञानरूपी प्रकाश से है, यह स्वभाव स्फुट होने से अज्ञान अन्धकार को दूर करता है । (इस प्रकार) '**अर्चिष्** (उनका) कारित्र है, 'जिससे समस्त सत्त्वों के अज्ञान का विनाश किया जाता है ।

४. (तथागत) **नागेश्वरराज** (ये बुद्ध) दक्षिण-पूर्व (दिशा में स्थित) नाग व्याप्त (नामक बुद्ध क्षेत्र) के (शास्ता) हैं । ये नील वर्ण, (दोनों हाथों में क्रमशः) नागलता (की शाखा) एवं नीलवर्ण के सर्पों को धारण किए हुए हैं । **'नाग'** का (तात्पर्य) ज्ञान से है । (जैसे नाग में) शीतलता और दुष्टता है, उसी प्रकार ज्ञान भी क्लेशों (के संताप) से रहित एवं निमित्तों का हनन करता है । आधिपतित्व (उनका) कृत्य है, जिसके द्वारा सभी (गुणों) पर

अधिपत्य किया जाता है । **राजा** का (तात्पर्य) उसका गुण है, जो राजा की भाँति प्रताप एवं मनोज्ञता से (युक्त) और सभी से निर्भय है ।

५. (तथागत) **वीरसेन** दक्षिण (दिशा में स्थित) वीरवती (बुद्ध) क्षेत्र के (शास्ता) हैं । (यह) पीतवर्ण हैं एवं दोनों (हाथों में क्रमशः) पोथी एवं खड्ग् धारण किए हुए विराजमान हैं । **वीर** (से तात्पर्य) ज्ञान है, (जो) निर्द्वन्द्व एवं अदम्य है । अथवा 'वीर' (से तात्पर्य) कर्म है, (जिसके द्वारा) सत्त्वों के सभी (प्रकार के) सांसारिक रणों का विनाश होता है । **'सेन'** उनका गुण है, ये अनेक गुणों की राशि से युक्त हैं ।

६. (तथागत) **वीरनन्दिन्**[१] (ये) दक्षिण-पश्चिमी (दिशा में स्थित) नन्दवती (बुद्ध) क्षेत्र के हैं, और पिङ्गल वर्ण हैं । (दोनों हाथों में क्रमशः) सूर्य (मण्डल) एवं लाल पद्म धारण किए हुए हैं । यहाँ **वीर** (का तात्पर्य) ज्ञान एवं कर्म से है । (जिनका अर्थ) पूर्व की भाँति जानना चाहिए । **नन्दन** (इनका) गुण है, यानि महाकरुणा से युक्त मन के द्वारा ये सत्त्वार्थ करने में प्रवृत्त हैं ।

७. (तथागत) **रत्नाग्नि** पश्चिम (दिशा में स्थित) आभासवती (बुद्ध) क्षेत्र (के शास्ता) हैं, (जो) रक्तवर्ण हैं । मणिरत्न एवं अग्नि मण्डल धारण किए हुए (विराजमान) है । यहाँ **रत्न** का (तात्पर्य) ज्ञान से है, (जिससे रत्न के समान) कल्पना रहित (ज्ञान) से अर्थ की प्राप्ति होती है । अथवा (उनका) गुण ही रत्न है । (जिससे) समाधि (आदि) सभी लोकोत्तर सम्पदाएँ प्राप्त होती हैं । **अग्नि** का (तात्पर्य) उनके (कर्म) या कारित्र से है, (जिससे) वे ज्ञान एवं महान् वीर्य

---

१. प्रायः सभी भोट संस्करणों में इसका भिन्न पाठ "श्रीनन्दिन्" ऐसा प्राप्त होता है किन्तु संस्कृत तथा भोट मूल सूत्र ग्रन्थ में "वीरनन्दिन्" प्राप्त होता है । अतः यहाँ "वीरनन्दिन्" पाठ को शुद्ध माना गया है ।

(अग्नि) के द्वारा सत्त्वों का हित करके क्लेशादि को जला देते हैं ।

८. (तथागत) **रत्नचन्द्रप्रभ** (ये बुद्ध) शुक्ल वर्ण हैं (और) पश्चिमोत्तर दिशा में स्थित सुप्रभ (नामक बुद्ध) क्षेत्र के हैं । (हाथ में) **रत्न** एवं **चन्द्र** (मण्डल) धारण किए हुए हैं । यहाँ भी पूर्ववत् रत्न (उनका) गुण है और चन्द्र उनका ज्ञान है । यानि (उनका) ज्ञान परिपूर्ण, अत्यन्त शीतल एवं प्रकाशमान है । **'प्रभा'** उनका कार्य है । अर्थात् वह कर्म और क्लेश आदि (आवरणों) को हटाकर अर्थ की धर्मता को स्पष्ट करते हैं ।

९. (तथागत) **अमोघदर्शन** (ये बुद्ध) हरितवर्ण हैं (और) उत्तर दिशा में स्थित दुन्दुभिघोष (नामक बुद्ध) क्षेत्र में स्थित हैं । (ये दोनों हाथों द्वारा) दो बुद्ध चक्षु धारण किए हैं । उनका ज्ञान दर्शन है । अर्थात् अनावरण ज्ञान है । अथवा **दर्शन** (का तात्पर्य) उनके गुण से है । (यानि) वह प्रज्ञा एवं महाकृपा रूपी चक्षु के द्वारा धर्मता प्रकाशित करते हैं एवं सत्त्वों का हित करते हैं । **अमोघ** (यह) इन का कारित्र है, जिसके द्वारा वे समस्त सत्त्वों को अभ्युदय एवं निःश्रेयस फल में निश्चित ही नियत करते हैं ।

१०. (तथागत) **रत्नचन्द्र** (ये बुद्ध) पूर्वोत्तर दिशा के 'मरीचिका' (नामक बुद्ध क्षेत्र में स्थित हैं), इनका वर्ण श्वेत-हरित है । (दोनों हाथों में) **रत्न** तथा चन्द्र धारण किए हुए बुद्ध हैं । **रत्न** उनके गुण (का प्रतीक) है । **चन्द्र** (का तात्पर्य) ज्ञान से है, जो इन का कारित्र है । (इसे) पूर्ववत् जानना चाहिए ।

११. इसके बाद (तथागत) **निर्मल** भस्मव्यापी क्षेत्र में स्थित विराजमान हैं । (इनका) वर्ण धूम या भस्म की तरह है । (दोनों हाथों में) क्रमशः निर्मल दो आदर्श धारण किए हुए विद्यमान हैं । यहाँ **निर्मल** का (तात्पर्य) ज्ञान से है, (जो) आवरणों का प्रहाण करता है । अन्य (सत्त्वों) को निर्मल करने का उनमें सामर्थ्य हैं । आगन्तुक मलों के बल आदि से रहित

होने के कारण अतिप्रकाशमान होना (उनका) गुण है । इन्हें पूर्व की भाँति नमस्कार करना है । यह पहला दशक है ।

१२. दूसरा दशक–शूरदत्त इत्यादि है । तथागत **शूरदत्त** ऊपरी दिशा में स्थित 'श्रीवत्स' (नामक) बुद्ध क्षेत्र के हैं और शुक्ल (वर्ण) के हैं । ये फल–पत्र से युक्त श्रीफल वृक्ष (को दोनों हाथों में) धारण किए हुए विराजमान है (और) सत्त्वार्थ करते हैं । यहाँ इन्हें ऊपरी ओर आसन पर बैठे मानकर अपनी ओर से नमस्कार करने से पापों की विशुद्धि होती है । यहाँ **'शूर'** का तात्पर्य अद्वयज्ञान के द्वारा सभी विकल्पों के प्रहाण से है । अथवा शूर (का तात्पर्य) गुण से है । ये दूसरों को सभी सुख सामग्री सर्वदा निर्बाध रूप से प्रदान करते हैं । **'दत्त'** से (उनके) कार्य का प्रदर्शन होता है । तीनों धातुओं के सभी सत्त्वों को यथेच्छ वस्तु प्रदान करते हैं । उन्हें (काय, वाक् एवं चित्त) तीनों द्वारों से प्रसादयुक्त होकर नमस्कार करना चाहिए ।

१३. पूर्व दिशा के 'विगतावरण' (नामक बुद्ध) क्षेत्र में (तथागत) **ब्रह्मन्** (शास्ता) स्थित हैं । ये पिङ्गल वर्ण हैं और (दोनों हांथों में क्रमशः) पद्म एवं सूर्य (मण्डल) धारण किए हुए (विराजमान) है । यहाँ सभी प्रकार के आवरणों से रहित ज्ञान ही **'ब्रह्मा'** हैं । अथवा समस्त सत्त्वों को सांसारिक (मलों) से ब्रह्मा की भाँति शुद्ध करने वाले (होने से) ये 'ब्रह्मा' है । (क्योंकि) यही इनका कारित्र है । अथवा ब्रह्म (का तात्पर्य) स्वयं और अन्य (दोनों को) विशुद्ध करने वाले अपरिमित गुणवान् होने से है, अतः (इन्हें) **'ब्रह्मा'** (कहा गया) है । यह उनका गुण है ।

१४. (तथागत) **ब्रह्मदत्त** दक्षिण–पूर्व दिशा के 'अशोक' नामक बुद्ध क्षेत्र के शास्ता हैं । इनका वर्ण पीत है, (दोनों हाथों में क्रमशः) चन्द्र (मण्डल) एवं पद्म धारण किए हुए हैं । यहाँ **'ब्रह्म'** का तात्पर्य उनके ज्ञान एवं गुण से है । (इसकी) (व्याख्या) पूर्ववत् है । (उस गुण) के द्वारा समस्त सत्त्वों के लिए विशुद्ध सुख प्रदान करना इनका कारित्र है ।

१५. (तथागत) **वरुण** दक्षिण दिशा में (स्थित) 'विमल' नामक (बुद्ध क्षेत्र) के (शास्ता) हैं । ये नील वर्ण के हैं और जलमण्डल (के मध्य) में धर्मप्रवचन मुद्रा में (विराजमान) है । वरुण (जल) से तात्पर्य उनका ज्ञान है, जो अत्यन्त विमल एवं स्वच्छ है । अथवा (जल से तात्पर्य उनका) कार्य है, (यानि) महाकरुणा द्वारा सत्त्वों की सन्तति को (सद्धर्म से) आर्द्र करते हैं, (इसलिए वह) (वरुण) जल हैं । **'देव'** उनका गुण (वाचक) है, जो शक्ति, ऋद्धि आदि से युक्त है ।

१६. (तथागत) **'वरुणदेव'** दक्षिण–पश्चिम दिशा में (स्थित) आभावती (नामक बुद्ध क्षेत्र) के शास्ता है । (इनका वर्ण) श्वेत है । दोनों (हाथों में क्रमशः) जलदेवमण्डल एवं आदर्श (यानि दर्पण) धारण किए हुए विद्यमान है । यहाँ जल यानि **वरुण** (का तात्पर्य) ज्ञान से है, (जिसकी व्याख्या) पूर्ववत् है । देव का तात्पर्य (उनके) कार्य से है, (जो) ऋद्धि आदि के द्वारा सभी सत्त्वों का अर्थ (हित) करते हैं । यह **'देव'** (शब्द) भी गुण (वाचक) है ।

१७. (तथागत) **भद्रश्री** पश्चिम दिशा में स्थित 'सुखावती' (बुद्ध) क्षेत्र के (शास्ता) हैं । ये रक्तवर्ण हैं । (ये दोनों हाथों में क्रमशः) पद्म एवं कल्प वृक्ष (की शाखा) धारण किए हुए (विराजमान) हैं । (यहाँ) **'श्री'** का तात्पर्य 'गुण' से है, जो स्वार्थ और परार्थ (दोनों) संपत्तियाँ हैं । **'भद्र'** का तात्पर्य ज्ञान एवं कारित्र से है । (अर्थात् अपने) अत्यन्त उत्तम ज्ञान से है । अन्य लोगों को ये भद्र निर्वाणप्रापक मार्ग से निर्वाण तक आकृष्ट करते हैं ।

१८. (तथागत) **चन्दनश्री** उत्तर–पश्चिम दिशा में स्थित 'सुगन्ध व्यापी' नामक बुद्ध क्षेत्र (के शास्ता) हैं । ये पिङ्गल वर्ण के हैं और हाथ में चन्दन का वृक्ष एवं श्रीफल धारण किए हुए विराजमान हैं । (यहाँ) उनका ज्ञानं ही **'चन्दन'** है, (क्योंकि इससे) अविद्यादि का संताप अपगत एवं शीतल होता है । अथवा

चन्दन का (तात्पर्य) (उन के) गुण से है (जो) बलादि महागुणों से सभी में व्याप्त है । **'श्री'** (का अर्थ) कारित्र से है । जिसका अर्थ पूर्ववत् है–ऐसा जानना चाहिए ।

१९. (तथागत) **'अनन्तौजस्'** लाल (वर्ण) के है और ये उत्तर दिशा के तेजस्वती (बुद्ध क्षेत्र) के (शास्ता) हैं । (ये दोनों हाथों में क्रमश)) दो सूर्यमण्डल धारण किए हुए बहुत से अनुयायियों के साथ विराजमान हैं । इनका ज्ञान ही यहाँ **ओजस्** है । प्रकाशमान ज्ञान के द्वारा विपरीत (=अन्धकारों) को प्रकाशित करते हुए उन्हें प्रभावित करने की क्षमता वाले हैं । **'अनन्त'** (का तात्पर्य उनके) कर्म और गुण से हैं, जिनके द्वारा असंख्य सत्त्वों का कल्याण होता है । और वे अपरिमित रूपी और अरूपी गुणों से युक्त हैं ।

२०. (तथागत) **प्रभासश्री** श्वेत वर्ण के हैं (और वे) उत्तर–पूर्व दिशा के अमोघवती (क्षेत्र) के (शास्ता) हैं । (वे अपने कर कमलों में) श्वेतप्रभामण्डल धारण किए हुए तथा जीवन यापन करते हुए विराजमान हैं । **प्रभास** (शब्द) का तात्पर्य इनके ज्ञान से है । उनके सूर्य सदृश ज्ञान से स्व और पर (दोनों) के ज्ञेय और क्लेश आवरणरूपी अन्धकार का अपगम होता है । **'श्री'** का तात्पर्य गुण एवं कर्म से है, जिसे पूर्व की भाँति दो प्रकार से जानना चाहिए ।

२१. (तथागत) **अशोकश्री** हलके नील (वर्ण के) हैं । (वे) अधो दिशा–स्थित 'विगतावरण' बुद्धक्षेत्र के (शास्ता) हैं । हाथ में अशोक वृक्ष की (शाखा) धारण किए हुए विराजमान हैं । **अशोक** का (तात्पर्य) ज्ञान से है, जो संसार से अपगत और समस्त आवरणों से रहित है । अथवा (अशोक का तात्पर्य) कर्म से है, (क्योंकि) समस्त सत्त्वों को शोक यानि दुःख और संसार से मुक्त कराने वाले होने से (उन्हें शोक) रहित (कहा गया) है । **'श्री'** (उनका) गुण है । इन्हें पूर्ववत् तीनों द्वारों से प्रसादयुक्त होकर नमस्कार करना चाहिए । यह दूसरा दशक है ।

२२. (अब) तीसरा दशक (कहा जा रहा है) यथा—उर्ध्व दिशा में (स्थित) 'विगततृष्ण' (नामक) (बुद्ध क्षेत्र के शास्ता) (तथागत) **नारायण** हैं, वे नील वर्ण के हैं । मेरु एवं पद्म मुद्रा में स्थित (वे शिष्य) परिवार को धर्म प्रवचन करते हुए सत्त्वों का (जीवन) यापन करते हैं । यहाँ भी तृष्णा रहित होने का तात्पर्य उनके ज्ञान से है, (जो सभी प्रकार की) कल्पनाओं से रहित है । (सभी) सत्त्वों को सांसारिक आसक्ति एवं तृष्णा से रहित करने में (सदा) तत्पर रहना उनका 'कार्य' है । यहाँ अपत्य (पुत्र) से (तात्पर्य) बुद्ध है, जो इससे उत्पन्न है और मैत्री आदि गुणों से युक्त है । इसलिए 'पुत्र' या सन्तान कहा गया है ।

२३. (तथागत) **कुसुमश्री** पूर्व दिशा में स्थित 'कुसुमविकास' नामक बुद्ध क्षेत्र के (शास्ता) हैं । (इनका वर्ण) पीत है (ये हाथ में क्रमशः) पीत कुसुम एवं श्रीफल लिए हुए विराजमान हैं । उनकी कायसम्पद् लक्षण आदि से सुशोभित एवं व्याप्त है । उनका ज्ञान **कुसुम** की भाँति विकसित है । **'श्री'** का तात्पर्य 'उनके' कर्म से है । (क्योंकि) ये उसी प्रकार श्री की सम्पत्ति से युक्त हैं ।

२४. दक्षिण-पूर्व दिशा में स्थित 'ब्रह्मव्यापी' (बुद्ध क्षेत्र के) **तथागत 'ब्रह्मज्योतिर्विक्रीडिताभिज्ञ'** हैं । (वे) श्वेत (वर्ण के) हैं । वे एक हाथ में पद्म और दूसरे हाथ में प्रकाश पुञ्ज धारण किए हुए (विराजमान) हैं । **तथागत** का (अर्थ) यहाँ भी पूर्ववत् है तथा अर्हत् इत्यादि भी पूर्व की भाँति द्रष्टव्य हैं । (सूत्र के) बीच में दो बुद्धों के साथ **'तथागत'** विशेषण का निर्देशन किया गया है, अतः पूर्व एवं बाद के (सभी बुद्धों में भी इसे) जानना चाहिए । इसमें **'ब्रह्म'** (का तात्पर्य) ज्ञान से है और प्रकाश बल है, (क्योंकि वे) अतिप्रकाशमान (एवं) बल से युक्त हैं । **'विक्रीडित'** से (उनका) कार्य द्योतित होता है (यानि) ऋद्धि-आदि अभिज्ञा से सत्त्वों का अर्थ (कल्याण) किया जाता

है । चित्त या ज्ञान के द्वारा (कल्याण) कार्य (अर्थ) करने के उपाय आदि का स्पष्ट रूप से जानना ही **'अभिज्ञा'** है ।

२५. दक्षिण दिशा (में स्थित) पद्मावती (नामक बुद्ध) क्षेत्र में **तथागत 'पद्मज्योतिर्विक्रीडिताभिज्ञ'** विराजमान हैं, (वे) रक्तवर्ण के हैं, जो पद्म एवं सूर्य मण्डल धारण किए हुए मुद्रा में हैं । यहाँ **पद्म** का तात्पर्य उनके ज्ञान से है, जो पद्म (जल एवं पङ्क के) दोष से निर्लिप्त और विराग (के साथ) विकसित होता है । **ज्योति** उनका गुण है । **विक्रीडित** आदि (उनका) कारित्र है ।

२६. दक्षिण–पश्चिमी दिशा में स्थित मणिवर्तन (नामक बुद्ध क्षेत्र में) **धनश्री** (तथागत) श्वेत प्रकाश से युक्त, रक्तवर्ण हैं । (जो हस्त) मुद्रा द्वारा दो रत्न (मणि) (धारण किए हुए विराजमान) हैं । यहाँ **धन** (शब्द से) ज्ञान यानि अक्षय महाज्ञान कहा गया है और (चिन्ता) मणि के गुणों के समान महागुणों से युक्त हैं, इस कारण समस्त इच्छाओं की पूर्ति करना ही उनका कर्म है । गुण से (तात्पर्य) **श्री** से है, जो दो (प्रकार की) है ।

२७. पश्चिम दिशा में (स्थित) प्रभावती नामक बुद्ध क्षेत्र के (शास्ता) (तथागत) **स्मृतिश्री** है, (जिनका वर्ण) पीत है और (दोनों हाथों में क्रमशः) पोथी एवं खड्ग (धारण किए हुए विराजमान) हैं । यहाँ **स्मृति** का (अर्थ) उनके ज्ञान से है । (क्योंकि वे) 'अविस्मृत महाज्ञान' (नामक) धारणी से युक्त है अथवा उनका (प्रमुख) गुण स्मृति है । (क्योंकि उनमें) अचिन्त्य विमुक्ति नामक गुण है (यही) **श्री** उनका कर्म है ।

२८. पश्चिमोत्तर (दिशा) में (स्थित) अनिमित्त नामक (बुद्ध) क्षेत्र में हरित (वर्ण वाले) (तथागत) **सुपरिकीर्तितनामधेयश्री** दोनों हाथों से तथागत के उष्णीष को अपने सिर पर धारण किए हुए (विराजमान) हैं । **नामधेय** (से अभिप्राय उनके) ज्ञान से है । (ये) अक्षय ज्ञान ग्रहण किए हुए है । **श्री** से (तात्पर्य) कर्म है । **सुपरिकीर्तित** का अभिप्राय

उनके गुण से है । (समस्त) लोकधातुओं में विख्यात होना ही सुपरिकीर्तित हैं ।

२९. उत्तर दिशा में (स्थित) इन्द्रप्रभ नामक (बुद्ध) क्षेत्र में पीत वर्ण (तथागत) **इन्द्रकेतुध्वजराज** (अपने दोनों हाथों में क्रमशः) रत्नकेतु एवं ध्वज (धारण किए हुए) हैं । **इन्द्रकेतु** (का तात्पर्य) उनके ज्ञान से है । जिस प्रकार इन्द्रियों के द्वारा विषय ज्ञात होते हैं, उसी की भाँति उस ज्ञान से वे धर्मता को जानते हैं और उसी से सुशोभित होने के कारण वे केतु है । **ध्वज** (का अर्थ) उनका गुण है, (क्योंकि यह) समस्त (सत्त्वों को) संसार से विजय दिलाने वाले गुण से युक्त हैं । कर्म ही (यहाँ) **राजन्** है, जो समस्त कार्य करता है ।

३०. उत्तर–पूर्व दिशा में (स्थित) लीलावती (नामक बुद्ध) क्षेत्र में श्वेत वर्ण वाले (तथागत) **सुविक्रान्तश्री** भूमि–स्पर्श मुद्रा में स्थित है । **सु** का (तात्पर्य) उनके ज्ञान से है, जो सम्यग् ज्ञान है । **विक्रान्त** का (तात्पर्य उनके) कर्म से है, जिससे समस्त सत्त्वों के मार, क्लेश आदि का दमन करते हैं । **श्री** उनका गुण है । (जिसकी व्याख्या) पूर्व की भाँति दो प्रकार की है ।

३१. अधो दिशा में (स्थित) अक्लिष्ट नामंक (बुद्ध) क्षेत्र में (तथागत) **विजितसंग्राम** श्याम वर्ण के हैं । (वे दोनों हाथों में) कवच एवं खड्ग धारण किए हुए (विराजमान) हैं । इनका कर्म है संग्राम में **विजय** प्राप्त करना । (क्योंकि इससे) वे समस्त सत्त्वों के कर्म–क्लेशों के **संग्राम** का निवारण करते हैं । **'वि'** से (तात्पर्य) ज्ञान है । विजेता होना (उनका) गुण है । (क्योंकि) यही स्वकीय और परकीय संसार में विजय प्राप्त करने की क्षमता है ।

३२. पुनः उन (उपर्युक्त बुद्ध क्षेत्र के) बाहर पूर्व दिशा में (स्थित) श्रीवत्स (नामक बुद्ध) क्षेत्र में (तथागत) **विक्रान्तगामिन्** (शास्ता) श्वेत वर्ण, भूमिस्पर्श एवं अभयदान

मुद्रा में (विराजमान) है । **विक्रान्त** से उनका कर्म (दर्शाया गया) है । (इसकी व्याख्या) पूर्व की भाँति है । **गामिन्** का (तात्पर्य उनके) ज्ञान से है (जो) अन्तिम अवबोध है । श्री पूर्ववत् उनका गुण है ।

३३. दक्षिण दिशा में (स्थित) अवभासव्यूह नामक (बुद्ध) क्षेत्र में (तथागत) **समन्तावभासव्यूहश्री** पीले वर्ण के हैं । (अपने दोनों हाथों में वे क्रमशः) सूर्य (मण्डल) एवं रत्नदण्ड धारण किए हुए हैं । **समन्तावभास** का तात्पर्य (उनके) कर्म से है, (क्योंकि) वे ज्ञान के द्वारा सत्त्वों की अविद्या का निवारण करते हैं । **"व्यूह"** का (तात्पर्य) ज्ञान से है, (जो) अपरिमित (परिपूर्ण) ज्ञान है । **"श्री"** गुण की (विशेषता) है ।

३४. पश्चिमी दिशा में (स्थित) श्रीवत्स (नामक बुद्ध) क्षेत्र में (तथागत) **रत्नपद्मविक्रामिन्** रक्तवर्ण वाले हैं । (दोनों हाथों में वे क्रमशः) मणिरत्न एवं पद्म धारण किए हुए (विराजमान) हैं । यहाँ **रत्न** से (तात्पर्य) उनका गुण है । पद्म (उनका) ज्ञान है, जो मल से रहित है । **विक्रामिन्** उनका कारित्र है । (इसका अर्थ) पूर्व की भाँति है ।

३५. उत्तर दिशा के रत्नभूमि (नामक बुद्ध क्षेत्र) में **रत्नपद्मसुप्रतिष्ठित शैलेन्द्रराज** (नामक) **तथागत**, अर्हत् सम्यक्सम्बुद्ध विराजमान जीवन यापन कर रहे हैं । उनका आसन पद्म, सिंह, रत्न एवं चन्द्र (मण्डल) है । उनका वर्ण आकाश के समान नीला है । (वे) दोनों हाथों में मेरु पर्वत उठाकर (धारण किए हुए) हैं ।

(इस प्रकार) आवाहन करके प्रतिदेशना करनी चाहिए । साधक को उस प्रकार (सपरिवार सभी बुद्धों को सामने) समझकर देशना करनी चाहिए । तथागत इत्यादि (शब्दों का अर्थ) पूर्व की भाँति जानना चाहिए । यहाँ **रत्न, पद्म** आसन इन (शब्दों) के द्वारा गुण, कार्य एवं ज्ञान बताया गया है । यहाँ अन्यों से इनके आसन (की विशेषता) को जानना चाहिए । किसी

किसी में 'चन्द्र' ऐसा भी (लिखा मिलता) है, उसे कर्म के रूप में जानना चाहिए। (लेकिन) यह (पद्म आसन) सभी (बुद्धों) में जानना चाहिए। **शैलेन्द्र** का (तात्पर्य) ज्ञान और गुण से है। पर्वतराज के समान अचल ज्ञान है, मेरु पर्वत के समान गुण है। **राज** (का तात्पर्य उनके) कारित्र से है। उनको श्रद्धा से तीनों द्वारों (काय, वाक्-चित्त) से नमस्कार करना चाहिए। ये (सब) पद-अर्थ हैं। ये सब पूर्ववर्ती बोधिसत्त्वों को आपत्ति न लगने से (मात्र) औपचारिक हैं। अनागतों के लिए (ही यह) अववाद है। (ऐसा) विचार करते हुए देशना करनी चाहिए।

इस प्रकार नमस्कारों की व्याख्या के पश्चात् (अब) उन सभी (बुद्धों) के समक्ष देशना (करनी चाहिए)। एतदर्थ इन बुद्धों का ध्यान (अपनी ओर) आकृष्ट करने के लिए—**'एवं प्रमुख'** इत्यादि प्रार्थना कही गई है। इसमें (प्रतिदेशना) करते समय) स्वयं के दोनों जानु भूमि में प्रतिष्ठित कर (दोनों) हाथ शिर में अञ्जलिबद्ध करके सादर (उक्त बातें) कहने पर (उन्हें) अपने साक्षी के रूप में समझना चाहिए। यहाँ 'एवं' का (तात्पर्य) पैंतीस बुद्धों से हैं।

एवं (से तात्पर्य) विनेय (लोगों) के प्रति (बुद्धों का) ध्यान (आकृष्ट) करना है। अन्यत्र **'प्रमुख'** (=आदि) से उन सब को साक्षी बनाना है। पूर्व इत्यादि समस्त लोक की दश दिशाएं हैं (जिनमें) आकाश पर्यन्त सभी बुद्धों का आलम्बन करना है। तथागत इत्यादि (का अर्थ) सुगम है। **'यावन्तः'** से (तात्पर्य) संख्या का असंख्य होना है। **'यापयन्ति'** का तात्पर्य महाकृपादृष्टि से (हमेशा) सत्त्वों को देखना और पालन करना है। **'ध्रियन्ते'** का अर्थ तिष्ठन्ति है (जो) यावत् संसार (जीवित) रहना है। **'भगवन्तः'** का (तात्पर्य) सौभाग्यवान् होना और चार मारों[1] का दमन (प्रहाण) करना है। **'ते'** का तात्पर्य सभी पैंतीस

---

१. स्कन्धमार, क्लेशमार, देवपुत्रमार तथा मृत्युमार। -धर्मसंग्रह, पृ. ४५, नागार्जुन, ति.सं., १९८८।

(बुद्धों) इत्यादि से हैं । **'माम्'** (के साथ) अपना प्रथम नाम कहना चाहिए । **'समन्वाहरन्तु'** का (तात्पर्य) चित्त के अन्यथा न होने के लिए अध्येषणा करना है ।

द्वितीय देशना के स्वरूप का काल की दृष्टि से निर्देश करने के लिए **'मया (अस्यां) जातौ'** इत्यादि कहा गया है । 'मैंने इतने काल तक इतना पाप किया— ऐसा मन में सोचकर कौकृत्य (पश्चात्ताप) होना है । यहाँ **'अस्यां जातौ'** का (तात्पर्य) इस जन्म में कृत पाप का स्मरण करना है । उससे पूर्व अतीत से लेकर अपरिमित अनादिकाल तक संसार है । अनादिकाल का अभिप्राय सामान्यतया सांसारिक जीवों का आकाश की तरह अनन्त होना है । उन (कालों) में संसरण का (अर्थ) चक्र की भाँति पुनः पुनः उत्पन्न होकर विनष्ट होना है । वह भी, जैसे पूर्व जन्मों में संसरण होता रहा है, उसी की भाँति इस (जन्म) एवं आने वाले (जन्मों में भी होना) है । **'अन्यासु वा जातिषु'** का तात्पर्य तिर्यक् आदि छः योनियों में (जन्म लेना) है ।

तीसरा स्वभावतः अपने पापों की देशना करना **'पापकम्'**– इत्यादि इस प्रकार है । यह भी, 'मैंने (अब तक) इतना पाप किया' इस प्रकार विप्रतिसारपूर्वक अपना मानसिक कष्ट प्रकट करते हुए देशना करनी चाहिए । (यही) इसका अर्थ है । पाप कर्म भी कारणभूत अविद्या का आश्रय लेकर राग आदि तीन प्रत्ययों के द्वारा काय आदि तीन (द्वारों) से किए जाते हैं । वे (कर्म) भी तीन प्रकार के होते हैं । कृत–असञ्चित, अकृत–सञ्चित और कृत–सञ्चित । (ये) तीन पाप हैं । इन सब (पापों) को सूत्रों के अनुसार जानना चाहिए । यहाँ पाप का तात्पर्य (उन पापों से हैं,) (जिनका) दुर्गति में पतन के पूर्व आभास होता है । फल के रूप में दुर्गति में उत्पन्न होने और सज्जनों के द्वारा निन्दनीय होने से इन्हें अकुशल कहा गया है ।

कर्म (उसे कहते हैं, जो काय आदि स्कन्धों में) उपश्लिष्ट या वासित होते हैं । काय आदि के द्वारा कृत प्राणातिपात आदि दश (अकुशल) होते हैं । गुरु, लघु आदि (पापों का) अन्तर समझना चाहिए । ये (कर्म) भी तीन प्रकार के होते हैं– साक्षात् स्वयं कृत कर्म, दूसरों से कराए गए (कर्म) और किए गए (कर्मों) का अनुमोदन करना । (इन) तीनों का विपाक (फल) समान होता है । विशेषकर **'कृत'** का तात्पर्य किए गए (कर्म) से है, ये सब महायान में (वर्णित) हैं । यह सब तो सर्वसाधारण है । विशेषकर अदत्तादान आदि गुरुतर पाँच में से यहाँ (केवल) तीन ही (निर्दिष्ट) हैं । (जैसे) सत्त्वों के (हित) के लिए अष्ट (विध) चैत्यों[१] के लिए (समर्पित) सुवर्णादि धन (स्तौपिकं) है । संघ (का तात्पर्य) अभेद्य होना है । बोधिसत्त्व एवं श्रावक के भेद (से संघ दो तरह के होते) हैं । वह भी, प्रथम (संघ) में तो दो (बोधिसत्त्वों का होना) आदि (माना गया) है । दूसरे में चार भिक्षुओं (का संघ) आदि होना है । उससे भी गुरुतर चारों दिशाओं के संघ (सांघिक) और अतिथि आदि का धन चुराना या साक्षात् लूटना है । अत्यन्त गुरुतर पांच आनन्तर्य (कर्म) हैं । यह (आनन्तर्य) भी वह है, (जिसके फलस्वरूप प्राप्त) दुःखों (के बीच) अन्तराल नहीं है (तथा) जिस पाप के फल की कोई सीमा नहीं है । (साथ ही) निर्दोषता एवं अल्पदोषता को भी जानना चाहिए । और भी कहा है अन्यों का प्राणातिपात आदि दश (अकुशल) करने वाले (उस व्यक्ति) के उसी मास में ही बिना किसी हिचकिचाहट के प्रतिदेशना करने में प्रविष्ट होने को भी जानना चाहिए । इन्हें आदीनव के रूप में प्रदर्शित करने के लिए 'कर्मावरण' इत्यादि (यहाँ) कहे गए है । तथाहि– इसी प्रकार दाहक विपाकों को सोचकर अपने चित्त के दोषों को निकालते हुए अत्यन्त विप्रतिसार (पश्चात्ताप) के साथ प्रतिदेशना करनी चाहिए । यही वाक्यार्थ है । वह भी, इन कर्मों के द्वारा आवृत होने का (तात्पर्य) ज्ञान को अस्पष्ट करने से है ।

---

१. सुगतचैत्य, बोधिचैत्य, धर्मचक्रचैत्य, प्रातिहार्यचैत्य, देवावतरणचैत्य, भेदयोगचैत्य, विजयचैत्य और निर्वाणचैत्य ।

इनका विपाक किस प्रकार का है ? नारकीय सत्त्व आदि अष्ट अक्षणों[1] से युक्त हैं। (क्योंकि इन सब में) सद्धर्म के लिए अवसर नहीं होता है। कोई इस समय दुःखों से पीड़ित हैं तो कोई बाद में प्राप्त होने वाले दुःखों से। इस प्रकार अवसर न होने से उनके लिए क्षणसंपद्[2] नहीं है। उन में से (पहला) **नरक** आत्यन्तिक दुःखों से युक्त है। (ये भी दो प्रकार के हैं) भूयिष्ठ एवं अभूयिष्ठ[3]। उनमें से पहले (के अन्तर्गत) शीत (८ नरक[4] एवं ८) उष्ण नरक[5] ये सोलह प्रकार के (नरक) आते हैं। द्वितीयतः स्थान की (दृष्टि) से ये भी दो प्रकार के होते हैं। ये सब **महास्मृत्युपस्थानसूत्र** के अनुसार जानना चाहिए। (ये सब नरक) अतिमात्र कृत दुष्ट कर्मों के फल हैं। **तिर्यक्** अज्ञानी होते हैं। ये जरायुज योनि आदि के होते हैं। यह (तिर्यक् योनि) भी दो प्रकार के होते हैं। आकार (की दृष्टि से ये) चार प्रकार के होते हैं। ये नीच (योनि) के हैं।

---

१. नरकप्रेततिर्यञ्चो म्लेच्छा दीर्घायुषोऽमराः।
मिथ्यादृग्बुद्धकान्तारौ मूकताष्टाविहाक्षणाः॥ बो.च.पं., पृ. ८, बौ.भा.प्र. १९८८।
'सूत्रों एवं शास्त्र में आठ अक्षणों की गणना में कुछ भिन्नताएं प्राप्त होती हैं जैसे आचार्य नागार्जुन के धर्मसंग्रह में है, जो इस प्रकार है—नरकोपपत्ति, तिर्यगुपपत्ति, यमलोकोपपत्ति, प्रत्यन्तजनपदोपपत्ति, दीर्घायुषदेवोपपत्ति, इन्द्रियविकलता, मिथ्यादृष्टि, चित्तोत्पादविरागिता।
—धर्मसंग्रह, पृ. ८१, नागार्जुन, तिब्बती संस्थान, सारनाथ, १९८८।

२. आठ अक्षणों से वियोग को क्षण कहते हैं। संपद् दस होते हैं। इसमें पांच स्व-संपद् तथा पांच पर-संपद् हैं। पाँच स्व-संपद् इस प्रकार हैं—मनुष्य होना, मध्यदेश में जन्म लेना, इन्द्रिय पूर्णता, कर्मान्त से न लौटना, बुद्धशासन में श्रद्धा होना, पांच पर-संपद् इस प्रकार हैं—बुद्धोत्पाद, सद्धर्म का उपदेश, शासन की स्थिति, शासन का अनुसरण करना तथा कल्याणमित्रों का होना।

३. सामान्यतया भूमिष्ठ एवं अभूमिष्ठ को नरक का भेद नहीं मानते हैं। इन्हें तिर्यग् योनि का भेद माना जाता है। यहाँ इन्हें नरक का भेद कहा गया है। मैंने अन्यत्र सूत्रों में तथा सम्बन्धित ग्रन्थों का अवलोकन किया परन्तु मुझे कही भी इन दोनों की जानकारी नरक के भेद के रूप में नही मिली।

४. अर्बुद, निरर्बुद, अटट, अपप, हाहाधर, उत्पल, पद्म, महापद्म।
—धर्मसंग्रह, पृ. ७५।

५. संजीव, कालसूत्र, संघात, रौरव, महारौरव, तापन, प्रतापन, अवीचि।
—धर्मसंग्रह, पृ. ७५, ति.सं. १९८८।

मध्यकर्मिक (का तात्पर्य) **प्रेत** से है। जिनको अन्न इत्यादि की इच्छा होने पर भी नहीं मिलता है। उनका स्थान दुष्ट यमलोक हैं। उसे भी दो प्रकार से जानना चाहिए। अथवा इन तीनों दुर्गीतियों के हेतु अधिकतर प्राणातिपात, मत्सर एवं मोह (कर्मों के फल से) जानना चाहिए। (अतः) इन तीनों को दुर्गीति (कहते) हैं। अन्ततः लघु दुष्कर्मों का फल प्रत्यन्त (में जन्म) है। (यह) मनुष्य एवं देव (योनियों) में (होने वाले) अक्षण हैं। ये सब दुष्ट गति होने से दुर्गीति हैं। जिस प्रदेश में धर्म आदि का अभाव होता है, उसे प्रत्यन्त कहते हैं। यह देशगत प्रत्यन्त है। **म्लेच्छ** का (तात्पर्य) प्रकृत्या मूढ एवं अज्ञानी होना और सुष्ठु भाषा न होना आदि से है। अथवा प्रत्यन्त मलेच्छ ऐसा भी कुछ लोग (अर्थ) करते हैं। वे लोग इसी कारण दुष्कर्म करने से दुर्गीति में गमन करते हैं। **दीर्घायु** वाले **देवता** पुण्यबहुल होने के साथ-साथ महान् अहंकारी होते हैं। वे अपरिमित कल्पों तक स्थित होते हैं। वे **मिथ्यादृष्टि** वाले होते हैं और (प्रायः) रूप-धातु में रहते हैं। अथवा चित्तनिरोध का अभ्यास करके संज्ञानिरोध करते (असंज्ञी) है-ऐसा भी कहा गया है। वे सब (लोग) मरण के पश्चात् नरक में जाते हैं। (संयोग से) मनुष्य योनि में जन्म लेने पर (भी) रूपादि पर अधिपत्य करने वाले चक्षु आदि पाँच या छः इन्द्रियों में दोष आ जाने से वे सद्धर्म का अर्थ जानने वाले भाग्यवान् नहीं होते हैं। उनमें एक, या दो, तीन, चार, पाँच या सभी छः **(इन्द्रियों)** से **विकल** होना सम्भव है। (इनमें से) "दुर्" का तात्पर्य मनइन्द्रिय में दोष आने के कारण अत्यन्त हानिकारक होने से है। सम्यग् दृष्टि से रहित सत्त्वों की 'बुद्ध आदि नहीं हैं'- ऐसा सोचने वाली विपरीत दृष्टि ही उच्छेददृष्टि है। (यह) सभी अकुशलों में गुरुतर है। अन्य शाश्वत आदि दृष्टि भी (मिथ्यादृष्टि ही) हैं। इस प्रकार से (अक्षण) आठ हो जाते हैं। बुद्ध का (लोक में) प्रादुर्भाव सामान्य होता है, पर वे (बुद्ध के) लोक में आगमन के समय नमस्कार आदि न कर (उसके विपरीत) अपवाद करते हैं। अपि

च, इसे लक्ष्यकर बुद्ध (शासन) शून्य स्थानों में उत्पन्न होना भी आठवाँ है ।

इस प्रकार (पापों के) अपने स्वरूप प्रदर्शित करने के बाद किसके समक्ष प्रतिदेशना करना है (इसे) 'बुद्ध'–इत्यादि (द्वारा कहा) है । यही मात्र सम्यग् साक्षी हैं, न कि अन्य । यहाँ **भगवान् बुद्ध** का (तात्पर्य) वही शाक्यमुनि आदि से हैं । उन्हें सर्वज्ञता होने से **'ज्ञानभूत'** (कहा गया) है । पुण्य एवं पाप आदि को स्पष्ट रूप से जानने से वे **'चक्षुर्भूत'** हैं । **साक्षिभूत** से तात्पर्य शुभ एवं अशुभ के अन्तर को हृदयङ्गम करना है । शब्द आदि में भ्रान्ति न होने से वे **'प्रमाणभूत'** है यानि, वे अविसंवादक हैं । मन के द्वारा सब कुछ ज्ञात होने से वे **'ज्ञाता'** हैं । प्रज्ञाचक्षु के द्वारा सब का दर्शक होने से वे 'विपश्यक' हैं । अग्रतः से (तात्पर्य) सम्प्रति सामने उपस्थित होना है ।

किस विधि से प्रतिदेशना करनी है ? **'आविष्करोमि'** आदि अर्थात् वह (कथन) सम्यग् रूप से है, न कि सम्प्रलाप आदि । यहाँ वचन से बोलना ही आविष्करण है । देशना या न छिपाना (अप्रतिच्छादना) का (तात्पर्य) मन के द्वारा अलग–अलग प्रतिदेशना करने से है । इसे स्वीकार कर लेने से वाक्य में **अप्रतिच्छादन** है, **'न प्रतिच्छादयामि'** का तात्पर्य विशदीकरण से है । अर्थात् इस प्रकार प्रतिदेशना करने पर (सभी पापों से) शुद्धि हो जाएगी ।

इस प्रकार दो बलों का प्रदर्शन करने के बाद अब प्रत्यापत्ति बल के द्वारा पाप देशना के लिए **'आयत्यां संवरमापद्ये'** ऐसा कहा है । वह भी, पूर्व (काल में कृत पाप कर्म का स्मरण करके) कौकृत्य करता है, इस समय प्रतिदेशना करता है और भविष्य में (पाप) न करने की प्रतिज्ञा करता है । प्रतिदेशना (करने के बाद) फिर से (पाप) का आचरण किया तो पाप की वृद्धि होगी, जैसे (भोजन पानी से यदि) रोग में हानि पहुँचती है तो फिलहाल भोजन पानी बन्द कर देना चाहिए ।

इसके बाद भी दश अकुशल आदि दोषों का प्रवाह विच्छेद करना है और भविष्य में (इस तरह के पाप) न करने का संवर या प्रतिज्ञा ग्रहण करना है । (इसके द्वारा समस्त) पापों की विशुद्धि हो जाएगी ।

इस प्रकार तीन बलों का प्रदर्शन करने के बाद अब चौथे प्रतिपक्षसमुदाचार बल के लिए- **'बुद्धाः'** इत्यादि कहा है । यहाँ सभी पापों की पुनः वृद्धि न होने (देने के लिए) और पुण्य संचित करने के लिए संतति में कुशल होने का प्रदर्शन करना है, (इसे) औषधि की भाँति जानना चाहिए । यहाँ समस्त परिणामनाएं बोधिसत्त्व की छह पारमिताओं से युक्त है । इसके द्वारा उनका ग्रहण होने से ये पारमिताओं के समान हैं । वह भी, दो प्रकार की हैं । उसमें से सोत्तर तो समस्त के अनुकूल है । उसने भद्र जन्म प्राप्त किया है- ऐसा भी जानना चाहिए । यह त्रैधातुक योनियों में से देव और मनुष्य आदि हैं । दान[1] के अनुकूल का तात्पर्य **'दानं...... अन्तशः'** से है । उसमें उत्तम होना भी जानना चाहिए । तिर्यग्योनि का तात्पर्य श्वान आदि से है । वह तो लघु गोचर है, महान् (विषय) भी ग्रहण करना (चाहिए) । 'आलोपः' का तात्पर्य लघु वस्तु (प्रतीत होती) है । बड़ी वस्तु भी जान लेना चाहिए । शील का तात्पर्य शीलों के अनुकूल होना है (जैसे)-संवरशील[2] आदि (तीन प्रकार के शील) हैं । अत्यन्त अवदात या शुद्ध (कुशल) का उत्पाद होने से कुशलमूल (कहा गया) है । क्षान्ति[3] के अनुकूल ब्रह्मचर्य है, (जो) पाप से रहित रहते हुए मैत्री आदि में स्थित होकर आक्रुष्ट को फिर से आक्रुष्ट न करना अर्थात् अप्रत्याक्रुष्ट आदि श्रमण धर्मों से युक्त

---

१. दान तीन प्रकार के होते हैं—धर्मदान, आमिषदान, मैत्रीदान । मैत्रीदान के लिए अधिकांश सूत्रों में 'अभयदान' ऐसा भी प्राप्त होता है । -धर्मसंग्रह, पृ. ६९

२. संवरशील, कुशलसंग्रहशील, सत्त्वार्थक्रियाशील । -धर्मसंग्रह, पृ. ६९

३. क्षान्ति तीन प्रकार के हैं—धर्मनिध्यानक्षान्ति, दुःखाधिवासनक्षान्ति, परोपकारधर्मक्षान्ति किन्तु अन्तिम के लिए शि.समु. में 'परापकारमर्षवक्षान्ति' प्राप्त होता है ।
-धर्मसंग्रह, पृ. ६९

होना है । राग से रहितों को (आकृष्ट कर्म) नहीं करना चाहिए । वीर्य[1] के द्वारा अनुकूल सत्त्वों का परिपाक करता है । महावीर्य में स्थित मेरे द्वारा पाँच अभिज्ञाओं से सभी सत्त्वों को विपरीत दृष्टि एवं विपरीत मार्ग से हटाकर (चित्त) संतति को परिपक्व करने के पश्चात् सम्यग् (मार्ग) में निक्षिप्त किया जाता है । (अर्थात्) मुक्त एवं कृतार्थ सदृश जानना चाहिए । ध्यान[2] के अनुकूल प्रणिधि (चित्तोत्पाद) तथा प्रस्थान (चित्तोत्पाद) (अर्थात्) संवृत्ति एवं परमार्थ बोधि चित्तोत्पाद करना होता है । इनमें (चित्त का) एकाग्रतया स्थित होना, अविपर्यस्त मार्ग है ।

अनुत्तर ज्ञान[3] (अर्थात्) प्रज्ञापारमिता के अनुसार परिणामना करना होता है । यह निरुत्तर ज्ञान अर्थात् अद्वय-धर्मता का अवबोध होना है । (अर्थात्) (इसे) ज्ञान-संभार (कहते) हैं । इन (छह पारमिताओं में से पूर्ववर्ती) चार (पारमिताएं) पुण्य संभार में संगृहीत मानी जाती हैं । और पाँचवीं (ध्यान पारमिता) दोनों (सम्भारों में संगृहीत) हैं । छठवीं (अर्थात्) (प्रज्ञापारमिता) तदतिरिक्त (अर्थात् ज्ञानसम्भार मानी जाती) है । (इस प्रकार ये) सभी छह पारमिताएं दो संभारों में संगृहीत होती हैं ।

इन सभी छह पारमिताओं की स्थिति (या नय) किस प्रकार है ? इसके लिए (मूल में) **'एकध्यं पिण्डयित्वा...'** आदि कहा गया है । प्रत्येक कुशल और (सभी) वस्तुओं को एक में सम्पिडन किया जाता है (अर्थात्) इसे सम्मिश्रण या मेलन (कहा

---

१. वीर्य तीन प्रकार का है—संनाहवीर्य, प्रयोगवीर्य (सामान्यतया यह वीर्य कुशलपक्षधर्मसंग्रहवीर्य के नाम से ज्यादा प्रसिद्ध है), परिनिष्ठावीर्य (सामान्यतया यह 'सत्त्वार्थकवीर्य' के नाम से प्रसिद्ध है । ऐसा बोधिसत्त्व भूमि में कहा गया है) -धर्मसंग्रह, पृ. ७०

२. ध्यान के तीन भेद हैं—सदोषापकर्षध्यान, सुखवैहारिकध्यान, अशैषवैभूषितध्यान, -धर्मसंग्रह, पृ. ७०

३. प्रज्ञा भी तीन प्रकार की है—परमार्थाधिगतप्रज्ञा, संवृत्यधिगतप्रज्ञा, सत्त्वार्थक्रियाप्रज्ञा । ये प्रज्ञा के प्रसिद्ध भेद हैं । इसके अतिरिक्त भी तीन प्रकार की प्रज्ञाएं कही गई हैं—श्रुतमयीप्रज्ञा, चिन्तामयीप्रज्ञा, भावनामयीप्रज्ञा । -धर्मसंग्रह, पृ. ७१

जाता) है । अविच्छेद करने का तात्पर्य 'संवर' करना है, प्रकृतितः असम्भिन्न करना है । कहाँ परिणामना करें ? अनुत्तर बुद्धों के (समक्ष परिणामना करना) है । वह (परिणामना) श्रावकादि से विशिष्ट होने के कारण अनुत्तर (कही गई) है । निरुत्तर (अर्थात्) बुद्ध है । उत्तर (अर्थात्) लोक के उत्तर स्थित । वह दो है । इन सभी के उत्तर बोधिसत्त्व है । गुरु (उत्तर) तो बोधिसत्त्वों को (कहते) हैं । उससे गुरु या उत्तर तो भगवान् बुद्ध है । (क्योंकि) उससे उत्तर कोई नहीं है । वही 'बोधिसत्त्व महासत्त्व' हैं 'से' (अर्थात्) वही सर्वज्ञ है ।

सभी के लिए परिणामना करना तो परिशुद्ध त्रिमण्डल को कहा गया है, जो अनुपलम्भ है । यह सामान्य बोधिसत्त्वों की परिणामना है । अनुत्तर बुद्धत्त्व के लिए परिणामना करना उपायकौशल है । इस प्रकार परिणामना के लिए **'यथा'** इत्यादि कहा गया है । स्वयं परिणामना करना नहीं जानता है तो इस प्रकार (पूर्वोक्त विधि से) परिणामना करना प्रणीत आदि द्वारा आदरपूर्वक (परिणामना करना उचित) है । त्रैकालिक बुद्धों द्वारा कृत परिणामना की भाँति मेरे द्वारा भी आदरपूर्वक परिणामना करना महा (अववाद) या उपदेश है । त्रिस्कन्ध[१] के अनुसार परिणामना तो– **'सर्वं पापं प्रतिदेशयामि'** आदि द्वारा कही गई हैं । यह पाप देशना स्कन्ध और शुद्ध एवं अशुद्ध कुशल के (द्वारा) अनुमोदन यह सब विषय के रूप में प्रस्तुत करें तो यह आनन्द स्कन्ध या (अनुमोदन स्कन्ध) है । सभी बुद्धों का महापरिनिर्वाण न होने की (प्रार्थना करना) और धर्मचक्र परिवर्तन करने के लिए अध्येषणा करना याचना स्कन्ध में (संगृहीत होते) हैं । इन तीन के द्वारा अपरिमित पुण्यस्कन्ध संचित किया जाता है ।

---

१. ऊपर त्रिस्कन्ध की पृथक्-पृथक् तीन प्रकार की गणना की गई थी । शिक्षा समुच्चय में इसकी गणना में भिन्नता बताई गई है । —पृ. ९, मि.सं. १९६१

इन (सब) के प्रसंग (के बाद) प्रणिधान करना (अर्थात्) बुद्धत्व की प्राप्ति के लिए प्रणिधान करते समय अनुत्तर ज्ञान प्राप्त हो (ऐसा प्रणिधान किया जाता) है । समस्त पापों के प्रतिपक्षभूत शरणगमन करना श्रेष्ठ है । यहाँ भी शरणगमन करने का तात्पर्य **'नरोत्तमा जिनाः'** इत्यादि (द्वारा कहा गया) है । (शरणगमन आदि) पूर्व में सामान्यतया प्रदर्शित किये जा चुके हैं । 'तथापि' का तात्पर्य बुद्ध मात्र के ही शरणगमन की निष्ठा होने से है । (धर्म एवं संघ की शरणगमन) यहाँ नहीं कहा गया है । यहाँ **'नरोत्तमाः'** (का तात्पर्य) मनुष्य रूप में जन्म लिया हुआ 'निर्माणकाय' है । गुण का तात्पर्य बुद्ध के (दश) बल इत्यादि हैं । **'वर्णान्'** का तात्पर्य विशेष रूप से स्तुति करना है । अनन्त से तात्पर्य इन पैंतीस (बुद्धों) आदि से है । सागर को यहाँ उपमा के रूप में प्रस्तुत किया गया है, जो अक्षय है अर्थात् संख्यातीत व्यक्त करना है । अंजलि का तात्पर्य काय के द्वारा (प्रणाम करने) से है । शरणगमन चित्त एवं वाक् के द्वारा (किया जाता) है ।

इस प्रकार चार बलों द्वारा (प्रतिदेशना) करने से समस्त पापों की विशुद्ध होती है (और दोनों) सम्भार सम्पन्न होकर बुद्धत्व की प्राप्ति होती है, अतः सभी (व्यक्तियों को) इसे जानना चाहिए ।

यहाँ (मैंने) संक्षिप्त रूप में व्याख्या की है । विस्तृत रूप से जानकारी सूत्र से होगी । इस प्रकार जानकर यत्नपूर्वक एवं बल पूर्वक (समस्त) पाप की प्रतिदेशना करनी चाहिए ।

रत्न रूपी इस (मनुष्य) काय को प्राप्त करना प्रशंसनीय है । कौसीद्य एवं तन्द्रा रहित होना चाहिए । अपने द्वारा अपने चित्त को देखकर मान, स्त्यान नहीं करना चाहिए, यह महान् आश्चर्य (करने योग्य) है ।

मैंने करुणा के बल (प्रेरणा) से सत्त्वार्थ के लिए बोध्यापत्तिदेशना की यह वृत्ति की है, इससे उत्पन्न विमल कुशल

(पुण्य) के द्वारा सत्त्वों को नागराज की भाँति (अर्थात् तथागत नागेश्वरराज की भाँति) बुद्धत्व प्राप्त हो ।

समस्त दृष्टि का प्रहाण करने वाले (तथा) सम्यग् मार्ग दिखाने वाले बुद्ध, (जो) सिंह की भाँति (चार) मारों का दमन करने वाले हैं, उन गौतम (बुद्ध) को (मैं) प्रणाम करता हूँ ।[१]

बोध्यापत्तिदेशनावृत्ति महान् आचार्य आर्य नागार्जुन द्वारा विरचित समाप्त । भारतीय महापण्डित शान्तरक्षित और भोट देश के लोचावा (अनुवादक) ञे-देवघोष के द्वारा अनूदित एवं संशोधित ।

●

१. इसी प्रकार का एक श्लोक मध्यमककारिका में प्राप्त होता है तुलनीय—
सर्वदृष्टिप्रहाणाय यः सद्धर्ममदेशयत् ।
अनुकम्पामुपादाय तं नमस्यामि गौतमम् ॥ —भू. म. कारिका २७/३०

भारतीय भाषा में : बोध्यापत्तिदेशनावृत्तिः बोधिसत्त्वशिक्षाक्रमो नाम

आर्यगण को (मेरा) नमस्कार

जिस (तथागत) ने समस्त (धर्मों) का अवलोकन किया है, (उस) सर्वज्ञ को नमस्कार करके मैं बोधिसत्त्वशिक्षा (त्रिस्कन्ध-सूत्र की टीका) को श्रद्धापूर्वक लिखूँगा।

यहाँ जो (लोग) बोधिचित्तोत्पाद करके निःश्रेयस की प्राप्ति के लिए इच्छुक हैं, उनको दोषों से व्यावृत्ति के उपायों की जानकारी के लिए यह त्रिस्कन्ध-सूत्र कहा गया है। यह दोष भी पाराजयिक कुल के अंतर्गत और दोषकृत कुल के अन्तर्गत (आने वाले ये दो प्रकार के) हैं[१]। (पहला) पाराजयिक कुल के अन्तर्गत आने वालों के भी श्रावक साधारण एवं असाधारण ये दो प्रकार के भेद हैं। इन सभी से निवृत्त होकर चित्तोत्पाद करके तीन प्रकार के संवर[२] प्राप्त करना है। दोषों से निवृत्ति तो त्रिपुद्गल[३] के (समक्ष) प्रतिदेशना करना, एक पुद्गल[४] के

---

१. ये दोनों दोष प्रहेय आपत्ति के भेद हैं। इस कारण पाराजिक एवं दोषकृत दो भेद किए जाते हैं। पाराजिक के बारे में विस्तार से बोधिसत्त्वभूमि एवं गगनगर्भसूत्र में द्रष्टव्य है। बोधिसत्त्वभूमि में उल्लिखित चार पाराजिकों को "विंशतिसंवर" में भी कहा गया है। आचार्य अतीश ने आठ पाराजिकों को कहा है। गगनगर्भसूत्र में उल्लिखित ११ पाराजिकों को शिक्षा समुच्चय में भी कहा गया है किन्तु यहाँ १५ पाराजिकों की बात कही गई है। किन्तु पन्द्रहवें पाराजिक के बारे में भोट विद्वानों में मतभेद है। इनका विभाजन कर पुनः ३७ पाराजिक कहे गए हैं। सवरशील, पाराजिक कुल (जाति) है। कुशलसंग्रह षड्पारमिता के विपक्ष तथा सत्त्वार्थशील के विपक्ष दोषकृत कुल (जाति) हैं।

२. प्रतिमोक्षसंवर, बोधिसत्त्वसंवर, वज्रसंवर (तन्त्र)।

३. द्रष्टव्य-श्रावक पुद्गल, महायानी पुद्गल, सम्भोगी पुद्गल।
–"विशतिसंवरव्याख्या"–देगे. ४०८३, सेमचम "हि" पुद, पृ. २०२ख।

४. द्रष्टव्य-श्रावक पुद्गल, महायानी पुद्गल, सम्भोगी पुद्गल।
–"विंशतिसंवरव्याख्या"–देगे. ४०८३, सेमचम "हि" पुद, पृ. २०२ख।

समक्ष प्रतिदेशना करना और पैंतीस बुद्धों[1] के (समक्ष) प्रतिदेशना करना है ।

सर्वप्रथम विशिष्ट पूजास्थान के सम्मुख शरणगमन करना है और उसके बाद प्रणाम करके पाप की देशना करना है । तत्पश्चात् भविष्य में संवर से च्युत न होने की प्रतिज्ञा करनी है । उसके बाद समस्त कुशल मूल की अनुत्तर बोधि में परिणामना करें । भविष्य में संवरों की स्थिति के लिए पापदेशना करना, अध्येषणा करके याचना करना, कुशल मूल की परिणामना करना और शरण–गमन करना चाहिए । यह (सब) संक्षिप्त अर्थ है ।

अब अवयवों का अर्थ कहना चाहता हूँ । **'मैं अमुक नामक'** से तात्पर्य देवदत्त या यजन आदि व्यक्ति हैं । बुद्ध की शरणगमन करता हूँ, धर्म की शरण–गमन करता हूँ और संघ की शरण–गमन करता हूँ । प्रहाण एवं अधिगम से युक्त होने के कारण बुद्ध हैं । वह (बुद्ध) तीन काय से (युक्त) है—धर्मकाय, संभोगकाय और निर्माण काय, (बुद्ध) (का तात्पर्य) तद्विषयक हैं । यहाँ 'की' विषय के अधिकरण में सप्तमी विभक्ति है । शरणगमन का (तात्पर्य) हिंसा आदि क्लेशों से रक्षा करना है । धर्म का (तात्पर्य) आगम तथा अधिगम धर्म[2] से है । संघ का (तात्पर्य) श्रावक, प्रत्येकबुद्ध तथा बोधिसत्त्व हैं । श्रावक भी चार प्रकार के प्रतिपन्नक[3] और चार प्रकार के फलस्थ[4] हैं । प्रत्येकबुद्ध भी एकान्तचारी और गणचारी (द्विविध) हैं । बोधिसत्त्व

---

१. उपालिपरिपृच्छासूत्र (उद्धृत–शि.सम., पृ. ९४, मि.सं. १९६१) ।
२. सद्धर्मो द्विविधः शास्तुरागमाधिगमात्मकः । –अभि.को. ८/३९ ।
३. स्रोतापत्तिप्रतिपन्नक, सकृदागामीप्रतिपन्नक, अनागामीप्रतिपन्नक, अर्हत्प्रतिपन्नक ।
४. स्रोतापन्नफलस्थ, सकृदागामीपलस्थ, अनागामीफलस्थ, अर्हत्फलस्थ ।
–धर्मसंग्रह, पृ. ६३, ति.सं. १९८८

भी विनियत और अविनियत (दो प्रकार के) हैं । शेष की व्याख्या (पूर्व) में की जा चुकी है ।

(१) **'नमो भगवते शाक्यमुनये तथागताय अर्हते सम्यक्सम्बुद्धाय'** का तात्पर्य बलसहित समस्त मारों का महासंग्राम में विनाश करने वाले होने से **'भगवत्'** है । तथागत का तात्पर्य अविपर्यस्त तथता की देशना देनेवाले से है । **अर्हत्** का तात्पर्य समस्त मनोरथों को प्राप्त करने वाले से है तथा अनुत्तर पुण्य क्षेत्र और पूजा के योग्य होने से है । सर्वधर्मों के परमार्थ रूप के यथावत् ज्ञाता होने से **'सम्यक्सम्बुद्ध'** ऐसा कहा गया है । **शाक्यमुनि** से तात्पर्य समस्त क्लेशों के प्रहाणान्त को प्राप्त, आदेयवचन, सम्पन्नकुल और सम्पन्न ऐश्वर्य होने से है ।

(२) (तथागत) **वज्रगर्भप्रमर्दिन्** का (तात्पर्य) प्रपञ्च रहित होने से, वस्तुग्राह का प्रहायक होने से, हीरक की **भाँति** है । समस्त उसके गर्भ में है और वही विनाशक है । **अथवा वज्र** (अर्थात्) रत्न, **गर्भ** (अर्थात्) भीतर है । **प्रमर्दिन्** अर्थात् आनुभावसम्पन्न है ।

(३) (तथागत) **रत्नार्चिष्** से (तात्पर्य) **रत्न**मणि के समान होने से, ऐसा कहा गया है । जैसे देवों का द्रव्य रत्नमणि तो हल्का है, प्रभास्वर है, समस्त उपद्रवों को निवृत्त करता है, गुणवान् है तथा रमणीयादि धर्म से युक्त है । उसी प्रकार सम्यग्रत्न भी समस्त गुणों की **अर्चिष्** से युक्त है और उपकारी है ।

(४) (तथागत) **'नागेश्वरराज'** (का तात्पर्य) नागेश्वरराज की ऋद्धि से सम्पन्न होना है । वह समस्त शस्य पर वर्षा करता है । 'उनका **ईश्वर**' का (तात्पर्य) अधिपति होने से है । इन सबके राजा का अर्थ भगवान् बुद्ध है ।

(५) (तथागत) **वीरसेन** का तात्पर्य **वीर**कुल से है । (जो) विपक्ष का विनाश करता है ।

(६) (तथागत) **'वीरनन्दिन्'** उसमें **आनन्दित** होने से **वीरनन्दिन्** है ।

(७) (तथागत) **रत्नाग्नि** में **रत्न** का तात्पर्य दुर्लभ, महर्ध इच्छापूरक होने से है । वह क्लेशों रूपी इन्धन को जला देता है । (अतः **अग्नि** है)

(८) (तथागत) **रत्नचन्द्रप्रभ** का तात्पर्य चन्द्र की भाँति शीतल होने से है और अविद्या रूपी अन्धकार से विगत होने से है । विकल्पों की उष्णता से असंतप्त है ।

(९) (तथागत) **अमोघदर्शी** का तात्पर्य समस्त विनेयजनों के साक्षात् द्रष्टा होने से है । वह पात्र के अनुकूल हित करके (संसार) से उद्धार करता है ।

(१०) (तथागत) **रत्नचन्द्र** का तात्पर्य बोधिसत्त्वसमन्तभद्र से है । शेष (शब्दार्थ) पूर्व की भाँति है ।

(११) (तथागत) **विमल** से (तात्पर्य) समस्त क्लेशमलों एवं ज्ञेयमलों का दर्शन एवं भावना (मार्ग) के द्वारा प्रहाण करने वाले से है । अर्थात् साम्रवविज्ञान के प्रहाण से है । वही श्रीभूत होने से (**विमल**श्री) है । वह हित करने में श्रेष्ठ है ।

(१२) (तथागत) **शूरदत्त** का तात्पर्य समस्त सत्त्वों का हितकारी होने से है ।

(१३–१४) (तथागत) **ब्रह्मन्** से तात्पर्य रूपधातु के प्रथम ध्यान के अधिपति से है । उनकी विभूति या ब्रह्म का तात्पर्य क्लेश, कर्मों के क्षय से परिनिवृत्त होने से है । इस प्रकार वह अन्य द्वारा दत्त होने से **'ब्रह्मदत्त'** है । इसीलिए (ब्रह्मन् और दत्त

में) प्रथमा विभक्ति लगाई गई है या इस प्रकार उनके द्वारा दत्त होने से (तथागत) **ब्रह्मदत्त** है । इसलिए तृतीया विभक्ति का प्रयोग किया गया है । फलतः 'ब्रह्मदत्ताय' ऐसा निष्पन्न हुआ ।

(१५) (तथागत) **'वरुण'** का तात्पर्य सत्त्वों की सन्तति अहंकार से उन्नत, द्वेष (क्रोध) रूपी अग्नि से सन्तप्त, अविद्या से व्याप्त एवं स्थूल क्लेशों से परिपूर्ण है, उसे वह शिथिल एवं शान्त करता है । साधारण व्यक्ति रहते समय वह छत्रवान् (छातावाले) थे । उन्होंने रत्नबुद्ध पूज्य को छाया प्रदान की फलतः वे वरुण बुद्ध-काय को धारण करने वाले हुए ।

(१६) (तथागत) **वरुणदेव** क्षेत्र पालन करने वाले नाग कुल के अन्तर्गत (होने से) **वरुण** है । उनके द्वारा (जगत्) में शान्ति प्रदान की जाती है ।

(१७) (तथागत) **भद्रश्री** का तात्पर्य अद्वय ज्ञान से है । लोक के क्लेशों एवं कर्मों का अभिभव करने से वे विशिष्ट हैं ।

(१८) (तथागत) **चन्दनश्री** का तात्पर्य अनेकविध अन्नों का संग्राहक होने से है । जैसे **चन्दन** का विशिष्ट गन्ध सहज उत्पन्न होता है, उसके द्वारा घ्राण इन्द्रिय का उपकार किया जाता है, उसी प्रकार वे सर्व सत्त्वों का निरन्तर निर्विकल्प (ज्ञान) द्वारा कल्याण करते हैं इसलिए, **'श्री'** कहा गया है ।

(१९) (तथागत) **तेजस्** का तात्पर्य प्रभा से है, क्योंकि प्रभा के द्वारा समस्त जगत् में प्रकाश प्रदान किया जाता है, अतः **'तेजस्'** ऐसा कहा गया है ।

(२०) (तथागत) **प्रभाश्री** का तात्पर्य **प्रभा** के द्वारा स्फुट अवभास करते है । श्री से तात्पर्य सम्यग् ज्ञान से असंमुष्ट चित्त

द्वारा वह समस्त (धर्मों) को जानने में अप्रतिहत और असक्त है।

(२१) (तथागत) **अशोकश्री** का तात्पर्य प्रहाण एवं ज्ञान युक्त होने से है, क्लेश आवरण का प्रहाण करने से असतप्त है तथा ज्ञेय आवरण का प्रहाण करने से वे चार निर्विकल्प ज्ञानों से युक्त होने से **श्री** है।

(२२) (तथागत) **नारायण** का तात्पर्य प्रभूत बल होने से है, वह अन्यों का विनाश करने के लिए ख्यात है।

(२३) (तथागत) कुसुमश्री का तात्पर्य मनोहर एवं रमणीय होना है।

(२४) **ब्रह्मज्योतिर्विक्रीडिताभिज्ञतथागत** में **ब्रह्म** का तात्पर्य विशुद्ध होने से है। समस्त आवरणों का क्षय करके कल्पनाओं के मल से रहित हैं। **ज्योति** का तात्पर्य उपकार, सुख तथा विमुक्ति ये तीन द्वार हैं। जैसे ऋद्धिप्रातिहार्य, आदेशनाप्रतिहार्य एवं अनुशासनीप्रतिहार्य के द्वारा **विक्रीडित** होते हुए समस्त ज्ञेयों को एक क्षण में प्रत्यक्षतः जानते हैं।

(२५) **पद्मज्योतिर्विक्रीडिताभिज्ञ तथागत** का तात्पर्य **पद्म** की भाँति दोषों से अलिप्त होना है। अवशिष्ट (शब्दार्थ) पूर्व की भाँति है।

(२६) (तथागत) **धनश्री** का तात्पर्य सात **धनों** की **श्री** के अवबोध से है, (जैसे)— श्रद्धा (धन) आर्य शील (धन) श्रुत (धन) त्याग (धन) ह्री (धन) अपत्राप्य (धन) प्रज्ञा (धन) से स्वभाव है।[1]

---

१. इसका विवरण सूत्र तन्त्र एवं शास्त्रों में इस प्रकार है—
विनय-उत्तरग्रन्थ, देगे. ७अ, सूत्र (विनय) ,'प' पुद्, पृ. ३१ख
अवतंसक, देगे. ४४, सूत्र (फलछेन), 'क' पुद्, पृ. ३३३ख;

(२७) (तथागत) **स्मृतिश्री** का तात्पर्य चार **स्मृत्यु**पस्थानों (के अवबोध) से है । काय (स्मृत्युपस्थान), चित्त (स्मृत्युपस्थान), वेदना (स्मृत्युपस्थान) और धर्म (स्मृत्युपस्थान) इन चारों की **श्री** से युक्त है । मध्यगत शब्द अप्रकाशित हैं ।

(२८) (तथागत) **सुपरिकीर्तितनामधेयश्री** का तात्पर्य बत्तीस लक्षणों के उपलब्ध होने से वे अत्यन्त विशुद्ध लोक धातु में प्रसिद्ध हैं ।

(२९) (तथागत) **इन्द्रकेतुध्वजराज** का तात्पर्य इस प्रकार है- पाँच इन्द्रिय अर्थात् श्रद्धा (इन्द्रिय), वीर्य, स्मृति, समाधि तथा प्रज्ञा **इन्द्रिय** (ये पाँच) हैं । **केतु** का तात्पर्य (छह) अभिज्ञाएँ प्रतीत होती हैं । (१) ऋद्धिविध, (२) दिव्यश्रोत्र, (३) चित्तपर्यायज्ञान, (४) पूर्वनिवासानुस्मृति, (५) च्युत्युत्पत्तिज्ञान, (६) आस्रवक्षयज्ञान (ये छह) अभिज्ञाएं हैं । ये तथागत इन्द्रिय तथा अभिज्ञाओं के केतुवाले होने से चक्रवर्ती राजा हैं ।

(३०) (तथागत) **सुविक्रान्तश्री** का तात्पर्य विशेष रूप से (दमन) करना है । अर्थात् वह **सुविक्रान्त** है (जो) जड़ से उखाड़ता है । **'वि'** का तात्पर्य विकल्प है (अर्थात्) (क्लेशों) अर्थात् विकल्पों को जड़ से निकालता है ।

बोधिसत्त्वपिटक, देगे. ५६, सूत्र (कोनचेग), 'ग' पुद्, पृ. ७४ख;
आर्य महायानोपदेश-नाम-महायानसूत्र, देगे. १६९, सूत्र 'ब', पुद्, पृ. २९७क;
आर्य रत्नमेघसूत्र, देगे. २३१, सूत्र, 'व', पुद्, पृ. ५०ख;
अवमानप्रदीपमान, देगे. ३७२९, तन्त्र 'छु' पुद्, पृ. ५९क;
आर्य शतसाहस्रिका-पञ्चविंशतिसाहस्रिका-अष्टसाहस्रिका-प्रज्ञापारमिता वृहट्टीका, देगे. ३०८, शेरछिन 'फ' पुद्, पृ. ४८ख;
बोध्यापत्तिदेशनावृत्ति-बोधिसत्त्वशिक्षाक्रम, देगे. ४००६, 'जी' पुद्, पृ. १८९क;
सूत्रालंकारवृत्तिभाष्य, देगे. ४०३४, सेमस्-चम 'मी' पुद्, पृ. १६ख;
व्याख्यायुक्तिटीका, देगे. ४०६९, सेमस्-चम, 'सी' पुद्, पृ. १७९क;
विनयवस्तुटीका, देगे. ४११३, विनय, 'चु', पुद्, पृ. २१९ख;
विनय-विभङ्ग-पदव्याख्यान, देगे. ४११४, विनय, 'छु', पुद्, पृ. ६९ख ।

(३१) (तथागत) **सुविजितसंग्राम** का तात्पर्य है—शत्रुगण, जो चार मार हैं, उन पर विजय प्राप्त करने वाला । **सु** का तात्पर्य विशिष्ट है । (जिसने) समस्त (मारों) पर विजय (प्राप्त) की है ।

(३२) (तथागत) **विक्रान्तगामिश्री** का तात्पर्य बाधाघातक बल से सभी लोक धातुओं में विनेयजनों का यथावत् कल्याण करता है ।

(३३) (तथागत) **समन्तावभासव्यूहश्री** का तात्पर्य है-सुन्दर होने के लिए जैसे युवती को आभूषण से अलंकृत किया जाता है, वैसे वे (अलंकृत) हैं ।

(३४) (तथागत) **रत्नपद्मविक्रामिन्** पूर्ण मनोरथ होने पर भी संसार के दोषों से अलिप्त रहते हुए अभिभव करते हैं ।

(३५) **(रत्नपद्मसुप्रतिष्ठितशैलेन्द्रराज)** ये तथागत इच्छा पूर्ति चाहने वाले राग आदि दोषों से अलिप्त रहते हुए भय से रहित पर्वत के राजा सुमेरु की भाँति अभिभव करने वाले हैं ।

पाप की प्रतिदेशना करने का तात्पर्य दोषरूपी मलों को धोने से है । (जो) नमस्कार करना इत्यादि है । ध्रियन्ते एवं यापयन्ति का तात्पर्य अन्य दशदिशाओं में विद्यमान सभी (बुद्ध) हैं । वही **'यावन्त'** (का तात्पर्य) है । अन्य (पदों) का अर्थ सरल है । **'माम् समन्वाहरन्तु'** मेरी ओर ध्यान दें— का तात्पर्य मन में रखने से है । मैं अभी जन्म लेकर जीवित हूँ । मैंने अनादिकाल में अनेक जन्म ग्रहण किए हैं, (जिसमें) संस्वेदज, उपपादुक, अण्डज योनियों में जो जन्म लिए हैं, वे सभी इससे अतिरिक्त हैं । पाप अर्थात् अकुशल होने के कारण **'पापकर्म'** कहा गया है । जो काय, वाक् एवं चित्त तीनों के द्वारा किया गया है । (वह भी तीन प्रकार से है) (क) स्वयं के द्वारा करना, (ख) अन्यों से करवाना और (ग) अन्यों द्वारा किए

हुए का अनुमोदन करना । इनकी प्रतिदेशना करनी चाहिए । स्तूप का (तात्पर्य) बुद्धों के काय, वाक्, अवशेष एवं विहार इत्यादि से है । संघ का तात्पर्य वर्ग से है । दश दिशा के संघ का तात्पर्य अन्य (सत्त्वों को संसार से) निकालने वाले नायकों से है । इन संघों के धन (द्रव्य) का अपहरण करने वाला तो (अवश्य) नरक में जाएगा । "स्तूप एवं विहार को तोड़ने वाला और त्रिरत्न के धन को छिपाकर स्वयं के लिए उपयोग करने वाला जो व्यक्ति है, वह मृत्यु के पश्चात् महानरक अर्थात् अवीचि में पतित होगा"[१]— ऐसा (बुद्ध वचनों में) कहा गया है । "संघ का धन चुराने वाला (मृत्यु के पश्चात्) घानी (कोल्हू) पीसने वाले बैल एवं गधों में जन्म लेगा । संघ से बार-बार धन मांगकर बाद में परोक्ष में (उन पर) आरोप लगाने वाला (व्यक्ति) (मृत्यु के पश्चात्) कबूतर (योनि) में जन्म लेगा । संघ का भोजन करने वाला (मृत्यु के पश्चात्) सब्जी के भीतर रहने वाले कीड़े की योनि में जन्म लेगा"[२]— ऐसा (सूत्र) में कहा गया है । (ये उक्त पाप) स्वयं के द्वारा किया गया हो या अन्यों के द्वारा कराया गया हो या, अन्यों के द्वारा किए हुए का अनुमोदन किया गया हो, उन (सब) की प्रतिदेशना करनी चाहिए । पाँच प्रकार के आनन्तर्य ये हैं- (१) (स्वयं के) माता एवं (२) पिता का वध, (३) अर्हद्-वध, (४) दुष्ट चित्त से तथागत के शरीर से रुधिरोत्पाद तथा (५) संघ भेद करना (ये पाँच) हैं । इन (उक्त पाँचों) का आचरण किया गया है तो (वह) अवीचि नरक में जाता है ।

दश अकुशल (कर्म) (इस प्रकार हैं) (१) प्राणातिपात, (२) अदत्तादान, (३) काम मिथ्याचार, (४) मृषावाद, (५) पैशुन्य,

---

१. आर्यशुभाशुभकार्यकारणभावनिर्देश-नाम-महायानसूत्र, देगे. ३५४, सूत्र, 'अ' पुद्, पृ. २०४ख ।

२. आर्यशुभाशुभकार्यकारणभावनिर्देश-नाम-महायानसूत्र, देगे. ३५४, सूत्र, 'अ' पुद्, पृ २०१ख ।

(६) पारुष्य, (७) संभिन्नप्रलाप, (८) अभिध्या, (९) व्यापाद (१०) मिथ्यादृष्टि (ये दश) है । "इन सबका निरन्तर आचरण करने वाले नरक में जाएँगे, तिर्यक् (में जन्म) लेंगे, अन्ततः प्रेत (योनि) में जन्म लेंगे"[१] । अल्प (अकुशल) कर्म होने पर अन्य कुशल (कर्म) के बल से मनुष्य योनि में जन्म लेने पर भी "(१) प्राणघात के द्वारा अल्पायु तथा अनेक रोग से ग्रस्त रहेगा । (२) अदत्तादान से (हमेशा) दरिद्र, व्यसनी और अपने धन में स्वतन्त्र नहीं रहेगा, (उसके धन का) दूसरों के द्वारा उपयोग होगा । अब्रह्मचर्य से गर्भस्थान के अलावा (अन्य स्थान में) जन्म नहीं लेगा और विकलांग के रूप में (जन्म) लेगा । (३) "काममिथ्याचार (करने वाले) (अपनी) पत्नी का अन्यों के द्वारा उपभोग कराएगा, हमेशा पत्नी के साथ विवाद रहेगा और जानते हुए मित्रता नहीं करेगा"[२] । (४) मृषावाद (झूठ बोलने) से अधिक निन्दा होगी तथा अन्यों के द्वारा विसंवाद होगा । (५) पैशून्य से अशुचि परिवार मिलेगा एवं प्रेमिका से विच्छेद होगा । (६) पारुष्य के द्वारा अप्रिय शब्द सुनना होगा तथा जो भी (शब्द) बोलेंगे उससे विवाद उत्पन्न होगा (७) संभिन्नप्रलाप से अन्यों को अविश्वास होगा तथा अन्यों के शब्दों को समझ नहीं पाएगा । (८) अभिध्या से लोभी एवं असन्तुष्ट होगा तथा खोजने पर भी (अर्थ) की प्राप्ति नहीं होगी । (९) व्यापाद से अन्यों को (हानि पहुँचाने के लिए) अवसर खोजने वाला तथा दूसरों को हानि पहुँचाने वाला होगा । (१०) मिथ्यादृष्टि के द्वारा शठता से युक्त और मिथ्यादृष्टि वालों के कुल में जन्म लेगा[३] ।"

---

१. शुभाशुभकर्मविपाकनिर्देशसूत्र, देगे. ३५५, सूत्र, 'व', पुद्, पृ. २११क ।

२. आर्यशुभाशुभकार्यकारणभावनिर्देश–नाम–महायानसूत्र, देगे. ३५४ सूत्र 'अ' पुद्, पृ. २०६क ।

३. इमे खलु पुनर्दशाकुशलाः कर्मपथा अधिमात्रत्वादासेविता भाविता बहुलीकृता निरयहेतुर्मध्यत्वात् तिर्यग्योनिहेतुर्मृदुत्वाद्यमलोकहेतुः । तत्र प्राणातिपातो निरयमुपनयति, तिर्यग्योनिमुपनयति, यमलोकमुपनयति । अथ चेत्पुनर्मनुष्येषु उपपद्यते, द्वौ

वही (दश अकुशल) कर्मपथ हैं। छह बातें यहाँ भी समान हैं। **'समादाय वर्तितं स्यात्'** का (तात्पर्य) इन सभी को करने में हर्ष होना तथा उसके प्रतिपक्ष के उत्पाद के लिए प्रयत्न नहीं करना है। उसके अतिरिक्त षड् पारमिता के विपक्ष[1], आठ प्रकार के मिथ्या (दृष्टि)[2] तथा नव प्रकार के अभिध्या चित्त[3] आदि बोधिसत्त्व पिटक आदि में विस्तृत रूप से कहे गए हैं। वही (हमने) यहां पर भी कहा है।

उसके फलस्वरूप आठ प्रकार के अक्षण प्राप्त होते हैं। **'येन कर्मावरणेन'** का तात्पर्य पहले एवं दूसरे दोनों से है। पूर्वोक्त (पञ्चानन्तर्य) में से जो भी हो (उसके ऊपर) भिक्षुणी दूषण करना, धर्म का अपवाद करना और उपाध्यायादि को काय एवं वाक् के द्वारा हानि पहुँचाने के कर्म करना भी साक्षात् रूप में समान हैं। तीव्र क्लेश के द्वारा मध्य नरक अर्थात् तिर्यक् योनि में पैदा होगा। मृदु (क्लेश से) प्रेत के समान प्रान्त स्थान में तथा सूक्ष्म या प्रतिरूप (क्लेश से) प्रान्त स्थान आदि में (जन्म) होगा। और भी (जिसने) "स्तूप का विनाश, विहार का

विपाकावभिनिर्वर्तयति अल्पायुष्कता च बहुग्लान्यतां च। अदत्तादानं....पेयालं.... परीत्तभोगतां च साधारणभोगतां च। काममिथ्याचारो....अनाजानेयपरिवारतां च ससपत्नदारतां च। मृषावादो...अभ्याख्यानबहुलतां च परैर्विसंवादनतां च। पैशुन्यं... .भिन्नपरिवारतां च हीनपरिवारतां च। पारुष्यं...अमनापश्रवणतां च कलहवचनतां च। संभिन्नप्रलापो....अनादेयवचनतां च अनिश्चितप्रतिभानतां च। अभिध्या....असंतुदिरतां च महेच्छतां च। व्यापादो....अहितैषितां च परोत्पीडनतां च। मिथ्यादृष्टि....... कुदृष्टिपतितश्च भवति शठश्च मायावी। एवं खलु महतोऽपरिमाणस्य दुःखस्कन्धस्य इमे दशाकुशलाः कर्मपथाः समुदागमाय संवर्तन्ते।

–दशभूमि, पृ. १६, मि.सं. १९६७।

आर्यसागरनागराजपरिपृच्छा–नाम– महायानसूत्र, देगे. १५४, सूत्र 'फ', पुद्, पृ. २०२ख।

१. आर्य गृहपति उग्रपरिपृच्छानाम महायानसूत्र बोधिसत्त्वपिटक देगे. ६२, 'ङ', पुद्, पृ. २६२क।

२. बोधिसत्त्वपिटक देगे. ५६, 'ग', पुद्, पृ. ३२क।

३. बोधिसत्त्वपिटक देगे. ५६, 'ग', पुद्, पृ. ३२क।

विनाश और चोरी-छिपे त्रिरत्न के धन का स्वयं के लिए उपयोग किया है, वह मृत्यु के बाद अवीचि नरक में पतित होगा। उससे मुक्त होने पर भी फिर निम्न प्रकार की तिर्यक् योनि का शरीर (धारण) करेगा, जैसे- कबूतर, चिड़िया (पक्षी) गौरैया, तोता, चक्रवाक, नीलपक्षी, मछली, कछुवा, वानर, मृग (आदि) का शरीर धारण करेगा। सौ जन्म लेने के बाद मनुष्य का शरीर प्राप्त होने पर भी नपुंसक, नारी, द्विलिङ्गी, अलिङ्गी तथा वेश्या" आदि के रूप में (जन्म लेगा ऐसा सूत्र में)[१] कहा है।

और भी कहा है- "इस जन्म में पूजा-वस्तुओं को चुराकर रात में भोजन करने वाले जो व्यक्ति है, वे भूखे प्यासे प्रेतों के रूप में जन्म लेंगे (और) सौ हजार वर्षों तक उन्हें खान, पान की प्राप्ति नहीं होगी। गमन करते समय पूरे शरीर में अग्नि से जलन होगी"[२]- ऐसा (सूत्र) में कहा है। और भी कहा है—"धर्मों का अपवाद करने से व्यक्ति मूक होता है[३]। धर्मश्रवण में अप्रियता से बधिर के रूप में जन्म होगा"[४]। "दुःशील करने से इन्द्रियविकलता या विकलांगता होती है"[५]। "परोक्ष में गुरु का अपवाद करने से हकलाने वाला होता है"[६]। (जो लोग) "धनुष चलाने एवं सवारी करने में आनन्द की अनुभूति करते हैं (वे

---

१. ३५४ शुभाशुभकार्यकारणभावनिर्देशसूत्र, देगे. सूत्र, 'अ', पुद्, पृ. २०४ख;
३५५ शुभाशुभकर्मविपाकनिर्देशसूत्र, देगे. सूत्र, 'अ', पुद्, पृ २१३क।

२. शुभा. कार्य. भाव. सूत्र, देगे. सूत्र 'अ', पुद्, पृ. २०५क;
शुभा.कर्म.वि. सूत्र, देगे. सूत्र 'अ', पुद्, पृ. २१३ख।

३. शुभा. कार्य. भाव. सूत्र, देगे. सूत्र 'अ', पुद्, पृ. १९९ख;
शुभा.कर्म.वि. सूत्र, देगे. सूत्र 'अ', पुद्, पृ. २१०क।

४. शुभा. कार्य. भाव. सूत्र, देगे. सूत्र 'अ', पुद्, पृ. २००ख;
शुभा.कर्म.वि. सूत्र, देगे. सूत्र 'अ', पुद्, पृ. २१०ख।

५. शुभा. कार्य. भाव. सूत्र, देगे. सूत्र 'अ', पुद्, पृ. २००ख;
शुभा.कर्म.वि. सूत्र, देगे. सूत्र 'अ', पुद्, पृ. २१०ख।

६. शुभा. कार्य. भाव. सूत्र, देगे. सूत्र 'अ', पुद्, पृ. २००ख;
शुभा.कर्म.वि सूत्र, देगे. सूत्र 'अ', पुद्, पृ. २१०ख।

अगले जन्म में) म्लेच्छ योनि में जन्म लेते हैं"[१]। "अध्यापक एवं गुरुओं का दर्शन होने पर भी अनादर के कारण हाथ और पैर से अपंग होते हैं"।[२] "गुरुओं का दर्शन होने पर बहाना करके भाग जाने से ओछी गर्दन वाला होता है"[३]– ऐसा (सूत्र) में कहा है।

मैत्रायणीपुत्र लोकप्रमुख पूर्ण का तात्पर्य शब्दार्थ पर अभिनिवेश करने वाले से है, वह अधिकतर दुर्गति में जन्म लेगा। (पूर्वोक्त) "यह सभी अधिकतर तथागत के वचन से प्राप्त अर्थ है। (क्योंकि) "बोधिचित्तोत्पाद, सत्त्वों का कल्याण, चार वस्तुओं का संग्रह इन सभी का प्रहाण तथा दान आदि पारमिताओं का प्रहाण, (बोधिसत्त्व) भूमि और मार्ग का प्रहाण तथा बोधिचर्या का प्रहाणकर विपरीतार्थ पर अभिनिवेश करता है तो इस कारण से (पूर्वोक्त) (इन) सभी दुर्गतियों में पतन होगा। (बुद्ध) वचन के अनुसार धर्म के आचरण का तात्पर्य उनके प्रतिपक्ष से है"[४]–ऐसा (सूत्र में) कहा है। और भी कहा है—"दूसरों के आवास में (निवास करने वाले) बोधिसत्त्व के प्रति ईर्ष्या एवं मात्सर्य करने से वह (व्यक्ति) दीर्घ आयु तक जीवित तो रहेगा, परन्तु उसे तीन प्रकार से महाभय (उत्पन्न) होंगे। वह (तीन प्रकार के महाभय) क्या हैं ? (१) नरक में पतन होने का भय, (२) जात्यन्ध होने का भय, (३) प्रान्त स्थान में जन्म लेने का

---

१. शुभा. कार्य. भाव. सूत्र, देगे. सूत्र 'अ', पुद्, पृ. २००ख;
शुभा.कर्म.वि. सूत्र, देगे. सूत्र 'अ', पुद्, पृ. २१०ख।
२. शुभा. कार्य भाव. सूत्र, देगे. सूत्र 'अ', पुद्, पृ. १९९ख;
शुभा.कर्म.वि. सूत्र, देगे. सूत्र 'अ', पुद्, पृ. २१०ख।
३. शुभा. कार्य. भाव. सूत्र, देगे. सूत्र 'अ', पुद्, पृ. २००ख;
शुभा.कर्म.वि सूत्र, देगे. सूत्र 'अ', पुद्, पृ. २१०ख।
४. यह सूत्र बहुत खोजने पर भी प्राप्त न हो सका।

भय (इस प्रकार) तीन हैं"[१] । "यदि भिक्षुणी दूषण किया गया है तो (वह) व्यक्ति अन्ध नरक (स्थान) में जन्म लेगा"[२] । "प्राणघात करने से असिपत्रवन में जन्म लेगा । शिकार करने से कालसूत्र नामक (नरक) में (पतन होकर) आरे के द्वारा काटा जाएगा । काममिथ्याचार करने से प्रज्वलनशील रांगे के भवन में डाला जाएगा तथा तीव्र लाल लोहे के आसन वाले नरक में सुलाया जाएगा"[३] । "मद्य पीकर नशा करने वाले को (जिसमें) गर्म लोहे का द्रव पिलाया जाता है- ऐसे नरक में जन्म होगा । संघ के फलों को चुराने वाला तप्त अयःपिण्ड खाने वाले नरक में जन्म लेगा । अन्त्र एवं माँस खाने वाले परिक्लेद (गन्दगी) से भरे हुए नरक में जन्म लेंगे । पैशून्य करके विग्रह फैलाने वाला जीव (सत्त्वों) के द्वारा लोहे के लांगल को चलाये जाने वाले नरक में जन्म लेगा । अप्रियवचन बोलने वाला जीभ काटे जाने वाले नरक में जन्म लेगा । अधिक मृषा बोलने वाला जीभ में लोहे की कील ठोंकने वाले नरक में जन्म लेगा । प्राणघात करके विपरीत देवों का पूजन करने वाला लोहे के मूसल से कूटे जाने वाले नरक (लोक) में जन्म लेगा"[४] । ऐसा (सूत्रों) में कहा है । यथा किसी (सूत्र) में कहा है-[५]

"दो पुद्गलों को छोड़कर समानपक्ष वाले एक धर्म में आधार करता है, वे दोनों महाकामरागवान् हैं"- ऐसा उक्त है ।

---

१. आर्यप्रशान्त विनिश्चय प्रातिहार्यसमाधि-नाम-महायान सूत्र, देगे. १२९, सूत्र, 'द', पुद्, पृ. १९७ख; यह शिक्षा समुच्चय में भी उद्धृत है-४ अध्याय. पृ. ५०. मि.सं. १९६० ।

२. शुभा. कार्य. भाव. सूत्र, पृ. २०२ख; सूत्र एवं यहाँ के अर्थ पर कुछ विपाक भिन्न है ।

३. शुभा. कार्य. भाव. सूत्र, पृ. २०२ख;

४. शुभा. कार्य. भाव. सूत्र, पृ. २०३क;

५. आर्यमहासमयवैपुल्यसूत्रम्, देगे. २६५ सूत्र 'ह', पृ. २७१क ।

वे भगवान् बुद्ध जो **ज्ञानभूत** है, **चक्षुर्भूत** है, **साक्षिभूत** एवं **प्रमाणभूत** है, जो (सब कुछ) जानते या देखते हैं का तात्पर्य समस्त दोष राशि की प्रतिदेशना है। "सर्वाकारज्ञता, साक्षात्कारित्व, (असंमोष) 'मुखरता' अमृषावाद, लीला एवं महाकारुणिकता, ये तथागत के छह प्रकार के गुण हैं"[१]। शेष (का अर्थ) तो स्पष्ट है।

आगे भी (ऐसे पाप कर्मों) से (बचकर) संवर करूँगा का तात्पर्य स्वीकार करना है। "(पाप) दोष लगने पर प्रतिदेशना करनी चाहिए, करुणा एवं मैत्री विद्यमान है तो पूर्व में किए गए दोषों से (करुणा एवं मैत्री) के द्वारा विशुद्ध होगा। प्रतिदेशना करने पर भी बाद में निरन्तर संवर नहीं किया गया तो प्रतिदेशना करने पर भी मल (पाप) विशुद्ध नहीं होगा"[२]। ऐसा कहा है।

(वे सभी) बुद्ध भगवान् मेरी ओर ध्यान दें। 'जो मैंने इस जन्म में या अन्य जन्मों में, या अनादि और अनन्त संसार में' का तात्पर्य कुशल मूल परिणामना करने के लिए मन को अर्पित करने से है। वह क्या है ? इस (जन्म) में कृत तथा अन्य (जन्म) में कृत (कुशल) से है। अनन्त (में अन्त) का तात्पर्य पूर्व के अन्त से है। (आर्य मञ्जुश्री) **बुद्धक्षेत्रगुणव्यूह सूत्र**[३] में कहा है :

---

१. तथागत के ये छह गुण किसी भी सूत्र में प्राप्त नहीं हो सके। ये पृथग्-पृथग् रूप में उपलब्ध होते हैं किन्तु तीसरा गुण भोटभाषा में सुस्पष्ट नहीं है, अतः मुखरता ही समीचीन प्रतीत हुआ।

२. यह श्लोक बहुत खोजने पर भी प्राप्त नहीं हो सका।

३. यावती प्रथमा कोटिः संसारस्यान्तवर्जिता ।
तावत्सत्त्वहितार्थाय चरिष्याम्यमितां चरिम् ॥
देगे ५९ कोन्छेग 'ग', पृ. २७९क; यह शिक्षा समुच्चय में भी उद्धृत है। १ अध्याय, पृ. ११ मि.सं. १९६०।

क्योंकि (संसार का कोई) पूर्वान्त नहीं होता, इसलिए संसार अन्त रहित होता है । और तब तक सत्त्वों के हित के लिए मैं अपरिमित चर्याओं का आचरण करूंगा ।

अब प्रथमतः अपरिमित जन्मों में कृत (समस्त कुशल) की परिणामना करके 'संसार में संसरण करते हुए' का तात्पर्य 'अन्य जन्मों अर्थात् देव, मनुष्य, प्रेत, तिर्यक् तथा नरकादि योनि वाले संसार में जन्म (पतन) लेते समय' से है । 'सत्त्वों को लेश मात्र दिए गये दान का तात्पर्य अन्तिमशः तिर्यग् योनि में उत्पन्न जीवों को एक कौर मात्र दिया हुआ होने से है । बहुत प्रदान करने का कहना ही क्या है । और भी, विशिष्ट स्थान में अर्पित प्रभूत प्रदान, कुशल मन से प्रदान (अर्थ) भी है । (अब) दान देने के योग्य बनने के पश्चात् शील का पालन करने की इच्छा होने पर संवर ग्रहण करें । (वह भी) अन्ततः उपवास का (संवर) ग्रहण (करना चाहिए) । (अथवा) उपासक या श्रमण या भिक्षु, जिसका (संवर) पालन कर पाए सभी (संगृहीत) हैं । विशिष्ट रूप के वश से कहें तो ब्रह्मचर्य में स्थित सभी कुशलों से है । वह भी, भगवान् बुद्ध ने कहा है— "तिर्यक् योनि में पतितों को दान किया गाया है तो सौ गुने से अधिक (पुण्य) प्राप्त होगा । एक साधारण व्यक्ति को दान दिया गया है तो हजार गुणा अधिक (पुण्य) प्राप्त होगा । शीलवान् भिक्षु को दान करने से दस हजार गुना अधिक (पुण्य) प्राप्त होगा । वही धर्मोपदेश देने वाले व्यक्ति को दान दिया गया है तो अपरिमित (पुण्य) प्राप्त होगा"[१]— ऐसा (बुद्ध वचन में) कहा गया है ।

---

१. (क) आर्यश्रद्धाबलाधानावतारमुद्रासूत्र, देगे. २०१ सूत्र 'छ', पृ. ५३ख; यह शिक्षा समुच्चय में भी उद्धृत है ४ अध्याय पृ. ५२ मि.सं. १९६० ।
(ख) आर्यप्रशान्त विनिश्चय प्रातिहार्यसमाधि नाम महायानसूत्र देगे. १२९ सूत्र 'द', पुद्, पृ. २०६ख; ।
(ग) शुभा. कार्य. भाव. सूत्र, देगे. ३५४, पृ. २०७ख;
(घ) शुभा. कर्म. वि. सूत्र, देगे. ३५५, पृ. २१५क ।

(और) भी (कहा है) "यदि तथागत, माता, पिता और रोगियों को अल्पमात्र भी अन्न दान में दिया गया है तो अपरिमित (पुण्य) फल प्राप्त होगा"[१]— ऐसा (सूत्र) में कहा गया है । **आर्य प्रशान्त विनिश्चयप्रातिहार्य समाधि**[२] नामक महायान सूत्र में कहा है- बोधिसत्त्व पिण्ड प्राप्त करके कृश, लाचार, गरीब तथा शिष्यों को बाँटकर दान करें तो उस कुशल मूल से वह (अन्य) जन्मों में चक्रसंवरराज महाऋद्धिवत् हो जाएगा— ऐसा (सूत्र) में कहा गया है । "जिसकी षड् इन्द्रियाँ पूर्ण है, उसने (पूर्व जन्मों में) शील का संरक्षण (अच्छी) तरह से किया है, उसकी वजह से ऐसा हुआ है"[३]- ऐसा सूत्र में उक्त है । **आर्य रश्मिसमन्तमुक्तनिर्देश सूत्र**[४] में कहा है कि

कदाचित् एक ही प्रभा से दस प्रकार के वर्ण प्राप्त होते हैं (उसी प्रकार) मृदु, मध्य एवं उत्तम पृथक् पृथक् दान से उत्पन्न होते हैं ।

कदाचित् एक ही सम्मिश्रण से (जैसे) बीस प्रकार के वर्ण प्राप्त होते हैं (उसी प्रकार) मृदु, मध्य एवं उत्तम भिन्न भिन्न शील के पालन से उत्पन्न होते हैं ।

"शील संवर करने वाले श्रमण तथा विशुद्ध शील का पालन करने वाले भिक्षुओं को प्रत्येक पन्द्रहवें (दिन) में पोषध करना चाहिए । (उस समय) प्रज्ञप्ति-चीवर धारण करना है ।

पात्र एवं खक्खर आदि धारण करके विशुद्ध भिक्षु को विशुद्ध पिण्ड भी ग्रहण करना चाहिए ।

---

१. (क) शुभा. कार्य. भाव. सूत्र, देगे. ३५४, सूत्र 'अ', पुद्, पृ. २०७ख;
(ख) शुभा. कर्म. वि. सूत्र, देगे. ३५५, सूत्र 'अ', पुद्, पृ. २१५ख ।
२. देगे. १२९ सूत्र, 'द', पुद्, पृ. १९६ख ।
३. (क) शुभा. कार्य. भाव. सूत्र, देगे. ३५४, सूत्र 'अ', पुद्, पृ. २००ख;
(ख) शुभा. कर्म. वि. सूत्र, देगे. ३५५, सूत्र 'अ', पुद्, पृ. २१०ख ।
४. देगे. ५५ कोन्छेग 'ख', पृ. १९७ख ।

(उससे) समस्त देव आनन्दित होकर आदर से अञ्जलि बाँधकर प्रणाम करते हैं, उसके पश्चात् हमें (अर्थात् हम देवों को) उन मनुष्यों का सेवन करना चाहिए । जिस प्रकार देवों के राजा इन्द्र का त्रायस्त्रिंश के अन्य देव सत्कार करते हैं । उसी प्रकार आदर करने की भाँति हैं ।

इस जन्म में श्रेयस् प्राप्त होगा और अन्य जन्मों में अचिन्त्य (फल प्राप्त होगा, अतः) प्रव्रजित होकर शील का संवर करें, (इससे) बुद्ध की अनुकम्पा एवं सत्कार सिद्ध हो जाते हैं"[१]- ऐसा (बुद्ध के वचन में) कहा गया है ।

इस प्रकार प्रतिमोक्ष[२] संवर में (अपने को) अच्छी तरह शिक्षित करें । बोधिचित्तोत्पाद करने का तात्पर्य विस्तृत संवर के आश्रयण की भाँति है । वह भी प्रणिधिचित्त तथा प्रस्थानचित्त के द्वारा द्विधा विभक्त किया जाता है । **गण्डव्यूहसूत्र**[३] में कहा है "कि कुलपुत्र, सत्त्वलोक में वे सत्त्व दुर्लभ हैं, जो अनुत्तर सम्यक् संबोधि के लिए प्रणिधान करते हैं । सम्यक् सम्बुद्ध (होने) का जो अनुत्तर प्रणिधिचित्त है, (वह) अत्यन्त दुर्लभ है, उससे भी अधिक दुर्लभ तो अनुत्तर सम्यक् सम्बुद्ध (होने) का प्रस्थानचित्त है"- ऐसा कहा गया है । **रत्नोल्का सूत्र**[४] में कहा है—

---

१. (क) आर्य घनजा–महामृकफुलकर्मविर्नशोध्य–भूधरकुसुमसचय–नाम–महायानसूत्र, देगे. २६४, सूत्र, 'ह', पुद्, पृ. २८७क ।
(ख) आर्य महासमय–वैपूल्यसूत्रोद्धृत–नमस्कारानाम्सगीति–गुणनि–दानानाम्–त्रिकाल–सर्वतथागत–नामसंगीति–नमस्काराणाम्–देशनानाम्–च परिवर्त्ताः स्वल्पसंशोधिश्च । देगे. २६५, सूत्र, 'ह', पुद्, पृ. २५३क ।

२. सप्तप्रतिमोक्षसंवर—भिक्षुसंवर, भिक्षुणीसंवर, श्रामणेरसंवर, श्रामणेरीसंवर, उपासकसवर, उपासिकासंवर, शिक्षमाणासंवर ।
—अभि.को. ४/१४, पृ. ६०६, बौ.भा.प्र. १९८७

३. देगे. सं. ४४ सूत्र फेलछेन 'ग' ३२३ख

४. ये सदधिष्ठित सर्वजिनेत्रिस्तेषुपपद्यति बोधयि चित्तम् ।
येषुपपद्यति बोधयि चित्तं ते अभियुक्त महर्षिगुणेषु ॥

"जिनको बोधिचित्त का उत्पाद होता है, वे जिन (तथागतो) द्वारा अधिष्ठित किए जाते हैं । जो लोग बोधि के लिए चित्तोत्पाद करते हैं, वे (लोग) श्रेष्ठ महर्षि (तथागत) के गुणों को साधित करते हैं"– ऐसा कहा है ।

आर्य त्रिस्कन्ध सूत्र[१] में भी कहा है– उस बोधिचित्त के द्वारा अव्याप्त कोई भी धर्मधातु नहीं है । बोधिचित्तोत्पाद के लिए (संचित किए गए) कोई भी कुशल मूल त्रिकाल में अव्याप्त नहीं है । और भी (कहा गया है)– जहाँ जिसने चित्तोपाद किया है, उसके उस समय उत्पन्न पुण्यसंभार अत्यन्त ज्यादा है । चक्रवर्ती (राजा), लोकपाल, इन्द्र, ब्रह्मा, श्रावक एवं प्रत्येकबुद्ध हो जाने पर (भी) उनका पुण्य संभार उतना नहीं है, जितना समस्त सत्त्वों के लिए बोधिचित्तोत्पाद का है— ऐसा कहा है । यथा (**आचार्य चन्द्रगोमी ने**) कहा भी है[२]– गुरु स्वयं संवर में स्थित है, अतः विद्वान् तथा समर्थ (गुरु) से संवर ग्रहण कर लेना चाहिए ।

यदि इस तरह का (गुरु) नहीं है तो बुद्ध रत्न से (संवर) ग्रहण कर लेना चाहिए । अब 'अनादिकाल' का तात्पर्य जिस समय आर्य लोग विद्यमान होते हैं, उस समय से है । उसके बाद श्रुत, चिन्ता एवं भावना आदि से परिपक्व होकर उससे (समस्त) सत्त्वों का परिपाक किया जाता है । "श्रावकों को कुलवानों को श्रावक बोधि में स्थापित करना चाहिए तथा प्रत्येकबुद्धों को कुलवानों को प्रत्येकबुद्ध मार्ग में स्थापित करना चाहिए । बोधिसत्त्वों को कुलवानों को अनुत्तर बोधि में स्थापित करना चाहिए"[३]— ऐसा सूत्र में कहा है । "दानादि के विपक्ष से रहित

शि.समु. पृ. ५, शो. १३, मि.सं.–१९६० ।
देगे. स. १४५, सूत्र, पुद्, ' प ', पृ. ६४ख ।

१. देगे. सं. २८४ सूत्र 'य', पृ. ६९ क ।
२. आचार्य चंद्रगोमी द्वारा कृत बोधिसत्त्वसंवरविंशिका, देगे. ४०८१, सेमच़म 'ही', पृ. १६६ख ।
३. यह सूत्र प्राप्त नहीं हो सका ।

(विच्युत) होने से, निर्विकल्पज्ञान तथा समस्त इच्छाओं की परिपूर्ति से और समस्त सत्त्वों के परिपाक से तीन प्रकार की बोधि सिद्ध होगी"[१]– ऐसा कहा है ।

उसके बाद अन्ततः निर्विकल्पज्ञान का विषय, जो परमार्थ (सत्य) बोधिचित्त है, उसका तात्पर्य अनुत्तर कुशल मूल से है ।

यथा **रश्मिसमन्तमुक्तनिर्देश सूत्र**[२] में कहा है– जो (लोगों में) इस सूत्र के प्रति अत्यन्त श्रद्धा हैं, उन्हें अक्षयस्वभाव अभिज्ञान होगा । उसके द्वारा साक्षात् समाधि सिद्ध हो जाने पर अनुत्तर परिज्ञान होने में कोई कठिनाई नहीं होगी– ऐसा कहा गया है । और भी कहा है[३]– "भिक्षु हो या अन्य, किसी के द्वारा अनुत्तर ज्ञान की गवेषणा करने के लिए अत्यन्त श्रद्धालु मन से इस सूत्र में यथायोग्य वीर्य (सोत्साह प्रयत्न) करना चाहिए" ।

"जो (व्यक्ति) अनुत्तर ज्ञान को खोजता है, उसे संसार से कोई भय नहीं है । वह समस्त पापों का प्रहाण करके उत्तम कल्याण को प्राप्त होगा"[४] । 'जो मेरे द्वारा किया गया है, उन सब' का तात्पर्य कथित एवं अकथित से है । यह भी क्या है ? दश पारमिता[५], चार स्मृत्युपस्थान[६], चार सम्यक्प्रहाण[७],

---

१. यह उद्धरण प्राप्त नहीं हो सका ।
२. देगे सं. ५५ कोनछेग, 'ख', पुद्, पृ. २०५ ख ।
३. देगे सं. ५५ कोनछेग, 'ख', पुद्, पृ. २०७ क ।
४. देगे सं. ५५ कोनछेग, 'ख', पुद्, पृ. २०८ क ।
५. (१) दानपारमिता, (२) शीलपारमिता, (३) क्षान्तिपारमिता, (४) वीर्यपारमिता, (५) ध्यानपारमिता, (६) प्रज्ञापारमिता, (७) उपायपारमिता, (८) प्रणिधिपारमिता, (९) बलपारमिता एवं (१०) ज्ञानपारमिता । यह दश हैं । धर्मसंग्रह, पृ. ९ ।
६. (१) कायस्मृत्युपस्थान, (२) वेदनास्मृत्युपस्थान, (३) चित्तस्मृत्युपस्थान, (४) धर्मस्मृत्युपस्थान यह चार हैं । धर्मसंग्रह, पृ. २४ ।
७. (१) उत्पन्नाना कुशलमूलानां संरक्षणम्, (२) अनुत्पन्नानां समुत्पादः, (३) उत्पन्नानामकुशलानां धर्माणां प्रहाणम्, (४) अनुत्पन्नानां पुनरनुत्पाद । यह चार हैं । धर्मसंग्रह, पृ. २४ ।

चार ऋद्धिपाद[१], पाँच इन्द्रियाँ[२], पाँच बल[३], सप्त बोध्यङ्ग[४], आर्याष्टाङ्गिकमार्ग[५], चार आर्य सत्य[६], चार अप्रामाण्य[७] (ब्रह्मविहार), चार संग्रहवस्तु[८], ध्यान[९] एवं विमोक्षादि[१०] सभी ग्रहण करने योग्य हैं ।

'एकध्यं, पिण्डयित्वा, तुलयित्वा' का तात्पर्य इसी जन्म के लिए परिणामना न करने से **'एकध्यं'** कहा गया है, लोक सम्पत्ति के लिए परिणामना न करने से **'पिण्डयित्वा'** कहा गया है, श्रावक तथा प्रत्येकबुद्ध के लिए परिणामना न करने से तुलयित्वा' (कहा गया) है । अन्यथा लौकिक हीनयान तथा अपने (स्वयं के) लिए आदि का तात्पर्य 'क्रमशः' से है ।

---

१. (१) छन्दसमाधिप्रहाणासंस्कारसमन्वागतऋद्धिपाद, (२) चित्तऋद्धिपाद, (३) वीर्य-ऋद्धिपाद (४) मीमांसासमाधिप्रहाणाय संस्कारसमन्वागतऋद्धिपाद । यह चार हैं । धर्मसंग्रह, पृ. २५, ति.सं. १९८८ ।

२. (१) श्रद्धा, (२) समाधि, (३) वीर्य, (४) स्मृति, (५) प्रज्ञा । यह पाँच इन्द्रियाँ हैं । धर्मसंग्रह, पृ. २५, ति.सं. १९८८ ।

३. (१) श्रद्धाबल, (२) वीर्यबल, (३) स्मृतिबल, (४) समाधिबल, (५) प्रज्ञाबल । यह पाँच हैं । धर्मसंग्रह, पृ. २६, तिं. सं. १९८८ ।

४. (१) स्मृतिसंबोध्यङ्ग, (२) धर्मविचयसबोध्यङ्ग, (३) वीर्यसंबोध्यङ्ग, (४) प्रीतिसंबोध्यङ्ग, (५) प्रस्रब्धिसंबोध्यङ्ग, (६) समाधिसंबोध्यङ्ग, (७) उपेक्षासंबोध्यङ्ग । यह सात हैं । धर्मसंग्रह, पृ. २६, ति. सं. १९८८ ।

५. (१) सम्यग्दृष्टि, (२) सम्यक्संकल्प, (३) सम्यगवाक् , (४) सम्यक्कर्मान्त, (५) सम्यगाजीव, (६) सम्यग्व्यायाम, (७) सम्यक्स्मृति (८) सम्यक्समाधि । यह आठ हैं । धर्मसंग्र, पृ. २७, ति. सं. १९८८ ।

६. (१) दुःख सत्य, (२) समुदयेसत्य, (३) निरोधसत्य, (४) मार्गसत्य ।

७. (१) मैत्री, (२) करुणा, (३) मुदिता, (४) उपेक्षा । इनको चार ब्रह्मविहार से भी प्रसिद्ध हैं । पृ. १०

८. (१) दान, (२) प्रियवचन, (३) अर्थचर्या, (४) समानार्थता । पृ. १०

९. प्रथम ध्यान, द्वितीय ध्यान, तृतीय ध्यान एवं चतुर्थी ध्यान ।

१०. (१) रूपी रूपाणि पश्यति शून्य, (२) अध्यात्मारूपसंज्ञी बहिर्धारूपाणि पश्चति शून्यं, (३) आकाशानन्त्यायतनं पश्यति शून्यं, (४) विज्ञानानन्त्यायतनं पश्यति शून्यं, (५) आकिंचन्यायतनं पश्यति शून्यं, (६) नैवसंज्ञानासंज्ञायतनं पश्यति शून्यं, (७) विघ्नापहशुभं पश्यति शून्यं, (८) संज्ञावेदयितनिरोधं पश्यति शून्यं । यह आठ हैं । धर्मसंग्रह, पृ. ३१, ति. सं. १९८८ ।

आर्यत्रिस्कन्धसूत्र[१] में कहा है- "मेरे (द्वारा) आदि से अन्त तक (संचित) किए गए कुशलमूल की सर्वज्ञता के लिए जो परिणामना की गई है, मेरे द्वारा (संचित) किए गए संस्कृत वस्तुओं की अभिसिद्धि के लिए जो कुशल मूल की परिणामना है; मेरे द्वारा (संचित) किए गए जो कुशल मूल है (वे) श्रावक एवं प्रत्येकबुद्धों की अभिसिद्धि के लिए कुशलमूल हैं । मेरे द्वारा अर्जित कुशलमूल से निष्पादित सार्वकालिक संचित तथागत ज्ञान से जो ज्ञात हैं, उन सभी को (मैं) पिण्डीकृत, तुलित एवं अभिसंक्षिप्त करता हूँ" । और भी (कहा है)- "इन सभी को पिण्डीकृत करके अनुत्तर 'सम्यग्सम्बोधि में परिणामना करता हूँ"[२]- ऐसा कहा है । अनुत्तरायां, सम्यक्संबोधौ उत्तरोत्तरया उत्तमोत्तमया परिणामयामि का तात्पर्य परिशुद्ध परिणामना है । गुरु के समान अन्य कोई उत्तम नहीं है, (क्योंकि) (समस्त) गन्तव्य निष्ठागत होने से वह उत्तर से रहित ही है, (वह) अन्य सभी गुरुओं का गुरु तथा उत्तर है । वही का तात्पर्य परिनिष्ठा से है । परिनिर्वाण का तात्पर्य उत्तर से है (वह) आर्य श्रावक तथा प्रत्येकबुद्ध है । इन सभी के उत्तर महायान के बोधि (सत्त्व) है । बोधिसत्त्वों के उत्तर का (तात्पर्य) समस्त सत्त्वों का हित करने से है । उसका उत्तर भगवान् बुद्ध है, सर्व सम्यग् गुण सम्पन्न धर्मकाय का तात्पर्य बोधि से है । (वह) चिन्तन, वचनादि से रहित होने के कारण समस्त प्रपञ्चों से उपशान्त एवं स्वप्रत्यात्माधिगम-ज्ञानसद्गोचर होता है ।

आर्यरश्मिसमन्तमुक्तनिर्देशसूत्र[३] में कहा है- "अरूप में गमन तथा आगमन नहीं है । दिशा तथा विदिशा भी नहीं है ।

---

१. देगे. २८४ सूत्र 'य', पुद्, पृ. ६९ख ।
२. देगे २८४ सूत्र 'य', पुद्, पृ. ६९ख ।
३. देगे. ५५ कोनछेग 'ख', पुद्, पृ. २४४ख ।

वह अनिमित्त, अवाच्य, समस्त प्रपञ्चों से अतीत है। बोधिसत्त्वों के द्वारा साध्य निष्पन्न होने पर (निश्चित ही) अत्यन्त शान्त (सर्वज्ञपद) प्राप्त होगा" ।

तथा और भी (इस सूत्र में कहा) है–

"कुशल की प्रेरणा से (समस्त) क्लेशों का दमन कर उपशम में स्थित होगा (और) विशिष्ट गुणों की (भी) प्राप्ति होगी" ।

गुण तथा प्रज्ञा अत्यन्त विशाल सागर की भाँति हैं, क्षान्ति आदि का आपादन होगा, चित्त अत्यन्त सुखी होकर अचल हो जाएगा । (ऐसी) बोधिसत्त्वों के द्वारा सदा भावना की जाती है । विद्वानों के द्वारा अत्यन्त प्रशंसित होगा"[१]— ऐसा कहा है ।

जिस तरह अतीत के भगवान् बुद्धों ने परिणामना की है, अनागत के भगवान् बुद्ध जैसे परिणामना करेंगे तथा इस समय के (दशों दिशाओं) में विद्यमान भगवान् बुद्ध परिणामना कर रहे हैं, उसी प्रकार मैं भी परिणामना करता हूँ ।

मैं सभी पापों की प्रतिदेशना करता हूँ । तथा सभी पुण्यों का अनुमोदन करता हूँ । सभी बुद्धों से अध्येषणा करता हूँ कि मुझे अनुत्तर ज्ञान प्राप्त हो ।

नरोत्तम (भगवान्) बुद्ध जो अतीत में हो चुके हैं, अनागत में आने वाले हैं, और जो सम्प्रति विराजमान हैं, जो अनन्त प्रशस्य गुणों के सागर के समान हैं, मैं अंजलिबद्ध होकर उन सभी की शरण में जाता हूँ ।

---

१. देगे. ५५ सूत्र कोनचेग 'ख', पृ. २४४ख ।

इत्यादि का अर्थ सरल होने के कारण मैंने (यहाँ) (व्याख्या) नहीं की है ।

आचार्य जितारि विरचित बोध्यापत्तिदेशनावृत्ति बोधिसत्त्वशिक्षाक्रम नामक समाप्त ।

नेपाली पण्डित (रविरक्षित)[१] एवं भोट देश के लोचावा (अनुवादक)
छक् (छोस् जे पेल) द्वारा अनूदित ।

●

१. भोटदेशीय महाविद्वान् कोङ्कटुलयोनतेन ग्याछो कृत शैजा कुनख्यबज़ोद् में अनुवादक छक् छोस जे पेल का गुरु नेपाली पण्डित रविरक्षित है ऐसा उल्लेख मिलता है । भाग १, पृ० ५५०, तिब्बत की मिरिग प्रकाशन से प्रकाशित, १९८२

भारतीय (संस्कृत) भाषा में–कर्मावरणविशोधनविधिभाष्य

सभी बुद्धों और बोधिसत्त्वों को (मेरा) नमस्कार

मलों से निर्लिप्त, सुविशद ज्ञानमण्डलवाले, वाणी की प्रभाग्नि से समस्त सत्त्वों के आवरण को जलाने वाले सूर्य मुनि की जय हो ।

जो वीर विशाल दुःख समुद्रों में निमग्न जगत् से मन खींचकर इसके उद्धार करने का इच्छुक होकर बोधि में परायण है (उसे) उसकी प्राप्ति के सन्मार्ग में विचलित न होते हुए उस कार्य के संवर्धन के उपायों में उद्यम करना चाहिए । यदि किसी कारण से हानि हो भी जाए तो तदनन्तर पुनः प्राप्ति के उपायों के लिए यत्न करना चाहिए । "पाराजिका वस्तु का आचरण हो जाए तो पुनः संवर ग्रहण करना चाहिए । मध्य आस्रव भूत की तीन बार (बोधिसत्त्वों के समक्ष) प्रतिदेशना करें । लघु भूत (पापों) की एक बार देशना करें, इनसे अवशिष्ट तो अपने चित्त द्वारा संवरणीय हैं, आचरण के अनुरूप धर्म के अनुसार उज्जीवित करना चाहिए"[१] । इनसे अवशिष्ट (जो) कर्मावरण और अन्य अनादिकाल से परिसंचित सघन आवरण हैं, इनके द्वारा महाबोधि में बाधा न होने देने के लिए मुनि द्वारा प्रदत्त इस **"बोधिचित्तापत्तिदेशनाविधि"** द्वारा अहोरात्र के छह प्रहरों में प्रतिदेशना करने का प्रयत्न करना चाहिए । यहाँ भी जिनके प्रति अपने आवरणों की देशना की जाती है, उन सबको शरण के रूप में मानकर सादर नमस्कार करके अध्येषणा करनी चाहिए ।

---

१. (क) आचार्य शान्तरक्षित कृत "संवर विंशिका वृत्ति" देगे. ४०८२, शास्त्र, सेमच़म "ही" पुट्‌ पृ. १७२क; (ख) आचार्य बोधिभद्र कृत "बोधिसत्त्व संवर विंशिका पञ्जीका" देगे. ४०८३, शास्त्र, सेमच़म पुट्‌ "ही" पृ. २०२ख ।

अतः प्रथम शरण गमन (इस प्रकार है)— "मैं अमुक नाम वाला बुद्ध की शरण में जाता हूँ" इत्यादि । सम्यक् संबुद्ध, धर्म और उसका अनुष्ठान करने वाला संघ— ये क्रमशः संसार को पार करने का मार्ग दिखाने वाले, मार्ग और उसकी साधना में सहायक होते हैं । न कि इतर बलशाली हरि, हर, हिरण्यगर्भ आदि तथा कपिल कणाद आदि । क्योंकि (वे सब) स्वयं भव कारागार में तीव्र क्लेश एवं कर्म की जंजीरों से आबद्ध हैं और मृत्यु आदि भयानक राक्षसों के द्वारा सर्वदा विनष्ट होते रहते हैं । अतः इन सबकी भव कारागार से मुक्ति भी मात्र बुद्ध पर ही निर्भर करती है । बुद्ध आदि (त्रिशरण) को त्यागकर कौन बुद्धिमान् इतर लोगों की शरण में जाएगा ?

नमस्कार करना तो **तथागत अर्हत् सम्यक् संबुद्ध शाक्यमुनि** को (मेरा) नमस्कार— इत्यादि है । इन पैंतीस तथागतों ने बोधि- सत्त्वचर्या के आचरण के काल में "अनुत्तर सम्यक् संबोधि में मेरे अभिसम्बुद्ध हो जाने पर जो हमारा नाम लेकर नमस्कार करेंगे, उनके कर्मावरण क्षीण हो जाएं"–ऐसा प्रणिधान किया है । अतः प्रणिधान बल से युक्त होने के कारण ये ही वन्दनायोग्य हैं, दूसरे वन्दनीय नहीं हैं- ऐसा नहीं कहा जा सकता । यहाँ सभी धर्मों की तथता की अधिगति अथवा उस (तथता) का अध्यवसाय **"तथागत"** है ।

'अर' का तात्पर्य अरि (शत्रु) या अर (पहिये के नीचे का भाग=अरा) है, उनको जो मारता या दबाता है, वह **'हत्'** है । वासनासहित क्लेशों का पुनः उत्पाद न होने देने के लिए प्रहाण करनेवाला होने से अथवा प्रतीत्यसमुत्पाद (के ज्ञान) के द्वारा (क्लेशरूपी) शत्रुओं का नाशकारी होने से **'अर्हत्'** कहलाता

है। अथवा तीनों धातुओं में पूजा के योग्य होने के कारण 'अर्ह' का अर्थ 'योग्य' है। सभी धर्मों को सर्वथा सम्यक् रूप से और समरूप से जानने वाला होने से **'सम्यक् संबुद्ध'** कहा जाता है। इसके द्वारा प्रहाण और गुण (अधिगम) ये दो महत्त्व कहे गये हैं, (इसी तरह) अन्य गुणों को जानना चाहिए। शाक्यकुल में उत्पन्न होने के कारण (वे) **'शाक्यमुनि'** इस प्रकार कहे गये हैं। अभेद्य होने के कारण सम्यक् सम्बुद्ध का ज्ञान ही 'वज्र' है। इस (वज्र) के गर्भ में रहने के कारण सत्यकायदृष्टि आदि समस्त विपक्षभूत धर्मों का प्रमर्दन करने से **'वज्रगर्भप्रमर्दिन्'** कहा जाता है। इसी प्रकार अन्य नामों के गुणों का अनुसरण करके यथायोग्य नाम के अर्थों का निर्वचन करना चाहिए। गुणों के अनन्त होने से प्रत्येक (बुद्ध) में सभी (३५ बुद्धों के) नामों (गुणों) का आख्यान हो जाने पर भी उन उन हेतुओं के विद्यमान होने से स्वातन्त्र्य दोष की आशंका नहीं करनी चाहिए। 'एवं प्रमुखाः' इत्यादि के द्वारा 'अध्येषणा' कही गई है। सभी दोषों को भग्न करने के कारण अथवा 'श्री' आदि गुणों से युक्त होने के कारण **'भगवान्'** (शब्द प्रयुक्त) है। **'यावन्तः'** का अर्थ निरवशेष है। **'तिष्ठन्ति', 'ध्रियन्ते'** और **'यापयन्ति'** के द्वारा क्रमशः धर्मकाय आदि तीनों काय कहे गये हैं। **'मां समन्वाहरन्तु'** इसके द्वारा अपने चित्त का आवर्जन करने के लिए **'अध्येषणा'** है। मेरी यह अध्येषणा (भी) प्रतिरूपिका (कृत्रिम) है, क्योंकि असम्प्रमोष धर्मता से युक्त होने के कारण कोई भी एक ऐसा सत्त्व (प्राणी) नहीं है, जो बुद्धों के द्वारा कभी भी विस्मृत हो, इस (विस्मृत होने) की कुछ भी सम्भावना ही नहीं है।

यदि ऐसा है तो (वे) सभी प्राणियों को व्यापक संसार-दुःख से क्यों मुक्त नहीं कर देते ?

सत्त्वों के अपने-अपने दोषों की वज़ह से (ऐसा होता है) । जैसे सूर्यमण्डल की तीक्ष्ण प्रभा के सभी दिग्-दिगन्त में सम्मुख विद्यमान होने पर भी जात्यन्ध (जन्म से अन्धे) लोगों को दिखाई नहीं देता, उसी तरह जानना चाहिए । इसीलिए **रत्नोल्का धारणी**[1] में भी कहा गया है : "सूर्य जैसे जात्यन्ध के द्वारा दिखाई नहीं देता, वह 'नहीं है'-ऐसा नहीं है, अपितु वह लोक में उदित होता है । चक्षुष्मान् लोग (उसे) देख कर अपने अपने कार्यों में प्रवृत्त हो जाते हैं" ।

इत्यादि के द्वारा यही अर्थ विस्तारपूर्वक दिखलाया गया है । जिनके समक्ष देशनीय आवरण (पाप)-वस्तु जो (इस प्रकार) है, वे **'मया कृतानि'** (मेरे द्वारा की गई है) इत्यादि (द्वारा कही गई है) । 'मया' (मेरे द्वारा) इसके द्वारा कर्ता का निर्देश किया गया है । **अस्यां जातौ अन्यासु वा जातिषु** (इस जन्म में अथवा अन्य जन्मों में) इसके द्वारा 'कृत्यकाल' दिखलाया गया है । **अनवराग्रे जातिसंसारे** (अनादि अनन्त जन्मप्रवाह में) इसके द्वारा 'कृत्यस्थान' कहा गया है । सामान्य रूप से किए हुए पापों का स्वभाव कहने के लिए **पापकं कर्म** (पाप कर्म) इत्यादि कहा गया है । जो कुछ भी दुःखमूलक कर्म स्वयं (मैंने) किया है, अन्यों से करवाया है, ऐसा (किया अथवा करवाया गया) न होने पर भी दूसरे के द्वारा किए गए का

---

१. सूर्य यथा जात्यन्ध न पश्यी नो च स नास्ति उदेति स लोके ।
चक्षुसमेत उदागमु ज्ञात्वा सर्व प्रयुज्य स्वकस्वक धर्मे ॥
-शि.समु. १८ अध्या., पृ0 १८२, मि.सं. १९६0
देगे १४५ सूत्र पुट् "प" पृ. ७४ख; यह उद्धरण शि.समु. में उद्धृत है—

प्रीतिपूर्वक अनुमोदन किया गया है, विशेषरूप से भारी विपाक देने वाले **स्तौपिकं** वा (स्तूप सम्बन्धी अथवा) इत्यादि के द्वारा (निर्देश किया गया है), वह भी **अदत्तादानं** (चोरी) में गुरुतर (है, क्योंकि) श्रद्धालु दायकों के द्वारा आठ महातीर्थों में अर्पित सामग्री–समूह है । (वह) चारों दिशाओं के संघों द्वारा अधिकृत, पृथग्जनों के द्वारा परिगृहीत नहीं है, उसका **अपहृतं** (अपहरण करना) इत्यादि है । इनके द्वारा तीव्र दुःख वाले तीन प्रकार के अपाय दुर्गतिपर्यन्त भोगे जाते हैं । इनका प्रतीकार कठिन होने से इनका विपाक गुरुतर होता है । अत्यन्त दुःखों को देने वाले दोषों के कारण **'आनन्तर्य कर्म'** इत्यादि कहे गये हैं, जिनके द्वारा पितृघात आदि पाप किये गये हैं, इत्यादि तो तीव्र दुःखों का अनुभव कराने वाले अवीचि नामक नरक में अन्य नारकीय दुःखों से विशिष्ट दुःखों का कारण होने से और मध्यवर्ती जन्म के लाभ का कारण न होने से **'आनन्तर्य'** कहे गये हैं । इसलिए ये आत्यान्तिक दुःख और दोष के कारण हैं– इस प्रकार कहे जाते हैं । सभी वस्तुओं में संगृहीत अकुशल तो दस अकुशल हैं– इत्यादि । तीन दुर्गतियों में भोगायतन आदि यथायोग्य सभी वस्तुओं का विपाक देने वाले कर्म होते हैं । जैसे प्राणातिपात आदि तीन कायाश्रित, मृषावाद आदि चार वागाश्रित तथा व्यापाद आदि (तीन) चित्ताश्रित (कर्म) आदि हैं । इन तीनों के द्वारा सभी वस्तुओं का संग्रह **'अकुशल कर्मपथसंग्रह'** कहलाता है । इससे भिन्न इसके समान आवरण **'कर्मावरण'** है । वे भी किये जाने पर स्व एवं पर का हित सम्पादन करने में असामर्थ्य पैदा करने वाले होते हैं तथा (मार्ग में) बाधाकारक जन्मों को पैदा करने वाले होते हैं । कहा भी गया है :

नरक, प्रेत, तिर्यक्, म्लेच्छ, असंज्ञिदेव, मिथ्यादृष्टि, बुद्ध के प्रति अश्रद्धा और मूकता— ये आठ अक्षण (मार्ग के लिए अनवसर) हैं[१] ।

---

१. द्रष्टव्य—नरकप्रेततिर्यञ्चो म्लेच्छा दीर्घायुषोऽमराः ।
मिथ्यादृग्बुद्धकान्तारौ मूकताष्टाविहाक्षणाः ॥
–बो.च.पं., पृ. ५, मि.सं. १९६०

आठ अक्षणों की परिगणना में अनेक भिन्नताए हैं । जिज्ञासु पाठकों को निम्न लिखित स्रोतों का अवलोकन करना चाहिए ।

१. आर्य विनयविनिश्चय–उपालिपरिपृच्छा नाम–महायानसूत्र, देगे. ६८. कोनचेग 'च' पुट्, पृ. १२०ख;
२. समन्तभद्र साधनावृत्ति, देगे. १८६७, तन्त्र, 'दी' पुट् पृ. १४१ख;
३. श्रीसमन्तभद्र साधनावृत्ति, देगे. १८६८, तन्त्र, 'दी' पुट् पृ. १८९ख;
४. चतुरंग साधनाटीका–सारमञ्जरीनाम, देगे. १८६९, तन्त्र, 'नी' पुट् पृ. ३क;
५. आर्य नामसंगीतिटीका–नाम–मन्त्रार्थावलोकिनीनाम,देगे. २५३३, तन्त्र, 'खु' पुट् पृ. १०९क;
६. आर्य मञ्जीश्री नामसंगीतिटीका, देगे. २५३४, तन्त्र, 'खु' पुट् पृ. २९३ख, २९८ख;
७. बोधि पद्धति नाम, देगे. ३७६६, तन्त्र, 'छु' पुट् पृ. ११९ख;
८. आर्य–पञ्चविंशति–साहस्रिका–प्रज्ञापारमितोपदेशशास्त्र–अभिसमयालंकार–वृत्ति, देगे. ३७८७ शेरछिन, 'क' पुट् पृ. १४७ख;
९. आर्य अष्टसाहस्रिका–प्रज्ञापारमिता–व्याख्या–अभिसमयालंकारालोक–नाम, देगे. ३७९१, शेरछिन, 'छ' पुट् पृ. २४८क;
१०. अभिसमयालंकार–वृत्ति–कीर्तिकला–नाम, देगे. ३७९९, शेरछिन, 'ञ' पुट् पृ. २३४क;
११. आर्य–अष्टसाहस्रिका–प्रज्ञापारमिता वृत्ति–मर्मकौमुदी–नाम, देगे. ३८०५, शेरछिन, 'द' पुट् पृ. १५३ख;
१२. शतसाहस्रिका–प्रज्ञापारमिता वृत्ति वृहद्टीका, देगे. ३८०७, शेरछिन, 'न' पुट् पृ. १९ख;
१३. शतसाहस्रिका–पचविंशतिसाहस्रिका–अष्टसाहस्रिका–प्रज्ञापारमिता बृहद्टीका, देगे. ३८०८, शेरछिन, 'फ' पुट् पृ. २९क;
१४. मध्यमकहृदयवृत्ति–तर्कज्वाला, देगे. ३८५६, उमा, 'ज़' पुट् पृ. ४९क;
१५. बोधिचर्यावतारपञ्जिका, देगे. ३८७२, उगा, 'ल' पुट् पृ. ४५क;
१६. बोधिसत्त्वचर्यावतारपञ्जिका, देगे. ३८७५क, उमा, 'श' पुट् पृ. ९७क;
१७. बोधिचर्यावतार–तात्पर्य–पञ्जिका–विशेषद्योतनी–नाम, देगे. ३८८०, उमा, 'श' पुट् पृ. १९७ख;
१८. मुनिमतालंकार, देगे. ३९०३, उमा, 'अ' पुट् पृ. २३०ख;

इनके उत्पादक कारण तो–गम्भीर धर्मों (शून्यता आदि) का परित्याग, सूक्ष्म आपत्तियों से भयभीत न होना, (नाना प्रकार की) सम्पत्तियों के प्रति आसक्ति, मात्सर्य आदि के प्रति झुकाव होने से अल्पमात्र सम्पत्ति का भी दान न करके उसका संचय करना, बुद्ध आदि के प्रति अनादरभाव, उपायकौशल्य का अभाव होने से असंज्ञिसमापत्ति के प्रति मनसिकार (मानसिक लगाव), दूसरों को चक्षु आदि इन्द्रियों से विकल (रहित) करना, मिथ्यादृष्टि की ओर अभिमुख होना, प्रणिधान का (सम्यग्) अभ्यास न करना इत्यादि अन्य भी यथायोग्य असंख्येय अतिसूक्ष्म सब (कर्मावरण) होते हैं। उन वस्तुओं की देशना किस प्रकार की गई है (इसे दिखाने के लिए) **बुद्धानां भगवतां** (बुद्ध भगवान् का) इत्यादि कहा गया है। बुद्ध भगवान् साक्षात् करके देशना करते हैं, उसके बाद 'संवर' होता है। 'यहाँ **ज्ञानभूत**' का तात्पर्य यथावत् आकार परमार्थ तथा यावत् स्वभाव सांवृतिक, सभी सर्वज्ञतास्वरूप हैं। **चक्षुर्भूत** का तात्पर्य पाँच चक्षुओं की विशुद्धि द्वारा 'जानना'

---

१९. सूत्रसमुच्चय, देगे. ३९३४, उमा, 'की' पुद् पृ. १४९ख;
२०. सूत्रसमुच्चय–भाष्य–रत्नालोकालंकार–नाम, देगे. ३९३५, उमा, 'की' पुद् पृ. २२२ख, २२४ख;
२१. शिक्षाकुसुम–मञ्जरी–नाम, देगे. ३९४३, उमा, 'खी' पुद् पृ. २१६क;
२२. आर्य–अक्षयमतिनिर्देशटीका, देगे. ३९९४, दो–डेल 'ची' पुद् पृ. २७ख;
२३. बोध्यापत्तिदेशनावृत्ति, देगे. ४००५, दो–डेल 'जी' पुद् पृ. १८५ख;
२४. बोध्यपत्तिदेशनावृत्ति–बोधिसत्त्वशिक्षाक्रम, देगे. ४००६, दो–डेल 'जी' पुद् पृ. १९०क;
२५. कर्मावरण–विशोधन–विधि–भाष्य–नाम, देगे. ४००७, दो–डेल 'जी' पुद् पृ. १९५ख;
२६. आर्य सर्वास्तिवादी–मूलभिक्षुणी–प्रतिमोक्षसूत्र–वृत्ति, देगे. ४११२, विनय 'चु' पुद् पृ. १२क;
२७. अष्टाक्षण कथा, देगे. ४१६७, टिङ्यग, 'गे' पुद् पृ. १७५क;
२८. सुभाषित रत्नकरण्डक कथा, देगे. ४१६८, टिङ्यिग, 'गे' पुद् पृ. १७९क;
२९. सुहृल्लेख रत्नकरण्डककथा, देगे. ४१८२, टिङ्यिग, 'ङे' पुद् पृ. ४३ख;
३०. व्यक्तपादसुहृल्लेख टीका, देगे. ४१९०, टिङ्यिग, 'ङे' पुद् पृ. ९६ख;
३१. महाव्युत्पत्ति, देगे. ४३४६, न–छोग, 'चो' पुद् पृ. ४५क।
३२. धर्मसग्रहः पृ० ८१, ति० सं०, सारनाथ, १९८८

है । **साक्षिभूत** का तात्पर्य समस्त विषयों का अविपरीत ज्ञान है । **प्रमाणभूत** का तात्पर्य समस्त विषयों का अविपरीत ज्ञान है । प्रमाणभूत का तात्पर्य साक्षिभूत से है । अवबोध करने के कारण 'ज्ञान' कहा जाता है । आँख के सामने होना तो 'दर्शन' है । अथवा दर्शन छह अभिज्ञाओं से योग है– ऐसा कुछ लोग मानते हैं । स्वयं मैंने ऐसा किया है– ऐसा वाणी के द्वारा कथन 'प्रतिदेशना' है । अनेक प्रकार के उन दोषों को देखकर उन्हें चित्त के प्रतिकूल ग्रहण करके अपने दोषों को प्रकाशित करना **'प्रतिदेशना'** है । अपने द्वारा किए पापों को दूसरे न जान पाएं– ऐसा सोचकर उसके उपाय का चिन्तन **'अप्रतिच्छादन'** है । **'आयति** (भविष्य) में संवर' संवर का तात्पर्य है– प्रतिपक्ष (मार्ग) का उपादान (ग्रहण) करके पहले (गृहीत) का अनुसरण न करके (उसकी) सन्तति का विच्छेद करना ।

इन सबके द्वारा अपने द्वारा कृत एवं संचित पाप कर्मों को क्षीण करने वाले चार बल भी प्रदर्शित किये गये हैं, यथा– (१) आश्रयबल, (३) विदूषणाबल, (३) प्रतिपक्षसमुदाचारबल एवं (४) प्रत्यापत्तिबल ।

इनमें से दोषों (आवरणों) की प्रतिदेशना (आविष्करण) के आश्रय तीन रत्नों और तथागतों की शरण में गमन किया जाता है, उनको प्रणाम करना 'आश्रय बल' है । (अपने द्वारा) कृत कर्मों की विधियों का विमर्श करते हुए उन्हें अनेक दोषों के जनक के रूप में मन में रखकर 'मैं स्वयं दोषी हूँ' इस प्रकार कहना 'विदूषणाबल' है । उन (आवरणों) के प्रतिपक्षों को मन में रख कर उन (दोषों) का पुनः अप्रत्यागमन 'प्रतिपक्षसमुदाचारबल' और 'प्रत्यापत्तिबल' हैं ।

इन चार बलों को मन में रखते हुए हृदय के भीतर पाठ करने से (ये) कर्मावरण सभी प्रकार से दुर्बल होते हैं । जैसे

कहा गया है[१] : मैत्रेय, इन चार धर्मों के द्वारा किया हुआ और संचित पाप अभिभूत हो जाता है । कौन चार के द्वारा : यथा आश्रयबल, विदूषणाबल, प्रतिपक्षसमुदाचारबल एवं प्रत्यापत्तिबल । इसलिए जो बोधिसत्त्व पापों का अभिभव करने की इच्छा करता है, उसे इस सूत्र का अनेक बार पाठ करना चाहिए और मन में धारण करना चाहिए– ऐसा कहा गया है ।

इस प्रकार कर्मावरणों की प्रतिदेशना करके अब अपने द्वारा कृत कुशल मूल सम्यक् परिणामना द्वारा गृहीत न होने पर निष्फल या हीनफल हो जाते हैं– ऐसा सोचकर भवसागर से (पार) उतरने के लिए कुशल की परिणामना करें । जैसे खान से निकाला गया स्वर्णपिण्ड कुशल कारीगर द्वारा अलङ्कार (आभूषण) के रूप में परिणामित होने पर अपने और दूसरों के लिए हितकारी होता है, उसी प्रकार (परिणामित कुशल भी) यथेष्ट फल प्रदान करने वाले होते हैं । यहाँ जिनके समक्ष परिणामना करना चाहिए, वहाँ **'बुद्ध'** इत्यादि (द्वारा) प्रार्थना (कही गई है) । परिणामना कर्म में कुशल कौन है ? **'मया'** (मेरे द्वारा) इत्यादि (द्वारा कथित है) । **'माम्'** (मुझको) इसका (अर्थ) पूर्व की भाँति है ।

कुशल का स्वभाव तीन प्रकार का होता है– दानमय, शीलमय और भावनामय । [२]दानमय तो **दानं**...... **अन्तशः** (दान से लेकर अन्तशः पर्यन्त) इत्यादि । योग्य पात्र के लिए धर्मदान करना प्रणीत (उत्तम) दान, भयभीतों को अभयदान, मैत्री–दान,

---

१. "चतुर्भिर्मैत्रेय, धर्मैः कृतोपचितं पापमभिभवति । कतमैश्चतुर्भिः ? यदुत आश्रयबलं विदूषणाबलं प्रतिपक्षबलं प्रतिपक्षसमुदाचारबलं प्रत्यापत्तिबलं च"
चतुर्धर्मनिर्देशसूत्र, देगे. २४९, सूत्र, 'श' पुद् पृ. ५९ख;
शिक्षासमुच्चय में भी उद्धृत है; पृ. ८९, मि0 सं0, १९६१
२. बोधिसत्त्वपिटक, देगे. ५६, कोनचे़ग, 'ग' पुद् पृ. १७३क;

चक्षु आदि वस्तुओं से लेकर समस्त का त्याग करना आमिषदान[१], विशिष्ट लोगों के लिए बाह्य सत्त्वों में परिगणित पुत्र आदि का त्याग करना, इसके अलावा चारों द्वीप का त्याग करना, सम्पूर्ण राज्य, या उसका आधा, राष्ट्र, जनपद, नगर आदि एवं खाद्य-पेय आदि का त्याग करना[२], अन्ततः तिर्यग् योनि में जन्में सत्त्वों के लिए एक कवल ग्रास मात्र खाद्यदान से लेकर और वस्तु (पर्यन्त त्याग) अत्यन्त हीन हैं ।

शीलमय कुशल सभी यानों में प्रातिमोक्ष संवर में संगृहीत है । उपसम्पदा से लेकर उपासक (संवर) पर्यन्त साधारण शील का संरक्षण है । प्रव्रज्या में आपन्न (शील) ब्रह्मचर्य में ही स्थित है । बोधिसत्त्वों में ही सत्त्वपरिपाक अधिकृत है । बोधिचित्त ही कुशल मूल है (क्योंकि) प्रयोग के द्वारा बोधिचित्त का परित्याग न करना ही बोधिसत्त्वों का विशुद्ध शील है । अन्यथा (नहीं तो) दश कुशल कर्मपथों को, कोटि कल्प पर्यन्त अकुशलों के लिए अवसर न देने पर भी (उन्हें) विशुद्ध शील कहना युक्त नहीं है । इस प्रकार आशय एवं प्रयोग द्वारा उद्यम करने पर पाँच कामगुणों के साथ आचरण भी विशुद्ध शील कहा जाता है । जैसे भगवती (प्रज्ञापारमिता) में कहा गया है[३] :

---

१. सामान्यतया सर्वत्र तीन दानों की चर्चा परिलक्षित होती है परन्तु यहां चार प्रकार के दान कहा गया है । ऐसा सूत्र में भी प्राप्त होता है । द्रष्टव्य-आर्य ताराकुरुकुल्लाकल्प देगे. ४३७, तन्त्र 'च' पुद्, पृ. ९७ख

२. समाधिराजसूत्र, देगे. १२७, सूत्र, 'द' पुद्, ३६ अध्या., पृ. १३४ख ।
द्रष्टव्यम्—
राज्यं त्यजिष्ये तथपि च राजधानीं
हिरण्य सुवर्ण तथ मणिमुक्त रत्नान् ।
घातेयमात्मा स्वय शस्त्र गृह्य
निहीनकर्मास्मिह बालबुद्धिः ॥
—समाधिराजसूत्र ३५/३४, पृ. २४० मि.सं. १९६१ ।

३. यदि पञ्च कामगुण भुञ्जति बधिसत्त्वो
बुद्धं च धर्म शरणागतु आर्यसङ्घम् ।

पाँच कामगुणों का भोग करता हुआ भी बोधिसत्त्व बुद्ध, धर्म और आर्य संघ की शरण जाता है, (मैं) बुद्ध होऊँगा (ऐसा) सर्वज्ञत्व का मनस्कार करता है तो विद्वानों को यह जानना चाहिए कि (वह व्यक्ति) शील पारमिता में स्थित है ।

यदि कोई कोटि कल्प पर्यन्त दश कुशल कर्मपथों का आचरण करता हुआ भी यदि (अपने में) प्रत्येकबुद्धत्व या अर्हत्व प्राप्त करने की इच्छा उत्पन्न करता है तो अखण्ड शीलवान् होने पर भी वह छिद्रयुक्त शीलवान् है । इस प्रकार का चित्तोत्पाद पाराजिकों में गुरुतर (सबसे भारी) है ।

यह भी परार्थ की प्रधानता के कारण प्रमुख रूप से निर्धारित किया गया है, फिर भी स्वार्थ का (सर्वथा) निषेध नहीं है ।

भावनामय कुशलमूल तो अनुत्तरज्ञान है । सर्वाकारज्ञता ही अनुत्तरज्ञान है । यह वह ज्ञान है, जो संवृति में संगृहीत यावत् (समस्त विषय) तथा परमार्थ में संगृहीत यथावत् विषयों की सर्वाकारज्ञता है, जो श्रावक आदि सभी (ज्ञानों) से विशिष्ट है । इसके सर्वधर्म स्वभावशून्यता और मायोपमधर्मता के भावनामय स्वरूप होने से उनकी भावना का प्रकर्ष (अतिशय) होने पर सभी प्रपञ्चों का उच्छेद हो जाता है । (तब) निःस्वभावता का स्पष्ट रूप से प्रस्फुटन होने के कारण कुछ भी उपलब्ध न होने वाले नय के द्वारा सर्वधर्म स्वभावशून्यता को यथावत् (अपना) विषय बनाता है । मायासदृश अर्थ, आकाश के समान विषय,

---

सर्वज्ञता च मनसी भविष्यामि बुद्धो
स्थितु शीलपारमित वेदयितव्य विज्ञो ॥
यदि कल्पकोटि दशभी कुशलैः पथेभिश्चरमाणु प्रत्ययरहत्त्वस्पृहां जनेति ।
तद् खण्डशीलु भवते अपि छिद्रशीलो पाराजिको गुरुतरो अयु चित्तुपादो ॥
प्रज्ञापारमितासंचयगाथा, देगे. १३ शेरछिन, 'क' पुद्, पृ. १८ख;
रत्नगुणसंचयगाथा, २८२–२८३ का0, म0सू.सं., भाग–१, पृ.३९३, मि.सं. १९६०

कार्य-कारण में संगृहीत समस्त धर्म का करतल में स्थित आंवले की भाँति आवरण मल का प्रहाण कर देने से साक्षात्कार करता है । इसीलिये आचार्य शान्तिदेव ने भी कहा है[१] :

शून्यता (समस्त) क्लेशावरण और ज्ञेयावरण रूपी अन्धकार को नष्ट करने वाला प्रतिपक्ष है । शीघ्र सर्वज्ञता प्राप्त करने का अभिलाषी उसकी भावना क्यों नहीं करता ।

इस प्रकार शून्यता की भावना सर्वज्ञज्ञान का हेतु कही गई है । इस तरह दानमय, शीलमय और भावनामय सभी की परिणामना करना चाहिए ।

कैसे परिणामना करना चाहिए ? परिणामना का प्रकार तो **'एकध्यं**............... **अभिसंक्षिप्य** (एकत्र से लेकर.......... संगृहीत करके) इत्यादि (द्वारा बतलाया गया है) । उन सभी को बुद्धि के द्वारा पिण्डीकृत करने से अन्यों से (इसका) वैशिष्ट्य है । **'ऐकध्यं संक्षिप्य'** इससे अपने स्वरूप के द्वारा । **'तुलयित्वा'** (तौल कर) इससे क्रिया के द्वारा । **'अभिसंक्षिप्य'** (एकत्र करके) इससे सामर्थ्य के द्वारा । अनुत्तर आदि तीन का तात्पर्य श्रावक, प्रत्येकबुद्ध और बोधिसत्त्व से विशिष्ट होना है । इस प्रकार परिणामना करना चाहिए । किस प्रकार की परिणामना में ? **'अनुत्तरायाम्'** अनुत्तर इत्यादि अवस्था में । किस प्रकार से अर्थात् उपाय से परिणामना करना चाहिए । **'यथा'** इत्यादि (द्वारा कहा गया है) । जैसे अतीत आदि की परिणामना के समान । वह भी बुद्ध भगवान् ने कुशलमूलों को तत्त्वतः असत्य जानते हुए भी उन्हें सम्मुख करके उन कुशलमूलों की परिणामना करने वाले जिन चित्तों के द्वारा, जिसमें परिणामना की जाती है, उस

---

१. क्लेशज्ञेयावृतितमः प्रतिपक्षो हि शून्यता ।
शीघ्रं सर्वज्ञताकामो न भावयति तां कथम् ॥
बो०च०, देगे. ३८७१, शास्त्र, उमा, 'ल' पुट् ९/५५, पृ. ३३क;
द्रष्टव्य-बो.च. ९/५५ पृ. २११, मि.सं. १९६० ।

अनुत्तर बोधि में भी परमार्थतः निमित्तोद्ग्रहण का लेशमात्र भी न करके सत्त्वों के (हित के) लिए अनुत्तर बोधि में जैसे परिणामना की है, उसी प्रकार मैं भी परिणामना करता हूँ । अथवा उस प्रकार से अर्थात् उपाय से साक्षात्कार करने में स्वयं असमर्थ होने पर भी जैसे भगवान् बुद्ध ने कुशल मूलों की परिणामना की, उसी प्रकार मैं भी उन कुशलमूलों की परिणामना करता हूँ— इस प्रकार की परिणामना बुद्धों द्वारा प्रदत्त उपायों से युक्त परिणामना है ।

इस प्रकार पापदेशना और कुशल परिणामना का कथन करने के अनन्तर महाबोधि को प्राप्त कराने वाले उपायों का संक्षेप से कथन करने के लिए **'सर्वं पापं प्रतिदेशयामि'** (सभी पापों की प्रतिदेशना करता हूँ) इत्यादि (कहा है) ।

संसाररूपी कारागार में भटक रहे (प्राणियों) को महाबोधि प्राप्त न हो सकने के हेतु :

(१) अपने द्वारा किये हुए पाप कर्मों का संचय,

(२) दूसरों के द्वारा किये हुए कुशल कर्मों के प्रति द्वेष होना,

(३) बुद्धशासन का अभाव,

(४) उन बुद्ध का लोक में अविद्यमान रहना,

(५) विपरीत प्रणिधान करना,

(६) बुद्ध का आदर न करना,

(७) उन (बुद्धों) की शरण से रहितता–इत्यादि तो दोष हैं ।

क्रमशः पापदेशना आदि करने से (दोषों के समाप्त हो जाने के कारण) महाबोधि प्राप्त होती है । अतः आचार्य वसुबन्धु

ने भी कहा है[1] : 'महाबोधि की प्राप्ति के लिए सभी पापों की प्रतिदेशना करता हूँ, सभी पुण्यों का अनुमोदन करता हूँ, सभी बुद्धों की अध्येषणा करता हूँ, मुझे अनुत्तर ज्ञान की प्राप्ति हो– इत्यादि । पूर्वोक्त चार बलों के द्वारा अपने द्वारा कृत एवं संचित पापों की देशना से सास्रव और अनास्रव कुशलों को करने की इच्छा से अतिशय मुदिता की प्राप्ति होती है । जो भगवान् बुद्ध धर्मचक्रप्रवर्तन के अभिलाषी नहीं थे या अल्प उत्सुक थे और जो महापरिनिर्वाण प्राप्त करना चाहते थे, उनसे जगत् के कल्याण के लिए धर्मचक्रप्रवर्तन करने की प्रार्थना, परिनिर्वाण को प्राप्त न करके असंख्य कल्पों तक (लोक में) स्थित रहने के लिए अध्येषणा तथा जो जो मैंने कुशल कर्मों का आचरण किया है, उनकी मैं उत्तम सर्वाकारज्ञता ज्ञान की प्राप्ति के लिए परिणामना करता हूँ । बुद्धों के प्रति अञ्जलि बाँधना 'वन्दना' है । सभी भयों से रक्षा करने वाले का ग्रहण तो शरण–गमन है, इसलिए यह बुद्धों के प्रति आदरभाव के साथ शरण–ग्रहण ही है । इन (सब) के द्वारा दूसरों सूत्रों में **'त्रिस्कन्ध'** नाम से निर्दिष्ट का भी संग्रह होता है । पापदेशना तो **'देशना स्कन्ध'** है । कुशलमूलों की परिणामना **'परिणामना–स्कन्ध'** है । पापदेशना महाबोधि की प्राप्ति की उपायभूत है, अनुमोदना तो परिणामना की अङ्गभूत है, क्योंकि अनुमोदना के द्वारा परिणामना निष्पन्न होती है । याचना ही **'याचना–स्कन्ध'** है । प्रणिधान भी परिणामना रूप ही है । वन्दना और शरण–ग्रहण 'आश्रयबल' होते हैं । यह (सब) पापदेशना–स्कन्ध के अन्तर्गत हैं । इनका निरन्तर दिन और रात

---

१. मैंने आचार्य वसुबन्धु कृत त्रिस्कन्धसूत्र की टीका का अन्वेषण किया, किन्तु सभी स्रोतों का अध्ययन करने के पश्चात् भी मुझे ऐसी कोई टीका प्राप्त नहीं हो सकी । यहां जो उद्धरण दिया गया है उसमें "महाबोधि की प्राप्ति के लिए" इन शब्दों को छोड़कर बाकी उसी रूप में सूत्र में प्राप्त होता है । इसलिए इस उद्धरण का यहां कोई विशेष महत्त्व नहीं दिखाई पड़ता है ।

में तीन बार मनसिकार करने से बोधिसत्त्व सभी कर्मपथ–आवरणों का प्रहाण करके इष्ट फल का साक्षात्कार करता है । अतः इसके लिए प्रयत्न करना चाहिए । **आचार्य शान्तिदेव** ने भी कहा है[१] :

दिन और रात में तीनो समय तीन बार त्रिस्कन्ध में प्रवृत्त होना (पाठ करना) चाहिए । जिन (बुद्ध) और बोधिसत्त्वों का आश्रय करके अवशिष्ट आपत्तियों का शमन करें ।

जैसे बोधिसत्त्वों के कर्मावरण इससे परिशोधित किये जाते हैं, उसी प्रकार अन्य आपत्तियों की भी धर्म के अनुसार प्रत्यापत्ति (परिशुद्धि) करें । शेष कर्मावरण भी इसी के द्वारा परिशुद्ध किये जाते हैं । अन्य भी जो कोई इस कर्मावरण का क्षय चाहता हो, उसे इसी में प्रयत्न करना चाहिए । इस प्रकार कर्मावरण क्षीण होते हैं । भगवान् बुद्ध निश्चय ही सभी दोषों का क्षय करके (धर्मों की यथार्थ स्थिति को) अभ्रान्त रूप से जानकर (अनुत्तर) ज्ञानवान्, महाकारुणिक, दूसरों के (समस्त) दुःखों को दूर करने के अभिलाषी महात्मा हैं– इसमें अल्पमात्र भी सन्देह नहीं करना चाहिए, क्योंकि (उनके द्वारा) झूठ बोलना (सर्वथा) असम्भव है ।

बड़े महत्त्वाकांक्षी लोगों के भी अगोचर इस विषय में मैंने अपने और दूसरों के हित की बुद्धि से ही प्रयत्न किया है । सज्जन लोग मुझे क्षमा करें ।[२]

---

१. रात्रिन्दिव च त्रिस्कन्धं त्रिष्कालं च प्रवर्तयेत् ।
शेषापत्तिशमस्तेन बोधिचित्तजिनाश्रयात् ॥
बो.च., देगे. ३८७१, शास्त्र, उमा 'ल' पुद्, ५/९८, पृ. १४क । बो.च. ५/९८, पृ ७५, मि.सं. १९६० ।

२. तुलनीयम्—
तथाप्यगोचरीभूते यत्नमास्थितवानहम् ।
परात्महितबुद्धयैव क्षम्पतामेष साधुभिः ॥
–स्फुटार्था, अभिसमयालंकारवृत्ति, ति.सं. संस्करण, पृ. ९४, १९७७ ।

इस ग्रन्थ को रचने से समयवज्र (की कृपा) से जो पुण्य उपलब्ध हुआ है, उससे सम्पूर्ण संसार घोर अविद्या से रहित हो जाए ।

आचार्य दीपङ्करश्रीज्ञान द्वारा विरचित कर्मावरणविशोधनविधि–भाष्य समाप्त ॥

उन्हीं भारतीय पण्डित तथा लोचावा (लोकचक्षु) भिक्षु छुलठिम् ज्ञल्–व (शील विजय) के द्वारा अनूदित ।

•

ཁ་སྐོང་ལྷན་ཐབས་ཀྱི་སྡེ་ཚན་བཅུ།

परिशिष्ट-१० भाग

ཁ་སྐོང་ལྷན་ཐབས་དང་པོ།

སློབ་དཔོན་དཔའ་བོས་མཛད་པའི་སྤྱི་བཤགས་བཞུགས་སོ།།

༄༅། །ཨུ་ཏུ་ལགས། བླ་མ་རྡོ་རྗེ་འཛིན་པ་ཆེན་པོ་ལ་སོགས་པ་ཕྱོགས་བཅུ་ན་བཞུགས་པའི་སངས་རྒྱས་དང་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་ཐམས་ཅད་དང་། དགེ་འདུན་བཙུན་པ་རྣམས་བདག་ལ་དགོངས་སུ་གསོལ། །བདག་མིང་འདི་ཞེས་བགྱི་བས་ཚེ་རབས་འཁོར་བ་ཐོག་མ་མ་མཆིས་པ་ནས་ད་ལྟ་ལ་ཐུག་གི་བར་དུ། ཉོན་མོངས་པ་འདོད་ཆགས་དང་ཞེ་སྡང་དང་གཏི་མུག་གི་དབང་གིས་ལུས་ངག་ཡིད་གསུམ་གྱི་སྒོ་ནས་སྡིག་པ་མི་དགེ་བ་བཅུ་བགྱིས་པ་དང་། མཚམས་མ་མཆིས་པ་ལྔ་བགྱིས་པ་དང་། དེ་དང་ཉེ་བ་ལྔ་བགྱིས་པ་དང་། སོ་སོར་ཐར་པའི་སྡོམ་པ་དང་འགལ་བ་དང་། བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་བསླབ་པ་དང་འགལ་བ་དང་། །གསང་སྔགས་ཀྱི་དམ་ཚིག་དང་འགལ་བ་དང་། ཕ་དང་མ་ལ་མ་གུས་པ་དང་། མཁན་པོ་དང་སློབ་དཔོན་ལ་མ་གུས་པ་དང་། གྲོགས་ཚངས་པར་མཚུངས་པར་སྤྱོད་པ་རྣམས་ལ་མ་གུས་པ་དང་། དཀོན་མཆོག་གསུམ་ལ་གནོད་པའི་ལས་བགྱིས་པ་དང་། དམ་པའི་ཆོས་སྤངས་པ་དང་། འཕགས་པའི་དགེ་འདུན་ལ་སྐུར་བ་བཏབ་པ་དང་། སེམས་ཅན་ལ་གནོད་པའི་ལས་བགྱིས་པ་ལ་སོགས་པ། སྡིག་པ་མི་དགེ་བའི་ཚོགས་བདག་གིས་བགྱིས་པ་དང་། བགྱིད་དུ་སྩལ་བ་དང་། གཞན་གྱིས་བགྱིས་པ་ལ་རྗེས་སུ་ཡི་རང་བ་ལ་སོགས་པ། མདོར་ན་མཐོ་རིས་དང་ཐར་པའི་གེགས་སུ་གྱུར་ཅིང་འཁོར་བ་དང་ངན་སོང་གི་རྒྱུར་གྱུར་པའི་ཉེས་ལྟུང་གི་ཚོགས་ཅི་མཆིས་པ་ཐམས་ཅད་བླ་མ་རྡོ་རྗེ་འཛིན་པ་ཆེན་པོ་ལ་སོགས་པ་ཕྱོགས་བཅུ་ན་བཞུགས་པའི་སངས་རྒྱས་དང་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་ཐམས་ཅད་དང་། དགེ་འདུན་བཙུན་པ་རྣམས་ཀྱི་སྤྱན་སྔར་མཐོལ་ལོ། །མི་འཆབ་བོ། །འཆགས་སོ། །ཕྱིན་ཆད་ཀྱང་སྡོམ་པར་བགྱིད་ལགས་སོ། །མཐོལ་ཞིང་བཤགས་ན་བདག་བདེ་བ་ལ་རེག་པར་གནས་པར་འགྱུར་གྱི། མ་མཐོལ་མ་བཤགས་ན་ནི་མི་འགྱུར་རོ།། **སློབ་དཔོན་དཔའ་བོས་མཛད་པའི་སྤྱི་བཤགས་རྫོགས་སོ།།**

प्रथम परिशिष्ट

आचार्य-अश्वघोषविरचिता

सामान्यप्रतिदेशना

(पुनरुद्धृत संस्कृत पाठ)

अहो महागुरवो वज्रधरादयः, दशदिगवस्थिता बुद्धा बोधिसत्त्वाः संघाश्चभदन्तः, मां समन्वाहरन्तु। अहमेवंनामा अनादिसंसारात् प्रभृति प्रत्युत्पन्नपर्यन्तं राग-द्वेष-मोहवशात् कायवाङ्मनोभिः दशाकुशलानि कृतवान्, पञ्चानन्तर्याणि, पञ्च तत्सभागानि, प्रतिमोक्षसंवरविरोधः, बोधिसत्त्वशिक्षाविरोधः, गुह्यमन्त्रसमयादिविरोधः, मातापित्रोरनादरः, आचार्योपाध्यायानादरः, सब्रह्मविहारिणां मित्राणामनादरः, त्रिरत्नप्रतिघातकं कर्म, सद्धर्मपरित्यागः, आर्यभिक्षुसंघनिन्दनम्, सत्त्वाहितकरं कर्म-एवमादीनि कर्माणि कृतवान्, यान्यकुशलान्यहं कृतवान्, यानि चान्यैः करितवान्, यान्यन्यकृतान्युनुमोदितवान्।

संक्षेपेण ये च स्वर्गापर्गविघ्नभूतानां संसारदुर्गतिपतनहेतुभूतानां केऽपि आपत्तिदोषराशयः (सन्ति) तान् सर्वान् गुरुवज्रधरादीनां दशदिगवस्थितानां बुद्ध-बोधिसत्त्वानां संघस्य भदन्तस्य जाग्रतः प्रतिदेशयामि, आविष्करोमि, न प्रतिच्छादयामि, अनन्तरं संवरमापत्स्ये। प्रतिदेशनायां कृतायां कृते च प्रायश्चित्ते स्पर्शविहारो मे भविष्यति, अन्यथा प्रतिदेशनायाम् अविहितायाम् अकृते चाविष्करणे तथा (स्पर्शविहारः) न भविष्यति।

(अश्वघोषविरचिता सामान्यप्रतिदेशना समाप्ता)

प्रथम परिशिष्ट

आचार्यअश्वघोषविरचित

(हिन्दी अनुवाद)

सामान्यप्रतिदेशना

अहो महागुरु वज्रधर आदि, दशो दिशाओं में स्थित बुद्ध, बोधिसत्त्व एवं संघ सभी मेरी ओर ध्यान दें। मैं अमुक नाम के व्यक्ति ने अनादि जन्मों से लेकर अब तक राग, द्वेष तथा मोह रूपी क्लेशों के वशीभूत होकर काय, वाक् एवं चित्त के द्वारा जो दश अकुशल पाप किए हैं, पाँच आनन्तर्य कर्म किए हैं, पाँच आनन्तर्यसभाग कर्म किये हैं, प्रतिमोक्ष संवर का उल्लंघन, बोधिसत्त्वों की शिक्षा का उल्लंघन, गुह्य मन्त्र के समय का उल्लंघन, माता-पिता का अनादर, आचार्य तथा उपाध्याय का अनादर, सब्रह्मविहारी मित्रों का अनादर, त्रिरत्न को बाधा देनेवाले कर्म किये हैं, सद्धर्म का परित्याग, आर्यभिक्षुसंघ की निन्दा और सत्त्वों को हानि पहुँचाने वाले कर्म आदि किये हैं। जो अकुशल पाप कर्म मेरे द्वारा किये गये हैं, दूसरों के द्वारा कराये गये हैं, दूसरों के द्वारा किए गए (अकुशल कर्मों)का अनुमोदन आदि किये गये हैं।

संक्षेप में स्वर्ग तथा मोक्ष प्राप्ति के बाधक, संसार एवं दुर्गति में पतन के हेतुभूत आपत्ति-दोषों की जो भी राशि है, उन सभी की मैं महागुरु वज्रधर आदि, सभी दशो—दिशाओं में स्थित बुद्ध, बोधिसत्त्वों और संघ तथा भदन्त के समक्ष प्रतिदेशना करता हूँ, प्रायश्चित्त करता हूँ, नहीं छिपाता हूँ और बाद में भी उनका संवर करूँगा। प्रतिदेशना एवं प्रायश्चित्त किया जाने पर मैं सुख स्पर्श की स्थिति में रहूँगा। अन्यथा अर्थात् प्रतिदेशना एवं आविष्करण न किया जाने पर वैसा नहीं हो सकेगा।

(आचार्य अश्वघोष के द्वारा विरचित सामान्यप्रतिदेशना समाप्त)

ཁ་སྐོང་ལྷན་ཐབས་གཉིས་པ།

द्वितीय परिशिष्ट

འཕགས་པ་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་དང་རྒྱ་འགྲེལ་གསུམ་དང་སྤྱི་བཤགས་ནང་གསལ་བའི་བོད་དང་ལེགས་སྦྱར་གྱི་བརྡ་སྐད་ཤན་སྦྱར།

འཕགས་པ་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོའི་བོད་དང་ལེགས་སྦྱར་གྱི་བརྡ་སྐད་ཤན་སྦྱར།

आर्यत्रिस्कन्धसूत्र शब्द-सूची

ཚིག	ཤོག་གྲངས།	शब्द	पृष्ठ
ཀུན་ནས་སྣང་བ་བཀོད་པའི་དཔལ།	2	समन्तावभास व्यूहश्री	116
ཀླ་ཀློ།	3	म्लेच्छ	116
ཀླུ་དབང་གི་རྒྱལ་པོ།	1	नागेश्वरराज	115
སྐྱེ་བ་ཐོག་མ་དང་ཐ་མ་མ་མཆིས་པ།	4	अनवराग्र जाति	116
སྐྱབས་སུ་མཆིས་པ།	1	शरण (गमन)	115-117
འཁོར་བ།	3	संसार	116
འཁོར་བའི་སྐྱེ་བ།	3	जाति संसार	116
མཁྱེན་པ་གཟིགས་པ།	4	जानतां पश्यताम्	117
གོང་ན་མ་མཆིས་པ།	5	अनुत्तरायां	117
གོང་མའི་ཡང་གོང་མ།	5	उत्तरोत्तरया	117
དགེ་འདུན།	1	संघ	115
དགེ་འདུན་གྱི་དཀོར་ཕྲོགས་པ།	3	सांघिकं द्रव्यमपहृतं	116
དགེ་བའི་རྩ་བ།	4	कुशलमूल	117
བགྱིད་དུ་སྩལ་བ།	3	कृतं स्यात्	116
བགྱིད་པ་ལ་རྗེས་སུ་ཡི་རང་བ།	3	क्रियमाण वा अनुमोदित	116
དགྲ་བཅོམ་པ།	1	अर्हत्	115-116

ཙནྡན་དཔལ།	2	चन्दनश्री	116
གཅིག་ཏུ་བསྡུས་པ།	4	ऐकध्यं पिण्डयित्वा	117
ཆུ་ལྷ།	2	वरुणदेव	116
ཆོས།	1	धर्म	115
འཆགས་པ།	4	प्रतिदेशना	117
འཆགས་སོ།།	5	प्रतिदेशना	117
མཆོད་རྟེན་གྱི་དཀོར།	3	स्तौपिक द्रव्यमपहृतं	116
ཇི་སྙེད་ཅིག	2	यावन्तः	116
རྗེས་སུ་ཡི་རང་བ།	5	अनुमोदना	116
འཇིག་རྟེན་གྱི་ཁམས།	2	लोकधातु	116
ལྟ་བ་ལོག་པ་འཛིན་པ།	3	मिथ्यादृष्टि	116
ལྟུང་བ་བཤགས་པ།	1	आपत्तिदेशना	115
ཐལ་མོ་སྦྱར་བ།	6	कृताञ्जलि	117
མཐོང་བ་དོན་ཡོད།	1	अमोघदर्शिन्	116
མཐའ་ཡས་རྒྱ་མཚོ།	6	अनन्तसागर	117
ད་ལྟར་བྱུང་བའི་སངས་རྒྱས།	5	प्रत्युत्पन्ना बुद्धाः	117
དུད་འགྲོའི་སྐྱེ་གནས།	3	तिर्यग्योनि	116
དེ་བཞིན་གཤེགས་པ།	1	तथागत	116-117
དྲན་པའི་དཔལ།	2	स्मृतिश्री	116
དྲི་མ་མེད་པ།	1	निर्मल	116
རྡོ་རྗེ་སྙིང་པོས་རབ་ཏུ་འཇོམས་པ།	1	वज्रगर्भप्रमर्दिन्	115
སྡིག་པ་ཐམས་ཅད།	5	सर्वपाप	117
སྡིག་པའི་ལས།	3	पापकर्म	116
བདག་གིས་སྐྱེ་བ་འདི།	3	यन्मया अस्यां जातौ	116
བདག་ལ་དགོངས་སུ་གསོལ།	4	मां समन्वाहरन्तु	116
འདས་པའི་སངས་རྒྱས།	5	अतीतबुद्ध	117
ནོར་དཔལ།	2	धनश्री	116
རྣམ་པར་གནོན་པས་གཤེགས་པའི་དཔལ།	2	विक्रान्तगामिन्	116

ཚངས་པར་སྤྱོད་པ་ལ་གནས་པའི་ དགེ་བའི་རྩ་བ།	4	ब्रह्मचर्यवासकुशलमूल	117
ཚངས་པའི་འོད་ཟེར་རྣམ་པར་རོལ་པའི་ མངོན་པར་མཁྱེན་པ།	2	ब्रह्मज्योतिर्विक्रीडिताभिज्ञ	116
ཚངས་པས་བྱིན།	1	ब्रह्मदत्त	116
ཚད་མར་གྱུར་པ།	4	प्रमाणभूत	117
ཚུལ་ཁྲིམས་བསྲུངས་བ།	4	शीलं वा रक्षितं	117
མཚན་དཔལ་ཤིན་ཏུ་ཡོངས་བསྒྲགས།	2	सुपरिकीर्तितनामधेयश्री	116
མཚམས་མ་མཆིས་པ་ལྔ།	3	पञ्च आनन्तर्याणि	116
འཚོ་ཞིང་གཞེས་པ།	3	ध्रियन्ते यापयन्ति	116
ཟས་ཁམ་གཅིག་ཙམ་སྩལ་བ།	4	आलोपो दत्तः	117
གཟི་བརྗིད་མཐའ་ཡས།	2	अनन्तौजस्	116
བཀྲུམས་ཏེ་བཟློམས་ནས།	5	पिण्डयित्वा	117
འོད་དཔལ།	2	प्रभासश्री	116
ཡང་དག་པ་རྫོགས་པའི་སངས་རྒྱས།	2	सम्यक्संबुद्ध	115
ཡང་དག་པར་བླངས་བ་ལ་ཞུགས་པ།	3	समादाय वर्तितं स्यात्	116
ཡི་དྭགས་ཀྱི་ཡུལ་དུ་མཆི་བ།	3	यमविषयं वा गच्छेयं	116
ཡུལ་མཐའ་འཁོབ་ཏུ་སྐྱེ་བ།	3	प्रत्यन्तजनपद	116
ཡེ་ཤེས་ཀྱི་མཆོག	5	अनुत्तरज्ञान	117
ཡེ་ཤེས་སུ་གྱུར་པ།	4	ज्ञानभूत	117
ཡོན་ཏན་བསྔགས་པ།	6	प्रशस्त गुण	117
ཡོངས་སུ་བསྔོ་བ།	5	परिणामनया	117
གཡུལ་ལས་ཤིན་ཏུ་རྣམ་པར་རྒྱལ།	2	सुविजितसंग्राम	116
རི་དབང་གི་རྒྱལ་པོ།	2	शैलेन्द्रराज	116
རིན་ཆེན་པདྨས་རྣམ་པར་གནོན་པ།	2	रत्नपद्मविक्रामिन्	116
རིན་ཆེན་མེ།	1	रत्नाग्नि	116
རིན་ཆེན་ཟླ་བ།	1	रत्नचन्द्र	116
རིན་ཆེན་ཟླ་འོད།	1	रत्नचन्द्रप्रभ	116

སློབ་དཔོན་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱིས་མཛད་པའི་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོའི་འགྲེལ་པའི་བོད་དང་ལེགས་སྦྱར་གྱི་ཐ་སྙད་ཤན་སྦྱར།

आचार्य नागार्जुन कृत त्रिस्कन्धसूत्र-टीका की शब्दानुक्रमणी

ཀུན་རྫོབ་ཀྱི་བཤགས་པ།	संवृति प्रतिदेशना
ཀུན་རྫོབ་ལ་འགལ་བ།	संवृति विरोध
ཀུན་རྫོབ་དང་དོན་དམ།	संवृति परमार्थ
ཀླུ་ཡི་རྒྱལ་པོ།	नागराज
ཀླུ་ཤིང་།	नागलता
དཀར་པོ་ལ་སོགས་པ།	श्वेतवर्णादीन्
སྐལ་བ་དང་ལྡན་པ།	सौभाग्यशाली
སྐྱབས་ཀྱི་མཐར་ཐུག་པ།	शरणगमननिष्ठा
སྐྱབས་སུ་འགྲོ་བའི་ངོ་བོ།	शरणगमनस्वरूप
སྐྱབས་སུ་འགྲོ་བ་མཆོག	शरणगमनं श्रेयः
སྐུ་མདོག	कायवर्ण
སྐུ་གསུམ།།	त्रैकायिक
སྐུ་གསུམ་གྱི་བདག་ཉིད།	त्रिकायात्मक
སྐུར་བ་འདེབས་པ།	अपवाद
སྐྱེ་བ་བཟང་པོ་བླངས་པ།	भद्रं जन्म
བཀའ་མ་ཡིན་པ།	न (बुद्ध)वचन
བཀའ་ལས་འདའ་བ།	वचनविरोध
དཀོན་མཆོག་བརྩེགས་པ།	रत्नकूट
བསྐལ་པ་དཔག་ཏུ་མེད་པ།	अपरिमितकल्प
བསྐལ་པ་མང་པོར་བཞུགས་པ།	अनेककल्पपर्यन्त विराजमान
ཁམས་གསུམ་གྱི་སྐྱེ་གནས།	त्रैधातुकयोनिषु
ཁམས་གསུམ་གྱི་སེམས་ཅན་ཐམས་ཅད།	त्रैधातुक सर्वसत्त्व
ཁྱད་པར་ལྔ།	पञ्च विशेषण

ཁྱད་པར་དུ་བསྟོད་པ།	विशेषस्तव
ཁྱད་པར་དུ་འཕགས་པ།	विशिष्ट
ཁྲབ་དང་རལ་གྲི	कवच खड्ग
མཁན་པོ་ཤཱནྟརཀྵིཏ།	महापण्डितशान्तरक्षित
འཁོར་བ་ཇི་སྲིད་ཀྱི་བར།	यावत्संसार अवस्थान
འཁོར་བ་ལ་ཆགས་པ་དང་བྲལ་བ།	संसारासक्ति
འཁོར་བ་ལས་རྒྱལ་བའི་ནུས་པ་མངའ་བ།	संसारविजयक्षमता
འཁོར་བའི་གཡུལ་འཇོམས།	सांसारिकरणानां विनाशः
འཁོར་མང་པོ་དང་བཅས་པ།	विविध पर्षद्
འཁོར་གསུམ་ཡོངས་སུ་དག་པ།	त्रिमण्डलविशुद्धि
འཁྲུལ་པ་མེད་པ།	भ्रान्तेरभावः
གང་ལྷར་མོས་པ།	यथारुचि
གཽཏམ།	गौतम
གྲོལ་བ།	मुक्त
གླིང་གཞི།	निदान
གླེན་ཞིང་ལྐུགས་པ།	कुत्सित भाषा-भाषिन्
གློ་བུར་བའི་དྲི་མ།	आगन्तुकमल
དགའ་བ་དང་ལྡན་པའི་ཞིང་།	नन्दवतीक्षेत्र
དགའ་བའི་ཕུང་པོ།	आनन्दस्कन्ध
དགེ་སྡིག	शुभाशुभानां
དགེ་བའི་བཤེས་གཉེན།	कल्याणमित्र
དགེ་སྦྱོང་གི་ཆོས།	श्रमणधर्म
དགེ་སློང་བཞི།	चतुर्णां भिक्षूणां
དགོས་པ།	प्रयोजन
འགོག་པ་ངན་པ།	दुष्टनिरोध
དགོས་པའི་ཡང་དགོས་པ།	प्रयोजन प्रयोजन
དགོས་པ་ལ་སོགས་པ་བཞི།	प्रयोजनादिना प्रकारचतुष्केण
འགྱོད་པ།	कौकृत्य

འགྱོད་པ་དང་བཅས་པ།	सकौकृत्य
དགྲ་བཅོམ་པས་ཞུས་པ།	अर्हत्परिपृच्छा
དགྲ་བསད་པ།	अरीणां हन्तृत्वाद्
བགྲང་བ་ལས་འདས་པ།	असंख्य
འགྲོ་དོན་མཛད་པ།	जगत् हितकर
སྒོ་གསུམ་གྱི་ཕྱག	त्रिभिद्वारैः नमस्कारः
སྒོ་གསུམ་དང་བས་ཕྱག་འཚལ་བ།	त्रिर्भिद्वारैः सम्प्रसाद नमस्कार
རྒྱུ་དང་འབྲས་བུའི་བདག་ཉིད།	हेतुफलात्मक
རྒྱུད་སྨིན་པར་བྱས་པ།	सन्ततिं परिपाच्य
སྒྱུ་མ་ལྟ་བུའི་བློ།	मायोपमबुद्ध्या
རྒྱལ་པོའི་ཁབ།	राजगृह
སྒྲིབ་པ།	आवरण
སྒྲིབ་པ་དང་བྲལ་བའི་ཞིང་།	आवरणविगत क्षेत्र
བརྒལ་ལན།	परिहार
ངག་འཁྱལ།	सम्प्रलाप
ངག་དང་ཡིད།	वाक् चित्त
ངན་སོང་།	दुर्गति
ངན་སོང་གསུམ།	तिसृणां दुर्गतीनां
ངེས་པར་ལེགས་པ།	निःश्रेयस्
ངན་སོང་དུ་འགྲོ་བའི་སྔ་ལྟས།	दुर्गतिगमनात् पूर्वं
དངོས་སུ་འཕྲོག་པ།	साक्षादपहरण
མངལ་ནས་སྐྱེ་བ།	योनिषु सम्भवः
མངོན་པར་རྟོགས་པ།	अभिसमय
མངོན་པར་མཐོ་བ།	अभ्युदय
མངོན་པར་ཤེས་པ་ལྔ།	पञ्च अभिज्ञा
རྔ་སྒྲའི་ཞིང་།	दुन्दुभिघोष
སྔོ་སྐྱ།	श्वेतनील
སྔོན་གྱི་གདུལ་བྱ་སོ་ལྔའི་དོན།	पूर्वोक्तानां पञ्चत्रिंशद्विनेयानां

སྔོན་བྱུང་།	पौराणिक (कथानकम्)
ཙན་དན་གྱི་སྡོང་པོ།	चन्दन वृक्ष
ཆང་འཚོང་མའི་བུ།	मद्यविक्रेता पुत्र
ཆུའི་དཀྱིལ་འཁོར།	जलमण्डल
ཆོས་ཀྱི་འཁོར་ལོ་བསྐུལ་བ།	धर्मचक्रं प्रवर्तयितुं
ཆོས་ཀྱི་རྣམ་གྲངས།	धर्मपर्याय
ཆོས་ཀྱི་ཡན་ལག་གཅིག	धर्मैकाङ्गेन
ཆོས་གོས།	चीवर
ཆོས་འཆད་པར་བསམ་པ།	धर्मोपदेश अवगन्तव्य
ཆོས་ཉིད་གསལ་བར་བྱེད་པ།	धर्मतां प्रकाशय
ཆོས་བཞི་བསྟན་པ།	चतुधर्मनिर्देश
མཆོད་རྟེན་བརྒྱད་པོ།	अष्टविध चैत्य
འཇིག་རྟེན་དུ་བྱོན་པ།	लोके आगमन
འཇིག་རྟེན་ལས་འདས་པ།	लोकोत्तर
འཇིགས་སྡེ།	भीमसेन
འཇིགས་བྱེད་ཆེན་པོ།	महाभीम
རྗེས་སུ་ཡི་རང་བ།	अनुमोदना
རྗོད་བྱེད།	अभिधान
བརྗོད་བྱ།	अभिधेय
ཉ་མགོ་བོ་སོ་ལྔ།	पञ्चत्रिंशच्छिरस्कमत्स्य
ཉན་ཐོས་དང་རང་སངས་རྒྱས།	श्रावक प्रत्येकबुद्ध
ཉི་མ་དང་པདྨ་དམར་པོ	सूर्य रक्तपद्म
ཉི་མ་དང་རིན་པོ་ཆེའི་སྡོང་བུ	सूर्य रत्नदण्ड
ཉེ་བའི་ཉེ་གནས།	संगातुमुपाले
ཉེས་པ་ལས་ཀུན་ཏུ་ལྡོག་པའི་སྟོབས།	प्रत्यापत्तिबल
ཉེས་པ་མེད་པ།	अदुष्कृता
ཉེས་བྱས།	दुष्कृत
ཉེས་དམིགས།	आदीनव

ཉོན་མོངས་པ་དང་བྲལ་བ།	क्लेशरहित
ཉོན་མོངས་པ་དང་ཤེས་བྱའི་སྒྲིབ་པ།	क्लेशज्ञेयावरण
ཇྙེ་དེཝ་གོཥ།	ज्ञे देवघोष
གཉིས་སུ་མེད་པའི་ཆོས།	अद्वयधर्मता
གཉིས་སུ་མེད་པར་བསྒོམས་པ།	अद्वयतया युक्तत्वम्
གཉིས་སུ་མེད་པའི་ཡེ་ཤེས།	अद्वयज्ञान
གཉེན་པོ་ཀུན་དུ་སྤྱོད་པའི་སྟོབས།	प्रतिपक्षसमुदाचारबल
ཉོན་མོངས་མེད་པའི་ཞིང་།	अक्लिष्टक्षेत्र
སྙིང་རྗེའི་ཤུགས།	कृपाबल
གཏི་མུག	मोह
རྟེན་གྱི་སྟོབས།	आश्रयबल
རྟོག་པ་ཐམས་ཅད་འཇོམས་པ།	सर्वविकल्पप्रहायक
རྟོག་པ་མེད་པའི་ཡེ་ཤེས།	निर्विकल्पज्ञान
རྟོག་མེད་ཐམས་ཅད་མཁྱེན་པ།	बुध्वा अविकल्पतां
ལྟ་བ་ཐམས་ཅད་སེལ་མཛད།	सर्वदृष्टिप्रहाण
ལྟ་བ་ཕྱིན་ཅི་ལོག	विपरीतदृष्टि
ལྟ་བ་ལོག་པ།	मिथ्यादृष्टि
ལྟུང་བ་བྱུང་གིས་དོགས་པ།	आपत्तिसंस्पर्शाशङ्का
ལྟུང་བའི་དངོས་གཞི།	आपत्तिमूल
ལྟུང་བའི་གཞི།	आपत्तिवस्तु
སྟེང་ནམ་མཁའི་སྙིང་པོའི་ཞིང་།	उपरिष्टाद् गगनगर्भक्षेत्रे
སྟོང་ཕྲག་བརྒྱ་པ།	शतसाहस्रिका
སྟོན་པ་པོ།	अदेशयत्
སྟོན་པ་དང་འབྲས་བུ།	शास्ता फल
སྟོབས་བཞི།	चत्वारि वा बलानि
ཐབས་དང་ཐབས་ལས་བྱུང་བ།	उपायोपेयभाव
ཐམས་ཅད་མཁྱེན་པ།	सर्वज्ञत्व
ཐམས་ཅད་ཞལ་གཅིག་པ།	एकमुख

ཐལ་བས་ཁྱབ་པའི་ཞིང་།	भस्मव्यापिनि क्षेत्रे
ཐུགས་རྗེ།	कारुण्य
ཐུན་དྲུག	षड्वार
ཐུན་མོང་མ་ཡིན་པ།	असाधारण
ཐུན་གསུམ།	त्रियाम
ཐེག་པ་ཆེན་པོའི་འདུལ་བ།	महायानविनय
ཐེག་པ་དམན་པ།	हीनयान
ཐོག་མ་མེད་པའི་དུས།	अनादिकाल
མཐའ་ཁོབ་ཀྱི་ཀླ་ཀློ།	प्रत्यन्ता म्लेच्छाः
གདམས་པ།	उपदिष्ट
གདུང་བ་བསིལ་ཞིང་དག་པ།	सन्तापमपसार्य शीतलं
གཏོན་མི་ཟ་བ།	नियम
བདག་གིས་དངོས་སུ་བྱས་པ།	साक्षात् स्वयं कृतानि
བདག་གིས་ཐོས་པ།	मया श्रुतम्
བདག་གཞན་གྱི་དོན་གྱི་སྐུ་གཉིས།	स्वपरार्थ कायद्वय
བདུད་འཇོམས་པ།	मारदमक
བདུད་བཞི་བཅོམ་པ།	चतुर्मारदमन
(བདུད་)ལས་དང་ཉོན་མོངས་པ།	कर्मक्लेश
བདེ་བ་ཅན་གྱི་ཞིང་།	सुखावतीक्षेत्र
བདེ་གཤེགས།	सुगत
དག་པའི་མཚན་མ།	शुद्धलक्षण
དང་པོ་དང་ཐ་མ་མེད་པ།	पूर्वान्त अभाव
དམ་པའི་ཆོས།	सद्धर्म
དམ་པའི་ཆོས་ཀྱི་གོ་སྐབས་མེད་པ།	नास्ति सद्धर्माचरण
དང་བའི་དད་པ།	श्रद्धा प्रसाद
དུད་ཁ།	धूम
དུམ་བུར་བཏོན་པ།	अंशतः निर्गतत्वाद्
དུས་གསུམ་གྱི་སངས་རྒྱས།	त्रैकालिक बुद्ध

དེ་བཞིན་གཤེགས་པའི་གཙུག་ཏོར།	तथागतोष्णीष
དོན་དམ་པ།	पारमार्थिकी
དོན་དམ་གྱི་བཤགས་པ།	परमप्रतिदेशना
དོན་ཡོད་པ་དང་ལྡན་པའི་ཞིང་།	अमोघक्षेत्र
སྡིག་པ་ཐམས་ཅད་ཀྱི་གཉེན་པོ།	सर्वपापप्रतिपक्ष
སྡིག་པ་བཤགས་པའི་ཕུང་པོ།	पापदेशनास्कन्ध
སྡོམ་པའི་ཚུལ་ཁྲིམས།	संवरशील
དྲང་པོ་འདུག	ऋजुः स्थित्वा
དྲི་མ་མེད་པའི་ཞིང་།	विमलक्षेत्र
དྲི་བཟང་པོས་ཁྱབ་པའི་ཞིང་།	सुगन्धव्यापिनि क्षेत्रे
རྡོ་རྗེ་དང་ཉི་མ།	वज्रसूर्य
རྡོ་རྗེ་གཉིས།	वज्रद्वय
རྡོ་རྗེའི་དཀྱིལ་ཀྲུང་།	वज्रपर्यङ्क
སྡུག་བསྔལ་བར་དོ་མེད་པ།	दुःखानां मध्ये न भवत्यन्तरालः
སྡེ་སྣོད་གསུམ།	त्रिपिटक
མདོ་ཙམ་དུ་བསྒྲུབ།	संक्षेपेणात्र चाख्यातं
མདོ་སྡེའི་སྡེ།	सूत्रवर्गः
མདོ་དྲན་པ་ཉེ་བར་བཞག་པ་ཆེན་པོ།	महास्मृत्युपस्थानसूत्र
འདག་པའི་ཐབས།	शुद्धि उपाय
འདུལ་བ་གཏན་ལ་དབབ་པ།	विनयविनिश्चय
འདུ་ཤེས་འགོག་པ།	निरोधसंज्ञा
འདོད་ཆགས་ལ་སོགས་པ་གསུམ།	रागादिभिस्त्रिभिः
བསྡུས་པའི་དོན།	संक्षेपार्थ
ནད་ལ་གནོད་པ།	रोगेण हानिः
ནམ་མཁའ་ཁྱབ་པའི་སེམས་ཅན།	गगनव्यापी सत्त्व
ནམ་མཁའ་ལ་བཞུགས་པ།	आकाशस्थित
ནུས་ཚད།	बलयत्न
ནོར་བུ་ཡོད་པའི་ཞིང་།	मणिवर्तने क्षेत्रे

གནས་དབེན་པར་མཎྜལ།	विजने स्थाने मण्डलं
རྣམ་པར་སྨིན་པ།	विपाक
རྣམ་པར་སུན་འབྱིན་པས་ཀུན་ཏུ་	
སྤྱོད་པའི་སྟོབས།	विदूषणा समुदाचारबल
རྣམ་པ་ཐམས་ཅད་མཁྱེན་པ།	सर्वाकारज्ञता
སྣང་བ་བཀོད་པའི་ཞིང་།	अवभासव्यूहक्षेत्र
སྣང་བ་དང་ལྡན་པའི་ཞིང་།	आभासवती क्षेत्र
དཔག་ཏུ་མེད་པ།	अपरिमित
དཔང་པོ་བཟང་པོ།	सम्यक् साक्षी
དཔལ་དང་ལྡན་པའི་ཞིང་།	श्रीवत्स क्षेत्र
དཔའ་བ་དང་ལྡན་པའི་ཞིང་།	वीरवात्या भूमि
དཔང་པོ།	साक्षिन्
པདྨ་དང་ལྡན་པའི་ཞིང་།	पद्मावती क्षेत्र
པདྨ་དང་འོད་ཕུང་བསྣམས་པ།	पद्मं च प्रकाशपुञ्जं धारयन्
པུས་མོ་གཉིས།	जानुद्वयं
པོ་ཏི་དང་རལ་གྲི	पुस्तक खड्ग
སྤངས་པ་དང་ཡེ་ཤེས་ཀྱི་བྱེ་བྲག	प्रहाणं ज्ञानं च भेदौ
སྤྱན་དྲངས།	निमन्त्रयामास
སྤྱི་བོར་ཐལ་མོ་སྦྱར་བ།	हस्ताभ्यां शिरसि अञ्जलिं बद्ध्वा
སྤྲུལ་པའི་སྐུ་སྐུ་ཚེ་རིང་བ།	दीर्घायुष्ट्वान्निर्माणकायः
ཕ་རོལ་ཏུ་ཕྱིན་པ་དྲུག	षट्पारमिता
ཕན་འདོགས་པའི་ཞིང་།	उपकृतवन
ཕམ་པ།	पाराजयिक
ཕལ་པོ་ཆེ་དང་ཁ་འཐོར་བ།	भूयिष्ठा अभूयिष्ठाश्च
ཕུང་པོ་གསུམ།	त्रिस्कन्ध
ཕུན་སུམ་ཚོགས་པ།	सम्पत्तयः
ཕྱག་རྒྱ།	मुद्रा
ཕྱག་གཉིས་ཆོས་འཆད།	द्विहस्तधर्मदेशना

ཕྱག་མཚན།	आयुध
ཕྱིན་ཅི་མ་ལོག་པ།	अविपरीत
ཕྱིར་མི་ལྡོག་པའི་དགེ་འདུན།	अवैवर्तिक संघ
ཕྱོགས་དང་མཚམས།	दिग्दिगन्तर
ཕྱོགས་བཅུ།	दश दिक्षु
ཕྱོགས་ཆད་པ་ནི་མེད་པ།	नात्र दिशविशेषेण
ཕྲ་མོའི་རིམ་པ།	सूक्ष्मायाः क्रमः
འཕགས་པ་ཉེ་བར་འཁོར་གྱིས་ཞུས་པ།	आर्य उपालिपरिपृच्छा
འཕགས་པ་འཇམ་དཔལ།	आर्य मञ्जुश्री
འཕགས་པ་ཉེ་བར་འཁོར།	आर्य उपालि
བར་མ་ཆད།	आनन्तर्य
སྦོམ་པོ།	स्थूल
བྱང་ཆུབ་ཀྱི་ལྟུང་བ།	बोध्यापत्तिः
བྱང་ཆུབ་ཀྱི་སེམས་རྣམ་པ་གཉིས།	द्विविध बोधिचित्त
བྱང་ཆུབ་ཆེན་པོའི་རྒྱུ།	महाबोध्यर्थकः
བྱང་ཆུབ་ལྟུང་བཤགས།	बोध्यापत्तिदेशना
བྱང་ཆུབ་ལས་ཉམས་པ།	बोध्या पातयति
བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་དགེ་འདུན།	बोधिसत्त्वसंघ
བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་གཉིས།	द्वयोर्बोधिसत्त्वयोः
བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་ལྷད་མོ་ཅན།	बोधिसत्त्वकौतुक
བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་ལས་དང་པོ་པ།	आदिकर्मिकबोधिसत्त्वाः
བྱས་ལ་བསགས་པ།	कृतानि सञ्चितानि
བྱས་ལ་མ་བསགས་པ།	कृतानि असञ्चितानि
བྲམ་ཟེ་ཁམས་པ་སྐྱེས།	ब्राह्मण पुरोज
བྲིས་སྐུ་ལ་བརྟེན་པ།	चित्रोपस्थान
བླ་ན་ཡོད་པ།	सोत्तर
བླ་མའི་མན་ངག	गुरूपदेश
བློ་དམན་པ།	मन्दप्रज्ञ

བློས་དམིགས་པ།	मनसा चालम्बितं
དབང་པོ་གསལ་བའི་ཞིང་།	इन्द्रप्रभक्षेत्र
དབུས་སུ་གདན།	मध्यासन
འབྲེལ་བ།	सम्बन्ध
སྦྱིན་པ།	दान
སྦྲུལ་སྔོན་པོ།	नीलसर्प
མ་སྐྱེས་དགྲའི་འགྱོད་པ་བསལ་བའི་མདོ།	अजातशत्रुकौकृत्यविनोदनसूत्र
མ་རིག་པ།	अविद्या
མ་རིག་པ་སེལ་བ།	अविद्याया निवारणं
མ་ལུས་པ།	अशेष
མ་བྱིན་པར་ལེན་པ།	अदत्तादान
མ་བྱས་ཀྱང་བསགས་པ།	अकृतानि सञ्चितानि
མི་ཁོམ་པ།	अक्षणा
མི་རྟོག་སྡུགས་ཆུད།	अकल्यानशेषांश्च
མི་དང་ལྷ།	मनुष्यदेव
མི་མཇེད་ཀྱི་བདག་པོ།	लोकपति
ཡེ་ཤེས་ཆེན་པོ་མི་བརྗེད་ཀྱི་གཟུངས།	अविस्मृतमहाज्ञानधारण्या
མི་ཚུགས་པ།	अदम्य
མི་སླུ་བ།	अविसंवाद
མི་ཤེས་པའི་མུན་པ།	अज्ञानान्धकार
མེ་ཏོག་ཆེར་རྒྱས་པའི་ཞིང་།	कुसुमविकासक्षेत्र
མེ་ལོང་དྲི་མ་མེད་པ་གཉིས།	निर्मलादर्शद्वय
མོས་པས་སྤྱོད་པ།	अधिमुक्तिचर्या
མན་ངག	अववाद
མན་ངག་གི་དོན།	उपदेश अर्थ
མྱ་ངན་མེད་པའི་ཞིང་།	अशोकक्षेत्र
མྱ་ངན་ལས་འདས་པ།	निर्वाण
མྱ་ངན་ལས་མི་འདའ་བ།	महापरिनिर्वाणमनधिगन्तुं

སྨོན་ལམ་འདེབས་པ།	प्रणिधान
སྨོན་པ་དང་འཇུག་པ།	प्रणिधि प्रस्थान
རྩེ་གཅིག་ཏུ་གནས་པ།	एकाग्रतया अवस्थानं
བརྩོན་འགྲུས་དང་མཐུན་པ།	वीर्यानुकूल
ཚ་བ་དང་གྲང་བ།	शीताः च उष्णाश्च
ཚེ་རབས་སྔ་མ།	पूर्वजन्म
ཚངས་པས་ཁྱབ་པའི་ཞིང་།	ब्रह्मव्यापिक्षेत्र
ཚོགས་གཉིས།	सम्भारद्वय
ཚོགས་བསགས་པ།	पुण्यसंचय
མཚན་དང་དཔེ་བྱད།	लक्षणानुव्यञ्जन
མཚན་མ་མེད་པའི་ཞིང་།	अनिमित्तक्षेत्र
མཚན་མ་གསོད་པ།	निमित्त विनाशक
རི་རབ་དང་པདྨ།	मेरुं पद्मं च
རང་དང་གཞན་གྱི་ཉོན་མོངས་པ།	स्वपरक्लेश
རབ་ཏུ་བྱུང་བ།	प्रव्रजित
རིའི་རྒྱལ་པོ།	शैलेन्द्र पर्वतराज
རིན་པོ་ཆེ།	रत्न
རིན་པོ་ཆེ་ཏོག་དང་རྒྱལ་མཚན།	रत्नकेतुं ध्वजं च
རིན་པོ་ཆེ་པདྨའི་གདན།	पद्मरत्न आसन
རིན་པོ་ཆེ་དང་མེའི་དཀྱིལ་འཁོར།	रत्नम् अग्निमण्डलं
རིན་པོ་ཆེའི་ཞིང་།	रत्नभूमौ क्षेत्रे
རོལ་པ་དང་ལྡན་པའི་ཞིང་།	लीलावत्यां क्षेत्रे
ལམ་གྱི་ཡན་ལག	मार्गाङ्ग
ལམ་ཕྱིན་ཅི་མ་ལོག་པ།	अविपर्यस्तो मार्गः
ལམ་ལོག་པ་བསྟན་པ།	मिथ्या मार्ग दर्शन
ལུང་གི་ཆོས།	आगमधर्मः
ལུང་དང་རྟོགས་པ།	आगमाधिगम
ལུས་དང་ངག་དང་ཡིད།	कायवाक्चित्त

ལུས་མང་པོར་སྤྲུལ་པ།	अनेककाय निर्माण
ལོ་མ་དང་འབྲས་བུ་དང་བཅས་པ།	पत्रफलयुक्त
ལེ་ལོ།	स्त्यान
ཤཱཀྱའི་རྒྱལ་པོའི་རིགས།	शाक्यराजवंश
ཤིན་ཏུ་འགྱོད་པ།	अत्यन्तविप्रतिसार
ཤིན་ཏུ་བསྔགས་པ།	महती अनुशंसा
ཤིན་ཏུ་ལྕི་བ།	अत्यन्तं गुरुतराणि
ཤིང་དཔལ་འབྲས་ཀྱི་སྡོང་བུ།	श्रीफलवृक्ष
ཤིང་མྱ་ངན་མེད་པ།	' अशोक विटप
ཤེས་རབ་ཀྱི་སྤྱན།	प्रज्ञाचक्षु
ཤེས་རབ་ཀྱི་ཕ་རོལ་ཏུ་ཕྱིན་པ།	प्रज्ञापारमिता
ཤུགས་ཀྱིས་བསྟན་པ།	अर्थतो निर्दिष्टः
བཤགས་པའི་ཐབས།	प्रतिदेशनागतोपायाः
གཤིན་རྗེའི་འཇིག་རྟེན།	यमलोक
བཤགས་པ་ཆེན་པོ།	महाप्रतिदेशना
བཤད་པ་གསུམ།	तिस्रश्च व्याख्याः
ས་དང་པོ།	प्रथमभूमि
ས་གནོན།	भूमिस्पर्श
ས་གནོན་དང་མི་འཇིགས་པའི་ཕྱག་རྒྱ།	भूमिस्पर्श अभयमुद्रा
སངས་རྒྱས་ཀྱི་སྤྱན་གཉིས།	बुद्धचक्षुर्द्वय
སངས་རྒྱས་ཉེ་བ་ལ་དགོངས་པ།	बुद्धानां नैकट्याभिप्रायेण
སངས་རྒྱས་མེད་པའི་གནས་སུ་སྐྱེས་པ།	बुद्धशून्ये स्थाने जन्म
སངས་རྒྱས་སུམ་ཅུ་རྩ་བཞི།	चतुस्त्रिंशद् बुद्धाः
སངས་རྒྱས་སུམ་བཅུ་རྩ་ལྔ།	पञ्चत्रिंशद् बुद्धाः
སེང་གེ།	सिंह
སེམས་སུན་བཏོན་ལ་བཤགས་པ།	मानसिकं खेदं प्रकटयन् देशना
སེམས་ཅན་ཀུན་ལ་ཕན་པ།	सत्त्वान् हितकामान्
སེམས་ཅན་ཐམས་ཅད།	सर्वसत्त्व

སེམས་ཅན་གྱི་རྒྱུད་བརྟན་པ།	सत्त्वसन्ततिम् आद्रयति
སེར་སྣ།	मत्सर
སེང་གེ་ལྷ་བུ།	सिंहवन
སྲིད་པ་དང་བྲལ་བའི་ཞིང་།	तृष्णाविगते क्षेत्रे
སྲོག་གཅོད་པ།	प्राणातिपात
སླར་འཕེལ་བ།	वृद्धिरेव
གསལ་བ་དང་ལྡན་པའི་ཞིང་།	प्रभावतीक्षेत्र
གསོལ་བ་གདབ་པ།	अध्येषणा
གསུང་རབ་ཡན་ལག་བཅུ་གཉིས།	द्वादशाङ्गेषु प्रवचनाङ्गेषु
གསོལ་བ་འདེབས་པའི་ཕུང་པོ།	याचनास्कन्ध
བསམ་གཏན་དང་མཐུན་པ།	ध्यानानुकूल
བསོད་སྙོམས་ལ་གཤེགས་པ།	पिण्डपातार्थ चारिका
བསོད་ནམས་ཀྱི་ཕུང་པོ	पुण्यस्कन्ध
བསོད་སྙོམས་ལ་བྱོན་པ།	पिण्डाय चरताम्
བསོད་ནམས་ཀྱི་ཚོགས།	पुण्यसम्भार

སློབ་དཔོན་ཛེ་ཏཱ་རིས་མཛད་པའི་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོའི་འགྲེལ་པའི་བོད་དང་ལེགས་སྦྱར་གྱི་ཐ་སྙད་ཤན་སྦྱར།

आचार्य जेतारि कृत त्रिस्कन्ध सूत्र के टीका की शब्द-सूची

ཀླུའི་རིགས་སུ་གཏོགས་པ།	नागकुले अन्तर्गृहीतत्वात्
ཀུན་མཁྱེན།	सर्वज्ञ
ཀུན་བརྗོད་པའི་ཆོ་འཕྲུལ།	आदेशनाप्रातिहार्य
དཀོན་པ།	दौर्लभ्याद्
དཀོན་མཆོག་གསུམ་གྱི་དཀོར་སྦས་པ།	गुसरूपेण त्रिरत्नसम्बद्धधन
བཀའ་ལས་འབྱུང་བའི་ཆོས།	वचनानुसार धर्म
རྐང་ལག་ཞ་བ།	हस्ताभ्यां पादाभ्यां च विकल:
སྐུ་གཟུགས།	काय
བསྐུལ་བ།	अध्येषणा
ཁྲེལ་ཡོད་པ།	अपत्राप्य
འཁོར་བའི་སྐྱོན།	संसारदोष
འཁོར་བའི་མཐའ།	संसारस्यान्त:
འཁོར་ལོས་སྒྱུར་བའི་རྒྱལ་པོ།	चक्रवर्ती राजा
འཁོར་ལོས་སྒྱུར་བ།	चक्रवर्ती
འཁར་གསིལ།	खक्खर
གང་ཟག་གཅིག་ལ་བཤགས་པ།	एकपुद्गलस्य प्रतिदेशना
གང་ཟག་གསུམ་ལ་བཤགས་པ།	त्रयाणां पुद्गलानां प्रतिदेशना
གྲོལ་བའི་སྒོ།	विमुक्तिद्वार
དགྲ་བཅོམ་པ་གསོད་པ།	अर्हद्वध
དགེ་བསྙེན།	उपासक
དགེ་འདུན་གྱི་ཤིང་ཏོག	संघीयफल
དགེ་བའི་སྟོབས་ཀྱི་མཐུ།	कुशलानां बलेन
དགེ་བའི་རྩ་བ་ཐམས་ཅད།	सर्वाणि कुशलमूलानि

དགེ་རྒྱལ།	श्रमण
དགེ་སློང་།	भिक्षु
དགེ་སློང་མ་སུན་བཏོན་པ།	भिक्षुणीदूषणं
དགོས་འདོད་སྐོང་བ།	पूर्णमनोरथ
དགོས་འདོད་འབྱུང་བ།	मनोरथपरिपूरकत्व
དགྲ་བོའི་ཚོགས།	शत्रुगण
མགོ་གཡོགས་པ།	व्याजेन पलायन
རྒྱུ་མ་དང་ཤ།	अन्त्राणि मांसानि च
རྒྱུན་དུ་འབྱུང་བ།	निरन्तरं
རྒྱལ་བ་རྣམས་ཀྱིས་བྱིན་བརླབས།	सदधिष्ठित सर्वजिन
སྒོང་ལས་སྐྱེས་པ།	अण्डजजन्म
བརྒྱ་བྱིན།	इन्द्र
སྒྲིབ་པ་ཐམས་ཅད་ཟད་པ།	आवरणप्रहाण
ང་རྒྱལ་གྱིས་ཁེངས་པ།	अहङ्कारदृप्त
ངག་འཁྱལ་བ།	सम्भिन्नप्रलाप
ངུར་པ།	चक्रवाक
ངེས་པ་དང་མ་ངེས་པ།	नियतानियत
ངོ་ཚ་ཤེས་པ།	ह्री
དངོས་པོར་འཛིན་པ་འཛོམས་པ།	प्रहीणवस्तुग्राह
སྔོན་གྱི་གནས་རྗེས་སུ་ཤེས་པ།	पूर्वनिवासानुस्मृति
མངག་གཞུག	सेवा
མངོན་དུ་གཟིགས་པ།	साक्षाद् दर्शित्वाद्
མངོན་པར་ཤེས་པ།	अभिज्ञा
མངོན་སུམ་དུ་གཟིགས་པ།	साक्षात्कारित्व
མངོན་ཤེས་ཀྱི་རྒྱལ་མཚན།	अभिज्ञाकेतु
ལྕགས་ཀྱི་ཁྲི་རབ་ཏུ་ཚ་བ།	तप्तलौहासने
ལྕགས་ཀྱི་གཏུན་གྱིས་བརྡུང་བ།	लौहमुसलेन हन्यते
ལྕགས་ཀྱི་ཞུ་ལུམ།	लौहद्रवपानं

ལྕགས་ཀྱི་ཐོང་གཤོལ།	हलानि कर्षन्ति
ལྕེ་དིག་པ།	कल्लो:
ལྕེ་རྨོ་བའི་དམྱལ་བ།	जिह्वाकर्तन नरक
གཅིག་པུར་གནས་པ།	एकान्तचारी
ཆ་ལུགས་ཅན།	विभूत
ཆགས་པའི་ཉེས་པས་མ་གོས་པ།	रागादिदोषैरलिप्तः
ཆང་འཐུངས་ནས་མྱོས་པ།	मदपानेन मदान्वितः
ཆེ་གེ་མོ།	व्यक्ति
ཆོས་ཀྱི་སྐུ།	धर्मकाय
ཆོས་ཀྱི་དབྱིངས།	धर्मधातु
ཆོས་གོས།	चीवर
ཆོས་ཐོས་པ་ལ་མི་དགའ་བ།	धर्मश्रवणं अप्रियं
ཆོས་དང་ལྡན་པ།	धर्मान्वितं
མཆིལ་པ།	चटका
མཆོད་རྟེན།	स्तूप
མཆོད་སྡོན་བཤིག་པ།	पूजाद्रव्याणि भेदयित्वा
མཆོད་པར་འོས་པ།	पूजार्हत्वाच्च
མཆོད་སྦྱིན།	यज्ञदत्त
འཆི་འཕོ་དང་སྐྱེ་བ།	च्युत्युत्पत्ति
ལྗན་ལྗིན་གྱིས་གང་བའི་དམྱལ་བ།	परिक्लिन्ने नरके
རྗེས་སུ་བསྟན་པའི་ཆོ་འཕྲུལ།	अनुशासनी प्रातिहार्य
བརྗོད་དང་བྲལ་བ།	प्रपञ्चातीत
འཇིགས་པ་ཆེན་པོ་གསུམ།	त्रीणि महाभयानि
འཇིག་རྟེན་སྐྱོང་བ།	लोकपाल
འཇིག་རྟེན་གྱི་ཁམས།	लोकधातु
འཇིག་རྟེན་གྱི་ཁམས་ཐམས་ཅད།	सर्वलोकधातु
འཇིག་རྟེན་གྱི་ཕུན་སུམ་ཚོགས་པ།	लोकसम्पत्त्यर्थं
ཉ།	मत्स्य

ཉན་ཐོས།	श्रावक
ཉམས་དགའ་བ།	रमणीयत्वाद्
ཉན་ཐོས་ཀྱི་བྱང་ཆུབ།	श्रावकबोधौ
ཉན་ཐོས་ཀྱི་རིགས་ཅན།	कुलवन्तः श्रावकाः
ཉན་ཐོས་དང་ཐུན་མོང་།	श्रावकैः सामान्यः
ཉེས་པའི་ཚོགས།	दोषराशिः
ཉེས་པ་ལས་ལྡོག་པའི་ཐབས།	दोषव्यावृत्त्युपाय
ཉེས་པས་མ་གོས་པ།	दोषैरलिप्तः
ཉེས་བྱས་ཀྱིས་རིགས་སུ་གཏོགས་པ།	दोषकृतकुलान्तर्गत
ཉོན་མོངས་པའི་དྲི་མ།	क्लेशमल
ཉོན་མོངས་པའི་བུད་ཤིང་།	क्लेशेन्धनानि
ཉོན་མོངས་པ་སྦྲ་བ།	स्थूलक्लेश
ཉོན་མོངས་པའི་ལས་ཟད་པ།	क्लेशकर्मक्षय
གཉའ་དྲག་མཇད་པ།	मुखरता
གཉའ་བ་ཐུང་བ།	निम्ना ग्रीवा
གཉིས་སུ་མེད་པའི་ཡེ་ཤེས།	अद्वयज्ञान
བསྙེན་གནས།	उपवास
བསྙེལ་བ་མི་མངའ་བ།	असंमुष्ट
ཏིང་ངེ་འཛིན།	समाधि
གཏོང་བ།	त्याग
རྟོག་པ་མེད་པའི་ཡེ་ཤེས།	निर्विकल्पज्ञान
རྟོགས་པའི་ཆོས།	अधिगमधर्म
རྟོག་པའི་དྲི་མ་དང་བྲལ་བ།	कल्पनामलविगत
སྟོབས་ལྔ།	पञ्च बलानि
ཐམས་ཅད་ཀྱི་སྙིང་པོ།	सर्वं तद्गर्भं
ཐུན་མོང་མ་ཡིན་པ།	असामान्य
ཐོས་པ།	श्रुत
ཐོས་དང་བསམ་པ་དང་སྒོམ་པ།	श्रुतचिन्ताभावना

ཐུགས་རྗེ་ཆེ་བ།	महाकरुणा
མཐོང་བ་དང་སྒོམ་པ།	दर्शनभावना
དད་པ།	श्रद्धा
དེ་བཞིན་གཤེགས་པའི་ཡོན་ཏན་དྲུག	षडिमे तथागतगुणाः
དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ལ་ངན་སེམས་	दुष्टचित्तेन तथागत-
ཀྱིས་ཁྲག་འབྱིན་པ།	शरीराल्लोहितोत्पाद
དོན་དམ་པར་ཐུགས་སུ་ཆུད་པ།	यथावज्ज्ञानात्
དོན་དམ་པ་བྱང་ཆུབ་ཀྱི་སེམས།	परमार्थबोधिचित्त
དྲང་སྲོང་མཆོག	महर्षि
དྲན་པ།	स्मृति
དྲན་པ་ཉེ་བར་བཞག་པ།	स्मृत्युपस्थानानि
དྲན་པ་ཉེ་བར་བཞག་པ་བཞི།	चत्वारि स्मृत्युपस्थानानि
དྲོད་གཤེར།	संस्वेद
བདུད་ཀྱི་དཔུང་།	मारस्य महासंग्रामः
བདུད་བཞི་ལས་རྒྱལ་བ།	मारचतुष्टय विजय
བདེན་པ་བཞི།	चत्वारि (आर्य)सत्यानि
མདའ་གཞུ།	धनुः धनुश्चालनं च
འདུས་བྱས་ཀྱི་ཡོ་བྱད།	संस्कृतवस्तु
འདོད་པ་ཐམས་ཅད་རྫོགས་པར་བྱེད་པ།	सर्वेच्छापरिपूर्त्या
རྡོ་རྗེ་ཕ་ལམ།	वज्ररत्न
སྡོམ་པ་གསུམ།	त्रिविध संवर
འདུས་པའི་དོན།	संक्षेपार्थ
བསྡུ་བའི་དངོས་པོ་བཞི།	चत्वारि संग्रहवस्तूनि
ན་ཆུང་།	युवति
ནེ་ཙོ།	शुक
ནོར་བུ་རིན་པོ་ཆེ།	रत्नमणि
མནར་མེད།	अवीची
མནར་སེམས་དགུ།	नवविधा अवीची

གནོད་པ་བཅོམ་པའི་སྟོབས།	विनाशक बल
གནོད་སེམས།	व्यापादः
རྣམ་པ་ཐམས་ཅད་མཁྱེན་པ།	सर्वाकारज्ञता
རྣམ་པ་ཐར་པ།	विमोक्ष
རྣམ་པར་མི་རྟོག་པའི་ཡེ་ཤེས།	निर्विकल्पज्ञान
སྣོད་དང་འཚམ་པ།	पात्रानुकूल
བརྣབ་སེམས།	अभिध्या
སྤྲང་པོ།	द्ररिद्र
སྤྲེའུ།	वानर
སྤྱོད་པ་དཔག་ཡས།	अभ्यमिता चरि
སྤྲོས་པ་ཐམས་ཅད་ཉེ་བར་ཞི་བ།	सर्वप्रपञ्चोपशम
སྤྲོས་པ་དང་བྲལ་བ།	प्रपञ्चरहित
སྤྲུལ་པའི་སྐུ།	निर्माणकाय
ཕ་རོལ་ཏུ་ཕྱིན་པ་བཅུ།	दश पारमिता
ཕ་རོལ་ཕྱིན་པ་དྲུག་གི་མི་མཐུན་པའི་ཕྱོགས།	षट्पारमिताविपक्षाः
ཕན་འདོགས་པ།	उपकारक
ཕན་པ་བསྒྲུབ་པའི་མཆོག	हितकरणे श्रेयः
ཕམ་པའི་རིགས་སུ་གཏོགས་པ།	पाराजयिककुलान्तर्गत
ཕན་པ་དང་བདེ་བ་དང་གྲོལ་བ།	उपकारः सुखं विमुक्तिः
ཕན་ཡོན་མཆོག	उत्तम कल्याण
ཕུག་རོན།	कपोत
ཕོངས་པ།	विवश
ཕྱིན་ཅི་མ་ལོག་པར་གསུང་པ།	अविपर्यस्तायास्तथताया देशकः
ཕྱོགས་སྐྱོང་བ།	क्षेत्रपाल
འཕགས་པའི་ཚུལ་ཁྲིམས།	आर्यशील
འཕགས་པའི་ཚོགས།	आर्यगण
འཕགས་པའི་ལམ་ཡན་ལག་བརྒྱད།	आर्याष्टाङ्गिको मार्गः
བྱིའུ་སྔོན་པོ།	नीलपक्षी

བུད་མེད།	स्त्री
བྱང་ཆུབ་ཀྱི་སྤྱོད་པ།	बोधिचर्या
བྱང་ཆུབ་ཀྱི་ཡན་ལག་བདུན།	सप्त बोध्यङ्गानि
བྱང་ཆུབ་ཏུ་སེམས་བསྐྱེད་པ།	बोधिचित्तोत्पाद
བྱང་ཆུབ་རྣམ་པ་གསུམ།	त्रि बोधयः
བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ།	बोधिसत्त्व
བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་སྡེ་སྣོད།	बोधिसत्त्वपिटक
བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་རིགས་ཅན།	बोधिसत्त्वाश्च कुलवन्तः
བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་བསླབ་པའི་རིམ་པ།	बोधिसत्त्वशिक्षाक्रम
བྱམས་མའི་བུ་གང་པོ།	मैत्रायणीपुत्रपूर्णः
བླ་ན་མེད་པའི་བྱང་ཆུབ།	अनुत्तरबोधौ
བླ་ན་མེད་པའི་ཡེ་ཤེས།	अनुत्तरज्ञान
བླ་མེད་ཡེ་ཤེས།	ज्ञाने ह्यनुत्तरे
བླ་མ་ལ་མི་སྙན་པ་བརྗོད་པ།	गुरुणाम् अपवादः
དབང་པོ་དྲུག	षडिन्द्रिय
དབང་པོ་མེད་པ།	अलिङ्गी
དབང་པོ་ལྔ།	पञ्चेन्द्रिय
དབང་པོ་མ་ཚང་བ།	इन्द्रियविकलता
དབང་ཕྱུག་ཕུན་སུམ་ཚོགས་པ།	ऐश्वर्यसम्पन्न
འབྲས་བུ་ལ་གནས་པ་བཞི།	चतुर्विधाश्च फलस्थाः
མ་ནིང་།	नपुंसक
མ་བྱིན་པར་ལེན་པ།	अदत्तादान
མི་མཐུན་པའི་ཕྱོགས་འཇོམས་པ།	विपक्षविघात
མི་ཚངས་པར་སྤྱོད་པ།	काममिथ्याचार
མ་རིག་པའི་མུན་ནག	अविद्यान्धकार
མྱ་ངན་ལས་འདས་པ།	परिनिर्वृत्त
སྨད་ཚོང་མ།	वेश्या
དམུས་ལོང་།	जात्यन्ध

དམྱལ་བར་སྐྱེ་བས་འཇིགས་པ།	नरकपतनभय
གཙུག་ལག་ཁང་།	विहार
རྩ་བ་ནས་འབྱིན་པ།	उत्खातमूल
བརྩོན་འགྲུས།	वीर्य
ཚ་བས་མ་གདུངས་པ།	उष्णताभिश्च असन्तप्तः
ཚད་མེད་པ།	अपरिमित
ཚངས་པ།	ब्रह्म
ཚངས་ཤིང་དག་པ།	ब्रह्मेति विशुद्धं
ཚིག་ཕྲ་མ།	पैशुन्य
ཚིག་བཙན་པ།	आदेयवचन
ཚིག་རྩུབ།	पारुष्य
ཚུལ་ཁྲིམས་འཆལ་བ།	दुःशील
ཚོད་མའི་ནང་གི་སྲིན་བུ།	शाकपत्रादिषु कीटाः
ཚོགས་དང་སྤྱོད་པ།	गणचारी
མཚན་གཉིས་པ།	द्विलिङ्ग
མཚན་མ་མེད་པ།	अनिमित्त
མཚན་སུམ་ཅུ་རྩ་གཉིས།	द्वात्रिंशल्लक्षण
འཚེ་བ་ལས་སྐྱོབ་པ།	हिंसादिपरिरक्षणं
འཚེ་བ་ཐམས་ཅད་ཟློག་པ།	सर्वोपद्रवनिवारक
མཛད་པ།	लीला
མཛེས་པར་གཞེགས་པ།	सौन्दर्यार्थं
རྫུ་འཕྲུལ།	ऋद्धि
རྫུ་འཕྲུལ་གྱི་རྐང་པ་བཞི།	चत्वार ऋद्धिपादाः
རྫུས་པ།	उपपादुक
བརྫུན་དུ་སྨྲ་བ།	मृषावाद
རྫུ་འཕྲུལ་གྱི་ཆོ་འཕྲུལ།	ऋद्धिप्रातिहार्य
བརྫུན་མི་སྨྲ་བ།	अमृषावाद
ཞུགས་པ་བཞི།	चतुर्विधप्रतिपन्नकाः

གཞོན་ཆོས་ལ་དགའ་བ།	आरोहणे च आनन्दः
གཞན་ལ་བཙོལ་བ།	अन्यैः कारापितानि
གཟུགས་མེད།	नीरूपे
ཟག་པ་ཟད་པ་ཤེས་པ།	आस्रवक्षयज्ञानानि
ཟག་པ་ཤེས་པ།	सास्रवविज्ञान
ཟངས་ཀྱི་ཁང་པ་རབ་ཏུ་འབར་བ།	प्रज्वलनशीले त्रपुगृहे
ཟིལ་གྱིས་གནོན་པ།	अभिभव
འོད་གསལ་བ།	प्रभास्वर
འོན་པ།	मूक
ཡང་བ།	लघु
ཡང་དག་པར་སྤོང་བ་བཞི།	चत्वारि सम्यक्प्रहाणानि
ཡང་དག་པའི་ཡེ་ཤེས།	सम्यग्ज्ञान
ཡན་ལག་གི་དོན།	अवयवार्थ
ཡུལ་གཡུལ་ཆེན་པོ་འཇོམས་པ།	महासंग्रामे भञ्जकः
ཡུལ་མཐའ་འཁོབ་ཏུ་སྐྱེ་བས་འཇིགས་པ།	प्रान्तदेशे जन्मभय
ཡོན་ཏན་འབྱུང་བ།	गुणवद्
གཡོ་མེད།	अविचल
རང་འཐག་འདྲེན་པའི་གླང་།	अरघट्टवाहकवृषभानां
རང་སངས་རྒྱས།	प्रत्येकबुद्ध
རང་སངས་རྒྱས་ཀྱི་རིགས་ཅན།	प्रत्येकबुद्धकुलवन्तः
རང་སངས་རྒྱས་ཀྱི་ལམ།	प्रत्येकबुद्धमार्ग
རབ་ཏུ་བྱུང་བ།	प्रव्रज्या
རལ་གྲིའི་ལོ་མ་ཅན།	असिपत्र
རི་དྭགས་ཀྱི་ལུས།	मृगादिशरीर
རི་རབ་ལྟར་གནོན་པ།	पर्वतराजसुमेरुरिव निर्भयः
རིགས་ཕུན་སུམ་ཚོགས་པ།	सम्पन्न कुल
རིན་ཆེ་བ།	दौर्लभ्याद्
རང་གིས་བྱས་པ།	स्वयं कृतानि

རིང་བསྲེལ།	अवशेष
རིད་པ།	कृश
རིམ་གྲོ།	सत्क्रिय
རུས་སྦལ།	कच्छप
ལུང་གི་ཆོས།	धर्म इति आगमः
ལུས་དང་སེམས་དང་ཚོར་བ་དང་ཆོས།	काय-चित्त वेदना धर्म
ལོག་པ་རྣམ་པ་བརྒྱད།	अष्टविधा मिथ्यादृष्टिः
ལོག་པར་ལྟ་བ།	मिथ्यादृष्टि
ལོག་པར་ཞུགས་པའི་རིགས་སུ་སྐྱེ་བ།	मिथ्यादृष्टियुतानां कुले जन्म
ལོག་པའི་དོན་ལ་མངོན་པར་ཞེན་པ།	विपरीतार्थे अभिनिवेशः
ལོག་པའི་ལྷ་ལ་མཆོད་སྦྱིན་བྱས་པ།	विपर्यस्तदेवान् पूजयतां
ལོངས་སྤྱོད་རྫོགས་པའི་སྐུ།	सम्भोगकाय
ཤིན་ཏུ་དད་པའི་སེམས།	श्रद्धालुमनसा
ཤེས་བྱ་ཐམས་ཅད།	समस्तज्ञेय
ཤེས་བྱའི་དྲི་མ།	ज्ञेयमल
ཤེས་རབ།	प्रज्ञा
ཤེས་རབ་ཀྱི་དབང་པོ།	प्रज्ञेन्द्रिय
ས་དང་ལམ།	भूमिमार्ग
སངས་རྒྱས་བཀའ་དྲིན།	बुद्धस्नेह
སུམ་ཅུ་རྩ་གསུམ་ལྷ།	त्रायस्त्रिंशकैः देव
སེམས་ཅན་གྱི་རྒྱུད།	सत्त्वसन्तति
སེམས་ཅན་གྱི་དོན་བྱ་བ།	सत्त्वकल्याण
སེམས་ཀྱི་རྣམ་གྲངས།	चित्तपर्याय
སེམས་ཅན་ཡོངས་སུ་སྨིན་པ།	सत्त्वानां परिपाकः
སོ་སོ་རང་གིས་རིག་པའི་ཡེ་ཤེས།	स्वप्रत्यात्माधिगमज्ञान
སོག་ལེས་འགྲེ་བ།	क्रकचैः विपाटितः
སྲོག་གཅོད་པ།	प्राणातिपात
སློབ་མ།	शिष्येषु

བསམ་གཏན།	ध्यान
བསམ་གཏན་དང་པོའི་ལྷ།	प्रथमध्यानस्य देवः
གསུང་རབ།	वाग् (वचन)
གསོ་སྦྱོང་།	पोषध
བསོད་ནམས་ཀྱི་ཕུང་པོ།	पुण्यसम्भार
བསོད་ནམས་ཀྱི་ཞིང་།	पुण्यक्षेत्र
ལྷ་ཁང་།	विहार
ལྷ་དང་མི།	देव मनुष्य
བརྒྱ་བྱིན།	इन्द्र
ལྷའི་རྣ་བ།	दिव्यश्रोत्र
ལྷུ་ཚིགས།	शरीर
ལྷུང་བཟེད།	पात्रम्
ལྷན་ཅིག་སྐྱེས་པ།	सहज
ལྷས་བྱིན།	देवदत्त
ལྷ་རྫས།	देवद्रव्य

སློབ་དཔོན་མར་མེ་མཛད་ཡེ་ཤེས་ཀྱིས་མཛད་པའི་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་ མདོའི་འགྲེལ་པའི་ཚིག་དམིགས་བསལ་བ་རྣམས་ཀྱི་ བོད་དང་ལེགས་སྦྱར་གྱི་ཐ་སྙད་ཤན་སྦྱར།

आचार्य दीपङ्करश्रीज्ञान कृत त्रिस्कन्धसूत्र-टीका की विशेष-शब्दानुक्रमणी

ཀུན་རྫོབ་ཀྱི་བསྡུས་པ།	संवृतिसंगृहीत
ལྐུགས་པ།	मूकता
འཁོར་བ་མ་ལུས།	शेष जगद्
འཁོར་བའི་སྡུག་བསྔལ།	सांसारिक दु:ख
ཁམས་གསུམ།	त्रिधातु
སྒྱུ་མ་ལྟ་བུའི་དོན།	मायानिभानर्थान्
སྒྱུ་མ་ལྟ་བུ།	मायोपम
དགེ་བའི་ལས་ཀྱི་ལམ་བཅུ།	दश कुशलकर्मपथ
གྲོང་།	नगर
རྒྱལ་སྲིད།	राज्य
གླིང་བཞི།	चतुर्द्वीप
བསྒོམ་པ་ལས་བྱུང་བ།	भावनामय
དགེ་བའི་རང་བཞིན།	कुशलानां स्वभाव:
རྒྱུན་ཀུན་ནས་གཅོད་པ།	सन्ततिविच्छेद
ངན་འགྲོ་གསུམ།	त्रि दुर्गतिषु
བསྔོ་བའི་ཕུང་པོ།	परिणामनास्कन्ध
ལྕགས་སྒྲོག	निगडबद्धा:
ཆོས་དང་མཐུན་པར་སོར་ཆུད་པ།	धर्मानुसारं प्रत्यापाद्येरन्
ཆོས་ཀྱི་འཁོར་ལོ་བསྐོར་བ།	धर्मचक्रप्रवर्तन

ཆོས་ཀྱི་སྦྱིན་པ།	धर्मदान
ཆོས་ཟབ་མོ།	गम्भीर धर्म
མཆོད་པར་འོས་པ།	पूजनीय
ལྗོངས།	जनपद
ཇི་སྙེད་པའི་རང་བཞིན།	यावन्तः स्वभावाः
འཇིག་ཚོགས་སུ་ལྟ་བ།	सत्कायदृष्टि
ཉོན་མོངས་ཤེས་བྱའི་སྒྲིབ་པ།	क्लेशज्ञेयावृत्ति
ཉེས་པའི་རྒྱུ།	दोषकारण
ཉི་མའི་དཀྱིལ་འཁོར།	सूर्यमण्डल
ཉོན་མོངས་པ་བག་ཆགས།	सवासनक्लेश
ལྷུང་བའི་ལྷག་མ།	शेषापत्ति
ལྷུང་བ་ཕྲ་མོ།	सूक्ष्मापत्ति
རྟེན་ཅིང་འབྲེལ་བར་འབྱུང་བ།	प्रतीत्यसमुत्पाद
ཐུགས་ལས་ཆུང་བ།	अल्पोत्सुक
མཐུ་བོ་ཆེ།	नारायण
དམ་ཚིག་རྡོ་རྗེ།	समयवज्र
དྲུངས་ནས་ཕྱུང་བ།	समुन्मूल्य
དོན་དམ་པའི་མཚན་མ།	परमार्थतः निमित्तं
དོན་དམ་པས་བསྡུས་པ།	परमार्थसंगृहीत
འདོད་ཡོན་ལྔ།	पञ्चकामगुण
འདུ་ཤེས་མེད་པའི་སྙོམས་པར་འཇུག་པ།	आसंज्ञिसमापत्ति
འདུ་ཤེས་མེད་པའི་ལྷ།	असंज्ञिकनिर्जराः
དེ་བཞིན་ཉིད་རྟོགས་པ།	तथताधिगति
ནམ་མཁའ་དང་མཉམ་པ།	आकाशसमान
གནས་ཆེན་པོ་བརྒྱད	अष्टमहातार्थ
རྣམ་པར་སྨིན་པ་ལྗི་བ།	गुरुविपाक
སྤྱོད་ཡུལ་མ་ཡིན་པ།	अगोचर
སྤངས་པ་དང་ཡོན་ཏན་གྱི་ཆེ་བ།	प्रहाणं गुणश्चेति महत्त्वं

སྤྱན་ལྔ་རྣམ་པར་དག་པ།	पञ्चचक्षुर्विशुद्ध्या
དཔུང་གཉེན།	शरणप्रतिरूपकान्
ཕུང་པོ་གསུམ་པ།	त्रिस्कन्ध
ཕུལ་དུ་བྱུང་བའི་དགའ་བ་ཐོབ་པ།	अतिशय मुदिताप्राप्त
འཕགས་པའི་དགེ་འདུན།	आर्यसङ्घ
ཕྱིན་ཅི་མ་ལོག་པ་མཁྱེན་པ།	अविपर्यस्तं ज्ञानम्
འཕྲོག་བྱེད།	हरि
ཕམ་པའི་གནས།	पाराजयिकस्थान
བྱང་ཆུབ་ཀྱི་སེམས་ཀྱི་དགེ་བའི་རྩ་བ།	बोधिचित्तं कुशलमूलं
བྱམས་པའི་སྦྱིན་པ།	मैत्रीदानं
སྦྱིན་པ་ལས་བྱུང་བ།	दानमय
སྦྱང་དཀའ་བ།	दुष्प्रतिकार
དབྱིག་གི་སྙིང་པོ།	हिरण्यगर्भ
མ་རིག་པའི་འཐིབས་པོ།	घोरयाऽविद्यया
མ་ནོར་བར་རྟོགས་པའི་ཡེ་ཤེས།	अभ्रान्तमवबुध्य ज्ञानवान्
སྨོན་ལམ།	प्रणिधानम्
སྨོན་ལམ་ཕྱིན་ཅི་ལོག	विपरीतप्रणिधान
མི་འཇིགས་པའི་སྦྱིན་པ།	अभयदान
སྨོན་ལམ་མ་སྦྱངས་པ།	प्रणिधानानभ्यास
མི་ཁོམ་གནས་བརྒྱད།	अष्टाक्षण
མི་དགེ་བ་བཅུ	दशाकुशल
དམུས་ལོང་།	जात्यन्ध
མི་སྐྱེ་བའི་ཆོས་ཅན།	पुनरनुत्पत्तिक
རྟིབས་བཅག་པ།	हतारित्व
ཚུལ་ཁྲིམས་རྣམ་པར་དག་པ།	विशुद्धानि शीलानि
ཚུལ་ཁྲིམས་ལས་བྱུང་བ།	शीलमय
གཞན་ལས་ཕུལ་དུ་བྱུང་བ།	अन्येभ्यो वैशिष्ट्यम्
གཞན་སྡུག་བསྔལ་དང་བྲལ་བར་བཞེད་པ།	परदु:खापनयनाभिलाषी

བཟོད་པར་དཀའ་བའི་སྡུག་བསྔལ།	अत्यन्तदु:खप्रदायक
གཟེགས་ཟན།	कणाद
ཟག་པ་མེད་པའི་དགེ་བ།	अनास्रवकुशल
ཟག་པ་དང་བཅས་པ།	सास्रव
ཟས་དང་སྐོམ།	खाद्यपेय
ཟང་ཟིང་གི་སྦྱིན་པ།	आमिषदान
ཟག་པ་འབྲིང་།	मध्यास्रव
ཡུལ་འཁོར།	राष्ट्र
ཡེ་ཤེས་དཀྱིལ་འཁོར།	ज्ञानमण्डल
རང་བཞིན་སྟོང་པ་ཉིད།	स्वभावशून्यता
རང་བཞིན་མེད་པ།	नि:स्वभावता
རང་དང་གཞན་ལ་ཕྱི་བར་འཁོར་བ།	स्वपरोकृते हितकरं
ལས་ཀྱི་ལམ་གྱི་སྒྲིབ་པ།	कर्मपथावरण
ལག་མཐིལ་དུ་སྐྱུ་རུ་ར།	करतलगतामलक
ལོག་པར་ལྟ་བའི་རྗེས་སུ་ཕྱོགས་པ།	मिथ्यादृष्ट्यभिमुख
ལས་ཀྱི་སྒྲིབ་པ་རྣམ་པར་སྦྱོང་བའི་ཆོ་ག	कर्मावरणविशोधनविधि
བཤགས་པའི་ཕུང་པོ།	देशनास्कन्ध
གསོལ་བ་འདེབས་པའི་ཕུང་པོ།	याचनास्कन्ध
སངས་རྒྱས་ལ་མ་གུས་པ།	बुद्धानादर
བསམ་པ་དང་སྦྱོར་བ།	आशयप्रयोग
སོ་སོ་ཐར་པའི་སྡོམ་པ།	प्रतिमोक्षसंवर
སྲིད་པའི་རྒྱ་མཚོ་ལས་བརྒལ་བ།	भवसागरोत्तरणाय
སངས་རྒྱས་ལ་མི་འདུན་པ།	बुद्धनि:श्रद्ध
སྲིན་པོ་འཇིགས་སུ་རུང་བ།	भयानकरक्षोभि:
སྲིད་པའི་བཙོན་ར།	भवचारक
སེར་སྐྱ།	कपिल
གསུང་གི་ཟེར།	वाक्प्रभ

སྤྱི་བཤགས་ཀྱི་བོད་དང་ལེགས་སྦྱར་གྱི་ཐ་སྙད་ཤན་སྦྱར།

सामान्यप्रतिदेशना की शब्द-सूची

སྐུར་པ་བཏབ་པ།	निन्दन
དཀོན་མཆོག་གསུམ་ལ་གནོད་པའི་ལས།	त्रिरत्नप्रतिघातक कर्म
མཁན་པོ་དང་སློབ་དཔོན་ལ་མ་གུས་པ།	आचार्योपाध्यायानादर
འཁོར་བ་ཐོག་མ་མཆིས་པ།	अनादिसंसार
འཁོར་བ་དང་ངན་སོང་གི་རྒྱུ།	संसारदुर्गतिपतनहेतु
གྲོགས་ཚངས་པར་མཚུངས་པ་སྤྱོད་པ་	
རྣམས་ལ་མ་གུས་པ།	सब्रह्मविहारिमित्राणामनादरः
ཉེ་བ་ལྔ།	पञ्च तत्सभागानि
ཉེས་ལྟུང་གི་ཚོགས།	आपत्तिदोषराशयः
གཏི་མུག	मोह
མཐོལ་ལོ།	आविष्करोमि
མཐོ་རིས་དང་ཐར་པའི་གེགས	स्वर्गापर्गविघ्नभूत
དམ་པའི་ཆོས་སྤངས་པ།	सद्धर्मपरित्याग
འདོད་ཆགས།	राग
ཕ་དང་མ་ལ་མ་གུས་པ།	मातापित्रोरनादरः
ཕྱོགས་བཅུ	दशदिग्
འཕགས་པའི་དགེ་འདུན།	आर्यभिक्षु संघ
བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་བསླབ་པ།	बोधिसत्त्वशिक्षा
བླ་མ་རྡོ་རྗེ་འཛིན་པ་ཆེན་པོ།	महागुरुवो वज्रधराः
མི་དགེ་བ་བཅུ	दशाकुशल
མི་འཆབ་པ།	न प्रतिच्छादन
མཚམས་མ་མཆིས་པ་ལྔ	पञ्चानन्तर्याणि
ཞེ་སྡང་།	द्वेष
ལུས་ངག་ཡིད།	कायवाङ्मनांसि

སངས་རྒྱས་དང་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ།	बुद्धबोधिसत्त्व
སེམས་ཅན་ལ་གནོད་པའི་ལས།	सत्त्वाहितकर कर्म
སོ་སོ་ཐར་པའི་སྡོམ་པ།	प्रातिमोक्षसंवर
གསང་སྔགས་ཀྱི་དམ་ཚིག	गुह्यमन्त्रसमय
ཨ་ཧོ་ལ།	अहो

•

ཁ་སྐོང་ལྷན་ཐབས་གསུམ་པ།

ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་དང་རྒྱ་འགྲེལ་གསུམ་གྱི་ཚིགས་བཅད་ཀ་མད་གོ་རིམ།

ཁ་སྐོང་ལྷན་ཐབས་བཞི་པ།

རྒྱ་འགྲེལ་གསུམ་དུ་བཞུགས་པའི་མདོ་བསྟན་ཁག་གི་ལུང་འདྲེན་མཚན་བྱང་།

ཁ་སྐོང་ལྷན་ཐབས་ལྔ་པ།

རྒྱུ་འབྲེལ་གསུམ་དུ་གསལ་བའི་ལུང་འདྲེན་ཀྲུང་པ་ཟུར་བཏོན།

དྲང་པོ་འདུག་ལ་ཡང་དག་ལྟོས། |
ཡང་དག་ཉིད་ལ་ཡང་དག་ལྟ། |
ཡང་དག་མཐོང་ན་རྣམ་པར་གྲོལ། |
དེ་ནི་བཤགས་པ་ཆེན་པོ་ཡིན། |

ཤོག་གྲངས། 27

དེ་ཡང་། “མཆོད་རྟེན་དང་གཙུག་ལག་ཁང་བཤིག་པ་དང་། དཀོན་མཆོག་གསུམ་གྱི་དཀོར་སྤས་ནས་བདག་ཉིད་ཀྱི་ཕྱིར་ཡོངས་སུ་སྤྱོད་པ་གང་ཡིན་པ་དེ་ནི་ཆེ་འཕོས་ནས་དམྱལ་བ་ཆེན་པོ་མནར་མེད་པར་ལྟུང་ངོ་།།” ཤོག་གྲངས། 65

“དགེ་འདུན་གྱི་དཀོར་བཀུས་པས་རང་འཐག་འདྲེན་པའི་གླང་དང་བོང་བུར་སྐྱེ་བར་འགྱུར་རོ། །དགེ་འདུན་གྱི་དཀོར་ལ་ནན་གྱིས་སློང་ཞིང་གསང་སྐྱོན་བྱེད་ན་ཕུག་རོན་དུ་སྐྱེ་བར་འགྱུར་རོ། །དགེ་འདུན་གྱི་ཚོད་ལུམ་ཟོས་ན་ཚོད་མའི་ནང་གི་སྲིན་བུར་སྐྱེ་བར་འགྱུར་རོ།།” ཤོག་གྲངས། 65

མི་དགེ་བ་བཅུ་ནི། “སྲོག་གཅོད་པ་དང་། མ་བྱིན་པར་ལེན་པ་དང་། མི་ཚངས་པར་སྤྱོད་པ་དང་། བརྫུན་དུ་སྨྲ་བ་དང་། ཚིག་ཕྲ་མ་དང་། ཚིག་རྩུབ་པོ་དང་། ངག་འཁྱལ་བ་དང་། བརྣབ་སེམས་དང་། གནོད་སེམས་དང་། ལོག་པར་ལྟ་བའོ།།” ཤོག་གྲངས། 66

དེ་རྣམས་སེམས་མཚམས་མེད་པར་སྤྱད་ན་“དམྱལ་བར་འགྲོའོ། །དུད་འགྲོར་འགྲོའོ། །ཐ་མ་ཡི་དྭགས་སུ་སྐྱེའོ།།” ཤོག་གྲངས། 66

དགེ་བ་དང་མི་དགེ་བ་ལས་ཀྱི་རྣམ་པར་སྨིན་པ་བསྟན་པའི་མདོ་དང་། འཕགས་པ་ལེགས་ཉེས་ཀྱི་
རྒྱུ་དང་འབྲས་བུ་བསྟན་པ་ཞེས་བྱ་བ་ཐེག་པ་ཆེན་པོའི་མདོ་ལས།

"སྲོག་བཅད་པས་ཚེ་ཐུང་བ་དང་། ནད་མང་བའོ།།" ཞེག་གྲངས། 67

"མ་བྱིན་པར་བླངས་པས་ནི་དབུལ་ཞིང་ཕོངས་པ་དང་ནོར་གཞན་གྱིས་རང་དབང་མེད་པར་སྤྱོད་པའོ།།" ཞེག་གྲངས། 67

"འདོད་པ་ལ་ལོག་པར་གཡེམ་པ་ནི་ཆུང་མ་ལ་གཞན་སྤྱོད་པ་དང་། །ཆུང་མ་དང་འཐབ་ཅིང་བསམས་བཞིན་དུ་མི་བདུབ་པའོ།།" ཞེག་གྲངས། 68

"བརྫུན་དུ་སྨྲ་བས་ནི་སྐུར་པ་མང་བ་དང་། གཞན་གྱིས་བསླུས་པར་འགྱུར་རོ།།" ཞེག་གྲངས། 67

"ཕྲ་མས་ནི་འཁོར་མི་ཚང་བ་དང་། མཛའ་བ་དང་འབྱེད་པའོ། །ཚིག་རྩུབ་པོས་ནི་སྨྲ་མི་སྙན་པ་ཐོས་པ་དང་། ཅི་སྨྲས་པ་རྩོད་པར་འགྱུར་བའོ། །ཚིག་འཁྱལ་པས་ནི་གཞན་ཡིད་མི་ཆེས་པ་དང་། གཞན་གྱིས་མི་གོ་བའོ། །བརྣབ་སེམས་ཀྱིས་ནི་བཀམ་ཞིང་ཆོག་མི་ཤེས་པ་དང་། བཅལ་བས་མི་རྙེད་པའོ། །གནོད་སེམས་ཀྱིས་ནི་གཞན་གླགས་ཚོལ་བ་དང་། གཞན་ལ་གནོད་པ་བྱེད་པའོ། །ལོག་པར་ལྟ་བས་ནི་གཡོ་སྒྱུ་དང་བཅས་པ་དང་། ལོག་པར་ཞུགས་པའི་རིགས་སུ་སྐྱེའོ།།" ཞེག་གྲངས། 68

"མཆོད་རྟེན་བཤིག་པ་དང་། གཙུག་ལག་ཁང་བཤིག་པ་དང་། དཀོན་མཆོག་གསུམ་གྱི་ནོར་སྦྲས་ནས་བདག་ཉིད་ཀྱི་ཕྱིར་ཡོངས་སུ་སྤྱོད་པ་གང་ཡིན་པ་དེ་ནི་ཤི་འཕོས་ནས་དམྱལ་བ་མནར་མེད་པར་ལྟུང་བར་འགྱུར་རོ། །གལ་ཏེ་དེ་ལས་ཐར་པར་གྱུར་ན་ཡང་དུད་འགྲོའི་སྐྱེ་གནས་ཀྱི་ལུས་འདི་ལྟ་སྟེ། ཕུག་རོན་དང་། མཆིལ་པ་དང་། ངུར་པ་དང་། ནེ་ཙོ་དང་། བྱིའུ་སྔོན་པོ་དང་། ཉ་དང་། རུས་སྦལ་དང་། སྤྲེའུ་དང་། རི་དྭགས་ཀྱི་ལུས་ལེན་པར་འགྱུར་རོ། །བརྒྱ་ལ་མིའི་ལུས་ཐོབ་པར་གྱུར་ན་ཡང་། མ་ནིང་དང་། བུད་མེད་དང་། མཚན་གཉིས་པ་དང་། དབང་པོ་མེད་པ

དང་། སྨད་ཚོང་མ་དག་ཏུ་འགྱུར་རོ།།" ཤོག་གྲངས། 70

ཡང་གསུངས་པ། "ཚེ་འདི་ལ་མཆོད་སྟོན་དྲལ་ནས་ནུབ་མོ་ཟས་ཟོས་པ་གང་ཡིན་པ་དེ་ནི། ཡི་དྭགས་ལྐུགས་པ་བཀྲིས་པ་དག་ཏུ་སྐྱེས་ཏེ་ལོ་བརྒྱ་སྟོང་མང་པོར་བཟའ་བ་དང་། བཏུང་བ་ཐོབ་པར་མི་འགྱུར་རོ། །འགྲོ་བའི་ཚེ་ལྷུ་ཚིགས་ཀུན་དུ་མི་འབར་བར་འགྱུར་རོ།།" ཤོག་གྲངས། 71

"ལྐུགས་པ་ནི་ཆོས་ལ་སྐུར་པ་བཏབ་པ་ལས་འབྱུང་བ་ཡིན་ནོ། །འོན་པ་ནི་ཆོས་ཐོས་པ་ལ་མི་དགའ་བས་ཡིན་ནོ།།" ཤོག་གྲངས། 72

"དབང་པོ་མ་ཚང་བ་ནི་ཚུལ་ཁྲིམས་འཆལ་བ་ལས་འགྱུར་རོ།།" ཤོག་གྲངས། 72

"ལྐུ་རིག་པ་ནི་དབེན་པར་བླ་མ་ལ་མི་སྙན་པ་བརྗོད་པོ།།" ཤོག་གྲངས། 73

"མདའ་གཞུ་དང་གཞན་ཆོས་ལ་དགའ་བ་ནི་ཀླ་ཀློ་ཅན་དུ་སྐྱེའོ།།" ཤོག་གྲངས། 73

"རྐང་ལག་ཞ་བ་ནི་མཁན་པོ་དང་བླ་མ་མཐོང་ཡང་མི་ལྡང་བའོ།།" ཤོག་གྲངས། 73

"གཉའ་བ་ཐུང་བ་ནི་བླ་མ་མཐོང་ན་མགོ་གཡོགས་ཏེ་བྲོས་པའོ།།" ཤོག་གྲངས། 74

"བྱང་ཆུབ་ཏུ་སེམས་བསྐྱེད་པ་དང་། སེམས་ཅན་གྱི་དོན་བྱ་བ་དང་། བསྡུ་བའི་དངོས་པོ་བཞིས་བསྡུ་བར་བྱ་བ་དང་། སྦྱིན་པ་ལ་སོགས་པ་ཕ་རོལ་ཏུ་ཕྱིན་པ་རྣམས་སྦྱངས་པ་དང་། ས་དང་ལམ་རྣམས་སྦྱང་ཞིང་བྱང་ཆུབ་ཀྱི་སྤྱོད་པ་སྦྱངས་ནས། ལོག་པའི་དོན་ལ་མངོན་པར་ཞེན་པ་ཡོད་དེ་དེའི་རྒྱུས་ངན་སོང་དུ་སྐྱེའོ། །བཀའ་ལས་འབྱུང་བའི་ཆོས་རྣམས་སྤྱོད་པ་ནི་དེའི་གཉེན་པོའོ།།" ཤོག་གྲངས། 74

"གཞན་གྱི་ཁྲིམ་རྣམས་སུ་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་ལ་ཕྲག་དོག་དང་སེར་སྣ་བྱེད་ན། དེས་དེའི་ཚེ་རིང་ཞིང་དེ་ལས་འཇིགས་པ་ཆེན་པོ་གསུམ་སྐྱེ། གང་ཞེ་ན། སེམས་ཅན་དམྱལ་བར་སྐྱེ་བས་འཇིགས་པ་དང་། དམུས་ལོང་གིས་འཇིགས་པ་དང་། ཡུལ་

མཐའ་འཁོབ་ཏུ་སྐྱེ་བས་འཇིགས་པ་སྡེ་གསུམ་མོ།། ” ཤོག་གྲངས། 75

“དགེ་སློང་མ་སུན་བཏོན་ན་སེམས་ཅན་དམྱལ་བའི་གནས་སུ་མུན་ནག་ཡོད་པར་སྐྱེའོ།།” ཤོག་གྲངས། 75

“སྲོག་བཅད་པས་རལ་གྲིའི་ལོ་མ་ཅན་དུ་སྐྱེའོ། །ཛོན་པ་བྱེད་པས་ཐིག་ནག་ཏུ་སོག་ལེས་འགྲེའོ།།” ཤོག་གྲངས། 75

“འདོད་པ་ལོག་པར་གཡེམ་པས་ཟངས་ཀྱི་ཁང་པ་རབ་ཏུ་འབར་བ་ལ་འཇུག་པ་དང་། ལྕགས་ཀྱི་ཁྲི་རབ་ཏུ་ཚ་བའི་དམྱལ་བར་སྐྱེའོ།།” ཤོག་གྲངས། 76

“ཚང་འཐུངས་ནས་སྨྱོས་པ་ནི་ལྷུར་ཚང་འཐུངས་པའི་སེམས་ཅན་དམྱལ་བར་སྐྱེའོ།། དགེ་འདུན་གྱི་ཞིང་ཏོག་བཀུས་པས་ལྕགས་ཀྱི་ཐུ་ལུམ་འབར་བ་ཟ་བར་སྐྱེའོ། །རྒྱུ་མ་དང་ཞ་ཟོས་པས་ལྷན་ལྷིན་གྱིས་གང་བའི་དམྱལ་བར་སྐྱེའོ། །ཕྲ་མ་བྱས་ཏེ་དཀྲུགས་པས་ལྕགས་ཀྱི་ཐོང་གཤོལ་གྱིས་ལྕེ་རྨོ་བའི་དམྱལ་བར་སྐྱེའོ། །ཚིག་མི་སྙན་བརྗོད་པས་ལྕེ་རབ་ཏུ་འཕྱིན་པའི་དམྱལ་བར་སྐྱེའོ། །བརྫུན་མང་དུ་སྨྲས་པས་ལྕེ་ལ་ལྕགས་ཀྱི་གཟེར་གྱིས་འདེབས་པའི་སེམས་ཅན་དམྱལ་པར་སྐྱེའོ། །སྲོག་བཅད་ནས་ལོག་པའི་ལྷ་ལ་མཆོད་སྦྱིན་བྱས་པས་ལྕགས་ཀྱི་གདུན་གྱིས་བརྡུང་པའི་དམྱལ་བར་སྐྱེའོ།།” ཤོག་གྲངས། 76

འདི་སྐད་དུ།

གང་ཟག་གཉིས་ནི་མ་གདོགས་ཏེ།།
གཅིག་ནི་ཕྱོགས་སྐམས་ཆོས་ལ་སྐྱུར།།
གཉིས་པོ་དེ་ནི་འདོད་ཆེ་བ། ། ཤོག་གྲངས། 77

ཉེས་པར་བྱུང་ན་བཤགས་པར་བྱ། །
སྙིང་རྗེ་བྱམས་པ་ཞུགས་གྱུར་ན། །
ཐར་བྱས་ཉེས་པ་འདི་ཡིས་དག །

བཤགས་ཀྱང་ཕྱིར་ཞིང་མི་སྡོམ་ན། །
བཤགས་ཀྱང་དྲི་མ་འདག་པ་མེད། ། ཤོག་གྲངས། 78

སངས་རྒྱས་ཀྱི་ཞིང་གི་ཡོན་ཏན་བཀོད་པའི་མདོ་ལས།

འཁོར་བའི་མཐའ་ནི་མེད་པ་ལས། །
སྔོན་གྱི་མཐའ་ནི་ཇི་སྲིད་པ། །
སེམས་ཅན་དེ་སྲིད་ཕན་དོན་དུ། །
སྤྱོད་པ་དཔག་ཡས་སྤྱད་པར་བྱ། ། ཤོག་གྲངས། 79

བཅོམ་ལྡན་འདས་ཀྱིས། "དུད་འགྲོའི་སྐྱེ་གནས་སུ་སོང་པ་རྣམས་ལ་སྦྱིན་པ་བཏང་ན་བརྒྱ་འགྱུར་འཐོབ་པར་འགྱུར་རོ། །མི་ཕལ་པ་གཅིག་ལ་བཏང་ན་སྟོང་འགྱུར་འཐོབ་པར་འགྱུར་རོ། །ཚུལ་ཁྲིམས་དང་ལྡན་པའི་དགེ་སློང་ལ་བཏང་ན་ཁྲི་འགྱུར་འཐོབ་པར་འགྱུར་རོ། །དེ་ཉིད་ཆོས་སྨྲ་བ་ལ་བཏང་ན་ཚད་མེད་པ་འཐོབ་པར་འགྱུར་རོ། " ཤོག་གྲངས། 80

"དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དང་། ཕ་མ་དང་། ནད་པ་རྣམས་ལ་ཟས་ཟ་གཅིག་བཏང་ན་འབྲས་བུ་ཚད་མེད་པ་འཐོབ་པར་འགྱུར་རོ།། " ཤོག་གྲངས། 80

འཕགས་པ་རབ་ཏུ་ཞི་བ་རྣམ་པར་ངེས་པའི་ཆོ་འཕྲུལ་གྱི་ཏིང་ངེ་འཛིན་ཞེས་བྱ་བ་ཐེག་པ་ཆེན་པོའི་མདོ་ལས། "བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་བསོད་སྙོམས་བླངས་ཏེ། རིད་པ་དང་། ཞོངས་པ་དང་། སྒྲང་པོ་དང་། སློབ་མ་རྣམས་ལ་བགོས་ཏེ་བྱིན་ན་དགེ་བའི་རྩ་བ་དེས་ཚེ་བརྗེས་ནས་འཁོར་ལོས་སྒྱུར་བའི་རྒྱལ་པོ་རྫུ་འཕྲུལ་ཆེན་པོ་དང་ལྡན་པར་འགྱུར་རོ།།" ཤོག་གྲངས། 81

"དབང་པོ་དྲུག་ཚང་བ་གང་ཡིན་པ་དེ་ནི་ཚུལ་ཁྲིམས་བསྲུངས་པ་ལས་འགྱུར་བ་ཡིན་ནོ།། " ཤོག་གྲངས། 81

འོད་ཟེར་ཀུན་ནས་འཕྱིད་བ་བསྟན་པའི་མདོ་ལས།

རེས་འགའ་འོད་ཟེར་གཅིག་ལས་ནི། །
ཁ་དོག་རྣམ་པ་བཅུ་འབྱུང་བ། །
སོ་སོ་རབ་འབྲིང་ཐ་མ་ཡང་། །
སྦྱིན་པ་ལས་ནི་སྐྱེས་པ་ཡིན། །

རེས་འགའ་འདྲེས་པ་གཅིག་ལས་ནི། །
ཁ་དོག་ཉི་ཤུ་གང་བྱུང་བ། །
སོ་སོ་རབ་འབྲིང་ཐ་མ་ཡང་། །
ཚུལ་ཁྲིམས་བསྲུངས་པ་ལས་སྐྱེས་ཡིན། །ཞེས་གསུངས་སོ།།

ཚུལ་ཁྲིམས་སྡོམ་པའི་དགེ་ཚུལ་དང་། །
རྣམ་དག་ཁྲིམས་འཛིན་དགེ་སློང་དག །
ཟླ་བ་ཕྱེད་ཅིང་གསོ་སྦྱོང་བྱ། །
ཆོས་གོས་བདགས་པ་རྣམས་གྱོན་ཏེ། །
ལྷུང་བཟེད་འཁར་གསིལ་སོགས་བསྐུར་ཞིང་། །
དག་པས་བསོད་སྙོམས་ཡང་བླང་བྱ། །
ལྷ་རྣམས་ཐམས་ཅད་དགའ་འགྱུར་ཏེ། །

གུས་པས་ཐལ་སྦྱར་ཕྱག་འཚལ་ནས། །
ལྷ་རྣམས་ངེས་ཀྱི་མི་འདི་དག །
དེ་ཡི་མངག་གཞུག་བསྒྲུབ་པར་བྱ། །
དཔེར་ན་ལྷ་དབང་བརྒྱ་བྱིན་ལ། །

སུམ་ཅུ་རྩ་གསུམ་ལྷ་གཞན་རྣམས། །
རིམ་གྲོ་གུས་བྱེད་ཚུལ་བཞིན་དུ། །

ཚེ་འདིར་ལེགས་ཉིད་ཐོབ་པ་སྟེ། |
ཚེ་རབས་གཞན་གྱི་བསམ་མི་ཁྱབ། |
རབ་ཏུ་བྱུང་ཞིང་ཚུལ་ཁྲིམས་སྲོམ། |
སངས་རྒྱས་བཀའ་དྲིན་ལན་བསྒྲུབས་ཡིན། |

ཤོག་གྲངས། 81,82

སྡོང་པོ་བཀོད་པའི་མདོ་ལས། "རིགས་ཀྱི་བུ་སེམས་ཅན་གྱི་ཚོགས་ལས་གང་བླ་ན་མེད་པ་ཡང་དག་པར་རྫོགས་པའི་བྱང་ཆུབ་ཀྱི་སེམས་སྨོན་པ་ནི་རྙེད་པར་དཀའོ། །དེ་བས་ཀྱང་སེམས་ཅན་བླ་ན་མེད་པ་ཡང་དག་པར་རྫོགས་པའི་བྱང་ཆུབ་ལས་མངོན་པར་ཞུགས་པ་ནི་ཆེས་རྙེད་པར་དཀའོ།།" ཤོག་གྲངས། 84

དཀོན་མཆོག་ཏ་ལ་ལའི་མདོ་ལས།

གང་དག་རྒྱལ་བ་རྣམས་ཀྱིས་བྱིན་བརླབས་པ། |
དེ་དག་བྱང་ཆུབ་སེམས་བསྐྱེད་དོན་གཉེར་བ། |
གང་དག་བྱང་ཆུབ་དོན་དུ་སེམས་སྐྱེ་བ། |
དེ་དག་དྲང་སྲོང་མཆོག་གི་ཡོན་ཏན་སྒྲུབ། |

ཤོག་གྲངས། 84

འཕགས་པ་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་ལས་ཀྱང་། "བྱང་ཆུབ་སེམས་དེས་མ་ཁྱབ་པའི་ཆོས་ཀྱི་དབྱིངས་དེ་གང་ཡང་མ་མཆིས་སོ། །བྱང་ཆུབ་ཏུ་སེམས་བསྐྱེད་པའི་དགེ་བའི་རྩ་བ་དེས་དུས་གསུམ་དུ་མ་ཁྱབ་པ་ཅུང་ཟད་ཀྱང་མ་མཆིས་སོ་ཞེས་པ་དང་། ཡང་གང་དུ་སེམས་བསྐྱེད་དེ་བསྐྱེད་མ་ཐག་པའི་བསོད་ནམས་ཀྱི་ཕུང་པོ་ནི་རབ་ཏུ་མང་གི་སེམས་ཅན་ཐམས་ཅད་འཁོར་ལོས་སྒྱུར་བ་དང། འཇིག་རྟེན་སྐྱོང་བ་དང་། བརྒྱ་བྱིན་དང་། ཚངས་པ་དང་། ཉན་ཐོས་དང་། རང་སངས་རྒྱས་སུ་གྱུར་པ་རྣམས་ཀྱི་བསོད་ནམས་ཀྱི་ཕུང་པོ་ནི་དེ་ཙམ་མ་ལགས་སོ།། " ཤོག་གྲངས། 84

དེ་ཡང་།

བླ་མ་སྒོམ་ལ་གནས་ཤིང་མཁས། །
ནུས་དང་ལྡན་ལས་བླང་བར་བྱ། ། ཤོག་གྲངས། 85

"ཉན་ཐོས་ཀྱི་རིགས་ཅན་ཉན་ཐོས་ཀྱི་བྱང་ཆུབ་ལ་འགོད་པར་བགྱིའོ། །རང་སངས་རྒྱས་ཀྱི་རིགས་ཅན་རང་སངས་རྒྱས་ཀྱི་ལམ་ལ་དགོད་པར་བགྱིའོ། །བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་རིགས་ཅན་བླ་ན་མེད་པའི་བྱང་ཆུབ་ལ་འགོད་པར་བགྱིའོ།།" ཤོག་གྲངས། 85

"སྦྱིན་པ་ལ་སོགས་པའི་མི་མཐུན་པའི་ཕྱོགས་ཉམས་པ་དང་། རྣམ་པར་མི་རྟོག་པའི་ཡེ་ཤེས་དང་། འདོད་པ་ཐམས་ཅད་རྫོགས་པར་བྱེད་པ་དང་། སེམས་ཅན་ཐམས་ཅད་ཡོངས་སུ་སྨིན་པར་བྱེད་པས་བྱང་ཆུབ་རྣམ་པ་གསུམ་འགྲུབ་བོ།།" ཤོག་གྲངས། 85

ཚོད་ཐྲིར་ཀུན་འབྱེད་པའི་མདོ་ལས།

གང་ཞིག་མདོ་སྡེ་འདི་ལ་རབ་མོས་ཤིང་། །
མི་ཟད་ངོ་བོ་ཉིད་ནི་མངོན་པར་རྟོགས། །
དེས་ནི་ཏིང་འཛིན་མངོན་པར་བསྒྲུབས་པས་ན། །
བླ་མེད་ཡེ་ཤེས་མངོན་བྱེད་དཀའ་བ་མེད། །

ཤོག་གྲངས། 86

ཡང་།

དགེ་སློང་དག་ནི་གང་ཞིག་གིས། །
བླ་མེད་ཡེ་ཤེས་བཙལ་བའི་ཕྱིར། །
ཤིན་ཏུ་དད་པའི་སེམས་ཀྱིས་ནི། །
མདོ་སྡེ་འདི་ལ་གང་དག་བརྩོན། །ཞེས་པ་དང་།
བླ་མེད་ཡེ་ཤེས་གང་ཚོལ་བ། །
འཁོར་བ་དག་ལ་འཇིགས་པ་མེད། །

དེས་ནི་སྡིག་པ་རྣམ་སྦྱངས་ནས། །
ཕན་ཡོན་མཆོག་ནི་ཐོབ་པར་འགྱུར། །

ཤོག་གྲངས། 86

འཕགས་པ་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་ལས། "བདག་གི་དགེ་བའི་རྩ་བ་ཐོག་མ་དང་ཐ་མ་མ་མཆིས་པ་ནས་བགྱིས་པ་ཐམས་ཅད་མཁྱེན་པར་ཡོངས་སུ་བསྔོས་པ་གང་ལགས་པ་དང་། བདག་གི་དགེ་བའི་རྩ་བ་འདུས་བྱས་ཀྱི་ཡོ་བྱད་འཚལ་བས་མངོན་པར་བསྒྲུབས་པ་གང་ལགས་པ་དང་། བདག་གི་དགེ་བའི་རྩ་བ་ཉན་ཐོས་དང་རང་སངས་རྒྱས་ཀྱིས་མངོན་པར་བསྒྲུབས་པའི་དགེ་བའི་རྩ་བ་གང་ལགས་པ་དང་། བདག་གི་དགེ་བའི་རྩ་བ་ལས་བསྒྲུབས་པའི་དུས་ཐམས་ཅད་དུ་བསགས་པ་དེ་བཞིན་གཤེགས་པའི་ཡེ་ཤེས་ཀྱིས་མཁྱེན་པ་གང་ལགས་པ་དེ་དག་ཐམས་ཅད་ཡོངས་སུ་བསྡུས་པའི་བཟླུམས་པར་བསྔོམས་པ་བགྱིའོ།།" ཤོག་གྲངས། 90

"དེ་དག་ཐམས་ཅད་བསྡུས་ནས་བླ་ན་མེད་པ་ཡང་དག་པར་རྫོགས་པའི་བྱང་ཆུབ་ཏུ་བསྔོས་པའོ།" ཤོག་གྲངས། 90

འཕགས་པ་འོད་ཟེར་བཀྱེ་བ་བསྟན་པའི་མདོ་ལས།

གཟུགས་མེད་འགྲོ་དང་འོང་བ་མེད། །
ཕྱོགས་མཚམས་ཕྱོགས་ཀྱང་ཡོད་མ་ཡིན། །
མཚན་མ་མེད་ཅིང་བརྗོད་དང་བྲལ། །
སྨྲས་པ་དག་ལས་ཡང་དག་འདས། །
བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔས་བསྒྲུབ་བྱས་ན། །
མཐར་ཐུག་བསིལ་བ་འཐོབ་པར་འགྱུར། །ཞེས་པ་དང་།

ཡང་།

དགེ་བའི་སྟོབས་ཀྱི་མཐུ་ཡིས་ནི། །
ཉོན་མོངས་རབ་བཅོམ་ཉེར་ཞིར་གནས། །

ཁྱད་འཕགས་ཡོན་ཏན་འཐོབ་པར་བྱེད།
ཡོན་ཏན་དང་ནི་ཤེས་རབ་དག
ཤིན་ཏུ་རྒྱ་ཆེ་རྒྱ་མཚོ་འདྲ།

བཟོད་པ་དག་ནི་སླུབ་པར་བྱེད།
སེམས་ནི་རབ་བརྟེ་གཡོ་མེད་འགྱུར།
བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་རྟག་ཏུ་སློམ།
མཁས་པ་དག་གིས་རབ་ཏུ་བསྔགས།

ཤོག་གྲངས། 91-92

དཀོན་མཆོག་ཏ་ལ་ལས་ཀྱང་།

དམུས་ལོང་གིས་ནི་ཉི་མ་མི་མཐོང་ཡང་།
དེ་མེད་མ་ཡིན་འཇིག་རྟེན་ཀུན་ཏུ་འཆར།
མིག་དང་ལྡན་པས་ཤར་བར་ཤེས་གྱུར་ནས།
ཀུན་ཀྱང་སོ་སོ་རང་གི་ལས་ལ་འཇུག

ཤོག་གྲངས། 99

སེམས་དཀྱིལ་ཡི་དྭགས་དུད་འགྲོ་དང་།
ཟླ་ཟློ་འདུ་ཤེས་མེད་ལྷ་དང་།
ལོག་ལྟ་སངས་རྒྱས་ལ་མི་འདུན།
ལྐུགས་པ་མི་ཁོམ་གནས་བརྒྱད་དོ།

ཤོག་གྲངས། 101

ཛ་སྐད་དུ། "བྱམས་པ་ཆོས་བཞི་པོ་འདི་དག་ནི་སྡིག་པ་བྱས་ཤིང་བསགས་པ་རྣམས་ཀུན་ནས་བསྲབས་པར་འགྱུར་བ་སྟེ། བཞི་གང་ཞེ་ན། རྟེན་གྱི་སྟོབས་དང་། རྣམ་པར་སུན་འབྱིན་པའི་སྟོབས་དང་། གཉེན་པོ་ཀུན་ཏུ་སྤྱོད་པའི་སྟོབས་དང་། སོར་ཆུད་པའི་སྟོབས་སོ། །དེས་ན་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་གང་དག་སྡིག་པའི་ལས་ཟད་པར་

འདོད་པ་དག་གིས་མདོ་འདི་མང་དུ་ཡིད་ལ་བྱའོ།།ཁ་ཏོན་དུ་བྱའོ།།" ཤོག་གྲངས། 104

དེ་སྐད་དུ་ཡང་**བཅོམ་ལྡན་འདས་མ་ལས།**

བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་གང་ཞིག་འདོད་ཡོན་ལྔ་སྤྱོད་ཀྱང་། །
སངས་རྒྱས་ཆོས་དང་འཕགས་པའི་དགེ་འདུན་སྐྱབས་སོང་སྟེ། །
སངས་རྒྱས་འགྲུབ་བྱ་སྙམ་དུ་ཀུན་མཁྱེན་ཡིད་བྱེད་ན། །
མཁས་པ་ཚུལ་ཁྲིམས་ཕ་རོལ་ཕྱིན་གནས་རིག་པར་བྱ། །

གལ་ཏེ་བསྐལ་པ་བྱེ་བར་དགེ་བའི་ལས་ལམ་བཅུ། །
སྤྱོད་ཀྱང་དགྲ་བཅོམ་རང་རྒྱལ་ཉིད་དུ་འདོད་སྐྱེད་ན། །
དེ་ཚེ་ཚུལ་ཁྲིམས་སྐྱོན་བྱུང་ཚུལ་ཁྲིམས་ཉམས་པ་ཡིན། །
སེམས་བསྐྱེད་དེ་ནི་ཕམ་པ་ལས་ཀྱང་ཤིན་ཏུ་ལྕི། །

ཤོག་གྲངས། 107

སློབ་དཔོན་ཞི་བའི་ལྷས་ཀྱང་།

ཉོན་མོངས་ཤེས་བྱའི་སྒྲིབ་པ་ནི། །
མུན་པའི་གཉེན་པོ་སྟོང་པ་ཉིད། །
མྱུར་དུ་ཐམས་ཅད་མཁྱེན་འདོད་པས། །
ཅི་ཕྱིར་དེ་ནི་སྒོམ་མི་བྱེད། །

ཤོག་གྲངས། 108

"སྦྱིན་པ་ལས་བྱུང་བ་དང་། ཚུལ་ཁྲིམས་ལས་བྱུང་བ་དང་། བསྒོམ་པ་ལས་བྱུང་བའོ།།" ཤོག་གྲངས། 105

སློབ་དཔོན་དབྱིག་གཉེན་གྱིས་ཀྱང་། "བྱང་ཆུབ་ཆེན་པོ་འཐོབ་པའི་རྒྱུ་ནི། སྡིག་པ་ཐམས་ཅད་ནི་སོ་སོར་བཤགས་སོ། །བསོད་ནམས་ཐམས་ཅད་ཀྱི་རྗེས་སུ་ཡི་རང་ངོ་།།

སངས་རྒྱས་ཐམས་ཅད་ལ་གསོལ་བ་འདེབས་སོ། །བདག་གི་ཡེ་ཤེས་བླ་ན་མེད་པའི་
མཆོག་ཏུ་གྱུར་ཅིག" ཤོག་གྲངས། 110

སློབ་དཔོན་ཞི་བའི་ལྷས་ཀྱང་།

ཉིན་དང་མཚན་མོ་ལན་གསུམ་དུ། །
ཕུང་པོ་གསུམ་པ་གདོན་བྱ་ཞིང་། །
རྒྱལ་དང་བྱང་ཆུབ་སེམས་བརྟེན་པས། །
ལྟུང་བའི་ལྷག་མ་དེས་ཞི་བྱ། །

ཤོག་གྲངས། 112

ཁ་སྐོང་ལྔ་བ་ཐབས་དྲུག་པ།

གླིང་བརྗོད་དུ་དྲངས་པའི་མདོ་བསྟན་དང་གསུང་འབུམ་ཁག་གི་མཚན་བྱང་།

བསྟན་བཅོས་ནས་དྲངས་པའི་ཆོས་ཚན་མཚན་བྱང་།

གསུང་འབུམ་ནས་དྲངས་པའི་ཆོས་ཚན་ཁག

ཆོས་འབྱུང་ཁག་ནས་དྲངས་པའི་ཆོས་ཚན་མཚན་བྱང་།

ཁ་སྐོང་ལྷན་ཐབས་བདུན་པ།

གཞི་ཁྲིམས་བྱེད་ཡུལ་གྱི་ཆོས་ཚན་ཁག་གི་མཚན་བྱང་།

མདོ་རྒྱུད་ཀྱི་ཁོངས་སུ་གཏོགས་པའི་ཆོས་ཚན།

དཀོན་མཆོག་ཏ་ལ་ལའི་མདོ།	Toh-145
དགེ་བ་དང་མི་དགེ་བ་ལས་ཀྱི་རྣམ་པར་སྨིན་པ་བསྟན་པའི་མདོ།	Toh-355
རྒྱ་ཆེར་རོལ་པའི་མདོ།	Toh-95
ཆེད་དུ་བརྗོད་པའི་ཚོམས།	Toh-326
འཇམ་དཔལ་རྩ་རྒྱུད།	Toh-543
ཏིང་ངེ་འཛིན་རྒྱལ་པོའི་མདོ།	Toh-127
ཐར་པ་ཆེན་པོ་ཕྱོགས་སུ་རྒྱས་པའི་འགྱོད་ཚངས་ཀྱི་སྡིག་སྦྱོང་གི་མདོ།	Toh-264
ཐབས་མཁས་པའི་མདོ།	Toh-261
སྡོང་པོ་བཀོད་པའི་མདོ།	Toh-44
དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་གཟུགས་བརྙན་གྱི་བཞག་པའི་ཕན་ཡོན།	Toh-320
འདུལ་བ་གཞུང་བླ་མ།	Toh-7A
དམ་ཚིག་གསུམ་གྱི་རྒྱལ་པོའི་མདོ།	Toh-502
འདུལ་བ་གཞི།	Toh-1
འཕགས་པ་ཆོས་བཞི་བསྟན་པའི་མདོ།	Toh-249
འཕགས་པ་རྟོགས་པ་ཆེན་པོ་ཡོངས་སུ་རྒྱས་པའི་མདོ།	Toh-265
འཕགས་པ་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ།	Toh-284
འཕགས་པ་འོད་ཟེར་ཀུན་ནས་བཀྱེ་བ་བསྟན་པའི་མདོ།	Toh-55
འཕགས་པ་ཉེ་བར་འཁོར་གྱིས་ཞུས་པའི་མདོ།	Toh-68
འཕགས་པ་དྲག་ཤུལ་ཅན་གྱིས་ཞུས་པའི་མདོ།	Toh-63

འཕགས་པ་མི་རྟོག་ཚོགས་ཀྱི་མདོ། Toh-266
འཕགས་པ་བཟང་པོ་སྤྱོད་པའི་སྨོན་ལམ་གྱི་རྒྱལ་པོ། Toh-44
འཕགས་མ་སྒྲོལ་མ་ཀུ་རུ་ཀུལླེའི་རྟོག་པ། Toh-437
བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་སྡེ་སྣོད། Toh-56
བློ་གྲོས་རྒྱ་མཚོས་ཞུས་པའི་མདོ། Toh-152
མགྷ་བཟང་མོའི་རྟོགས་བརྗོད། Toh-346
མི་རྟོག་བརྟེགས་པའི་མདོ། Toh-516
ཡོན་ཏན་རིན་པོ་ཆེ་སྡུད་པ། Toh-13
རབ་ཏུ་ཞི་བ་རྣམ་པར་ངེས་པའི་ཆོ་འཕྲུལ་གྱི་ཏིང་ངེ་འཛིན་གྱི་མདོ། Toh-129
ལེགས་ཉེས་ཀྱི་རྒྱུ་དང་འབྲས་བུ་བསྟན་པ་ཞེས་བྱ་བ་ཐེག་པ་ཆེན་པོའི་མདོ། Toh-354
ལང་ཀར་གཤེགས་པའི་མདོ། Toh-107
ཤེས་རབ་ཀྱི་ཕ་རོལ་ཏུ་ཕྱིན་པའི་རྡོ་རྗེ་གཅོད་པ། Toh-16
ས་བཅུ་པའི་མདོ། Toh-44
སངས་རྒྱས་ཀྱི་ཞིང་གི་ཡོན་ཏན་བཀོད་པའི་མདོ། Toh-59
གསང་བ་བསམ་གྱིས་མི་ཁྱབ་པའི་མདོ། Toh-47

བསྟན་འགྱུར་གྱི་ཁོངས་སུ་གཏོགས་པའི་གཞུང་ཚན།

སྐྱེས་རབས་སོ་བཞི་པ། དཔའ་བོ། Toh-4150
ཁྱད་པར་དུ་འཕགས་པའི་བསྟོད་པ། མཐོ་བཙུན་གྲུབ་རྗེ། Toh-1109
ཁྱད་པར་དུ་འཕགས་པའི་བསྟོད་པའི་རྒྱ་ཆེར་བཤད་པ། ཤེས་རབ་གོ་ཆ། Toh-1110
ཆོས་འཁོར་གླིང་བོད་སེལླ་སཾཧྲ། ཀི་རྟེར་ནས་པར་བསྐྲུན། ༡༩༩༨
བརྒྱད་སྟོང་གི་འགྲེལ་པ་སྙིང་པོ་མཆོག རིན་ཆེན་འབྱུང་གནས་ཞི་བ། Toh-3803
འགྲེལ་པ་དོན་གསལ། སེང་གེ་བཟང་པོ། Toh-3793
འགྲེལ་ཆེན་དྲི་མེད་འོད། སྤྱན་རས་གཟིགས་དབང་ཕྱུག Toh-1347
བརྒྱད་སྟོང་གི་འགྲེལ་པ་རྒྱན་སྣང་། སེང་གེ་བཟང་པོ། Toh-3791

ཅིག་ཅར་ལ་འཇུག་པའི་རྣམ་པར་མི་རྟོག་པའི་སྒོམ་དོན།	ཝི་མལ་མི་ཏྲ།	Toh-3910
ཆེད་དུ་བརྗོད་པའི་ཚོམས་ཀྱི་རྣམ་པར་འགྲེལ་པ།	ཤེས་རབ་གོ་ཆ།	Toh-4100
ཆོས་མངོན་པ་མཛོད།	སློབ་དཔོན་དབྱིག་གཉེན།	Toh-4090
ཆོས་ཡང་དག་པར་སྡུད་པ།	སློབ་དཔོན་ཀླུ་སྒྲུབ། ལྷ་ཆ་མཆོ་སློབ་ཁང་ནས་པར་བསྐྲུན།	༡༩༨༥
སྡོམ་པ་ཉི་ཤུ་པའི་འགྲེལ་པ།	ཞི་བ་འཚོ།	Toh-4082
འདུལ་བ་གཞི་རྒྱ་ཆེར་འགྲེལ་པ།	དགེ་ལེགས་བཤེས་གཉེན།	Toh-4113
འདུལ་བ་རྣམ་པར་འབྱེད་པའི་ཚིག་རྣམ་པར་བཤད་པ།	འདུལ་བ་ལྷ།	Toh-4114
མདོ་སྡེ་རྒྱན་གྱི་འགྲེལ་བཤད།	བློ་གྲོས་བརྟན་པ།	Toh-4034
རྣམ་པར་བཤད་པ་རིག་པའི་བཤད་པ།	ཡོན་ཏན་བློ་གྲོས།	Toh-4069
དཔལ་གསང་བ་ཐམས་ཅད་ཀྱི་སྤྱིའི་ཆོ་གའི་སྙིང་པོ་རྒྱན།	འཇམ་དཔལ་གྲགས་པ།	Toh-2490
ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་སྒྲུབ་ཐབས།	ཀྲྀཥྞ་པ།	Toh-4008
བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་ལྟུང་བ་བཤགས་པའི་འགྲེལ་པ།	སློབ་དཔོན་ཀླུ་སྒྲུབ།	Toh-4005
བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་ལྟུང་བ་བཤགས་པ་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་བསླབ་པའི་རིམ་པ།	སློབ་དཔོན་ཛེ་ཏཱ་རི།	Toh-4006
བྱང་ཆུབ་ཀྱི་སྤྱོད་པ་ལ་འཇུག་པའི་དཀའ་འགྲེལ།	ཤེས་རབ་འབྱུང་གནས་བློ་གྲོས།	Toh-3872
བྱང་ཆུབ་ལམ་གྱི་སྒྲོན་མའི་དཀའ་འགྲེལ།	ཇོ་བོ་རྗེ།	Toh-3948
བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་སྡོམ་པ་ཉི་ཤུ་པ།	སློབ་དཔོན་ཙནྡྲ་གོ་མི།	Toh-4081
བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་སྤྱོད་པ་ལ་འཇུག་པ།	སློབ་དཔོན་ཞི་བ་ལྷ།	Toh-3871
བྱང་ཆུབ་ཀྱི་སྤྱོད་པ་ལ་འཇུག་པའི་འགྲེལ་པ་རྟོགས་པར་དཀའ་བའི་གནད་གདན་ལ་དབབ་པ།	ཀྲྀཥྞ་པ།	Toh-3875
རྩ་བ་ཤེས་རབ།	ཀླུ་སྒྲུབ།	Toh-3824
ཞིན་ལོག་སྒྲོན་མ།	ཀླུ་སྒྲུབ།	Toh-3729
ལས་ཀྱི་སྒྲིབ་པ་རྣམ་པར་སྦྱོང་བའི་ཆོ་ག་བཤད་པ།	ཇོ་བོ་རྗེ།	Toh-4007
བཤེས་པའི་སྤྲིངས་ཡིག	ཀླུ་སྒྲུབ།	Toh-4182
བསླབ་བྱ་མི་རྟོག་གི་སྐེ་མ།	བཻརོཙནརཀྵིཏ།	Toh-3943

བསླབ་པ་ཀུན་ལས་བཏུས་པ། སློབ་དཔོན་ཞི་བ་ལྷ། Toh-3940
སངས་རྒྱས་ཀྱི་མཚན་འབུམ། ཇོ་བོ་རྗེ། གཞུངས་བསྡུས། བོད། "ཨེ" ཧྲ་ས་བོད་ཀྱི་ཤེས་
རིག་པར་ཁང་།
ཆོས་མངོན་པ་མཛོད་ཀྱི་རང་འགྲེལ། སློབ་དཔོན་དབྱིག་གཉེན། ལྷ་ཚ་དགེ་ལྡན་སྐྱིད་ལས་ཁང་ནས་
དཔར་བསྐྲུན། ༡༩༩༧

གསུང་འབུམ་གྱི་ཁོངས་སུ་གཏོགས་པའི་ཆོས་ཚན།

བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་ལྟུང་བ་བཤགས་པའི་འགྲེལ་པ་མཐོང་བ་དོན་ལྡན། སངས་རྒྱས་ཡེ་
ཤེས་ཞབས། ནོ་བཟང་དགོངས་རྒྱན། དེབ་གྲངས། ༧ འབྲས་སྤུངས་བློ་གླིང་དཔེ་མཛོད་ཁང་ནས་དཔར་
བསྐྲུན། ༡༩༩༦

ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་འདོན་ཐབས། ས་པཎ་ཀུན་དགའ་རྒྱལ་མཚན། གངས་ཅན་རིག་མཛོད། ༣༥
གླེགས་བམ་གསུམ་པ། བོད་ལྗོངས་བོད་ཡིག་དཔེ་རྙིང་དཔེ་སྐྲུན་ཁང་། ༡༩༩༣

ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་སྒྲུབ་ཐབས་བྱིན་རླབས་ཀྱི་ཆར་འབེབས། ལྷོ་བྲག་གྲུབ་ཆེན་ནམ་མཁའ་རྒྱལ་
མཚན། ཧྲ་ས་བོད་ཀྱི་དཔེ་མཛོད་ཁང་། གསུང་འབུ་བོད། "པ" ཆོས་ཚན་ཨང་༩༠༦༩

ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པ། རྗེ་བཙུན་དྭགས་ནཱ་ནཱ། གསུང་འབུམ་བོད། "པ" ལ་དྭགས་ནས་དཔར་
བསྐྲུན། ༡༩༨༥

ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་ཊཱི་ཀཱ་མདོར་བསྡུས་པ། ཡང་ན། སངས་རྒྱས་སུམ་ཅུ་སོ་ལྔའི་མཚན་
གྱི་ཕན་ཡོན། རྒྱལ་ཚབ་དར་མ་རིན་ཆེན། གསུང་འབུམ། བོད། "ཀ" སོག་པོ་གུ་རུ་དེལྷས་ཕྱོགས་
བསྒྲིགས་མཛད། རྒྱ་གར་གྱི་རྒྱལ་ས་དིལླི་གསར་པར་དཔར་བསྐྲུན། ༡༩༧༨

སངས་རྒྱས་སུམ་ཅུ་སོ་ལྔའི་སྒྲུབ་ཐབས་ཀྱི་ཆོ་ག་ལྟུང་བའི་མུན་སེལ། རྗེ་གུང་ཐང་པ་བསྟན་
པའི་སྒྲོན་མེ། གསུང་འབུམ། བོད། "ཛ" ལཱ་ཧུ་ལི་པར་ཁང་ནས་པར་བསྐྲུན། དིལླི། ༡༩༧༥

བཅོམ་ལྡན་བདེ་བར་གཤེགས་པ་སུམ་ཅུ་སོ་ལྔ་ལ་བརྟེན་ནས་ལྟུང་བ་བཤགས་པའི་ཚིག་གཞན་ཕན་ཉི་མའི་འོད་ཟེར། ཐུའུ་བཀྭན་བློ་བཟང་ཆོས་ཀྱི་ཉི་མ། གསུང་འབུམ། པོད། "ང" ཇཡ་པར་ཁང་ནས་དཔར་བསྐྲུན། ༡༩༦༩

བདེ་བར་གཤེགས་པ་སུམ་ཅུ་རྩ་ལྔ་ལ་བསྟོད་པའི་རབ་ཏུ་བྱེད་པ་གཞན་གྱི་རྒྱ་ཆེ་རྒྱུན། དངུལ་ཆུ་ཐོན་རྒྱ། གསུང་འབུམ། "ག" བྱམས་པ་འོད་ཟེར་གྱིས་ཕྱོགས་བསྒྲིགས་མཛད། རྒྱ་གར་གྱི་རྒྱལ་ས་དིལླི་གསར་པར་དཔར་བསྐྲུན། ༡༩༧༣

སྲི་བཤགས་ཀྱི་ཟིན་བྲིས། དབྱངས་ཅན་གྲུབ་པའི་རྡོ་རྗེ། གསུང་འབུམ་པོད། "ག" བྱམས་པ་འོད་ཟེར་གྱིས་ཕྱོགས་བསྒྲིགས་མཛད། རྒྱ་གར་གྱི་རྒྱལ་ས་དིལླི་གསར་པར་དཔར་བསྐྲུན། ༡༩༧༣

བྱང་ཆུབ་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་དོན་གྱི་འགྲེལ་ཟིན་བདུད་རྩིའི་རྒྱ་རྒྱུན། སྨན་སྡོང་མཚམས་པ་རིན་པོ་ཆེ་ཀརྨ་ངེས་དོན་འཕྲིན་ལས། བརྩོན་འགྲུས་སེང་གེས་ཕྱོགས་བསྒྲིགས་མཛད། པར་ནས་དཔར་བསྐྲུན། ཧིམྺཙལ་མངའ་སྡེ། ༡༩༧༥

སངས་རྒྱས་སོ་ལྔའི་སྐུ་མདོག་ཕྱག་མཚན་བསྟན་པ་གནས་བརྟན་བཟང་སྐྱོང་པས་བཀོད་པ་དང་ལྷ་སྐུའི་ཕྱག་ཚད་གཟུགས་བརྙན་ལེགས་པར་ལྟ་བའི་མེ་ལོང་། རྗེ་ཙོང་ཁ་པ་བློ་བཟང་གྲགས་པའམ་སློབ་མ་བཟང་སྐྱོང་། གསུང་འབུམ། པོད། "ད" སོག་པོ་གུ་རུ་དེཝས་ཕྱོགས་བསྒྲིགས་མཛད། རྒྱ་གར་གྱི་རྒྱལ་ས་དིལླི་གསར་པར་དཔར་བསྐྲུན། ༡༩༧༨

བྱང་ཆུབ་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་ཚིག་ཞིན་དུ་བསྡུས་པ་ལས་སྒྲིབ་རྣམ་སྦྱོང་། འབྲི་གུང་པ་ཤཱཀྱའི་དགེ་སློང་བསྟན་འཛིན་ཆོས་ཀྱི་བློ་གྲོས།

ཏ་ཕག་ཡིད་བཞིན་ནོར་བུ་ལས། སྒྲུབ་ཐབས་ཕྱི་ནང་གསང་གསུམ། གསུང་འབུམ་པོད། "ག" ཨོ་རྒྱན་ལས་འགྲོ་གླིང་པའམ་རིག་འཛིན་འཇའ་མཚོན་སྙིང་པོ། པདྨ་ནོར་བུ་རིན་པོ་ཆེས་རྒྱ་གར་ལྷོ་ཕྱོགས་བྲིལ་ཀོབ་གཞིས་ཁོངས་སྙིང་མའི་དགོན་པ་ནས་པར་བསྐྲུན། ༡༩༩༥

རྗེ་གསང་བའི་རྣམ་ཐར། ཤར་བཀྲིས་དཔལ་ལྡན། ཞལ་འདོན་ཕྱོགས་བསྡེབས། ལྷ་ཆ་དགེ་ལྡན་གྱི་ལས་ཁང་། ༡༩༩༩

བཀའ་གདམས་ཕ་ཆོས། འབྲོམ་སྟོན་པ། མཚོ་སྔོན་མི་རིགས་དཔེ་སྐྲུན་ཁང་། ༡༩༩༣

བཀའ་གདམས་བུ་ཆོས། ཇོ་བོ་རྗེ། མཚོ་སྔོན་མི་རིགས་དཔེ་སྐྲུན་ཁང་། ༡༩༩༣

ཚ་ཚའི་ཆོ་ག རྒྱལ་བ་སྐུ་ཕྲེང་ལྔ་པ། གསུང་འབུམ། པོད། "ཇ" འབྲས་ལྗོངས་ཉམས་ཞིབ་སློབ་གཉེར་ཁང་། ༡༩༩༥

ཡོན་སྦྱོང་གི་ཆོ་ག་སྒྲིབ་པའི་མུན་སེལ། རྗེ་གུང་ཐང་བསྟན་པའི་སྒྲོན་མེ། གསུམ་འབུམ། པོད། "ཇ" ལྷ་མི་པར་ཁང་ནས་དཔར་བསྐྲུན། དིལླི། ༡༩༤༥

སྡོམ་གསུམ་རབ་དབྱེ། ཆོས་རྗེ་ཀུན་དགའ་རྒྱལ་མཚན། གངས་ཅན་རིག་མཛོད། ༣༥ གླེགས་བམ་གསུམ་པ། བོད་ལྗོངས་བོད་ཡིག་དཔེ་རྙིང་དཔེ་སྐྲུན་ཁང་། ༡༩༩༣

ལམ་རིམ་རྣམ་གྲོལ་ལག་བཅངས། སྐྱབས་རྗེ་ཕ་བོང་ཁ་བ། དགའ་ཤར་དཔེ་མཛོད་ཁང་ནས་དཔར་བསྐྲུན། ༡༩༩༤

ལམ་རིམ་བརྗོད་བྱང་། ཚེ་ཏན་ཞབས་དྲུང་། མཚོ་སྔོན་མི་རིགས་དཔེ་སྐྲུན་ཁང་། ༡༩༩༠

ཀློ་བཟང་དགོངས་རྒྱན་མུ་ཏིག་ཕྲེང་མཛེས། དེབ་གྲངས། ༧ འབྲས་སྤུངས་ཀློ་གླིང་དཔེ་མཛོད་ཁང་ནས་པར་བསྐྲུན། ༡༩༩༦

གངས་ཅན་རིག་མཛོད། དེབ་ཨང་། ༣༥ བོད་ལྗོངས་བོད་ཡིག་དཔེ་རྙིང་དཔེ་བསྐྲུན་ཁང་། ༡༩༩༣

ཟབ་དང་རྒྱ་ཆེ་བའི་དམ་པའི་ཆོས་ཐོབ་ཡིག་རིན་ཆེན་དབང་གི་རྒྱལ་པོ་དེ་ཤལ། རྒྱལ་མཆོག་སྐལ་བཟང་རྒྱ་མཚོ། གསུང་འབུམ། པོད། "ཀ" དེབ་ཨང་། ༡༡ འབྲས་ལྗོངས་ནས་དཔར་བསྐྲུན། ༡༩༨༣

ཡོངས་འཛིན་སྟག་བྲག་རིན་པོ་ཆེའི་གསན་ཡིག གསུང་འབུམ། པོད། "ཀ"

གྲུབ་མཐའ་ཐུབ་བསྟན་ལྷུན་པོའི་མཛེས་རྒྱན། ལྕང་སྐྱ་རོལ་པའི་རྡོ་རྗེ། ཀྲུང་གོ་བོད་ཀྱི་ཤེས་རིག་དཔེ་སྐྲུན་ཁང་། ༡༩༨༩

སྤྱོད་འཇུག་གི་འགྲེལ་བཤད་རྒྱས་སྤྲས་ཡོན་ཏན་བུམ་བཟང་། ཐུབ་བསྟན་ཆོས་ཀྱི་གྲགས་པ། ཀྲུང་གོ་བོད་ཀྱི་ཤེས་རིག་དཔེ་སྐྲུན་ཁང་། ༡༩༨༧

ཤེས་བྱ་ཀུན་ཁྱབ་མཛོད། ཀོང་སྤྲུལ་ཡོན་ཏན་རྒྱ་མཚོ། མི་རིགས་དཔེ་སྐྲུན་ཁང་། ༡༩༨༥

ཞལ་འདོན་ཕྱོགས་བསྒྲིབས། ལྷ་ས་དགེ་ལྡན་སྤྱི་ལས་ཁང་། ༡༩༩༩

གསུང་འབུམ་དཀར་ཆག དགེ་ལྡན་རྒྱང་པའི་གསུང་འབུམ་དཔེ་ཐོ། བོད་ལྗོངས་མི་དམངས་དཔེ་སྐྲུན་ཁང་། ༡༩༩༠

ཤེས་བྱའི་གཏེར་མཛོད། དཀར་ཆག སྔོད་ཆ་དང་བར་ཆ། སི་ཁྲོན་མི་རིགས་དཔེ་སྐྲུན་ཁང་། ༡༩༨༨

དབུ་མ་རིན་པོ་ཆེ་ཕྲེང་བའི་རྩ་བ་དང་རྒྱ་གར་གྱི་མཁས་པ་མི་ཕམ་བཤེས་གཉེན་གྱིས་མཛད་པའི་འགྲེལ་པ། ཞུ་སྒྲིག་པ། དགེ་བཤེས་ངག་དབང་བསམ་གཏན། ལྷ་ས་མགོ་སློབ་ཁང་ནས་དཔར་བསྐྲུན། ༡༩༩༦

ཆོས་འབྱུང་དང་རྣམ་ཐར་གྱི་ཁོངས་སུ་གཏོགས་པའི་ཆོས་ཚན།

གངས་ཅན་མཁས་གྲུབ་རིམ་བྱོན་མིང་མཛོད། ཀོ་ཞུལ་གྲགས་པ་འབྱུང་གནས་དང་། རྒྱལ་བ་བློ་བཟང་མཁས་གྲུབ། མཚོ་སྔོན་མི་རིགས་པར་ཁང་ནས་པར་བསྐྲུན། ༡༩༩༣

ཛོ་བོ་རྗེའི་རྣམ་ཐར་རྒྱས་པ་ཡོངས་གྲགས། མཆིམས་ནམ་མཁའ་དཔལ། མཚོ་སྔོན་མི་རིགས་དཔེ་སྐྲུན་ཁང་། ༡༩༩༣

བུ་སྟོན་ཆོས་འབྱུང་། བུ་སྟོན་རིན་ཆེན་གྲུབ། ཀྲུང་གོའི་བོད་ཀྱི་ཤེས་རིག་དཔེ་སྐྲུན་ཁང་། ༡༩༩༡

ཏཱ་རཱ་ནཱ་ཐའི་ཆོས་འབྱུང་། རྗེ་བཙུན་ཏཱ་རཱ་ནཱ་ཐ། ལྷ་ས་བོད་དགོན་ནས་དཔར་བསྐྲུན། ༡༩༩༨

ཐུའུ་བཀྭན་ཆོས་ཀྱི་ཉི་མའི་གྲུབ་མཐའ། ཐུའུ་བཀྭན་བློ་བཟང་ཆོས་ཀྱི་ཉི་མ། ཀན་སུའུ་མི་རིགས་དཔེ་སྐྲུན་ཁང་། ༡༩༨༥

དེབ་ཐེར་སྔོན་པོ། འགོས་ལོ་གཞོན་ནུ་དཔལ། སི་ཁྲོན་མི་རིགས་དཔེ་སྐྲུན་ཁང་། ༡༩༨༤

ཆག་ཆོས་རྗེ་དཔལ་གྱི་རྣམ་ཐར། ཆོས་དཔལ་དར་དཔྱང་།

བཀའ་གདམས་ཆོས་འབྱུང་། རྗེ་བཙུན་གྲགས་པ་རྒྱལ་མཚན། མཚོ་སྔོན་མི་རིགས་དཔེ་སྐྲུན་ཁང་། ༡༩༩༡

རྗེའི་རྣམ་ཐར་ཆེན་མོ། རྒྱལ་དབང་ཆོས་རྗེ། ལྷ་ཆ་དགེ་ལྡན་སྤྱི་ལས་ཁང་ནས་དཔར་བསྐྲུན། ༢༠༠༠

तृतीय परिशिष्ट

मूलसूत्र तथा तीन टीकाओं में स्थित श्लोकानुक्रमणिका

चतुर्थ परिशिष्ट

आर्यत्रिस्कन्धसूत्र की तीन टीकाओं में उद्धृत ग्रन्थों की सूची

पञ्चम परिशिष्ट

तीन टीकाओं में उद्धृत आगमों की सूची

यथोक्तम्—

ऋजु:स्थित्वा च सम्पश्येन्महती सैव देशना ।
द्रष्टव्यं भूततो भूतं भूतदर्शी विमुच्यते ।। (पृ० सं० १२३)

उक्तम् (शुभाशुभकार्यकारणभावनिर्देशसूत्रम्, शुभाशुभकर्मविपाक निर्देशसूत्रं च)

''ये स्तूपं विहारं वा विनाशयन्ति गुप्तरूपेण त्रिरत्नसम्बद्धधनस्योपयोगं वा कुर्वन्ति, ते मरणादनन्तरम् (अवश्यं) अवीच्यादिमहानरकेषु पतिष्यन्तीति'' उक्तम्। (पृ० सं० १५२)

''संघिकस्य धनस्यापहारकाः (मरणानन्तरं) अरघट्टवाहकवृषभानां गर्दभानां वा योनौ जन्म ग्रहीष्यन्ति। संघसमीपात् पूर्वं पुनः पुनः धनं याचित्वा परोक्षे पश्चाद् दोषमारोपयन्तः (मरणानन्तरं) कपोतयौनौ जन्म प्रतिगृह्णन्ति। संघभोजकाः (मरणादनु) शाकपत्रादिषु कीटयोनौ जन्म गृह्णन्तीति'' उक्तम्। (पृ० सं० १५२)

''य एवं निरन्तरम् आचरन्ति ते नरकेषु गमिष्यन्ति, तिर्यक्षु (जन्म) ग्रहीष्यन्ति, अन्तिमशः प्रेतेषु जन्म ग्रहीष्यन्ति''। (पृ० सं० १५२)

''काममिथ्याचारिणस्तु (स्व-) पत्नीं अन्योपभोग्यां करिष्यन्ति, सर्वदा च स्वपत्न्या सह कलहो भविष्यन्ति, जानन्तश्च मित्रतां न करिष्यन्ति''। (पृ० सं० १५३)

''प्राणातिपातेन अल्पायुष्कतां च बहुग्लानतां च अनुभविष्यति। अदत्तादानेन च दारिद्र्य व्यसनं चानुभविष्यति, स्वसम्पत्तौ अस्वतन्त्रवृत्तिश्च भविष्यति (तत्सम्पत्तेश्च) अन्यैः उपभोग करिष्यते''। (पृ० सं० १५३)

''मृषावादेन बहुलतया निन्दितो भविष्यति, विसंवादश्च अन्यैः सह भविष्यतीति। पैशुन्येन अशुचिपरिवारतां प्रेयसीविच्छेदं चानुभविष्यति। पारुष्येण अप्रियशब्दश्रवणं उच्चारणमात्रेण च विवादो भविष्यति। सम्भिन्नप्रलापेन तावद् अविश्वसनीयः, अन्येषां (शब्दानाम्) अनवबोधकश्च भविष्यति। अभिध्यया लुब्धोऽसन्तुष्टश्च भूत्वा परिगवेषमाणोऽपि (अर्थं) न प्राप्स्यति। व्यापादेन

अन्येषां (हान्ये) छिद्रान्वेषी अन्येषां कृते लाभविघातको भविष्यति। मिथ्यादृष्ट्या हि शठो भूत्वा मिथ्यादृष्टियुतानां कुले जन्मलाभी भविष्यति"। (पृ० सं० १५३)

"**अपि च**, (येन) स्तूपविनाशः विहारविनाशो वा कृतः, गुप्तरूपेण त्रिरत्नसम्बद्धधनस्योपयोगो वा कृतः, स मृत्योरनन्तरं (नियतम्) अवीचिनरके पतिष्यति। ततो (नरकात्) मुक्त्यनन्तरमपि एवंविधासु तिर्यग्योनिषु शरीरं ग्रहीष्यति, यथा—कपोत-चटका-चक्रवाक शुक-नीलपक्ष-मत्स्य-कच्छप-वानर-मृगादिषु शरीरं ग्रहीष्यति। जन्मशतानन्तरं प्राप्तेऽपि मनुष्यशरीरे (स) नपुंसक-स्त्री-द्विलिङ्ग-अलिङ्गि-वेश्यादिरूपेण" (जन्म ग्रहीष्यतीति सूत्रेषु) प्रोक्तम्। (पृ० सं० १५४)

"इह जन्मनि पूजाद्रव्याणि भेदयित्वा रात्रौ च भोजनं भुञ्जानाः (पुरुषाः) क्षुत्-तृट्क्षामकण्ठानां प्रेतानां यौनौ जन्म ग्रहीष्यन्ति। ते शतसहस्रवर्षाणि यावत् भोजनपानादिकं न लप्स्यन्ते। गमनवेलायां (तेषां) सम्पूर्णेऽपि शरीरे अग्निवद्दाहो भविष्यतीत्येवं (सूत्रेषु) कथितम्।"
(पृ० सं० १५५)

अपि च, "धर्मापवादेन पुद्गलः मूको जायते"। (पृ० सं० १५५)

"धर्मश्रवणे अप्रियतया बधिर (रूपेण) उत्पन्नो भवति"। (पृ० सं० १५५)

"दुःशीलेन इन्द्रियविकलता विकलाङ्गता च जायेते"। (पृ० सं० १५५)

"परोक्षे गुरूणाम् अपवादेन (जनः) कल्लो भवति"। (पृ० सं० १५५)

"ये तावद् धनुषश्चालनेन (अश्वादिषु) आरोहणे च आनन्दं अनुभवन्ति, (ते आगामिनि जन्मनि) म्लेच्छयोनौ जायन्ते"। (पृ० सं० १५५)

"आचार्याणां गुरूणां च दर्शनेऽपि अनादरेण स्तब्धतया च हस्ताभ्यां पादाभ्यां च विकला भवन्ति"। (पृ० सं० १५५)

"गुरूणां दर्शने सति (ये केनापि) व्याजेन पलायन्ते, (तेषां) ग्रीवा निम्ना भवतीति" (सूत्रेषु) उक्तम्। (पृ० सं० १५५)

अपि च (सूत्रेषु) "अन्येषाम् आवासे (निवसन्तं) बोधिसत्त्वं प्रति ईर्ष्यया मात्सर्येण च (जनः) दीर्घायुःपर्यन्तं यद्यपि जीविष्यति, तथापि तस्य त्रीणि महाभयानि भविष्यन्ति। कानि तानि (महाभयानि)? (१) नरक-पतनभयम्, (२) जात्यन्धभयम्, (३) प्रान्तदेशे जन्मभयमिति त्रीणि"।
(पृ० सं० १५६)

यदि "भिक्षुणीदूषणं कृतं तदा (सः पुद्गलः) अन्धनरके जन्म ग्रहीष्यति"।

(पृ० सं० १५६)

"प्राणातिपातेन असिपत्रवने जन्म भविष्यति। आखेटेन कालसूत्रनामके (नरके) पतितो भूत्वा क्रकचैः विपाटितो भविष्यति। काममिथ्याचारेण तु प्रज्वलनशीले त्रपुगृहे पातयिष्यते तथा तप्तलौहासने नरके शाययिष्यते।" (पृ० सं० १५६)

"मदपानेन मदान्वितेभ्यः यत्र तप्तलौहद्रवापानं विधीयते, तस्मिन् नरके जन्म भविष्यति। संघीयफलानि चोरयतां तप्तायःपिण्डभोजके नरके जन्म भविष्यति। अन्त्राणि मांसानि च भुञ्जानानां परिक्लिन्ने नरके जन्म भविष्यति। पैशुन्येन विग्रहकारिणां यत्र नरके सत्त्वा हलानि कर्षन्ति, तस्मिन् नरके जन्म भविष्यति। अप्रियवचनः (जनः) यत्र नरके जिह्वाकर्तनं क्रियते, तत्र जन्म ग्रहीष्यति। भूयसा मृषावादिनां यत्र जिह्वायां कीलानि प्रवेश्यन्ते, (तत्र) नरके जन्म भविष्यति। प्राणघातं कृत्वा (बलिं दत्वा) विपर्यस्तदेवान्) पूजयतां यत्र नरकं लौहमुसलेन हन्यते, तत्र जन्म भविष्यति" एवं (सूत्रेषु बहुशः) उक्तम्। (पृ० सं० १५६)

(आर्यमहासमयवैपुल्यसूत्रम्)

समधर्मैकपक्षं च श्रयेद् द्वौ पुद्गलौ विना ।
महाकामौ च तावुभौ । (पृ० सं० १५७)

दोषा हि प्रतिदेश्याः स्युर्मैत्री च करुणाऽस्ति चेत् ।
शुद्धः प्राक्कृतदोषेभ्य प्रतिदेश्याप्यसंवरे ।
विशुध्यते मलं नैव कृतेऽपि प्रतिदेशने । (पृ० सं० १५७)

(आर्यमञ्जुश्री-)बुद्धक्षेत्रगुणव्यूहसूत्रे—

यावती प्रथमा कोटिः संसारस्यान्तवर्जिता ।
तावत्सत्त्वहितार्थाय चरिष्याम्यमितां चरिम् ।। (पृ० सं० १५८)

यथा भगवतोक्तम्—

"तिर्यग्योनिगतेभ्यः यद् दानं दत्तं तेन शतगुणतोऽप्यधिकं फलं (पुण्यं) प्राप्तं भवति। यद्येकस्मै साधारणजनाय दानं दत्तम्, तेन सहस्रगुणतोऽप्यधिकं (पुण्यं) प्राप्तं भवति। शीलवते भिक्षवे दत्तेन दानेन दससहस्रगुणतोऽप्यधिकं (पुण्यं) प्राप्तं भवति। तेनैव धर्मभाणकाय दत्तेन दानेन अपरिमितं (पुण्यं) प्राप्यत" इति (भगवद्वचनेषु) उक्तम्। (पृ० सं० १५८)

अन्यदपि (उक्तम्) "यदि तथागताय मात्रे पित्रे ग्लानाय वा अल्पमात्रमपि अन्नदानं क्रियते, (तेन) अपरिमितं फलं प्राप्स्यत"। (पृ० सं० १५९)

आर्यप्रशान्तविनिश्चयप्रातिहार्यसमाधिसूत्रे उक्तं यत् "बोधिसत्त्वः पिण्डपातमादाय कृश-विवश-द्ररिद्र-शिष्येषु विभज्य ददाति, तदा तेन कुशलमूलेन स अन्यस्मिन् जन्मनि चक्रसंवरराजमहर्द्धिमान् भविष्यति"। (पृ० सं० १५९)

"यस्य तावत् षडिन्द्रियाणि परिपूर्णानि तेन (पूर्वजन्मसु) सम्यक्शीलं संरक्षितमिति" **(सूत्रेषूक्तम्)**। (पृ० सं० १५९)

आर्यरश्मिसमन्तमुक्तनिर्देशसूत्रे तावदुक्तम्—

एकया प्रभया यद्वद् दशवर्णाधिगमो भवेत् ।
पृथग् दानात् कदाचिच्च मृदुमध्योत्तमानि हि ॥

मिश्रणेन यथैकेन वर्णविंशकमाप्यते ।
पृथक् शीलेन जायन्ते मृदुमध्योत्तमानि हि ॥

विशुद्धशीलवान् भिक्षुः श्रमणः शीलसंवृतः ।
प्रज्ञप्तिचीवरं धृत्वा पक्षेण पोषधं चरेत् ॥

खक्खरं पात्रमादाय शुद्धं पिण्डं समाहरेत् ।
नमन्ति सादरं देवाः साञ्जलि हर्षनिर्भराः ॥

अस्माभिस्ते नराः सेव्या यथेन्द्रस्त्रायस्त्रिशकैः ।
देवैः सत्क्रियते चान्यैः कर्तव्यश्च तथादरः ॥

इहैव प्राप्यते श्रेयः ह्यचिन्त्यं परजन्मनि ।
प्रव्रज्य शीलमादाय बुद्धस्नेहानृणो न्वहम् ॥ (पृ० सं० १५९)

गण्डव्यूहसूत्रे "दूर्लभास्ते कुलपुत्र, सत्त्वाः सत्त्वलोके, येऽनुत्तरायां सम्यक्संबोधौ प्रणिदधति इति। ततोऽपि दुर्लभतमास्ते सत्त्वा ये अनुत्तरां सम्यक्सम्बोधिम् अभिसम्प्रस्थिताः" इति। (पृ० सं० १६०)

रत्नोल्कासूत्रे चोक्तम्—

ये सदधिष्ठितसर्वजिनेभि
स्तेषुपपद्यति बोधयि चित्तम् ।
येषुपपद्यति बोधयि चित्तं
ते अभियुक्त महर्षिगुणेषु ।। (पृ० सं० १६०)

आर्यत्रिस्कन्धसूत्रे कथितम्—"बोधिचित्तानभिव्याप्तो नास्ति कश्चिदपि धर्मधातुः। बोधिचित्तोत्पादाय अर्जितं किमपि कुशलमूलं त्रिष्वपि कालेषु नास्त्यव्यापकम् अणुमात्रमपि।" (पृ० सं० १६०)

अपि च, "यत्र येन चित्तम् उत्पादितं तस्य तत्कालं भूयस्तराः पुण्यसम्भाराः समुत्पद्यन्ते। चक्रवर्तिलोकपाल-ब्रह्मेन्द्र-श्रावक-प्रत्येकबुद्धेष्वपि सत्सु न तेषां तावान् पुण्यसम्भारः यावान् सर्वसत्त्वानां कृते (बोधिचित्तोत्पादस्य)" इति। (पृ० सं० १६०)

यथोक्तमपि (**आचार्यचन्द्रगोमिना**)-
संवरस्थगुरोर्विज्ञात् क्षमाच्च परिगृह्यताम्। (पृ० सं० १६१)

"कुलवन्तः श्रावकाः श्रावकबोधौ स्थापनीयाः, प्रत्येकबुद्धाः हि कुलवन्तः प्रत्येकबुद्धमार्गे अधिरोहणीयाः बोधिसत्त्वाश्च कुलवन्तस्तावद् अनुत्तरबोधौ स्थापयितव्याः इति" (सूत्रे) निर्दिष्टम्। (पृ० सं० १६१)

"दानादिविपक्षविरहेण निर्विकल्पज्ञानेन सर्वेच्छापरिपूर्त्या सर्वसत्त्वपरिपाकेन हि तिस्रो बोधयः सिध्यन्ति इति" सूत्रेषु उक्तम्। (पृ० सं० १६१)

रश्मिसमन्तमुक्तनिर्देशसूत्रे—

ये श्रद्दधन्ति सूत्रेऽस्मिन् ज्ञास्यन्त्यक्षयरूपताम् ।
तत्सिद्धेऽभिसमाधौ चाखेदो ज्ञाने ह्यनुत्तरे ।। (पृ० सं० १६१)

भिक्षुर्वा कोऽपि चान्वेष्टुं ज्ञानं चानुत्तरं ह्यति-
श्रद्धालुमनसा सूत्रे सयत्नं वीर्यमारभेत् ।।
न संसारे भयं योऽनुत्तरज्ञानगवेषकः ।
प्रहाय सर्वपापानि प्राप्तः कल्याणमुत्तमम् ।। (पृ० सं० १६१)

आर्यत्रिस्कन्धसूत्रेऽप्युक्तम्—यच्च मे इत्यादित आरभ्य यावत् पर्यन्तं कृतानां कुशलमूलानां सर्वज्ञतायै या परिणामना, यच्च मे संस्कृतवस्तूनाम् अभिसिद्ध्यर्थं कृतानां कुशलमूलानां या परिणामना, यच्च कृतानि कुशलमूलानि, तानि श्रावकप्रत्येकबुद्धत्वाभिसिद्धये कुशलमूलानि। यच्च मे अर्जितानि कुशलमूलानि सर्वेषु कालेषु सञ्चितानि तन्निष्पादिततथागतज्ञानज्ञेयानि, तानि सर्वाणि पिण्डयित्वा तुलयित्वा संक्षिपामि इत्युक्ताम्। (पृ० सं० १६३)

अपि च, "तानि सर्वाणि पिण्डयित्वा अनुत्तरायां सम्यक्संबोधौ परिणामयामि" इत्युक्तम्। (पृ० सं० १६३)

आर्यरश्मिसमन्तमुक्तनिर्देशसूत्रे चोक्तम्—

गमनागमने न स्तो नीरूपे दिग्विदिक्तथा ।
अनिमित्तमवाच्यं तत् प्रपञ्चातीतमेव च ॥

बोधिसत्त्वस्य निष्पन्ने साध्ये शान्तत्वमाप्यते। (पृ० सं० १६४)

अपि च,

क्लेशांश्च दमयित्वा तु कुशलानां बलेन हि ।
स्थितश्चोपशमे प्राप्तो विशिष्टानपि तद्गुणान् ॥

विशालोदधिवत् प्रज्ञा गुणाश्चापि सुसाध्यते ।
क्षान्त्यादिश्च सुखि भूत्वा चित्तं चाविचलं भवेत् ॥

बोधिसत्त्वैः सदाऽभ्यासो विद्वद्भिः स प्रशस्यते। (पृ० सं० १६४)

रत्नोल्कायाम् (धारण्याम्) अपि—

सूर्य यथा जात्यन्ध न पश्यी
नो च स नास्ति उदेति स लोके ।
चक्षुसमेत उदागमु ज्ञात्वा
सर्व प्रयुज्य स्वक-स्वकधर्मे ॥ (पृ० सं० १६९)

यथोक्तम्—

नरकप्रेततिर्यञ्चो म्लेच्छासंज्ञिकनिर्जराः ।
मिथ्यादृग्बुद्धनिःश्रद्धौ मूकताऽष्टाक्षणाः स्थिताः ॥ (पृ० सं० १७०)

यथोक्तम् (चर्तुधर्मनिर्देशसूत्रे)—यथा "चतुर्भिमैत्रेय, धर्मैः कृतोपचितं पापमभिभवति। कतमैश्चतुर्भिः? यदुत आश्रयबलं विदूषणाबलं प्रतिपक्षसमुदाचारबलं प्रत्यापत्तिबलं च"।

(पृ० सं० १७२)

यथोक्तं भगवत्याम्—

यदि पञ्च कामगुण भुञ्जति बोधिसत्त्वो
बुद्धं च धर्म शरणागतु आर्यसङ्घम् ।
सर्वज्ञता च मनसी भविष्यामि बुद्धो
स्थितु शीलपारमित वेदयितव्य विज्ञो ॥

यदि कल्पकोटि दशभी कुशलैः पथेभि-
श्चरमाणु प्रत्ययरहत्त्वस्पृहां जनेति ।
तद् खण्डशीलु भवेत अपि छिद्रशीलो
पाराजिको गुरुतरो अयु चित्तुपादो ॥ (पृ० सं० १७४)

आचार्यशान्तिदेवेन अप्युक्तम्—

क्लेशज्ञेयावृतितमः प्रतिपक्षो हि शून्यता ।
शीघ्रं सर्वज्ञताकामो न भावयति तां कथम् ॥ (पृ० सं० १७५)

आचार्यवसुबन्धुनाऽप्युक्तम्—

"महाबोधिप्राप्तिहेतोः सर्वं पापं प्रतिदेशयामि, सर्वं पुण्यमनुमोदयामि, सर्वान् बुद्धानध्येष्यामि, भवतु मे ज्ञानमनुत्तरम्" इति। (पृ० सं० १७६)

आचार्यशान्तिदेवेनाप्युक्तम्—

रात्रिन्दिवं च त्रिस्कन्धं त्रिष्कालं च प्रवर्तयेत् ।
शेषापत्तिशमस्तेन बोधिचित्तजिनाश्रयात् ॥ (पृ० सं० १७७)

●

षष्ठ परिशिष्ट

भूमिका में उद्धृत ग्रन्थों की सूची

शास्त्र के अन्तर्गत

भोट विद्वानों की कृतियों के अन्तर्गत

•

सप्तम परिशिष्ट

सहायक ग्रन्थों की सूची

सूत्र के अन्तर्गत

आर्य-उपालिपरिपृच्छासूत्र — देगे कग्युर संख्या ६८ भोट संस्करण

आर्यगृहपतिउग्रपरिपृच्छासूत्र — देगे कग्युर संख्या ६३ भोट संस्करण

आर्यमहायानत्रिस्कन्धबृहत् सूत्र — देगे कग्युर संख्या २८४ भोट संस्करण

आर्यभद्रचर्याप्रणिधानराजसूत्र — (गण्डव्यूह सूत्र) मिथिला संस्करण, १९६०

आर्यकुसुमसञ्चयमहायानसूत्र — देगे कग्युर संख्या २६६ भोट संस्करण

आर्यरत्नोल्काधारणी — (शिक्षासमुच्चय उद्धृत) देगे कग्युर संख्या १४५ भोट संस्करण

आर्यचतुधर्मनिर्देशसूत्र — देगे कग्युर संख्या २४९ भोट संस्करण

आर्य-उपायकौशल्यसूत्र — देगे कग्युर संख्या २६१ भोट संस्करण

गण्डव्यूहसूत्र — मिथिला संस्करण, १९६०

आर्यवज्रच्छेदिकाप्रज्ञापारमितासूत्र — के० उ० ति० शि० सं० सारनाथ, १९९४

तथागतकोशसूत्र — (शि० स० उद्धृत) मिथिला संस्करण, १९६१

त्रिसमयराजसूत्र — (शि० स० उद्धृत) मिथिला संस्करण, १९६१

तथागतबिम्बपरिवर्तसूत्र — (शि० स० उद्धृत) मिथिला संस्करण, १९६१

पुष्पकूटधारणीसूत्र — (शि० ग० उद्धृत) मिथिला संस्करण, १९६१

आर्यभैषज्यगुरुवैडूर्यप्रभराजसूत्र — (शि० स० उद्धृत) मिथिला संस्करण, १९६१

चुन्दाधारणीसूत्र — (शि० स० उद्धृत) मिथिला संस्करण, १९६१

आर्यलङ्कावतारसूत्र — मिथिला संस्करण, १९६३

मञ्जुश्रीमूलकल्पतन्त्र — महायानसूत्र संग्रह, खण्ड-२, मि० सं०, १९६४

आर्यप्रशान्तविनिश्चयप्रातिहार्य-समाधिसूत्र — देगे कग्युर संख्या १२९ भोट संस्करण

आर्यमञ्जुश्रीबुद्धक्षेत्रगुणव्यूहसूत्र — देगे कग्युर संख्या ५९ भोट संस्करण

आर्यमहासमयवैपुल्यसूत्र — देगे कग्युर संख्या २६५ भोट संस्करण

आर्यरश्मिसमन्तमुक्तनिर्देशसूत्र	देगे कग्युर संख्या ५५ भोट संस्करण
रत्नगुणसञ्चयगाथा महायानसंग्रह	खण्ड-१, मिथिला संस्करण, १९६०
शुभाशुभकर्मविपाकनिर्देशसूत्र	देगे कग्युर संख्या ३५५ भोट संस्करण
शुभाशुभकार्यकारणभावनिर्देशसूत्र	देगे कग्युर संख्या ३५४ भोट संस्करण
ललितविस्तरसूत्र	उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, १९९२
विनय उत्तरग्रन्थ	देगे कग्युर संख्या ७अ भोट संस्करण
अवतंसक	देगे कग्युर संख्या ४४ भोट संस्करण
बोधिसत्त्वपिटक	देगे कग्युर संख्या ५६ भोट संस्करण
आर्यमहायानोपदेशनाम महायानसूत्र	देगे कग्युर संख्या १६९ भोट संस्करण
तथागताचिन्त्यगुह्यनिर्देशसूत्र	देगे कग्युर संख्या ४७ भोट संस्करण
दशभूमिसूत्र	मिथिला संस्करण, १९६७
आर्यसागरमतिपरिपृच्छासूत्र	देगे कग्युर संख्या १५२ भोट संस्करण
उदानवर्गसूत्र	देगे कग्युर संख्या ३२६ भोट संस्करण
आर्यसमाधिराजसूत्र	मिथिला संस्करण, १९६१
आर्यताराकुरुकुल्लाकल्प	देगे कग्युर संख्या ४३७ भोट संस्करण एवं के० उ० ति० शि० सं० सारनाथ, २००१
सुमगदावदान	देगे कग्युर संख्या ३४६ भोट संस्करण

शास्त्र के अन्तर्गत

बोधिचर्यावतार	बौद्ध भारती, १९८९
शिक्षासमुच्चय	मिथिला संस्करण, १९६१
बोधिचर्यावतारपञ्जिका	बौद्ध भारती, १९८९
एक लक्ष बुद्धनाम (मन्त्रसंग्रह)	शेरिक परखङ धर्मशाला
बोधिमार्गप्रदीपपञ्जिका	देगे तनग्युर संख्या ३९४८ भोट संस्करण
अभिधर्मकोश	बौद्ध भारती, १९८७
श्रीसर्वगुह्यविधिगर्भालङ्कार	देगे तनग्युर संख्या २४९० भोट संस्करण

बोधिसत्त्वसंवरविंशिका	देगे तनग्युर संख्या ४०८१ भोट संस्करण
बोध्यापत्तिदेशनावृत्ति	देगे तनग्युर संख्या ४००५ भोट संस्करण
बोध्यापत्तिदेशनावृत्तिबोधिसत्त्व-शिक्षाक्रम	देगे तनग्युर संख्या ४००६ भोट संस्करण
कर्मावरणविशोधनविधिभाष्य	देगे तनग्युर संख्या ४००७ भोट संस्करण
प्रसन्नपदा	बौद्ध भारती, १९८९
विमलप्रभा	के० उ० ति० शि० संस्थान, १९९४
धर्मसंग्रह	के० उ० ति० शि० संस्थान, १९८८
मूलमाध्यमिककारिका	बौद्ध भारती, १९८९
विंशतिसंवरपञ्जिका	देगे तनग्युर संख्या ४०८३ भोट संस्करण
अवमानप्रदीपनाम	देगे तनग्युर संख्या ३७२९ भोट संस्करण
सूत्रालंकारवृत्तिभाष्य	देगे तनग्युर संख्या ४०३४ भोट संस्करण
व्याख्यायुक्तिटीका	देगे तनग्युर संख्या ४०६९ भोट संस्करण
विनयवस्तुटीका	देगे तनग्युर संख्या ४११३ भोट संस्करण
विनयविभङ्गपदव्याख्यान	देगे तनग्युर संख्या ४११४ भोट संस्करण
संवरविंशिकावृत्तिः	देगे तनग्युर संख्या ४०८२ भोट संस्करण
आर्य-अष्टसाहस्रिका प्रज्ञापारमिता-व्याख्या-अभिसमयालंकारा-लोकनाम	देगे तनग्युर संख्या ३७९१ भोट संस्करण
बोधिचर्यावतारपञ्जिका	देगे तनग्युर संख्या ३८७२ भोट संस्करण
बोधिसत्त्वचर्यावतारपञ्जिका	देगे तनग्युर संख्या ३८७५ भोट संस्करण
अभिसमयालङ्कारवृत्ति स्फुटार्था	के० उ० ति० शि० सं० सारनाथ, १९७७
विशेषस्तव	छोसखेर लिङ बौद्ध सेवा संघ किन्नौर, १९९८
अष्टसाहस्रिकाप्रज्ञापारमिता-सारोत्तमानाम	देगे तनग्युर संख्या ३८०३ भोट संस्करण
विमलप्रभा	के० उ० ति० शि० सं० सारनाथ, १९८६
सकृत्प्रावेशिकनिर्विकल्पभावनार्थ	देगे तनग्युर संख्या ३८१० भोट संस्करण

उदानवर्गविवरण — देगे तनग्युर संख्या ४१०० भोट संस्करण

त्रिस्कन्धसाधन — देगे तनग्युर संख्या ४००८ भोट संस्करण

भोट विद्वानों के द्वारा प्रणीत ग्रन्थ

साक्य लोतेरवङ्पो कृत—बोधिसत्त्वापत्तिदेशना संक्षेपविधि भद्रगङ्गा-अधिष्ठान।
पुट 'छ' दोङसर संस्थान, बीर, १९९१

खेड्डुप् सङ्गे येशे कृत—बोधिसत्त्वापत्तिदेशना भाष्य सार्थकदृष्टि।
लोसंग गोङ्गेन भाग-७, ड्रेपुङ लोसेललिङ १९९६

साक्य पण्डित कृत—त्रिस्कन्धसूत्रपाठोपाय।
गङ्चेन रिग-जोद, भाग-२५, पुस्तक सं० ३, तिब्बत से प्रकाशित, १९९६

लामा तारानाथ कृत—आपत्तिदेशनाटीका।
पुट 'प', भाग-१३, लेह लद्दाख, १९८५

जे गुङ् थङ् पा तेनपई डोनमे कृत—३५ बुद्धों की साधनोपायविधि आपत्त्यन्धकार-निवारिका
पुट 'ज', भाग-८, लक्ष्मी प्रेस, दिल्ली-६, १९७५

त्रिसंवरप्रकरण
पुट 'न', भाग-५, कोयो बुनको टोक्यो, १९६८

जे गुङ् थङ् पा तेनपई डोनमे कृत—दानपरिशोधनविधि आवरणान्धकारापहारक।
पुट 'ज', भाग-८, लक्ष्मी प्रेस, दिल्ली-६, १९७५

थुहुकेन् छोस्-क्यि ञिमा कृत—३५ भगवान् तथागतों पर आश्रित आपत्ति-देशनाविधि परहितसूर्यप्रभा
पुट 'ङ' जय प्रेस, नई दिल्ली, १९६९

आचार्य ग्यल्-छब्-जे कृत—आपत्तिदेशना संक्षेपटीका अथवा ३५ बुद्धों की नाम-अनुशंसा
पुट 'क' मोङगेल लामा गुरुदेव, नई दिल्ली, १९७८

मेन् दोङ् छम्पा रिनपोछे कर्मा डेदोन ठिनले कृत—बोध्यापत्तिदेशना की अर्थ-सम्बद्ध-टिप्पणी 'अमृतजलधारा'
चुनडुस सेङ्गे, बीर हि० प्र०, १९७५

आचार्य **चोंखापा** के निर्देशानुसार भदन्त सङ् क्योङ् द्वारा रचित ३५ बुद्धों के कायवर्ण एवं आयुध तथा ३५ देवों (तथागतों) के कायमापसुदृष्टि-रूपदर्पण।
पुट 'द', मंगोल गुरुदेव के द्वारा सम्पादित, नई दिल्ली से प्रकाशित, १९७८

डिगुङ्पा शाक्य भिक्षु **तेनजिन छोस् क्यि लोडोस्** कृत—अतिसंक्षिप्त बोध्यापत्तिदेशनाविधि कर्मावरणविशोधन।

ल्होडक् नमखा ग्यलछेन्-कृत—त्रिस्कन्धसाधना वर्षा-अधिष्ठान।
पुट 'प', तिब्बती ग्रन्थालय, गङछेन किशौङ, धर्मशाला, पुस्तक सं० ४०६४

डुल छु धर्मभद्र कृत—३५ तथागत स्तोत्र प्रकरण गङ्गाजलधारा।
पुट 'ग', जम्पा होसेर के द्वारा सम्पादित, नई दिल्ली से प्रकाशित, १९७३

यङ् छेन डुपेई दोर्जे कृत—आपत्तिदेशना तथा सामान्य देशना दोनों की टिप्पणी।
पुट 'ग', जम्पा होसेर के द्वारा सम्पादित, नई दिल्ली से प्रकाशित, १९७३

कादमफाछोस (पितृधर्म) छोडोन मिरिग प्रकाशन, तिब्बत, १९९५

शैजा कुनख्यब जोद भाग-१, मिरिग प्रकाशन, तिब्बत, १९८५

शर-टाशी पल्देन कृत—जे चोंखापा का गुह्य वृत्तान्त।
संगृहीत पूजा पुस्तक, गेलुगपा छात्रसंग, वाराणसी, १९९९

पाँचवें दलाई लामा कृत—साञ्चक विधि।
पुट 'ज', सिक्किम शोध संस्थान, १९९५

साक्य पण्डित कृत—त्रिसंवर प्रकरण।
गङ्चेन रिग-ज़ोद, भाग-२३, पुस्तक सं० १, तिब्बत से प्रकाशित, १९९६

चङ्क्या रोलपेई दोर्जे कृत—बौद्ध सिद्धान्त शास्त्र।
तिब्बत के टुंगो प्रकाशन से प्रकाशित, १९८९

थुपतेन छोडाक कृत—बोधिचर्यावतार वृहद् टीका।
तिब्बत के टुंगो प्रकाशन से प्रकाशित, १९८९

ग्रन्थ-सूची (मात्र गेलुगपा विद्वानों की ग्रन्थ-सूची)। तिब्बत के गङजोङ प्रकाशन से प्रकाशित, १९९०

ग्रन्थ-सूची (शैजैतेरज़ोद), पूर्व एवं मध्य भाग। सीठोन मिरिग प्रकाशन, तिब्बत, १९८४

इतिहास के अन्तर्गत

छग लोचावा छोस् जे पेल का जीवन-वृत्तान्त — रानुब निमा दोर्जे द्वारा प्रकाशित, वाराणसी, १९६९

बौद्ध धर्म का इतिहास नीलपुस्तक — सीठोन मिरिग प्रकाशन, तिब्बत, १९८४

बुस्तोन का बौद्धधर्म का इतिहास — टुङगो प्रकाशन, तिब्बत, १९९१

लामा तारानाथ, बौद्धधर्म का इतिहास — काशीप्रसाद जायसवाल शोध संस्थान पटना, १९७१

कादम्पा की इतिहासपरम्परा — छोडेन मिरिग प्रकाशन, तिब्बत, १९९५

अन्य भोट पुस्तकें

७वें दलाई लामा को श्रुतिप्राप्त परम्परा की सूची — पुट 'क', भाग-११, सिक्किम, १९८३

ताडक रिनपोछे को श्रुतिप्राप्त परम्परा की सूची — पुट 'क', तिब्बत से प्रकाशित।

सेरा थेकछेन लिङ — मिरिग प्रकाशन तिब्बत, १९९५

रत्नावली (भोट संस्करण) भूमिका — के० उ० ति० शि० सं० सारनाथ, १९९१

सुहल्लेख भूमिका — के० उ० ति० शि० सं० सारनाथ, १९९६

नोरदे (नोरबुलिङ्ग संस्थान) — भाग-१, सं० ७-८, १९९८

भोट विद्वानों का इतिहास कोश — छोडेन मिरिग प्रकाशन, १९९२

Everlasting Rain of Nectar — Wisdom Publication, Boston USA, 1996

The Bodhisattva Vow — Tharpa Publication, 1995

The Confession of Downfalls — LTWA Dharmsala, 1993

Tibetan Sanskrit Dictionary (Compact Edition) — Lokesh Chandra, Rinsen Book Co. Kyoto Japan

A complete Catalogue of Two Tibetan Buddhist Course (Bkaḥ-ḥgyur and Bstan-ḥgyur) — Tohuku Imperial University Sendai JAPAN, 1934

Guide to the Nyingma Edition of the Sde-dge bka-gyur/ bstan-gyur — Dharma Publication, 1980.

The Thirty five Buddhas of the Forgiveness & sins- Mystric Art of Ancient Tibet — Shambhala Boston and London, 1987

●

ཁ་སྐོང་ལྷན་ཐབས་བརྒྱད་པ།

མཁས་དབང་རྣམ་གསུམ་གྱི་ལུགས་ལ་སངས་རྒྱས་སོ་ལྔའི་ཕྱོགས་དང་ཞིང་ཁམས་དང་སྐུ་མདོག་ཕྱག་མཚན་གྱི་རེའུ་མིག

སློབ་དཔོན་ཀླུ་སྒྲུབ་ལུགས་ཀྱི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་ལྷ་སངས་རྒྱས་སོ་ལྔའི་སྐུ་མདོག་ཕྱག་མཚན་སོགས་ཀྱི་རེའུ་མིག

ཨང་།	སངས་རྒྱས་ཀྱི་མཚན།	ཕྱོགས།	ཞིང་ཁམས།	སྐུ་མདོག	ཕྱག་རྒྱ་དང་ཕྱག་མཚན།	ཕན་ཡོན།[1]
༡	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཤཱཀྱ་ཐུབ་པ།	དབུས།	མི་མཇེད་ཀྱི་བདག་པོ།	སེར་པོ།	ཆོས་འཆད་ཀྱི་རྣམ་པ།	བསྐལ་པ་ཁྲིའི་སྡིག་པ་འདག
༢	རྡོ་རྗེ་སྙིང་པོ་རབ་ཏུ་འཇོམས་པ།	སྟེང་།	ནམ་མཁའི་སྙིང་པོ།	སྔོན་པོ།	རྡོ་རྗེ་གཉིས།	བསྐལ་པ་ཁྲིའི་སྡིག་པ་འདག
༣	རིན་ཆེན་འོད་འཕྲོ།	ཤར།	རིན་ཆེན་ཡོད་པ།	དཀར་པོ།	རྡོ་རྗེ་དང་ཉི་མ།	བསྐལ་པ་སུམ་ཁྲི་ཆིག་སྟོང་གི་སྡིག་པ་འདག
༤	ཀླུ་དབང་གི་རྒྱལ་པོ།	ཤར་ལྷོ།	ཀླུ་ཡིས་ཁྱབ་པ།	སྔོན་པོ།	ཀླུ་ཤིང་དང་སྦྲུལ་སྔོན་པོ།	བསྐལ་པ་བརྒྱད་ཀྱི་སྡིག་པ་འདག
༥	དཔའ་བོའི་སྡེ།	ལྷོ།	དཔའ་བ་དང་ལྡན་པ།	སེར་པོ།	པོ་ཏི་དང་རལ་གྲི།	ངག་འཁྱལ་གྱི་སྡིག་པ་འདག
༦	དཔའ་དགྱེས།	ལྷོ་ནུབ།	དགའ་བ་དང་ལྡན་པ།	དམར་སེར།	ཉི་མ་དང་པདྨ་དམར་པོ།	ཡིད་ཀྱིས་བསགས་པའི་སྡིག་པ་འདག
༧	རིན་ཆེན་མེ།	ནུབ།	སྣང་བ་དང་ལྡན་པ།	དམར་པོ།	རིན་པོ་ཆེ་དང་མེའི་དཀྱིལ་འཁོར།	དགེ་འདུན་གྱི་དཀོར་བསྐྱར་པའི་སྡིག་པ་འདག
༨	རིན་ཆེན་ཟླ་འོད།	ནུབ་བྱང་།	འོད་བཟང་པོ།	དཀར་པོ།	རིན་པོ་ཆེ་དང་ཟླ་བ།	བསྐལ་པ་གཅིག་གི་སྡིག་པ་འདག

---

[1] འདི་ར་གསལ་བའི་ཕན་ཡོན་གྱི་རིམ་པ་རྣམས་རྒྱལ་ཚབ་རྗེའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པ་ཇི་བཞིན་བཀོད་པའོ།།

༩	མཐོང་བ་དོན་ཡོད།	བྱང་།	ཛ་ཀྲ།	ལྗང་གུ	སངས་རྒྱས་ཀྱི་སྤྱན་གཉིས།	འཕགས་པ་ལ་སྐུར་བ་བཏབ་པའི་སྒྲིབ་པ་འདག
༡༠	རིན་ཆེན་ཟླ་བ།	བྱང་ཤར།	འོད་ཟེར་ཅན།	དཀར་ལྗང་།	རིན་པོ་ཆེ་དང་ཟླ་བ།	མ་བསད་པའི་སྒྲིབ་པ་འདག
༡༡	དྲི་མ་མེད་པ།	འོག	ཐལ་བས་ཁྲབ་པ།	དུད་ཁའམ་ཐལ་མདོག	མེ་ལོང་དྲི་མ་མེད་པ་གཉིས།	ཕ་བསད་པའི་སྒྲིབ་པ་འདག
༡༢	དཔའ་སྦྱིན།	སྟེང་།	དཔལ་ལྡན།	དཀར་པོ།	ཤིང་དཔལ་འབྲས་ཀྱི་སྡོང་བུ་ལོ་མ་འབྲས་བུ	དགྲ་བཅོམ་པ་བསད་པའི་སྒྲིབ་པ་འདག
༡༣	ཚངས་པ།	ཤར།	སྦྱིན་པ་དང་བྲལ་བ།	དམར་སེར།	པདྨ་དང་ཉི་མ།	དགེ་འདུན་གྱི་དབྱེན་འབྱེད་པའི་སྒྲིབ་པ་འདག
༡༤	ཚངས་པས་བྱིན།	ཤར་ལྷོ།	མྱ་ངན་མེད་པ།	སེར་པོ།	ཟླ་བ་དང་པདྨ།	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ལ་ངན་སེམས་ཀྱིས་ཁྲག་ཕྱུང་བའི་སྒྲིབ་པ་འདག
༡༥	ཆུ་ལྷ།	ལྷོ།	དྲི་མ་མེད་པ།	སྔོན་པོ།	ཆུའི་དཀྱིལ་འཁོར་ན་ཆོས་འཆད་ཀྱི་རྣམ་པ།	དགྲ་བཅོམ་མ་སུན་ཕྱུང་བའི་སྒྲིབ་པ་འདག
༡༦	ཆུ་ལྷའི་ལྷ།	ལྷོ་ནུབ།	གསལ་བའི་ཞིང་།	དཀར་པོ།	དཀྱིལ་འཁོར་དང་མེ་ལོང་།	བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་ངེས་གནས་བསད་པའི་སྒྲིབ་པ་འདག
༡༧	དཔལ་བཟང་།	ནུབ།	བདེ་བ་ཅན།	དམར་པོ།	པདྨ་དང་དཔག་བསམ་ཤིང་།	སློབ་དཔོན་བསད་པའི་སྒྲིབ་པ་འདག
༡༨	ཙནྡན་དཔལ།	ནུབ་བྱང་།	དྲི་བཟང་པོས་ཁྲབ་པ།	དམར་སེར།	ཙནྡན་གྱི་སྡོང་པོ་དང་དཔལ་འབྲས།	དགེ་འདུན་འདུ་བའི་སྒོ་བཀག་པའི་སྒྲིབ་པ་འདག
༡༩	གཟི་བརྗིད་མཐའ་ཡས།	བྱང་།	གཟི་བརྗིད་དང་ལྡན་པ།	དམར་པོ།	ཉི་མ་གཉིས།	མཆོད་རྟེན་བཤིག་པའི་སྒྲིབ་པ་འདག

༣༠	འོད་དཔལ།	བྱང་ཤར།	དོན་ཡོད།	དཀར་པོ།	འོད་དཀར་པོའི་དཀྱིལ་འཁོར།	ཞི་སྡང་གིས་ཀུན་ནས་བསླངས་བའི་སྡིག་པ་འདག
༣༡	མྱ་ངན་མེད་པའི་དཔལ།	འོག	སྒྲིབ་པ་དང་བྲལ་བ།	སྔོ་སྐྱ།	ཤིང་མྱ་ངན་མེད།	འདོད་ཆགས་ཀྱིས་ཀུན་ནས་བསླངས་བའི་སྡིག་པ་འདག
༣༢	སྲིད་མེད་ཀྱི་བུ།	སྟེང་།	སྲིད་པ་དང་བྲལ་བ་	སྔོན་པོ།	རི་རབ་དང་པདྨའི་ཕྱག་རྒྱའི་ངང་འཁོར་ལ་ཆོས་འཆད།	བསྐལ་པ་ཁྲིའི་སྡིག་པ་འདག
༣༣	མེ་ཏོག་དཔལ།	ཤར།	མེ་ཏོག་ཆེར་རྒྱས།	སེར་པོ།	མེ་ཏོག་སེར་པོ་དང་ཤིང་ཏོག་དཔལ་འབྲས།	བསྐལ་པ་འབུམ་གྱི་སྡིག་པ་འདག
༣༤	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཚངས་པའི་འོད་ཟེར་རྣམ་པར་རོལ་པས་མངོན་པར་མཁྱེན་པ།	ཤར་ལྷོ	ཚངས་པས་ཁྱབ་པ།	དཀར་པོ།	པདྨ་དཀར་པོ་དང་འོད་ཕུང་།	བསྐལ་པ་སྟོང་གི་སྡིག་པ་འདག
༣༥	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་པདྨའི་འོད་ཟེར་རྣམ་པར་རོལ་པས་མངོན་པར་མཁྱེན་པ།	ལྷོ།	པདྨ་དང་ལྡན་པ།	དམར་པོ།	པདྨ་དང་ཉི་མ།	བསྐལ་པ་བདུན་གྱི་སྡིག་པ་འདག
༣༦	ནོར་དཔལ།	ལྷོ་ནུབ།	ནོར་བུ་ཡོད་པ།	དམར་པོ་དཀར་མདངས་ཅན།	རིན་པོ་ཆེ་གཉིས།	འདོད་ཆགས་ཀྱིས་ཀུན་ནས་བསླངས་བའི་སྡིག་པ་འདག
༣༧	དྲན་པའི་དཔལ།	ནུབ	གསལ་བ་དང་ལྡན་པ།	སེར་པོ།	པོ་ཏི་དང་རལ་གྲི	ལུས་ཀྱི་སྒོ་ནས་བྱས་པའི་སྡིག་པ་འདག

༢༨	མཚན་དཔལ་ཤིན་ཏུ་ཡོངས་གྲགས།	ནུབ་བྱང་།	མཚན་མ་མེད་པ།	ལྗང་གུ	ཕྱག་གཉིས་ཀྱིས་དེ་བཞིན་གཤེགས་པའི་གཙུག་ཏོར་སྣོམས་པ།	སངས་རྒྱས་འབྱུང་བ་ལ་མཉེས་པར་མ་བྱས་པའི་སྡིག་པ་འདག
༢༩	དབང་པོ་ཏོག་གི་རྒྱལ་མཚན་གྱི་རྒྱལ་པོ།	བྱང་།	དབང་པོ་གསལ་བ།	སེར་པོ།	རིན་པོ་ཆེའི་ཏོག་དང་རྒྱལ་མཚན།	ཕྲག་དོག་བྱས་པའི་སྡིག་པ་འདག
༣༠	ཤིན་ཏུ་རྣམ་པར་གནོན་པའི་དཔལ།	བྱང་ཤར།	རོལ་པ་དང་ལྡན་པ།	དཀར་པོ།	ས་གནོན།	གཞན་ལ་སྡིག་པ་བྱེད་དུ་བཅུག་པའི་སྡིག་པ་འདག
༣༡	གཡུལ་ལས་ཤིན་ཏུ་རྣམ་པར་རྒྱལ་བ།	འོག	ཉོན་མོངས་པ་མེད་པ།	ནག་པོ།	ཁྲབ་དང་རལ་གྲི།	ཡིད་ཀྱིས་ཀུན་ནས་བསླངས་པའི་སྡིག་པ་འདག
༣༢	རྣམ་པར་གནོན་པས་གཤེགས་པའི་དཔལ།	ཤར།	དཔལ་དང་ལྡན་པ།	དཀར་པོ།	ས་གནོན་དང་མི་འཇིགས་པ།	ཕ་མ་བྱས་པའི་སྡིག་པ་འདག
༣༣	ཀུན་ནས་སྣང་བ་བཀོད་པའི་དཔལ།	ལྷོ།	སྣང་བ་བཀོད་པ།	སེར་པོ།	ཉི་མ་དང་རིན་པོ་ཆེའི་སྡོང་བུ།	གཞན་གྱིས་སྡིག་པ་བྱས་པ་ལ་ཡི་རང་བྱས་པའི་སྡིག་པ་འདག
༣༤	རིན་ཆེན་པདྨས་རྣམ་པར་གནོན་པ།	ནུབ།	དཔལ་དང་ལྡན་པ།	དམར་པོ།	རིན་པོ་ཆེ་དང་པདྨ།	ཆོས་སྤོང་གི་ལས་བྱས་པའི་སྡིག་པ་འདག
༣༥	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་རི་དབང་གི་རྒྱལ་པོ།	བྱང་།	རིན་པོ་ཆེ།	སྔོན་པོ།	ཕྱག་གཉིས་ཀྱིས་རི་རབ་སྟེགས་པ།	དམ་ཚིག་ཉམས་པའི་སྡིག་པ་འདག

ཆོས་རྗེ་ས་པཎ་ཀུན་དགའ་རྒྱལ་མཚན་གྱི་ལུགས་ལྟར་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་ལྷ་སངས་རྒྱས་སོ་ལྔའི་སྐུ་མདོག་ཕྱག་རྒྱའི་རེའུ་མིག

གྲངས།	སངས་རྒྱས་ཀྱི་མཚན།	ཕྱོགས།	ཞིང་ཁམས།	སྐུ་མདོག	ཕྱག་རྒྱ།	ཕན་ཡོན།[1]
༡	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཤཱཀྱ་ཐུབ་པ།	དབུས།	མི་མཇེད་ཀྱི་བདག་པོ།	དཀར་པོ།	ཆོས་འཆད།	བསྐལ་པ་ཁྲིའི་སྡིག་པ་འདག
༢	རྡོ་རྗེ་སྙིང་པོ་རབ་ཏུ་འཇོམས་པ།	ཤར།	ནམ་མཁའི་སྙིང་པོ།	སྔོན་པོ།	ས་གནོན།	བསྐལ་པ་ཁྲིའི་སྡིག་པ་འདག
༣	རིན་ཆེན་འོད་འཕྲོ།	ལྷོ།	རིན་ཆེན་ཡོད་པ།	སེར་པོ།	མཆོག་སྦྱིན།	བསྐལ་པ་སུམ་ཁྲི་ཅིག་སྟོང་གི་སྡིག་པ་འདག
༤	ཀླུ་དབང་གི་རྒྱལ་པོ།	ནུབ།	ཀླུ་ཡིས་ཁྱབ་པ།	དམར་པོ།	མཉམ་གཞག	བསྐལ་པ་བརྒྱད་ཀྱི་སྡིག་པ་འདག
༥	དཔའ་བོའི་སྡེ།	བྱང་།	དཔའ་བ་དང་ལྡན་པ།	ལྗང་ཁུ།	སྐྱབས་སྦྱིན།	ངག་འཁྲུལ་གྱི་སྡིག་པ་འདག
༦	དཔའ་དགྱེས།	དབུས།	དགའ་བ་དང་ལྡན་པ།	དཀར་པོ།	ཆོས་འཆད།	ཡིད་ཀྱིས་བསགས་པའི་སྡིག་པ་འདག
༧	རིན་ཆེན་མེ།	ཤར།	སྣང་བ་དང་ལྡན་པ།	སྔོན་པོ།	ས་གནོན།	དགེ་འདུན་གྱི་དཀོར་བསྙད་པའི་སྡིག་པ་འདག
༨	རིན་ཆེན་ཟླ་འོད།	ལྷོ།	འོད་བཟང་པོ།	སེར་པོ།	མཆོག་སྦྱིན།	བསྐལ་པ་གཅིག་གི་སྡིག་པ་འདག
༩	མཐོང་བ་དོན་ཡོད།	ནུབ།	ང་ལྷ།	དམར་པོ།	མཉམ་གཞག	འཕགས་པ་ལ་སྐུར་བ་འདེབས་པའི་སྡིག་པ་འདག
༡༠	རིན་ཆེན་ཟླ་བ།	བྱང་།	འོད་ཟེར་ཅན།	ལྗང་ཁུ།	སྐྱབས་སྦྱིན།	མ་བསད་པའི་སྡིག་པ་འདག
༡༡	དྲི་མ་མེད་པ།	དབུས།	ཐལ་བས་ཁྱབ་པ།	དཀར་པོ།	ཆོས་འཆད།	ཕ་བསད་པའི་སྡིག་པ་འདག
༡༢	དཔའ་སྦྱིན།	ཤར།	དཔལ་ལྡན།	སྔོན་པོ།	ས་གནོན།	དགྲ་བཅོམ་པ་བསད་པའི་སྡིག་པ་འདག
༡༣	ཚངས་པ།	ལྷོ།	སྦྲིབ་པ་དང་བྲལ་བ།	སེར་པོ།	མཆོག་སྦྱིན།	དགེ་འདུན་གྱི་དབྱེན་འབྱེད་པའི་སྡིག་པ་འདག

---

1 འདིར་གསལ་བའི་ཕྱོགས་དང་སྐུ་མདོག་ཕྱག་རྒྱ་རྣམས་ཆོས་རྗེ་ས་པཎ་ཞབས་ཀྱི་གསུང་ཕྱང་པོ་གསུམ་པའི་སྒྲུབ་ཐབས་སུ་བཀོད་པ་ལྟར་དང་། ཞིང་ཁམས་རྣམས་སློབ་དཔོན་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱི་འགྲེལ་པ་ལྟར་དང་། ཕན་ཡོན་གྱི་རིམ་པ་རྣམས་རྒྱལ་ཚབ་རྗེའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པ་ཇི་བཞིན་བཀོད་པའོ།།

༢༤	ཚངས་པས་བྱིན།	ནུབ།	མྱ་ངན་མེད་པ།	དམར་པོ།	མཉམ་གཞག	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ལ་ངན་སེམས་ཀྱིས་ཁྲག་ཕྱུང་བའི་སྡིག་པ་འདག
༢༥	ཆུ་ལྷ།	བྱང་།	དྲི་མ་མེད་པ།	ལྗང་ཁུ།	སྐྱབས་སྦྱིན།	དགྲ་བཅོམ་མ་སྲུན་ཕྱུང་བའི་སྡིག་པ་འདག
༢༦	ཆུ་ལྷའི་ལྷ།	དབུས།	གསལ་བའི་ཞིང་།	དཀར་པོ།	ཆོས་འཆད།	བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་ངེས་གནས་བསད་པའི་སྡིག་པ་འདག
༢༧	དཔལ་བཟང་།	ཤར།	བདེ་བ་ཅན།	སྔོན་པོ།	ས་གནོན།	སློབ་དཔོན་བསད་པའི་སྡིག་པ་འདག
༢༨	ཙནྡན་དཔལ།	ལྷོ།	དྲི་བཟང་པོས་ཁྱབ་པ།	སེར་པོ།	མཆོག་སྦྱིན།	དགེ་འདུན་གྱི་འདུ་བའི་སྒོ་བཀག་པའི་སྡིག་པ་འདག
༢༩	གཟི་བརྗིད་མཐའ་ཡས།	ནུབ	གཟི་བརྗིད་དང་ལྡན་པ།	དམར་པོ།	མཉམ་གཞག	མཆོད་རྟེན་བཤིག་པའི་སྡིག་པ་འདག
༣༠	འོད་དཔལ།	བྱང་།	དོན་ཡོད།	ལྗང་ཁུ།	སྐྱབས་སྦྱིན།	ཞི་སྡང་གིས་ཀུན་ནས་བསླངས་བའི་སྡིག་པ་འདག
༣༡	མྱ་ངན་མེད་པའི་དཔལ།	དབུས།	སྒྲིབ་པ་དང་བྲལ་བ།	དཀར་པོ།	ཆོས་འཆད།	འདོད་ཆགས་ཀྱིས་ཀུན་ནས་བསླངས་བའི་སྡིག་པ་འདག
༣༢	སྲིད་མེད་ཀྱི་བུ།	ཤར།	སྲིད་པ་དང་བྲལ་བ་	སྔོན་པོ།	ས་གནོན།	བསྐལ་པ་ཁྲིའི་སྡིག་པ་འདག
༣༣	མེ་ཏོག་དཔལ།	ལྷོ།	མེ་ཏོག་ཆེར་རྒྱས།	སེར་པོ།	མཆོག་སྦྱིན།	བསྐལ་པ་འབུམ་གྱི་སྡིག་པ་འདག
༣༤	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཚངས་པའི་འོད་ཟེར་རྣམ་པར་རོལ་པས་མངོན་པར་མཁྱེན་པ།	ནུབ།	ཚངས་པས་ཁྱབ་པ།	དམར་པོ།	མཉམ་གཞག	བསྐལ་པ་སྟོང་གི་སྡིག་པ་འདག
༣༥	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་པདྨའི་འོད་ཟེར་རྣམ་པར་རོལ་པས་མངོན་པར་མཁྱེན་པ།	བྱང་།	པདྨ་དང་ལྡན་པ།	ལྗང་ཁུ།	སྐྱབས་སྦྱིན།	བསྐལ་པ་བདུན་གྱི་སྡིག་པ་འདག

༢༦	ནོར་དཔལ།	དབུས།	ནོར་བུ་ཡོད་པ།	དཀར་པོ།	ཆོས་འཆད།	འདོད་ཆགས་ཀྱིས་ཀུན་ནས་བསླངས་པའི་སྡིག་པ་འདག
༢༧	དྲན་པའི་དཔལ།	ཤར།	གསལ་བ་དང་ལྡན་པ།	སྔོན་པོ།	ས་གནོན།	ལུས་ཀྱི་སྒོ་ནས་བྱས་པའི་སྡིག་པ་འདག
༢༨	མཚན་དཔལ་ཤིན་ཏུ་ཡོངས་གྲགས།	ལྷོ།	མཚན་མ་མེད་པ།	སེར་པོ།	མཆོག་སྦྱིན།	སངས་རྒྱས་འབྱུང་བ་ལ་མཉེས་པར་མ་བྱས་པའི་སྡིག་པ་འདག
༢༩	དབང་པོ་ཏོག་གི་རྒྱལ་མཚན་གྱི་རྒྱལ་པོ།	ནུབ།	དབང་པོ་གསལ་བ།	དམར་པོ།	མཉམ་གཞག	ཕྲག་དོག་བྱས་པའི་སྡིག་པ་འདག
༣༠	ཤིན་ཏུ་རྣམ་པར་གནོན་པའི་དཔལ།	བྱང་།	རོལ་པ་དང་ལྡན་པ།	ལྗང་ཁུ།	སྐྱབས་སྦྱིན།	གཞན་ལ་སྡིག་པ་བྱེད་དུ་བཅུག་པའི་སྡིག་པ་འདག
༣༡	གཡུལ་ལས་ཤིན་ཏུ་རྣམ་པར་རྒྱལ་བ།	དབུས།	ཉོན་མོངས་པ་མེད་པ།	དཀར་པོ།	ཆོས་འཆད།	ཡིད་ཀྱིས་ཀུན་ནས་བསླང་པའི་སྡིག་པ་འདག
༣༢	རྣམ་པར་གནོན་པས་གཤེགས་པའི་དཔལ།	ཤར།	དཔལ་དང་ལྡན་པ།	སྔོན་པོ།	ས་གནོན།	ཕྱི་མ་བྱས་པའི་སྡིག་པ་འདག
༣༣	ཀུན་ནས་སྣང་བ་བཀོད་པའི་དཔལ།	ལྷོ།	སྣང་བ་བཀོད་པ།	སེར་པོ།	མཆོག་སྦྱིན།	གཞན་གྱིས་སྡིག་པ་བྱས་པ་ལ་ཡི་རང་བྱས་པའི་སྡིག་པ་འདག
༣༤	རིན་ཆེན་པདྨས་རྣམ་པར་གནོན་པ།	ནུབ།	དཔལ་དང་ལྡན་པ།	དམར་པོ།	མཉམ་བཞག	ཆོས་སྤོང་གི་ལས་བྱས་པའི་སྡིག་པ་འདག
༣༥	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་རི་དབང་གི་རྒྱལ་པོ།	བྱང་།	རིན་པོ་ཆེ།	ལྗང་ཁུ།	སྐྱབས་སྦྱིན།	དམ་ཚིག་ཉམས་པའི་སྡིག་པ་འདག

རྗེ་རིན་པོ་ཆེར་གཟིགས་སྣང་བྱུང་བ་ལྟར་ཐུགས་སྲས་བཟང་སྐྱོང་གིས་བཀོད་པའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་ལྷ་སངས་རྒྱས་སོ་ལྔའི་སྐུ་མདོག་ཕྱག་རྒྱ་ཕྱག་མཚན་སོགས་ཀྱི་རེའུ་མིག

ཨང་།	སངས་རྒྱས་ཀྱི་མཚན།	ཕྱོགས།	ཞིང་ཁམས།	སྐུ་མདོག	ཕྱག་རྒྱ་དང་ཕྱག་མཚན།	ཕན་ཡོན། [1]
༡	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཤཱཀྱ་ཐུབ་པ།	དབུས།	མི་མཇེད་ཀྱི་བདག་པོ།	སེར་པོ།	ཕྱག་གཡས་ས་གནོན། གཡོན་མཉམ་གཞག	བསྐལ་པ་ཁྲིའི་སྡིག་པ་འདག
༢	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་རྡོ་རྗེ་སྙིང་པོ་རབ་ཏུ་འཇོམས་པ།	སྟེང་།	ནམ་མཁའི་སྙིང་པོ།	སེར་པོ།	ཕྱག་གཉིས་ཆོས་འཆད།	བསྐལ་པ་ཁྲིའི་སྡིག་པ་འདག
༣	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་རིན་ཆེན་འོད་འཕྲོ།	ཤར།	རིན་ཆེན་ཡོད་པ།	དམར་པོ།	ཕྱག་གཉིས་མཉམ་གཞག	བསྐལ་པ་སུམ་ཁྲི་ཆིག་སྟོང་གི་སྡིག་པ་འདག
༤	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཀླུ་དབང་གི་རྒྱལ་པོ།	ཤར་ལྷོ།	ཀླུ་ཡིས་ཁྱབ་པ།	ཞལ་མགྲིན་དཀར་ཞིང་སྐུ་སྔོན་པོ།	ཕྱག་གཉིས་ཆོས་འཆད།	བསྐལ་པ་བརྒྱད་ཀྱི་སྡིག་པ་འདག
༥	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དཔའ་བོའི་སྡེ།	ལྷོ།	དཔའ་བ་དང་ལྡན་པ།	སེར་པོ།	ཕྱག་གཡོན་ཆོས་འཆད། གཡས་སྐྱབས་སྦྱིན།	ངག་འཁྱལ་གྱི་སྡིག་པ་འདག

1 འདིར་གསལ་བའི་ཞིང་ཁམས་རྣམས་སློབ་དཔོན་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱི་འགྲེལ་པ་ཇི་བཞིན་དང་ཕན་ཡོན་གྱི་རིམ་པ་རྣམས་རྒྱལ་ཚབ་རྗེའི་ལྟུང་བཤགས་ཀྱི་འགྲེལ་པ་ལྟར་བཀོད་པའོ།།

༦	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དཔའ་དབྱིས།	ལྷོ་ནུབ།	དགའ་བ་དང་ལྡན་པ།	སེར་པོ།	ཕྱག་གཉིས་ཆོས་འཆད།	ཡིད་ཀྱིས་བསམགས་པའི་སྒྲིབ་པ་འདག
༧	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་རིན་ཆེན་མེ།	ནུབ།	སྣང་བ་དང་ལྡན་པ།	དམར་པོ།	ཕྱག་གཡས་ས་གནོན། གཡོན་མཉམ་གཞག	དགེ་འདུན་གྱི་དཀོར་བསམགས་པའི་སྒྲིབ་པ་འདག
༨	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་རིན་ཆེན་ཟླ་འོད།	ནུབ་བྱང་།	འོད་བཟང་པོ།	དཀར་པོ།	ཕྱག་གཡོན་མཉམ་གཞག གཡས་མཆོད་སྦྱིན།	བསྐལ་པ་གཅིག་གི་སྒྲིབ་པ་འདག
༩	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་མཐོང་བ་དོན་ཡོད།	བྱང་།	ཞ་སྐྱ།	ལྗང་གུ	ཕྱག་གཡས་སྐྱབས་སྦྱིན། གཡོན་མཉམ་གཞག	འཕགས་པ་ལ་སྐུར་བ་འདེབས་པའི་སྒྲིབ་པ་འདག
༡༠	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་རིན་ཆེན་ཟླ་བ།	བྱང་ཤར།	འོད་ཟེར་ཅན།	དཀར་པོ།	བྱང་ཆུབ་མཆོག་གི་ཕྱག་རྒྱ།	མ་བསད་པའི་སྒྲིབ་པ་འདག
༡༡	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དྲི་མ་མེད་པ།	འོག	ཐལ་བས་ཁྱབ་པ།	སྔོན་པོ།	ཕྱག་གཉིས་མཉམ་གཞག	ཕ་བསད་པའི་སྒྲིབ་པ་འདག
༡༢	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དཔའ་སྦྱིན།	སྟེང་།	དཔལ་ལྡན།	སེར་པོ།	ཕྱག་གཉིས་ཆོས་འཆད།	དགྲ་བཅོམ་པ་བསད་པའི་སྒྲིབ་པ་འདག
༡༣	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཚངས་པ།	ཤར།	སྒྲིབ་པ་དང་བྲལ་བ།	སེར་པོ།	ཕྱག་གཡས་ས་གནོན། གཡོན་མཉམ་གཞག	དགེ་འདུན་གྱི་དབྱེན་འབྱེད་པའི་སྒྲིབ་པ་འདག
༡༤	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཚངས་པས་བྱིན།	ཤར་ལྷོ།	མྱ་ངན་མེད་པ།	དམར་སེར།	ཕྱག་གཉིས་ཆོས་འཆད།	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ལ་ངན་སེམས་ཀྱིས་ཁྲག་ཕྱུང་བའི་སྒྲིབ་པ་འདག

༢༥	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཆུ་ལྷ།	ལྷོ།	དྲི་མ་མེད་པ།	དཀར་པོ།	ཕྱག་གཉིས་མཉམ་གཞག	དགྲ་བཅོམ་མ་སྤྱན་ཕྱུང་བའི་སྡིག་པ་འདག
༢༦	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཆུ་ལྷའི་ལྷ།	ལྷོ་ནུབ།	གསལ་བའི་ཞིང་།	དཀར་པོ།	ཕྱག་གཉིས་ཆོས་འཆད།	ཕྱུང་སེམས་ངེས་གནས་བསད་པའི་སྡིག་པ་འདག
༢༧	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དཔལ་བཟང་།	ནུབ།	བདེ་བ་ཅན།	སེར་པོ།	ཕྱག་གཡོན་ཆོས་འཆད། གཡས་སྐྱབས་སྦྱིན།	སློབ་དཔོན་བསད་པའི་སྡིག་པ་འདག
༢༨	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཙནྡན་དཔལ།	ནུབ་བྱང་།	དྲི་བཟང་པོས་ཁྱབ་པ།	སེར་པོ།	ཕྱག་གཡས་ས་གནོན། གཡོན་མཉམ་གཞག	དགེ་འདུན་གྱི་འདུ་བའི་སྒོ་བཀག་པའི་སྡིག་པ་འདག
༢༩	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་གཟི་བརྗིད་མཐའ་ཡས།	བྱང་།	གཟི་བརྗིད་དང་ལྡན་པ།	དམར་པོ།	ཕྱག་གཡས་ཆོས་འཆད། གཡོན་མཉམ་གཞག	མཆོད་རྟེན་བཤིག་པའི་སྡིག་པ་འདག
༣༠	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་འོད་དཔལ།	བྱང་ཤར།	རིན་ཡོད།	སྔོན་པོ།	བྱང་ཆུབ་མཆོག་གི་ཕྱག་རྒྱ།	ཞེ་སྡང་གིས་ཀུན་ནས་བསླངས་པའི་སྡིག་པ་འདག
༣༡	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་མྱ་ངན་མེད་པའི་དཔལ།	འོག	སྒྲིབ་པ་དང་བྲལ་བ།	དམར་སྐྱ།	ཕྱག་གཉིས་མཉམ་གཞག	འདོད་ཆགས་ཀྱིས་ཀུན་ནས་བསླངས་པའི་སྡིག་པ་འདག
༣༢	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་སྲེད་མེད་ཀྱི་བུ།	སྟེང་།	སྲིད་པ་དང་བྲལ་བ།	སེར་པོ།	ཕྱག་གཉིས་ཆོས་འཆད།	བསྐལ་པ་གྲིའི་སྡིག་པ་འདག
༣༣	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་མེ་ཏོག་དཔལ།	ཤར།	མེ་ཏོག་ཆེར་རྒྱས།	སེར་པོ།	ཕྱག་གཡས་མཐེབ་མཛུབ། གཡོན་ཆོས་འཆད།	བསྐལ་པ་འབྲུམ་གྱི་སྡིག་པ་འདག

༢༤	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཚངས་པའི་འོད་ཟེར་རྣམ་པར་རོལ་པས་མངོན་པར་མཁྱེན་པ།	ཤར་ལྷོ	ཚངས་པས་ཁྲུབ་པ།	སེར་པོ།	ཕྱག་གཡས་ས་གནོན། གཡོན་མཉམ་གཞག	བསྐལ་པ་སྟོང་གི་སྒྲིབ་པ་འདག
༢༥	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་པདྨའི་འོད་ཟེར་རྣམ་པར་རོལ་པས་མངོན་པར་མཁྱེན་པ།	ལྷོ།	པདྨ་དང་ལྡན་པ།	དམར་པོ།	ཕྱག་གཡས་ས་གནོན། གཡོན་མཉམ་གཞག	བསྐལ་པ་བདུན་གྱི་སྒྲིབ་པ་འདག
༢༦	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ནོར་དཔལ།	ལྷོ་ནུབ།	ནོར་བུ་ཡོད་པ།	སྔོན་པོ།	ཕྱག་གཉིས་ཆོས་འཆད།	འདོད་ཆགས་ཀྱིས་ཀུན་ནས་བསླངས་པའི་སྒྲིབ་པ་འདག
༢༧	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དྲན་པའི་དཔལ།	ནུབ།	གསལ་བ་དང་ལྡན་པ།	སེར་པོ།	ཕྱག་གཉིས་མཉམ་གཞག	ལུས་ཀྱི་སྒོ་ནས་བྱས་པའི་སྒྲིབ་པ་འདག
༢༨	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་མཚན་དཔལ་ཤིན་ཏུ་ཡོངས་བསྒྲགས།	ནུབ་བྱང་།	མཚན་མ་མེད་པ།	དཀར་པོ།	ཕྱག་གཡས་ཆོས་འཆད། གཡོན་མཉམ་གཞག	སངས་རྒྱས་འབྱུང་བ་ལ་མཉེས་པར་མ་བྱས་པའི་སྒྲིབ་པ་འདག
༢༩	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དབང་པོ་ཏོག་གི་རྒྱལ་མཚན་གྱི་རྒྱལ་པོ།	བྱང་།	དབང་པོ་གསལ་བ།	སྔོན་པོ།	ཕྱག་གཡས་རྒྱལ་མཆོག། གཡོན་མཉམ་གཞག	ཕྲག་དོག་བྱས་པའི་སྒྲིབ་པ་འདག
༣༠	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཤིན་ཏུ་རྣམ་པར་གནོན་པའི་དཔལ།	བྱང་ཤར།	རོལ་པ་དང་ལྡན་པ།	སྔོན་པོ།	ཕྱག་གཡས་རལ་གྲི གཡོན་མཉམ་གཞག	གཞན་ལ་སྒྲིབ་པ་བྱེད་དུ་བཅུག་པའི་སྒྲིབ་པ་འདག
༣༡	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་གཡུལ་ལས་ཤིན་ཏུ་རྣམ་པར་རྒྱལ་བ།	འོག	ཉོན་མོངས་པ་མེད་པ།	སྔོན་པོ།	ཁྲབ་འཛིན་པ།	ཡིད་ཀྱིས་ཀུན་ནས་བསླངས་པའི་སྒྲིབ་པ་འདག

༣༢	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་རྣམ་པར་གནོན་པས་གཤེགས་པའི་དཔལ།	ཤར།	དཔལ་དང་ལྡན་པ།	སྔོན་པོ།	ཕྱག་གཉིས་ས་གནོན།	ཕྲ་མ་བྱས་པའི་སྡིག་པ་འདག
༣༣	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཀུན་ནས་སྣང་བ་བཀོད་པའི་དཔལ།	ལྷོ།	སྣང་བ་བཀོད་པ།	སྔོན་པོ།	ཕྱག་གཉིས་ས་གནོན།	གཞན་གྱིས་སྡིག་པ་བྱས་པ་ལ་ཡི་རང་བྱས་པའི་སྡིག་པ་འདག
༣༤	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་རིན་ཆེན་པདྨས་རྣམ་པར་གནོན་པ།	ནུབ།	དཔལ་དང་ལྡན་པ།	དམར་སེར།	ཕྱག་གཡས་སྐྱབས་སྦྱིན། གཡོན་ཆོས་འཆད།	ཆོས་སྤོང་གི་ལས་བྱས་པའི་སྡིག་པ་འདག
༣༥	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་རི་དབང་གི་རྒྱལ་པོ།	བྱང་།	རིན་པོ་ཆེ།	སེར་པོ།	ཕྱག་གཉིས་ཀྱིས་རི་རབ་འཛིན་པ།	དམ་ཚིག་ཉམས་པའི་སྡིག་པ་འདག

ལྷན་ཐབས་དགུ་པ།

སངས་རྒྱས་སོ་ལྔའི་སྐུ་མདོག་ཕྱག་མཚན་དང་ཕྱག་རྒྱའི་བཞིད་པ་ཐ་དད་པ་རྣམས་སོ་སོར་བལྟ་བདེར་བཀོད་པའི་རེའུ་མིག

		སྐུ་མདོག			ཕྱག་རྒྱ་ཕྱག་མཚན།		
གྲངས།	སངས་རྒྱས་ཀྱི་མཚན།	སྐུ་མདུན།	ས་པད།	སྟེང་ཁ་པ།	སྐུ་མདུན།	ཧེ་ས་པད།	ཧེ་སྟེང་ཁ་པ།
༡	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཤཱཀྱ་ཐུབ་པ།	སེར་པོ།	དཀར་པོ།	སེར་པོ།	ཆོས་འཆད་ཀྱི་རྣམ་པ།	ཆོས་འཆད།	ཕྱག་གཡས་ས་གནོན། གཡོན་མཉམ་གཞག
༢	རྡོ་རྗེ་སྙིང་པོ་རབ་ཏུ་འཇོམས་པ།	སྔོན་པོ།	སྔོན་པོ།	སེར་པོ།	རྡོ་རྗེ་གཉིས།	ས་གནོན།	ཕྱག་གཉིས་ཆོས་འཆད།
༣	རིན་ཆེན་འོད་འཕྲོ།	དཀར་པོ།	སེར་པོ།	དམར་པོ།	རྡོ་རྗེ་དང་ཉི་མ།	མཆོག་སྦྱིན།	ཕྱག་གཉིས་མཉམ་གཞག
༤	ཀླུ་དབང་གི་རྒྱལ་པོ།	སྔོན་པོ།	དམར་པོ།	ཞལ་མཐིན་ དཀར་ཞིང་ སྐུ་སྔོན་པོ།	ཀླུ་ཤིང་དང་སྦྲུལ་སྔོན་པོ།	མཉམ་གཞག	ཕྱག་གཉིས་ཆོས་འཆད།
༥	དཔའ་བོའི་སྡེ།	སེར་པོ།	ལྗང་གུ	སེར་པོ།	པོ་ཏི་དང་རལ་གྲི།	སྐྱབས་སྦྱིན།	ཕྱག་གཡོན་ཆོས་འཆད། གཡས་སྐྱབས་སྦྱིན།
༦	དཔའ་དགྱེས།	དམར་སེར།	དཀར་པོ།	སེར་པོ།	ཉི་མ་དང་པདྨ་དམར་པོ།	ཆོས་འཆད།	ཕྱག་གཉིས་ཆོས་འཆད།
༧	རིན་ཆེན་མེ།	དམར་པོ།	སྔོན་པོ།	དམར་པོ།	རིན་པོ་ཆེ་དང་མེའི་དཀྱིལ་འཁོར།	ས་གནོན།	ཕྱག་གཡས་ས་གནོན། གཡོན་མཉམ་གཞག
༨	རིན་ཆེན་ཟླ་འོད།	དཀར་པོ།	སེར་པོ།	དཀར་པོ།	རིན་པོ་ཆེ་དང་ཟླ་བ།	མཆོག་སྦྱིན།	གཡོན་མཉམ་གཞག གཡས་མཆོད་སྦྱིན།

༩	མཐོང་བ་དོན་ཡོད།	ལྗང་གུ	དམར་པོ།	ལྗང་གུ	སངས་རྒྱས་ཀྱི་སྤྱན་གཉིས།	མཉམ་གཞག	གཡས་སྐྱབས་སྦྱིན། གཡོན་མཉམ་གཞག
༡༠	རིན་ཆེན་ཟླ་བ།	དཀར་ལྗང་།	ལྗང་གུ	དཀར་པོ།	རིན་པོ་ཆེ་དང་ཟླ་བ།	སྐྱབས་སྦྱིན།	བྱང་ཆུབ་མཆོག་གི་ཕྱག་རྒྱ།
༡༡	དྲི་མ་མེད་པ།	ཐལ་མདོག	དཀར་པོ།	སྔོན་པོ།	མི་ཕྱེད་དྲི་མ་མེད་པ་གཉིས།	ཆོས་འཆད།	ཕྱག་གཉིས་མཉམ་གཞག
༡༢	དཔའ་སྦྱིན།	དཀར་པོ།	སྔོན་པོ།	སེར་པོ།	ཤིང་དཔལ་འབྲས་འཛིན་པ།	ས་གནོན།	ཕྱག་གཉིས་ཆོས་འཆད།
༡༣	ཚངས་པ།	དམར་སེར།	སེར་པོ།	སེར་པོ།	པདྨ་དང་ཉི་མ།	མཆོག་སྦྱིན།	ཕྱག་གཡས་ས་གནོན། གཡོན་མཉམ་གཞག
༡༤	ཚངས་པས་བྱིན།	སེར་པོ།	དམར་པོ།	དམར་སེར།	ཟླ་བ་དང་པདྨ།	མཉམ་གཞག	ཕྱག་གཉིས་ཆོས་འཆད།
༡༥	ཆུ་ལྷ།	སྔོན་པོ།	ལྗང་གུ	དཀར་པོ།	ཆོས་འཆད་ཀྱི་རྣམ་པ།	སྐྱབས་སྦྱིན།	ཕྱག་གཉིས་མཉམ་གཞག
༡༦	ཆུ་ལྷའི་ལྷ།	དཀར་པོ།	དཀར་པོ།	དཀར་པོ།	དཀྱིལ་འཁོར་དང་མི་ཕྱེད།	ཆོས་འཆད།	ཕྱག་གཉིས་ཆོས་འཆད།
༡༧	དཔལ་བཟང་།	དམར་པོ།	སྔོན་པོ།	སེར་པོ།	པདྨ་དང་དཔག་བསམ་ཤིང་།	ས་གནོན།	ཕྱག་གཡོན་ཆོས་འཆད། གཡས་སྐྱབས་སྦྱིན།
༡༨	ཙནྡན་དཔལ།	དམར་སེར།	སེར་པོ།	སེར་པོ།	ཙནྡན་གྱི་སྡོང་པོ་དང་དཔལ་འབྲས།	མཆོག་སྦྱིན།	ཕྱག་གཡས་ས་གནོན། གཡོན་མཉམ་གཞག
༡༩	གཟི་བརྗིད་མཐའ་ཡས།	དམར་པོ།	དམར་པོ།	དམར་པོ།	ཉི་མ་གཉིས།	མཉམ་གཞག	ཕྱག་གཡས་ཆོས་འཆད། གཡོན་མཉམ་གཞག
༢༠	འོད་དཔལ།	དཀར་པོ།	ལྗང་གུ	སྔོན་པོ།	འོད་དཀར་པོའི་དཀྱིལ་འཁོར།	སྐྱབས་སྦྱིན།	བྱང་ཆུབ་མཆོག་གི་ཕྱག་རྒྱ།
༢༡	མྱ་ངན་མེད་པའི་དཔལ།	སྔོ་སྐྱ།	དཀར་པོ།	དམར་སྐྱ།	ཤིང་མྱ་ངན་མེད།	ཆོས་འཆད།	ཕྱག་གཉིས་མཉམ་གཞག
༢༢	སྲེད་མེད་ཀྱི་བུ།	སྔོན་པོ།	སྔོན་པོ།	སེར་པོ།	ཆོས་འཆད་ཀྱི་རྣམ་པ།	ས་གནོན།	ཕྱག་གཉིས་ཆོས་འཆད།

༣༣	མི་ཏོག་དཔལ།	སེར་པོ།	སེར་པོ།	སེར་པོ།	མི་ཏོག་སེར་པོ་དང་ཤིང་ཏོག་དཔལ་འབྲས།	མཆོག་སྦྱིན།	ཕྱག་གཡས་མཆིན་མཛུབ། གཡོན་ཆོས་འཆད།
༣༤	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཚངས་པའི་འོད་ཟེར་རྣམ་པར་རོལ་པས་མངོན་པར་མཁྱེན་པ།	དཀར་པོ།	དམར་པོ།	སེར་པོ།	པདྨ་དཀར་པོ་དང་འོད་ཕུང་།	མཉམ་གཞག	ཕྱག་གཡས་ས་གནོན། གཡོན་མཉམ་གཞག
༣༥	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་པདྨའི་འོད་ཟེར་རྣམ་པར་རོལ་པས་མངོན་པར་མཁྱེན་པ།	དམར་པོ།	ལྗང་གུ	དམར་པོ།	པདྨ་དང་ཉི་མ།	སྐྱབས་སྦྱིན།	ཕྱག་གཡས་ས་གནོན། གཡོན་མཉམ་གཞག
༣༦	ནོར་དཔལ།	དམར་དཀར།	དཀར་པོ།	སྔོན་པོ།	རིན་པོ་ཆེ་གཉིས།	ཆོས་འཆད།	ཕྱག་གཉིས་ཆོས་འཆད།
༣༧	དྲན་པའི་དཔལ།	སེར་པོ།	སྔོན་པོ།	སེར་པོ།	པོ་ཏི་དང་རལ་གྲི	ས་གནོན།	ཕྱག་གཉིས་མཉམ་གཞག
༣༨	མཚན་དཔལ་ཤིན་དུ་ཡོངས་གྲགས།	ལྗང་གུ	སེར་པོ།	དཀར་པོ།	དེ་བཞིན་གཤེགས་པའི་གཙུག་ཏོར་སྒྲིབས་པ།	མཆོག་སྦྱིན།	ཕྱག་གཡས་ཆོས་འཆད། གཡོན་མཉམ་གཞག
༣༩	དབང་པོ་ཏོག་གི་རྒྱལ་མཚན་གྱི་རྒྱལ་པོ།	སེར་པོ།	དམར་པོ།	སྔོན་པོ།	རིན་པོ་ཆེའི་ཏོག་དང་རྒྱལ་མཚན།	མཉམ་གཞག	ཕྱག་གཡས་རྒྱལ་མཚན། གཡོན་མཉམ་གཞག
༤༠	ཤིན་དུ་རྣམ་པར་གནོན་པའི་དཔལ།	དཀར་པོ།	ལྗང་གུ	སེར་པོ།	ས་གནོན།	སྐྱབས་སྦྱིན།	ཕྱག་གཡས་རལ་གྲི གཡོན་མཉམ་གཞག
༤༡	གཡུལ་ལས་ཤིན་དུ་རྣམ་པར་རྒྱལ་བ།	ནག་པོ།	དཀར་པོ།	སྔོན་པོ།	ཁྲབ་དང་རལ་གྲི།	ཆོས་འཆད།	ཁྲབ་འཛིན་པ།
༤༢	རྣམ་པར་གནོན་པས་གཤེགས་པའི་དཔལ།	དཀར་པོ།	སྔོན་པོ།	སྔོན་པོ།	ས་གནོན་དང་མི་འཇིགས་པ།	ས་གནོན།	ཕྱག་གཉིས་ས་གནོན།

༣༣	ཀུན་ནས་སྣང་བ་བཀོད་པའི་དཔལ།	སེར་པོ།	སེར་པོ།	སྔོན་པོ།	ཉི་མ་དང་ རིན་པོ་ཆེའི་སྣང་བ།	མཆོག་སྦྱིན།	ཕྱག་གཉིས་ས་གནོན།
༣༤	རིན་ཆེན་པདྨ་རྣམ་པར་གནོན་པ།	དམར་པོ།	དམར་པོ།	དམར་སེར།	རིན་པོ་ཆེ་དང་པདྨ།	མཉམ་བཞག	ཕྱག་གཡས་སྐྱབས་སྦྱིན། གཡོན་ཆོས་འཆད།
༣༥	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་རི་དབང་གི་རྒྱལ་པོ།	སྔོན་པོ།	ལྗང་གུ	སེར་པོ།	ཕྱག་གཉིས་ཀྱིས་རི་རབ་སྟེང་པ།	སྐྱབས་སྦྱིན།	ཕྱག་གཉིས་ཀྱིས་རི་རབ་འཛིན་པ།

अष्टम परिशिष्ट

तीन विद्वानों के मतानुसार ३५ तथागतों की दिशा, क्षेत्र, कायवर्ण इत्यादि की सारणी

आचार्य नागार्जुन की परम्परा के अनुसार सारणी

सं०	बुद्धों का नाम	दिशा	क्षेत्र	वर्ण	मुद्रा एवं आयुध	अनुशंसा[१]
१.	तथागत शाक्यमुनि	मध्य	लोकपति	पीत	धर्म-उपदेश	दस हजार कल्पों के पापों की विशुद्धि
२.	वज्रगर्भप्रमादिन्	ऊर्ध्व (ऊपर)	गगनगर्भ	नील	दो वज्र	दस हजार कल्पों के पापों की विशुद्धि
३.	रत्नार्चिष्	पूर्व	रत्नभव	श्वेत	वज्र एवं सूर्य	३१ हजार कल्पों के पापों की विशुद्धि
४.	नागेश्वरराज	दक्षिणपूर्व	नागव्यास	नील	नागलता और नीलसर्प	आठ कल्पों के पापों की विशुद्धि
५.	वीरसेन	दक्षिण	वीरवती	पीत	पुस्तक एवं खड्ग	अहंकार जनित पापों की विशुद्धि
६.	वीरनन्दी	दक्षिणपश्चिम	नन्दवती	पिङ्गल	सूर्य एवं रक्तपद्म	चित्त द्वारा संचित पापों की विशुद्धि
७.	रत्नाग्नि	पश्चिम	आभासवती	रक्त	मणिरत्न एवं अग्नि-मण्डल	संघ सामग्री की चोरी के उपयोग से होने वाले पापों की विशुद्धि
८.	रत्नचन्द्रप्रभ	पश्चिमोत्तर	सुप्रभ	शुक्ल	रत्न एवं चन्द्र	एक कल्प के पापों की विशुद्धि
९.	अमोघदर्शिन	उत्तर	दुन्दुभिघोष	हरित	बुद्ध के दो चक्षु	आर्यों के अपवाद पर उत्पन्न पापों की विशुद्धि
१०.	रत्नचन्द्र	पूर्वोत्तर	मरीचिका	हरितश्वेत	रत्न एवं चन्द्र	मातृवध जनित पापों की विशुद्धि
११.	निर्मल	अधोदिशा	भस्मव्यास	धूम्र या भस्म	दो निर्मलादर्श	पितृवध जनित पापों की विशुद्धि
१२.	शूरदत्त	ऊर्ध्व	श्रीवत्स	शुक्ल	पत्रफलयुक्त वृक्ष श्रीफल	अर्हद्-वध जनित पापों की विशुद्धि

१. पापविशुद्धि की अनुशंसा ग्यल् छब् जे के द्वारा कृत त्रिस्कन्धसूत्रटीका के मतानुसार दिया गया है।

१३.	ब्रह्मा	पूर्व	विगतावरण	पिङ्गल	पद्म एवं सूर्य	संघभेद जनित पापों की विशुद्धि
१४.	ब्रह्मदत्त	दक्षिणपूर्व	अशोक	पीत	चन्द्र एवं पद्म	तथागत के शरीर से रक्तोत्पाद से उत्पन्न पापों की विशुद्धि
१५.	वरुण	दक्षिण	विमल	नील	जलमण्डल के मध्य में धर्मचक्र-प्रवर्तन-मुद्रा	अर्हत-माता को दूषित करने के पापों की विशुद्धि
१६.	वरुणदेव	दक्षिणपश्चिम	आभावती	श्वेत	मण्डल एवं आदर्श	नियतभावी बोधिसत्त्व के बध से उत्पन्न पापों की विशुद्धि
१७.	भद्रश्री	पश्चिम	सुखावती	रक्त	पद्म एवं कल्पवृक्ष	गुरु वध जनित पापों की विशुद्धि
१८.	चन्दनश्री	उत्तरपश्चिम	सुगन्धव्यास	पिङ्गल	चन्दन वृक्ष एवं श्रीफल	संघ के लिए दान दी जानेवाली राशि के अवरोध से जनित पापों की विशुद्धि
१९.	अनन्तौजस्	उत्तर	तेजस्वती	रक्त	दो सूर्यमण्डल	स्तूप विनाश जनित पापों की विशुद्धि
२०.	प्रभासश्री	उत्तरपूर्व	अमोघवती	श्वेत	श्वेतप्रभामण्डल	द्वेषजनित पापों की विशुद्धि
२१.	अशोकश्री	अधोदिशा	आवरणविगत	श्वेतनील	अशोक विटप	रागजनित पापों की विशुद्धि
२२.	नारायण	ऊर्ध्व	तृष्णाविगत	नील	मेरु और पद्म	दस हजार कल्पों के पापों की विशुद्धि
२३.	कुसुमश्री	पूर्व	कुसुमविकास	पीत	पीतकुसुम तथा श्रीफल	एक लाख कल्पों के पापों की विशुद्धि
२४.	तथागतब्रह्मज्योति-विंक्रीडिताभिज्ञ	दक्षिणपूर्व	ब्रह्मव्याप्ति	श्वेत	पद्म एवं प्रकाशपुञ्ज	एक सहस्र कल्पों के पापों की विशुद्धि
२५.	तथागत पद्मज्योति-विंक्रीडिताभिज्ञ	दक्षिण	पद्मावती	रक्त	पद्म एवं सूर्य	सात कल्पों के पापों की विशुद्धि
२६.	धनश्री	दक्षिणपश्चिम	मणिवर्तन	रक्तश्वेत प्रकाशवान	दो रत्न	काम राग से उत्पन्न पापों की विशुद्धि
२७.	स्मृतिश्री	पश्चिम	प्रभावती	पीत	पुस्तक एवं खड्ग	काय द्वारा कृत पापों की विशुद्धि

२८.	सुपरिकीर्तितनाम-धेयश्री	पश्चिमोत्तर	अनिमित्त	हरित	दोनों हाथों से तथागतोष्णीष बन्धन	आगामी बुद्ध के प्रति अप्रीति से जनित पापों की विशुद्धि
२९.	इन्द्रकेतुध्वजराज	उत्तर	इन्द्रप्रभ	पीत	रत्नकेतु एवं ध्वज	ईर्ष्याजनित पापों की विशुद्धि
३०.	सुविक्रान्तश्री	उत्तरपूर्व	लीलावती	श्वेत	भूमि स्पर्श	पाप करने की प्रेरणा देने से उत्पन्न पापों की विशुद्धि
३१.	विजितसंग्राम	अधोदिशा	अक्लिष्ट	श्याम	कवच एवं खड्ग	मानसिक पापेच्छा जनित पापों की विशुद्धि
३२.	विक्रान्तगामी	पूर्व	श्रीवत्स	श्वेत	भूमि स्पर्श एवं अभय	पैशुन्य जनित पापों की विशुद्धि
३३.	समन्तावभास-व्यूहश्री	दक्षिण	अवभास	पीत	सूर्य एवं रत्नवृक्ष	पापानुमोदन जनित पापों की विशुद्धि
३४.	रत्नपद्मविक्रामी	पश्चिम	श्रीवत्स	रक्त	मणिरत्न एवं पद्म	धर्मों के प्रहाण से उत्पन्न पापों की विशुद्धि
३५.	तथागतरत्नपद्मसु-प्रतिष्ठितशैलेन्द्रराज	उत्तर	रत्नभूमि	नील	दोनों हाथों से मेरु पर्वत सिर पर उठाये हुये	समय (जिन नियमों के पालन की प्रतिज्ञा ली है) की च्युति से उत्पन्न पापों की विशुद्धि

साक्य पण्डित कुनगा ग्यलछेन की परम्परा के अनुसार सारणी

सं०	बुद्धों के नाम	दिशा	क्षेत्र	वर्ण	मुद्राएँ	अनुशंसा[1]
१.	तथागत शाक्यमुनि	मध्य	लोकपति	श्वेत	धर्मप्रवर्तन	दस हजार कल्पों के पापों की विशुद्धि
२.	वज्रगर्भप्रमर्दिन	पूर्व	गगनगर्भ	नील	भूमि स्पर्श	दस हजार कल्पों के पापों की विशुद्धि
३.	रत्नार्चिष्	दक्षिण	रत्नभव	पीत	वरदत्त	३१ हजार कल्पों के पापों की विशुद्धि
४.	नागेश्वरराज	पश्चिम	नागव्याप्त	रक्त	समाहित	आठ कल्पों के पापों की विशुद्धि
५.	वीरसेन	उत्तर	वीरवती	हरित	शरणदत्त	अहंकार जनित पापों की विशुद्धि
६.	वीरनन्दी	मध्य	नन्दवती	श्वेत	धर्मप्रवर्तन	चित्त द्वारा संचित पापों की विशुद्धि
७.	रत्नाग्नि	पूर्व	आभासवती	नील	भूमि स्पर्श	संघ सामग्री की चोरी के उपयोग से होने वाले पापों की विशुद्धि
८.	रत्नचन्द्रप्रभ	दक्षिण	सुप्रभ	पीत	वरदत्त	एक कल्प के पापों की विशुद्धि
९.	अमोघदर्शिन	पश्चिम	दुन्दुभिघोष	रक्त	समाहित	आर्यों के अपवाद पर उत्पन्न पापों की विशुद्धि
१०.	रत्नचन्द्र	उत्तर	मरीचिका	हरित	शरणदत्त	मातृवध जनित पापों की विशुद्धि
११.	निर्मल	मध्य	भस्मव्याप्त	श्वेत	धर्मप्रवर्तन	पितृवध जनित पापों की विशुद्धि
१२.	शूरदत्त	पूर्व	श्रीवत्स	नील	भूमि स्पर्श	अर्हद्-वध जनित पापों की विशुद्धि
१३.	ब्रह्मा	दक्षिण	विगतावरण	पीत	वरदत्त	संघभेद जनित पापों की विशुद्धि
१४.	ब्रह्मदत्त	पश्चिम	अशोक	रक्त	समाहित	तथागत के शरीर से रक्तोत्पाद से उत्पन्न पापों की विशुद्धि
१५.	वरुण	उत्तर	विमल	हरित	शरणदत्त	अर्हत-माता को दूषित करने के पापों की विशुद्धि

१. दिशा एवं क्षेत्र आचार्य नागार्जुन के मतानुसार तथा पापविशुद्धि की अनुशंसा ग्यल् छब् जे के द्वारा कृत आर्यत्रिस्कन्धसूत्रटीका के मतानुसार दिया गया है।

१६.	वरुणदेव	मध्य	आभावती	श्वेत	धर्मप्रवर्तन	नियतभावी बोधिसत्त्व के बध से उत्पन्न पापों की विशुद्धि
१७.	भद्रश्री	पूर्व	सुखावती	नील	भूमि स्पर्श	गुरु वध जनित पापों की विशुद्धि
१८.	चन्दनश्री	दक्षिण	सुगन्धव्याप्त	पीत	वरदत्त	संघ के लिए दान दी जानेवाली राशि के अवरोध से जनित पापों की विशुद्धि
१९.	अनन्तौजस्	पश्चिम	तेजस्वती	रक्त	समाहित	स्तूप विनाश जनित पापों की विशुद्धि
२०.	प्रभासश्री	उत्तर	अमोघवती	हरित	शरणदत्त	द्वेषजनित पापों की विशुद्धि
२१.	अशोकश्री	मध्य	आवरणविगत	श्वेत	धर्मप्रवर्तन	रागजनित पापों की विशुद्धि
२२.	नारायण	पूर्व	तृष्णाविगत	नील	भूमि स्पर्श	दस हजार कल्पों के पापों की विशुद्धि
२३.	कुसुमश्री	दक्षिण	कुसुमविकास	पीत	वरदत्त	एक लाख कल्पों के पापों की विशुद्धि
२४.	तथागत ब्रह्मज्योति-विंक्रीडिताभिज्ञ	पश्चिम	ब्रह्मव्याप्ति	रक्त	समाहित	एक सहस्र कल्पों के पापों की विशुद्धि
२५.	तथागत पद्मज्योति-विंक्रीडिताभिज्ञ	उत्तर	पद्मावती	हरित	शरणदत्त	सात कल्पों के पापों की विशुद्धि
२६.	धनश्री	मध्य	मणिवर्तन	श्वेत	धर्मप्रवर्तन	काम राग से उत्पन्न पापों की विशुद्धि
२७.	स्मृतिश्री	पूर्व	प्रभावती	नील	भूमि स्पर्श	काय द्वारा कृत पापों की विशुद्धि
२८.	सुपरिकीर्तितनामधेयश्री	दक्षिण	अनिमित्त	पीत	वरदत्त	आगामी बुद्ध के प्रति अप्रीति से जनित पापों की विशुद्धि
२९.	इन्द्रकेतुध्वजराज	पश्चिम	इन्द्रप्रभ	रक्त	समाहित	ईर्ष्याजनित पापों की विशुद्धि
३०.	सुविक्रान्तश्री	उत्तर	लीलावती	हरित	शरणदत्त	पाप करने की प्रेरणा देने से उत्पन्न पापों की विशुद्धि
३१.	विजितसंग्राम	मध्य	अक्लिष्ट	श्वेत	धर्मप्रवर्तन	मानसिक पापेच्छा जनित पापों की विशुद्धि
३२.	विक्रान्तगामी	पूर्व	श्रीवत्स	नील	भूमि स्पर्श	पैशुन्य जनित पापों की विशुद्धि
३३.	समन्तावभास-व्यूहश्री	दक्षिण	अवभास व्यूह	पीत	वरदत्त	पापानुमोदन जनित पापों की विशुद्धि
३४.	रत्नपद्मविक्रामी	पश्चिम	श्रीवत्स	रक्त	समाहित	धर्मों के प्रहाण से उत्पन्न पापों की विशुद्धि
३५.	रत्नपद्म-सुप्रतिष्ठित-शैलेन्द्रराज तथागत	उत्तर	रत्नभूमि	हरित	शरणदत्त	समय (जिन नियमों के पालन की प्रतिज्ञा ली है) की च्युति से उत्पन्न पापों की विशुद्धि

जे चोंखापा की परम्परा के अनुसार सारणी

सं०	बुद्धों का नाम	दिशा	क्षेत्र	वर्ण	मुद्रा एवं आयुध	अनुशंसा[१]
१.	तथागत शाक्यमुनि	मध्य	लोकपति	पीत	दक्षिण हस्त भूमि स्पर्श वाम हस्त समाहित	दस हजार कल्पों के पापों की विशुद्धि
२.	तथागत वज्रगर्भप्रमादिन्	ऊर्ध्व (ऊपर)	गगनगर्भ	पीत	दोनों हाथ धर्मप्रवर्तन	दस हजार कल्पों के पापों की विशुद्धि
३.	तथागत रत्नार्चिष्	पूर्व	रत्नभव	रक्त	दोनों हाथ समाहित	३१ हजार कल्पों के पापों की विशुद्धि
४.	तथागत नागेश्वरराज	दक्षिणपूर्व	नागव्यास	मुख श्वेत शेष नील	दोनों हाथ धर्मप्रवर्तन	आठ कल्पों के पापों की विशुद्धि
५.	तथागत वीरसेन	दक्षिण	वीरवती	पीत	वाम हस्त धर्मप्रवर्तन तथा दक्षिण हस्त शरणदत्त	अहंकार जनित पापों की विशुद्धि
६.	तथागत वीरनन्दी	दक्षिणपश्चिम	नन्दवती	पीत	दोनों हाथ धर्मप्रवर्तन	चित्त द्वारा संचित पापों की विशुद्धि
७.	तथागत रत्नाग्नि	पश्चिम	आभासवती	रक्त	दक्षिण हस्त भूमि स्पर्श तथा वाम हस्त समाहित	संघ सामग्री की चोरी के उपयोग से होने वाले पापों की विशुद्धि
८.	तथागत रत्नचन्द्रप्रभ	पश्चिमोत्तर	सुप्रभ	श्वेत	वाम हस्त समाहित तथा दक्षिण हस्त पूजादत्त	एक कल्प के पापों की विशुद्धि
९.	तथागत अमोघदर्शिन	उत्तर	दुन्दुभिघोष	हरित	दक्षिण हस्त शरणदत्त तथा वाम हस्त समाहित	आर्यों के अपवाद पर उत्पन्न पापों की विशुद्धि
१०.	तथागत रत्नचन्द्र	पूर्वोत्तर	मरीचिका	श्वेत	उत्तमबोधि के मुद्रा	मातृवध जनित पापों की विशुद्धि

---

१. दिशा एवं क्षेत्र आचार्य नागार्जुन के अनुसार तथा पापविशुद्धि की अनुशंसा ग्यल् छब् जे के द्वारा कृत त्रिस्कन्धसूत्रटीका के मतानुसार दिया गया है।

११.	तथागत निर्मल	अधोदिशा	भस्मव्याप्त	नील	दोनों हाथ समाहित	पितृवध जनित पापों की विशुद्धि
१२.	तथागत शूरदत्त	ऊर्ध्व	श्रीवत्स	पीत	दोनों हाथ धर्मप्रवर्तन	अर्हद्-वध जनित पापों की विशुद्धि
१३.	तथागत ब्रह्मा	पूर्व	विगतावरण	पीत	दक्षिण हस्त भूमि स्पर्श तथा बाम हस्त समाहित	संघभेद जनित पापों की विशुद्धि
१४.	तथागत ब्रह्मदत्त	दक्षिणपूर्व	अशोक	रक्तपीत	दोनों हाथ धर्मप्रवर्तन	तथागत के शरीर से रक्तोत्पाद से उत्पन्न पापों की विशुद्धि
१५.	तथागत वरुण	दक्षिण	विमल	श्वेत	दोनों हाथ समाहित	अर्हत-माता को दूषित करने के पापों की विशुद्धि
१६.	तथागत वरुणदेव	दक्षिणपश्चिम	आभावती	श्वेत	दोनों हाथ धर्मप्रवर्तन	नियतभावी बोधिसत्त्व के बध से उत्पन्न पापों की विशुद्धि
१७.	तथागत भद्रश्री	पश्चिम	सुखावती	पीत	वाम हस्त धर्मप्रवर्तन तथा दक्षिण हस्त शरणदत्त	गुरु वध जनित पापों की विशुद्धि
१८.	तथागत चन्दनश्री	उत्तरपश्चिम	सुगन्धव्याप्त	पीत	दक्षिण हस्त भूमि स्पर्श तथा वाम हस्त समाहित	संघ के लिए दान दी जानेवाली राशि के अवरोध से जनित पापों की विशुद्धि
१९.	तथागत अनन्तौजस्	उत्तर	तेजस्वती	रक्त	दक्षिण हस्त धर्मप्रवर्तन तथा वाम समाहित	स्तूप विनाश जनित पापों की विशुद्धि
२०.	तथागतप्रभासश्री	उत्तरपूर्व	अमोघवती	नील	उत्तमबोधिमुद्रा	द्वेषजनित पापों की विशुद्धि
२१.	तथागत अशोकश्री	अधोदिशा	आवरणविगत	श्वेतरक्त	दोनों हाथ समाहित	रागजनित पापों की विशुद्धि
२२.	तथागत नारायण	ऊर्ध्व	तृष्णाविगत	पीत	दोनों हाथ धर्मप्रवर्तन	दस हजार कल्पों के पापों की विशुद्धि
२३.	तथागत कुसुमश्री	पूर्व	कुसुमविकास	पीत	दक्षिण अंगुष्ठ भूमि स्पर्श वाम धर्मप्रवर्तन	एक लाख कल्पों के पापों की विशुद्धि
२४.	त था ग त ब्रह्मज्योति-विक्रीडिताभिज्ञ	दक्षिणपूर्व	ब्रह्मव्याप्ति	पीत	दक्षिण हस्त भूमि स्पर्श तथा वाम हस्त समाहित	एक सहस्त्र कल्पों के पापों की विशुद्धि

२५.	तथागत पद्मज्योति-विक्रीडिताभिज्ञ	दक्षिण	पद्मावती	रक्त	दक्षिण हस्त भूमि स्पर्श तथा वाम समाहित	सात कल्पों के पापों की विशुद्धि
२६.	तथागत धनश्री	दक्षिणपश्चिम	मणिवर्तन	नील	दोनों हाथ धर्मप्रवर्तन	काम राग से उत्पन्न पापों की विशुद्धि
२७.	तथागत स्मृतिश्री	पश्चिम	प्रभावती	पीत	दोनों हाथ समाहित	काय द्वारा कृत पापों की विशुद्धि
२८.	तथागत सुपरिकीर्तित-नामधेयश्री	पश्चिमोत्तर	अनिमित्त	श्वेत	दक्षिण हस्त धर्मप्रवर्तन तथा वाम हस्त समाहित	आगामी बुद्ध के प्रति अप्रीति से जनित पापों की विशुद्धि
२९.	तथागत इन्द्रकेतुध्वजराज	उत्तर	इन्द्रप्रभ	नील	दक्षिण हस्त ध्वज तथा वाम हस्त समाहित	ईर्ष्याजनित पापों की विशुद्धि
३०.	तथागत सुविक्रान्तश्री	उत्तरपूर्व	लीलावती	नील	दक्षिण हस्त खड्ग तथा वाम हस्त समाहित	पाप करने की प्रेरणा देने से उत्पन्न पापों की विशुद्धि
३१.	तथागत विजितसंग्राम	अधोदिशा	अक्लिष्ट	नील	दोनों हाथ से कवच धारण	मानसिक पापेच्छा जनित पापों की विशुद्धि
३२.	तथागत विक्रान्तगामी	पूर्व	श्रीवत्स	नील	दोनों हाथ भूमि स्पर्श	पैशुन्य जनित पापों की विशुद्धि
३३.	तथागत समन्तावभास-व्यूहश्री	दक्षिण	अवभास व्यूह	रक्तपीत	दोनों हाथ भूमि स्पर्श	पापानुमोदन जनित पापों की विशुद्धि
३४.	तथागत रत्नपद्मविक्रामी	पश्चिम	श्रीवत्स	पीत	दक्षिण हस्त शरणदत्त तथा वाम हस्त धर्मप्रवर्तन	धर्मों के प्रहाण से उत्पन्न पापों की विशुद्धि
३५.	तथागत रत्नपद्म-सुप्रतिष्ठित-शैलेन्द्रराज	उत्तर	रत्नभूमि	नील	दोनों हाथों से मेरु पर्वत धारण	समय (जिन नियमों के पालन की प्रतिज्ञा ली है) की च्युति से उत्पन्न पापों की विशुद्धि

नवम परिशिष्ठ

तीन विद्वानों के अनुसार ३५ बुद्धों के कायवर्ण, आयुध तथा मुद्राओं की तुलनात्मक सारणी

		वर्ण			मुद्रा एवं आयुध		
सं०	बुद्धों का नाम	नागार्जुन	साक्य पण्डित	जे चोंखापा	नागार्जुन	साक्य पाण्डित	जे चोंखापा
१.	तथागत शाक्यमुनि	पीत	श्वेत	पीत	धर्म-उपदेश	धर्मप्रवर्तन	दक्षिण हस्त भूमि स्पर्श वाम हस्त समाहित
२.	वज्रगर्भप्रमादिन्	नील	नील	पीत	दो वज्र	भूमि स्पर्श	दोनों हाथ धर्मप्रवर्तन (उपदेश)
३.	रत्नार्चिष्	श्वेत	पीत	रक्त	वज्र एवं सूर्य	वरदत्त	दोनों हाथ समाहित
४.	नागेश्वरराज	नील	रक्त	मुख, कण्ठ श्वेत शेष नील	नागलता और नीलसर्प	समाहित	दोनों हाथ धर्मप्रवर्तन (उपदेश)
५.	वीरसेन	पीत	हरित	पीत	पुस्तक एवं खड्ग	शरणदत्त	वाम हस्त धर्मप्रवर्तन तथा दक्षिण हस्त शरणदत्त
६.	वीरनन्दी	पिङ्गल	श्वेत	पीत	सूर्य एवं रक्तपद्म	धर्मप्रवर्तन	दोनों हाथ धर्मप्रवर्तन
७.	रत्नाग्नि	रक्त	नील	रक्त	मणिरत्न एवं अग्निमण्डल	भूमि स्पर्श	दक्षिण हस्त भूमि स्पर्श तथा वाम हस्त समाहित
८.	रत्नचन्द्रप्रभ	शुक्ल	पीत	श्वेत	रत्न एवं चन्द्र	वरदत्त	वाम हस्त समाहित तथा दक्षिण हस्त पूजादत्त
९.	अमोघदर्शिन	हरित	रक्त	हरित	बुद्ध के दो चक्षु	समाहित	दक्षिण हस्त शरणदत्त तथा वाम हस्त समाहित
१०.	रत्नचन्द्र	हरितश्वेत	हरित	श्वेत	रत्न एवं चन्द्र	शरणदत्त	उत्तमबोधि के मुद्रा
११.	निर्मल	धूम्र या भस्म	श्वेत	नील	दो निर्मलादर्श	धर्मप्रवर्तन	दोनों हाथ समाहित

१२.	शूरदत्त	शुक्ल	नील	पीत	पत्रफलयुक्त वृक्ष श्रीफल	भूमि स्पर्श	दोनों हाथ धर्मप्रवर्तन
१३.	ब्रह्मा	पिङ्गल	पीत	पीत	पद्म एवं सूर्य	वरदत्त	दक्षिण हस्त भूमि स्पर्श तथा बाम हस्त समाहित
१४.	ब्रह्मदत्त	पीत	रक्त	रक्तपीत	चन्द्र एवं पद्म	समाहित	दोनों हाथ धर्मप्रवर्तन
१५.	वरुण	नील	हरित	श्वेत	जलमण्डल के मध्य में धर्मचक्र-प्रवर्तन-मुद्रा	शरणदत्त	दोनों हाथ समाहित
१६.	वरुणदेव	श्वेत	श्वेत	श्वेत	मण्डल एवं आदर्श	धर्मप्रवर्तन	दोनों हाथ धर्मप्रवर्तन
१७.	भद्रश्री	रक्त	नील	पीत	पद्म एवं कल्पवृक्ष	भूमि स्पर्श	वाम हस्त धर्मप्रवर्तन तथा दक्षिण हस्त शरणदत्त
१८.	चन्दनश्री	पिङ्गल	पीत	पीत	चन्दन वृक्ष एवं श्रीफल	वरदत्त	दक्षिण हस्त भूमि स्पर्श तथा वाम हस्त समाहित
१९.	अनन्तौजस्	रक्त	रक्त	रक्त	दो सूर्यमण्डल	समाहित	दक्षिण हस्त धर्मप्रवर्तन तथा वाम समाहित
२०.	प्रभासश्री	श्वेत	हरित	नील	श्वेतप्रभामण्डल	शरणदत्त	उत्तमबोधिमुद्रा
२१.	अशोकश्री	श्वेतनील	श्वेत	श्वेतरक्त	अशोक विटप	धर्मप्रवर्तन	दोनों हाथ समाहित
२२.	नारायण	नील	नील	पीत	मेरु और पद्म	भूमि स्पर्श	दोनों हाथ धर्मप्रवर्तन
२३.	कुसुमश्री	पीत	पीत	पीत	पीतकुसुम तथा श्रीफल	वरदत्त	दक्षिण अंगुष्ठ भूमि स्पर्श वाम धर्मप्रवर्तन
२४.	तथागत ब्रह्मज्योति-र्विक्रीडिताभिज्ञ	श्वेत	रक्त	पीत	पद्म एवं प्रकाशपुञ्ज	समाहित	दक्षिण हस्त भूमि स्पर्श तथा वाम हस्त समाहित
२५.	तथागत पद्मज्योति-र्विक्रीडिताभिज्ञ	रक्त	हरित	रक्त	पद्म एवं सूर्य	शरणदत्त	दक्षिण हस्त भूमि स्पर्श तथा वाम समाहित

२६.	धनश्री	रक्तश्वेत प्रकाशवान	श्वेत	नील	दो रत्न	धर्मप्रवर्तन	दोनों हाथ धर्मप्रवर्तन
२७.	स्मृतिश्री	पीत	नील	पीत	पुस्तक एवं खड्ग	भूमि स्पर्श	दोनों हाथ समाहित
२८.	सुपरिकीर्तितनामधेयश्री	हरित	पीत	श्वेत	दोनों हाथों से तथागतोष्णीष बन्धन	वरदत्त	दक्षिण हस्त धर्मप्रवर्तन तथा वाम हस्त समाहित
२९.	इन्द्रकेतुध्वजराज	पीत	रक्त	नील	रत्नकेतु एवं ध्वज	समाहित	दक्षिण हस्त ध्वज तथा वाम हस्त समाहित
३०.	सुविक्रान्तश्री	श्वेत	हरित	नील	भूमि स्पर्श	शरणदत्त	दक्षिण हस्त खड्ग तथा वाम हस्त समाहित
३१.	विजितसंग्राम	श्याम	श्वेत	नील	कवच एवं खड्ग	धर्मप्रवर्तन	दोनों हाथ से कवच धारण
३२.	विक्रान्तगामी	श्वेत	नील	नील	भूमि स्पर्श एवं अभय	भूमि स्पर्श	दोनों हाथ भूमि स्पर्श
३३.	समन्तावभास-व्यूहश्री	पीत	पीत	रक्तपीत	सूर्य एवं रत्नवृक्ष	वरदत्त	दोनों हाथ भूमि स्पर्श
३४.	रत्नपद्मविक्रामी	रक्त	रक्त	पीत	मणिरत्न एवं पद्म	समाहित	दक्षिण हस्त शरणदत्त तथा वाम हस्त धर्मप्रवर्तन
३५.	त था ग त रत्नपद्म-सुप्रतिष्ठित-शैलेन्द्रराज	नील	हरित	नील	दोनों हाथों से मेरु पर्वत सिर पर उठाये हुये	शरणदत्त	दोनों हाथों से मेरु पर्वत धारण

दशम परिशिष्ट ཁ་སྐོང་ལྷན་ཐབས་བཅུ་པ།

སློབ་དཔོན་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱི་ལུགས་བཞིན་སངས་རྒྱས་སོ་ལྔའི་སྐུ་བརྙན།

आर्य नागार्जुन के मतानुसार ३५ बुद्धों के चित्र



དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཤཱཀྱ་ཐུབ་པ།

१. तथागत शाक्यमुनि



རྡོ་རྗེ་སྙིང་པོ་རབ་ཏུ་འཇོམས་པ།

२. वज्रगर्भ प्रमर्दिन



རིན་ཆེན་འོད་འཕྲོ།

३. रत्नार्चिष्



ཀླུ་དབང་གི་རྒྱལ་པོ།

४. नागेश्वरराज



དཔའ་བོའི་སྡེ།

५. वीरसेन



དཔའ་དགྱེས།

६. वीरनन्दी



རིན་ཆེན་མེ།

७. रत्नाग्नि



རིན་ཆེན་ཟླ་འོད།

८. रत्नचन्द्रप्रभ



མཐོང་བ་དོན་ཡོད།

९. अमोघदर्शिन



རིན་ཆེན་ཟླ་བ།

१०. रत्नचन्द्र



དྲི་མ་མེད་པ།

११. निर्मल



དཔའ་སྦྱིན།

१२. शूरदत्त



ཚངས་པ།

१३. ब्रह्मा



ཚངས་པས་སྦྱིན།

१४. ब्रह्मदत्त



ཆུ་ལྷ།

१५. वरुण



ཆུ་ལྷའི་ལྷ།

१६. वरुणदेव



དཔལ་བཟང་།

१७. भद्रश्री



ཙནྡན་དཔལ།

१८. चन्दनश्री





གཟི་བརྗིད་མཐའ་ཡས།	འོད་དཔལ།	མྱ་ངན་མེད་པའི་དཔལ།

१९. अनन्तौजस्

२०. प्रभासश्री

२१. अशोकश्री





སྲེད་མེད་ཀྱི་བུ།	མེ་ཏོག་དཔལ།	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཚངས་པའི་འོད་ཟེར་རྣམ་པར་རོལ་པས་མངོན་པར་མཁྱེན་པ།

२२. नारायण

२३. कुसुमश्री

२४. तथागत-ब्रह्मज्योतिर्विक्रीडिताभिज्ञ





དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་པདྨའི་འོད་ཟེར་རྣམ་པར་རོལ་པས་མངོན་པར་མཁྱེན་པ།	ནོར་དཔལ།	དྲན་པའི་དཔལ།

२५. तथागत-पद्मज्योतिर्विक्रीडिताभिज्ञ

२६. धनश्री

२७. स्मृतिश्री

		
མཚན་དཔལ་ཤིན་ཏུ་ཡོངས་གྲགས།	དབང་པོ་ཏོག་གི་རྒྱལ་མཚན་གྱི་རྒྱལ་པོ།	ཤིན་ཏུ་རྣམ་པར་གནོན་པའི་དཔལ།
२८. सुपरिकीर्तित-नामधेयश्री	२९. इन्द्रकेतुध्वजराज	३०. सुविक्रान्तश्री

		
གཡུལ་ལས་ཤིན་ཏུ་རྣམ་པར་རྒྱལ་བ།	རྣམ་པར་གནོན་པས་གཤེགས་པའི་དཔལ།	ཀུན་ནས་སྣང་བ་བཀོད་པའི་དཔལ།
३१. विजितसंग्राम	३२. विक्रान्तगामी	३३. समन्तावभास-व्यूहश्री

	
རིན་ཆེན་པདྨས་རྣམ་པར་གནོན་པ།	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་རི་དབང་གི་རྒྱལ་པོ།
३४. रत्नपद्मविक्रामी	३५. रत्नपद्म-सुप्रतिष्ठित-शैलेन्द्रराज तथागत

ཆོས་རྗེ་ས་པཎ་ཀུན་དགའ་རྒྱལ་མཚན་གྱི་ལུགས་བཞིན་སངས་རྒྱས་སོ་ལྔའི་སྐུ་བརྙན།

साक्य पण्डित कुन्गाग्यलछेन के मतानुसार ३५ बुद्धों के चित्र


དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཤཱཀྱ་ཐུབ་པ།
१. तथागत शाक्यमुनि


རྡོ་རྗེ་སྙིང་པོ་རབ་ཏུ་འཇོམས་པ།
२. वज्रगर्भ प्रमर्दिन


རིན་ཆེན་འོད་འཕྲོ།
३. रत्नार्चिष्


ཀླུ་དབང་གི་རྒྱལ་པོ།
४. नागेश्वरराज


དཔའ་བོའི་སྡེ།
५. वीरसेन


དཔའ་དགྱེས།
६. वीरनन्दी


རིན་ཆེན་མེ།
७. रत्नाग्नि


རིན་ཆེན་ཟླ་འོད།
८. रत्नचन्द्रप्रभ


མཐོང་བ་དོན་ཡོད།
९. अमोघदर्शिन


རིན་ཆེན་ཟླ་བ།
१०. रत्नचन्द्र



དྲི་མ་མེད་པ།

११. निर्मल



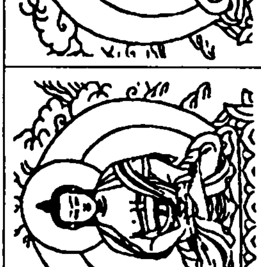
དཔའ་བྱིན།

१२. शूरदत्त



ཚངས་པ།

१३. ब्रह्मा



ཚངས་པས་བྱིན།

१४. ब्रह्मदत्त



ཆུ་ལྷ།

१५. वरुण



ཆུ་ལྷའི་ལྷ།

१६. वरुणदेव



དཔལ་བཟང་།

१७. भद्रश्री



ཙནྡན་དཔལ།

१८. चन्दनश्री



གཟི་བརྗིད་མཐའ་ཡས།

१९. अनन्तौजस्



འོད་དཔལ།

२०. प्रभासश्री

				
མྱ་ངན་མེད་པའི་དཔལ།	སྲེད་མེད་ཀྱི་བུ།	མེ་ཏོག་དཔལ།	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཚངས་པའི་འོད་ཟེར་ རྣམ་པར་རོལ་པས་མངོན་པར་མཁྱེན་པ།	དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་པདྨའི་འོད་ཟེར་ རྣམ་པར་རོལ་པས་མངོན་པར་མཁྱེན་པ།
२१. अशोकश्री	२२. नारायण	२३. कुसुमश्री	२४. तथागत–ब्रह्मज्योतिर्विक्रीडिताभिज्ञ	२५. तथागत–पद्मज्योतिर्विक्रीडिताभिज्ञ

				
ནོར་དཔལ།	དྲན་པའི་དཔལ།	མཚན་དཔལ་ཤིན་ཏུ་ཡོངས་གྲགས།	དབང་པོ་ཏོག་གི་རྒྱལ་མཚན་གྱི་རྒྱལ་པོ།	ཤིན་ཏུ་རྣམ་པར་གནོན་པའི་དཔལ།
२६. धनश्री	२७. स्मृतिश्री	२८. सुपरिकीर्तित–नामधेयश्री	२९. इन्द्रकेतुध्वजराज	३०. सुविक्रान्तश्री



३१. विजितसंग्राम

३२. विक्रान्तगामी

३३. समन्तावभास-व्यूहश्री

३४. रत्नपद्मविक्रामी

३५. रत्नपद्म-सुप्रतिष्ठित-शैलेन्द्रराज तथागत

རྗེ་ཙོང་ཁ་པའི་ལུགས་ཀྱི་སངས་རྒྱས་སོ་ལྔའི་སྐུ་བརྙན།

जे चोङ्खापा के मतानुसार ३५ बुद्धों के चित्र



དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཤཱཀྱ་ཐུབ་པ།

१. तथागत शाक्यमुनि



དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་རྡོ་རྗེ་སྙིང་པོ་རབ་ཏུ་འཇོམས་པ།

२. वज्रगर्भ प्रमर्दिन



དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་རིན་ཆེན་འོད་འཕྲོ།

३. रत्नार्चिष्



དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཀླུ་དབང་གི་རྒྱལ་པོ།

४. नागेश्वरराज



དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དཔའ་བོའི་སྡེ།

५. वीरसेन



དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དཔའ་དགྱེས།

६. वीरनन्दी



དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་རིན་ཆེན་མེ།

७. रत्नाग्नि



དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་རིན་ཆེན་ཟླ་འོད།

८. रत्नचन्द्रप्रभ



དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་མཐོང་བ་དོན་ཡོད།

९. अमोघदर्शिन



དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་རིན་ཆེན་ཟླ་བ།

१०. रत्नचन्द्र



དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དྲི་མ་མེད་པ།

११. निर्मल



དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དཔའ་བྱིན།

१२. शूरदत्त



དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཚངས་པ།

१३. ब्रह्मा



དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཚངས་པས་བྱིན།

१४. ब्रह्मदत्त



དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཆུ་ལྷ།

१५. वरुण



དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཆུ་ལྷའི་ལྷ།

१६. वरुणदेव



དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དཔལ་བཟང་།

१७. भद्रश्री



དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཙནྡན་དཔལ།

१८. चन्दनश्री



དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་གཟི་བརྗིད་མཐའ་ཡས།

१९. अनन्तौजस्



དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་འོད་དཔལ།

२०. प्रभासश्री



དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་མྱ་ངན་མེད་པའི་དཔལ།

२१. अशोकश्री



དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་སྲེད་མེད་ཀྱི་བུ།

२२. नारायण



དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་མེ་ཏོག་དཔལ།

२३. कुसुमश्री



དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཚངས་པའི་འོད་ཟེར་རྣམ་པར་རོལ་པས་མངོན་པར་མཁྱེན་པ།

२४. तथागत-ब्रह्मज्योतिर्विक्रीडिताभिज्ञ



དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་པདྨའི་འོད་ཟེར་རྣམ་པར་རོལ་པས་མངོན་པར་མཁྱེན་པ།

२५. तथागत-पद्मज्योतिर्विक्रीडिताभिज्ञ



དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ནོར་དཔལ།

२६. धनश्री



དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དྲན་པའི་དཔལ།

२७. स्मृतिश्री



དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་མཚན་དཔལ་ཤིན་ཏུ་ཡོངས་གྲགས།

२८. सुपरिकीर्तित-नामधेयश्री



དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དབང་པོ་ཏོག་གི་རྒྱལ་མཚན་གྱི་རྒྱལ་པོ།

२९. इन्द्रकेतुध्वजराज



དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཤིན་ཏུ་རྣམ་པར་གནོན་པའི་དཔལ།

३०. सुविक्रान्तश्री



དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་གཡུལ་ལས་ཤིན་ཏུ་རྣམ་པར་རྒྱལ་བ།

३१. विजितसंग्राम



དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་རྣམ་པར་གནོན་པས་གཤེགས་པའི་དཔལ།

३२. विक्रान्तगामी



དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཀུན་ནས་སྣང་བ་བཀོད་པའི་དཔལ།

३३. समन्तावभास-व्यूहश्री



རིན་ཆེན་པདྨས་རྣམ་པར་གནོན་པ།

३४. रत्नपद्मविक्रामी



དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་རི་དབང་གི་རྒྱལ་པོ།

३५. रत्नपद्म-सुप्रतिष्ठित-
शैलेन्द्रराज तथागत

སྟོན་པ་ཐུབ་པའི་དབང་པོས།

ཐུབ་རྣམས་ཆུ་ཡི་སྡིག་པ་འཁྲུ་བར་མི་མཛད་ཅིང་། |
འགྲོ་བའི་སྡུག་བསྔལ་ཕྱག་གིས་ཀྱང་ནི་སེལ་མི་མཛད། |
བདག་གིས་གཞན་ལ་རྟོག་པ་སྤོས་པ་མ་ཡིན་ཏེ། |
ཆོས་ཉིད་ཞི་བ་གསུང་ཞིང་རབ་ཏུ་སྒྲུབ་པ་ཡིན། |

तथागत ने कहा है—

न क्षालयन्ति मुनयो जलेन पापं
नैवापकर्षन्ति करेण जगद्-दुःखम्।
नैव च सङ्क्रमते ह्यन्येषु स्वाधिगमः
सद्धर्मतादेशनया विमोचयन्ति ॥

भोट-भारतीय
ग्रन्थमाला
४९

आर्यत्रिस्कन्धसूत्रं टीकात्रयसंवलितम्

འཕགས་པ་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་དང་དེའི་འགྲེལ་པ་གསུམ།

CIHTS
SARNATH
2001